चिकित्साखंड

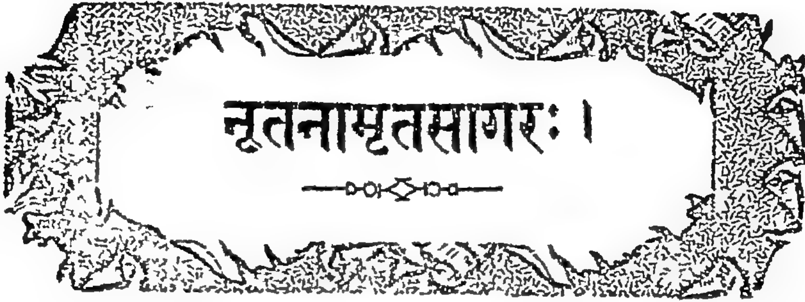
इति नूतनामृतसागरस्य विषयानुक्रमणिका समाप्ता ।



॥ श्रीगणेशाय नमः ॥

नमो ब्रह्मप्रजापत्यश्विबलभिद्धन्वन्तरिसुश्रुतप्रभृतिभ्यः ।

अथ



तत्रोत्पत्तिखण्डः १.

गजमुखममरप्रवरं सिद्धिकरं विघ्नहर्तारम् ॥
गुरुमवगमनयनप्रदामिष्टकरीमिष्टदेवतां वंदे ॥ १ ॥

भापार्थ—देवताओंमें श्रेष्ठ, सिद्धिके देनेहारे, विघ्नोंको दूर करनेहारे, जो गजाननः तथा वाञ्छाके सिद्धि करनेहारे जो इष्टदेवता और ज्ञानदाता जो गुरु हैं तिनको मैं नमस्कार करताहूं ॥ १ ॥

आयुर्वेदागमनं क्रमेण येनाभवद्भूमौ ॥
प्रथमं लिखामि तमहं नानातंत्राणि संदृश्य ॥२॥ भावप्रकाशः

इस पृथ्वीपर जिसप्रकारसे आयुर्वेदका आगमन हुआ उसे मैं कई ग्रंथोंको देखके इस ग्रंथके आदिमें यथाक्रमसे लिखताहूं ॥ २ ॥

आयुर्वेदस्य लक्षणमाह ।

आयुर्हिताहितं व्याधेर्निदानं शमनं तथा ॥
विद्यते यत्र विद्वद्भिः स आयुर्वेद उच्यते ॥ ३ ॥

आयुर्वेदस्य निरुक्तिमाह ।

अनेन पुरुषो यस्मादायुर्विन्दति वेत्ति च ॥
तस्मान्मुनिवरैरेष आयुर्वेद इति स्मृतः ॥ ४ ॥ भावप्रकाशः

भाषार्थ—जिसमें आयुषके हित, अहित और व्याधिके, निदान और शमन इत्यादि हों उसे आयुर्वेद कहते हैं ॥ ३ ॥ शरीर और जीवका जो

संयोग हो उसे जीवन कहते हैं । उस जीवनयुक्त जो समय उसे आयु कहते हैं और शरीरसे जीवका वियोग होना इसे मृत्यु कहते हैं, जिसके द्वारा पुरुष आयुको पूर्णरूपसे प्राप्त हो तथा दूसरेकी आयुकोभी जानलेवे उसे मुनिराज आयुर्वेद कहते हैं, क्योंकि इसके द्वारा सेवन, सेवनअयोग्य पदार्थोंके गुणकर्मका ज्ञान होनेसे सेवनयोग्यका सेवन और सेवनअयोग्यका त्याग होता है जिससे आयु निश्चय कीजाती है ॥ ४ ॥

तत्रादौ ब्रह्मणः प्रादुर्भावः ।

विधाताथर्वसर्वस्वमायुर्वेदं प्रकाशयन् ॥ स्वनाम्ना संहितां चक्रे लक्षश्लोकमयीमृजुम् ॥ ५ ॥ ततः प्रजापतिं दक्षं दक्षं सकलकर्मसु ॥ विधिर्धीनीरधिं साङ्गमायुर्वेदमुपादिशत् ॥ ६ ॥ भावप्रकाशः

भाषार्थ–प्रथम ब्रह्माजीने अपनी प्रजाके हितार्थ आयुर्वेदको प्रकाश करनेकेलिये एक लाख श्लोकोंमें ब्रह्मसंहिता बनाकर सर्वकार्यकुशल बुद्धिसागर अपने पुत्र दक्षको पढ़ाई ॥ ५ ॥ ६ ॥

अथ दक्षप्रादुर्भावः ।

अथ दक्षः क्रियादक्षः स्ववैद्यो वेदमायुषः ॥ वेदयामास विद्वांसौ सूर्यांशौ सुरसत्तमौ ॥ ७ ॥ भावप्रकाशः

भाषार्थ–तत्पश्चात् क्रियाकुशल दक्षने आयुर्वेद सूर्यपुत्र देवताओंके वैद्य अश्विनी-कुमारजीको पढ़ाया ॥ ७ ॥

अथाश्विनी-कुमारप्रादुर्भावः ।

दक्षादधीत्य दस्रौ वितनुतः संहितां स्वीयाम् । सकलचिकित्सकलोकप्रतिपत्तिविवृद्धये धन्याम् ॥ ८ ॥ भावप्रकाशः

भाषार्थ–अश्विनी-कुमारोंने दक्षसे आयुर्वेद पढ़कर संसारमें आयुर्वेदकी वृद्धिके हेतु अपने नामकी " अश्विनीकुमार " संहिता बनाई और भैरवसे कटेहुए ब्रह्माजीके शिरको जोड़ा तब यज्ञके विभागी हुए देव, दानव, संग्राममें जिन देवताओंके अंगभंग होगयेथे उन्हें पूर्ववत् किये, इंद्रकी

भुजास्तम्भको आरोग्य की, चन्द्रमाका क्षयीरोग दूर किया, पूषादेवताके दाँत जोड़े, भगदेवताके नेत्र सुधारे और वृद्धच्यवन ऋषिको तरुण बनाया इत्यादि अनेक कार्य करके देवपूज्य और वैद्यशिरोमणि हुए ॥ ८ ॥

अथेन्द्रप्रादुर्भावः ।

नासत्यौ सत्यसन्धेन शक्रेण किल याचितौ ॥
आयुर्वेदं यथाधीतं ददतुः शतमन्यवे ॥ ९ ॥ भावप्रकाशः

भाषार्थ—इंद्रने अश्विनी—कुमारोंका पूर्वोक्त कर्म देखके उनसे आयुर्वेदके लिये याचना की, तब उन्होंने इंद्रको आयुर्वेद पढ़ाया और इंद्रने अत्रि आदि अनेक मुनियोंको पढ़ाया ॥ ९ ॥

अथात्रेयप्रादुर्भावः ।

आयुर्वेदोपदेशं मे कुरु कारुण्यतो नृणाम् । तथेत्युक्त्वा
सहस्राक्षोऽध्यापयामास तं मुनिम् ॥ १० ॥ भावप्रकाशः

भाषार्थ—किसी समय आत्रेयमुनि प्राणियोंको रोगयुक्त देखकर उनके रोग निवृत्तिके हेतु इंद्रलोकको गये । इंद्रने ऋषिकी पूजाकर आगमनका कारण पूछा, उन्होंने सब कारण (वृत्तांत) कहा और आयुर्वेद पढ़नेका आशय दरशाया, तब इंद्रने उन्हें आयुर्वेद पढ़ाया तब मुनिने पढ़के अपने नामकी (आत्रेय) संहिता बनायकर अग्निवेश, भेड, जातूकर्ण, पराशर, क्षीरपाणी और हारीत इन ऋषियोंको पढ़ाई तब इन सबोंने अपने अपने नामकी पृथक् २ संहिता बनाई ॥ १० ॥

अथ भारद्वाजप्रादुर्भावः ।

तमुवाच मुनिं साङ्गमायुर्वेदं शतक्रतुः । जीवेद्वर्ष-
सहस्राणि देही नीरुक् निशम्य यम् ॥ ११ ॥ भावप्रकाशः

भाषार्थ—एक समय हिमाचलके समीप सब देवता और मुनि एकत्र हुए जिनमें सबसे प्रथम भारद्वाजजी आये, तदनंतर अंगिरा, गर्ग, मरीचि, भृगु, भार्गव, पौलस्त्य, अगस्त्य, असित, वसिष्ठ, पराशर, हारीत, गौतम, सांख्य, मैत्रेय, च्यवन, जमदग्नि, गार्ग्य, काश्यप, कश्यप, नारद, वामदेव, मार्कंडेय, कपिंजल, शांडिल्य, कौंडिण्य, शाकुनी, शौनक, आश्वला-

यन, साकृत, विश्वामित्र, परीक्षित, देवल, गालव, धौम्य, काम्य, कात्यायन, वैजपाय, कुशिक, बादरायण, हिरण्याक्ष, लौगाक्षी, शरलोमा, गोभिल, वैखानस और वालखिल्य, इत्यादि ज्ञाननिधितपस्वी परस्पर कहने लगे कि-धर्म, अर्थ, काम, मोक्षका कारण यह कलेवर है, यदि यह निरोगी रहे तो सर्व कार्य सिद्ध होते हैं इसलिये हे भारद्वाजजी ! आप इंद्रमे आयुर्वेदसंहिता लाओ. तब भारद्वाजजी इंद्रसे आयुर्वेद पढ़ आये और सर्व ऋषिमंडलीमें प्रवृत्त किया उससे द्रव्यगुण कर्मादिको जानके रोगरहित होके आयुर्वेदको लोकमें प्रसिद्ध किया ॥ ११ ॥

अथ चरकप्रादुर्भावः।

यदा मत्स्यावतारेण हरिणा वेद उद्धृतः॥तदा शेषश्च तत्रैव वेदं साङ्गमवाप्तवान् ॥ १२ ॥ अथर्वान्तर्गतं सम्यगायुर्वेदं प्रलब्धवान् । एकदा स महीवृत्तं द्रष्टुं चर इवागतः॥तस्माच्चरकनामासौ विख्यातः क्षितिमण्डले ॥ १३ ॥ भा० प्र०

भाषार्थ-जब नारायणने मत्स्यावतार लेकर वेदोंको निकाला उस समय शेषजी वेद वेदाङ्गोंको प्राप्त होकर अथर्वणवेदके अंगभूत आयुर्वेदको प्राप्त हुए और पृथ्वीमें गुप्तरूपसे विचरते हुए लोगोंको रोगग्रस्त देखके मुनिपुत्रका रूप बनाय चरकके सदृश विचरनेलगे, सो चरकाचार्य प्रसिद्ध हुए और रोगियोंको आरोग्य करतेहुए चरकसंहिता बनाई ॥ १२ ॥ १३ ॥

अथ धन्वन्तरिप्रादुर्भावः।

अधीत्य चायुषो वेदमिन्द्राद्धन्वन्तरिः पुरा ॥१४॥ आगत्यपृथिवीं काश्यां जातो बाहुजवेश्मनि ॥ नाम्ना तु सोऽभवत्ख्यातो दिवोदास इति क्षितौ ॥ १५ ॥ भावप्रकाशः

भाषार्थ-एकबार देवराजकी दृष्टि भूलोकपर पड़ी सो बहुतसे मनुष्य रोगसे पीडित दृष्टि आये, तब इंद्रने धन्वंतरिजीसे कहा कि तुम लोकोपकारके हेतु पृथ्वीपर काशीपुरीमें जावो और काशीनरेश होकर रोगको दूरकरनेके हेतु आयुर्वेदका प्रकाश करो, तब धन्वतरिजी इंद्रसे आयुर्वेद

पढ़कर काशीमें जन्म लेकर दिवोदास नामक राजा हुए लोकहितार्थ अपने नामकी (धन्वतारि) संहिता बनाकर प्रसिद्ध की ॥ १४ ॥ १५ ॥

अथ सुश्रुतप्रादुर्भावः ।

पितुर्वचनमाकर्ण्य सुश्रुतः काशिकां गतः । तेन सार्द्धं समध्येतुं मुनीनां तु शतं ययौ ॥१६॥ आयुर्वेदं भवानस्मानध्यापयतु यत्नतः । अंगीकृत्य वचस्तेषां नृपतिस्तानुपादिशत ॥ १७ ॥ प्रथमं सुश्रुतस्तेषु स्वतंत्रं कृतवान् स्फुटम्।सुश्रुतस्य सखायोऽपि पृथक्तंत्राणि तेनिरे ॥ १८ ॥ भावप्रकाशः

भाषार्थ—एक समय विश्वामित्र ऋषिने अपनी ज्ञानदृष्टिसे देखा कि, धन्वतरिका अवतार काशीमें दिवोदास राजा है. तब अपने पुत्र सुश्रुत को आज्ञा दी कि, तुम काशीमें जाओ और दिवोदास राजासे आयुर्वेद पढ़कर लोकहित करो. क्योंकि इसके समान यज्ञादि कोई सत्कर्म पुण्यप्रद नहीं है, पिताकी आज्ञानुसार सुश्रुत काशीमें आये और उनके साथ पढ़नेके लिये १०० मुनि और भी आये और दिवोदास राजासे अपने आनेका कारण प्रकाशित किया. तब दिवोदास राजाने सुश्रुतादि मुनियोंको आयुर्वेद पढ़ाया तब सबसे प्रथम सुश्रुतने अपने नामकी (सुश्रुत) संहिता बनाई और उनके पश्चात अन्यान्य ऋषियोंने भी बनाई इसप्रकार आयुर्वेदवक्ता ऋषियोंका प्रादुर्भाव विस्तीर्णरूपसे भावप्रकाशके पूर्वखंडमें लिखा है ॥ १६ ॥ १७ ॥ १८ ॥

इति श्रीनूतनामृतसागरे उत्पत्तिखण्डे आयुर्वेदप्रवक्तॄणां प्रादुर्भावनिरूपणे प्रथमस्तरंगः ॥ १ ॥

अथ सृष्टिक्रमः ।

आत्मा ज्योतिश्चिदानंदरूपो नित्यश्च निस्पृहः ॥
निर्गुणः प्रकृतेर्योगात् सगुणः कुरुते जगत् ॥ १ ॥

भाषार्थ—ज्योतिःस्वरूप, चिदानंद, नित्य, निस्पृह, निर्गुण जो ब्रह्म परमात्मा सो प्रकृतिके योगसे सगुण होकर जगत्को उत्पन्न करता है ॥ १ ॥

अब हम अमृतसागरके २५ वें तरंगमें लिखे अनुसार 'सृष्टिक्रम' प्रारंभ करते हैं, क्योंकि भावप्रकाशादि वैद्यक ग्रंथोंमें उक्तविषय प्रथमही रक्खा गयाहै, इसलिये इस नवीन "अमृतसागर" में सृष्टिक्रम पूर्वही होना चाहिये उस परमेश्वरकी प्रकृति अर्थात् मायाने इस अनित्य संसारको "नटकौतुक" सदृश बनाकर इच्छारूप महत्तत्त्वको बनाया, उस महत्तत्त्वसे अहंकार उत्पन्न हुआ सो ३ प्रकारका है (अर्थात्–१ रजोगुण २ सतोगुण ३ तमोगुण) पश्चात् तमोगुणरूपी अहंकारने सतोगुण और रजोगुणसे मिलकर १० इंद्रियां और मनको उत्पन्न किया.

वे ये हैं ज्ञानेंद्रियां – १ कर्ण २ त्वचा ३ नेत्र ४ जिह्वा ५ नासिका. कर्मेंद्रिया १ वाणी २ हस्त ३ पद ४ लिंग ५ गुदा.

तमोगुणने अधिक सतोगुणयुक्त अहंकारसे पंचतन्मात्रा (१ शब्द २ स्पर्श ३ रूप ४ रस ५ गंध) उत्पन्न कीं.

तन्मात्रासे पंचमहाभूत (१ शब्दसे आकाश २ स्पर्शसे वायु ३ रूपसे अग्नि ४ रससे जल ५ गंधसे पृथ्वी) उत्पन्न हुए.

सो १ कानका विषय शब्द २ त्वचाका स्पर्श ३ नेत्रका रूप ४ जिह्वाका स्वाद और ५ नासिकाका गंध ये ज्ञानेंद्रियोंके ५ विषय हैं.

इसी प्रकार १ वाणीका भाषण २ हस्तका ग्रहण ३ पादका चलन ४ लिंगका मैथुन और ५ गुदका मलत्याग ये कर्मेंद्रियोंके विषय जानो.

१ प्रधान २ प्रकृति ३ शक्ति ४ नित्या और ५ विकृति ये प्रकृतिके नाम हैं सो ये प्रकृति शिवसे मिली हुई रहती हैं.

उक्तक्रमानुसार ये २४ तत्त्व उत्पन्न हुए (अर्थात् १ महत्तत्त्व १ अहंकार ५ तन्मात्रा १ प्रकृति १० इंद्रियाँ १ मन ५ महाभूत) और इतने मिलके १ शरीररूपी घर बनाया. तब उस घरमें जीवात्मा शुभाशुभ कर्मोंके स्वाधीन होके प्रवेश हुआ और मनरूपी दूतके वशमें हो निवास करने लगा, इस जीवयुक्त शरीरको बुद्धिमान् लोग देही कहते हैं.

यह देह पाप पुण्य, सुख दुःखोंसे व्याप्त होकर और मनसे जीवात्मा बंधकर स्वकृतकर्मबंधनोंसे बँधता है और काम, क्रोध, लोभ, मोह, अहं-

कार दशों इंद्रियें और बुद्धि ये सब अज्ञानदशामें जीवात्माके बंधनके लिये हैं और जीवात्मा आत्मज्ञानी होनेसे मुक्त होता है.

इति श्रीनूतनामृतसागरे उत्पत्तिखण्डे सृष्टिक्रमोनाम द्वितीयस्तरंगः ॥ २ ॥

अथ गर्भोत्पत्तिक्रमः ।

द्वादशाद्वत्सरादूर्ध्वमापंचाशत्समाः स्त्रियः ॥
मासि मासि भगद्वारा प्रकृत्यैवार्तवं स्रवेत् ॥ १ ॥
आर्तवस्रावदिवसादृतुः षोडशरात्रयः॥
गर्भग्रहणयोग्यस्तु स एव समयः स्मृतः ॥२॥ भा० प्र०

भाषार्थ–१२ वर्षके उपरांत ५० वर्ष पर्यंत स्त्रियोंकी योनिद्वारा प्रतिमास स्वाभाविक रजोधर्म प्राप्त होता है. रजोधर्मके दिनसे सोलह रात्रितक स्त्रियोंको गर्भधारण करनेयोग्य समय है, उनमें प्रथमकी ३ रात्रि छोड़के शेष रात्रियोंमें ऋतुदान दे.

इसके आगे अमृतसागरके २५ वें तरंगोक्त गर्भोत्पत्ति लिखते हैं–

आहार कियाहुआ वायुकी प्रेरणासे आमाशयमें पहुँचता है, फिर वह आहार मधुरताको प्राप्त होता है, फिर वही आहार पाचक पित्तके प्रभावसे कुछ पककर खट्टा होजाता है, अनंतर नाभिस्थित समानवायुसे प्रेरित होके छठवीं ग्रहणी कलामें प्राप्त होता है. तदनंतर वहाँ पकके कोठेकी अग्निसे कडुवा होता है, फिर कोठेकी अग्निसे पकके उत्तम रसरूप होजाता है. यदि उत्तम प्रकारसे न पककर कच्चा रहजाय तो वही आहार आँव बन जाता है यदि कोठेकी अग्नि बलाढ्य हो तो आहारका रस मधुर होकर चिकना होता है, यही भली भाँति पका हुआ रस इस शरीरकी सर्व धातुओंको पुष्टकरके अमृतकीतुल्यताको प्राप्त होता है और उस आहारका रस यदि मंदाग्निसे दग्ध होजावे तो उदरमें कडुवा अथवा खट्टा होके विषरूप होजाता है और शरीरमें रोगसमूहको उत्पन्न करता है.

आहारका रस सारयुक्त होनेसे बलकारक और असार होनेसे द्रवमल अर्थात् पतला होजाता है सो वह ठीक नहीं और पिये हुए जलका

सार तो वायु नसोंद्वारा शरीरमें पहुँचा देता है, और जलके असारको उदरमें प्राप्तकरके मूत्र बनाता है वही लिंगद्वारा बाहर निकलता है और जो आहारका कीट अर्थात् मल होता है वह पक्काशयमें रहता है सो गुदाके अपानवायुके बलसे नीचेको आकर्षण होके गुदाद्वारासे बाहर निकलता है और जो आहारका रस है सो नाभिके समानवायुके बलसे प्रेरित होके मनुष्यके हृदयमें प्राप्त होता है और वहाँ पित्तसे पककर रुधिर बन जाता है जो सब शरीरमात्रमें रहता है, इसीका जीवको पूर्णाधार है. रुधिर चिकना, भारी, बलवान् और मीठा होता है यह रुधिर दग्ध होनेसे पित्तके समान होजाता है एवं एक एक धातु सवाचार चार दिनमें उत्पन्न होती है, इसप्रकार भोजन किये हुये आहारका एक महीनेमें मनुष्योंको वीर्य उत्पन्न होता है और इसीप्रकार स्त्रियोंको एक मासमें स्त्रीधर्मद्वारा रज (रक्त) होता है.

गर्भाधानके समयमें स्त्री और पुरुषके संयोगसे स्त्रीका शुद्ध रुधिर और पुरुषका शुद्ध वीर्य दोनों मिलके स्त्रीके गर्भाशयमें गर्भ उत्पन्न करते हैं तब वह गर्भ अंग उपांगयुक्त होके नवमास पश्चात् प्रसूतिवायुकी प्रेरणासे बाहर निकलता है, तब बालक उत्पन्न हुआ ऐसा कहते हैं. यदि गर्भाधानके समय स्त्रीका रज अधिक हो तो कन्या और पुरुषका वीर्य अधिक हो तो पुत्र, यदि दोनोंका समान होतो नपुंसक बालक उत्पन्न हो अथवा गर्भ न रहे ऐसा आयुर्वेदका नियम है तथापि ईश्वरकी लीला अपार है, इसलिये परमात्मा जो करे सो हो.

इति श्रीनूतनामृतसागरे उत्पत्तिखण्डे गर्भोत्पत्तिक्रमनिरूपणे तृतीयस्तरंगः ॥ ३ ॥

अथ शारीरकविधानम्।

कालेन वर्धितो गर्भो यद्यंगोपांगसंयुतः ॥
भवेत्तदा स मुनिभिः शरीरीति निगद्यते ॥ १ ॥

भावार्थ—जो गर्भ समयानुसार बढ़ता हुआ अंग उपाङ्गसंयुक्त होके ... होताहै उसे शरीर कहते हैं और इस शरीरमें जो जो वस्तु हैं

उनका वर्णन किया जावे उसे शारीरक विधान कहते हैं सो अमृतसागरके २८ वें तरंगमें लिखे अनुसार हम यहां लिखते हैं, क्योंकि जबतक शारीरकको वैद्य पूर्ण न जानेगा तो निदान और चिकित्सा क्या करेगा इसलिये निदान आदिके पूर्व शारीरक लिखना योग्य है.

इस शरीरमें इतनी वस्तुएँ हैं—

७ कला ७ आशय ७ धातु ७ उपधातु ७ धातुओंके मल ७ त्वचा ३ दोष (इस शरीरकी अस्थि हड्डी आदिको बांधनेके लिये) ८०० नसें २१० हड्डियां (कोई कोई आचार्य ३०० भी लिखते हैं) १०७ मर्मस्थान ७०० नसें (रसको सर्वत्र पहुँचानेके लिये) २४ धमनी नाड़ी ५०० मांसपिंडियां (स्त्रियोंके ५२० होती हैं) १६ कंडरा (सबसे बड़ी नाड़ियाँ जो कि शरीरमें सर्वत्र व्याप्त हैं) मनुष्यके शरीरमें १० छिद्र पर स्त्रियोंके १२ होते हैं.

अब शास्त्रानुसार हृदयका स्वरूप यथाक्रमसे स्पष्टकर दिखाते हैं—

धातु और आशयके बीचमें जो झिल्ली है (जिसमें बालक रहता है) उसे 'कला' कहते हैं; रुधिर, मांस और मेद इन तीनोंको पृथक पृथक् रखनेके लिये तीनोंके बीचमें एक एक झिल्ली (कला) है और यकृत तथा प्लीहाके बीचमें एक झिल्ली है एवं अँतड़ियोंके बीचमें १ झिल्ली है. १ झिल्ली जल तथा अग्निको धारण कर रही है. १ झिल्ली (कला) वीर्यको धारण किये है. एवं ७ कला हैं.

अब सात आशय दर्शाते हैं—

आशय नाम स्थानका है, हृदयमें कफका स्थान, उसके नीचे आम (आँव) का स्थान. नाभिके ऊपर बाईं ओर अग्निका स्थान. अग्निके ऊपर तिलहै. नाभिके नीचे पवनका स्थान. उसके नीचे पेडूमें मलका स्थान और उससे मिलताही हुआ कुछ नीचे मूत्रका स्थान. (जिसे बस्ती कहते हैं) हृदयसे कुछ ऊपर जीव और रुधिरका स्थान है. ये सात आशय पुरुष स्त्रियोंके समानही रहते हैं परन्तु इनसे व्यतिरिक्त स्त्रियोंके (१ गर्भस्थान, २ दुग्धस्थान, ३ स्तन) ये ३ आशय अधिक हैं.

अब ७ धातुओंको दर्शाते हैं— १ रस २ रक्त ३ मांस ४ मेद

५ हड्डी ६ मज्जा और ७ वीर्य ये सात धातु हैं ये सातों धातुएँ जिसप्रकार उत्पन्न होती हैं सो तीसरे तरंगमें लिख चुके हैं. अब उपधातुओंके विषयमें लिखते हैं.

१ जिह्वाका मल २ नेत्रोंका मल ३ गालोंका मल ये तीनों रसकी उपधातुहैं. २ रंजन (अर्थात् पित्त) रक्तकी उपधातु है. ३ कानोंका मल मांसकी उपधातुहै, ४ जिह्वा, दांत, काख और लिंगेंद्रियसे जो मल निकलताहै सो मेदकी उपधातुहै, ५ वीश–२० नख हाड़ोंकी उपधातुहैं. ६ नेत्रोंका कीचर (कीचड़) मज्जाकी उपधातुहै, ७ मुखपर जो चिकनापन तथा कीलें निकलती हैं सो वीर्यकी उपधातु जानों, ये सात उपधातुहैं तथा स्त्रियोंके स्तनोंमें " दूध " और " स्त्रीधर्म " ये दो धातु पुरुषोंसे अधिकहैं सो समय समयपरही होती हैं और समयपरही मिट जाती हैं.

सातों धातुओंसे और भी वस्तुएँ उत्पन्न होती हैं जैसे–१ शुद्धमांससे शरीरमें घृत उत्पन्न होताहै (जिसे "वसा" कहतेहैं) २ पसीना ३ दांत ४ केश ५ ओज ये सब सत धातुओंसे ही उत्पन्न होते हैं ओज सब शरीरमें रहता है. चिकना, शीतल और वल तथा पुष्टिकारक है.

अब सात त्वचाको दर्शाते हैं–

पहिली त्वचा अवभासिनी नामकी है यह चिकनी है और विभूति नामका स्थानहै। दूसरी त्वचा लालहै जिसमें तिल नील आदि उत्पन्न होते हैं। तीसरी त्वचा श्वेत है जिसमें चर्मदल नामक रोग उत्पन्न होताहै. चौथी त्वचा (ताम्रवर्ण) तांवेके सदृश रंगवाली उसमें श्वेत प्रकारके कुष्ठ उत्पन्न होतेहैं। पांचवीं त्वचा छेदनी कहाती है जिसमें सव उत्पन्न होते हैं। छठवीं त्वचा रोहिणी कहाती है उसमें गंडमाला, फोड़े आदि रोग उत्पन्न होते हैं। सातवीं त्वचा स्थूल कहाती है जिसमें विद्रधि रोग उत्पन्न होता है। इन सातों त्वचाओंकी मुटाई यवप्रमाण है.

अब ३ दोष लिखते हैं–

१ वात २ पित्त ३ कफ ये तीन दोष हैं, और कोई २ इन्हें मल भी कहते हैं, इन तीनोंमें वायु प्रबल है, पित्त कफ पंगु हैं, इसलिये वायु सब

वस्तुओंका विभागकर नसोंद्वारा सर्वत्र शरीरमें पहुँचा देती है. ये प्रत्येक (वात पित्त कफ) पांच पांच प्रकारके हैं और न्यारे न्यारे स्थानमें रहते हैं. प्रथम वायुका स्थानादि बताते हैं. १ वायु–रजोगुणमयी शीतल, सूक्ष्म, हलका और चंचल है. यह मलके स्थानमें, कोठेमें, अग्निस्थानमें, हृदयमें और कंठमें इन पांचों स्थानोंमें रहती है. ये तो वायुके ५ स्थान हैं. और साधारण प्रकारसे वायु सर्व देहमात्रमेंही रहती है जिसके पांच जुदे जुदे नाम हैं अर्थात् "१ गुदामें अपानवायु, २ नाभिमें समानवायु, ३ हृदयमें प्राणवायु, ४ कंठमें उदानवायु और ५ सब शरीरमें व्यानवायु" रहती है। अथ पित्तस्वरूपादि प्रारंभः ॥ २ पित्त–उष्ण (गरम) पतला, पीला, सतोगुणमयी, कडुआ, तीखा और दग्ध होनेसे खट्टा होता है. अग्निस्थानमें तिलप्रमाण अग्निरूप होके रहता है. त्वचामें रहके कांतिकारक है, नेत्रोंमें रहके सबको दिखलाता है, प्रकृतिमें रहके सबको पाचन करता है व रसका लोह बनाता है. हृदयमें रहके बुद्धि आदि उत्पन्न करता है, ये पित्तके पांच स्थान हैं. १ पाचक २ भ्राजक ३ रंजक ४ अलोचक ५ साधक ये पांच नाम हैं। "कफस्वरूपादि प्रा०" ३ कफ–चिकना, भारी, श्वेत पिच्छिल, (चावलोंके गाढ़े माड़समान) ठंढा तमोगुणयुक्त मीठा और दग्ध होनेसे कटु हो जाता है. यह १ आमाशय २ मस्तक, ३ कंठ, ४ हृदय और ५ संधियोंमें रहता है ये कफके मुख्य स्थान हैं और साधारण भावसे शरीरमात्रमें रहता हुआ देहको स्थिर और सब अंगोंको कोमल करता है. १ क्लेदन, २ स्नेहन, ३ रसन ४ अवलंबन और ५ श्लेष्मा ये पांच कफके नाम हैं.

स्नायु नसें–शरीरमें मांस, हाड़, मेद इनको बांधनेवाली स्नायु नसें कहाती हैं.

मर्मस्थान–जीवको धारण करनेवाले जो स्थान सो मर्मस्थान कहाते हैं.

नसें–जो संधिको बांधनेवाली, त्रिदोष और सप्त धातुओंको बहानेवाली हैं सो नसें कहाती हैं.

धमनीनाड़ी–जिसके द्वारा रस और पवनका बहाव हो सो धमनी नाडी कहाती हैं.

मांसपिंडी–इस शरीरमें जो मांसकी गठाने हैं सो मांसपिंडी कहाती हैं.

कंडरा–सबसे बड़ी नसे जो सब अंगको फैलने और सिकुड़ने देती हैं सो कंडरा कहाती हैं.

छिद्र–२ नाकके, २ नेत्रके, २ कानके, १ मुख, १ लिंग, १ गुदा और १ मस्तक ये दश छिद्र हैं परंतु स्त्रियोंके २ स्तन और १ गर्भाशयमें ऐसे तेरह छिद्र हैं एवं इस शरीरमें रोम रोममें असंख्यात छिद्र हैं.

नाभिके बाईं ओर फुफ्फुस और प्लीहा (फिया) है तथा दाहिनी ओर यकृत है फुफ्फुस–उदानवायुके आधारको फुफ्फुस कहते हैं.

प्लीहा–रक्तको बहानेवाली नसोंके मूलको प्लीहा कहते हैं.

यकृत्–रंजक (पित्तका स्थान) के पास जो रक्तका स्थान उसे यकृत् कहते हैं.

नाभिके वामभागमें अग्न्याशयपर जो तिल है वह जल बहानेवाली नसोंका मूल है यही तिल प्यासको रोकता है.

कुक्षिमें दो गोले हैं जिन्हें वृक्क कहते हैं ये दोनों पेटके मेदको पुष्ट करते हैं

वृषण (पोते) ये वीर्यको बहानेवाली नसोंके आधार हैं–ये पराक्रम देनेवाले, गर्भको उत्पन्न करनेवाले वीर्यसूत्रके घर; और हृदय, मन, चित्त, अहंकार और बुद्धिके स्थान हैं.

नाभि–धमनीनाड़ी आदि नसोंका स्थान है, नाभिका समानवायु सब धातुओंके संयोगसे संपूर्ण शरीरको पुष्ट करता है तथा नाभिका पवन हृदयकमलको स्पर्श करके कंठद्वारा नाकसे बाहर निकलती और आकाशमें विष्णुपदके अमृतसे युक्त हो सुख नासिकाद्वारा पुनः शरीरमें प्रवेश करता है सो इसी पवनसे सर्व शरीर तथा जीवको प्रबलता पहुँचती है.

इति श्रीनूतनामृतसागरे उत्पत्तिखण्डे शारीरकनिरूपणे चतुर्थस्तरंगः ॥ ४ ॥

अथ अवस्थादिक्रमः ।

वयस्तु त्रिविधं बाल्यं मध्यमं वार्धकं तथा ॥
ऊनषोडशवर्षस्तु नरो बालो निगद्यते ॥ १ ॥

मध्ये षोडशसप्तत्योर्मध्यमं कथितं बुधैः ।
ततस्तु सप्ततेरूर्ध्वं वृद्धो भवति मानवः ॥ २ ॥ भा० प्र०
कौमारं पंचमाब्दांतं पौगंडं दशमावधि ।
कैशोरमापञ्चदशाद्यौवनं तु ततः परम् ॥ ३ ॥ अ० ग्रं०

भाषार्थ–अवस्था तीन प्रकारकी होती हैं १ बाल्यावस्था, २ मध्यावस्था, ३ वृद्धावस्था । जन्मसे १६ वर्षपर्यंत बाल्यावस्था १६ से ७० वर्ष तक मध्यावस्था और ७० से पश्चात् सर्व वृद्धावस्था जानो.

बाल्यावस्थामेंभी–जन्मसे ५ वर्ष पर्यंत कौमार संज्ञा, ५ से १० वर्षतक पौगंड संज्ञा, १० से १५ वर्षतक कैशोर संज्ञा, और १५ के पश्चात् यौवनादि संज्ञा ग्रंथान्तरमें लिखी है । इसीप्रकार स्त्रियोंके जन्मसे ८ वर्षपर्यंत कन्या संज्ञा, ८ से ११ वर्ष पर्यंत गौरी संज्ञा, ११ से १६ वर्षपर्यंत बाला संज्ञा, १६ से ३० वर्षपर्यंत तरुणी संज्ञा, ३० से ५५ वर्षपर्यंत प्रौढा संज्ञा और ५५ के पश्चात् वृद्धा संज्ञा लिखी है.

अब हम इसके आगे शरीरकी गति आदिका क्रम अमृतसागरके २५ वें तरंगके लेखानुसार यहां लिखते हैं.

जन्मसे १० वर्षपर्यंत कोमलता, २० वर्षपर्यंत वृद्धिपन, ३० वर्षपर्यंत शरीरकी मुटाई, ४० वर्षपर्यंत बुद्ध्यागमन (बुद्धिआना), ५० वर्षपर्यंत त्वचाकी दृढता रहती है, ६० वर्षपर्यंत नेत्रोंमें ज्योति रहती है, ७० वर्षपर्यंत शरीरमें वीर्य रहताहै. तत्पश्चात् ८० वर्षपर्यंत शरीरमें वीर्य क्रमशः न्यून होता नष्ट हो जाताहै, ९० वर्षतक ज्ञान रहताहै. १०० वर्षतक भाषण, हस्तपादादिमें कुछ बल और मल मूत्रादि त्यागका ज्ञान रहताहै. ११० वर्षपर्यंत कुछ स्मरण मात्र ज्ञान रहताहै. और १२० वर्षपर्यंत शरीरमें प्राणमात्र रहताहै जो शरीर निरोगी रहे तो उक्तक्रम रहताहै परतु रोगयुक्त होनेसे १० वर्षमें उक्त प्रमाणानुसार किंचित् घटना होतीजातीहै एवं शास्त्रप्रमाणानुकूल मनुष्यकी आयु (१२०) एकसौ वीश वर्षकी है.

और भी–शुभकर्म करना, सत्य बोलना, देव, ब्राह्मण, वेदादिकी निंदा न करना, ब्रह्मचर्यपूर्वक वीर्य धारण करना, परोपकार करना, वृद्ध पुरु-

षोंको सर्वदा नमन करना, सच्छास्त्रावलोकन (उत्तमशास्त्रोंके अवलोकनसे) आयुर्वेदोक्त (ऋतुचर्या, दिनचर्या, रात्रिचर्यानुसार) रहना और पथ्यापथ्य आहार विहारादि परिपूर्ण ध्यान रखनेसे मनुष्य पूर्ण आयुको प्राप्त होताहै. तथा उक्त आचरणोंसे विरुद्ध कर्म करनेसे मनुष्यकी अल्पायु होजाती है. क्योंकि विरुद्ध आहार विहारसे मनुष्यको रोग उत्पन्न होते और उनमें पथ्यापथ्य परिपूर्ण ध्यान न रखनेसे वह रोग साध्यसे याप्य और याप्यसे असाध्य होके इस शरीरको नास कर देते हैं. इसलिये मनुष्यको अपने शरीरकी रक्षाके लिये आयुर्वेदोक्त रीत्यनुसार अवश्य चलना चाहिये. क्योंकि धन्वंतारि महाराजने सुश्रुतमें १०१ मृत्यु लिखी हैं। जिनमें १०० आगंतुक मृत्यु हैं जो कि प्रयत्न करनेसे दूर होजाती हैं और एक कालसंज्ञक मृत्युहै जो कि, ब्रह्मादि देवोंको भी आयुष्यके अंतमें नष्ट करदेती है. इसपर कोई प्रयत्न नहीं चलता. अतएव प्रत्येक मनुष्यको चाहिये कि, जहांतक यह शरीर रोगरहित रहै, जहांतक वृद्धावस्था प्राप्त न होवे; जहांतक इन्द्रियोंमें शक्ति न्यून न होवे और जबतक आयुका क्षय न होवे तबतक अपनी आत्माके कल्याणार्थ तपश्चरण योगाराधनादि सत्कर्मोंको करले, क्योंकि योगाराधन तपश्चरणादि सत्कर्मोंसे आगे हमारे मारकण्डेयआदि महर्षियोंकी भी आयु वृद्धिको प्राप्त हुई है, इसलिये मनुष्यने देहको प्राप्त होके अवश्य धर्मका संग्रह करना चाहिये। कारण कि इस देहके साथ केवल धर्मके व्यतिरिक्त अन्य कोई भी वस्तु नहीं जाती इसलिये स्वधर्मका त्याग कदापि न करना चाहिये.

एकोत्तरं मृत्युशतमथर्वाणः प्रचक्षते ॥
तत्रैकः कालसंयुक्तः शेषास्त्वागंतवः स्मृताः ॥ १ ॥
तथासत्यपि तैलादौ दीपो निर्वापयेन्मरुत् ॥
एवमायुष्यहीनेऽपि हिंसन्त्यागंतुमृत्यवः॥ २ ॥ इत्युक्तं सुश्रुते.

अथ वातप्रकृतिवाले पुरुषके लक्षण.

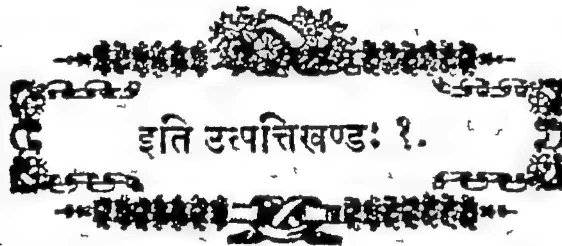
छोटे बाल कृश (दुबला) और रूखा शरीर, वाचाल, चंचलमनहो और आकाशीय स्वप्न आवें उसे वातप्रकृति जानो.

अथ पित्तप्रकृति—तरुणावस्थामें श्वेत बाल होजावें, बुद्धिमान् होवे पसीना अधिक आवे क्रोधी होवै और स्वप्नमें तेज दीखै सो पित्तप्रकृति है.

कफप्रकृति—गम्भीरबुद्धि, स्थूलअंग, चिकने बाल, बलवान् होवे और स्वप्नमें जलस्थान देखै सो कफप्रकृति है.

निद्रालक्षण—जिस मनुष्यको कफ और तमोगुण अधिक हो उसे मूर्च्छा और निद्रा आती है, यदि वात पित्त और रजोगुण अधिक हो तो चक्र और संदेह होवे, कफ वात और तमोगुण अधिक होय तो तंद्रा [अधमुची आँखें] होतीहैं यदि बल नष्ट होगया हो तो ग्लानि आतीहै तथा दुःख अजीर्ण और थकावटसे भी ग्लानि होती है और निर्बलतासे उत्साह न होवै तो आलस्य आता है.

इति श्रीनूतनामृतसागरे उत्पत्तिखण्डे अवस्थादिक्रमनिरूपणे पंचमस्तरंगः ॥ ५ ॥


इति उत्पत्तिखण्डः १.



सूचना।

इस विचारखंडमें अनेक वैद्यक ग्रन्थोंसे विचार विचारके "नूतनामृत-सागर" के उपयोगी ऐसे साररूपी विचार लिखेगयेहैं कि, जिनसे विचार पूर्वक जो वैद्यगण चिकित्साका प्रचार करेंगे तो अवश्यही रोगियोंका सुधार होकर सर्व सुखागार आरोग्यताका प्रसार होगा.

इसकी इक्कीस तरंगें हैं, जिनमेंसे प्रथमतरंगमें वैद्यसे शकुन पर्यंत ९ विचार हैं, द्वितीयमें नाड़ीसे रोगीपर्यंत १२ विचारहैं, तृतीयमें यन्त्रविचार, चतुर्थमें धात्वादि शोधन विचार, पंचममें मानाविचार, षष्ठमें युक्तायुक्त विचार, सप्तममें औषधक्रियाविचार, अष्टममें दीपनादिविचार और नव-ममें एकविंशतिपर्यंत लघुनिघंटु (जिसमें मुख्यौषध नामगुण) विचार वर्णन कियागयाहै.

यद्यपि हमने इसे लघुनिघंटु नाम दियाहै परंतु यह बृहन्निघंटुके सदृश काम देनेवालाहै, क्योंकि वर्तमानकालमें जिन औषधादि वस्तुओंका विशेष उपचार होरहाहै उनके मुख्य नाम गुण तथा उपकार उत्तमप्रकारसे निर्धार करके प्रदर्शित किये गयेहैं विशेषकर आशाहै कि, यह विचारखंड भी केवल इसी ग्रंथको नहीं परंच अन्य वैद्यक ग्रंथोंको भी विशेषतः उपकारी होगा.

श्लोकः।

शुद्धां ब्रह्मविचारसारपरमामाद्यां जगद्व्यापिनीं
वीणापुस्तकधारिणीमभयदां जाड्यान्धकारापहाम् ॥
हस्ते स्फाटिकमालिकां विदधतीं पद्मासने संस्थितां
वन्दे तां परमेश्वरीं भगवतीं बुद्धिप्रदां शारदाम् ॥ १ ॥

॥ श्रीः ॥

अथ विचारखण्डः २.

वैद्यविचारः ।

तत्रादौ वैद्यलक्षणम् ।

गुरोरधीताखिलवैद्यविद्यः पीयूषपाणिः कुशलः क्रियासु ॥
गतस्पृहोधैर्यधरः कृपालुः शुद्धोऽधिकारी भिषगीदृशःस्यात् १

वैद्यजीवनेह्युक्तमिदम्.

भाषार्थ—अब वैद्यके लक्षण लिखते हैं. "सत्यवक्ता गुरुसे, निघंटु निदान चिकित्सा आदि समग्र वैद्यविद्या पढ़ा हुआ, अमृतके समान हाथवाला, (अर्थात् जहाँ औषधी दे वहाँ यशकोही प्राप्त) दवा देनेमें पूर्ण चतुर निर्लोभी, धैर्यवान्, दयावान्, सदा पवित्रतासे रहनेवाला, निष्कपटी और आलस्यरहित" इन लक्षणोंसे जो युक्तहो सो सद्वैद्य कहाता है, सो उक्त वैद्यसेही औषधि लेना चाहिये अन्यसे नहीं ॥ १ ॥ यह वैद्यजीवनमें लिखाहै

निषिद्धो वैद्यः ।

कुचैलः कर्कशः स्तब्धः कुग्रामी स्वयमागतः ॥
पंच वैद्या न पूज्यन्ते धन्वंतरिसमा अपि ॥२॥ इत्युक्तं भावप्रकाशे.

भाषार्थ—जिसके मैले तथा फटे हुए वस्त्र और आचरणभी खोटेहों १, जिसका स्वभाव अत्यंत क्रोधयुक्तही रहे २, जो अतिगर्वी हो ३, जो छोटे तुच्छ गाँवमें रहनेवाला हो ४, जो बिनाबुलाये आपही आवे ५, ये पांच वैद्य यदि धन्वन्तरिजिके समानहों तो भी पूज्य तथा अंगीकार करनेके योग्य नहीं हैं ॥ २ ॥ यह भावप्रकाशमें लिखा है ॥

मूर्ख वैद्यादौषधं नाङ्गीकरणीयमित्युक्तं च वैद्यजीवने ।

औषधं मूढवैद्यानां त्यजन्तु ज्वरपीडिताः ॥
परसंसर्गसंसक्तं कलत्रमिव साधवः ॥ ३ ॥

भाषार्थ—रोगीको चाहिये कि—चाहे जैसे ज्वर आदि रोगसे पीड़ितहो परंतु मूर्ख वैद्यके हाथसे कदापि भूलकेभी औषध न खावे क्योंकि मूर्खकी औषधसे आरोग्य होना तो दूर है परंतु रोगवृद्धि तथा प्राणहानि होना

कोई आश्चर्य नहीं इसलिये जैसे उत्तम पुरुष व्यभिचारिणी स्त्रीको त्यागन कर देते हैं ऐसेही मूर्ख वैद्यको रोगीभी त्यागन कर देवे ॥ ३ ॥ यह वैद्यजीवनमें लिखा है ॥

राजदंडयोग्यवैद्यः ।

औषधं केवलं कर्तुं यो जानाति न चामयम् ॥
वैद्यकर्म स चेत्कुर्याद्वधमर्हति राजतः ॥ ४ ॥ भा० प्र०

भाषार्थ–जो वैद्य केवल औषधही करना जानता हो और रोगको निदानपूर्वक न पहिचानता हो तो राजाको चाहिये कि, अपने राजभरमें उसे औषध न देने देवे यदि देवे तो यथोचित्त पूर्णदंड देवे ॥ ४ ॥

इति वैद्यविचारःसमाप्तः ॥

अथ वैद्यमुख्यकर्मविचारः ।

तत्र चिकित्साफलमाह ।

क्वचिदर्थः क्वचिन्मैत्री क्वचिद्धर्मः क्वचिद्यशः ॥
कर्माभ्यासः क्वचिच्चेति चिकित्सानास्तिनिष्फला॥५॥भा०प्र०

भाषार्थ–अब वैद्यको जिन मुख्य कर्मोंका विचार करना चाहिये सो लिखते हैं–प्रथम तो वैद्य इस बातपर पूर्ण ध्यान देवे कि, चिकित्सा कीहुई कभी निष्फल नहीं होती, क्योंकि कहीं तो औषध देनेसे धन मिलता है कहीं मित्रताही होती है, कहीं धर्म होता है, कहीं केवल यशही प्राप्त होता है और यदि कुछ भी न हो तो वैद्यकर्मका अभ्यास तो बनाही रहता है, इसलिये वैद्य चिकित्सा करनेसे कभी न हटे ॥ ५ ॥

चिकित्सस्य रोगिणो लक्षणमाह ।

निजप्रकृतिवर्णाभ्यां युक्तः सत्त्वेन चक्षुषा ॥
चिकित्स्यो भिषजा रोगी वैद्यभक्तो जितेंद्रियः॥ ६ ॥
आयुष्मान्सत्त्ववान्साध्यो द्रव्यवान्मित्रवानपि ॥
चिकित्स्यो भिषजा रोगी वैद्यवाक्यकृदास्तिकः ॥ ७ ॥

भाषार्थ–अब वैद्य कैसे रोगीको औषधि देवे और कैसेको न देवे सो लिखते हैं–अपनी प्रकृति और वर्णसे युक्तहो, नेत्रादि कर्मेन्द्रियोंकी शक्ति युक्तहो, वैद्यको ईश्वरभाव मानता हो, जितेन्द्रिय हो (अर्थात् मिथ्या आहार विहार न करै) ऐसे रोगीको वैद्य औषध देवे ॥ ६ ॥ एवं जो रोगी आयुयुक्त, बलयुक्त, द्रव्ययुक्त, मित्रयुक्त, आज्ञाकारी (वैद्यके कहनेके अनुसार चलनेवाला) विश्वासी (वैद्यका पूर्ण विश्वास रखनेवाला) और साध्य रोगयुक्त हो तो औषध दे अन्यथा नहीं देवे ॥ ७ ॥

अथ चिकित्स्यः ।

चंडसाहसिको भीरुः कृतघ्नो व्यग्र एव च ॥
शोकाकुलो मुमूर्षुश्च विहीनः करणैश्च यः ॥ ८ ॥
वैरी वैद्यविदग्धश्च श्रद्धाहीनश्च शङ्कितः ॥
भिषजामविधेयाःस्युर्नोपक्रम्या भिषग्विदा ॥ ९ ॥ भावप्रकाशः

भाषार्थ–जो रोगी क्रोधी, हठी, कृतघ्न (किये उपकारको न माननेवाला) टेढ़ी प्रकृतिवाला, शोकित, किसीप्रकार (कारण) से मरनेकी इच्छा करनेवाला, निर्बल (इन्द्रियोंके बलसे हीन) वैद्यविरोधी, अर्द्धवैद्य, संशययुक्त और श्रद्धाहीन हो; वैद्यको चाहिये कि, ऐसे रोगीको कदापि औषध न देवे ॥ ८ ॥ ९ ॥ यह भावप्रकाशमें लिखा है.

दर्शनस्पर्शनप्रश्नैः रोगिणो रोगनिश्चयम् ॥
आदौ ज्ञात्वाततःकुर्याच्चिकित्सांभिषजांवरः ॥ १० ॥

भाषार्थ–रोगीको देखके, स्पर्श करके (छूके) और सब वृत्तान्त पूछके रोगको निश्चय करनेके पश्चात् श्रेष्ठ वैद्यको चिकित्सा करनी चाहिये ॥ १० ॥

देशं बलं वयः कालं गुर्विणीं गदमौषधम् ॥
वृद्धवैद्यमतं ज्ञात्वा चिकित्सामारभेत्ततः ॥ ११ ॥ ग्रन्थान्तरे.

भाषार्थ–इसीप्रकार १ देशविचार २ बल विचार ३ अवस्था विचार ४ (पुरुष तथा गर्भिणी स्त्रीका) रोग विचार ५ काल विचार ६ दूत विचार ७ शकुन विचार ८ नाड़ी विचार ९ नेत्र विचार १० जिह्वा विचार ११ मूत्र विचार १२ स्वप्न विचार १३ औषध विचार १४ अर्थ विचार

१५ कर्म विचार १६ अग्निबलविचार १७ (रोगीका) साध्यासाध्य विचार १८ पथ्यापथ्य विचार १९ और औषधि अनुपान विचार इत्यादिको शोचके वृद्धवैद्य अर्थात् सुश्रुत, चरक आदि प्राचीन मुनियोंके मतको विचार (जान) के वैद्य चिकित्सा करे ॥ ११ ॥

अथ देशविचारः ।

भूमिदेशस्त्रिधानूपो जांगलो मिश्रलक्षणः ॥ १ ॥

भाषार्थ–इस भूमिपर तीन प्रकारके देश हैं १ अनूपदेश २ जाङ्गल देश और ३ मिश्रदेश (साधारणदेश) अब इनके पृथक् पृथक् लक्षण लिखते हैं.

१ अनूपदेश–जहाँ सदैव बहुतसा जल बहता रहै, पर्वत हो, कफ तथा बादीके रोग विशेष उत्पन्न होते हों उसे अनूपदेश जानो.

२ जांगलदेश–जहाँ थोड़ा जल तथा वृक्ष भी हों और बादीकी विशेषता हो उसे जांगलदेश जानना चाहिये.

३ मिश्रदेश–जहाँ शीत, उष्ण और वर्षा समान होनेसे वात, पित्त और कफ भी तुल्यही हों उसे साधारण देश (मिश्र) कहते हैं.

जो मनुष्य जिस देशमें उत्पन्न होताहै उसकी प्रकृति उसी देशके अनुसार होती है. इसलिये वैद्य प्रथम देश विचार करके जिसको जिस देशमें जो जो हितकारी औषधि हैं उन्हीं का प्रचार करै अन्यथा नहीं. ऐसा भावप्रकाश और वृद्धवाग्भटमें लिखा है. इति देशविचारः ।

अथ कालविचारः ।

काल अर्थात् समय भी ३ प्रकारका है १ शीतकाल २ उष्णकाल ३ वर्षाकाल इन तीनों कालोंका विचार इस प्रकार है कि:–

१ यदि शीतकालमें यथोचित ठंढसे न्यूनाधिक ठंढ पड़ै अथवा गर्मी होने लगै तो रोग उत्पन्न होंगे. २ उष्णकालमें समयकी मिति (प्रमाण) से न्यूनाधिक उष्णताहो अथवा शीत पड़ने लगै तो रोग उत्पन्न होंगे. ३ इसीप्रकार वर्षाकालमें उससमयकी योग्यतासे न्यूनाधिक (कम-बढ़) वर्षा हो अथवा बिल्कुल वर्षा न हो तोभी रोग उत्पन्न होंगे, वैद्यको इस बातका पूर्ण विचार करना चाहिये. इति कालविचारः ।

अथावस्थाविचार।

अवस्थाके कई भेद हैं परन्तु मुख्य अवस्था तीनहीं प्रकारकी हैं। १ बाल्यावस्था, २ तरुणावस्था, ३ वृद्धावस्था, १ बाल्यावस्थामें कफ, २ तरुणावस्थामें पित्त और ३ वृद्धावस्थामें वायुकी वृद्धी रहती है. इसलिये वैद्यको अवस्थाका विचार करके उपचार करना चाहिये. इति अवस्थाविचारः॥

अथ रोगविचार।

रोगविचार ३ प्रकारसे किया जाता है. १ देखकर २ छूकर ३ पूछकर.

१ जैसे कामलारोग जिसे कमल तथा पीलियेका रोग कहते हैं ऐसेही अनेक रोग जो देखनेसेही ज्ञात होजाते हैं.

२ ज्वर आदि कई रोग रोगीके शरीरस्पर्श (छूनेसे) ज्ञात होते हैं.

३ और उदरशूल (पेट दूखना) पार्श्वशूल (पसली दूखना) मस्तकपीड़ा, बवासीर, उपदंश (गर्मी) प्रमेह (परमा) चित्तभ्रम (हौलदिल) और भूतादिबाधा इत्यादि अनेकरोग पूछनेसेही यथार्थ ज्ञात होते हैं.

इसलिये वैद्य उक्त तीनप्रकारोंमेंसे जिसरोगका जिसप्रकारसे निश्चय होसके फेर तत्पश्चात् उस रोगका निदान करे कि, यह रोग कितने प्रकारकाहै. उनमेंसे इसमें किसके लक्षण मिलते हैं. इसका विचार करके पश्चात् औषधिका उपचार करै. इति रोगविचार.

अथ कालज्ञानविचार।

कालज्ञान विचार—उसे कहते हैं जिससे रोगीके मरण जीवनका निश्चय होजाता है.

१—जिस रोगीको रात्रिमें दाहहो और दिनको शीत (जाड़ा) लगै और कंठमें कफका घरांटा हो तो वह रोगी अवश्य मृत्युको प्राप्त होवे.

२—जिस रोगीकी नाककी नोक ठंढीहो और शरीरमें शूल चलै वह रोगी निश्चय मरै.

३—जिस रोगीकी कांति, बल, लज्जा आदि नष्ट होजावें तथा स्वभाव क्रोधीकासा होजावे वह रोगी ६ मासकी अवधिमें मरजावे.

४—जिस रोगीकी गति भंग होजावे, शरीरका रंग पलट (बदल) जावे और सुगंधि दुर्गंधिका ज्ञान न रहै वह रोगी भी मृत्युको प्राप्त हो जाय.

५-जिस रोगीको वृक्षका पेड तथा डालियोंमें अग्निके सूक्ष्म विभाग, (चिनगारियां) दिखाई देवें वह ६ मासमें मरजावे.

६-जिस रोगीको पसीना किंचित् कभी न निकले और कामदेवसे हीन होजावे वह ३ मासमें मृत्युको प्राप्त होवे.

७-जिस रोगीको कानके छिद्र मूँदने पर सुनाई नहीं देवे वह अवश्य मरे.

८-जिस रोगीके नेत्र, देह और मुखका वर्ण वदलजावे सो निश्चय मरे.

९-जिस रोगीको अपनीही जीभ और नाककी अनी तथा दोनों भौंहका मध्यभाग दृष्टि न पडे वह रोगी निश्चय मृत्युवश होजावे.

१०-जिस रोगीके नेत्र लाल और मुखवर्ण कुछका कुछही होजावे वह निश्चय मरे.

११-जिस रोगीकी इन्द्रियां अपने विषयको ग्रहण न करें (जैसे नेत्र रूप देखना न चाहें कान शब्द न सुनें, जीभ रसको न जानें इत्यादि) तो वह अवश्य मरे.

१२-जिस रोगीकी वाणी वोलनेसे थकित हो जावे और शक्तिहीन हो जावे, वह निश्चय मरे.

१३-जिस रोगीको कांच तथा जलमें अपनी परछाई (छाया) न दीखे वह भी मरे.

१४-जिस रोगीका मुख लाल कमलकी नाई हो जावे. जिह्वा (जीभ) काली हो जावे और शरीरमें पीड़ा उत्पन्न हो वह निश्चय मरे.

१५-जिस रोगीको आश्लेषा, शतभिषा, आर्द्रा, स्वाती, मूल, पूर्वाफाल्गुनी, पूर्वाषाढा, पूर्वाभाद्रपदा, भरणी ये नक्षत्र. रवी, शनि, मंगल ये वार. तथा चतुर्थी, षष्ठी, अष्टमी, द्वादशी इन तिथियोंमें रोग उत्पन्न हो वह अवश्य मृत्युवश होवे.

१६-जिस रोगीके कांधे कँपने लगें वहभी अवश्य मरे.

१७-जिस रोगीको दूसरे मनुष्यकी पूतली (आँखका चमकताहुआ तारा) में अपना स्वरूप न दीखे वह निश्चय मरे.

१८-जिस रोगीको सूर्योदयके समय दाहिना तथा सूर्यास्तके समय वाँया

स्वर सर्वदा चलै वह रोगी अवश्य मृत्युको प्राप्त होवेगा, इत्यादि वैद्यको कालज्ञानका विचारभी अवश्य करना चाहिये.

इति कालज्ञानविचार।

अथ दूतविचार।

वैद्यको बुलानेके लिये काना, लँगड़ा, नकटा और मूर्ख दूतको न भेजना चाहिये. बरन् चतुर, उत्तम वर्णवाला, उत्तमचेष्टावाला, सुखी और निर्मल वस्त्रादि धारण किये हो ऐसे दूतको रथादिक यान (सवारी) पर बैठाकर तथा कुछ सुन्दर फल वैद्यके भेंटार्थ देकर भेजना चाहिये (इस बातपर रोगी तथा उसके घरके लोगोंको पूर्ण ध्यान रखना चाहिये.)

वह दूत जब वैद्यके घर पहुँचे तब अपनी नासिकाके स्वरको देखै जिस ओरका स्वर चलता हो वैद्यके उसी ओर जाके खड़ा होवे और वह फल भेंट कर देवे, वैद्यभी उस दूतको देखकर विचार करे, यदि काना लँगड़ा आदि निषिद्ध लक्षणवाला हो तो समझलेवे कि, रोगीका आरोग्य होना दुस्तर है, तथा श्रेष्ठगुण शुभलक्षणवाला हो तो रोगी आरोग्य होजा वेगा ऐसा निस्संदेह विचार उसके साथ रोगीके गृह जावे. इति दूतविचार.

अथ शकुनविचार।

जिस समय वैद्यको बुलानेके लिये दूत जावे, उससमय इस बातपर पूर्ण ध्यान देवे जो सामने जल आदि शीतल पदार्थ मिलैं तो उसका फल अच्छा नहीं है जो सामने अग्नि आदि उष्ण पदार्थ मिलैं तो उसका फल अच्छा नहीं है, जब वैद्यके घर पहुँचे तो वैद्य दूतसे पूंछलेवे कि, आते समय तुझे क्या (उष्ण अथवा शीत) पदार्थ मिलाथा, इसीप्रकार वैद्य जब रोगीके घर जावे तब भी विचार करे जो जल आदि शीतल पदार्थ सन्मुख मिलैं तो फल उत्तम है और अग्नि आदि उष्ण पदार्थ मिलैं तो शकुन फल नष्ट जानै. इतिशकुनविचार.

इति नूतनामृतसागरे विचारखण्डे वैद्यविचारादिनिरूपणं नाम प्रथमस्तरंगः ॥ १ ॥

अथ नाड़ीविचार।

पुंसो दक्षिणहस्तस्य स्त्रियो वामकरस्य तु ॥ अंगुष्ठमूल- गां नाडीं परीक्षेत भिषग्वरः ॥ १ ॥ अंगुलीभिस्तु तिसृभिर्ना

८-जिस मनुष्यके शरीरमें ज्वरका कोप हो उसकी नाड़ी उष्णतासे शीघ्र चलती है.

९-जिस रोगीकी नाड़ी एकसी समान भावसे स्थानपर चले वह रोगी नहीं मरै.

१०-कामातुर और क्रोधी पुरुषकी नाड़ी शीघ्रतासे चलती है.

११-चिंतावाले पुरुषकी नाड़ी क्षीण चलती है.

१२-भयातुर (किसी प्रकारसे डराहुआ) पुरुषकी नाड़ी अत्यंतही क्षीण चलती है.

१३-मंदाग्नि और धातुक्षीण पुरुषकी नाड़ी अतिमंद चलती है.

१४-रुधिरके विकारवाले पुरुषकी नाड़ी उष्णतायुक्त भारी चलती है.

१५-जिसके पेटमें आमांश (आँव) हो उसकी नाड़ी अतिभारी चलती है.

१६- भूखे मनुष्यकी नाड़ी हलकी और शीघ्रतासे चलती है.

१७-भोजन करनेपर मनुष्यकी नाड़ी धीरे चलती है.

१८-मल गिरनेपर मनुष्यकी नाड़ी अत्यंत शीघ्र चलती है.

१९-सुखयुक्त पुरुषकी नाड़ी धीरे और बलपूर्वक चलती है.

२०-इसी प्रकार नाड़ीपरीक्षाके अनेक भेद हैं सो बुद्धिमान् सद्वैद्यको अपनी बुद्धिसे शास्त्रोक्त प्रमाणानुसार स्त्री पुरुषकी नाड़ीपरीक्षा करनी चाहिये, जैसे योगाभ्यासी योगमार्गसे ब्रह्मको जानलेते हैं तैसेही श्रेष्ठ वैद्यको भी नाडीके अभ्याससे शरीरका समग्र वृत्तान्त जानलेना चाहिये.

इति नाडीविचार ।

अथ नेत्रविचार.

१ जिस रोगीके नेत्र रूखे, धूम्रवर्ण (काला और लाल मिलाहुआ) अथवा कुछ ललाई लियेहुएहों, भीतर कुछ जलकी झलक मारतेहों और वह रोगी उन्मत्तके समान देखता हो तो उसपर वादीका अधिक वेग जानना चाहिये अर्थात् ऐसे नेत्र वादीवालेके होते हैं.

२-जिस रोगीके नेत्र हलदीके समान पीले, लाल तथा हरे हों, दीपक

न देखसके और जलते हों तो पित्तका अधिक वेग जानो अथात् पित्त-वालेके नेत्र ऐसे लक्षणयुक्त होते हैं.

३–जिन रोगीके नेत्र चिकने; जलसे भरहुए श्वेत; ज्योतिहीन और बलयुक्त हों तो कफका वेग अधिक जानो.

४–जिन नेत्रोंमें उपरोक्त नियमानुसार दो दोषोंके लक्षण मिलते हों उन्हें दो दोषयुक्त और तीन दोषके मिलते हों उन्हैं त्रिदोषीय जानों.

५–त्रिदोष (वात, पित्त, कफ) के कोपमें रोगीके नेत्र भीतर को घुसजाते हैं, उनसे पानी बहने लगता है, अथवा बीचमें मुचेहुए किंवा कोरोंपर खुलेहुए रहते हैं, त्रिदोषके लक्षणयुक्त नेत्र रोगीको नष्ट करने (मारने) में कुछ न्यूनता (शेष) नहीं रखते हैं.

इसलिये वैद्यको अवश्य चाहिये कि, "रोगीकी परीक्षा नेत्रद्वारा करै" ऐसा भावप्रकाशमें लिखा है.

इति नेत्रविचार ।

अथ जिह्वापरीक्षा ।

१–जिस रोगीकी जीभ नीली, कुछ हरेपनको लिये हुए, तथा खरखरी और रूखी हो तो वातका कोप जानो.

२–जिस रोगिकी जीभ लाल या कुछ कुछ श्यामतायुक्त लाल हो तो पित्तका कोप जानना चाहिये.

३–जिस रोगीकी चिकनी, गीली और श्वेत जीभ हो तो कफका कोप जानो.

४–यदि दो आदि दोषोंके लक्षण मिलैं तो दो दोषयुक्त जानो.

५–जिस रोगीकी जिह्वा चारों ओरसे जलीहुईसी, तथा काली और टेढ़ी पड़गई हो तो त्रिदोषका कोप जानना चाहिये. उक्त नियमानुसार वैद्य जिह्वाका विचार करै.

इति जिह्वापरीक्षा ।

अथ मूत्रपरीक्षा ।

चार घड़ी रात्रि अवशेष रहे (अंग्रेजी घंटासे प्रातःकालके ४ और

४ ½ साढ़ेचार बजेके मध्य तब रोगीको काँच तथा काँसे (फूल) के पात्रमें मुताके उस मूतको ढांकके रहने देवे. सूर्योदय होनेपर उसे श्वेत काँचके पात्रमें डालकर वैद्य परीक्षा करे.

१–यदि मूत्र जलके समान पतला, रूखा, अधिक और नीले वर्णका हो तो रोगीको बादीका बिकार जानो.

२–यदि लाल कुसुमके समान, अथवा टेसूके फूलोंके समान पीला और थोड़ा हो तो पित्त किंवा गर्मीके विकारयुक्त मूत्र जानना चाहिये.

३–यदि गाढ़ा, श्वेत और चिकना हो तो कफके विकारयुक्त जानो.

४–जिसका मूत्र सरसोंके तेल सदृश हो उसे वातपित्तसे युक्त रोगी जानो.

५–जिसका काला और बुद्बुदेयुक्त मूत्र हो तो सन्निपात रोग जानो.

६–लघुशंका करते (मूतते) समय जिस रोगीके मूत्रकी लाल धारा उतरे उसे दीर्घ रोगी जानो.

७–लघुशंकाके समय जिसकी काली धारा हो वह रोगी मरजावेगा.

८–जिसके मूत्रमें बकरीके मूत्रसदृश गंध आवे उसे अजीर्णरोग जानो.

९–जिसका मूत्र उष्ण (गरम) लाल तथा पीला हो उसे ज्वररोग जानो.

१०–जिसका मूत्र कुएँके जलसदृश स्वच्छ हो उसे उत्तम आरोग्य जानो. उक्त नियमानुसार मूत्रपरीक्षा करनेके पश्चात् उसी मूत्रको ४ घड़ी १ ½ डेढघंटके लगभग पर्यंत धूपमें रक्खो फिर उसपर कपड़े तथा रूईसे तेलकी बूंद टपकाकर निम्न नियमोल्लिखित परीक्षा करो.

१–यदि वह तेलकी बूंद मूत्रमें डालतेही फैल जावे तो रोगीको साध्य जानो. वह रोगी शीघ्रही आरोग्य होगा.

२–यदि वह बूंद (तेलकी) मूत्रमें फैले नहीं और वैसीही स्थिर होरहे तो रोगीको कष्टसाध्य जानो, कठिनाईसे अच्छा होगा.

३–यदि बूंद मूत्रमें डूबजावे अथवा चक्रवत् चहूँ ओर फिरने लगै तो वह रोगी असाध्य है सो निश्चय मरजावे.

४–यदि तेलकी बूंदमें छिद्र पडजावे अथवा खड्ग वा दंड या धनुषाकार बनजावे तो वह रोगी निश्चय मरैगा.

५—यदि रोगीके मूत्रपर तेलकी बूंद डालनेसे तालाब, हंस, कमल हाथी, छत्र, चमर अथवा तोरणका आकार बनजावे तो वह रोगी आरोग्य होजावेगा. इन युक्तियोंसे वैद्य मूत्रपरीक्षा करै. इति मूत्रपरीक्षा.

अथ स्वप्नपरीक्षा.

रोगीको चाहिये कि, सद्वैद्यके अतिरिक्त (सिवाय) अपने अशुभ स्वप्न का वर्णन किसी अन्यके प्रति न करै और प्रातःकाल उठतेही स्वशक्त्यनुसार हवन, अन्न, वस्त्र, पुस्तक, छत्र,पात्र, स्वर्ण, भूमि आदिक दान करै तथा उत्तम वेदमंत्र या महामृत्युञ्जयादिकके जप करावे तो खोटे स्वप्नका फल सर्व शान्त होजावे.

१—यदि रोगी स्वप्नमें नग्न, शीशमुंड, लाल या काले वस्त्रधारी, नकटे, कनफटे, काले, आयुध तथा फांसी हाथमें लिये, मारते हुए मनुष्योंको देखै तो वह अच्छा न होगा.

२—यदि रोगी स्वप्नमें भैंस, गधा या ऊँटकी सवारी करके दक्षिणदिशा गमन करे तो वह अच्छा न होगा.

३—यदि रोगी अपनेको स्वप्नमें जलमें डूबता हुआ, अग्निमें जलता हुआ, सिंहादिसे अपना भक्षण, दीपक बुझाना, तेल तथा मदिरापान, लोहधारण, पक्वान्नभक्षण और कुँएमें गिरता हुआ ऐसे लक्षणीय दशायुक्त देखै तो अपना असाध्य रोग समझै.

४—यदि रोगी स्वप्नमें राजा, याचक, मित्र, ब्राह्मण, गौ, अग्नि, तीर्थादिकोंको देखै तो शीघ्र आरोग्य होजावैगा.

५—यदि रोगी स्वप्नमें कीचड़से बाहर निकलजावे, शत्रुओंको जीतै, महल या रथपर चढ़ै, मांस-मीन- फल खावे, अगम्या स्त्रीसे मैथुनकरै, अपने शरीरमें विष्ठाका लेप करै, रोवे, अपनी मृत्यु देखै, तथा कच्चा मांस खावे तो वह रोगी शीघ्रही आरोग्य होगा.

६—जिस रोगीको स्वप्नमें जोंक, सर्प, भ्रमर और मच्छर काटै तो शीघ्र आरोग्य हो उसी प्रकार अच्छे मनुष्यको भी ये स्वप्न आवें तो फल यथोचित जानना चाहिये. वैद्य उक्त नियमोंसे रोगीका स्वप्न पूछकर विचार करै.

इति स्वप्नपरीक्षा।

अथ औषधविचार.

वैद्यको चाहिये कि, औषधके गुणागुणको विचारके रोगीको उस रोगानुसार औषध देवे, यदि रोग अधिक हो तो औषध अधिक देवे और थोडाहो तो औषध अधिक न देवे, औषधका हीन, मिथ्या, अतियोग न होनेदेवे क्योंकि ऐसा होनेसे रोगकी अधिकता हो जाती है, इसलिये औषधिका यथार्थ विचार करके देना चाहिये.

१–हीनयोग–वैद्य ग्रंथोंमें लिखे प्रमाणानुसार नहीं, वरन् उस प्रमाणसे अतिन्यून करके औषध मिलाना यह हीनयोग है.

२–मिथ्यायोग–वैद्यक ग्रंथोंमें कुछ लिखा और वैद्यने कुछ अन्यही औषधका उपयोग किया, यह मिथ्यायोग है.

३– अतियोग–वैद्यक ग्रंथोंमें लिखे प्रमाणसे अत्यंत अधिक मिलादेना यह अतियोग है.

इति औषधविचार।

अथ अर्थविचार.

शब्द, स्पर्श, रूप, रस, गंध ये पाँचों पांच इन्द्रियोंसे सम्बन्ध रखते हैं.

अर्थात–१शब्द कानोंसे, २ स्पर्श त्वचासे, ३ रूप नेत्रोंसे, ४ रस जिह्वासे और ५ गंध नासिकासे सम्बन्ध रखते हैं. उक्त विषयोंका ज्ञान उक्तेन्द्रियोंसेही होता है, सो उनको यथार्थ प्रमाणानुसार रखनेसे यह शरीर ठीक रहता है. यदि हीन या मिथ्या किंवा अतियोग हुआ तो शरीर रोगयुक्त हो जाता है. जैसे–

१–कानोंको सुननेकी सामर्थ्य होके थोडा या अधिक अथवा कुछका कुछही सुने.

२–स्पर्श करनेकी सामर्थ्य होके थोडा या अधिक अथवा कुछका कुछही स्पर्श करे.

३–देखनेकी सामर्थ्य होके थोडा या अधिक अथवा कुछका कुछही देखै.

४–स्वाद लेनेमें सामर्थ्य होके थोडा या अधिक अथवा कुछ अन्यही स्वाद लेवे.

५–सुगंध लेनेमें सामर्थ्य होके थोडी या अधिक अथवा कुछ अन्यही सुगंध लेवे तो उक्त कारणोंसे पुरुष रोगयुक्त होजाता है. वैद्य इसपर ध्यान दे कि रोगी इन पाँचोंका यथार्थ रीति वर्त्ताव रक्खे. तथा अन्य सर्व जनोंको उक्त नियमपूर्वक अपना वर्त्ताव रखना चाहिये.

इति अर्थविचार ।

अथ कर्मविचार.

कर्म तीन प्रकारके हैं, अर्थात् १ कायिक, २ वाचिक, ३ मानसिक.

१–कायिक–जो काया (शरीर) से किये जावें सो कायिक कहाते हैं.

२–वाचिक–जो वाचा (वाणी) से किये जावें सो वाचिक.

३–मानसिक–जो मन (अंतःकरण) से किये जावें.

उक्त कामोंका भी हीन, मिथ्या और अतियोग न होना चाहिये क्योंकि ऐसा होनेसे रोगग्रस्त हो जावेगा. जैसे–

१–कायिक कर्म–अपनी काया (देह) की शक्तिसे न्यूनाधिक तथा अन्यही करै.

२–वाचिक कर्म–अपनी वाणीकी शक्तिसे न्यूनाधिक तथा अन्यही करै.

३–मानसिक–अपने मनकी शक्तिसे न्यूनाधिक अथवा अन्यही करै तो ऐसा करनेसे रोगी होगा और उक्तकर्म तत्तत् (अपनी अपनी) शक्ति अनुसार करै तो मनुष्य सर्वदा रोगरहित रहैगा. वैद्यको रोगीके कर्मविचार पर पर्ण ध्यान देना चाहिये.

इति कर्मविचार ।

अथ अग्निबलविचार.

अग्नि पांच प्रकारकी होती हैं अर्थात्–१ मंदाग्नि, २ तीक्ष्णाग्नि, ३ विषमाग्नि, ४ समाग्नि, ५ भस्माग्नि.

१–मंदाग्नि–कफप्रकृतिवालेको मंदाग्नि रहती है वह कफरोगोंको उत्पन्न करती है सो ठीक नहीं है.

२ तीक्ष्णाग्नि–पित्तप्रकृतिवालेकी तीक्ष्णाग्नि होती है, सो वह खाये हुए पदार्थको पाचन करती है, परंतु गर्मी (उष्णता) के रोगोंको उत्पन्न करनेवाली है.

३ विषमाग्नि—वात प्रकृतिवालेकी विषमाग्नि होती है, यह कभी अन्नको पाचन करती है और कभी नहीं करती इसप्रकार वादीके रोगोंको भी उत्पन्न करती है.

४ समाग्नि—सब खाये हुए पदार्थको उत्तम प्रकारसे यथायोग्य पचादेती है. जिस मनुष्यकी समाग्नि होती है वह सर्वदा सुखयुक्त रहताहै यह श्रेष्ठ है.

५ भस्माग्नि—इससे भस्मक रोग उत्पन्न होता है, किसी औषधादिसे शरीरका भीतरी कफ अत्यन्त न्यून होजावे और पित्त अग्निरूप बढ़ता जावे तो वायुकी प्रेरणासे महातीव्र अग्नि होकर भस्माग्नि हो जाती है, सो यह अच्छी नहीं (हानिकारक) है. क्योंकि भस्माग्निवाले पुरुषको नियत-कालपर भोजन, पान प्राप्त न हुआ तो वह प्यास, पसीना, दाह, मूर्च्छा आदि उत्पन्न करके मनुष्यको निधन (नष्ट) कर देती है. इसलिये वैद्य अग्निबल विचारके चिकित्सा करे. अन्यथा कीहुई चिकित्सा निष्फल हो जातीहै.

इति अग्निबलविचार ।

अथ साध्यासाध्यविचार.

साध्यलक्षण—जिस रोगीकी प्रकृति ठिकाने हो, अग्नि तीव्र हो, उपद्रवयुक्त रोग न हो, रोग एकही दोषसे उत्पन्न हो, इत्यादि लक्षण-युक्त रोगीको वैद्य साध्य जाने और औषध देवे.

असाध्यलक्षण—जिस रोगीको रात्रिमें नींद न आवे, कंठमें कफ खरोवे, शरीरमें दाह हो, नाडी मंद चलै, वाणी (बोलनेसे) थकित होजावे, नेत्रादि समग्र इंद्रियां अपने अपने विषयसे रहित होजावें (उद्योग छोड देवें) अग्नि मंद पडजावे, प्रकृति बिगड जावे, नेत्र लाल होजावें, श्वास बढ़े, हृदयमें शूल चले तंद्रा हो (अधमुंची आँखें अर्थात् उसनींदासा होना) हिचकी उठे, निर्लज्ज होजावे, प्यास अधिक लगे, अधिक सोवे और चिकनापन लिये हुए पसीना निकलै इत्यादि लक्षणयुक्त रोगीको वैद्य असाध्य समझे ऐसे रोगीका बचना कठिन है इसलिये वैद्य ऐसे रोगीको औषध न देवे यदि देवे तो पूर्ण शोच विचारके; नहीं तो व्यर्थही अपयशका विभागी होगा.

इति साध्यासाध्यविचार.

पथ्यापथ्यविचार.

रोगीको जिस रोगपर जैसे पथ्य योग्य समझे वैसे करावे और कुपथ्य न होने दे क्योंकि पथ्यसे रोगीका रोग निरौषध भी शांत होजाताहै और कुपथ्यसे औषध सेवनपरभी कुछ नहीं होताहै देखिये कि, वैद्यजीवनमें यह लिखाहै.

पथ्ये सति गदार्तस्य किमौषधनिषेवणैः ॥

पथ्येऽसति गदार्तस्य किमौषधनिषेवणैः ॥ वैद्यजीवने ह्युक्तम्.

इति पथ्यापथ्यविचार।

अथ अनुपानविचार.

वैद्यको चाहिये कि–चूर्ण, गुटिका, अवलेह, हिम, क्काथ, घृत, तैल, आसव और भस्म आदि जिस अनुपानसे जिस रोगपर वैद्यकशास्त्रोंमें लिखा हो उसीप्रकार देवे जिससे रोगी शीघ्र शांत होजावे और विना विचारे ऐसा न करे कि चाहे जिस वृक्षकी जड चाहे जिस वस्तुके साथ पीसके चाहे जिस रोगपर देनेसेही काम रक्खो फिर आगे जो होगा सो होगा (इच्छितकार्य करे) ऐसा विना पढे लिखे और सद्गुरुकी शिक्षा पाये विना जो वैद्य बनके औषध करने लगते हैं वे महाब्रह्मघाती होते हैं और इसलोकमें अपकीर्त्ति प्राप्तकर मरनेपर कुम्भीपाक नरकमें पडते हैं इसलिये सर्वजनोंको इस बातपर पूर्ण ध्यान रखना चाहिये.

इति अनुपानविचार।

अथ रोगीविचार.

१ उत्तम लक्षणयुक्त वैद्य देखके औषध लेवे, २ जिससमय और जिस अनुपानके साथ वैद्य औषध देवे यथोचित लेवे ३ पथ्यसे रहै, ४ परिचारक (सेवक) भी चतुर रक्खे क्योंकि–१ सद्वैद्य, २ योग्यौषध, ३ चतुर सेवक, ४ जितेन्द्रिय तथा पथ्यसे चलनेवाला रोगी ये चार बातें यदि पूर्णरूपसे यथोचित मिलजावें तो कष्टसाध्यरोगभी साध्य होकर शीघ्र आरोग्य हो जाता है. इति रोगीविचार.

इति नूतनामृतसागरे विचारखण्डे नाडीविचारादिनिरूपणं नाम द्वितीयस्तरंगः ॥ २ ॥

---

१ यस्य कस्य तरोर्मूलं येन केन च पेषणम् । यस्मैकस्मै प्रदातव्यं यद्वा तद्वा भविष्यति ॥ १ ॥

२ प्रायश्चित्तं चिकित्सां च ज्योतिषं धर्मनिर्णयम् ॥ विनाशास्त्रेण यो ब्रूयात् तमाहुर्ब्रह्मघातिनम् ॥ २ ॥

यंत्रविचार.

तत्रादौ वालुकायंत्रम्।

भाण्डे वितस्तिगंभीरे मध्ये निहतकूपिके ॥
कूपिकाकण्ठपर्यन्तं वालुकाभिश्च पूरितम् ॥ १ ॥
भेषजं कूपिकासंस्थं वह्नितो यत्र पच्यते ॥
वालुकायंत्रमेतद्धियं त्रंतत्रबुधैःस्मृतम्॥२॥ रसप्रदीपेप्युक्तम्.

भावार्थ—१ एक बीता गहरी मट्टीकी काली हंडीमें दृढ कांचकी शीशी रखके उस शीशीके गलेतक हंडीमें रेत भरदे और जिस औषधको आँच देनाहो सो पहिलेही उस शीशीमें भरधरे तदनंतर उस हंडीको भट्टी पर चढ़ाके लिखे प्रमाण और समयपर्यंत आँच देवे. इसे वालुकायंत्र कहते हैं॥

दोलायंत्रम्।

निबद्धमौषधं सूतं भूर्जे तत् त्रिगुणाम्बरे ॥
रसं पोटलिकां काष्टे दृढं बद्धा गुणेन हि ॥ १ ॥
संधानपूर्णकुंभान्तःसोऽवलम्बितसंस्थितम् ॥
अधस्ताज्ज्वालयेदग्निं तच्चतुष्कक्रमेण हि ॥ २ ॥
दोलायंत्रमिदं प्रोक्तं स्वेदनाख्यं तदेव हि॥रसप्रदीपेप्युक्तम्.

भावार्थ—जो औषध शुद्ध करनाहो उससे तिगुणा बोझका कपडा उस-पर लपेटकर (अथवा उस वस्तुको वस्त्रके तीन लपेटे लगावे) उसकी पोटली बनाकर एक लकडीके मध्यमें इस युक्तिसे लटकावै कि, जिसमें वह घडे (जिस पात्रमें कांजी आदि पदार्थ उस वस्तुके शोधनके लिये भरा रहता है) के बीचोबीच अधरमें लटकती रहै और जिस पदार्थसे शुद्ध करना हो वह उस घडेके मुँहसे कुछ कम भरके उस घडेको भट्टीपर रक्खो और लिखे प्रमाण आँचदो, इसे दोलायंत्र कहते हैं.

१बहुधा साधारण काँच आँच लगतेही फूट जाता है. परन्तु उक्त कार्यके लिये एक जुदेही प्रकारका काँच बनायाजाता है जिसकी शीशी आँचसे नही तडकती और समय पर्यंत आँच सहन करती है ॥

स्वेदनयंत्रम् ।

साम्बुस्थालीमुखे बद्धे वस्त्रे स्वेद्यं निधाय च ॥
पिधाय पच्यते यंत्रं तद्यंत्रं स्वेदनं स्मृतम् ॥ १ ॥ र०प्र०

भापार्थ–जलयुक्त घटके मुखपर वस्त्र बाँधकर उसमें (जो शुद्ध करना हो सो) औषध रखके उसके ऊपर दूसरा पात्र रखदो अब उस घडेका मुँह बंदकरके उस यंत्रको लिखे प्रमाणानुसार भट्टीपर आँचदो ॥ इसे स्वेदनयंत्र कहते हैं.

विद्याधरयंत्रम् ।

अथ स्थाल्यां रसं क्षिप्त्वा निदध्यात्तन्मुखोपरि ॥
स्थालीमूर्ध्वमुखीं सम्यङ् निरुध्य मृदुमृत्स्नया ॥ १ ॥
ऊर्ध्वस्थाल्यां जलं क्षिप्त्वा चुल्ल्यामारोप्य यत्नतः ॥
अधस्ताज्ज्वालयेदग्निं यावत्प्रहरपंचकम् ॥ २ ॥
स्वाङ्गशीतात्ततो यंत्राद्गृह्णीयाद्रसमुत्तमम् ॥
विद्याधराभिधं यंत्रमेतत्तज्ज्ञैरुदाहृतम् ॥ ३ ॥

भाषार्थ–एकघडेमें रस (अथवा जो वस्तु रखनी हो सो) धरके उसके मुँहपर दूसरे घडेका पेंदा जमाओ और दोनोंको चिकनी मिट्टीमें लपेटीहुई कपडेकी पट्टीसे भलीभाँति बंदकरदो तदनंतर ऊपरवाले घडेमें पानी भरके भट्टीपर चढ़ादो वैद्यशास्त्रानुसार उसे ५ पांच प्रहर (पन्द्रह घंटे) पर्यंत लगातार आंच देकर जब वह स्वतः सर्वशीतल होजावे तब घडेमें रक्खी हुई वस्तुको निकाल लेवे. इसे विद्याधरयंत्र कहते हैं ॥

भूधरयन्त्रम् ।

वालुकाभिः समस्तांगं गर्ते मूषा रसान्विता ।
दीप्तोपलैः संवृणुयाद्यन्त्रं भूधरनामकम् ॥ १ ॥

भापार्थ–भूमिमें गढ़ा खोदकर उसमें एक शीशी धरके उसे गलेतक वालूसे पूरित करदेवे जिसमें वह दृढ़ होजावे तदनंतर दूसरी शीशीमें रस (अथवा जो वस्तु शोधन करना हो सो) रखकर उसके मुखपर वस्त्र अध-

वा धातुका डाट (जिसमें सूक्ष्म सूक्ष्म अनेक छिद्रहों) लगादेवे फिर इस दूसरे शीशेको पहिले (गढ़ेमें धरेहुए) शीशेके मुँहसे मुँह मिलाकर मिट्टी आदिसे दृढ़ करके उसी गढ़ेमें धरदे और ऊपरकी शीशी पर ईंधन (कंडा = गोबरी = उपली) रचके ऊपर तक दाब (ढांक) देवे पश्चात् लिखे प्रमाणानुसार आंच देवे जब स्वांग (स्वतः) शीतल होजावे तब नीचेके शीशेमें जो कुछ पदार्थ द्रव (पतला = बहताहुआ) होकर गिराहो उसे निकाल लेवे. इसे भूधरयंत्र कहते हैं.

डमरूयंत्रम् ।

यंत्रं डमरुसंज्ञं स्यात्तत्स्थाल्योर्मुद्रिते मुखम् ॥

भाषार्थ—दो मिट्टीके घडोंका मख परस्पर जोडके कपडमिट्टीसे बंद करदे नीचेके घडेमें जो वस्तु धरना हो सो धरके आंच लगावे और ऊपरके घडेके पेंदे (तली) पर पानी भरा चपटा वर्तन धरे अथवा मिट्टीकी किनारी ऊपरके बर्तनकी तलीपर बनाके उसपर कपडा धरदे और कपडेपर पानी छोडता जावे. इसी यंत्रके द्वारा ऊपरके पात्रमें नली लगाकर रस (अर्क) भी उतार सक्ते हैं. इसे डमरूयंत्र कहते हैं.

गजपुटम् ।

सपादहस्तमानेन कुण्डे निम्ने तथायते ॥ वनोपलसहस्रेण पूर्णे मध्ये विधारयेत् ॥ १ ॥ पुटनद्रव्यसंयुक्तां कोष्टिकां मुद्रितांमुखे ॥ अथार्धानि करंडानि चार्द्धान्योपरि निक्षिपेत् ॥२॥ एतद्गजपुटं प्रोक्तं ख्यातं सर्वपुटोत्तमम् ॥ रसप्रदीप.

भाषार्थ—सवाहाथ (३० अंगुल का एक शंकु बनाके उसीके प्रमाण लम्बा चौडा गहरा ($1\frac{1}{4}\times1\frac{1}{4}\times1\frac{1}{4}$ हाथ अर्थात् $1\frac{1}{4}$ घनात्मकहाथ) कुण्ड (गढ़ा) खोदके उसमें १००० जंगली गोबरी (आलने कंडा) मेंसे आधे नीचेके अर्धकुंडमें भरदो और जो वस्तु जलानाहो उसे संपुट करके उसमें धरो फिर आधी उपली ऊपरसे ढाँकके आग्नि लगादो जब स्वांग स्वतः (आपही) ठंढा होजावे तब वह संपुट निकाललो इसीप्रकार जिस

भस्ममें जितनी आँच देना होवे तितनी बार उक्तवत् करते जाओ, इसे सर्वोत्तम गजपुट कहते हैं. यह सर्वरसप्रदीप तथा भावप्रकाशमें लिखा है.

इति नूतनामृतसागरे विचारखण्डे यंत्रविचारनिरूपणं नाम तृतीयस्तरंगः ॥ ३ ॥

अथ धात्वादिसंशोधनविचार.

तत्र सप्तधातवः ।

स्वर्णं तारं प्रिये ताम्रं नागं वंगं मनोहरे ॥
स्वर्णाङ्गि जसदं लोहं सप्तैते धातवः स्मृताः ॥ १ ॥

अथोपधातवः ।

माक्षिकं तुत्थकं तालं नीलांजनमथाभ्रकम् ॥
मनःशिला च रसकं प्राहुः सप्तोपधातवः ॥ २ ॥ अनुपानत०

भाषार्थ–१ सोना, २ चांदी, ३ तांबा, ४ सीसा, ५ रांगा, ६ जसद जस्ता) और ७ लोहा ये मुख्य सात धातु हैं और (तांबा+जस्ता= पीतल, तांबा+रांगा=कांसा) तांबेमें जस्ता मिलानेसे पतिल और रांगा मिलानेसे कांसा ये संयुक्त धातु भी बनती हैं.

१ सोनामक्खी २ नीलाथूथा (हरियाथूथा) ३ हरताल ४ सुरमा ५ अभ्रक ६ मनशिल और ७ खपरिया ये सात उपधातुयें कहातीहैं ॥२॥

अब उक्त धातुओंके शोधनेकी विधि लिखते हैं.

जो धातु शोधनाहो उसके बारीक बारीक पत्र करो और तयारकर उन्हें " १ तेल २ छांछ (मट्ठा = मही) ३ गोमूत्र (गुमातर) ४ कुलथीका काढा और ५ कांजी " इन पाचों वस्तुओंमें क्रमशः प्रति सात सात अथवा तीन तीनबार बुझाओ. इनमेंसे " १ रांगा, २ सीसा ३ जस्ता, " इन तीनोंको गलाके तेल आदि उक्त पाचों पदार्थोंमें बुझाके पुनः तीन बार आक (अकाव) के दूधमें बुझानेसेही शुद्ध होजाते हैं.

सूचना–इन्हें गलाके बडी युक्तिसे बुझाना चाहिये, क्योंकि ये उडकर शरीरको जला देते हैं. यह शुद्धि शार्ङ्गधर तथा अनुपानसंजरीमें लिखी है.

१ तांबेका विशेष शोधन–उक्त पाचों वस्तुओंमें तांबेको सात सात बार बुझाके " १ सेहुंड, (थूहरका दूध) २ गायका दूध, इमलीका पानी ४ नींबूका रस, ५ दाखका पानी, ६ मधु (शहत) और

७ भूकंद (जिसे जमीकंद भी कहते हैं) का रस पुनः इन सातों पदार्थोंमें सात सात बार बुझाओ तो तांबा पूर्ण शुद्ध हो जावेगा

२ सीसेका विशेष शोधन—पूर्वोक्त (तेल, छांछ आदि) वस्तुओंसे शुद्ध करके " १ घी कुमारी पाठ (ग्वारपाठा) का रस, २ और त्रिफलाका क्वाथ" पुनः इन दोनों वस्तुओंमें गलाके सात ७ बार बुझाओ तो सीसा पूर्ण शुद्ध होगा.

३ रांगेका विशेष शोधन—सीसेकी शोधनरीत्यनुसार जानो.

४ जस्ताका विशेष शोधन—सीसेकी रीतिपरही है.

५ लोहेका विशेष शोधन—लोहेको तांबेकी रीतिपर शुद्ध करके पुनः त्रिफलाके क्वाथमें सातबार बुझाओ तो पूर्ण शुद्ध हो जावेगा.

६ सोनेका विशेष शोधन }
७ चांदीका विशेष शोधन } इन दोनों धातुओंका शोधन प्रथम तेल छाँछ आदि वस्तुओंमें बुझाय देनेसेही हो जाता है, ये स्वतः विशेष शोधित हैं इसलिये इनको अधिक शोधनेकी आवश्यकता नहीं.

इति धातुशोधनविचार.

अब उपधातुओंके शोधनेकी रीति देखो.

१ सोनामक्खी शोधन—तीन भाग सोनामक्खीमें १ एक भाग सेंधानमक डालकर जँभीरी (अथवा बिजौरा) के रसके साथ कडाहीमें रखके आँचदो और लोहेकी करछुलीसे घोटते जाओ जब कडाही अग्निकी आँचसे लाल होजावे तब उतारके शीतल होजानेपर निकाल लो.

"रूपामक्खी शोधन—"१ ककेडा तथा २ मेंढासिंगी ३ अथवा जँभीरी के रसमें घोटके सूर्यकी तीक्ष्ण तापमें रक्खो रूपामक्खी शुद्ध होजावेगी.

२ नीलाथोथाशोधन—नीलेथूथेके बराबर बिल्लीकी विष्टा और ४ भाग सुहागा लेकर तीनों वस्तु मधुमें खरल करो अनंतर सम्पुट करके जंगली गोबरीकी आँच देओ यावत् तीनबार करनेसे नीलाथूथा शुद्ध होजावेगा.

३ हरतालशोधन—हरतालको "१ त्रिफलाका क्वाथ, २ कांजी, ३ भूरा कुम्हडाका रस और ४ तेल " इन प्रत्येक पदार्थोंमें पृथक् २ दोलायंत्रसे एक प्रहरकी आंच देओ अथवा चूनाके जलमें ४ चार प्रहर पर्यंत दोलायंत्रसे स्वेदन करो तो हरताल शुद्ध हो जावेगा.

४ सुरमा शोधन–सुरमाको जम्भीरीके रसका पुट देके १ दिनभर धूपमें सुखादेओ तो सुरमा शुद्ध होजावेगा.

५ अभ्रक शोधन–अभ्रकको अग्निमें तपाके गौके दूधमें बुझाओ फिर "चौलाईका रस तथा इमलीकी खटाईमें" आठ प्रहर (एक दिन रात) भिगोय रक्खो अभ्रक शुद्ध हो जावेगा.

६ मनशिल शोधन–मनशिलको बकरीके मूत्रमें दोलायंत्रसे तीन दिन पकाकर गर्म खपरा (मिट्टीके वर्तनका टुकडा) या करछुली या तवापर कुछ समयतक रक्खो तो शुद्ध होजावेगा.

७ खपरिया शोधन–खपरियाको मनुष्यके मूत्र (अथवा गोमूत्र) में दोलायंत्रसे ७ दिनतक पकाओ तो शुद्ध होजावेगा.

इति उपधातुशोधनविधि.

रत्नशोधन–१ सूर्यकांति आदि मणि, मोती तथा मूँगाको जाईके रसमें दोलायंत्रसे एक प्रहर पर्यंत आँच दो अथवा सम्पूर्ण वैक्रांतादि रत्नमात्रको भटकटैयाकी जडमें लुगदी (गोली = ढेला) बाँधकर कोदू तथा कुलथीके काढ़ेमें दोलायंत्रसे तीन दिन तक पकावे तो सर्व रत्नमात्र चाहे सो रत्न शुद्ध होजावेंगे.

पारद शोधन–पारेके १८ अठारह संस्कार होते हैं परंतु उन संस्कारोंसे शुद्ध किये हुए पारेके समानहीं हिंगुलसे निकाला हुआ पारा भी शुद्ध होता है इसलिये हिंगुल (अर्थात् शिंगरफ जिसमें पारा अधिक हो) को नींबूके रसमें एक दिनभर मर्दन करके डमरूयंत्रसे ३ तीन प्रहरकी आँचदो तदनन्तर पूर्ण शीतल होनेपर ऊपरके पात्रके पेंदेमें लगा हुआ पारा निकाल कर नींबू (अथवा नीम) के रसमें १ प्रहरभर मर्दन करै तो पारा शुद्ध हो जावेगा. इस क्रियासे निकाला हुआ पारा उसी गुणका है जो १८ अठारह संस्कारोंसे शुद्ध हुएमें है.

गंधक शोधन–गंधक और घृत (घी) समान भाग मिलाकर लोहेके पात्रमें मंदाग्निसे उष्णकरो. जब पतला होजावे तब गौके दूधमें बुझा दो तो गंधक शुद्ध होजावेगा.

शिलाजीत शोधन–शिलाजीतको "गौका दूध, त्रिफलाका काढ़ा

और भृंगराजके रस" में एक २ दिन खरल कर करके धूपमें रखते जाओ तो शुद्ध होजावेगा.

हिंगुल शोधन—हिंगुल (शिंगरफ) को खलमें डालकर ७ पुट भेडीके दूध और ७ पुट नींबूके रसकी देवे तो निश्चय शुद्ध हो.

जमालगोटाशोधन—जमालगोटेके ऊपरका छिलका और उसके बीजोंकी भीतरकी हरी पत्ती निकालकर बारीक कपडेमें पोटली बांधके भैंसके गोबरमें ४ चार दिन तक रक्खो, फिर निकालके उष्णजलसे धोकर अति बारीक वस्त्रमें पोटली बाँधो, तदनन्तर उस वस्त्रसहित[1] खरल करके नये खपरेपर उसका लेप चढ़ादो और सूखजानेपर खपरेसे छील-कर पुनः नींबूके रसमें २ दो पुट देओ तो अत्युत्तम शुद्ध होजावेगा.

वत्सनाग (वच्छनाग) शोधन—वच्छनागके बारीक टुकडोंको एक वस्त्रमें बाँधके बकरी तथा गौके दूधमें दोलायंत्रसे १ एक प्रहर पर्यन्त पचावे तो वच्छनाग शुद्ध होजावेगा.

भिलावाँशोधन—भिलावेंकी बीजोंको ईंट या कवेलू (खपरा) के कप-डछान किये हुए चूरमें मिलाकर कपडेकी थलीमें भरके ८ प्रहर (१ दिन रात) पडे रहने दो दूसरे दिन उष्ण जलसे धोकर दूधमें दोलायंत्रसे शुद्ध करलो. इति शोधनविधि समाप्त.

हमने तुमको उपरोक्त विषयमें अनेक धातूपधातुओंकी शोधनविधि का बोध करादिया. अब किंचित् भस्मविधिकी ओर ध्यान दो.

सातों धातुओंकी भस्म करनेकी अनेक विधिहैं परंतु सर्व साधारण पुरुषोंके सुगमतार्थ हम ऐसी क्रिया बताते हैं कि जिस एकही क्रियासे सर्व धातुओंकी भस्म होजावे.

क्रिया—मनशील और गंधक इन दोनोंको अर्कदुग्ध (अकौवेका दूध) में पीसके (जिस धातुकी भस्म करना हो उस) धातुपर इसका लेप करदो और इसे गजपुटमें १२ बारह बार क्रमशः फूंको तो चाहे जिस धातु की हो भस्म हो जावेगी जैसे सद्गुरुके[2] वचन झूठ नहीं होते त्योंही यह क्रिया

१ क्योंकि वस्त्रसहित खरल करनेसे उसका तेल वस्त्रमें लगकर वह निर्दोष होजाताहै.

२ शिलागंधार्कदुग्धाक्ताः स्वर्णवा सर्वधातवः॥म्रियते द्वादशपुटैः सत्यं गुरुवचो यथा ॥१॥ शार्ङ्गधरे द्वितीयखण्डे ह्युक्तम् ॥

भी कदापि झूठी नहीं होती ऐसा शार्ङ्गधरमें लिखा है. हमने तुम्हें धातुओंकी शोधनादि विधिका आवश्यकतानुसार बोध कराया, यदि इस विषयको अधिक देखना चाहो तो "रसरत्नाकर" नाम ग्रन्थ देखो.

इति नूतनामृतसागरे विचारखण्डे धात्वादिवस्तुशोधननिरूपणं नाम चतुर्थस्तरंगः॥ ४॥

मानविचार.

न मानेन विना युक्तिर्द्रव्याणां जायते क्वचित् ॥
अतः प्रयोगकार्यार्थं मानमत्रोच्यते मया ॥ १ ॥ भा०प्र०

भाषार्थ—मान (तोल) के जानेविना औषधादि पदार्थोंके बनानेकी युक्ति सिद्ध नहीं होसक्ती इसलिये अब हम कई प्रकारके मान लिखते हैं. भावप्रकाश.

प्रथम मान जोकि अमृतसागरके औषध प्रयोगमें माना गया है ॥

८ आठ रत्तीका = १ मासा
३ तीन मासे = १ टांक
४ चार टांक = १ तोला
३ तीन तोले = १ टका = २ पैसे
१८ अठारह टके = १ सेर जिसके ५४ तोले और स्थूल रीतिसे ५६ रुपये होते हैं.
४० चालीस सेर = १ मन, यह मन कच्चा कहलाता है क्योंकि १८ टकेके सेरसे है, प्राचीन अमृतसागरके ग्रन्थकर्त्ता महाराज श्रीप्रतापसिंहजीने यही १८ (टकेका) कच्चा मन माना है और आधुनिक प्रमाणसे २८ टकेका पक्का सेर मानकर ४० सेरका मन माना है इसलिये यह पक्का मन कहाताहै, इतिप्रथममानः

अथ द्वितीयं मागधं मानम्.

चरकस्य मतं वैद्यैराद्यैर्यस्मान्मतं ततः ॥
विहाय सर्वमानानि मागधं मानमुच्यते ॥ १ ॥

भाषार्थ—शेषजीके अवताररूप चरकमुनिराजने मागधी मानको मुख्य माना है, इसलिये सर्व प्राचीन सद्वैद्योंने भी इसीको स्वीकार कियाहै सो अन्य सब गौण मानोंको छोड हम भी यहाँ मुख्य मागधी मानकोही लेते हैं. भावप्रकाश तथा शार्ङ्गधरमें भी यही लिखागया है.

दूसरा मागधीयमान.

३० तीस परमाणुका = १ त्रसरेणु इसे वंशी भी कहते हैं.
६ छःवंशीकी = १ मरीचि जो अतिसूक्ष्म होती है.
६ मरीचि = १ राई
३ राई = १ सर्षप अर्थात् सरसों
८ आठ सरसोंका = यव, (जौ)
४यव = १ गुंजा (गुमची चिरम)
६ छःगुंजा = १ मासा

(हेम = धात्य)
४ चार मासे = १ शाण जिसके व्यवहारमें ३ मासे होते हैं इसीको "निष्क, धरण और टक" भी कहते हैं.
२ टंक = १ कोल जिसके व्यवहारमें छःमासे होते हैं कोलके "क्षुद्रम, वटक और द्रंक्षण" ये नाम भी हैं.

२ कोलका = १ कर्ष, यह कर्ष मागधीय मानसे १६ मासे और व्यवहारी मानसे १ तोलेका होता है इसके "१ पाणि मानिका २ अक्ष, ३ पिचू, ४ पाणितल, ५ किंचित् पाणि, ६ तिंदुक, ७ विडाल, परडक, ८ पोडशिका, ९ करमध्य, १० हंसपद, ११ सुवर्ण, १२ कवल-ग्रह, और १३ उदुम्बर" ये नाम भीहैं.
२ दो कर्ष = १ अर्द्धपल जिसे "शुक्ति और अष्टमिका" भी कहतेहैं.
२ शुक्ति = १ पल, यह पल मागधी मानसे ५ तोले और व्यवहारी मानसे ४ चार तोलेका होताहै. इसके "१ मुष्टी, २ आम्र, ३ चतुर्थिका ४ प्रकुंच, ५ षोडशी ६ बिल्व" ये नाम भी हैं.
२ दो पल = १ प्रसृती (प्रसृत भी कहते हैं) मागधीमानसे १० तोले और व्यवहारी मानसे ८ तोलेकी होती है.
२ प्रसृती = १ अंजली, इसे = १कुडव, २ अर्द्धशराव और ३ अष्ट-मान भी कहते हैं मागधीय मानसे २० तोले और व्यवहारीय मानसे १६ तोलेकी होती है. इसलिये इसको एक पाव जानो.
२ कुडव = १ मानिका, इसे शराव और अष्टपल भी कहते हैं इसलिये उसे) ॥ (आधसेर) की समझना चाहिये.
२ शराव = १प्रस्थ, इसे १ एक सेरभर जानो.

४ प्रस्थ = १ आढक, जिसे भाजन और कंसपात्र भी कहते हैं, इसमें ६४ पल होते हैं, इसे ४ चार सेरका जानो.

४ आढक = १ द्रोण, इसके " १ कलश, २ नल्वण, ३ उन्मान और ४ घटराशि " ये नाम भी हैं.

२ द्रोण = १ शूर्प (कुंभ) जिसके ६४ शराव तथा ३२ सेर होते हैं.

२ शूर्प = १ द्रोणी (वाहगोणी) इसमें १२८ शराव तथा ६४ सेर हैं.

४ द्रोणी = १ खारी जिसमें ४०९६ चारसहस्र छयानवे पल तथा २५६ सेर होते हैं.

२००० दो सहस्र पलका = १ एक भार होता है.

१०० शत पलकी = १ तुली होती है. हम ऊपर ४ तोले (व्यवहारीय) का एक पल लिख आये हैं. (इसलिये पल तोला तोला तोला छटाक छटाक सेर १००×४=४००−५=८०÷१६=५) ५ सेर (पक्के जो आजकल चलते हैं) की, तुला हुई और २००० पलका एक भार और १०० पलकी एक तुला (∵२०००÷१००=२०) इसलिये २० तुलाका एक भार हुआ अब (तुला सेर सेर सेर मन २०×२५=१००×८०=२½) उक्तगणनानुसार २½ ढाई मन (पक्का जो आजकल अंग्रेजी तौल तथा व्यवहारमें चलता है) का १ भार जानो, इति द्वितीयमागधीयमानम्.

अथ ३ तृतीय कलिंगमानम्.

> यतो मन्दाग्नयो ह्रस्वा हीनसत्वा नराः कलौ ॥
> अतस्तु मात्रा तद्योग्या प्रोच्यते सुज्ञसंमता ॥ १ ॥ भा०प्र०

भाषार्थ—कलियुगी मनुष्य ह्रस्वाङ्ग, मन्दाग्नि, तथा निर्बल होते हैं अतएव उनके योग्य मात्राकी योजना करनेके लिये कलिंगमान लिखते हैं, इस मानानुसार मात्राकी योजना सर्व सद्वैद्योंको मान्य है, तीसरा कलिंगमान.

१२ श्वेत सरसोंका = १ यव.
२ यव = १ गुंजा.
३ गुंजा = १ वल्ल.
७ या ८ गुंजा = १ मासा.

४ कर्ष = १ पल, जिसमें १० शाण या टंक होते हैं.
४ पल कुडव होता है.
इसके आगे प्रस्थादिका मान.

४ मासे = १ टंक (शाण)	पूर्वोक्त मागधीयरीत्यनुसार
६ मासे = १ गद्यान.	(जहाँ काम पडे तहाँ) ही लेना
१० मासे = १ कर्ष.	चाहिये.

इति नूतनामृतसागरे विचारखण्डे मानविचारनिरूपणं नाम पंचमस्तरंगः ॥ ५ ॥

औषधियुक्तायुक्तविचारः।

नवान्येवहि योज्यानि द्रव्याण्यखिलकर्मसु ॥
विना विडंगकृष्णाभ्यां गुडधान्याज्यमाक्षिकैः ॥ १ ॥

भाषार्थ—अब औषधियोंके युक्त तथा अयुक्त विचारोंको लिखना अवश्य है क्योंकि युक्तायुक्त विचारके विना कोई औषधि यथार्थ फलप्रदायिनी नहीं होती है. सर्वकार्योंमें औषधि नवीनहीं डालनी चाहिये परंतु.

१—"१ वायविडंग, २ पिप्पली, ३ धनियां, ४ गुड, ५ मधु, और ६ घृत" ये छः पदार्थ सर्व वस्तुओंमें पुराने (१ वर्षसे नीचेके नहीं) ही डालना चाहिये.

२—"१ गुडवेल, २ कुडेकी छाल, ३ अडूसा, ४ कोहला, ५ शतावरी, ६ असगंध, ७ खिरैंटी, ८ बडीसौंफ और ९ प्रसारणी" (अर्थात् चांदवेल जिसे पूर्वकी ओर गंधमदाली भी कहते हैं) ये नव पदार्थ जिस ओषधिमें उपयोग करो उसमें सर्वदा गीलेही डालो, गीले जानकर दूने मत डालो इनके लिये यही नियम है.

३ उक्त औषधियोंके अतिरिक्त अन्य औषधियां समस्त कार्योंमें नवीन तथा सूखीही डालनी चाहिये, यदि गीली हो तो सूखीके लिखित प्रमाणसे दूनी डालो.

४ जहाँ ओषधिभक्षणके लिये समय न लिखाहो वहाँ औषधिभक्षण काल प्रातःकालही जानो, तथा जिस औषधका अंग स्पष्ट न लिखाहो वहाँ उसकी जड लेना और जिस प्रसंगपर औषधिका प्रमाण न लिखा हो वहाँ सर्वौषधि समानभागसे लेना, इसीप्रकार जहाँ पात्रका नियम न दर्शाया हो तो वहाँ मृत्तिकापात्र (मिट्टीके बर्तन) ही जानो.

५—यदि किसी प्रयोगमें एकही औषध दो बार लिखी हो तो वहाँ उस्से लिखित प्रमाणसे द्विगुणी लेनी चाहिये.

६-जहाँ " चंदन " मात्र लिखाहो जाति न दर्शाईहो तो आसव अवलेह, घृतादि स्नेहमें प्रायः श्वेतचंदन डालो, परंतु क्वाथ तथा लेपमें रक्तचंदनही डालना चाहिये.

७-अत्यंत बडेवृक्षों (जैसे नीमादि) के जडकी छाल लेना चाहिये परंतु छोटे कोमल वृक्षों (जैसे कटियाली, गोखरू आदि) की जड अथवा पंचांग लो.

८ बड आदि वृक्षोंकी छाल लो तथा खैर आदि वृक्षोंकासार लो और महुआ, बबूल आदिकी अंतरछाल लेना चाहिये.

९-" तालीश, तेजपात, तांबूल (पान) तुलसी सोनामक्खी और भंग" इत्यादिके पत्र लो तथा त्रिफला सुपारी आदिके फलही लेना चाहिये और पलास, गुलाब, सेवती आदिके अनेक वृक्षोंके पुष्पही लेना योग्यहै.

१०-" कँवच, अरीठा, कमलगट्टा, जायफल, कालीमिर्च" इत्यादिके बीज लो, "अर्क, थूहर, बड और गूलर" इत्यादिका दूधही उपयोगी होता है.

११ यदि किसी स्थानमें कोई औषध न मिले तो तत्समान गुणवाली अन्यौषध भी युक्त करके निस्तार कर लेना चाहिये जैसे अतीसकी अप्राप्तिमें नागरमोथा, अमलवेतके अभावमें चूका अथवा चनाखार मृगमद (कस्तूरी) के अभावमें जायपत्री ऋद्धिके अभावमें बला और न मिलनेपर नागबलाका उपयोग करसक्ते हैं.

१२-इसीभाँति-मेदाके अभावमें असगंध, महामेदाकी अप्राप्तिमें प्रसारणी, काकोली तथा क्षीरकाकोली न हो तो शतावरी जीवकके अभावमें गिलोय और ऋषभकके न मिलनेपर वंशलोचनका उपयोग करके काम चलासक्ते हैं.

१३-इसीप्रकारसे जायपत्रीके अभावमें लौंग, तगरके पल्टे कूठ, मौलसिरी न होतो कमलकंद, चित्रककी अप्राप्तिमें दंतीमूल, मधुके अभावमें पुराना गुड स्वर्णभस्मके न मिलनेपर लोहसार, केशर न होतो कुसुंभा और मोतीकी भस्मके अभावमें सीपीका चूना, इसी प्रकार और भी औषधियोंका विचार करके (अपनी बुद्धि तथा शास्त्रमर्यादानुसार) वस्तु न मिले तो अन्य वस्तुकी योजनासे आवश्यकता निकाल सक्ते हैं इसका विशेष विस्तार देखनाहो तो " निघंटप्रकाश " देखो.

१४–इसीप्रकार विचारपूर्वक जो वस्तु युक्त करनेके योग्य हो उसेही युक्त करो, परन्तु अयुक्तकी योजना कदापि न करो.

१५–और भी इस बातपर पूर्ण ध्यान देना चाहिये कि, काष्टादि औषधि १२ मास (वर्षभर) पश्चात् वीर्यहीन (निकम्मी) हो जाती हैं जिनमेंसे चूर्ण २ दो मास घृत तथा तैल ४ चार मास और गुटिका, अवलेह तथा पाकादि १ वर्षके पश्चात् निरुपयोगी हो जाते हैं, परन्तु आसव तथा स्वर्णादि भस्म और रसायन ये जितने पुराने होते जावें उतनेही अधिक गुणदायक होते जाते हैं. इति युक्तायुक्तविचार.

अथ औषधभक्षण कालविचार ।

भैषज्यमभ्यवहरेत् प्रभाते प्रायशो बुधः ॥
कषायांश्च विशेषेण तत्र भेदस्तुदर्शितः ॥ १ ॥
ज्ञेयः पंचविधः कालो भैषज्यग्रहणे नृणाम् ॥
किंचित् सूर्योदये जाते तथा दिवसभोजने ॥
सायंतने भोजनेचमुहुश्चापि तथानिशि ॥ २ ॥ शार्ङ्गधरे

भाषार्थ–१–वैद्य विशेषकर रोगीको प्रातःकालही औषध भक्षण करावे तिसमें भी औषधका अंगरस, कल्क, क्वाथ, फांट और हिम ये तो प्रायः प्रातःकालही भक्षण करने चाहिये.

२–मनुष्योंको औषध भक्षणके लिये ५ काल हैं अर्थात् १ सूर्योदय होनेपर, २ दिनको भोजन करनेके समय, ३ सायंकालको भोजन करनेके समय, ४ वारंवार, ५ रात्रिमें; ये पांच काल जानो.

३–१ पित्त या कफके कोपपर, २ पित्तपर विरेचन करानेके लिये, ३ कफपर वमनके लिये और ४ वातादि दोषको स्नेहादि योगसे पतला करनेके लिये इत्यादि विकारवाले रोगीको विना भोजन किये (निराहार = भूखा) प्रातःकालही औषधसेवन (भक्षण = खिलाना) चाहिये.

४ यदि गुदासंबन्धी अपानवायु कोपित हुआ हो तो भोजन करनेसे कुछही पहिले औषध भक्षण कराना.

५–यदि अरुचि रोग हुआ हो तो अनेक प्रकारके रुचिकारक अन्नादि और उत्तमोत्तम भक्ष्य, भोज्य, लेह्य, चोष्य, पदार्थोंके साथही औषध दो.

६–जो नाभिका समानवायु कुपित हुआ हो अथवा मंदाग्नि हुई हो तो अग्निप्रदीप्तकी औषध भोजनके साथ मिलाके खिलाओ.

७–जिसका समस्त शरीरव्यापक व्यानवायु कुपित हुआ हो उसे भोजन करनेके पश्चात् औषध भक्षण कराना चाहिये.

८–हिचकी तथा आक्षेप तथा रोगमें और वायु कफके कोपमें भोजन के पूर्व और अन्त दोनों समयमें औषध देना.

९–कंठसम्बन्धी उदानवायुके कोपसे स्वरभंग आदि रोग उत्पन्न हों तो सायंकालके भोजन करनेके समय (घृतादिसे युक्त करके) प्रत्येक ग्रास ग्रासपर (चटनीके समान) औषध खिलाना चाहिये.

१०–जो हृदयस्थित प्राणवायुका कोप हो तो विशेषकर सायंकालके भोजनान्तमें औषध भक्षण कराई जावे.

११–तृषा, वमन हिचकी, श्वास और विषदोष इत्यादि रोगोंमें अन्न सहित अथवा अन्नरहित वारंवार औषध दो.

१२ ठुड्डी (दाढी) के ऊपरी अंगके रोगोंमें (जैसे कर्णरोग, नेत्ररोग, मुखरोग. नासिकारोग इत्यादि) तथा बढेहुए वातादि दोषोंको न्यून करनेके लिये और अतिक्षीण रोगोंको घटानेके लिये रात्रिके समय पाचन व शमनरूप औषध अन्नरहितही भक्षण करना चाहिये.

इन नियमोंसे औषध भक्षण करनेके ५ पांच जुदे जुदे काल हैं सो वैद्यको चाहिये कि, रोगका निश्चय कर समय विचारसे औषध देवे.

रोग, औषध और समयके विवेकसे रहित इच्छित प्रमाणसेही चिकित्सा नहीं करना चाहिये. इति औषधभक्षणकालविचार.

इति नूतनामृतसागरे विचारखंडे युक्तायुक्तविचारादिनिरूपणं नाम षष्ठस्तरंगः॥ ६ ॥

अथ औषधक्रियाविचार.

अथातः स्वरसः कल्कः काथश्च हिमफांटकौ ॥
ज्ञेयाः कषायाः पंचैते लघवः स्युर्यथोत्तरम् ॥ १ ॥

भावार्थ–१ स्वरस, २ कल्क, ३ काथ, ४ हिम और ५ फांट ये पांचों काथके सदृशही हैं, इनमें एकसे एक उत्तरोत्तर हलके हैं.

---

१ क्योंकि ऐसा भोजन करनेसे वह औषध भोजनके साथ उत्तम प्रकारसे मिलजाताहै.

१ अथ स्वरसविधि.

१ क्रिया-जो वनस्पति अग्नि तथा कीट आदिसे दूषित न हो उसे लाके तत्क्षण कूटो और वस्त्रसे निचोडके रस निकालो यह स्वरस (अथवा अंगरस) कहाता है.

२ क्रिया-४ चार पल सूखी औषध लेके चूर्ण करो, उस चूर्णको मृत्तिकाके पात्रमें ८ पल पानीके साथ डालकर ८ प्रहर (दिन रात) भीगने दो तदनन्तर वस्त्रसे निचोड़लो यह दूसरे प्रकारका स्वरस है.

३ क्रिया-सूखी औषधि लेके, औषधिसे अष्टगुण पानी लो ये दोनों मृत्तिकाके पात्रमें डालके आंचसे औटाओ चतुर्थांश रहनेपर छानलो यह भी स्वरसका तीसरा प्रकार है.

मात्रा-प्रथम प्रकारसे बने हुए स्वरसकी मात्रा २ तोलेकी लेना चाहिये क्योंकि वह भारी होती है, दूसरे प्रकारसे बने हुए स्वरसकी मात्रा ४ तोलेकी लेओ, तीसरे प्रकारसे बनेहुए स्वरसकी मात्रा भी ४ तोलेकी जानो.

युक्त करनेके पदार्थोंका प्रमाण-मधु, शक्कर, गुड जवाखार, जीरा, नोन घृत, तैल और चूर्णादि पदार्थ ६ मासे मिलाना चाहिये.

२ अथ कल्कविधि.

क्रिया-गीली औषधको चटनीके सदृश बारीक पीसो तथा सूखी औषधको जलके संयोगसे चटनीके समान बारीक पीसो उसे कल्क (प्रक्षेप और आवाप भी) कहते हैं.

मात्रा-कल्ककी मात्राका प्रमाण १ तोलेभरका है.

युक्तपदार्थ प्रमाण-कल्कमें मधु, घृत, तैल मिलाना हो तो मात्रासे द्विगुण मिलाओ. शक्कर, गुड, मिलाना हो तो तुल्य और दूध तथा पानी आदि द्रवपदार्थ मिलाना हो तो मात्रासे चौगुणा मिलाना चाहिये.

३ अथ क्राथविधि.

क्रिया-१ पल (व्यवहारी चार तोले) औषधको कुछ कुछ कूटके उससे १६गुणा जलके साथ मृत्तिकाके घटमें डालो, उसे आंचपरचढ़ाके मंद मंद

१ तोलेसे चार तोले पर्यंत औषध हो तो १६ गुणा जल लो, ४ तोलेसे कुडव प्रमाण पर्यंत औषध हो तो अष्टगुण जल लो और कुडवसे उपरांत प्रस्थप्रमाण पर्यंत औषध हो तो चतुर्गुण जल लेना ऐसा भावप्रकाशमें लिखा है।

आँच दो इस घटका मुख बंद मतकरो नहीं तो वह क्काथ यथार्थ गुणदायक न होगा. जब वह औटाते औटाते अष्टमांश रहजावे तब उतारकर "चीनी या कांच, तथा चांदी, किंवा पाषाण और नहीं तो मृत्तिकाके पात्रमें छानलो" इसे क्काथ (शृत कषाय और निर्य्यूह) भी कहते हैं.

मात्रा–क्काथकी मात्रा १ पल प्रमाण उत्तम, तीन अक्ष प्रमाण मध्यम और अर्द्धपल प्रमाणकी निकृष्ट कहाती है.

युक्तपदार्थ प्रमाण–क्काथमें शक्कर डालना हो तो क्काथके प्रमाणसे वातरोगमें चतुर्थांश, पित्तरोगमें अष्टमांश और कफरोगमें षोडशांश डालो, यदि मधु मिलाना हो तो उक्त प्रमाणसे विपरीत डालो और जीरा, गूगल, जवाखार, सैंधव, शिलाजीत, हींग, त्रिकटु (सोंठि=मिर्च=पींपल) आदिक पदार्थ क्काथमें डालना हो तो ४ चार मासे डालो.

रोगीको चाहिये कि, प्रसन्न चित्तपूर्वक कांचादिके पात्रमें क्काथ लेके कुछ कुछ उष्णकोही पीके पात्रको भूमिपर उलटा डाल देवे. यदि वैद्यकी आज्ञा हो तो ऊपरसे तांबूलादि खावे.

४ अथ हिमविधि.

क्रिया–४ चार तोले औषध कूटके २४ चौवीश तोले पानीके साथ मृत्तिकाके पात्रमें रातभर भीजनेदो प्रातःकाल छानलो इसे हिम (ठंढा क्काथ) कहते हैं.

मात्रा–हिमकी मात्रा ८ तोले प्रमाणकी है.

युक्तपदार्थ प्रमाण–हिममें जो वस्तुएँ मिलानी होवें तो क्काथके प्रमाणानुसारही मिलाना चाहिये.

५ अथ फांटविधि.

क्रिया–१ पल औषधका महीन चूर्ण बनावे, मृत्तिकाके घडेमें १ कुडव (जो व्यवहारी मानसे पावभरका होताहै) पानीमें डालकर चूल्हेपर चढावे जब वह औटनेलगे तब औषधका चूर्ण डालके कुछ काल पश्चात् उतारकर कपडेसे छानलेवे इसे फांट (तथा चूर्णद्रव भी) कहते हैं.

मात्रा–फांटकी मात्रा ८ आठ तोलेकी होती है.

युक्तपदार्थप्रमाण–फांटमें मधु, शक्कर और गुडआदि पदार्थ मिलाना हो तो क्काथविधिमें [illegible] प्रमाणानुसार मिलाओ.

६ अथ चूर्णविधि।

क्रिया—अत्यन्त सूखी औषधिको कूटके कपडछान करो उसेही चूर्ण (और रज, क्षोध भी) कहते हैं.

मात्रा—चूर्णकी मात्रा १ तोलेकी लेना चाहिये.

युक्तपदार्थ प्रमाण—चूर्णमें गुड मिलाना हो तो समान मिश्री, चूर्णसे दूनी पकाई हुई हींग, अनुमान माफिक और मधु अथवा कोई अन्य चिकना पदार्थ मिलाना हो तो भी दूनाही मिलाओ, दूध, गोमूत्र, पानी आदि द्रवपदार्थ मिलाना हो तो चूर्णसे चतुर्गुण मिलाओ, यदि नींबूके रसादिका पुष्ट देना हो तो रसमें चूर्णको पूर्णरूपसे भीगोना चाहिये.

७ अथ अवलेह विधि.

क्रिया—औषधियोंके क्राथादिको पुनः पात्रमें डालके औटाते औटाते दृढ़ होजाने देवे अर्थात् वह पदार्थ चाटनेके योग्य होजावे उसे अवलेह (लेह) भी कहते हैं.

मात्रा—अवलेहकी मात्रा १ पल प्रमाणकी होती है.

युक्तपदार्थ प्रमाण—अवलेहमें शक्कर डालना हो तो औषधके चूर्णसे चौगुणी मिलाना, गुड डालना हो तो द्विगुण और दूध, गोमूत्र, जल आदि द्रव पदार्थ डालना हो तो चूर्णसे चौगुने डालना चाहिये.

८ अथ गुटिका विधि.

क्रिया—गुड या शक्कर अथवा गूगलकी चासनी लेके, या विना चासनी लियेही किंवा पानी या दूध अथवा मधुमें वैसेही चूर्ण डालकर गोली बांध लेना. इसे गुटिका कहते हैं.

१ गुटिका, २ वटी, ३ मोदक, ४ वटिका ५ पिंडी, ६ गुड और ७ वर्ति ये सात नाम गुटिकाके पर्यायवाचक (पल्टा बतानेवाले) ही हैं.

मात्रा—जिस प्रकरणमें जैसी लिखी हो वैसी जानो परन्तु सर्वतः काष्ठादि चूर्णकी बनी हुई गोलीकी १ तोलेकी मात्रा होती है.

युक्तपदार्थ प्रमाण—शक्करमें गोलियां बनाना हो तो चूर्णसे चतुर्गुण शक्कर लो यदि गुडमें बनाना हो तो चूर्णसे दूना गुड लो, मधु या गूगल मिलाना हो तो चूर्णके तुल्य लो और दूध आदि द्रवपदार्थ मिलाना हो तो चूर्णसे दूने मिलाना चाहिये.

९ अथ घृत तैल विधि.

क्रिया–जिन पदार्थोंका घृत या तैल बनाना हो तो प्रथम उनका कल्क (ऊपरकी विधिमें देखो) बनाके उससे चौगुणा घृत या तैल जो कुछ बनानाहो) के साथ दोनों पदार्थों (कल्क और तैल या घी) को मिट्टीके चिकने पात्रमें या कड़ाहीमें डालदो और उसीमें दूध गोमूत्रादि पदार्थ (जो लिखे हों) डाल घृतकर वह पात्र चूल्हेपर चढ़ादो जब आँच देते देते केवल घृत या तैल शेष रहजावे (कल्क दूध आदि पदार्थ जलजावें) तब उतारके छान लो यही घृत तैल प्रस्तुत होगया.

मात्रा–इसकी मात्रा १ पल प्रमाणकी होती है.

युक्त पदार्थ प्रमाण–इसमें दूध, दही, गोमूत्रादि पदार्थ डालना हो तो घृत तैलसे चतुर्गुणा डालना चाहिये.

इस विषयका विशेष विस्तार देखना हो तो शार्ङ्गधर तथा चरक सुश्रुतादि प्राचीन ग्रंथोंमें देखो.

१० अथ आसव तथा अरिष्ट विधि.

क्रिया–जल तथा अन्य द्रवपदार्थोंके साथ पात्रमें औषधियाँ डालकर उसका मुँह बंदकरदो और भूमिमें गाडके पक्ष तथा मास पश्चात् निकालो यह आसव या अरिष्ट कहाताहै.

आसव बनानेकी क्रिया जुदी है.

मात्रा–इनकी मात्रा १ पलकी होती है.

युक्तपदार्थ प्रमाण–इन दोनोंमें जहाँ जलादि द्रवका प्रमाण नहीं लिखा हो तो १ द्रोण द्रवके साथ १ तुला प्रमाण गुड डालो उसीमें गुड़से आधा मधु और गुड़से दशमांश औषधियोंका चूर्ण डालना चाहिये और यदि सर्व वस्तुओंका प्रमाण लिखा हो तो लेखानुसारही लेना योग्य है.

आसव और अरिष्टकी भिन्नता–जिसमें औषधियां जुदी और केवल स्वच्छ जल जुदा डालकर उक्त रीत्यनुसार सिद्ध किया हो वह तो "आसव" कहाता है और जिसमें प्रथम जलके साथ औषधियोंका क्वाथ बनाकर डाला हो वह "अरिष्ट" कहाता है. इसके विशेष भेद शार्ङ्गधरादि वैद्यक ग्रंथोंमें देखो.

११ अथ पुटपाक विधि.

क्रिया–जिस औषधका पुटपाक करके रस निकालना हो तो प्रथम उसके ऊपर वड या जामुनके पत्ते लपेटकर ऊपरसे कालीमिट्टीका दो अंगुल मोटा जाडा लेप चढ़ा दो फिर इस पिंडको तीक्ष्ण अग्निमें दबा दो जब यह अंगारके समान लाल होजावे तव निकालकर (ठंढा होनेपर) मिट्टी पत्रादि अलग करो और औषध निकालकर रस निकाललो.

मात्रा–पुटपाकविधिसे निकाले हुए रसकी मात्रा १ पलकी है.

युक्तपदार्थ प्रमाण–पुटपाकविधिसे निकाले हुए रसमें मधु आदि पदार्थ एक कर्ष प्रमाण डालना चाहिये.

१२ अथ मंथ विधि.

क्रिया–४ पल प्रमाण ठंढे जलमें औषधका एक पल चूरा डालके मृत्तिकाके पात्रमें उसका मंथन (जैसा मक्खन निकालनेके लिये दही मथा जाता है) करो इसको मंथनजल कहते हैं.

मात्रा–इसकी मात्रा २ पल प्रमाणकी होती है.

१३ अथ क्षीरपाक विधि.

क्रिया–औषधके प्रमाणसे अष्टगुण दुग्ध और चतुर्गुण जल इन तीनों को एकत्रित कर औटाओ औटाते २ जब पानी जलकर दूध मात्र रह-जावे तब उतारलो इसे क्षीरपाक कहते हैं.

उपयोग–यह आमांशशूलको नष्ट करता है.

१४ अथ तण्डुलजल विधि.

क्रिया–१ पल प्रमाण कूटे हुए चावल अष्टगुणा जलके साथ बर्तनमें डालके आँच दो पश्चात् छान लो, अथवा कुछ कालपर्यंत भीगने दो और छान लो इसे तण्डुलजल कहते हैं, पूर्वोक्त मुख्य और यह गौणहै.

१५ अथ उष्णोदकविधि.

क्रिया–सेरभर जल तपावे, जब कुछ तप जावे, या आधा रहजावे. अथवा चौथाई रहे किंवा अष्टमांश बचरहे तब उतार लेवे ये एकसे एक उत्तरोत्तर गुणी होंगे.

उपयोग–यह जल कफ, आमवात, मेदवृद्धि, कास, श्वास और ज्व-रको दूर करता है और बस्तिको शोधन करनेवाला है.

१६ काँजी विधि.

क्रिया—मृत्तिकाके नवीन पात्रमें सरसोंका तेल चुपरकर इस पात्रमें निर्मल उष्ण जल, राई जीरे, सैंधव, हींग, सोंठ (थोड़ीसी) छाँछ औरकुछ बड़े (पक्वान्नविशेष) डालदो और इस पात्रका मुँह बंद करके ३ तीन दिनपर्यंत रहनेदो जब वह उबलआवे तब काँजी कहावेगी.

मात्राविचार—हम उपरोक्त लेखमें १ स्वरस २ कल्क ३ क्वाथ ४ हिम ५ फांट ६ चूर्ण ७ अवलेह ८ गुटिका ९ घृततैल १० आसव ११ पुटपाक १२ मंथ १३ क्षीरपाक १४ तण्डुलजल १५ उष्णोदक और १६ कांजी इत्यादिका वर्णन करके प्रत्येककी मात्राका प्रमाण भी ग्रंथानुसार दर्शित करचुकेहैं, तथापि सद्द्रव्य-काल जठराग्नि, अवस्था, बल, प्राकृति देश और विकार इत्यादिका अपनी बुद्धिबल तथा शास्त्रोक्त आधारोंसे विचारकर औषधकी मात्रा देवे। इसीलिये शार्ङ्गधरमें लिखा है.

स्थितिर्नास्त्येव मात्रायाः कालमग्निं वयो बलम् ॥
प्रकृतिंदोषदेशौचदृष्ट्वामात्रांप्रयोजयेत् ॥शा०अ० १श्लो० ३७

यह सब औषधक्रियाविचार भावप्रकाश तथा शार्ङ्गधरादि वैद्यक ग्रंथोंमें विस्तारपूर्वक लिखा है ॥ इति औषधिक्रियाविचार.

इति नवनामृतसागरे विचारखण्डे औषधक्रियाविचारनिरूपणंनाम सप्तमस्तरङ्गः॥ ७॥

औषधदीपन पाचनादि विचार.

पचेदामं वह्निकृच्च दीपनं तद्यथामिशिः ॥
पचत्यामं न वह्निं च कुर्याद्यत्तद्धि पाचनम् ॥
नागकेशरवद्विद्याच्चित्रो दीपनपाचनः ॥ १ ॥

अब हम दीपन पाचन आदि औषधियोंका विचार उदाहरण सहित दर्शित करते हैं.

१ दीपनपाचन—जो औषध आमको न पचावे और अग्निको दीप्त करे वह दीपन कहाती है जैसे "बडीसौंफ" तथा आमको पचावे और अग्निको प्रदीप्त न करे सो पाचन कहाती है जैसे "नागकेशर" और जो औषध आमको भी पचावे और अग्निको भी प्रदीप्त करे सो दीपनपाचन कहाती है जैसे "चित्रक" ॥

२ संशमन—जो औषध शरीरके वातादि दोषोंको न बिगाडे और न उनका शोधन करे किन्तु अपनी पूर्व दशापरही यथास्थित रहने देवे और शरीरमें बिगडेहुए दोषको शमन (ठीक = समान = यथायोग्य) कर देवे वह संशमन औषध कहाती है जैसे " नीम गिलोय " (अर्थात् गुरच अमृता =) ॥

३ अनुलोमन—जो औषध वातादि दोषोंको पचाके परस्पर बँधेहुओंको प्रथक् करके मूलद्वारासे बाहर निकाल दे अथवा मल = मूत्रकी बद्धकता (रुकावटको पचाके गुदाद्वारा कोठेको शुद्ध करदेवे वह अनुलोमन कहाती है जैसे " हरीतकी " हर्रा)

४ स्रंसन—जो औषध कोठेके वातादिदोष तथा मूत्रको (जो कि अपने नियतकालपरही पाचन होनेवालेहैं) बलात्कार (बरजोरी = जबरदस्ती, से पाक न होनेपर भी गुदाद्वारा बाहर निकाल देवे सो स्रंसन औषध कहाती है जैसे " किरमाले" (किरवारा) की गिरी.

५ भेदन—जो औषध वातादि दोषसे बद्धाबद्ध (बँधे हुए तथा न बँधे हुए) मलमूत्रको खण्ड खण्ड कर गुदाद्वारा बाहर करदे सो भेदन कहाती है जैसे "कुटकी" ॥

६ रेचन—जो औषध पेटमेंके पक्वापक्व (पके हों चाहे नहीं) अन्नादि तथा वातादि दोषोंको पतलेकर गुदाद्वारासे बाहर निकाल दे सो रेचन कहाती है जैसे "निसोत" ॥

७ वमन—जो औषध बिन पकेहुएही वात तथा पित्तको बलात्कारसे मुखद्वारा (उलटीकराके) बाहर निकालदे वह वमनसंज्ञक औषध कहाती है " जैसे मैनफल " जिसे मैनर भी कहते हैं.

८ संशोधन—जो औषध अपने स्थानमें वातादि दोष तथा मलसंचयको ऊर्ध्वाकर्षण (ऊपरकी ओर खींचकर) से मुख नाक कानादि द्वारा अथवा अधोकर्षण (नीचेकी ओर खींचकर) से गुदा या मूत्रद्वारा बाहर निकालदे सो संशोधन कहाती है जैसे "देवदाली" जिसे कूकडबेल और देवडोंगरी भी कहते हैं.

९ छेदन—जो औषध परस्पर (एकसे एक) मिलेहुए कफादिको

अपनी प्रबलतासे भिन्न २ करदेवे सो छेदन कहाती है जैसे " यवक्षार " तथा मिर्च, पिप्पली शिलाजीत इत्यादि.

१० लेखन– जो औषध रसादि ७ धातु तथा वातादि दोष किम्वा वमनको शोषण करके पतले कर देती है सो लेखन कहाती है जैसे " मधु " उष्णजल, वच आदि.

११ ग्राही–जो औषध अग्निको प्रदीप्त करै, आमादिको पाचन करै और स्वयं उष्णवीर्य होनेके कारण जलरूप कफादि दोष तथा धातु मलका आकर्षण करै सो ग्राही कहाती है जैसे " सोंठ, जीरा, गजपिप्पली" इत्यादि.

१२ स्तम्भन–जो औषध रूखापन, शीतलता, कटुता, हलकापन और पाचन इन गुणोंसे वायूत्पादक (वात उत्पन्न करनेवाली) हो सो स्तम्भन कहाती है जैसे " नागरमोथा, बेलकी कोमलगिरी, मोचरस, कुडाछाल " इत्यादि.

१३ रसायन–जो औषध शरीरकी जरा व रोगोंको दूर करनेवाली हो सो रसायन कहाती है जैसे " नीम, गिलोय, हर्र, गूगल" इत्यादि.

१४ वाजीकरण–जो औषध धातु वृद्धिकरके स्त्रीसे प्रीति बढ़ावे सो वाजीकरण कहाती है जैसे " शतावरी, केवांचबीज, दूध मिश्री " इत्यादि.

१५ धातुवर्द्धिनी–जो औषध धातु (वीर्य) को बढ़ानेवाली सो धातुवर्धिनी कहाती है जैसे " असगंध, मूसली, शक्कर, शतावरी " इत्यादि.

१६ धातुचैतन्य–जो औषध धातुको चैतन्य तथा उत्पन्न करनेवाली है सो धातुचेतनी कहाती है जैसे " दूध, उर्द, आंवला, भिलावांकी बीजी " इत्यादि.

१७ वाजीकरण विशेषता– धातुचैतन्यकारिणी स्त्री धातुरेचक बडी कटियालीके फल, धातुस्तम्भक जायफल, धातुशोषणकारिणी, हरीतकी (हर्र) और धातुक्षय कलिंग (तरबूज) है सो वाजीकरणमें भी उक्त बातोंकी विशेषतापर वैद्य पूर्णध्यान देवे.

१८ सूक्ष्म–जो औषध शरीरमें रंध्रोंद्वारा प्रवेश होसके सो सूक्ष्म कहाती है जैसे " सैंधव, मधु, नीम, तेल " इत्यादि.

१९ व्यवायी–जो औषध पेटमें पहुँचतेही (पचनेके पूर्व) सर्वत्र व्यापक होजावे पश्चात् पचे सो व्यवायी कहाती है जैसे "भांग अफू (अफीम)" आदि.

२० विकाशी–जो औषध शरीरकी संधियोंके सर्व बंधको शिथिल (ढीले) करदे सो विकाशी कहते हैं जैसे " सुपारी, कोदव " इत्यादि.

२१ मादक–जो औषध तमोगुण प्रधान होके बुद्धिको बिगाड दे सो मादक (मदकारी) कहातीहै जैसे "मदिरा (मद्य, दारू, सराब ब्रांडी) इत्यादि.

२२ प्राणहारक–जो एकही औषध पूर्वोक्त (१ व्यवायी २ विकाशी ३ सूक्ष्म ४ छेदन ५ मादक और ६ आग्नेयी) दीपक इन छः = हों औषधियोंके गुणयुक्त हो सो प्राणहारक (जीवान्तक) कहाती है जैसे " वत्स नागविष " इत्यादि.

२३ प्रमाथी–जो औषध अपने प्रभावसे मुख, नाक, कानादि छिद्रोंके कफादि दोषोंके संचयको दूर करदे सो प्रमाथी कहाती है जैसे " काली मिर्च, वच " इत्यादि.

२४ अभिष्यंदि–जो पदार्थ अपने पिच्छिलपन अथवा जडताके कारणसे रस बहावकी नाडियोंको रोकके शरीरको जकडा देवे सो अभिष्यंदी कहाती है जैसे " दही " इत्यादि.

यदि इस विषयको दीर्घ विस्तारपूर्वक देखना हो तो शार्ङ्गधरके प्रथम खण्डमें चौथा अध्याय देखो वहां विस्तीर्ण रूपसे लिखा है.

इति नूतनामृतसागरे विचारखण्डे औषधीनांदीपनपाचनादिनिरूपणं नामाष्टमस्तरंगः ॥ ८ ॥

अथ लघुनिघण्टु,

अर्थात् मुख्यौषध नाम गुणविचार.

सर्वं कायेन संसाध्यं तस्या यस्स्थितिकारणम् ॥
आयुर्वेदोपदेशस्तु कस्य नस्यात्सुखावहः ॥ १ ॥

---

१ जिसे योगवाहि भी कहते हैं परंतु यही (प्राणनाशक) विष सुयोगी औषधियोंके अनुपानादिसे संबाधित होकर अमृततुल्य गुणदाता होजाते हैं परंतु सद्गुरुकी शिक्षा विना विषको अमृत बनालेना अशक्यही है इसलिये सद्गुरुकी शिक्षा लेनी अवश्य है.

२ जो पदार्थ कुछ बुद्बुदयुक्त, चिकटा खट्टा, कोमल, फूलाहुआ और कफकारी हो सो "पिच्छिल" कहाताहै

तत्रापि पूर्वं ज्ञातव्या द्रव्यनामगुणागुणाः ॥
अतस्त एव वक्ष्यन्ते तज्ज्ञाने हि क्रियाक्रमः ॥ २ ॥

भाषार्थ- धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष ये सब कायासेही सिद्ध होते हैं और कायाकी स्थितिका मुख्य कारण आयु है अर्थात् जबतक आयु तबतक काया रहती है. मनुष्य आयुर्वेदोक्त मर्यादानुसार चलनेसे पूर्णायुको प्राप्तहोसक्ता है इसलिये आयुर्वेदोपदेश किसको सुख प्राप्तिका नहीं है ? (सर्व प्राणीमात्रको सुखदाता है) सो उस आयुर्वेदकी शिक्षामें (१ निघंटु २ निदान ३ चिकित्सा) मुख्य तीन अंग हैं, जिसमें प्रथम निघण्टु है क्योंकि जबतक वैद्यको वस्तुओंके नाम और गुणादिका परिज्ञान न होगा तबतक वह चिकित्सा (रोगपर औषध देनेकी क्रिया) क्या कर सकेगी ? इसीलिये हम इस विचारखण्डके अन्तर्गत मुख्य मुख्य औषधियोंके मुख्य मुख्य नाम गुण संक्षिप्ततासे दर्शित करते हैं.

१ हर्रे- इसे हड़ें भी कहते हैं. इसके शिवा आदि भी अनेक नाम हैं यह सात प्रकारकी होती है, परन्तु बड़ी और छोटी जिसको फारसीमें हलेलः जर्दः और हलेलः जंगी कहते हैं यह एक वृक्षका फल है जो सर्द मुल्कमें होताहै जिसमेंसे सर्वोत्तम तथा सर्वकार्यमें ग्रहण करनेयोग्य "विजिया" नामकी हर्र होती है; जो नवीन चिकनी दृढ और विशेष बोझलहो (जो पानीमें डालतेही डूब जावे) सो अतिगुणकारी होती है.

हर्रे-रूखी, उष्ण, हलकी और रसीली है यह श्वास, कास, प्रमेह अर्श (ववासीर) उदररोग, कृमिरोग, संग्रहणी, स्तम्भकत्व (कब्जी) विषमज्वर, गोला, पेटका, अफरा, फोडे, वमन (उलटी) हिचकी, खाज, हृद्रोग, कामला (कमलरोग = पीलिया) शूल और प्लीहा (तापतिल्ली) इत्यादि रोगोंको दूर करती है, इसमें खट्टा और मीठा रस है, सो वादीको कसैला रस है सो पित्तको और कडुआ तथा तीखा रस है सो कफको नाश करता है हर्रमें उक्त पांचों रस हैं.

२ आंवला-इसके "धात्री फलादि" अनेक नाम हैं यह पुष्टाई करता है इसमें लगभग हर्रके समानही गुण हैं परन्तु विशेष करके रक्त पित्तको जीतनेवाला है यह अपने खट्टे रससे वादी, मीठे तथा ठंढे रससे पित्त

और रूखे तथा कसैले रससे कफको नाश करता है. उक्त पांचों रस आंवलेमें होते हैं.

३ बहेड़ा–इसके "विभीतकादि" अनेक नाम हैं. यह खानेमें उष्ण और लगानेमें शीत है, कासश्वासको दूर करता है, रूखा है नेत्रोंको आरोग्यप्रद है बालोंको बढाता है. इसकी बीजी कुछ मादक है. पानीमें पीसकर इसे लगानेसे दाहको मिटाती है.

४ अडूसा– इसके "वासा" आदि अनेक नाम हैं, वादीको उत्पन्न करता है. कटु है, कफ, पित्त, रुधिर, श्वास, कास, ज्वर, उलटी, प्रमेह, कुष्ठ और क्षयी इन सबको दूर करनेवाला है.

५ त्रिफला–३ भाग हर्र = ६ भाग बहेडा = १२ भाग आंवला=त्रिफला, उक्त प्रमाणानुसार त्रिफला बनता है. इसके "वरा" आदि भी नाम हैं. यह कुष्ठ, प्रमेह, रुधिरविकार कफ और पित्तको दूर करता, नेत्रोंकी ज्योति बढाता और हृदय (मन = दिल) को बल देता है.

६ गिलोय–इसके " गुडूची" आदि नाम हैं यह कडवी, हलकी पचनेके समय मीठी, रसीली, स्तम्भक (कब्ज करनेवाली)कसैली और उष्ण है. यह बलको बढाती, जठराग्निको प्रदीप्त करती, कामला, कुष्ठ, वादी, रुधिरप्रकोप, ज्वर, पित्त और उलटी इन सबोंको जीतती है.

(६) बेल–इसके "लक्ष्मीफल" आदि अनेक नाम हैं यह ग्राही (मलको रोकनेवाला, कसैला उष्ण, दीपन, पाचन, हलका, चिकना और तीक्ष्ण है. बलको बढ़ाता, हृदयको हितकारक है, बेलकी गिरी (भीतरका गूदा) वायु, कफ, त्रिदोष ज्वर, संग्रहणी, शूल और आमको नष्ट करती है.

७ गोखरू इसके "त्रिकंटका" आदि अनेक नाम हैं यह ठंढा और स्वादिष्ट है, यह बस्तिको शुद्ध करता, प्रमेह, श्वास कास, रुधिरप्रकोप, पथरी हृद्रोग और बादीको दूर करता है.

८ बडी कटाई–इसके "भटकटैया" "सिंही" आदि अनेक नाम हैं. यह उष्ण ग्राही और पाचनी है, हृदयको बल देती, कास, श्वास, ज्वर, कुष्ठ, कफ, वादी, शूल और अग्निमांद्य (मंदाग्नि) को दूर करती है.

९ छोटी कटाई–इसे श्वेत कटाईभी कहते हैं इसके " लक्षण " आदि

अनेकनाम हैं यह उष्ण, रूखी, दीपनी और पाचनी है, कास, श्वास, ज्वर, कफ, वायु, पीनस, पार्श्वशूल और हृद्रोगको दूर करती है.

१०मुलहठी–इसे मीठी लकड़ीभी कहते हैं इसके "मधुयष्टि" आदि अनेक नाम हैं, यह भारी और ठंढीहै यह बल करती, प्यास, उलटी और पित्तको नष्ट करनेवाली है.

११एरंड–इसके "दीर्घदंड" आदि अनेक नाम हैं यह दोप्रकारका है पहला–जिसका झाड बडा, फल छोटा होता है और रंग श्वेत होता है.

दूसरा–जिसका झाड़ छोटा, फल बड़ा और रंग रक्त (लाल) होता है. यह मीठा, भारी और ऊष्ण है शूल, सूजन, कटिपीडा, मूत्राशयपीडा, शिरपीडा, उदरपीडा, ज्वर, बढ़ी हुई श्वास, कफ, अफरा (पेट फूलना) कास, कुष्ठ, आम और बादीको दूर करनेवाला है. फल उष्ण स्वादिष्ट भेदन छारयुक्त और बादीके जीतनेवाला है.

श्वेत तथा रक्त एरंड दोनोंके गुण तुल्यही हैं.

१२ जवास–इसके "यवासा, दुर्लभा" आदि अनेक नाम हैं. मीठा तीक्ष्ण और पित्त, कफ, तथा, रुधिरको दूर करनेवाला है.

१३ मुण्डी –जिसे लोकमें बहुधा "गोरखमुण्डी" भी कहते हैं इसके "भिक्षु" आदि भी अनेक नाम हैं यह तीक्ष्ण है बुद्धिको बढ़ाती, उपदंश (गरमी) कृमि और पांडु आदि रोगोंको दूर करती है.

१४ श्वेतलटजीरा–जिसे "ऊँगा" भी कहते हैं। इसके "अपामार्ग" आदि नाम भी हैं, यह तीक्ष्ण दीपनहै. कफ, वायु, दाह, बवासीर, उदररोग, खाज और अपचनको दूर करताहै.

१५ रक्तलटजीरा–यह रूखाहै कफ और रक्तपित्तको नष्ट करता है.

१६ जयपाल– इसके "दंतिवीज" आदि अनेक नाम हैं यह चिकना है. रेचनकारक (दस्त लानेवाला) है–पित्त और कफको दूर करताहै.

१७ निसोत–यह दो प्रकारकी होती है " १ श्वेत, २ काली " इन दोनोंके नाम गुणादि पृथक्पृथक् हैं परन्तु विरेचन (जुलाब) के लिये विशेश करके काली निसोतही स्वीकार की जाती है.

१८ कुटकी–इसके "तिक्ता" [illegible] नामभी हैं यह पचनेके समय

कडवी है, तीखी, रूखी, हलकी और ठंडी है. यह कृमि, दाह, पित्त कफ और ज्वरको दूर करती है.

१९ नीम–इसके "पिचुमंद" आदि अनेक नाम हैं. यह ठंढा–हलका ग्राही (दस्त रोकनेवाला) और पचनेमें कडुआ है–अग्निवातको उत्पन्न करता तथा व्रण (फोड़े) पित्त, कफ, उल्टी, कुष्ठ प्रमेह और मुँहसे वहतेहुए पानीको बंद (दूर) करता है.

२० चिरायता–यह दो तीन प्रकारका होता है, इसके "किरातादि" अनेक नाम हैं यह बादीको उत्पन्न करता, सन्निपात, ज्वर, श्वास, कास, पित्त, रुधिरकोप और दाहको दूर करताहै, स्वभावमें रूखा, ठंढा, तीखा और हलका है.

२१ इन्द्रयव–इसके "भद्रयव" आदि भी नाम हैं यह संग्रही, ववासीरको दूर करता है.

२२ मैनफल जिसे "मैनर" भी कहते हैं इसके "मदनफल" आदि भी नाम हैं, यह उष्ण है, उल्टी लाता है, कफ और शोथको दूर करता है.

२३ मेढाशृङ्गी–इसके "मेपशृंगी" आदि भी नाम हैं यह बादीको उत्पन्न करती खांसी-पित्त और कफको खोती है.

२४ पुनर्नवा–जिसे मारवाड देशमें "साटी" भी कहते हैं। इसके दो भेद हैं, " १ श्वेत २ लाल " यह उष्ण और मीठा है, शोथ–कफ और उदररोग आदिको दूर करता है.

२५ असगंध–इसके "अश्वगंधादि" अनेक नाम हैं यह कसैला उष्ण और रसायन है, बलको बढ़ाता तथा बादी कफ आदि रोगोंको दूर करताहै.

२६ शतावरी–दो प्रकारकी होती है "१छोटी और २ बड़ी" यह मीठी और ठंढी है वीर्य तथा दूधको बढ़ाती और कई रोगोंको दूर करती है.

२७ मालकांगुनी–इसके "ज्योतिष्मती" आदि भी नाम हैं यह कड़वी और तीखी है बादी कफादि रोगोंको दूर करती है.

२८ देवदारु–इसके " सुरद्रुम" आदि भी नाम हैं, यह उष्ण हलका और कडुआ है अफरा, ज्वर, शोथ, आम, हिचकी, खाज, कफ और बादीको दूर करता है.

१९ पुहकरमूल–इसके "पुष्कर" आदिभी अनेक नामहैं यह कडुआ, तीखा और उष्ण है. वायु कफ, ज्वर, शोथ, अरुचि, श्वास और पार्श्वशूलको दूर करता है.

२० कांकडाशृंगी–इसके "शृंगीआदि" भी नाम हैं उष्ण है, हिचकी उल्टी श्वास कास, कफ, क्षयी और ज्वर आदि रोगोंको दूर करती है.

२१ कायफल–इसके "कट्फल" आदि अनेक नाम हैं, यह बादी कफ, ज्वर, श्वास और प्रमेहादि रोगोंको दूर करता है.

२२ भारंगी–इसके "भार्ङ्गी" आदि अनेक नाम हैं, उष्ण है वात, कफ ज्वर, श्वास, कास आदि रोगोंको दूर करती है.

२३ नागरमोथा–इसके "मुस्ता" आदि अनेक नाम हैं, यह ठंढा, संग्राही, तीखा, दीपन और पाचन है ज्वरादि रोगोंको दूर करता है.

२४ हल्दी–इसके "हरिद्रा" आदि कई नाम हैं, यह उष्ण और श्लेष्मा है, पित्त प्रमेह आदि रोगोंको दूर करती है और रंगको सुंदर बनाती है.

२५ भांगरा–इसके "भृंगराज" आदिक नाम हैं. यह कफ, वात कुष्ठ, नेत्ररोग (शीशरोग) आदि अनेक रोगोंको दूर करता है और उष्ण है.

२६ पित्तपापडा–इसके "पर्पट" आदि अनेक नाम हैं । यह पित्त रुधिरकोप शीशभ्रमण (शिरघूमना) प्यास कफज्वर और दाहको दूर करता और वादीको उत्पन्न करता है तथा ठंढा है.

२७ अतीस–इसके "अतिविष" आदि अनेक नाम हैं यह उष्ण और पाचन है. तथा कफ पित्त अतीसारको जीतता है.

२८ लोध–इसके "रोध्र" आदि नाम हैं, यह ठंढा और रेचक (दस्तावर) है, ज्वर अतीसार और रुधिरको दूर करता है.

२९ मूसली–इसके "खालिनी" आदि अनेक नाम हैं । यह मीठी, भारी उष्ण वीर्य रसायनी और पुष्टिकारी है, गुदा और वायुके रोगोंको दूर करती है.

४० कैवांचबीज–इसके "कपिकच्छ" आदि अनेक नाम हैं। यह बहुत पुष्ट मीठा बलवर्धक वीर्यवर्धक भ[illegible] जीकरण है.

४१ भिलावाँ–इसके "[illegible] नाम हैं यह कसैला

और उष्ण है, वीर्य उत्पन्नकरता वायु, कफ, उदररोग, आध्मान, कुष्ठ, मूलव्याधि, संग्रहणी, गुलमज्वर, कृमि और मन्दाग्निको दूर करता है.

४२ ब्राह्मी–इसके "सरस्वती" आदि बहुत नाम हैं, यह ठंढी रेचक (दस्तलानेवाली) और मीठी है बुद्धि और स्मृतिको वढ़ाती, ज्वर, पांडुरोग तथा कुष्ठ आदि रोगोंको दूर करती है.

४३ गोभी–इसके "गोजिह्वा" आदिक नाम हैं यह ठंढी और संग्राही है, वायुको उत्पन्न करती, हृदयको बल देती, कफ, पित्त, प्रमेह, ज्वर और कास आदि रोगोंको दूर करती है.

४४ चिरमी–इसको " गुंजा" आदि भी कहते हैं, यह वालोंको बढ़ाती वल बुद्धि करती और पित्त, कफ नेत्ररोग, खुजली, फोडे आदि रोगोंको दूर करती है.

४५ तालमखाना–इसके "इक्षुर" आदि नाम हैं. यह ठंढा भारी और पुष्ट है, बादी और रुधिरके रोगोंको दूर करता है.

४६ आक–इसके दो भेद हैं "१ श्वेत २ रक्त" इसके "अकाव अर्क–आकड़ा" आदि अनेक नाम हैं, उष्ण है प्लीहा (तापतिल्ली) शंख वात ललाटकी (मस्तक) पीड़ा कुष्ठ,खुजाल, व्रण, गुल्म, अर्श, (बवासीर) "कफ" कृमि और उदरपीडा इन सब रोगोंको दूर करता है.

४७ धतूरा–इसके "धत्तूर–कितव" आदि नाम हैं यह मादक (नसा, करनेवाला) और उष्ण है अग्निको बढ़ाता कुष्ठ आदि रोगोंको दूर करताहै.

४८ घीकुमारी–इसके "ग्वारपाठा, कुमारी" आदि अनेक नाम हैं. यह ठंढी है–यकृत, प्लीहा, कफज्वर, गठान, विस्फोटक, रक्तरोग और चर्मरोगको दूर करती है.

४९ भंग–इसके "भांग, गांजा" आदि अनेक नाम हैं. यह उष्ण ग्राहिणी और मादक है, अग्निको दीपन करती है.

५० काशनी-इसके "कम्बनी, शोण, फलनी" आदि नाम हैं. यह दूध को बढ़ाती मस्तकपीडा और त्रिदोपको दूर करती है.

५१ दूव–इसके दूर्वा आदि नाम हैं. यह पित्त दाह और रुधिर कोपको शांत करती है दूब दो तीन प्रकारकी हैं परन्तु ये तीनों प्रायः शीतलही हैं.

५२ बाँस–इसके "वंश, वेणु" आदि नाम हैं, यह ठंढा है. पित्त, कफ, दाह, शोथ और रुधिरकोपको दूर करताहै, बाँसकी करील जोकि बाँसके डांडमेंसे निकलता है भारी है, कफको उत्पन्न करता और बादी पित्तको दूर करता है, बाँसकी जड उष्ण है, यह बादी कफको दूर करती है.

५३ खशखश– इसके "तिलभे, उरई, खश, तिल" आदि अनेक नाम हैं. यह भारी शोषक रूखी और संग्राही है, बादीको जीतती है.

५४ अफीम–इसके "आफुक, अहिफेन" आदि नामहैं यहमादक शोषक और संग्राहीहै, कफको दूर करती तथा बादी और पित्तको उत्पन्न करती है.

इति नूतनामृतसागरे विचारखण्डे अजयादिवर्णननिरूपणंनाम वनमस्तरंगः॥ ९॥

---

५५ सोंठ–इसके " शुंठी, विश्वौषध" आदि नाम हैं. यह चिकनी, कटु उष्ण, भोजनमें हलकी रुचिकर, पाचनी और पुष्ट है. आमवात, कफ, बादी संग्रहणी (कब्जी) वमन (कै) श्वासकास शूल हृदयरोग श्लीपद शोथ (सूजन) मूलव्याधि अफरा और उदररोगको दूर करती है.

५६ अदरख–जिसे " आर्द्रक, शृंगवेर " आदि भी कहते हैं. यह भेदन दीपन भारी और सब गुणोंमें शुंठीके समान गुणवाला है.

५७ कालीमिर्च–इसके " गोलमिच, मिर्च, वह्निज" आदि नाम हैं. यह कडवी तीक्ष्ण दीपन उष्ण और रूखी है, कफ वात श्वास शूल और कृमिको नष्ट करती और पित्तको उत्पन्न करती है. यह सूखी काली मिर्चके विषयमें कहा गया, हरी (गीली) मिर्चके गुण इससे भिन्न हैं.

५८ पीपल–इसके " पिप्पली, कृष्णा, कणा " आदि नाम हैं. यह दीपन, अत्युष्ण, चिकनी कडवी हलकी और रेचकहै पचनेमें स्वादिष्ट बल बढाती पित्त उत्पन्न करती कफ, वात, श्वास, कास, ज्वर और उदरपीडा दूर करती है.

५९ पीपलामूल–इसके " कणामूल, षड्ग्रन्थिक" आदि नाम हैं यह कटु, उष्ण, पाचन, हलका, दीपन और रूखा है, कफ वात और उदर-पीडाको शान्त करता है.

६० चित्रक–इसके " हुतभुक, व्याल" आदि नाम हैं. यह रूखी, उष्ण और पाचन है. संग्रहणी शोथ, अर्श आदि रोगोंको दूर करती है.

६१ सौंफ–इसके "शतपुष्पा, घोषा" आदि नामहैं. यह हलकी दीपनी और उष्ण है. ज्वर, कफ, वात और शूलादि रोगोंको दूर करती है.

६२ मेथी–इसके "मेथिका" आदि नाम हैं, यह दीपनी और उष्ण है हृदयको बल देती, विष्टाके कृमि, शूल गोला, कफ और वायुको नष्ट करती है.

६३ अजमोद, इसके "अत्युग्रगंधा, मोदा" आदि नामहैं, यह कटु तीक्ष्ण उष्ण, दीपन और पुष्ट है. मलको बांधता, कफ वात, नेत्ररोग कृमि रोग और उलटी आदि रोगोंको दूर करता है.

६४ जीरा–इसके तीन भेद हैं "१ शुक्लजीरा२ कृष्णजीरा ३ कालिका" जो कि वर्त्तमानसे "१ सफेद जीरा, २ स्याहजीरा, ३ कलौंजी" इन नामोंसे पुकारे जाते हैं, इन तीनोंके गुण समानही हैं. जीरा-रूखा-कडुआ, उष्ण, दीपन और संग्राही है, पित्तको उत्पन्न करता–वायु–कफ अफरा उलटी और मुखसे वहतेहुए पानीको बंद करता है इसके "जीरकं जीरणं" ये नाम भी हैं.

६५ अजवायन– इसके "जवानी दीप्यक" आदि नाम हैं. यह तीक्ष्ण उष्ण, कटु, हलकी और पाचनी है. रुचिको बढाती वात, कफ, अफरा, गुल्म, शूल और कृमिरोगको दूर करती हैं.

६६ वच–इसके "उग्रगंधा, षड्ग्रन्था" आदि नाम हैं, यह उष्ण तीखी और कटु है. वमन लाती, स्वरको सुन्दर करती, मिरगी, कफोन्माद, भूतवाधा और बादी इन रोगोंको दूर करती है.

६७ वायविडंग–इसके "विडंग, जंतुहनन" आदि नाम हैं. यह कटु, तीखी, हलकी, रूखी और उष्ण है, अग्निको बढाती शूल अफरा, उदर-रोग, कृमि, वायु, कफ और विबंध (दस्तरुकना) को दूर करती है.

६८ धनियां–इसके "धना, धान्यक" आदि नाम हैं, यह कसैला, चिकना और पुष्ट नहीं है परन्तु पाचन और हलका है, मूत्र बहुत लाता हृदयको बल देता, रेचनको बंध करता, त्रिदोषको दूर करता, श्वास, कास, रुधिरकोप प्यास अर्श और कृमिरोगको दूर करता है.

६९ हींग–इसके "हिंगु, बाह्लीक" आदि नाम हैं, यह उष्ण पाचन तीक्ष्ण और पित्तवर्द्धक है. कफ, वात, शूल, गुल्म, अफरा और कृमिरोगको जीतता है.

७० वंशलोचन–इसके "वंशज, वैणवी" आदि नाम हैं. यह ठंढा और मीठा है. प्यास, क्षयी, ज्वर, श्वास, कास, पित्त, रुधिरकोप और कामला इन रोगोंको दूर करता है.

७१ सेंधानोन–इसके "सैंधव, सिंधुज" आदि नाम हैं. यह ठंढा दीपन, पाचन और चिकना है त्रिदोषको दूर करता है.

७२ सोंचरनोन–इसके "सौवर्चल" आदि नाम हैं, यह, उष्ण, हलका और अग्निप्रदीपक है, अन्नपर रुचि बढ़ाता, शुद्ध डकार लाता, रेचन करता अफरा और उदरशूलको नष्ट करता है.

७३ सुहागा–इसके "टंकण" आदि नाम हैं, यह रूखा, उष्ण और अग्निकारक है, कफको दूर करता और पित्तको उत्पन्न करता है.

७४–७५ सर्वक्षार–जितने क्षारमात्र हैं, वे सब अग्निसदृश उष्णहैं पाचन और भेदन हैं, वीर्य और दृष्टिको नाश करते रक्तपित्तको उत्पन्न करते रेचन विबंध (दस्त बंद होना) अफरा, पीनस, यकृत, प्लीहा, कफ, आम अर्श, गुल्म और ग्रहणी इन सर्व रोगोंको दूर करते हैं.

इति नूतनामृतसागरे विचारखण्डे शुंठ्यादिनिरूपणं नाम दशमस्तरंगः ॥ १० ॥

---

७६ कपूर–इसके "कर्पूर" स्फटिक 'चंद्र' आदि नाम हैं. यह शीतल पुष्ट, लेखन और हलका है. नेत्रोंको गुणकारक है, कफ, दाह, दाद और बिगडेहुए मुखके स्वादको दूर करता है.

७७ कस्तूरी–इसके "मृगमद, वेदमुख्या" आदि नाम हैं. यह उष्ण कटु और वीर्योत्पादनी है. कफ, शीत, विष, उलटी, शोच, दुर्गंध और बादीको दूर करती है.

७८ श्वेतचन्दन–इसके "चंदन, तिलपर्ण" आदि नाम हैं. यह ठंढा, रूखा, हलका, तीखा और कडुवा है. प्रसन्नताको उत्पन्न करता, बलको बढ़ाता, कफ, प्यास, पित्त, दाह और रुधिरकोपको दर करता है.

७९ रक्तचन्दन–इसके " उद्दिष्ट, लोहित" आदि नाम हैं. यह शीतल भारी, मीठा और पुष्ट है. नेत्रोंको गुण करता, प्यास, रुधिर, पित्त ज्वर, फोडे और विषको नष्ट करता है.

८० केशर– इसके "कुंकुम, चारु" आदि नाम हैं. यह उष्ण और कटु

है. शिरके रोग, फोडे और कृमि आदि रोगोंको नष्ट करती, बलको बढ़ाती और रंगको सुन्दर बनाती (अच्छा करती) है.

८१ जायफल–इसके "जातिफल, जातिसृत" आदि नाम हैं. यह उष्ण, हलका, दीपन और पाचन है. हृदयको बल देता, स्वरको उत्तम बनाता, कफ, वात, उल्टी, कृमि, पीनस और खांसीको मिटाता है.

८२ जायपत्री–इसके "जातिपत्र, जातिपर्ण" आदि नाम हैं. यह हलकी और उष्ण है कफ–कृमि और विषको दूर करती है.

८३ लौंग–इसके " लवंग, चन्दनपुष्प, शिखिर " आदि नाम हैं. यह हलकी, उष्ण, दीपन और पाचन है, नेत्रोंको गुण करती, हृदयको बल देती, शूल, अफरा, कफ, श्वास, कास, उल्टी और क्षयको दूर करती है.

८४ छोटी इलायची–इसके " एला, त्रुटि" आदि नाम हैं. यह कफ, श्वास, कास, अर्श और मूत्रकृच्छ्र आदि रोगोंको दूर करती है.

८५ दालचीनी–इसके " त्वच, वरांग" आदि नाम हैं. यह उष्ण, हलकी और स्वादिष्ठ है. पित्तको उत्पन्न करती, हृदामय, बस्ति (मूत्राशयरोग) बादी, अर्श, पीनस, कृमि और मत्ररोगको दूर करती है.

८६ तेजपात–इसके " पत्र, दलाह्व " आदि नाम हैं. यह उष्ण और हलका है. कफ और वातको नष्ट करता है.

८७ नागकेसर–इसके "नाग" आदि नाम हैं. यह उष्ण और हलकी है. आमको पचाती, दुर्गन्ध, कुष्ठ, विसर्प, कफ, पित्त और विषको मिटाती है.

८८ तालीसपत्र–इसके " तालीस, धात्रीपत्र" आदि नाम हैं. यह उष्ण है. श्वास, कास, कफ और वायु आदि रोगोंको मिटाता है.

८९ खश[1]–इसके "उशीर, उरई" आदि नाम हैं. यह शीतल पाचन और स्तम्भन है. कफ, पित्त, प्यास, रुधिर, विष, विसर्प, दाह, शोथ और फोडोंको नष्ट करता है.

९० गूगल–इसके " गुग्गुल, शाल, निर्यास" आदि नाम हैं. यह उष्ण, रेचक, दीपन, रसायन, (नया होतो) बलकारक और (पुराना

---

१ यह वही पदार्थ है जिसके बहुधा उष्णऋतुमें पखे, पर्दे और टट्टियां आदि बनाई जातीहैं.

लेखन है. टूटीहुई, अस्थि (हड्डी) को जोडता, हृदयको बल देता, कफ, वात, फोडे, प्रमेह, लोइ, बवासीर, शोथ, गांठ, गंडमाला और कृमिरोगको मिटाता है.

९१ चोक–इसके "चौर" आदि नाम हैं. यह ठंढा है. कफादिकको नष्ट करता है.

९२ कचूर–इसके "शठी पलाशी" आदि नाम हैं. यह उष्ण और दीपन है. कुष्ठ, अर्श व्रण, कास, श्वास, गुल्म, वात, कफ और कृमिरोगको मिटाता है.

९३ पद्माख–इसके "पद्मकाष्ठ; पद्मक" आदि नाम हैं. यह ठंढा है पित्त, दाह, विस्फोटक, कुष्ठ, श्लेष्मा, रुधिरकोप और पित्तको दूर करता है.

९४ गोलोचन–इसके "गोरोचन, गौरी" आदि नाम हैं. यह ठंढा है, इसीलिये रुधिरकोपको मिटाता और गिरतेहुए गर्भको बचाता है.

९५ कमल–इसके "पद्म, नलिन, अरविंद" आदि नाम हैं. यह ठंढा है. कफ, पित्त, दाह और प्यासको दूर करता है ॥

९६ कमलगट्टा–इसके "पद्मबीज, पद्माक्ष" आदि नाम हैं. यह ठंढा ग्राही और बलकारक है. गर्भ स्थापन करता, कफ वातको बढ़ाता, पित्त, रुधिर और दाहको दूर करता है ॥ भा० प्र० ॥

९७ सिंघाड़ा–इसके "शृङ्गाटक, जलफल" आदि नाम हैं. यह ठंढा भारी, स्वादिष्ट, ग्राही और बलकारक है. वीर्य, बादी और कफको उत्पन्न करता, पित्त, रुधिरकोप और दाहको शांत करता है.

९८ गुलाब–इसके "कुंजिका, भद्रतरुणी, कुंजसेवती, पाटल" आदि नाम हैं. यह ठंढा, संग्राही और हलका है. हृदयको बल देता, वीर्य उत्पन्न करता, तीनों दोष रुधिरकोपको जीतता, रंगको सुन्दर करता और दुर्गन्धको दूर करता है.

९९ तुलसी–इसके "तुलसिका, सुरसा" आदि नाम हैं. यह उष्ण तीक्ष्ण कडवी और दीपनी है, दाह और पित्तको उत्पन्न करती, कुष्ठ, कफ, वात और पार्श्वशूल आदि रोगोंको दूर करती है.

इति नूतनामृतसागरे विचारखण्डे सुगंधादिवर्गनिरूपणं नामैकादशस्तरंगः ॥ ११ ॥

---

१०० सोना–इसके "सुवर्ण, कंचन" आदि नाम हैं. यह ठंढा,

पुष्ट, बलकारक, भारी, रसायन मीठा लेखन तीक्ष्ण और कसैला है. कांतिको बढ़ाता, विषोन्माद, त्रिदोष, ज्वर और शोकको मिटाता है.

१०१ चाँदी–इसके "रूपा, रूप्यक, रजत" आदि नाम हैं. यह ठंढी रेचक, रसायन, लेखन कसैली. खट्टी, (पचनेके समय) मीठी और चिकनी है. वात पित्तको हरण करती, धातुको बढ़ाती और तरुणाईको स्थिर रखती है.

१०२ अभ्रक–इसके "स्वच्छ" आदि नाम हैं. यह ठंढा और बलप्रद है. कुष्ठ, प्रमेह और त्रिदोषको दूर करता है.

१०३ गंधक–इसके "गंध, सौगंधिक" आदि नाम हैं. यह उष्ण है. कुष्ट, क्षयी, कफ और वात आदिको दूर करता है.

१०४ पारा–इसके "पारद" आदि नाम हैं. यह उष्ण है कृमि और कुष्ठ आदि रोगोंको दूर करता है.

१०५ गेरू–इसके "गैरिक, रक्तपाषाण" आदि नाम हैं यह दाह, पित्त, रुधिरकोप, कफ, हिचकी, विष और उलटीको दूर करती तथा नेत्रोंको गुणकारक है.

१०६ नीलाथोथा–इसके "हरियाथूथा, तुत्थ" आदि नामहैं यह लेखन और भेदन है. कुष्ठ, खुजाल, विष, कृमि और कफ आदिको दूर करता है.

१०७ सुरमा–इसके "सौवीर" आदि नाम हैं. यह ठंढा और नेत्रोंको हितकारी है; कफ वात और पित्तको शमन करता है.

१०८ शिलाजीत– इसके "शिलाजतु" आदि नाम हैं. यह उष्ण और कटु है; मूत्राघात, प्रमेह, ववासीर, कुष्ठ, उदररोग, पांडुरोग, क्षयी और श्वास, कास आदि रोगोंको नष्ट करता है; इसका विधिपूर्वक निकाला हुआ सत्व निर्बलताको शीघ्र नाश करके वीर्यको बढ़ाता है.

१०९–रसोत इसके "रसांजना" आदि नाम हैं. यह उष्ण और कटु है. कफ, मुखविकार, नेत्रविकार और फोड़ोंको दूर करता है.

११० फिटकरी–इसके "स्फटिका" आदि नाम हैं. यह कसैली और उष्ण है; पित्त, कफ, विष फोडे चित्र और विसर्प इत्यादि रोगोंको नाशकरती है.

१११ मोती—इसके "मौक्तिक" आदि नाम हैं. यह शीतल मीठा और पुष्ट है, विषादि रोगोंको नष्ट करता है.

११२ शंख—इसके "कम्बु" आदि नाम हैं; यह शीतल है नेत्रोंको हित करता, शूल, पित्त, कफ और रुधिरकोपको नष्ट करताहै.

इति नूतनामृतसागरे विचारखण्डे सुवर्णादिवर्गनिरूपणं नाम द्वादशस्तरंगः ॥ १२ ॥

---

११३ बड़— इसके "वटवृक्ष, बट, रक्तपदा" आदि नाम हैं. यह शीतल और ग्राही है. कफ, पित्त और फोडेको दूर करता (इसका दूध वीर्यको दृढ करता) और बलको बढाता है.

११४ पीपल—इसके "श्यामल, अश्वत्थ" आदि नाम हैं. यह ठंढा है. कफ, पित्त और रुधिरकोपको दूर करता है.

११५ गूलर—इसके "उदुम्बर, जन्तुवृक्ष" आदि अनेक नाम हैं. यह शीतल और भारी है, रंगको सुन्दर बनाता, पित्त, कफ और रुधिरकोपको जीतता है. इसका दूध पुष्ट है. शोथ तथा रुधिर-जन्य ग्रंथिको बैठाताहै.

११६ लसोढा—इसके "लहेसवा, श्लेष्मान्तक, कर्बुदार" आदि नाम हैं. यह कुछ उष्ण और पुष्ट है. कफ, छाले, विस्फोटक, व्रण, विसर्प, कुष्ट, वादी, पित्त, क्षयी और रुधिरकोपको जीतता है.

११७ खैर— इसके "खदिर" आदि नाम हैं यह शीतल है; दांतोंको गुण करता, कृमि, प्रमेह, ज्वर, फोड़े, कुष्ठ, शोथ, आम, पित्त रुधिर पांडु और कफको नष्ट करता है. इसका गोंद मीठा और वीर्य उत्पन्न करता है. इसका सार जिसे "खैरसार" कहते हैं. बलप्रद है, बिगडा-हुआ मुख, कफ और रुधिरको जीतता है.

११८ बम्बूल—इसके बमूर "बबूल, किंकराल" आदि नाम हैं. यह ग्राही है. कफ, कुष्ठ, कृमि; विष और रक्तपित्तको जीतता है.

११९ पलाश—इसके "छिवला, किंशुक, किर्मी, खकरा" आदि नाम हैं. यह उष्ण, दीपन और पुष्ट है. व्रण, गुल्म, ग्रहणी, अर्श, कृमि इत्यादि रोगोंको शमन करता और टूटी हुई हड्डीको जोडताहै इसका पुष्प शीतल और ग्राही है. कफ, पित्त और रुधिरजन्य कष्ट दूर करता है. इसका फल हलका और उष्ण है. प्रमेह, अर्श और कृमिरोग-को मिटाता है.

१२० धवा-इसके "धावडा, धव और" नंदितरु आदि नाम हैं. यह ठंढा है, प्रमेह, पांडु, रुधिरपित्त और कफको दूर करता है.

१२१ सेमर-इसके "शाल्मलि" आदि नाम हैं, यह ठंढा और पुष्ट है, रुधिर और पित्तको जीतता है, यह वृक्ष तीन चार प्रकारका है.

१२२ शमी-इसको "मारवाडप्रान्तमें खेजडी" कहते हैं. इसके तुंगा आदि नाम हैं. यह ठंढी और हलकी है. श्वास, कुष्ट अर्श और कफको दूर करती है इसका फल रूखा है. पित्तको उत्पन्न करता और केश (बालों) का नाशक है.

इति नूतनामृतसागरे वटादिवर्गनिरूपणं नाम त्रयोदशस्तरंगः ॥ १३ ॥

---

१२३ मुनक्का-इसके "द्राक्ष, मधुफल, गोस्तनी" आदि नाम हैं. यह ठंढा और भारी है, नेत्रोंको गुण करता, वलको बढाता, रेचन शुद्ध करता प्यास, ज्वर श्वास, उलटी, वातरक्त, कामला, मूत्रकृच्छ्र, रक्तपित्त, संमोह, दाह, शोष, मदात्यय और आमदोषको दूर करताहै.

१२४ अंगूर-यह कच्चा द्राक्षही है. खट्टा और भारी है. मुनक्का (पक्काद्राक्ष) के गुणके समानही इसके भी गुण हैं पर यह रक्त पित्तको उत्पन्न करताहै.

१२५ किशमिश-इसके "अवीजा, लघद्राक्ष" आदि नाम हैं. यह गोस्तनी द्राक्षके समानही गुणवाला है. परन्तु प्रायः इसमें बीजा नहीं रहते ऐसा भावप्रकाश पूर्वखण्ड प्रथम भागमें लिखा है.

१२६ जंगलीदाख-यह भी द्राक्षके भेदमेंही है, हलका और कुछ खट्टा रहता है, कफ और अम्लपित्तको उत्पन्न करता है.

१२७ आमवृक्ष-इसके " आम्र, चूत " आदि नाम हैं. यह ग्राही है, प्रमेह, रुधिर, कफ, पित्त फोडोंको दूर करता है.

१२८ कैरी-आमका कच्चा फल (अँबियां) यह अत्यंत खट्टी और रूखी हैं, त्रिदोष तथा रुधिरकोपको जीतती हैं.

१२९ आम-आमका पक्का फल मीठा, पुष्ट, चिकना, भारी, ठंढा और रुचिकारक है. यह हृदयको सुख देता, बलक बढ़ाता, वादीको दूर करता

१ अवीजान्या स्वल्पतरा गोस्तनी सदृशा गुणः ॥ अवीजा ईषद्बीजा किसमिस इति श्लोके इत्युक्तं ॥ भावप्रकाशे पूर्वखण्डे-प्रथमभागः ॥ १ ॥

वर्णको सुन्दर बनाता, पित्तको शांत रखता, मांसको बढ़ाता और वीर्यको बढ़ाता है.

१३० अमचुर–कच्चे आमको सुखाके जो अमचुर बनाया जाता है सो भेदन है कफ और बादीको उत्पन्न करता है.

वृक्षमें पका, घासमें पका, पत्तोंमें पका, अधपका, खट्टा, मीठा युक्त केवल आमका रस दूध शक्कर आदि पदार्थोंसे योजित, इत्यादि प्रकारसे आमके उपयोगमें उसके गुण कुछके कुछही एक दूसरेसे भिन्न हो जाते हैं, यह आमका विषय संक्षिप्ततासे वर्णन किया, यदि पूर्णरूपसे विस्तार देखना हो तो राजनिघंटु या भावप्रकाश देखो.

१३१ जामुन–इसके " जम्बूफल " आदि नाम हैं. यह स्वादिष्ठ विबंधक और भारी है. छोटी जामुन दाहको नाश करती और रुचिको बढ़ाती है इसके दो भेद हैं, " १ राजजम्बूफल, २ क्षुद्रजम्बूफल" जिससे "राजजामुन और कठजामुन" भी कहते हैं. राजजामुन बडी और कठ जामुन छोटी होती है, गुणमें समानही हैं.

१३२ नारियल– इसके " नारिकेल, श्रीफल " आदि नाम हैं. यह ठंढा है, विलम्बसे पचता, मूत्राशयको शुद्ध करता, रुधिर, दाह, वात, पित्तको दूर करता है, कच्चे नारियलका दूध ठंढा, हलका और दीपन है, वीर्यको बढाता और बलको उत्पन्न करता है.

१३३ केला–इसके "कदलीफल, रम्भाफल" आदिनाम हैं. यह शीतल, विबंधक, भारी, चिकना और कफोत्पादक है; पित्त, रुधिर, प्यास, दाह, घाव, क्षयी और बादीको जीतता है.

१३४ अनार इसके "दाडिम" आदि नाम हैं. यह दीपन है; भोजनपर रुचि बढाता, बलको उत्पन्न करता है, यह दो प्रकारका है. १ मीठा २ खट्टा, मीठा अनार त्रि' [illegible]को और खट्टा बादी, कफ तथा रुधिर को दूर करता है.

१३५ बादाम–इसके "बादाम, सुफल" आदि नाम हैं. यह उष्ण और चिकना है. बलको बढ़ाता है [illegible]र्यको उत्पन्न करता और बादीको दूर करता है.

१३६ पिस्ता–इसके दो [illegible]निकोचक, चारुपाल " आदिनाम हैं यह उष्ण, भारी और पुष्ट है [illegible]बादीको दूर करता और पित्तको बढाता है.

१३७ अंजीर–इसके "गज्जल" आदि नाम हैं. यह शीतल और स्वादिष्ठ है. पित्त, रुधिर और बादीको जीतता है.

१३८ मीठानींबू–इसके "निम्बुक" आदि नाम हैं. यह स्वादिष्ट और भारी है. बादी, पित्त, रक्त, शोष, अरुचि तृष्णा, उल्टी, विपजन्यरोग और जी मचलाना आदि रोगोंको दूर करता है.

१३९ खट्टानींबू–यह खट्टा, हलका, पाचन और दीपन है, बादीको जीतता है.

१४० इमली–इसके "अम्लिका, चुक्रिका" आदि नाम हैं. कच्ची इमली भारी है, बादीको दूर करती और पित्त, कफ, रुधिर प्रकोपको बढ़ाती है. पक्की इमली–दीपनी, उष्ण, रूखी और रेचक है. कफ बादीको दूर करती है. सूखी इमली–बलकारक और हलकी है. श्रम भ्रांति और प्यास आदिको दूर करती है. भावप्रकाश)

१४१ सुपारी–इसके "क्रमुक, पूग, पूगीफल" आदि नाम हैं. यह भारी, ठंढी रूखी, कसैली, दीपनी और रुचिकारक है. कफपित्तको जीतती, मूर्छा लाती और मुखके बिगडे हुए स्वादको सुधारती है.

१४२ पान–इसके "ताम्बूल, ताम्बूली, ताम्बूलवल्ली, नागिनी और नागवेलपत्र" आदि नाम हैं यह उष्ण, हलका, तीक्ष्ण, कसैला, रेचक और रुचिकारक है. कामदेव, रुधिर बल और पित्तको बढ़ाता. कफ, मुखदुर्गंध, मल बादी और श्रमको दूर करता है.

१४३ चूना–इसे चूर्णभी कहते हैं. कफ और बादीको नष्ट करता है.

१४४ कत्था–इसके "खदिर, खैर" आदि नाम हैं यह कफ और पित्तको दूर करता है.

इति नूतनामृतसागरे विचारखण्डे द्राक्षादिवर्गनिरूपणो नाम चतुर्दशस्तरंगः ॥ १४ ॥

---

१४५ कुम्हडा–इसके "कूष्मांड, कोह[illegible]" आदि नाम हैं. यह ठंढा और भारी है. पित्त, वात और रक्तको जीतता है.

१४६ ककडी–इसके "कर्कटी, खीरा" आदि नाम हैं यह ठंढी और रूखी है पित्तको दूर करती है.

१४७ तरबूज–इसके "कालिंग, मतीरा, कलींदा" आदि नाम हैं. यह ठंढा, भारी और ग्राही है. पित्त और वीर्यको नाश करता है (पका हुआ कुछ) उष्णता लाता है. (क्षारयुक्त होनेसे) पित्तको उत्पन्न करता और कफ वातको दूर करता है. विशेषकर–इसके अधिक खानेसे नपुंसकता प्राप्त होती है.

१४८ घियातुरई–इसके "राजकोशातकी, मिष्टा, गिलकिया, रिसआ" आदि नाम हैं. यह शीतल है. ज्वर कफको दूर करती और बादीको उत्पन्न करती है.

१४९ बड़ीतुरई–इसके "महाकोशातकी" आदि नाम हैं. यह पित्त और बादीको दूर करती है.

१५० भांटा–इसके "वृंताक, वार्तिक, बैंगन" आदि नाम हैं. यह उष्ण, तीक्ष्ण, दीपन और हलका है. पित्तको उत्पन्न करता, वीर्यको बढ़ाता, हृदयको बल देता, कफ और बादीको र करता है. श्वेत बैंगन उक्त गुणसे अनुकूलही है. परन्तु बवासीरवालेको बड़ा गुणी है.

१५१ करेला–इसके "कारवेल्ल, कटिल्ल" आदि नाम हैं. यह ठंढा हलका, भेदी और तीक्ष्णहै, पित्त, रुधिर, कामला, पांडु, कफ, दूमेह और कृमिरोगको दूर करता है.

१५२ ककोडा–इसके "कर्कोटक" आदि नाम हैं. यह करेलाके समान गुणकारी है. कुष्ठ और अरुचिको दूर करता है.

१५३ चौलाई–इसके "तंडुलिया, मेघनाद" आदि नाम हैं. ठंढी हलकी और रूखी है. पित्त, कफ, तथा रक्तको बढ़ाती है.

१५४ फोग–इसके "शृङ्गी, सूक्ष्मपुष्प" आदि नाम हैं. यह रेचन विबंधक और ठंढा है. रक्त, पित्त और कफको दूर करता है. यह मारवाड़देशमें उत्पन्न होता है.

१५५ परवल–इसके "पटोल, पांडुक" आदि नाम हैं. यह चिकना, उष्ण, पाचन और हलका है, हृदयको बल देता, अग्निको दीप्त करता, बादी रुधिरकोप, ज्वर, त्रिदोष और कृमिको दूर करता है.

१५६ गाजर–इसके "गृंजन, कटुक" आदि नाम हैं. यह तीक्ष्ण,

उष्ण, दीपन, हलकी और संग्राही है. रक्त, पित्त, बवासीर, संग्रहणी, कफ और वादीको दूर करती है.

१५७ मूली–इसके "मूलक, हस्तिदंती" आदि नाम हैं. यह उष्ण हलकी और पाचन है, रुचिको बढ़ाती, बादीको उत्पन्न करती, त्रिदोष, श्वास, कास, नेत्ररोग, कंठरोग और पीनसको नष्ट करती है.

१५८ मुंगना–इसके "शोभांजना; शिग्रु; सुर्जना; सहँजना" आदि नाम हैं, यह उष्ण और हलका है. कफ, बादीको जीतता, इसकी फली मीठी हैं, पित्तको दूर करती हैं.

१५९ लहसन–इसके "उग्रगंधा; लसुन" आदिं नाम हैं, यह चिकना, उष्ण, पाचन, रेचक और भारी है, टूटी हुई हड्डीको जोड़ता, पित्त, रुधिरको उत्पन्न करता, कफ, श्वास, कास, गुल्म, ज्वर, अरुचि, शोथ, प्रमेह, अर्श, कुष्ठ, शूल और वादीको दूर करता है.

१६० कांदा–इसके " पलांडू, दुर्गंध " आदि नाम हैं. प्रसिद्ध नाम (पियाज) यह भी लहसनके सदृश गुणकारी है, पर उतना उष्ण नहीं कफको उत्पन्न करता है.

१६१ सूरन–इसके "कंदल, सूरण, भूकंद, जमीकंद" आदि नाम हैं. यह दीपन, रूखा, कसैला, कटु, विषहरा और रुचिकारक है. खुजालको उत्पन्न करता, कफ, अर्श (बवासीर = गुदारोग) को दूर करता है.

१६२ शीतलजल–इसके " पानी, जीवन, नीर, " आदि नाम हैं. यह ठंढा है हृदयको बल देता है, पित्त, विषश्रम, दाह, अजीर्ण, परिश्रम, उल्टी मद (उन्मत्तता) मूर्च्छा और मदात्ययको दूर करता है, परंतु उदररोग; कंठरोग, नूतनज्वर, संग्रहणी, पीनस, आध्मान, हिचकी, गुल्म, विद्रधि, कास, प्रमेह, अरुचि, श्वास, पाण्डु, बादी, पार्श्वशूल और स्नेह (घृत खोपरादि चिकनी वस्तु खाके) में शीतलजल लाभकारी नहीं, बरन् अति हानिकारक है. वर्षा, तालाब, कूप, नदी, झरना और बावड़ी आदिके जलका गुण न्यारा न्यारा है. इसका विस्तीर्ण वर्णन राजनिघंटुमें देखो.

१६३ उष्णजल–जो कि, अग्निसंस्कारसे उष्ण किया जाता है यह दीपन, पाचन, हलका और उष्ण है. मूत्राशयको शुद्ध करता, पार्श्वशूल (पस-

लीकी पीडा, पीनस, आध्मान, हिचकी, बादी और कफको दूर करता है, रोगीको उष्ण जल पिलानेसे कुछ हानि नहीं. क्योंकि पानी प्राणी मात्रका जीवनमूल है, बहुधा वैद्यलोग रोगीको पानी देना वर्जित करते हैं यह पूर्ण भूल है. प्रत्येक रोगपर किसीमें ठंढा किसीमें उष्ण किसीमें औषध योजित आदि नानाप्रकारके अनुपानसे प्रतिरोगमें रोगीको जल देनाही चाहिये नहीं तो वह मोहको प्राप्त होकर प्राण त्यागदेवेगा.

१६४ दूध—"इसके दुग्ध, प्रस्रवण, क्षीर, पय" आदि नाम हैं. यह ठंढा मीठा, चिकना, रसायन, जीवन और भारी है. बल, बुद्धि, वीर्यको बढ़ाता बादी पित्तको हरता, रक्तविकार, श्वास, क्षयी, अर्श और भ्रमको दूर करता हैं. बालक, वृद्ध दुर्बल और विषयासक्त पुरुषोंके लिये तो अतिही लाभदायक है. उपरोक्त गुण साधारण दशासे वर्णन किये गये यदि तुमनो गो-भैंस, भेडी, बकरी, हथिनी, ऊंटनी, घोडी आदि पशु जाति तथा स्त्रीके दुग्धगुण पृथक् पृथक् विचारना हो तो बृहन्निघंटु देखो.

१६५ दही—इसके "दधि" आदि नाम हैं. यह उष्ण, दीपन, चिकना कसैला, ग्राही और पचनेके समय खट्टा है. पित्त, रुधिर, शोथ और कफको उत्पन्न करता, मूत्रकृच्छ्र, प्रतिश्याव (सर्दी नाक बहना) शीतांग, विषमज्वर, अतीसार, अरुचि और दुर्बलताको दूर करता है. मीठा दही बादी और पित्तको जीतता—खट्टा दही पित्त रुधिर और कफ उत्पन्न करता है. दही चार प्रकारका है १ मीठा २, खट्टामीठा ३ खट्टा और ४ अतिखट्टा इन सबोंके गुण जुदे जुदे हैं. यह दहीका सामान्य विवरण हमने लिख दिया यदि विशेष देखना हो तो बृहानिघंटु आदि ग्रंथ देखो.

१६६ मही—इसके "छाँछ, मट्ठा, तक्र" आदि नाम हैं. यह ग्राही (दस्त रोकनेवाला) कसैला, खट्टा, मीठा, दीपन, हलका शीतोष्ण (मातदिल) बलाढ्य, रूखा और तृप्तिकारक है. बादी, शोथ, विष, उल्टी, पसीना, विषमज्वर, पांडु, मेदरोग, ग्रहणी, अर्श, मूत्रग्रहण (पथरीका रोग) भगंदर, प्रमेह, गुल्म, अतिसार, शूल, प्लीहा, कफ, कृमि, श्वित्रकुष्ट और तृष्णा आदि रोगोंको (तत्तद्रोगानुकूल अनुपानोंसे) दूर करता है.

१६७ मक्खन—इसके "हैयंगवीन, नवनीत, माखन, मस्का" आदि

नाम हैं. यह हलका, ठंढा, मीठा, ग्राही, कुछ कसैला और खट्टा भी है और पुष्ट है. पित्त, वायुको हरता, अग्निको बढ़ाता नेत्रोंको ज्योति देता, क्षयी, अर्श, फोड़े और खांसीको नष्ट करता है. उक्त गुण तत्क्षणी मक्खनके हैं. यही मक्खन बहुकालपश्चात् भारी हो जाता, मेदको उत्पन्न करता, शोथको दूर करता, बालकोंके लिये तो विशेषकर पुष्टि और बल देकर अमृतके सदृश गुणदाता होता है. केवल दूधसे निकाला हुआ मक्खन अतिचिकना, ठंढा, ग्राही, मीठा और बलाढ्य होता है. नेत्रोंको अतिहित करता और रक्तपित्तको जीतता है.

१६८ घी–इसके "आज्य, हवि, घृत" आदि नाम हैं. यह रसायन, मीठा, भारी ठंढा, दीपन और चिकना है. नेत्रोंको ज्योति देता, विषको हरता, वादी, पित्त, उदावर्त, ज्वर, उन्माद, शूल, अफरा, आदिको दूर करता, कांति, पराक्रमको बढ़ाता और कफको उत्पन्न करता है.

१६९ तेल–इसके "तैल" आदि नाम हैं. यह उष्ण, भारी पुष्ट मीठा और बलवर्द्धक है. रंगको स्वच्छ करता, कफ, वायु, रक्त, पित्त, कान, योनि मस्तक और नेत्रोंकी पीडाको हरण करता है.

१७० मदिरा–इसके "मद्य, हाली, सुरा" आदि नाम हैं. यह रेचक (दस्त लानेवाली) रोचक (रुचि बढाने वाली) दीपन विदाही (दाह उपजानेवाली) तीक्ष्ण और मादक है. मल मूत्रको उत्पन्न करती कफ, वादीको दूर करती (विधिपूर्वक भोजनके साथ पीवे तो) लाभदायक (विपरीत क्रियासे पीवे तो रोगोंको उत्पन्न करती और अतिशय पीवे तो विषसदृश हानिकारक होती है.

१७१ गोमूत्र–यह शुद्ध, तीक्ष्ण, रूखा; दीपन; हलका, कटु और भेदी है, पित्तको उत्पन्न करता, हृदयको बल देता, वादी, अर्श गोला, कफ, कृमि, कुष्ट, पांडु, अफरा, विष; शूल और अरुचिको दूर करता है.

इति नूतनामृतसागरे विचारखण्डे जलादिवर्गनिरूपणं नाम षोडशस्तरंगः ॥ १६ ॥

---

१७२ मिश्री– इसके "सिता" आदि नाम हैं. यह मीठी, ठंढी, भारी और ग्रहणी है. बलको बढाती, पित्त और बादीको दूर करती है.

१७३ मधु–इसके "शहत" आदि नाम हैं. यह ठंढा हलका और

मीठा है. कुष्ठ, अर्श, कास, पित्त, रक्त, कफ, प्रमेह, प्यास, उल्टी, दाह और अतिसार आदि रोगोंको दूर करता है. यह चार प्रकारका होता है जिसमें प्रत्येकके गुण एक दूसरेसे जुदे हैं. इस विषयमें अधिक बोध चाहो तो राजनिघंटु देखो.

१७४ गुड—नयागुड, भारी स्वादिष्ट रेचक है. वात, पित्त, अग्निको बढ़ाता है. और पुरानागुड हलका पथ्य और पुष्ट है, बलको बढाता मूत्र रक्तको शुद्ध करता है.

१७५ शक्कर—इसके "शर्करा,खांड, चीनी, बूरा, " आदि नाम हैं। यह मीठी, पुष्ट और रुचिकारक है, शुद्ध होनेसे मिश्रीके समान गुण देती बलको बढ़ाती और कफको उत्पन्न करती है.

इति नूतनामृतसागरे विचारखण्डे शीतादिवर्गनिरूपणं नाम सप्तदशस्तरंगः॥ १७ ॥

१७६ चावल—इसके " तण्डुल, शालि" आदि नाम हैं. यह ठंढा और हलका है. पित्तको दूर करता, मूत्र और कफको उत्पन्न करता है. ये कई प्रकारके होते हैं पर साधारण प्रकारसे इसके उक्त गुण हैं.

१७७ गेहूं—इसके "गोधूम" आदि नाम हैं. यह मीठा, ठंढा और भारी है. वात, पित्तको दूर करता और कफ तथा वीर्यको उत्पन्न करता है.

१७८ दाल—जिन अन्नोंके समान दोदल हो जाते उन्हें "वैदला" कहते हैं, जिन अन्नोंसे दाल बनाई जाती है, वे बहुधा बादीको उत्पन्न करने वाले होते हैं. सर्वथा दाल बादीको उत्पन्न करती, कफ पित्तको दूर करती और मल मूत्रको बद्ध करती है.

१७९ मूँग—इसके "मुद्ग" आदि नाम हैं. यह ठंढा, हलका और ग्राही है. कफ पित्तको दूर करता है.

१८० उर्द—इसके "माष" आदि नाम हैं. यह उष्ण और पुष्ट है, बादीको दूर करता, पित्त कफको उत्पन्न करता और वीर्यको बढ़ाता है.

१८१ चना—इसके "चणक" आदि नाम हैं. यह ठंढाहै रक्त, पित्त कुष्ठ और कफको नष्ट करता और बादीको उत्पन्न करता है.

१८२ तिल—इसके " तैलफल" आदि नाम हैं. यह ठंढा ग्राही और भारी है बादीको दूर करता तथा कफ पित्तको उत्पन्न करता है.

१८३ जौ–इसके "यव" आदि नाम हैं. मीठा और ठंढा है. पित्त कफ और रुधिरको दूर करता है.

इति नूतनामृतसागरे विचारखण्डे तण्डुलादिवर्गनिरूपणंनामअटादशस्तरंगः॥ १८ ॥

१८४ खिचड़ी–इसके "कृशरा" आदि नाम हैं. यह भारी, पुष्ट, ग्राही है, विलम्बसे पाचन होती. कफ, पित्तको उत्पन्न करती और बादीको दूर करती है, चावल और दालके संयोगको खिचड़ी कहते हैं.

१८५ खीर–इसके "क्षीरं, क्षिप्रा" आदि नाम हैं. यह पुष्ट और भारी है. विलंबसे पाचन होती, बलको बढाती, वीर्यको उत्पन्न करती, मलको रोकती, पित्त, रक्त, प्यास, अग्नि और बादीको दूर करती है. दुग्धमें डालकर जो चावल चुराये जाते हैं सो खीर है.

१८६ घेवर–इसके "घृतपूर" आदि नाम हैं. यह भारी है, हृदयको बल देता, पित्त और बादीको दूर करता, प्राणको पोपण करता, बलको बढ़ाता और घावको भरता है.

१८७ मालपुआ–इसके "अपूप" आदि नाम हैं. यह भारी है, हृदयको बल देता. पित्त और बादीको दूर करता है.

१८८ लप्सी–इसे "लप्सिका" भी कहते हैं. यह भारी है. बादी पित्तको नष्ट करती है.

१८९ फेनी–इसके "फेनिका, पुटिनी" आदि नाम हैं, यह हलकी है. वात पित्तको दूर करती है.

१९० लड्डू–इसके "मोदक" आदि नाम हैं, यह बलकारक है, विलंबसे पचता, पित्त और बादीको दूर करता है.

१९१ जलेबी–इसके "कुण्डलिका" आदि नाम हैं. यह पुष्ट है, कांति बल देती, हृदयको प्रौढ करती, धातुको बढ़ाती और इन्द्रियोंको तृप्त करती है.

१९२ सत्तू–जिस अन्नका हो उसीके सदृश गुणकारी है, परन्तु विशेष करके यह प्यास, दाह, उलटी दूर करता है, विशेष भेद राजनिघंटुमें देखो.

१९३ घूंघरी–यह भारी रूखी है, वादीको उत्पन्न करती है, गेहूं चना आदि अन्नोंको विन पिसेही उष्णजलमें चुरालेनेसे घूंघरी बनती है.

१९४ चिउड़ा–इसके "चूरा, पोहा" आदि नामहैं, यह भारी बलकारक है, बादीको दूर करता, कफको उत्पन्न करता है, उबाले हुये धानको कूटकर बनाते हैं.

१९५ धानी–यह रूखी, रेचन; विबंधक, भारी है. कफको दूर करती है. धान, यव आदि अन्नको भुँजवा लोग भारमें भूंजकर धानी बनाते हैं.

१९६ लाही–इसके" लाज, लाई" आदि नाम हैं. यह हलकी, ठंढी बलकारक है. पित्त, कफ, उल्टी, अतिसार, दाह, रुधिर, प्रमेह और प्यासको दूर करती है.

इति नूतनामृतसागरे विचारखण्डे कृसरादिवर्गनिरूपणं नाम एकोनविंशस्त० ॥ १९ ॥

---

१९७ द्व्यार्क–(दोआंकड़ा) १ श्वेत आंकड़ा २ लाल आंकड़ा.

१९८ द्विकनेर–(दोकनेर) १ श्वेत कनेर, २ लाल कनेर.

१९९ द्विक्षार–(दोखार) १ सज्जीखार, २ जवाखार.

२०० त्रिफला–(तीन फल) १ हर्र, २ बहेरा, ३ आँवला.

२०१ त्रिकटु–(तीन कटु) १ सोंठ २ मिर्च (काली) ३ पीपल.

२०२ त्रिजात–(तीन जात) १ इलायची, २ दालचीनी, ३ तेजपात.

२०३ त्रिसुगंध–(तीन सुवास) १ इलायची, २दालचीनी,३ तेजपात.

२०४ त्र्यक्षार–(तीन क्षार) १ सज्जी, २ जवाखार, ३ सुहागा.

२०५ चतुर्जात–(चार जात) १ इलायची, २ दालचीनी, ३ तेजपात ४ नागकेशर.

२०६ चतुर्बीज–(चार दाने) १ कालीजीरी, २ मेथी, ३ अजवायन, ४ असाला (हाला)

२०७ चतुरुष्ण–(चार उष्ण) १सोंठि,२मिर्च,३पीपल, ४ पीपलामूल.

२०८ चतुराम्ल–(चार खटाई) १ अम्लवेत, २ इमली, ३ जम्भीरी, ४ नींबू.

२०९ बलाचतुष्टय–(चार बला) १ बला, २ नागबला, ३ अतिबला, ४ महाबला.

२१० लघुपंचमूल–(छोटे पांच) १ शालपर्णी, २ पृष्टपर्णी, ३ बड़ी कटियाली, ४ छोटी कटियाली, ५ गोखरू.

२११ बृहत्पंचमूल–(बड़े पांच) १ बेलकी गिरी, २ इरणीमूल, ३ पाटली मूल, ४ काश्मरीमूल, ५ स्योनागुमूल.

२१२ पंचकोल–(पांचकोल) १ पीपल, २ पीपलामूल ३ चित्रक, ४ सुंठी, ५ चव्य.

२१३ पंचक्षारवट (पांच दूधके वृक्ष) १ न्यग्रोध, २ उदुंबर ३ अश्वत्थ, ४ पारिस, ५ प्लक्ष.

२१४ पंचाम्ल–(पांच खटाई) १ अम्लवेत, २ इमली, ३ जम्भीरी, ४ नींबू, ५ बिजौरा.

२१५ पंचलौण–(पांच नमक) १ साम्हर, २ सैंधा, ३ सौंचर, ४ समुद्रीय, ५ विड.

२१६ पंचगव्य–(गौके पांच रस) १ गोमूत्र, २ गोवर, ३ गोदुग्ध, ४ गोदधि, ५ गोघृत.

२१७ पंचामृत–(पांच अमृत) १ गोदुग्ध, २ गोदधि, ३ गोघृत, ४ मधु, ५ शर्करा.

२१८ षडुष्ण–(छः उष्ण) १ पीपल, २ पीपलामूल, ३ चव्य, ४ चित्रक; ५ सोंठ, ६ मिर्च.

२१९ सप्तोपविष–(सात उपविष) १ अर्क दुग्ध, २ थूहर दुग्ध, ३ कलिहारी, ४ दोनों कनेर; ५ धतूरा, ६ कुचला, ७ वत्सनाग.

२२० अष्टवर्ग–(आठ वर्ग) १ जीवक, २ ऋषभक, ३ मेदा ४ महामेदा, ५ काकोली, ६ क्षीरकाकोली, ७ ऋद्धि, ८ वृद्धि.

२२१ क्षाराष्टक–(आठ खार) १ पलाश, २ थूहर, ३ इमली ४ सज्जी, ५ आधाझारा (अपामार्ग) ६ आंकडा, ७ तिलनाल, ८ यव, ये क्षारवस्तु हैं.

२२२ नवविष–१ वत्सनाग, २ हारिद्रक, ३ सक्तुक, ४ प्रदीपन, ५ सौराष्ट्रिक, ६ शृंगक, ७ कालकूट, ८ हलाहल, ९ ब्रह्मपुत्र.

२२३ नवरत्न–१ हीरा, २ पन्ना, ३ माणिक, ४ नीलमणि ५ पुष्पराग, ६ गोमेद, ७ वैडूर्य, ८ मोती, ९ मूंगा.

२२४ दशमूल-पंच लघुमल और पंचबृहन्मूलके योगसे दशमूलबना है.

२२५ दशाङ्गधूप–५० भाग शिलारस, ५० गूगल, ४ चंदन, ४ जटामांसी, ३ लोबान ३ राल, ३ उशीर, २ नख, १ भीमसेनीकपूर और एक

भाग कस्तूरी इन सब पदार्थोंके एकत्रको दशांग कहते हैं. इसी प्रमाणसे चाहे जितनी बनाओ.

इति नूतनामृतसागरे विचारखण्डे मिश्रकवर्गनिरूपणं नाम विंशस्तरंगः ॥ २० ॥

२२६ निद्रा—नींद लेनेसे सुख होता, श्रम दूर होता, नेत्रोंको लाभ पहुँचता है. परंतु ग्रीष्मऋतुके व्यतिरिक्त अन्य कालमें दिनको सोना वर्जित है. कारण कि दिनको सोनेसे प्यास, शूल, हिचकी, अजीर्ण और अतिसारादि रोग उत्पन्न होते, शरीर भारी होजाता और आलस्यकी वृद्धि होती है. यदि किसी कारणसे रात्रिको जागरण हुआ हो तो दिनको सोनेसे कुछ हानि नहीं, भोजनके पश्चात् सोनेसे कफ और पुष्टताकी वृद्धि होकर बादी दूर होती है.

२२७ दंतधावन—दतोंन करनेसे मुख शुद्ध होता, अरुचि, दुर्गंध, मल, कफ, पित्त, नाश होते हैं, परंतु मदातुर, कृश, थकित (दंत, तालु हस्त रोग, हिचकी, उलटी, शिरपीड़ा मूर्च्छा और मुखशोथके रोगी) इन पुरुषोंको दतोंन नहीं करना चाहिये. कुल्ले करो.

२२८ मुखप्रक्षालन—मुखको ठंढे पानीके धोनेसे रक्त, पित्त, शोष और मुखकी कीलें आदि रोग नाश होते हैं.

२२९ हस्तपादप्रक्षालन—हाथ पाँव धोनेसे नेत्रोंकी ज्योति, बल, उत्साह बढ़ता है और श्रमको नाश करता है.

२३० गण्डूष—कुल्ले करनेसे मुखशोथ, दन्तरोग, स्वरघात, ओष्ठरोग जिह्वाका कडापन और रक्तवात आदि रोग नष्ट होते हैं

२३१ अभ्यंग—उबटन करनसे बल बढ़ता, सुख होता, वर्ण स्वच्छ होता, पुष्टता बढ़ती और धातु सम होकर वादीके रोग दूर होते हैं.

२३२ मर्दन—तैल आदि मर्दनेसे पुष्टता, बल बढ़ता, श्रम, वादी दूर होती और निद्रा आती है.

२३३ क्षौर—बाल बनवानेसे नख, केशादि योग्य होते, शीश और नेत्र रोग दूर होते, सुन्दरता, पवित्रता तथा रुचिकी विशेष वृद्धि होती है.

२३४ शिरोभ्यंग—मस्तकमें तेल डालनेसे केश स्वच्छ शोभित होतेहैं नेत्रोंको बल पहुँचता कर्णरोग हनुग्रहको दूर करता, और धातुको पुष्ट करता है. ज्वर, विरेचन और अजीर्णमें शिरोभ्यंग मत करो.

२३५ स्नान–करनेसे वात, श्रम, मैल, खुजाल, अपवित्रता नष्ट होती, बल, रुचि, प्रफुल्लितता बढ़ती है. परन्तु अतिसार, ज्वर, कर्णशूल, वादी, अध्मान, अरोचक, अजीर्ण और भोजनके पश्चात् कालमें स्नानका निषेध है. शिरपर उष्ण जल पड़नेसे नेत्रोंमें उष्णता होती है.

२३६ चन्दन तिलक धारण–से प्यास, मूर्च्छा, दुर्गंध, श्रम, वादी दूर होकर शोभा, तेज, प्रीति उत्साह और बलकी वृद्धि होती है.

२३७ पुष्पधारण–से कान्ति, काम, उत्साह, शोभाकी वृद्धि होती और दुर्गंधिजन्यरोग दूर होते हैं. इसीप्रकार उत्तम वस्त्र, रत्नाभूषण धारण जानो.

२३८ अंजन–लगानेसे नेत्र निर्मल निरोगी रहते, ज्योति व शोभा बढ़ती है, परंतु रात्रिमें जागा हुआ थकित ज्वरातुरको तथा उल्टी होना, भोजन करना और शिर धोनेके पश्चात् अंजन, काजल और सुर्मा आदि लगाना वर्जित है.

२३९ उष्णीषधारण–पगड़ी, दुपट्टा, टोपी आदि धारणसे शीश, केश स्वच्छ रहते वादी और धूपसे रक्षण होता है.

२४० पादत्राण–पनहीं पहिननेसे पाँव कंटकादिसे रक्षित रहते,सुख होता, नेत्रोंको गुण होता और आयुष्यकी वृद्धि होती है.

२४१ छत्र–छाता लगानेसे बल बढ़ता, नेत्रोंको सुख होता वर्षा तथा ग्रीष्मका त्रास नाश होता है.

२४२ व्यजन–पंखेकी हवा लेनेसे उत्साह, बल और सुख प्राप्त होता उष्णता और मच्छरादि जीवोंके क्लेशसे रक्षण होता है.

२४३ यष्टि–लकडी, छड़ी, लाठी, आदि धारणसे उत्साह स्थिरता ढिठाई और बल ढ़ता.सर्प श्वान आदि दुष्ट जीवोंका भय निवृत्त होता वृद्ध निर्बल और प्रज्ञाचक्षु (नेत्रहीन=अंधा) लोगोंके लिये तो मानो दूसरा पाँवही है.

२४४ व्यायाम–कसरत अनेक प्रकारकी है जिसमें "१ दंड, २ बैठक ३ कसवल" ये तीन मुख्य हैं, व्यायाम करनेसे शरीरमें आरोग्यता, पाचन, बल, मांसमें दृढ़ता, पुष्टता, तीक्ष्णता, उत्साह, तरुणाई और साहस प्राप्त होता है, व्यायामी पुरुषोंको दुग्ध, घृत, बादाम आदि चिकने पदार्थ

भक्षणार्थ मिलें तो अतिलाभ हो, वसंत, वर्षा और शीतमें अधिक तथा इनसे व्यतिरिक्त ऋतुओंमें थोडा व्यायाम करना चाहिये, अधिक व्यायामसे कास, ज्वर और उलटी ये रोग होते हैं, शरीर थक जानेपर कंठ, ग्रीवा ललाट आदिमें पसीना आनेपर व्यायामसे निवृत्त हो जाना चाहिये. भोजन, मैथुन और मार्गगमन करनेपर तत्क्षण व्यायाम कदापि मत करो. अतिकृश, कास, श्वास, क्षयी, रक्तपित्त और शोष रोगयुक्त पुरुषको व्यायाम करना अतिही वर्जित है, अंग्रेजी व्यायामसे पहिले तो चापल्यता विशेष रहती है, परन्तु वृद्धावस्थामें हड्डियोंके जोड़ जोड़ ढीले पड जाते हैं.

२४५ बलनाशक--१ दुर्गंधित मांस, २ वृद्धा (३५ वर्षसे अधिक वयवाली) स्त्री, ३ बालार्क, ४ नवीन दधि, ५ प्रभात कालिक मैथुन ६ निशि दिवस निद्रा अथवा भूखे सोना, ये छः पदार्थ बल तथा प्राणनाशक हैं.

२४६ बलकारक—१ नवीन मांस, २ नवीन (तत्काल बनाया हुआ उष्ण) अन्न, ३ बाला (१६ से २५, वा अट्ठाईस वर्षतककी वयवाली) स्त्री ४ दुग्धपान, ५ घृतयुक्त उत्तम पदार्थ भक्षण, ६ उष्ण जलस्नान ये छः पदार्थ शीघ्रही शरीरको बलदायक तथा रक्षण करता होते हैं.

२४७ तुलना—चावलसे आठ गुणा अधिक बलदायक आटा, आटेसे अष्टगुणा अधिक दूध, दूधसे अष्टगुण बलदाता मांस, मांससे अष्टगुण घृत और घृतसे अष्टगुण अधिक बलदाता तेल है. उक्त सर्व पदार्थ तो भक्षण करनेसे उपरोक्त लिखित गुणदाता होते हैं परन्तु तेलका उक्त गुण भक्षणमें नहीं किंतु मर्दनमें है अधिक तेल खाना तो हानिकारक है.

सूचना--हम अपने लघुनिघंटमें मुख्य मुख्य औषधादिके "नाम; गुण और उपयोग" सूक्ष्मतापूर्वक दर्शा चुके हैं, इस विषयका पूर्ण विस्तार देखना चाहो तो राजनिघंटु, सुश्रुत आदि बृहद्ग्रंथ देखो और गुरुशिक्षासे प्राप्त करो. स्थानाभाव, अवकाशन्यूनता तथा ग्रंथ दीर्घताके भयसे विशेष लिखना योग्य न समझा गया.

इति नूतनामृतसागरे विचारखण्डे उपयोगिवर्गनिरूपणं नाम एकविंशस्तरंगः ॥ २१ ॥

ऋतुचर्या, दिनचर्या, रात्रिचर्या.

ऋतुचर्या दिनचर्या रात्रिचर्या तथैवच ॥
द्वाविंशप्रमिते भङ्गे कथ्यते हि मया क्रमात् ॥ १ ॥

भाषार्थ–अब हम इस २२ वें तरंगमें ऋतुचर्या दिनचर्या और रात्रिचर्या यथा क्रमानुसार वर्णन करते हैं.

षट्ऋतुचर्याविचार–वर्षके बारह महीनोंमें १ मार्गशीर्ष, पौष, हेमन्तऋतु २ माघ, फाल्गुन शिशिरऋतु ३ चैत्र, वैशाख वसंतऋतु, ४ ज्येष्ट, आषाढ ग्रीष्मऋतु, ५ श्रावण, भाद्रपद वर्षाऋतु और ६ आश्विन, कार्तिक शरद्ऋतु ये छः ऋतुएँ रहते हैं.

षट्ऋतु, त्रिदोषसम्बन्ध–१ ग्रीष्मऋतुमें वातका संचय, वर्षामें कोप और शरद ऋतुमें शांति रहती है, २ वर्षामें पित्तका संचय; शरद्में कोप और हिमऋतुमें शांति रहती है. इसीप्रकार शिशिरमें कफका संचय वसंतमें कोप और ग्रीष्मऋतुमें शांति रहती है. यह वात पित्त, कफका संचय कोप और शांति आहार विहारसे होते हैं. इसलिये इन दोषोंके प्रकोपकर्त्ता आहार विहारादिकी ओर ध्यान रखना चाहिये. सो नीचे लिखे अनुसार जानो.

१ वातप्रकोप–कटु, तीक्ष्ण, कसैली रूखी, हलकी थोडी वस्तु और बासी (रात्रिका रहाहुआ) अन्नभक्षण संध्याकालिक मैथुन, शोक, भय, परिश्रम, मेघाच्छाद, प्रहार, अन्न, जल, परित्याग, कामदेव जागरण अजीर्ण १४ वेगोंके प्रतिरोध और जलमें तैरनेसे वायु कुपित होता है और उसके यत्नोंसे शांत होता है.

२ पित्तप्रकोप–तिल्ली, कांजी, मद्य, दही, मछली, कटु, तीक्ष्ण, नोन, खटाईके भक्षण शरद्ऋतुमें, धूपमें भ्रमण, क्रोध मैथुन, विदाही पदार्थ भक्षण, उपवास, तृषा, क्षुधावरोध और अजीर्णके करनेसे मध्याह्न तथा अर्द्धरात्रिमें शरद्ऋतुके समय पित्त कुपित होता है और उसके यत्नोंसे शान्त होता है.

कफप्रकोप–दही, दूध, नवीनान्न, शीतलजल, खटाई, नोन, घी, तिल भारी (मैदा आदिकी गरिष्ठ) वस्तु मछली और मीठी वस्तुके भक्षण दिवस निद्रा अग्निमांद्य और प्रातःकालही भोजन करने आदि कारणोंसे

कफ कोपको प्राप्त होता है और उसके यत्नोंसे शमन होता है. इसलिये इन आहारविहारोंपर सबको सदैव पूर्ण ध्यान रखना चाहिये.

१ हिमऋतु आहारविहार—गौ तथा भैंसका नवीन घी, गुड़ सोंठयुक्त हर्रे, मीठा दही, तिल, गेहूं, उर्द और मिश्री आदि मिष्ट पदार्थ भक्षण करना. नमक मिलाकर तेल मर्दन करना, निर्वात स्थानमें रहना और नवीन उष्ण ऊर्णा वस्त्र पहिरना चाहिये.

२ शिशिरऋतु आहारविहार—पीप्पलीयुक्त हर्रे, कालीमिरच, अदरख, नवीन घी, सैंधानोन, उत्तम गुड़, दही खाना और पूर्वोक्त हिमऋतु लिखित अहारविहार सेवन करना चाहिये.

३ वसंतऋतु आहारविहार—इस ऋतुमें कुपित कफ रोगोंको उत्पन्न कर अग्निको मंद कर देता है, इसलिये इस ऋतुमें मधुयुक्त हर्रे, भ्रमण, चित्रक चूर्ण तथा कफहारी पदार्थ सेवन करना चाहिये.

४ ग्रीष्मऋतु आहारविहार—ग्रीष्मऋतुमें सूर्य अपने तेजसे प्राणीमात्रका बल हर लेता है. इसलिये खश आदिके पर्दे लगेहुए शीतल स्थानमें तथा वृक्षोंकी सघन छायामें फुहारे आदिके समीप निवास करना. गुड संयुक्त हर्रे, मधुर भोजन, दाख, क्षीर, श्रीखंड (सिखरण) सत्तू मिश्री, अनार आदि का रस (शर्बत) चिकने और शीतल पदार्थोंका भक्षण, जलक्रीडा, खशके पंखोंकी पवन, चंदन, कपूरादिका लेपन, दिवस निद्रा और सुगंधित पुष्पोंका सेवन करना चाहिये. परन्तु इस ऋतुमें कटु, तीक्ष्ण, नोन, खटाई विदाही पदार्थ मद्य श्रम और धूपमें घूमना ये हानिकारक हैं.

५ वर्षाऋतु आहार विहार—इस ऋतुमें वायुका कोप होता है, इसलिये सैंधानोनयुक्त हर्रे, चिकनी वस्तु, नोन; खटाई, चावल, यव, सोंठ, मिरच पीपल, पीपलामूल, चित्रक और सैंधानोनयुक्त दहीका मट्ठा भक्षण, उष्ण जल कूप जल, श्वेतवस्त्र, भ्रमण, हलका भोजन और विरेचन (जुलाब) करना चाहिये. परंतु दिनको सोना, श्रम, धूप तालाबका जल, दही, वनमें निवास और विशेष मैथुन ये व्यवहार हानिकारक हैं.

६ शरद्‌ऋतु आहारविहार—शरद्‌ऋतुमें पित्त कुपित होता है इसलिये मिश्रीयुक्त हर्रे, मिश्री, पष्टिचावल, मूंग सरोवरका जल और औटे हुए दूधका सेवन करना चाहिये. परन्तु तीक्ष्ण वस्तु, नोन खटाई, आसव

(मद्य) भक्षण धूपमें घूमना, पूर्वदिशाकी पवन लेना और दिनको सोना ये व्यवहार हानिकारक हैं.

विशेषतः—उक्त ऋतुचर्याके नियमानुसार व्यवहार रखनेसे ऋतुजन्य व्याधिका भय नहीं रहता पुरुषोंको चाहिये कि, इन नियमोंसे ऋतु पर्यन्त निर्वाह न करसकें तो प्रत्येक ऋतुके अन्तिम ७ दिनपर्यंत तो अवश्यही नियमको निर्वाहें और आठवें दिनसे अग्रिम ऋतुचर्याके आहार विहारोंकी ओर ध्यान देकर वर्त्ताव करैं तो सदैव रोगरहित रहकर ऋतुजन्य व्याधियोंके चक्रसे विमुक्त होवेंगे.

दिनचर्या विचार—इसमें दिनभरके व्यवहारकी विधि लिखैंगे, तुमको चाहिये कि ४ घड़ी रात्रि शेष रहे (४॥ बजे प्रातःकाल) निद्रा त्यागतेही परब्रह्म परमात्माका ध्यान करने पश्चात् शय्यासे उठकर मल, मूत्र, त्याग करो. मल मूत्र त्यागकेलिये रात्रिको दक्षिण और दिनको उत्तरकी ओर मुख करके बैठना उत्तम होगा. तदनंतर मलद्वार और लिङ्गेन्द्रियको जलसे शुद्ध कर हाथ पाँवको मृत्तिका लगाकर शुद्ध करो और जलके कुल्ले करके मोरछली आदि सीधे वृक्षकी १२ अंगुल लम्बी तथा हाथकी कनिष्ठ अंगुली समान मोटी दतोंनके अग्रभागकी कूँचीसे दांत और उसकी चीरन(फांका) से जिह्वाको निर्मल करो और शीतल जलके १२ कुल्ले करके शीतल जलसेही मुख धोओ तदनंतर सैंधानोन, कुछ सोंट और सिके जीरेके महीन चूर्णको दांतोंमें घिसकर मुँह धोडालो तो ऐसे नियमसे मुखरोग तथा मुखदुर्गन्धि कदापि न होगी. फिर शरीरमें नारायणादि तेलका मर्दन करके उसकी चिकनाई मिटानेके लिये बेसन (चनेके आटे) आदिके उबटनसे शरीरको स्वच्छ करलो और निजशक्त्यनुसार व्यायाम (कुस्ती, दंड, बैठक, मलखंब आदि कसरत) करके इस श्रम हरणकेलिये कमरके नीचे तो अधिक उष्ण और कमरके ऊपर गुनगुने (कुछ उष्ण) जलसे शरीरको धोओ और भलीभाँति स्नान करके शरीर मात्रको निर्मल करलो. तदनंतर संध्योपासन, अग्निहोत्र, गायत्री मंत्रादिक जाप करके देव, गौ, ब्राह्मण, गुरु, आचार्य, माता, पिता और अतिथि आदिका नमन पूजन क्रमशः करो और स्वशक्त्यनुसार अन्न, वस्त्र, सुवर्ण ग्रंथादिकका दान उत्तम विद्वान् ब्राह्मणको श्रद्धा भक्तिसमेत देकर मध्याह्न समय बलि वैश्वदेव (अग्निसे बनेहुए पक्वान्नकी आहुति) करो. यदि उस समय

भाग्यवशात् कोई अभ्यागत आनपहुँचे तो उसे सादर भोजन कराके कुटुम्बसहित आप भोजन करो. रसोईका स्थान एकांतमें प्रकाशित और चहुँ ओरसे मंद मंद स्वच्छ पवन प्रवाहित तथा भोजनके पात्रादि भी सर्व सुन्दर और स्वच्छ रक्खो. भोजन करनेके समय माता, पिता, वैद्य, मित्र और पाककर्त्ताके व्यतिरिक्त किसी अन्यको समीप न रहनेदो क्योंकि भोजनपर ऐसे कुटुम्बजिन तथा मोर, चकोर वानर और मुर्गोंकी दृष्टिके व्यतिरिक्त अन्यका दृष्टिपात योग्य नहीं, उससे हानि होती है.

भोजन करनेके समय प्रथम नोनयुक्त अदरखके दो तीन टुकडे खाकर तदनंतर मधुर, चिकना, हितकारी पदार्थ—मूँग, चावल, घृतयुक्त गेहूंकी रोटी उत्तम शाकपत्रादिके साथ धैर्यतापूर्वक खाओ और अन्तको रुचिपूर्वक मिश्रीयुक्त दूध पीकर नियमानुसार जल पिओ क्योंकि भोजनके आदिमें जल पीनेसे मन्दाग्नि तथा भोजनके अंतमें अचानक जल पीनेसे वह जल विषसदृश होता है. इसलिये भोजनके मध्य मध्यमें थोड़ा थोड़ा पानी धीरे धीरे पीना चाहिये, जिससे अन्न पाचन होकर अजीर्ण और विकारकी निवृत्ति होजावे. जल अजीर्ण दशामें पीनेसे अन्न पचता, अन्न पचनेपर जल पीनेसे शरीरमें बल बढ़ता और रात्रिके अंतमें जल पीनेसे सर्व विकार दूर होते हैं. इसलिये भोजनके दो घड़ी पश्चात् ठंढा जल पुनः पीना चाहिये. इस प्रकारसे भोजन कर हाथ मुँह धोकर संतुष्ट होओ.

भोजनके पश्चात् १ अगस्त्य, २ कुंभकर्ण, ३ शनैश्चर, ४ बड़वानल और ५ भीमसेनका स्मरण करनेसे उत्साह बढकर भक्षितान्न पचकर शरीर हलका होता है. क्योंकि ये ऐसे बलवान् प्रतापी और दीर्घाहारी थे कि जो आहार करते सो शीघ्र पचजाते थे इसीप्रकार तुम्हारा अन्न भी पाचन करेंगे.

तदनंतर सुन्दर ऋतु योग्य वस्त्र, सुगंधि माला पहिनकर ताम्बूल खाओ और शीतल व्यजनसे पवन लेकर शीतल छायामें इधर उधर टहलो या सुन्दर शय्यापर कुछ काल सीधे चित्त या बायें करवटपर लेटकर निद्रालो. क्योंकि चित्त (पीठकेभर) सोनेसे बल और बायें करवटपर सोनेसे आयु बढती है या १०० पैंड़ भूमि चलो, क्योंकि

भोजन करके किसी कार्यवश बैठे रहनेसे शरीर भारी होता है. सीधी खाटपरही लेटे रहनेसे अन्न नहीं पचता और दौड़नेवालेके साथ तो मानो मृत्युही दौड़ती है (अर्थात् काल आताहै) इसलिये भोजनके अंतमें उपरोक्त नियमोंपर ध्यान देकर गौकी छाँछ तथा शिखरण आदिका सेवन करो और संध्यासमय १ भोजन, २ अध्ययन, ३ मैथुन और ४ निद्रा ये चार कार्य मत करो, क्योंकि संध्याके भोजनमें रोग, मैथुनसे भयंकर सन्तान, अध्ययनसे आयुःक्षय और निद्रासे दरिद्रता प्राप्त होती है. किंतु संध्यासमय "ईश्वराराधन" यह सर्वोत्तम कार्य सबको करना योग्य है.

रात्रिचर्याविचार—इसमें रात्रिके आहार विहारादिका वर्णन करेंगे. तुमको चाहिये कि अपने सायंकालीन सर्व कृत्योंसे निपटनेपर रात्रिके प्रथम प्रहरमें (ऊर्ध्वकथित नियमानुसार) भोजन करके सुन्दरस्थानमें शय्यापर शयन करो. ग्रीष्मऋतुमें बाहर चांदनीमें सोना सुखदाई होता है क्योंकि चांदनी कामवर्धिनी और दाहहारिणी होती है. पश्चात् स्वशक्त्यनुसार सुन्दर रूपवती नवयौवना स्त्रीसे सम्भोग करो. हम भोग विधान भी लिखते हैं.

संभोगके कुछ काल पूर्व और पश्चात्[१] गौ तथा भैंसका औटाया हुआ मिश्रीयुक्त दूध रुचिपूर्वक पीकर मैथुनको तत्पर होओ, क्योंकि दुग्ध तत्क्षण बलदाता तथा बलपूरवर्धक है.

हम मैथुनविधान भी लिखते हैं—हिम तथा शिशिरऋतुमें अपनी शक्तिपूर्वक नित्यप्रति वारम्वार स्त्रीसंग करनेसे भी हर्ष बढ़कर रोग तथा बलकी हानि नहीं होती परंतु वसन्त और शिशिरऋतुमें तीसरे दिन शक्त्यनुसार मैथुन करना चाहिये क्योंकि अन्यथा करनेसे शरीर रोगग्रस्त होकर बलक्षय हो जावेगा. वर्षा तथा ग्रीष्मऋतुमें पन्द्रहवें दिन शक्त्यनुसार स्त्री संग करो नहीं तो बलरहित होकर रोग सहित हो जाओगे. शीत ऋतुमें रात्रि, ग्रीष्ममें दिवस और वर्षाऋतुमें रात्रि या दिनको मेघगर्जन के समय स्त्री संग करो तो कदापि रोगग्रासित न होओगे.

---

१ "सद्यो बलहरा नारी सद्यो बलकरं पयः। स्त्रियं गच्छेत्पयः पीत्वा भुक्त्वा तां च पुनः पिबेत्" ॥ इत्युक्तं ग्रंथान्तरे।

और भी सुनो– १ रजस्वला, २ रोगयुक्ता, ३ वृद्धा, ४ जिसे कामवेग न जगता हो, ५ मलीनतायुक्त रहनेवाली, ६ गर्भिणी; (सात मासके उपरांत गर्भवाली) और ७ उपदंश रोगग्रस्ता, इन सात दशाओंमेंकी स्त्रीसे मैथुन मतकरो नहीं तो रोगग्रस्त हो जाओगे.

तथा १ भयातुर, २ अधैर्यवान्, ३ क्षुधित, ४ रोगी, ५ तृषित, ६ बालक, ७ वृद्ध और ८ मलमूत्रके वेगयुक्त दशामें मैथुन मत करो. बहुत मैथुन मत करो नहीं तो तुमको १ शूल, २ खांसी, ३ विषमज्वर ४ क्षीणता, ५ क्षयी और ६ वातज पक्षाघातादि रोग उत्पन्न होजावेंगे.

मैथुनके पश्चात् स्नान करके मिश्रीयुक्त उष्णदुग्ध, मिष्टरस और आसवपिओ और पंखेसे मंद मंद पवन लेकर शयन करो. दिनको बहुत सोने और रात्रिको अधिक जागरणका प्रसंग मत लाओ. ५ घड़ी रात्रि अवशिष्ट रहे (४ बजे प्रातःकाल) ८ अंजुली (चुल्लू) शीतल, मिष्टजल पान करो तो सर्व रोग दूर होकर पूर्णायुको प्राप्त होओगे. यह सर्व विधि भावप्रकाश और शार्ङ्गधरसे तुमको सुनाई है इसका विचार रखकर चलोगे तो सुखपूर्वक आयुष्य व्यतीत करके निरोगीही बने रहोगे.

इति नूतनामृतसागरे विचारखण्डे ऋतुचर्या दिनचर्या रात्रिचर्या निरूपणं नाम द्वाविंशतितमस्तरंगः ॥ २२ ॥

स्नेह, वमन, विरेचन, हर्रसेवन, बस्तिकर्म, धूम्रपान, रक्तमोचन ।

स्नेहादीनां विचारश्च मनुजानां हिताय च ।
त्रयोविंशमिते भङ्गे लिख्यते हि यथा क्रमात् ॥ १ ॥

भाषार्थ–अब हम इस २३ वें तरंगमें स्नेह, वमन, विरेचन, हर्रसेवन, बास्तिकर्म धूम्रपान और रक्तमोचन यथाक्रमसे वर्णन करते हैं.

स्नेहविचार–१ घृत, २ तैल, ३ वसा, (चर्बी) और ४ मज्जा ये चारों स्नेह (चिकनाई) पौष्टिक होते हैं.

स्वेदनविचार–१ ताप, २ उष्ण, ३ उपनाह और ४ द्रवस्वेद ये चारों स्वेद (पसीना) उत्पन्न करनेवाले हैं.

---

१ सवितुस्समुदयकाले प्रसृतीः सलिलस्यापिवेदष्टौ। रोगजरापरिमुक्तो जीवेद्वर्षाञ्शतसाग्रम्॥

१ तापस्वेद–बालू (रेत) नोन, वस्त्र, हाथ, ढक्कन और अँगीठीकी उष्णतासे सेककर पसीना उत्पन्न करना, इसे तापस्वेद कहते हैं.

२ उष्णस्वेद–लोहा अथवा ईंट आदिको तपाकर उसके सेकसे पसीना उत्पन्न कियाजावे उसे उष्णस्वेद कहते हैं. तापस्वेद और उष्णस्वेद इन दोनोंके सेकसे कफजन्य विकार दूर होते हैं.

३ उपनाहस्वेद–ताप और उष्ण दोनोंके योगसे पसीना उत्पन्न किया जावे उसे उपनाह स्वेद कहते हैं.

४ द्रवस्वेद–शरीरको वस्त्रसे ढांककर खटाई या वातनाशक औषधोंके जलसे सिंचनकर पसीना उत्पन्न कियाजावे उसे द्रवस्वेद कहते हैं. ये चारों स्वेद वातरोगोंकोभी दूर करनेवाले हैं.

महाशाल्वस्वेद–कुल्थी, उर्द, गेहूँ, अलसी, तिल, सरसों, सौंफ, देवदारु, सम्भालु, जीरा, अरंडबीजी, अरंडमूल, रास्ना, सोमाञ्जन मूल इन सबको नोनयुक्त कांजी या खटाईसे महीन पीसकर उष्ण करलो और शरीरके वातग्रस्त अवयवपर सहता २ लेप करो तो सर्व वातरोग दूर होवेंगे.

वमनविचार–भक्षित, अन्न तथा शरीरके मलको मुखद्वारा (उल्टी करके) निकाल देनेको वमन कहतेहैं. शरद्, वसंत और वर्षाऋतुमें मनुष्य मात्रको वमन लेना योग्य है. क्योंकि इससे कफरोग, हृद्रोग, विषदोष मंदाग्नि, श्लीपद, कुष्ठ, विसर्प, प्रमेह अजीर्ण, भ्रम, कास श्वास, पीनस, मृगी, उन्माद, अतिसार तथा नाक, तालू, ओष्ठ, कानका पकाव, जिह्वारोग, पित्त रोग, कफरोग, मेदोवृद्धि, शिरोग्रह = पार्श्वशूल, अरुचि और तात्कालिक ज्वर, ये सर्व रोग नाश होवेंगे.

वमनवर्जन–तिमिर (रतौंधी) गल्म, उदररोग, निर्बलता, प्रहार, मेदोरोग, स्थूलरोग, उदावर्त्त, वातरोग, इन रोगोंसे, ग्रसित दुर्बल, वृद्ध, क्षुधित मनुष्य और गर्भिणी स्त्रीको वमन न देना चाहिये.

वमनक्रिया १–पतली पेज (भेदडी, राबडी) में दूध या छाँछ या दही मिलाकर भरपेट खिला दो और ऊपरसे सैंधानोन या मधु या वच खिलाकर उष्ण जल पिल के गलेमें अंगुली चलाओ तो वमन हो. तथा २–कुटकी, मैनफल, फिटकरी, तमाखू, नीम या किसी अन्य तीक्ष्ण वस्तुका

चूर्ण उष्ण जलके साथ पिलाओ तो वमन होगा. वमन करानेके पश्चात् शुद्ध जलसे कुल्ले कराके जिह्वापर जीरा आदि लगादो और बिजौरा (तुरंज) आदि उत्तम वस्तु खिलाकर सुगंधितद्रव्य (अतर) सुँघाना चाहिये.

विरेचनविचार–प्रथम विधिपूर्वक वमन कराके कफरोग पकनेतक पाचक औषधि दो तदनंतर शरद या वसंतऋतुमें विरेचन दो तो जीर्णज्वर, मलसंग्रह, वातरक्त, भगंदर, अर्श, पांडु, उदररोग, गुल्म, हृद्रोग, योनिरोग, अरुचि, उपदंश, प्रमह, व्रण, विषूचिका, नेत्ररोग, कृमि, शूल, कुष्ठ, कर्णरोग, नाशिकारोग, शिरोग्रह, शोथ और मत्राघात ये सब रोग दूर होवेंगे. यदि किसी रोगकी निवृत्ति विरेचनसेही होनी सम्भव हो तो अनियमित कालपर भी विरेचन देसक्ते हैं.

विरेचनवर्जन–बालक, वृद्ध, क्षीण, भयातुर, श्रमयुक्त, नवीन ज्वरयुक्त, तृषित, स्थूल, प्रहारयुक्त, मन्दाग्नि, मेदरोग, बालक तथा चिकने या रूखे शरीरवाले मनुष्य तथा गर्भिणी और प्रसूता स्त्रीको विरेचन मतदो.

विशेषतः–वात प्रकृतिवालेको तीक्ष्ण, पित्तवालेको कोमल और कफ प्रकृतिवालेको मध्यम विरचन देना चाहिये.

विरेचकपदार्थ–दाख, दूध, हर्रै आदि कोमल, निसोत, कुटकी, किरमाला आदि मध्यम और थूहरकादूध, चोख, दात्यूणी, जमालगोटा और इच्छाभेदी रस ये तीक्ष्ण पदार्थ हैं.

विरेचनक्रिया–विरेचन देनेके ७ सात दिन पहिलेसे २ टंक सोनामक्खी १ टंक जीरा, २ टंक सौंफ, २ टंक दाख, २ टंक गुलाबपुष्प और १० टकेभर शक्करको ऽ॥। तीन पाव पानीमें औटाकर ऽ। पावभर रहजानेपर छानके ४ दिन पिलाओ तो मल पचकर शुद्ध रेचन होता रहैगा. इसपर घृतयुक्त चावलोंकी खिचड़ीको छोड़ और कुछ मत खिलाओ, तदनंतर पांचवें दिन १० टंक सोनामक्खी, १० टंक निसोत, १० टंक गुलकंद, २ टंक जीरा, ७ टंक सौंफ, १० टंक शक्कर इन सबको जलमें औटाकर दोचार दिनतक पिलाओ तो विरेचन होगा. जो ३० विरेचन हों तो उत्तम २० हों तो मध्यम और १० हों तो हीन विरेचन जानो.

---

१ इसे मुंजिस कहते हैं।

षड्ऋतुविरेचन–१ वसंतमें सोनामक्खी, निसोत, गुलाबपुष्प सौंफ और जीरेका विरेचन शक्करके साथ दो. २ ग्रीष्ममें मिश्रीके साथ निसोतका विरेचन दो ३ वर्षामें मधुके साथ निसोत, पिप्पली, द्राक्ष और सोंठका विरेचन दो. ४ शरद्में मिश्रीके साथ निसोत, धमासा, नागरमोथा, द्राक्ष नेत्रवाला, मुलहठी. चंदन और सोनामक्खीका विरेचन दो ५ हेमन्तमें उष्ण जलके साथ, निसोत, चित्रक, पाठ, चोख, वच और सोनामक्खीका विरेचन दो और ६ शिशिरऋतुमें मधुके साथ, निसोत, पिप्पली, सोंठ सैंधानोन और सोनामक्खीका विरेचन देना चाहिये.

विरेचनार्थ अभयादिमोदक–हरेंकी छाल, मिर्चे, सोंठ, वायविडंग, आँवला, पिप्पली, पिप्पलामूल, तज, पत्रज, नागरमोथा ये सब समान इन सबसे त्रिगुणी दात्यूणी, इन सबसे अष्टगुणी निसोत और इन सबसे छःगुणी मिश्री इन सबको महीन पीसकर मधुके साथ २ टंक प्रमाणकी गोलियां बनालो और १ गोली प्रातःकाल शीतल जलके साथ दो तो उष्णजल न पीनेतक विरेचन होतेही रहेंगे. जो इससे विशेष विरेचन हो जावे तो विषमज्वर, मन्दाग्नि, पांडु, कास, भगंदर, प्रमेह, राजयक्ष्मा, अर्श, कुष्ठ, नेत्रविकार, गंडमाला, उदररोग, वातरोग, आध्मान, मूत्रकृच्छ्र, अश्मरी तथा जंघा और कटिकी पीडा ये सर्व विकार दूर होकर तारुण्यता प्राप्त होवेगी.

विशेषतः–विरेचन (जुलाब) देनेपर रोगीके नेत्र शीतल जलसे धुलाओ. सुगंधि सुँघाओ पान खिलाओ और निर्वात स्थानमें रक्खो परन्तु स्नान और पानीके लिये उष्ण जलकाही उपयोग करो. शीतल जल मत दो, नहीं तो रोगीको नाभि–कुक्षिमें शूल, मलावरोध, वायुसरणका अभाव, पित्तरोग, शरीरमें भारीपन, दाह, अरुचि, आध्मान चक्र और वमन ये विकार होवेंगे. यदि इनमेंसे कोई विकार उत्पन्न भी होता दृष्टि पड़े तो पाचन देकर शुद्ध करलो तो सर्व रोग दूर होकर क्षुधा बढ़ेगी और शरीर हलका हो जावेगा.

दुष्टविरेचनशमन–यदि प्रमाणितसे विशेष विरेचन हो तो मूर्च्छा, गुद-

१ इस अभयादि मोदकमें औषधोंके संयोगका प्रमाण हमने अमृतसागरसेही लिखा है, इसका यथार्थ निश्चय शार्ङ्गधरसे करलो।

भ्रंश (काँच निकलना) शूल और अतिसार आदिरोग उत्पन्न होते हैं इसलिये विशेष विरेचन हो तो शीघ्र शीतल जलसे स्नान कराके चावल मिश्री, मधु, शिखरण, दही, षष्टितण्डुल, मसूर और मिश्रीयुक्त बकरीके दूधका सेवन कराओ तो विरेचन स्तंभित होजावेगा.

शुद्धविरेचन लाभ--यदि विरेचन यथार्थरूपसे हो जावे तो मन प्रसन्न, वायुसरण, बुद्धिनिर्मल, तथा, क्षुधा और बलवर्द्धन होगा.

षड्ऋतु हर्रेसेवनविधि--१ ग्रीष्मऋतुमें १ हर्रे समान गुडके साथ. २ वर्षामें २ हर्रे सैंधानोनके साथ. ३ शरदमें ३ हर्रे मिश्रीके साथ. ४ हिममें ४ हर्रे सोंठके साथ. ५ शिशिरमें ५ हर्रे पिप्पलीके साथ. और ६ वसंतऋतुमें ६ हर्रे प्रतिदिन मधुके साथ सेवन कराते रहो तो ऋतुजन्य विकार न होकर समस्त रोग नाश होवेंगे.

वस्तिकर्मविचार--जिस रोगोंके वातप्रकोपसे मलमूत्रका रुकाव होगया हो तो उसकी इंद्रिय या गुदा में वस्तिकर्म करना चाहिये. यह पिचकारी स्वर्ण या जस्ता आदि धातुओंकी नली और बकरेके अंडकोशकी थैलीके संयोगसे शुंडाकार बनाई जाती है. जो १ वर्षसे ६ वर्षकी अवस्थातक ६ अंगुल १२ वर्ष पर्यंत ८ अंगुल और १२ वर्ष पश्चात् १२ अंगुल लंबी रखनी चाहिये. यदि उक्त नियमसे न्यूनाधिक करना हो तो वैद्य अपनी बुद्धिसे विचार करले.

बस्तिक्रिया--जिस रोगीको वस्तिकर्म करना हो उसे चिकना और अधिक भोजन मत कराओ किन्तु हलका भोजन देकर उष्णजल पिलाओ और कुछकाल इधर उधर टहलाकर मलमूत्र त्यागनेनंतर बाँये करवटके आधारसे सुलादो. तब बाईं जांघ लंबी और दाहिनी ऊंची करके गुदामें पिचकारीको लगाओ, इस समय तुम (वैद्य) पिचकारीको घी लगाकर बांयें हाथसे पकड़ो और दाहिने हाथसे खींचकर ३० ताली वजाने या १०० तककी गिनती मुँहसे गिननेतक पिचकारी मारते जावो. परंतु पिचकारी मारतेसमय रोगी और वैद्य दोनों जमुहाई खांसी और छींकसे बचे रहें, पिचकारी मार चुकनेपर रोगीको दोनों पाँव पसारकर सीधा सुलादो तदनंतर चतुराईसे दोनों पांवकी अंगुलियां खिचवाके औंधा सुलादो

और कूलोंको मसलकर सोने दो इसीप्रकार १ दिनके अंतरसे ८ नौ दिन-तक अनुवासन और पश्चात् निरूहवस्ति दो. वस्तिकर्मवाले रोगीको उष्ण जलसे स्नान कराओ. दिनको न सोने दो. और अजीर्ण तथा कुपथ्य-से सदा बचातेही रहो.

अनुवासनवस्ति वर्णन—जिसमें घृत, तैल आदि स्निग्ध पदार्थोंसे पिच-कारी मारी जाती है, उसे अनुवासनबस्ति कहते हैं. उसीका एक भेद "मात्रा" वस्ति भी है. शीत और वसंतऋतुमें दिनको तथा ग्रीष्मवर्षा और शरदृऋतुमें रात्रिको अनुवासन देना चाहिये.

अनुवासन योग्य तैल—गिलोय, एरंडकी जड, कणगचकी जड, भारं-गी, अडूसा, रोहिस, शतावरी, सहिंजना, काकलहरी, ये सब टके २ भर और जौ (यव) उर्द, अलसी, बेरकीजड और कुलथी ये सब सेर सेर भर लेकर सबको ६४ सेर जलमें औटाओ और चतुर्थांश रहजानेपर उसीमें ४ सेर मीठा तेल डालकर पकाओ तदनंतर सर्व रसादिक जलकर तेल मात्र रहजानेपर छानकर इसमेंसे १ टकेभर तेलकी पिचकारी सौंफके जल और सैंधानोनके संयोगसे दो तो सर्व वातरोग दूर होंगे. यह अनुवा-सनबस्ति देनेपर मलाशय या पक्काशयमें जलयुक्त स्नेह रहकर मूत्राशय मसलनेपर भी गुदा द्वारा न निकले तो निरूहवस्ति या विरेचन कर दो तो वायुसरण तथा मलद्राव होकर शरीर शुद्ध होजावेगा.

अनुवासन वस्ति वर्जन—भस्मक, कास, श्वास, क्षयीरोग तथा भययुक्त मनुष्योंको अनुवासन वस्ति मत करो.

निरूहवस्ति वर्णन—जिसमें औषधियोंके जलकी पिचकारी मारी जाती है उसे निरूहवस्ति कहते हैं उसका एक भेद उत्तरवस्ति भी है, सामान्य रीतिसे इसके और भी अनेक भेद हैं.

निरूहवस्ति योग्य—जिसका अधिक चिकना शरीर हो. हृदयमें चोट लगी हो. शरीर क्षीण हो. तथा आध्मान, छर्दि, हिक्का अर्श, श्वास, कास, उदररोग, शोथ, अतीसार, विषूचिका, उदावर्त, वातरक्त, विषमज्वर, मूर्च्छा तृषा, मूत्रकृच्छ्र, अश्मरी, मन्दाग्नि, शूल, अम्लपित्त, हृद्रोग और पाद रोगयुक्त मनुष्यको निरूहवस्ति देनेसे उसके समस्त (उक्त) रोग नाश

होजावेंगे. इसका प्रमाण सवा पैसे भरका है. अनुवासन बस्तिकी क्रिया-सेही निरूहबस्ति भी दोचार बार दो.

विशेषतः केवल वात विकारवालेको स्नेहयुक्त, पित्तवालेको दूधयुक्त और कफविकारवालेको कसैले या कडवे रस तथा मूत्रादि युक्त निरूह बस्ति देना चाहिये. परन्तु सुकुमार बालक और वृद्धको तो मृदुबस्ति ही देना योग्यहै.

१ उत्क्लेदनबस्ति-अरंडकीबीजी, महुआ, पिप्पली, सैंधानोन, वच और झाड़वृक्षकी छालके क्वाथसे पिचकारी मारो इसे उत्क्लेदनबस्ति कहते हैं.

२ दोषहरबस्ति-सौंफ, मुलहठी, बील और इन्द्रयवको कांजी और गो-मूत्रमें पीसकर बस्ति दो तो सर्व दोष दूर हों उसे दोषहरबस्ति कहते हैं.

३ लेखनबस्ति–त्रिफलाकाक्वाथ, मधु गोमूत्र और जवाखारको मिला-कर बस्तिदो उसे लेखनबस्ति कहते हैं.

४ शोधनबस्ति–हर्र, किरमाला आदि विरेचक पदार्थोंके जलसे बस्ति करो उसे शोधनबस्ति कहते हैं

५ शमनबास्ति–प्रियंगुपुष्प, मुलहठी, नागरमोथा, रसोत, इन सबको दूधमें पीसकर बस्ति दो उसे शमनबस्ति कहते हैं.

६बृंहणबस्ति–पौष्टिक औषधोंका क्वाथ मिष्टद्रव, घृत, मांसरस इत्या-दिकी बस्ति दो उसे बृंहणबस्ति कहते हैं.

७ पिच्छिलबस्ति–बेरके पत्ते, शतावरी, ल्हेसुवे, मोचरस इन सबको दुग्धमें पकाके वह दुग्ध मधुके साथ बास्तिमें दो उसे पिच्छिलबस्ति कहतेहैं.

८ निरूहबास्ति–ऽ॥ आधसेर मधु, आधसेर घी और थोड़ासा सैंधा-नोन इन तीनोंको मथनकर १ दिनके अंतरसे ७ सात दिनतक एक एक पिचकारी मारो इसे निरूहबस्ति जानो.

९ मधुतैलबस्ति-अरंडमूलके क्वाथमें मधु और मीठा तेल टकाभर, सौंफ १ पैसाभर और सैंधानोन अधेलेभर डालकर मथो. और इसकी बस्तिकरो तो मेद, गुल्म, प्लीहा, कृमि और मलके समस्तरोग दूर होकर बलबढ़ैगा.

१० स्थापनबस्ति–मधु, घृत, दूध, तैल, ये चारों पैसे पैसे भर सधा-नोन झाऊवृक्षके बक्कलका रस अधेले २ भर इन सबको एक जीव करके पिचकारी मारो उसे स्थापनबस्तिकहते हैं.

११ सिद्धबस्ति–पिप्पली, पिप्पलामूल, चव्य, चित्रक, सांठ और मुलहठीके क्वाथमें मधु, तैल और सैंधानोन डालकर औटाओ और इसकी पिचकारी मारो इसे सिद्धबस्ति कहते हैं.

१२ फलबस्ति–गुदामें बाहर और भीतर भी लगाकर अँगूठेके समान मोटी और बारह अंगुल लम्बी कडी पिचकारी गुदामें आधी चलाकर मारो इसे फलबस्ति कहते हैं. बास्तिकर्म समस्त वातरोगोंको नाश करताहै.

धूम्रपानविचार– १ शमन, २ बृंहण, ३ रेचक, ४ सघ्न, ५ वमनकर्त्ता और ६ व्रणधूम्र ये छः प्रकारसे धूम्रपान होते हैं.

धूम्रपान वर्जन–भय, श्रम, दुःख, दंतरोग, रात्रिजागरण, तालुरोग, दाह, प्यास, उदररोग, शिरोग्रह, वमन, आध्मान, प्रहार, प्रमेह, पांडु, क्षीणता रोगवाले मनुष्य, बालक, वृद्ध और गर्भिणी स्त्री इन सबको धूम्रपान करना कदापि योग्य नहीं है.

धूम्रपान गण–धूम्रपान करनेसे वात और कफके रोग शांत होते हैं, सर्व इन्द्रियाँ और मन प्रसन्न रहता. केश (बाल) और दंत, दृढ होते हैं.

षड्विधि धूम्रपान वर्णन–१ इलायची आदिका धुआं शमन, २ शर आदिका बृंहण, ३ तीक्ष्ण औषधोंका रेचन, ४ मिर्च आदिका धुआं खाँसी (कासहर्त्ता) ५ चर्म आदिका धुआं, वमनकर्त्ता और ६ नीम या वच आदिका धुआं (जो व्रण आदिको दिया जाता है) सो व्रण धूम्र कहाता है.

१ अपराजित धूप–मोरपंख, नीमके पत्ते, कटियालीके फल, हींग, मिर्च, छड़, कपास, बकरेके बाल, साँपकी कांचरी, बिल्लीकी विष्ठा और हाथीका दाँत इन सबको महीन पीसकर घृतके संयोगसे धूनी दो तो भूत, प्रेत, पिशाच, राक्षस और डाकिनी आदि सर्व दोष तथा ज्वर दूर होते हैं.

माहेश्वर धूप–हींग, देवदारू, घृत, बिल्वपत्र, गोऽस्थि, कुटकी, सरसों, नीमके पत्ते, शिरके बाल, साँपकी कांचली, मार्जारकी विष्ठा, गोशृंग, मैनफल, दोनों कटियाली, कपास, आटेका भूसा (चलनीमें शेष हुआ भाग) बकरेके रोम, चंदन, मोरपंख और अजामूत्र, (बकरीकामूत्र) इन सबको महीन पीसकर धूनी दो तो भूत, प्रेत, पिशाच, डाकनी, साँप, चुड़ेलन, राक्षस और सर्व ज्वर आदि दूर होते हैं.

रक्तमोचनविचार–मनुष्यके शरीरमें रक्तके कारण बहुधा विकार हुआ करते हैं इसलिये वैद्य विचारपूर्वक रोगीके शरीरमेंसे रुधिर अवश्य निकलवावे और शरदृऋतुमें तो प्रत्येक मनुष्यको रक्त निकलवानाही चाहिये जिससे रक्तविकार न होने पावेंगे.

शुद्धरक्तस्वरूप–जो रक्त पिष्टरस, लालवर्ण, शीतोष्ण, भारी, चिकना और गंधयुक्त हो उसे शुद्धरक्त जानो.

दुष्टरक्त लक्षण–जब शरीरका रक्त बिगड़जाता है तब शरीरमें पीड़ा पाक, दाह, मंडल (चट्टे) खाज, फुन्सी, शोथ, गर्मीके अनेक विकार उत्पन्न होते है.

रुधिरवृद्धि लक्षण–जब शरीरमें रक्त बहुत बढ़जाता है तब अंगमें भारीपन, मेदोवृद्धि, निद्राधिक्यता, दाह, नसोंमें भारीपन और नेत्रोंमें ललाई छा जाती है.

रक्तक्षीणलक्षण–जब शरीरका रक्त विशेष क्षीण होजाता है, तब खट्टे मीठे पदार्थोंके भक्षणमें विशेष इच्छा, मूर्च्छा, रूखापन और नसोंमें शैथिल्यता प्राप्त हो जाती है.

१ वातदूषित रक्तविचार–लालवर्ण, फेनयुक्त, दृढ़, धारा निकलते समय सूक्ष्म और वेगवती हो तथा शरीरमें चटके उठें तो विचारलो कि, रक्त वादीसे बिगड़ाहै.

२ पित्तदूषित रक्तविचार–रक्त पीला या काला या नीला या हरा रंग लिये हो. उष्णता, स्थिरता और दुर्गंधियुक्त हो तथा जिसपर मक्खी और चीटियाँ न झुमें (प्रीति न करें) तो विचारो कि, यह रक्त पित्तसे बिगड़ा है.

३ कफदूषित रक्तविचार–जो शीतल, चिकना, भारी, गेरू, या मांसग्रंथिसदृश तथा अधिक और मंदगामी रक्त हो तो विचार लो कि, यह रक्त कफसे बिगड़ा है.

४ त्रिदोषदूषित रक्तविचार–पूर्वोक्त तीनों दोषेंके आचरणयुक्त काँजीके समान वर्णका रक्त हो तो विचारो कि यह रक्त सन्निपातसे बिगड़ाहै.

५ विषदूषित रक्तविचार–काँजीके समान या वीरबहूटीके

सदृश, विशेष दुर्गंधियुक्त रक्त नासिकासे गिरै जिससे शरीरमें कुष्ठ, शोथ, दाह और पाक होजावे तो विचारो कि, रक्त विषसे बिगड़ा है.

रक्तमोचनयोग्य रोगी–शोथ, दाह, व्रण, फुन्सियां, अंगपाक, शरीरका रक्तवर्ण, वातरक्त, व्यांऊं (व्यवाँई) स्तनरोग, भारीपन, रक्तनेत्र, तंद्रा, नासिका विचार, मुखरोग, प्लीहा, गुल्म, विसर्प, विद्रधि, छाले, शिरोग्रह, उपदंश और वात पित्त इन रोगोंयुक्त रोगीका रुधिर सिंगी या जोंक या तुम्बी, या छुरे (स्तुरे) या सीर (फस्त) द्वारा निकलवा देना चाहिये.

रक्तमोचनवर्जन–क्षीण, जारकर्मयुक्त, नपुंसक, भयातुर, अर्श, शोथ, पांडु, उदरव्याधि, कास, श्वास, छर्दि, अतिसार, पसीनायुक्त, विरेचनादि पंचकर्महीन, १६ वर्षसे न्यून और ७० वर्षसे अधिक वयका पुरुष और गर्भिणी तथा प्रसूतास्त्री इनका रक्त मत निकलवाओ, हां यदि उक्त रोगोंमेंसेभी कोई रोग रक्तमोचनसेही नाश होना संभव हो तो जोंक लगाकर रक्त निकलवाना ठीक होगा.

विशेषतः–विषदूषित रक्तसीर या छुरे (स्तुरे) से और वात, पित्त, कफ, दूषित रक्त हो तो सिंगी या जोंक या तुमडीसे निकलवाना चाहिये जोंकें जहाँ लगाई जाती हैं वहाँसे १ हाथ सिंगी या तुमडी बारह अंगुल १ बीता) छुरा १ अंगुलपर्यंत और सीर खुलवानेसे सर्व शरीरमात्रका दुष्टरुधिर निकलकर शरीर शुद्ध हो जाता है. परंतु ऐसे लाभोंको देख कर भी क्षुधित, निद्रित, मूर्च्छित, भ्रमित, मदोन्मत्त और मलमूत्रके वेगयुक्त मनुष्यका रक्तमोचन शीतकालमें कदापि मत कराओ. यदि पूर्वोक्त जलौका आदि उपायोंसे रक्त भलीभांति न निकले तो उस स्थान पर कूट, सोंठ, मिर्च, पिप्पली और सैंधानोनका चूर्ण मसलो तो वहाँसे पूर्णरूपसे रक्तस्राव होगा. रक्तमोचनके समय विशेष शीत तथा विशेष उष्णताका समय बचाकर समशीतोष्ण कालमें रक्तमोचन कराओ और रोगीको हलका भोजन दो.

रक्तस्तम्भनोपाय–यदि सीर छुडानेपर रक्तस्राव बंद न हो तो लोद, राल, निसोत, जौ, गेहूं, धावडेकी छाल, गेरू, साँपकी काँचली, रेशमकी राख और सांभरकी खाल, इन सबका महीनचूर्ण उस सीरके मुखपर लगा-

ओ और जल आदिसे शीतल उपाय करो तो रक्तस्तंभित होजावेगा. यदि सीर छुड़ानेकी नस नाड़ीपर हो तो उसे दाग दो. या खार लगाओ अथवा कसैली वस्तुका लेप करो. यदि बायें अंडकोशपर शोथ हो तो दाहिने हाथके अँगूठेके नीचेकी नसको दागदो, या दाहने हाथकी सीर छुड़ादो और जो दाहिने अण्डकोशपर शोथ हो तो बाँये हाथके अँगूठेके नीचेकी नसको दागदो या बायें हाथकी सीर छुड़ादो तो शोथ उतर जावेगा. तथा विषूचिकासे रोगग्रसित मनुष्यके पार्श्वभाग पर दाग दो तो विषूचिका (महामारी) दूर होजावेगी.

सीरोद्भव व्यथा—यदि सीर खुलवानेमें अधिक रुधिर निकल जावे तो वहरोगी नेत्ररहित,अर्धाङ्गवात, तिमिर, तृषा, शिरोग्रह, कास, श्वास, हिचकी, दाह और पांडु इन रोगोंमेंसे किसी रोगयुक्त होकर अत्यन्त रुधिर निकल जानेपर प्राणरहित भी होजाता है, इसीलिये वैद्यको विचारके साथ रक्तमोचन करवाना चाहिये.

शमन—यदि दैववशात् रुधिर निकलकर रोगी क्षीण होजावे तो उसे षष्टितण्डुलकी क्षीर (खीर) या दूध तथा (भक्षणयोग्य वर्ण समझा जावे तो) मृगमांस या बकरेका मांसरस पीड़ा शांत होकर शरीर हलका और मन प्रसन्न होनेपर्यंत सेवन कराते रहो. यदि विशेष रुधिर निकलकर शोथ आजावे तो उसे उष्ण घीसे सेंको या अन्य उपचार करो तो शोथ मिटकर पीड़ा शांत होजावेगी.

रक्तमोचनपर वर्जित कर्म—रक्तमोचन करानेवाले रोगीको मैथुन, क्रोध, शीतल जलस्नान, बाहिरी वायु, एक स्थानपर बैठ रहना, दिनको सोना, खारी खट्टी और कड़वी वस्तु खाना. चिंता, विशेष भाषण और अजीर्ण पर भोजन करना, शरीरमें पूर्णबल प्राप्तहोनेतक कदापि ये कर्म न करनेदो.

इति नूतनामृतसागरे विचारखण्डे स्नेह, वमन, विरेचन, हर्रसेवन बस्तिकर्म धूम्रपान, रक्तमोचनवर्णननिरूपणं नाम त्रयोविंशतितमस्तरंगः ॥ २३ ॥

इति विचारखण्डः २.

सूचना.



इस तृतीयखण्डमें सर्व रोगोंका निदान उत्तमप्रकारसे वर्णन किया गया है. इसीलिये इसको 'निदानखण्ड' संज्ञा दीगई है, इसके ४४ तरंग हैं जिनमेंसे प्रथम तरंगमें निदानपंचक, द्वितीयमें रोगोंके १४ प्रकार तथा शरीरस्थ १४ वेगोंके प्रतिरोधसे रोगोत्पत्तिका दर्शाव. तृतीय तरंगमें शिवजीकी कोपाग्निद्वारा ज्वरका प्रादुर्भाव तथा तच्चित्रादि और अवशिष्ट तरंगोंमें सम्पूर्ण रोगोंकी लक्षणोत्पत्ति यथाक्रमसे वर्णन कीगई है. जिनकी सूचना यहाँ न देनेका मुख्यकारण यह है कि, जिस जिस तरंगमें जो जो रोग वर्णित हैं उनका वृत्तान्त तत्तत्तरंगके प्रथम श्लोकसेही ज्ञात हो जावेगा. विशेषतः—जहां कहीं उक्त श्लोकमें आदि तथा प्रभृति शब्दकी योजना दृष्टि पड़े वहाँ पाठकगण ऐसा विचार लेवें कि, इस तरंगमें, श्लोकोक्त रोगोंसे भी कुछ विशेष रोग है.



श्रीः ।

अथ निदानखण्डः ३.

निदानपंचक.

रोगज्ञानार्थमेवादौ यत्नःकार्यो भिषग्वरैः ॥
सति तस्मिन् क्रियारंभः पुण्याययशसे श्रियै ॥ १ ॥ सुश्रुते.
रोगमादौ परीक्षेत ततोऽनंतरमौषधम्
ततःकर्म भिषक्पश्चाज्ज्ञानपूर्वं समाचरेत् ॥ २ ॥ भावप्रकाश.

अथ रोगज्ञानाय पंचोपायानाह.

निदानं पूर्वरूपाणि रूपाण्युपशयस्तथा ॥
संप्राप्तिश्चेति विज्ञानं रोगाणां पंचधास्मृतम् ॥३ ॥ भावप्रकाश.

भाषार्थ–प्रथम वैद्यको रोग जाननेकेलिये प्रयत्न करना चाहिये, क्योंकि जो रोग निश्चय होनेपर चिकित्साका प्रारम्भ करता है, वही पुण्य, यश और संपत्यादिको प्राप्त करसक्ताहै. अन्यथा नहीं ऐसा सुश्रुतमें लिखाहै ॥ १ ॥

तथा भावप्रकाशमें भी लिखा है कि, वैद्य प्रथम रोगकी परीक्षा करके उसी रोगयोग्य औषध विचारे तदनंतर रोग और औषधको यथार्थ जान उपाय करै. यदि इसके नियमविरुद्ध करै तो उसके समान दुष्ट, पातकी और हिंसक दूसरा कौन होगा ? ॥ २ ॥

१ निदान, २ पूर्वरूप, ३ रूप, ४ उपशय और ५ सम्प्राप्ति ये पाँच विधान रोगज्ञानके लिये हैं. जिनसे वैद्य रोगोंको पहिचान सके ॥ ३ ॥

उक्त पाँचों विषयोंका स्पष्टीकरण नीचे करते हैं.

१ निदान–१ निमित्तहेतु, २ आयतन, ३ प्रत्यय, ४ उत्थापन और ५ कारण ये निदानके पर्याय (पलटे आनेवाले=नाम) हैं रोग होनेके कारणको निदान कहते हैं.

२ पूर्वरूप–जिस चिह्नसे उत्पन्न होनेवाला रोग (पहिलेही) जाना जावे उसे पूर्वरूप कहते हैं। यह भी दो प्रकारकाहै–१ सामान्य पूर्व रूप जो कि दोषोंके कारणसे अप्रसिद्ध (गुप्त) रहता है, जैसे ज्वरमें

श्रम होना. और दूसरा विशेष पूर्वरूप, जिसमें वातादि दोष स्पष्टतासे दर्शित हो जाते हैं. जैसे वातज्वरके आदिमें जमुहांई और अंगमर्दन होना.

३ रूप—पूर्वरूपकी प्रसिद्धी होनेपर उस (पूर्वरूप) कोही रूप कहते हैं अर्थात् जिसमें रोग स्पष्टतापूर्वक जानपडे सो रूप कहता है. इसके येभी "संस्थान, व्यंजन, लिंग, लक्षण, चिह्न और आकृति" नाम हैं.

४ उपशय—१ हेतुविपरीतकारी, २ व्याधिविपरीतकारी, ३ हेतुव्याधि विपरीतकारी, ४ हेतुविपरीत अर्थकारी, ५ व्याधिविपरीत अर्थकारी और ६ हेतुव्याधिविपरीत अर्थकारी जो औषधि अन्न और विहारकी सुखकारक योजनका उपशय (तथा सात्म्य) और इनकी दुःखकारक योजनाको अनुपशय (तथा असात्म्य) कहते हैं.

उपशय और अनुपशय दोनोंके अठारह २ भेद (३६) हैं. अर्थात् १ हेतुविपरीतकारी औषध, २ हेतुविपरीतकारी अन्न, ३ हेतुविपरीतकारी विहार, ४ व्याधिविपरीतकारी औषध, ५ व्याधिविपरीतकारी अन्न, ६ द्व्याधिविपरीतकारी विहार, ७ हेतुव्याधिविपरीतकारी औषध, ८ हेतुव्याधिविपरीतकारी अन्न, ९ हेतुव्याधिविपरीतकारी विहार, १० हेतुविपरीत अर्थकारी औषध, ११ हेतुविपरीत अर्थकारी अन्न, १२ हेतुविपरीत अर्थकारी विहार, १३ व्याधिविपरीत अर्थकारी औषध, १४ व्याधिविपरीत अर्थकारी अन्न, १५ व्याधिविपरीत अर्थकारी विहार, १६ हेतुव्याधिविपरीत अर्थकारी औषध, १७ हेतुव्याधिविपरीत अर्थकारी अन्न और १८ हेतुव्याधिविपरीत अर्थकारी विहार. ये १८ भेद उपशयके और इसी प्रकार (इन्हीं नामोंके) १८ भेद अनुपशयके होकर ३६ हो जाते हैं.

अब उक्त अठारह भेदोंको उदाहरणोंके द्वारा दृढ़ करते हैं.

१ हेतुविपरीतकारी औषध—जिसका "शीत" हेतु (कारण) है. ऐसे कफज्वर तथा शीतज्वरमें शुंठी, आदि उष्णौषध जो कि शीतको नाशकरके सुखकारी हो सो हेतुविपरीतकारी औषध कहाती है.

२ हेतुविपरीतकारी अन्न—श्रमजनित वातज्वरमें कुछ उष्णता लिये हुए मधुरतायुक्त स्निग्ध (चिकना) भात आदि श्रमहर. और सुखकारक जो अन्न है सो हेतुविपरीतकारी अन्न कहाते हैं.

३ हेतुविपरीतकारी विहार–दिनके शयनसे बढ़ेहुए कफको शमनकारक रात्रिका जागरण आदि जो व्यवहार हैं सो हेतुविपरीतकारी विहार कहाते हैं.

४ व्याधिविपरीतकारी औषध–जैसे अतिसारमें पाठादि स्तम्भक तथा सुखकारक औषध व्याधि विपरीतकारी औषध कहाती हैं.

५ व्याधिविपरीतकारी अन्न–जैसे अतिसार रोगमें मसूर आदि स्तम्भक तथा सुखकारक अन्न व्याधिविपरीतकारी अन्न कहाते हैं.

६ व्याधिविपरीतकारी विहार–जैसे उदावर्त रोगमें बलात्कारसे (काँख-काँखकर) अधोवायुको निकलना इत्यादि कार्योंको व्याधिविपरीत-कारी विहार कहते हैं.

७ हेतुव्याधिविपरीतकारी औषध–जैसे वात शोथ रोगमें इस रोगकी नाशक दशमूल आदि औषधको हेतुव्याधिविपरीतकारी औषध कहते हैं.

८ हेतुव्याधिविपरीतकारी अन्न–जैसे कफ तथा ग्रहणीमें इन रोगोंके नाशक सुखकारक तक्र (मट्ठा) तथा तद्युक्त मूँगादि लघु अन्नको हेतुव्याधिविपरीतकारी अन्न कहते हैं.

९ हेतुव्याधिविपरीतकारी विहार जैसे घाममें विचरनेसे जो दाह, दाह-युक्त पित्तज्वर उत्पन्न हुआ तो उसपर जल सिंचित उरई (खश) की टट्टी लगे हुए शीतल स्थानमें कोमल शय्यापर लेटना आदि पित्तज्वर नाशक तथा सुखदायी कार्योंको हेतुव्याधि विपरीतकारी विहार कहते हैं.

१० हेतुविपरीत अर्थकारी औषध–जैसे पित्त प्रधानसे पकेहुए शोथ-पर पित्तकारक उष्ण अर्कमूलादिका लेप लगादेना जो हेतुके विपरीत कार्यको करे. ऐसी क्रियाको हेतुविपरीतअर्थकारी औषध कहते हैं.

११ हेतुविपरीतअर्थकारी अन्न–जैसे पित्त शोथपर दाहकारक अन्नका उपयोग हो इसे हेतुविपरीत अर्थकारी अन्न कहते हैं.

१२ हेतुविपरीतअर्थकारी विहार–जैसे वातोन्मादमें त्रास देनेवाला-विहार (त्रास देना) वातनाशक तथा सुखकारक होनेसे हेतुविपरीत अर्थ-कारी विहार कहाता है.

१३ व्याधिविपरीत अर्थकारी औषध–जैसे कफमें मैनफल आदि वांति-कारक पदार्थ जो कि व्याधिसे विपरीतकार्य करनेवाले हों सो व्याधि-विपरीत अर्थकारी औषध कहाती हैं.

१४ व्याधिविपरीत अर्थकारी अन्न—जैसे अतिसार रोगमें दुग्ध आदि रेचक अन्न (भक्षणपदार्थ) व्याधिविपरीत अर्थकारी अन्न कहाते हैं.

१५ व्याधिविपरीत अर्थकारी विहार—जैसे वमन होते समय मुखमें और भी अंगुष्ठआदि डालकर वमन करना इसे व्याधिविपरीत अर्थकारी विहार कहते हैं.

१६ हेतुव्याधिविपरीत अर्थकारी औषध—जैसे अग्निदग्धपर उष्ण अगर (चंदन) आदि औषधिका लेप जो हेतु तथा व्याधि दोनोंके विपरीत अर्थको करनेवाले हैं. हेतुव्याधिविरीत अर्थकारी औषध कहावेगी.

१७ हेतुव्याधिविपरीत अर्थकारी अन्न—जैसे मदात्यय (मतवाली दशा) में मद्यादि पान करना, इसे हेतुव्याधिविपरीत अर्थकारी अन्न (भक्षण) कहते हैं.

१८ हेतुव्याधिविपरीत अर्थकारी विहार—जैसे व्यायामजन्य मूढ़वात (कसरत करनेसे उत्पन्न हुई जो बादी) पर जलमें तैरना इत्यादि ऐसे कार्यको हेतुव्याधिविपरीत अर्थकारी विहार कहते हैं.

ये १८ अठारहों उपचार सुखकारक होनेसे उपशय तथा यही औषध अन्न और विहार दुःखकारक होनेसे (१८ भेद) अनुपशय कहातेहैं ऐसेही सद्वैद्यको देश, काल और अवस्थाका विचार भी करना चाहिये.

५ सम्प्राप्ति—बिगडे हुए वात, पित्त और कफ अपने स्थानको छोडके अंग प्रत्यंगोंमें फैलकर जो रोगोत्पत्ति करते हैं उस (उत्पत्ति) को सम्प्राप्ति (तथा आगती भी) कहते हैं. इस सम्प्राप्तिके "१ संख्या, २ विकल्प, ३ प्राधान्य, ४ बल और ५ काल" ये पांच भेद हैं.

१ संख्या—जैसे ८ प्रकारका ज्वर ६ प्रकारका अतिसार आदि यह जो प्रत्येक रोगकी संख्या लिखी हैं इसे संख्यासंप्राप्रि कहतेहैं.

२ विकल्प—जिस रोगमें वातादि तीनों दोष मिश्रित हों, इस दोषसमूहमें निश्चय किया जावे कि, कौन कौनका कितना कितना अंश है तो इस अंशांश कल्पनाको विकल्प सम्प्राप्ति कहते हैं.

३ प्राधान्य—जो रोग स्वतंत्र हो उसे प्रधान, तथा परतंत्रहो उसे अप्रधान कहते हैं, जैसे ज्वर स्वतंत्र होनेसे प्रधान तथा उसके उपद्रव परतंत्र होनेसे अप्रधान हैं, इस उक्तविषयके निश्चयको प्राधान्य सम्प्राप्ति कहतेहैं.

४ बल—जिस रोगमें निदान, पूर्वरूप और रूप आदि सम्पूर्ण अंग हों वह बलवान् रोग तथा जिसमें उक्त अंग न हों सो निर्बल रोग कहाता है. उक्त विषयके निश्चयको बलसम्प्राप्ति कहते हैं.

५ काल—वात, पित्त और कफके समय आदिका निश्चय करना. इसे कालसम्प्राप्ति कहते हैं.

यह सर्व विषय विशेष विस्तृतभावसे माधवनिदान तथा सुश्रुत आदि ग्रंथोंमें लिखे हैं. सो वैद्य प्रथम निदानादि पाँचों उपायोंद्वारा रोगका पूर्ण निश्चय कर लेवे.

रोगाणां भेदाः ।

रोगस्तु दोषवैषम्यं रोगसाम्यमरोगता ॥
रोगा दुःखस्य दातारो ज्वरप्रभृतयो हि ते ॥ भावप्रकाश.

भाषार्थ—वात, पित्त और कफकी न्यूनाधिकताको रोग तथा इनकी समताको आरोग्य कहते हैं. ज्वरआदि रोगही दुःख देनेहारे हैं, इसलिये हम प्रथम रोगोंके, १४ भेदोंको दर्शाते हैं जिनकी परिभाषा आगे लिखेंगे.

१ सहजरोग, २ गर्भजरोग, ३ जातज्ञातरोग, ४ पीडाजनितरोग, ५ कालरोग ६ प्रभावजरोग, ७ स्वभावजरोग, ८ देशजरोग, ९ आगंतुकरोग, १० कायिकरोग, ११ अंतररोग, १२ कर्मजरोग, १३ दोषजरोग और १४ कर्मदोषजरोग.

१ सहज रोग—मातापिताके वीर्यदोषसे सन्तानको जो रोग होवे सो सहजरोग कहाता है.

२ गर्भजरोग—बालक गर्भसेही कुबडा, पंगुला, छः उँगलीयुक्त तथा किसी अंगहीन उत्पन्न हो सो गर्भजरोग कहाता है.

३ जातज्ञातरोग—बालकके गर्भनिवासकालमें माताके मिथ्या आहार विहारसे बालकको मूकता आदि रोग हों उन्हें जातज्ञात रोग जानो.

४ पीडाजनितरोग—शस्त्रप्रहार आदिसे जो अस्थिभंगादि रोग उत्पन्न हुये सो पीडाजनित रोग कहाते हैं

५ कालरोग— शीत, उष्ण और वर्षाऋतुमें जलवायुके विपर्ययसे जो रोग उत्पन्न हो सो कालरोग कहाता है.

६ प्रभावज रोग—इष्टदेव, गुरु, तपस्वी और वृद्धादिके शाप तथा ग्रहों की प्रतिकूलतासे उत्पन्न हो सो प्रभावज रोग कहाते हैं.

७ स्वभावजरोग— भूख, प्यास और वृद्धापनादिके कारणसे जो उत्पन्न हुए सो स्वभावज रोग कहाते हैं.

८ देशजरोग—किसी देशमें मनुष्य काले भूरे तथा लालरंग लिये उत्पन्न होते हैं इसीप्रकार किसी देशमें कोई रोग विशेषतापूर्वक होता है.

९ आगंतुकरोग—क्रोध, लोभ, मोह, राग, द्वेष और भूतादि वाधासे रोग उत्पन्न हो सो आगंतुक रोग कहाता है.

१० कायिकरोग—ज्वर आदि विषरोग पर्यंत जो मुख्य रोग हैं सो कायिकरोग कहाते हैं.

११ अंतरोग—चित्तभ्रम (हौलदिल) आदि विकारको अंतरोग कहतेहैं.

१२ कर्मजरोग—इस जन्मके ब्रह्महत्यादि पाप तथा पूर्वजन्मके दुष्कर्मोंसे जो उत्पन्न हो उसे कर्मजरोग कहते हैं.

१३ दोषजरोग—वात, पित्त और कफसे जो उत्पन्न हो उसे दोषजरोग कहते हैं.

१४ कर्मदोषजरोग—ब्रह्महत्यादि पाप तथा वात, पित्त, कफ इन दोनों कारणोंयुक्त जो रोग उत्पन्न हो उसे कर्मजरोग कहते हैं.

उक्त समग्र रोगके दो भेद और भी किये गये हैं अर्था "१ साध्य २ असाध्य" अब साध्यके पुनः दो भेद करते हैं अर्थात् " १ साध्य २ कष्टसाध्य"

१ साध्य—जो थोडेही यत्नसे शमन हो जावे.

२ कष्टसाध्य—जो बहुतेक यत्न करनेपर कठिनाईसे शमन हो.

३ असाध्यके भी दो भेद कहते हैं अर्थात् " १ याप्य २ असाध्य."

१ याप्य—रोगपर जबतक औषध चलतीरही तथा पथ्यसे वर्त्ताव रहा तबतक रोग दबारहा और ज्योंहीं औषध सेवन छोडकर कुपथ्य हुआ कि, वही रोग पुनः उत्पन्न होगया.

असाध्य—जिस रोग पर कोई भी औषध गुण न करै और अंतमें वह रोग शरीरको नष्ट कर देवे.

उक्त भेदोंके व्यतिरिक्त रोगोंके और भी अनंत भेद हैं जिनको ईश्वरही जानते हैं, परन्तु सद्वैद्यको चाहिये कि, अपने शास्त्र तथा बुद्धिबलसे उन सब भेदोंके इन चौदहों भेदोंक अंतर्गतही समझ लेवें.

रोगोंके उत्पत्तिका दूसरा कारण तथा विभेद और भी सुनो.

इस शरीरमें निम्न लिखित १४ चौदह वेग हैं मनुष्यको उचित है , किसी वेगको निष्कारण उत्पन्न न करै और जो कोई वेग स्वयं उत्पन्न हो उसे न रोकै, तथा उस वेगजनित कार्यको अवश्य करै तो शरीर सर्वदा रोग रहित रहैगा यदि वेगोंको उत्पन्न करै या स्वयं उत्पन्न हुएको रोगके तत्तत्कार्यसे अभावित रहै तो शरीर अवश्य रोगयुक्त होजावेगा । १ अधोवायुवेग, २ रेचन (मल) वेग, ३ मूत्रवेग, ४ डकारवेग, ५ छींकवेग, ६ तृषावेग, ७ क्षुधावेग, ८ निद्रावेग, ९ खाँसीवेग, १० श्रमजनित श्वासवेग, ११ जमुहाईवेग १२ अश्रुवेग, १३ वमन वेग और १४ कामवेग.

इन प्रत्येकके रोकनेसे जो जो हानि प्राप्त होती तथा रोग उत्पन्न होते सो दर्शित करते हैं.

१ अधोवायुवेग–रोकनेसे गोला, प्लीहा, अफरा, उदर पीड़ाआदि रोग उत्पन्न होकर अधोवायुका सरण उत्तम प्रकारसे नहीं होता (अर्थात् मलद्वारसे वायु नहीं निकलती) इसलिये अधोवायु रुकनेसे मूत्रकृच्छ्र, बंधकुष्ठ, नेत्ररोग और हृदयपीड़ा आदि रोग उत्पन्न होते हैं.

२ मलवेग–रोकनेसे हाथ पाँव, मस्तक, हृदय, आदिमें पीड़ा उत्पन्न होकर वायुकी उर्द्धगति और अधोवायुका प्रतिबंध तथा उदावर्त्त और पीनस रोग उत्पन्न होते हैं और अधोवायुकी प्रतिबंध लिखित हानियां भी होंगी.

३ मूत्रवेग–रोकनेसे अंगमें फूटन, मूत्रविबंधन (पथरीका रोग) और मलप्रतिबन्ध लिखित रोग भी उत्पन्न होते हैं.

४ डकारवेग–रोकनेसे अरुचि, शरीरकंपन, हृदय, रुकावट, अफरा, खाँसी और हिचकी आदि रोग उत्पन्न होते हैं.

५ छींकवेग–रोकनेसे शीशमें पीड़ा, शरीरकी सब इन्द्रियोंमें दुर्बलता, ग्रीवास्तम्भन (गर्दन जकडजाना) मुखमें टेढापन आदि व्यथा उत्पन्न होजाती हैं.

६ तृषावेग—रोकनेसे मुखशोष (मुँह सूखना) समग्र अंगमें फूटन, बधिरपन (बहरा होना) मोह, भ्रम और हृदयमें पीडा उत्पन्न होती है.

७ क्षुधावेग—रोकनेसे सब अंग टूटना, भोजनपर अरुचि, समग्र वस्तुओंपर ग्लानि, शरीरमें कृशता (दुबलापन) बाईं तरफका शूल चलना, भ्रम, बिनश्रम किये श्रम होना, सर्व इन्द्रियोंमें शिथिलता होकर शरीरका वर्ण बदल जाता है.

८ निद्रावेग—रोकनेसे मोह, मस्तक और नेत्रोंमें भारीपन, आलस्य जमुहाई और अंगोंमें पीड़ा होती है.

९ खाँसीवेग—रोकनेसे अन्नपर अरुचि, हृदयरोग, श्वासरोग, शोषरोग, हिचकी उत्पन्न होकर वही (खाँसी) रोग विशेष बढ़ता है.

१० श्रमजनित श्वासवेग—रोकनेसे गोला, हृदयरोग और मोह उत्पन्न होता है.

११ जमुहाईवेग—रोकनेसे मस्तकमें पीड़ा, इन्द्रियोंमें दुर्बलता और मुख तथा ग्रीवामें टेढ़ापन होजाता है.

१२ अश्रुवेग—रोकनेसे पीनस, गोला, अरुचि, नेत्ररोग, मस्तकपीड़ा, हृदयमें पीड़ा और ग्रीवामें पीड़ा उत्पन्न होती है.

१३ वमनवेग—रोकनेसे रक्तवात, रक्तपित्त, कोढ़, नेत्ररोग, पामा (खुजली) श्वास, खाँसी ज्वर, हृदयपीड़ा, सूजन, मुखपर श्याम छाया और कीलें ये रोग उत्पन्न होते हैं.

१४ कामवेग—रोकनेसे प्रमेह, शुक्रावरोध (सुजाक) लिङ्गेन्द्रियमें पीड़ा तथा सूजन, चित्तभ्रम और भोजनपर अरुचि इत्यादि रोग उत्पन्न होते हैं.

ज्वराधिकार.

यतःसमस्तरोगाणां ज्वरो राजेति विश्रुतः ॥
अतोज्वराधिकारोऽत्र प्रथमं कथ्यते मया ॥ १ ॥

ज्वरस्यप्रथममुत्पत्तिमाह.

दक्षापमानसंक्रुद्धरुद्रनिश्वाससंभवः ॥
ज्वरोष्टधापृथग्द्वन्द्वसंघातागंतुजः स्मृतः ॥ २ ॥ सुश्रुत.

मूर्तिरप्यस्योक्ता सुश्रुतेन.

रुद्र कोपाग्निसम्भूतः सर्वभूतप्रणाशनः ॥
त्रिपाद्भस्मप्रहरणस्त्रिशिराः सुमनोहरः ॥ ३ ॥
वैयाघ्रचर्म्मवसनः कपिलो माल्य विग्रहः ॥
पिङ्गेक्षणो ह्रस्वजङ्घो बीभत्सो बलवानलम् ॥ ४ ॥
पुरुषो लोकनाशार्थमसौ ज्वर इति स्मृतः ॥५॥ अन्यच्च.
ज्वरस्त्रिपादस्त्रिशिराः षड्भुजो नवलोचनः ॥
भस्मप्रहरणो रुद्रः कालान्तकयमोपमः ॥ ६ ॥

भाषार्थ—सब रोगोंका राजा ज्वर है इसलिये पहिलेसे यहाँ ज्वरका अधिकार लिखते हैं ॥ १ ॥

दक्षप्रजापतिके अपमानसे क्रोधित होकर श्रीमहादेवजीने निजश्वाससे ज्वरको उत्पन्न किया सो ज्वर आठ प्रकारका है अर्थात् १ वातज्वर, २ पित्तज्वर, ३ कफज्वर, ४ वातपित्तज्वर, ५ वातकफज्वर, ६ पित्तकफज्वर, ७ सन्निपातज्वर और ८ आगंतुकज्वर.

नीचे ज्वरके अवयव देखो—इस ज्वरके तीन ३ चरण, ३ मस्तक, ९ नौ नेत्र, ६ छह भुजा और ३ ह्रस्व (छोटी) जाँघें हैं.

ज्वरशृंगार—कुछ ललामी लिये हुए पीला वर्ण और पीलेही नेत्र हैं व्याघ्रचर्मके वस्त्र पहिने, भस्म रमाये, गलेमें माला डाले, ऐसी भयावनी मूर्त्तिको धारण किये सर्व प्राणिमात्रको नष्ट करनेके लिये श्रीशङ्करजीकी कोपाग्निसे यह ज्वर उत्पन्न हुआ है.

चित्र २.

पृथग्दोषैः प्रभूतानां ज्वराणां हि यथाक्रमात् ॥
तरंगे प्रथमे चात्र निदानं कथ्यते मया ॥ ७ ॥

भाषार्थ—वातादि पृथक् २ दोषोंसे उत्पन्न भये जो वात, पित्त और कफज्वर तिनका निदान इस प्रथम तरंगमें यथाक्रमसे कहते हैं ॥ ७ ॥

ज्वरप्राप्ति—जब वात, पित्त और कफ[1] मनुष्यके मिथ्या आहार विहा-

---

१ जिनका निवास नाभि और [illegible] के मध्य आमाशय (औंवकेस्थान) में रहता है ।

रके कारण रसमें प्राप्त होकर उस (रस) को विगाड़ देते और अग्निको बाहर निकालकर शरीरको तप्तकर देते हैं, तब इस दशावाले मनुष्यको ज्वर प्राप्त हुवा करते हैं.

ज्वरमात्रके सामान्य लक्षण—शरीर उष्ण होना, पसीना निकलना क्षुधा बंद होना, अंग जकड़ना, मस्तकमें पीडा होना और हाथ पैर फूटना ये सब लक्षण संगही हों तो ज्वर प्राप्त हुआ जानो.

१ वातज्वरका पूर्णरूप—जमुहाई आना और हाथपाँवमें पीडा होना.

२ पित्तज्वरका पूर्वरूप—किसी कार्यमें चित्त न लगना और नेत्र जलना.

३ कफज्वरका पूर्वरूप—अन्नसे अरुचि और शरीर भारी होना.

उक्तलक्षण ततज्ज्वर आनेके पूर्वहीसे प्रगट हो आते हैं.

१ वातज्वर लक्षण—शरीर कँपनेलगे, ज्वरका विषम (न्यूनाधिक=अर्थात कभी अति कभी सूक्ष्म) वेग होवे, नींद और छींकका अभाव, शरीरमें रूखापन हो आवै, मस्तक और अंगमें पीडा होवे, जिह्वा छहों रसका स्वाद न पाहिचानसके, रेचनकी रूकावट हो, पेटमें शूल, अफरा आदि पीडा हो और जमुहाई विशेष आवें तो वातज्वर जानो.

२ पित्तज्वरलक्षण—नेत्रोंमें दाह हो, मुख खट्टा होजावे, प्यास अधिक लगै, मूर्छा (चक्कर = गश्त) आवे, शरीर अति उष्ण हो, ज्वरका विशेष वेग हो. रेचनद्रव (दस्त पतला) हो, वमन हो, निद्रा न आवे, मुख सूखे या पकजावे, पसीना आता हो, मल मूत्र और नेत्र पीले पड़गये हों तो पित्तज्वर जानो.

३ कफज्वर लक्षण—अन्नपर रुचि न हो. शरीर भारी हो जावे, रोम रोम खडे होजावें, मूत्र और नख श्वेत हो जावें, निद्रा अधिक आवे, शरीर ठंढासा हो (अर्थात् हाथपाँव तो जलसे धोनेके सदृश शीतल हों पर अवशिष्ट शरीर इससे किंचित् उष्ण हो जावे) मुख मीठा हो, ज्वरका विशेष वेग न रहै, आलस्य अधिक आवे, श्वास कास आवे, नाक बहै तथा कफजन्य मलसे नाक रुकजावे तो कफज्वर जानो.

इति श्रीनूतनामृतसागरे निदानखण्डे वातादि ज्वरत्रयनिदाननिरूपणे प्रथमस्तरंगः १

द्वन्द्वजज्वर.

द्वन्द्वदोषप्रभूतानां ज्वराणां च यथाक्रमात् ॥
तरंगे द्वितीये चात्र निदानं लिख्यते मया ॥ १ ॥

भाषार्थ—वातादि दो दो दोषोंसे उत्पन्न भये जो द्वन्द्वज (वातपित्त, वात कफ और पित्तकफ,ज्वर तिनका निदान इस दूसरे तरंगमें लिखतेहैं ॥ १ ॥

४ वातपित्तज्वरलक्षण—मूर्च्छा (चक्कर) आवे, निद्राका अभाव, मस्तकमें पीडा, कंठ और मुख सूखके वमन हो, रोमांच होउठे, अन्नपर रुचि न चलै, अन्धेरी आवै, अंगमें पीडा हो, जमुहाई आवें; और प्रलाप (कुछका कुछ बकवाद) करै तो वातपित्तज्वर जानो.

५ वातकफज्वरलक्षण—खांसी चलै, अन्नपर अरुचि, सन्धियोंमें पीडा, मस्तकमें पीडा, नाकका बहाव, शरीरमें अत्यंत थकाव, कंप और भारीपन, नींदका अभाव, पसीनाका बहाव, श्वासका चलाव, पेटमें शूल, सर्वथा हंसकी सादृश्यतापर नाडीकी गति, धूसर (धुयेंका रंग) श्वेत, चिकना किम्वा सुमेरका रंग जैसा मूत्र, मल भी काला या चिकनाहो, नेत्र धूसर हों, मुखका स्वाद कसैला या मीठा हो, जीभ काली अथवा श्वेत और आर्द्रता (गीलीपन) को लिये हो, कंठमें कफसे घुरांटा चलै और शरीर ठंढा हो जावे तो वातकफज्वर जानना चाहिये.

६ कफपित्तज्वर लक्षण—मुख और जिह्वा कफसे युक्त हो, तंद्रा (आधे नेत्र खुले और आधे बंद) मोह, खांसी, अन्नपर अरुचि, प्यासकी अधिकाई वारम्वार दाह और ठंढ लगै, शरीर और हृदयमें पीडा, मूर्च्छा आवे भूख न लगै, शरीर जकड़ासा जानपडै, नाडी हंस या मेंढकके सदृश गति करै, मूत्र कुछ ललामी लिये हुये श्वेत और चिकना हो, मलभी ललामीपर हो, नेत्र मेंढकके वर्णसदृश हों, मुख मीठा (और कभी कभी कडुआ भी) हो और जिह्वा लाल या श्वेत हो तो पित्तकफज्वर जानो. इन सबका निदान ज्वरतिमिरभास्करमें लिखा है.

इति नूतनामृतसागरे निदानखण्डे वातादिद्वन्द्वजज्वरवर्णनं नाम द्वि० तरंगः ॥ २ ॥

सन्निपातज्वर.

गुणदोषैः प्रभूतस्य सन्निपातज्वरस्यहि ॥
तरंगे तृतीये चात्र निदानं लिख्यतेमया ॥

भाषार्थ—त्रिदोष करके उत्पन्न जो सन्निपातज्वर तिसका निदान इस तृतीयस्तरंगमें लिखते हैं.

सन्निपातज्वर कारण—जो मनुष्य अतिचिकना, मीठा, खट्टा, तीखा, और रूखा भोजन करै, रुचिसे अधिक विरुद्ध वस्तु खावे, मलीन जल पीवे क्रोधवती, रोगयुक्ता स्त्रीसे मैथुन करै, बिगडा हुआ या कच्चा मांस खावे तथा शीतोष्ण देश और काल (समय) के विरुद्ध व्यवहार रक्खे तो उसे सन्निपातज्वर उत्पन्न होजावेगा.

लक्षण—जिसको क्षणमें दाह और अकस्मात् क्षणमें ठंढ लगै, स्वभाव बदलजावे, इंद्रियां अपने अपने धर्मको त्याग करदें, शरीरकी हड्डी संधि (हड्डियोंका जोड़) और मस्तकमें विशेष पीडा हो नेत्रोंसे आंशू बहैं नेत्र काले या लाल होजावें, कानोंमें विचित्र शब्द और पीडा जान पडै, कंठमें कांटे पडजावें, तंद्रा, मोह, कास, श्वास, भ्रम और अन्नपर अरुचि हो जावे, प्रलाप करने लगै, जिह्वा काली, खरदरी या लट्ठर (कठोर) हो जावे, रुधिरयुक्त कफ निकले, दिनको निद्रा आवे रात्रिको निद्रा नहीं आवे, पसीना कभी अधिक और कभी रहित होजावे, रोगी अकस्मात् नाचना गाना रोना हँसना किम्वा मस्तकादिक अवयव हिलाना ऐसे ऐसे कार्य करनेलगे, प्यास बारम्बार लगै, हृदयमें पीडा हो, मलमूत्र थोडा बहुत हो या पूर्णही रुकजावे, शरीर कृशहो, कंठमें कफका घरांटा चलै, मूक होजावे, ओष्ठ तथा इंद्रियां पकजावें, पेट भरीहो, नाडीकी गति महामंद, शिथिल, सूक्ष्म और टूटीसीहो, मूत्र हलदीके सदृश पीला, रक्तके समान लाल और तथा काला होजावे और मलभी श्वेत श्याम तथा सूकरमांसवत् होजावे. जिसमें उपरोक्त लक्षण हों उसे सन्निपातज्वर ग्रसित जानो.

वेग तथा बल—उपरोक्त लक्षणधारी सन्निपातज्वर और काल (मृत्यु) में कुछ भेद[1] नहीं है. जो वैद्य इस ज्वरसे विजय पावे (इसको हटावे=दूर करै=रोगीको आरोग्य करै) उससे अधिक प्रतापी कौन होगा ? (कोई नहीं)

रोगी उस वैद्यको (जिसने उसे सन्निपातरूपी अजगरके मुँहसे बचाया) जो कुछ देवे सो थोडाही है. रत्न, सुवर्णादि असंख्यात द्रव्य तो क्या ? वरन्

१ सन्निपातस्य कालस्य कश्चिद्भेदो न वर्तते । चिकित्सको जयेद्यस्तं कोन्यस्तस्मात्प्रतापवान् ॥ १ ॥

अपनी आत्मा भी सर्वदा वैद्यकी सेवामें अर्पण करदेवे तो भी उसके ऋणसे उऋण नहीं होसक्ता. क्योंकि उसने कालसेही बचाया है.

चरक, सुश्रुत और वाग्भट्टके मतसे तो उक्त प्रकारकाही सन्निपातहै, परन्तु अन्य ग्रन्थोंके मतसे ऋपियोंने इसके ५२ भेद कथन किये हैं, जिनमेंसे १३ प्रकारका तो मुख्यही है. अर्थात् १ संधिग, २ अंतक, ३ रुग्दाह, ४ चित्तभ्रम, ५ शीतांग, ६ तंद्रिक, ७ कंठकुब्ज, ८ कर्णक, ९ भुग्ननेत्र, १० रक्तष्ठीवी, ११ प्रलाप, १२ जिह्वक और १३ अभिन्यास.

सन्निपातायुर्बल–अर्थात् हरप्रकारका सन्निपात अपने जुदे जुदे नियत कालपर्यंत भोगवान् रहते हैं. जिनमेंसे १ संधिक ७ दिन, २ अंतक १० दिन, ३ रुग्दाह २० दिन, ४ चित्तभ्रम ११ दिन, ५ शीतांग १५ दिन, ६ तंद्रिक २५ दिन, ७ कंठकुब्ज १३ दिन, ८ कर्णक ९० दिन, (३ मास) ९ भग्ननेत्र ८ दिन, १० रक्तष्ठीवी १० दिन, ११ प्रलाप १४ दिन, १२ जिह्वक १६ दिन और १३ अभिन्याससन्निपात १५ दिवसतक रहता है, सो सन्निपातमें कोई भी उपद्रव उठावे तो रोगीको तत्काल नष्ट होनेमें विलंब नहीं लगता इसलिये सद्वैद्य उपद्रवशमनपर पूर्ण ध्यान रक्खैं.

१ संधिगसन्निपातज्वर लक्षण–जिस रोगीकी गाँठ गाँठ (संधि संधि) पर अधिक शूल चले, शरीर सूज जावे, पेट भारी हो, शिथिल अंग हो, बल नष्ट हो, वायु तथा कफका अतिकोपहो और निद्रा न आवे तो संधिग सन्निपात जानो.

२ अंतकसन्निपातज्वर लक्षण–शरीरमें अत्यंत दाह लगजावे, देह कम्पायमान होनेलगे, मस्तक इधर उधर पटके, श्वास कास और हिचकी आवें, प्रलाप करे, और वस्तुज्ञान न रहे तो अंतकसन्निपात जानो.

३ रुग्दाह सन्निपातलक्षण–जो रोगी प्रलाप करे, शरीरमें अति दाह हो, उदरमें शूल चले, शरीर ब्याकुलहो और प्यास अधिक लगे तो रुग्दाहजानो.

४ चित्तभ्रमसन्निपात लक्षण–रोगीको भ्रम हो, मंदताप और मोह होवे, विक्षिप्त (पागल) के समान नेत्र होकर बका करे, नाचे, गावे, हँसे और श्वास अधिक आवे तो चित्तभ्रम जानो.

---

१ त्रिदोषाजगरग्रस्तं मोचयेद्यस्तु वैद्यराट् । आत्मापि तस्मै दातव्यः किम्पुनः कनकादिकम् ॥ १ ॥ वैद्यजीवने सुक्तम् ॥

५ शीतांगसन्निपात लक्षण—समग्र शरीर हिम (बर्फ) के समान ठंढा होवे उस रोगीको शीतांगसन्निपात जानो.

६ तन्द्रिकसन्निपात लक्षण—रोगीको तंद्रा अधिक हो, ज्वर वेगसे चढ़े, प्यास अधिक लगे, जिह्वा काली पड़कर खरदरी होजावे, श्वास चले, अतिसार, दाह और कानमें पीडा हो तो तन्द्रिकसन्निपात जानो.

७ कंठकुब्जसन्निपात लक्षण—मस्तक दूखै, दाह और पीडा अधिक हो शरीर अत्यंत तप्त हो, कंठ रुककर सूखजावे, शरीरमात्रमें पीडाहोकर बकने लगे तो कंठकुब्जसन्निपात जानो (यह कष्टसाध्य है.)

८ कर्णकसन्निपात लक्षण—शरीर ज्वरमें हो, कानके नीचे शोथ (सूजन) हो श्वास चले, शरीर काँपे, प्रलाप करे, पसीना निकले, कंठ सूखे, प्यास लगे और मोह, भय हो उसे कर्णकसन्निपात जानो. कर्णक सन्निपातके लक्षण अमृतसागरमें नहीं हैं इसलिये चक्रपाणिदत्तके मतानु-सार लिखे हैं.

९ भग्ननेत्रसन्निपात लक्षण—रोगीकी स्मरणशक्ति नष्ट होजावे, ज्वरका अधिक वेग हो, नेत्र टेढ़े तथा चंचल होजावें, शरीर काँपे, भ्रम हो और प्रलाप करनेलगे तो भग्ननेत्रसन्निपात जानना चाहिये.

१० रक्तष्ठीवीसन्निपात लक्षण—मुखद्वारा थूँकके साथ रक्त गिरे, प्यास अधिक लगे, मोह उत्पन्न हो, श्वास अधिक चलें, पेटमें शूल उठे अफरा, भ्रम और वमन हो तो रक्तष्ठीवी सन्निपात समझो.

११ प्रलापसन्निपात लक्षण—शरीर कम्पितहो, विशेष प्रलाप करे, देह विशेष उष्ण हो, दाह अधिक हो, ज्वरका वेग तीक्ष्ण हो, श्वास चले अंगमें बिकलता (वेचैनी=तलमलाहट हो) और रोगी संज्ञाहीन होजावे, (अर्थात् बेसुध, जो मनुष्यादिक नहीं पहिचाने) तो प्रलापसन्निपात जानो.

१२ जिह्वकसन्निपात लक्षण—श्वास चले, ताप अधिक हो, जिह्वा कठोर (लट्ठर) पड़जावे, तथा जिह्वामें काँटे पड़कर रोगी मूक (गूँगा) बहरा और बलहीन हो जावे तो जिह्वकसन्निपात जानो.

१३ अभिन्याससन्निपात लक्षण—निद्रा न आवे, खाँसी अधिक हो,

१ यह महाअसाध्य है । २ यह कष्टसाध्य है।

शरीर कम्पायमान हो, समस्त चेष्टा बिगडजावे, गद्गदबाणी होजावे, जिह्वा काष्ठके समान (कठिन) हो जावे, और सर्वेन्द्रियोंने स्व स्व कर्तव्य कर्म त्यागन करदिया हो तो अभिन्याससन्निपात जानो.

इति नूतनामृतसागरे निदानखण्डे सन्निपातज्वरभेदवर्णनं नाम तृतीयस्तरंगः ॥ ३ ॥

आगन्तुकज्वर.

आगन्तुकप्रभृतीनां ज्वराणां हि यथाक्रमात् ॥
तुर्यें तरंगे वै चात्र निदानं लिख्यते मया ॥ १ ॥

भाषार्थ– अब हम इस चतुर्थ तरंगके आदिमें यथाक्रमसे आगन्तुक आदि ज्वरोंका निदान लिखते हैं.

१ शस्त्रप्रहार, २ भूतबाधा, ३ काम, क्रोध, शोक, भयकी आधिक्यता. ४ विष भक्षण और ५ शाप, इन कारणोंके द्वारा जो ज्वर उत्पन्न हुआ हो सो आगन्तुकज्वर कहाताहै.

१ शस्त्रकी चोटसे उत्पन्न हुआ आगंतुकज्वर–शस्त्रप्रहारसे पीडा उत्पन्न होके बादीको कुपित करती है. सो बादी रुधिरको बिगाडके चोट लगे हुए स्थानपर अत्यंत पीडा, शोथ (सूजन) तथा शरीरके वर्णको विपर्यय (बदलाना) कर देती है उक्त लक्षण धारणकर ज्वर उत्पन्न हो सो शस्त्रकी चोटसे उत्पन्न हुआ जानो.

२ भूतादिबाधासे उत्पन्नहुआ आगंतुक–शरीरमें उद्वेग (त्रास, दुःख, गडबड, हडफूटन) होवे, कभी हँसे, कभी रोवे, कभी कम्पायमान हो प्रलाप करै और चित्त स्थिर न रहे तो उक्तज्वर जानो.

३ काम, क्रोध, शोक भयकी आधिक्यतासे उत्पन्न हुआ इसके ५ भेद हैं.

क–कामज्वर (पुरुषको) हो तो भोजनमें अरुचि होवे, मनमें दाह होवे, निद्रा, लज्जा, बुद्धि, धैर्यता, आदिसे च्युत हो जावे (ये बातें न रहें) हृदयमें पीडा उठे, केवल सम्भोगमेंही ध्यान लगारहे, और श्वासोच्छ्वास (साँसभरना) करे तो उस पुरुषको कामज्वर जानना चाहिये.

ख–कामज्वर (स्त्रीको) हो तो मूर्च्छा आवे, समग्र अंगमें मरोडे उठें,

१ यह अभिन्यास सन्निपात महाअसाध्य मृत्युरूपक है, इससे संरक्षण पाना दैवकृपा तथा सद्वैद्यके हाथ है ।

प्यास लगे, नेत्र चपल होजावें, मनमें स्तनमर्दन करानेकी इच्छा विशेषहो, पसीना निकले, हृदयमें दाह हो, भोजनमें अरुचि होजावे, लज्जा, निद्रा और धैर्यका नाश होजावे उस स्त्रीको कामज्वर जानो.

ग–क्रोधज्वर–शरीरमें कंप आवे, शिरमें पीडा हो, तथा पित्तज्वर (ऊपर लिख चुके हैं) के सदृश सर्व लक्षण हों तो क्रोधज्वर जानो.

घ–शोकज्वर (जिसे "मानसीज्वर" संज्ञा भी दी है) पुत्र, मित्र, स्त्री आदिके बिछोह 'नाश' से, धन हरणसे और राजादि वरिष्ठ पुरुषोंके तिरस्कारसे मानसीज्वर उत्पन्न होता है. रोगीको शोक अधिकहो, अतिसार हो और सर्व वस्तुओंसे ग्लानि होजावे तो मानसीज्वर जानो.

ङ–भयज्वर–प्रलाप करे, अतिसार हो, चित्त स्थिर न रहे, और भोजन से अरुचि होजाय तो भयज्वर जानो.

४ विष आदि भक्षणसे ज्वर–स्थावर[1] तथा जंगम[2] विषभक्षणसे जो ज्वर उत्पन्न होता है उस रोगीके मुखपर श्यामता छाजाती, अतिसार होता भोजनपर अरुचि होती और प्यास अधिक लगती मूर्च्छा आती तथा सर्व शरीरमें सुईछेदन सदृश पीडा होती है. उक्तलक्षण अमृतसागरमें नहीं लिखे हैं, अतएव हमने माधवनिदानसे लिखे हैं.

५ शापज्वर–गुरु, माता, पिताके तिरस्कार करनेके फलमें उनका शाप लगनेसे जो ज्वर हो सो शापज्वर कहाता है इस ज्वरमें हडफूटन होकर शरीर विकल होता है और शेषलक्षण सब ज्वरकेसदृशही होते हैं.

इति आगंतुकज्वर.

विषमज्वरोत्पत्ति–मनुष्यको ज्वर आके छूट गया हो, पश्चात् किसी प्रकारके कुपथ्यसे वातादि अल्पदोष कुपित होके, रसधातुके व्यतिरिक्त रुधिरादि षड्धातुओंमेंसे, किसी धातुमें प्राप्त होके विषमज्वरको उत्पन्न करते हैं.

विषमज्वरलक्षण–शरीरको शीत या उष्ण करके चाहे जब ज्वरका वेग होआवे और यह वेग कभी न्यून और कभी अधिक होतारहे तो इसे विषमज्वर जानो.

---

१ संखिया, वत्सनाभ, हरताल आदि भक्षणसे। २ सर्प, बिच्छू आदि विषवाले जीवोंके काटनेसे ।

विषमज्वरके ५ भेद हैं—अर्थात् १ संतत, २ सतत, ३ अन्येद्यु, ४ तृतीयक और ५ चतुर्थक.

१ संतत विषमज्वर—जो ज्वर ७ या १० अथवा १२ दिन पर्यंत निरंतर एकसा बना रहे, फिर अपनी अवधि पूर्ण होनेपर शांत हो सो संतत ज्वर कहाताहै. संतत = निरंतर = सदैव = सदा = नित्य = प्रतिकाल.

२ सततज्वर—जो ज्वर रात्रि दिन (८ प्रहर=२४ घंटे) में दो बार चढे सो सततज्वर कहाता है.

३ अन्येद्यु—जो ज्वर एक दिनके अंतरसे आवे सो अन्येद्यु कहाता है इसे (इकतरा = एकंतरा) भी कहते हैं, जो एक दिन चढता और एक दिन शांत रहता है.

४ तृतीयक—जो ज्वर तीसरे दिन चढे सो तृतीयक कहाता है. इसे तिजारी भी कहते हैं जो एक दिन चढती और दो दिन शांत रहती है.

५ चातुर्थिक—जो ज्वर चौथे दिन चढे सो चातुर्थिक कहाता है. इसे चौथिया भी कहते हैं. जो एक दिन चढता और तीन दिन शान्त रहता है.

जीर्णज्वर—ज्वर अपनी आरम्भतिथिसे ७ दिनतक तरुण, १४ दिन पर्यंत मध्यम, २१ दिनपर्यंत प्राचीन और २१ दिनके पश्चात् वही जीर्ण ज्वर कहाने लगता है. रोगीके शरीरमें ज्वर २१ दिन रहकर देह दुर्बल तथा रूखी होजावे, क्षुधा न लगे और पेट सदा भारीपनही बनारहे तो उसे जीर्णज्वर जानो.

अजीर्णज्वर—वारम्वार द्रवरेचन (पतला दस्त) हो, खट्टी डकारें आवें वमनकी इच्छा हो (जी मचलाना) और उदरमें पीडा रहे तो उसे अजीर्णज्वर जानना चाहिये.

दृष्टिज्वर—जमुहाई अधिक आवें, उदरमें पीडा होवे, हाथ पाँवमें फूटन (फूटाकरै) होवे और शरीर निश्शक्त हो जावे, तो दृष्टिज्वर जानो.

रुधिरप्रकोपज्वर—अंगमें फूटन होवे, मुखसे श्वास चले, शरीरमें शिथिलता, तृषा और मूर्च्छा हो और पेट फूले तो रुधिरप्रकोपज्वर जानो.

मलज्वर—जिसमें मुखशोष, दाह, भ्रम, मूर्च्छा, वमन, हिचकी, उदरशूल और शीशपीडा हो उसे मलज्वर कहते हैं.

कालज्वर–ज्वरका वेग अधिक हो. ऊर्द्ध (ऊपरको) श्वास चले, शरीरकी कांति नष्ट हो जावे, पसीना अधिक निकले, शरीर शिथिल हो जावै, नाड़ी अपना योग्य स्थान छोड देवे (नाडी न मिले) और समस्त इन्द्रियें, अपना २ कर्तव्य छोड देवें तो काल (मृत्यु) ज्वर जानो.

इति नूतनामृतसागरेनिदानखण्डेआगंतुकादिज्वरलक्षणानिरूपणंनामचतुर्थस्तरंगः ॥ ४ ॥

ज्वरोपद्रव.

ज्वरस्योपद्रवाणां च श्वासादीनां यथाक्रमात् ॥
तरंगे पञ्चमे चात्र वर्णनं क्रियते मया ॥ १ ॥

भाषार्थ–इस पांचवें तरंगमें ज्वरके श्वास आदि उपद्रवोंका वर्णन करते हैं ॥ १ ॥

श्वासो मूर्च्छाऽरुचिश्छर्दिस्तृष्णातीसारविड्ग्रहाः ।
हिक्काकासांगदाहश्च ज्वरस्योपद्रवा दश ॥ २ ॥ भा० प्र० १

भाषार्थ–ज्वरके १० उपद्रव, १ श्वास २ मूर्च्छा ३ अरुचि ४ वमन (उलटी) ५ तृषा ६ अतीसार ७ विट्बंध (मलकी रुकावट) ८ हिचकी ९ कास और १० अंगमें दाह, ये ज्वरके दश उपद्रव हैं, दूसरा ऐसा ही भावप्रकाशमें लिखाहै.

ज्वरकुटुम्ब–१ प्यास ज्वरकी स्त्री २ श्वास कास दोनों पुत्र ३ हिचकी वमन दोनों कन्या ४ अतिसार भ्राता ५ अरुचि बहिन (भगिनी) ६ विड्बंध (मल रुकना) भानजा ७ अफरा (पेटफूलन) श्वशुर और ८ मूर्च्छा दासी है. सो इस कुटुम्बमें जो बलाढ्य हो उसका यत्न वैद्य प्रथम करै क्योंकि कुटुंबी होनेसे ये सब ज्वरके अत्युपकारी और रोगीके महाअपकारी (हानि करनेवाले) ही हैं.

ज्वरमुक्तस्य लक्षणमाह.

देहोलघुर्व्यपगतक्लममोहतापः पाको मुखे करणसौष्ठवमव्यथत्वम्॥स्वेदक्षयः प्रकृतियोगिमनोन्नलिप्सा कण्डूश्च मूर्ध्नि विगतज्वरलक्षणानि ॥ १ ॥ भा०प्र०१भाग.

---

१ ज्वरके रहतेही श्वास आदि अन्यविकार उत्पन्न होके निज प्रबलतासे उस ज्वरका यत्न होनेमें बाधक होवे (यत्न होनेही न देवें) सो ज्वरोपद्रव कहाते हैं ।

सुश्रुतोप्याह.

स्वेदो लघुत्वं शिरसः कण्डः पाको मुखस्य च ॥
क्षवथुश्चान्नकांक्षा च ज्वरमुक्तस्य लक्षणम् ॥ २ ॥

भाषार्थ–अब ज्वर छूट गयेके लक्षण दर्शाते हैं १ रोगीका शरीर हलका पडजावे २ मस्तकमें खुजाल चले ३ ओष्ठोंपर पपडी जमजावे अर्थात मुख पकजावे ४ इन्द्रियें अपने अपने विषयोंको स्वीकार कर लेवें, ५ समस्त शरीरमें पसीना निकलनेलगे ६ क्षुधा (भूख) बढ़जावे ७ छींके आने लगें ८ शुद्ध रेचन (दस्त साफ) होने लगे और ९ शरीरकी सर्व व्यथा दूर होजावे तब वैद्य निश्चय विचार लेवे कि इस रोगीका ज्वर छूट गया.

इति नूतनामृतसागरे निदानखण्डे ज्वरोपद्रवनिरूपणे पञ्चमस्तरंगः ॥ ५ ॥

अथातिसारः ।

षड्विधस्यातिसारस्य वातादेर्हि यथाक्रमात् ॥
षष्ठे तरंगे वैचात्र निदानं लिख्यते मया ॥ १ ॥

भाषार्थ–इस छठवें तरंगमें वातादि छः प्रकारके अतिसारका निदान यथाक्रमसे लिखते हैं ॥ १ ॥

मैदा–(गेहूंका आटा कपडेसे छानाहुआ) आदिके भारी पक्कान्न, अति चिकने पदार्थ, रूखे पदार्थ, अतिउष्ण पदार्थ तथा विष ऐसे ऐसे पदार्थ भक्षणसे भोजन करके (बिन पाचन हुए) ही पुनः भोजनकरनेसे और मलके वेगको रोकनेसे अतिसार उत्पन्न होता है.

अतिसारसम्प्राप्ति–उक्त कुपथ्य करनेसे मनुष्यके शरीरमें मल वृद्धिको प्राप्त होके उदराग्निको शांत करता तब शरीरस्थित रसादिरूप जल विष्ठासे मिलके पतला मलरूप होता और अधोवायुके वेगसे वारंवार गुदामार्गद्वारा निकलने लगता है इस बाधाको अतिसार कहते हैं.

अतिसार भेद–छः प्रकारका है अर्थात १ वायुजन्य, २ पित्तजन्य, ३ कफजन्य, ४ सन्निपातजन्य, ५ शोकजन्य और ६ आमजन्य.

अतिसार पूर्वरूप–पहिलेहीसे हृदय, नाभि, गुदा, उदर और पेडूमें पीडा हो, अंगमें फूटन होनेलगे, गुदाकी अपानवायु रुकजावे, बंधकुष्ठ (दस्त न लगना) तथा अफरा होजावे और अन्नपाचन न होवे तो जानो कि, इस मनुष्यको अतिसारविकार उत्पन्न होवेगा.

१ वातातिसार–मल कुछ ललामिको लिये हो, मलमें फेन (फस्क) मिला हो, मल रूखा हो, वार वार थोडा थोडा उतरे, मल कुछ आमयुक्त हो और उतरते समय पेडू. (पोथे और उदरके मध्यका स्थान) में पीडा हो तो वातातिसार जानो.

२ पित्तातिसार–मल पीला–लाल-नीला-पतला तथा दुर्गंधयुक्त हो; गुदा पकजावे, शरीरमें पसीना निकले. प्यास लगे, दाह और मूर्च्छा हो तो पित्तातिसार जानना चाहिये. यदि अधिक उष्ण वस्तु खानेमें आवे तो पित्त वढकर रुधिरको विगाड देता है तब रुधिरयुक्त मल गिरनेसे रक्तातिसार कहाता है यह पित्तातिसारसे पृथक् नहीं वरन् उसीकाही भेद है.

३ कफातिसार–जिसमें मल चिकना, श्वेत, गाढा, शीतल, दुर्गन्धित और किंचित् दुःखपूर्वक गुदाद्वारासे निकले और भारी शरीर हो जावे तो कफातिसार जानो.

४ सन्निपातातिसार–रोगीका मल शूकरके माँसवत् होवे, नेत्रोंमें तंद्रा होवे, मुख सूखे, प्यास अधिक लगे, भ्रम तथा मोह और उपरोक्तलिखित वात, पित्त,कफातिसारके लक्षण हों तो सन्निपातातिसार जानो.[१]

५ शोकातिसार–जिस पुरुषके पुत्र, मित्र, स्त्री तथा धनादि नाश होजावें उसका शोचवश अल्प आहार हो जाता है तव शरीरका समस्त तेज अग्न्याशयमें प्राप्त होकर रुधिरको विगाड देता है और विगडाहुआ रुधिर विष्टायुक्त (अथवा केवल भी) होकर गुंजा (चिरम=चिरमिटि) सदृश वडे कष्टपूर्वक गुदाद्वारा वाहर निकलता है उक्त लक्षण शोकातिसारके हैं.[२]

६ आमातिसार–पुरुषको प्रथमके भोजनका अजीर्ण हो और उसीपर कोई गरिष्ट वस्तु और भी खानेमें आवे तव उसके वात, पित्त, कफ कोठेमें प्राप्त होके धातुसमूह तथा मलको विगाड देते हैं तव आमातिसार उत्पन्न होता है. रोगीके पेटमें मरोडे उठें, शूल चले, दुर्गन्धित तथा अनेक वर्णयुक्त मलहो. मलके साथ आमका संयोग भी हो तो आमातिसार जानो.

---

[१] यह अतिसार असाध्य है, जो तरुणावस्थावाले पुरुषको होवे तो चाहे दैवेच्छासे वच भी जाये, परन्तु निर्बल वृद्ध तथा वालकका हो तो वचना दुर्लभही है।

[२] इसीका एक भेद भयातिसारभी है, जो भयातुर दशामें उत्पन्न होता है।

परीक्षा यह है कि, आम श्वेत और चिकनी होती है जो अमातिसारवाले रोगीके मलको जलमें डालो तो आम नीचे जमजावेगी और मल जल पर तैरता रहेगा.

७ मुर्री (अतिसार)—यह भी अतिसारका सप्तम भेद है. कुपत्थी पुरुषको बादी बढ़कर कफयुक्त होती और मुर्री उत्पन्न करती है. मुर्री होनेसे पेटमें पीडा होकर गुदाद्वारसे अति कष्टपूर्वक मल निकलता है. इसके चार भेद हैं. अर्थात्—१ वातज २ पित्तज ३ कफज और ४ रक्तज.

१ वातज—जिसमें अतिपीडापूर्वक मल उतरे सो वातसे है.

२ पित्तज—जिसमें अतिदाह (जलन) पूर्वक मलउतरे सो पित्तसे है.

३ कफज—जिसमें कफयुक्त मल हो सो कफसे है.

४ रक्तज—जिसमें रक्तयुक्त मल हो सो रक्तसे जानो.

अतिसारके असाध्यलक्षण—शूकरके मांसवत् मल हो प्यास, दाह, अरुचि, श्वास, हिचकी, पार्श्वशूल और मूर्च्छा प्राप्त होजावे. किसी कार्यमें मन नहीं लगे, गुदा पकजावे, अग्नि नाश होजावे, ज्वर बनारहे, मूत्र बंद होजावे और शरीरका बल नष्ट हो जावे, तो यह रोगी बचना दैववशही जानो उसके संरक्षणकी आशा नहीं है.

अतिसारमुक्तलक्षण—जिस रोगीको मलबिन मूत्रही उत्तम प्रकारसे होने लगे, अपानवायु न रुके, बरन् गुदाद्वारा उत्तम प्रकारसे संसर्ग हो, क्षुधा लगे, और कोठा हलका पडजावे तो अतिसार नष्ट हुआ जानो कि, अब अतिसार न रहा. इत्यतिसारः ।

इति नूतनामृतसागरे निदानखण्डे अतिसारउत्पत्तिलक्षण निरूपणंनाम षष्टस्तरंगः ॥६॥

संग्रहणी.

पृथग्दोषैस्समस्तैश्च चतुर्धा ग्रहणीगदः ।
तरंगे सप्तमे चात्र निदानं लिख्यते मया ॥ १ ॥

भाषार्थ—वात, पित्त, कफ तथा सान्निपातसे यह चार प्रकारका संग्रहणी रोग होता है सो इस सातवें तरंगमें उक्त रोगका निदान लिखते हैं.

संग्रहणीरोग उत्पत्ति—अतिसार निवृत्त होनेपर (अथवा मध्यके भी) जो मन्दाग्निवाला पुरुष अहित पदार्थोंका सेवन करे तो उसके

कुपथ्यरूप आहारसे अग्नि पुनः दूषित होके "ग्रहणी" नामकी कलाको बिगाड़ देती है तब वह बिगडी हुई ग्रहणी कला कच्चे अन्नको ग्रहण और पक्के अन्नको गुदाद्वारा त्याज्य करदेती है, तब संग्रहणी उत्पन्न होती है. और इसीलिये इसका नामभी संग्रहणी है.

संग्रहणीलक्षणोत्पत्ति—संग्रहणी चार प्रकारकी होती है, अर्थात् १ वातज, २ पित्तज ३ कफज और ४ सान्निपातज. सो इन कारणोंसे दूषित होके वह. ग्रहणीकला खायेहुए बहुतेरे आहारको कच्चा (बिन पाचन हुआही) तथा पचेहुएको पीडा और दुर्गंधियुक्त (कभी पतला और कभी गाढ़ा) बाहर निकाल देतीहै इसे संग्रहणी कहते हैं. उक्त लक्षण हों तो संग्रहणीरोग उत्पन्न हुआ जानिये.

१ वातजसंग्रहणी कारण—जो मनुष्य वातज पदार्थोंका विशेष भक्षण करे, मिथ्या आहार बिहार करे और अति मैथुन करे तो बादी कुपित होके जठराग्निको बिगाड़ देती है, तब वातजसंग्रहणी उत्पन्न होती है.

१ वातजसंग्रहणीलक्षण—भक्षण कियाहुआ आहार क्लेशसे पाचन होवे, कंठसूखे, भूख न लगे, प्यास अधिक लगे, कानोंमें (भनभन) शब्द हो, पार्श्व, जाँघ और पेडू (नाभिका तलस्थल) में पीडा हो कभी कभी शरीर भरमें सुईसी चुभें, हृदयमें पीड़ा उठे, शरीर कृश हो जावे, जिह्वामें स्वाद न रहे, मीठे आदि नानाभाँतिके पदार्थोंकी भक्षणेच्छा होवे, भोजन किये हुए आहारके पाचनानंतर पेट फूले अथवा भोजन करनेसेही जीवको सुख हो अन्यथा नहीं। भोजन पश्चात् पेटमें गोला या प्लीहा (फिया=तापतिल्ली) की शंका रहे, वारंवार मरोडेयुक्त क्लेशपूर्वक अपशब्द करता हुआ झाग सहित रेचन होवे और श्वास कास भी हों तो उस रोगीको वातसंग्रहणी जानो.

२ पित्तजसंग्रहणीकारण—जो पुरुप उष्ण वस्तुका अधिक सेवन करे मिर्च आदि तीक्ष्ण (चरपरा) खट्टे और खारे पदार्थ विशेष खावे तो उसका पित्त दूषित होकर जठराग्निको बुझादेता है, सो उसका कच्चाही मल निकलने लगता है तब पित्तजसंग्रहणी होती है.

---

१ जो कि, आमाशय और पक्वाशयके मध्य अन्नादिको ग्रहण (पकड़ने धारण) करनेवाली छठवीं कला है उसको 'ग्रहणी' कहते हैं।

लक्षण—कच्चा मल नीले पीले वर्णयुक्त पानीसहित गुदाद्वारसे निकले, खट्टी डकारें आवें, हृदय और कंठमें दाह हो, प्यास लगे और अरुचि होवे तो पित्तजसंग्रहणी जानो.

३ कफजसंग्रहणी कारण—जो पुरुष भारी, चिकनी, शीतल वस्तु खावे तथा भोजन करके सोजावे (निद्रा लेवे) उस पुरुषका कफ कुपित होके जठराग्निको नष्ट कर देता है.

लक्षण—अन्न क्लेशसे पचे, हृदयमें पीडा, वमन और अरुचि हो मुख मीठा रहै, खाँसी, पीनस, गरिष्ठता (पेटमें भारीपन) और मीठी डकारें आवें स्त्रीभी प्रिय न लगे, आमयुक्त मल उतरे, बलरहितही शरीर पुष्ट दृष्टि पडे और आलस्य अधिक आवे तो कफजसंग्रहणीरोग जानो.

४ सन्निपातजसंग्रहणीलक्षण—जिसमें वात, पित्त और कफ तीनो संग्रहणीके लक्षण मिलें सो सन्निपातसंग्रहणी जानो. इसी सन्निपातसंग्रहणीका एक भेद "आमवातसंग्रहणी" भी है.

आमवातसंग्रहणीलक्षण—पतला, श्वेत, चिकना, आमयुक्त और अधिक मल होवे, रेचन होतेसमय विशेप पीडा होवे. कटिमें पीडा होती ही रहे, कुछ दिनपर्यन्त अच्छा रहे परन्तु १० पन्द्रह दिन तथा मासानंतर वैसाही होनेलगे, अथवा अनुदिनही होता रहै, आंते शब्द करती रहें, आलस्य आता रहे, शरीर दुर्बल हो जावे, पेटमें पीडा होती रहे, दिनको तो ये रोग कुपित होताहै पर रात्रिको शांत रहै, तो आमवातसंग्रहणी जानो. संग्रहणीका एक भेद "घटीयंत्र" भी है.

घटीयंत्रलक्षण—शरीर सूना रहै, दोनों पार्श्वमें शूल चलै, पेटमें शब्द, हो और शेष लक्षण संग्रहणीकेही हों तो उसे घटीयंत्र जानो.

विशेषतः—संग्रहणीके साध्यासाध्य लक्षण अतिसारके साध्यासाध्य लक्षण (जो पूर्व लिख चुके हैं) केही समान जानो.

इति नूतनामृतसागरे निदानखण्डे संग्रहणीउत्पत्तिलक्षण निरूपणं नाम सप्तमस्तरंगः ॥ ७ ॥

---

१ यह असाध्य है । २ यह भी असाध्य है ।

अर्श ।

अर्शांसि षट्प्रकाराणि सम्भवन्ति यथान्नृणाम् ॥
तरंगे चाष्टमे तेषां निदानं लिख्यते मया ॥ १ ॥

भावार्थ–मनुष्योंको छः प्रकारके अर्श (बवासीर) होते हैं जिनका (हम इस आठवें तरंगमें) निदान लिखते हैं ॥ १ ॥

अथार्शरोगोत्पत्तिः–मनुष्योंके मूलद्वारा (गुदा) में शंखकी नाभिके सदृश चार अंगुलप्रमाणकी त्रिवली (तीन चक्र) हैं अर्थात्–

१ ऊपरके भागमें–"प्रवाहिनी" नामक वली है जो कि मल पवनादिको बाहर निकालती है.

२ मध्यभागमें–सर्जनी नामक वली है जो मल, पवनादिको छोड़ती है.

३ अंतभागमें एक वली है जो मल पवनादिके छूटनेपर गुदाको पूर्ववत् ढांक देती है, इन्हीं त्रिवलियोंमें अर्शरोग होता है यदि अंतभागकी वलीमें अर्शके मसे हों तो साध्य, तथा मध्य भागस्थ वलीमें हों तो कष्टसाध्य और जो ऊपरकी वलीमें हों तो असाध्य होता है.

अर्शरोग–छः प्रकारका है अर्थात्[१] १ वातज, २ पित्तज, ३ कफज, ४ सन्निपातज, ५ रक्तज ६ सहज.[२]

अर्शोत्पत्तिकारण–वात, पित्त और कफोत्पादक, उष्ण चिकनी और मीठी वस्तुओंके विशेष भक्षणसे तथा त्रिदोषकारी. मिथ्या आहार विहारादिके करनेसे उक्त दोष कुपित होकर त्वचा, मांस और मेदको बिगाड़देते हैं तब गुदाकी त्रिवलियोंमें मांसके अंकुर (मस्से) उत्पन्न होते हैं इसीको अर्श, मूलव्याधि (तथा बवासीर भी) कहते हैं.

अर्शका पूर्वरूप–जिस पुरुषको पूर्णरूपसे अन्नका परिपाक न हो अन्न कूखमें रहे, बंध कुष्ठ हो, मंदाग्नि पडजावे, डकारें अधिक आवें शरीर कृश

---

१ लोग इसे साधारण प्रकारसे दो भागोंमें विभाजित करते हैं अर्थात् १ खूनी जिसमें रुधिर गिरे और २ वादी; जिसमें रुधिर न गिरे; पर पीड़ा होवे; खुजाल चले और तडक उठे सो वादी जानो; ये दोनों उन्हीं छहों भेदोंहीमें हैं पृथक नहीं हैं।

२ जो आहार विहारादिके विपर्ययसे नही पर माताके उदरसेहीं ऊत्पन्न हो आती है (सहज = सह+ज) = (सह = संग+ज= उत्पन्न हुआ) = (संग उत्पन्न हुआ) = शरीरके साथही उत्पन्न हुआ अर्शरोग ।

होवे उदर फूलजावे और अंगमें पीडा (हड़फूटन) हो तो जानो कि, इसे बवासीर किंचित्काल पश्चात् अवश्यही होगी.

१ वातार्शलक्षण–जिसकी गुदामें " सूखे, सुई चुभनेके समान पीडा युक्त काले या नीले, रंगवाले, खरदरे या कठोर, तीक्ष्ण (पैने) या फटे-हुए मुखवाले छोटे बेर. कपासपुष्प सरसोंपुष्प या कदंब पुष्पकृति" मसे होवें शिर, पार्श्वभाग, कंधे, कटि, हृदय, जंघा और पेडूमें पीडा विशेष हो, छींक डकार और क्षुधाका अभाव होजावे, कास, श्वास, मंदाग्नि, शब्दभ्रम, गोला, प्लीहा और उदररोग हो तो उस पुरुषको वातार्श (वादीकी बवासीर) जानो.

२ पित्तार्शलक्षण–गुदामें मोटे, काले, नीले, लाल, पीले तथा श्वेत रंगके मसे हों, मसोंमेंसे उष्ण, महीन रुधिरकी धारा गिरे, तदनंतर, वेगसे कोमल होजावें, जोंकके सदृश मुख हो, शरीरमें दाह, ज्वर और पसीनाका वेग हो, मूर्च्छा, तृषा और अरुचि (किसी कार्यमें प्रीति न होना) विशेष हो, मल पतला, नीला, या लाल हो और त्वचा, नेत्र पीले पड-जावें तो उस पुरुषको पित्तार्श जानो.

३ कफार्शलक्षण–गुदामें गाढ़े, मन्द मन्द पीडायुक्त, ऊँचे भारी कफसे लिपटे हुए, खुजालयुक्त, पेडूमें (नाभिके नीचे) अफरा होवे, श्वास, कास, हृदय पीडा, अरुचि, पीनस प्रमेह, मूत्रकृच्छ्र, शिरपीडा, शीर-लांग, मंदाग्नि, वमन और आमवात ये रोग हों, कफसे युक्त मल गिरे, शरीर पीला पडजावे और मसोंसे रुधिर न गिरे तो कफार्श जानो.

४ सन्निपातार्शलक्षण–जिसमें वात, पित्त और कफार्श तीनोंके लक्षण हों उसे सन्निपातार्श कहते हैं.

रक्तार्शलक्षण–गुदामें चिरमिटीके वर्णसदृश मसें होवें उन मसोंमेंसे अतिउष्णता लिये हुए रुधिरकी दीर्घ धारा बहे, मल गाढ़ा और कष्टपूर्वक उतरे, रुधिर अधिक गिरनेसे शरीरका वर्ण मेढकसदृश होजावे, बल, वर्ण, उत्साह और पराक्रम नष्ट होजावे, शरीर रूखा और कृश पड़-जावे और अधोवायु उत्तम प्रकारसे न हो तो रक्तार्श जानो.

यदि मसोंसे रुधिर पतला तथा फेनके सदृश गिरे, कटि गुदा जांघोंमें पीडा होवे और शरीर दुर्बल होजावे तो वातरक्तार्श जानो.

और श्वेत, चिकना, भारी, ठंढा मल हो, मसोंसे गाढ़ी तथा उष्ण रुधिरधार गिरे और गुदामें सदा कफसा लगा जानपडे तो कफरक्तार्श जानो.

६ सहजार्शलक्षण—माताके रजदोष और पिताके वीर्यदोषसे सहजार्श होताहै जिसके लक्षण वातादिदोषोंके मिलापसे निश्चय करना चाहिये. परन्तु विशेष लक्षण ये होते हैं—सहजार्शके मसे अति कठोर, पांडुवर्ण युक्त, अंतरमुख (मुख भीतरकी ओर) कभी प्रत्यक्ष, कभी अंतर्गत (कभी तो देखनेमें आते और कभी नहीं दीखते) रहते हैं, शरीरकी नसें न्यारी न्यारी दीखती हैं. शरीर कृश, वीर्य क्षीण, अल्पाहार, क्रोधी, अल्पसंतान, मन्दाग्नि, अरुचि, मस्तक, नेत्र, कान, नाक, रोगयुक्त और मन्दस्वर (महीन शब्द) हो तो उस पुरुषको सहजार्श जानना चाहिये.

असाध्यार्शलक्षण—जिस रोगीको बवासीरके साथही शोथ, अतिसार, वमन,हडफूटन, तृषा, ज्वर, अरुचि, मंदाग्नि और हृदयशूल होकर गुदा पकजावे तो उसे महासाध्य (विशेष प्राणान्तक) जानो. उक्त लक्षण धारणीय असाध्यार्शमें रोगी निश्चय मृत्युग्रस्त हो जावेगा.

चर्मकील रोग—यहभी अर्शरूप कहा है अर्थात् गुदाके व्यतिरिक्त किसीभी शरीरके अवयव मसे हों उसे चर्मकील रोग कहते हैं.

इति नूतनामृतसागरे निदानखण्डे अर्शरोगोत्पत्तिलक्षणनिरूपणं नामाष्टमस्तरंगः॥ ८॥

मन्दाग्निभस्मकाजीर्ण.

मन्दाग्निभस्मकाजीर्णप्रभृतीनां रुजां क्रमात् ॥
तरंगे नवमे चात्र निदानं लिख्यते मया॥ १ ॥

भाषार्थ—अब हम इस नवमें तरंगमें मन्दाग्नि, भस्मक और अजीर्णादिरोगोंको यथाक्रमसे लिखतेहैं.

मन्दाग्निरोगोत्पत्ति—मनुष्योंको चार प्रकारकी जठराग्नि होती है. अर्थात् १ मन्दाग्नि, २ तीक्ष्णाग्नि, ३ विषमाग्नि और ४ समाग्नि.

१ मन्दाग्नि—कफकी प्रकृतिवालेको कफाधिक्यतासे मन्दाग्नि होती है.

---

१ विशेषतः यह है कि, उक्त छः भेदोंमेंसे पित्त और रक्तार्शको खूनी और इन दोनोंसे अन्य सब बादीमें गणना किया जाता है।

२ इसीप्रकार अर्शरोग नासिकामें भी होताहै।

२ तीक्ष्णाग्नि—पित्तकी प्रकृतिवाले पुरुषको पित्ताधिक्यतासे तीक्ष्णाग्नि होती है.

३ विषमाग्नि—वातल प्रकृतिवालेको वाताधिक्यतासे विषमाग्नि होतीहै.

४ समाग्नि—जिस पुरुषकी प्रकृतिमें वात पित्त और कफ इन तीनों दोषोंकी तुल्यता (सामान्य दशा) रहती है. उसे समाग्नि रहती है.

१ मंदाग्निलक्षण—योग्य आहार (थोड़ाभी) उत्तमतापूर्वक न पचे, मस्तक और उदरमें बोझ (वजन) रहे और शरीरमें हडफूटन हो तो मन्दाग्नि है.

२ तीक्ष्णाग्निलक्षण—जिसको अधिकसे अधिक भोजन करनेपर भी पाचन हो जावे उसे तीक्ष्णाग्नि जानो.

३ विषमाग्निलक्षण—कभी तो भोजन पाचन होजावे, तथा कभी न पचे, पेट फूले, शूल चले, पेट भारी रहे, पेटमें शब्द होतारहे और अतिसार हो तो विषमाग्नि जानना चाहिये.

४ समाग्निलक्षण—प्रमाणित भोजन उत्तम प्रकारसे पाचन होजावे तथा विशेष भी पच सके, अजीर्णदशामें भी पचसके, भारी पदार्थ भक्षणसे अजीर्ण न हो, क्षुधा लगती रहे, यदि किसी कार्यवशात् क्षुधाका वेग रुके तो भी रोग न हो तो उसे समाग्नि जानो. पूर्वोक्त तीनों अग्नियोंसे यह उत्तम है.

भस्मकरोगोत्पत्ति कारण—तीक्ष्णादि वस्तुके विशेष भक्षण और रूखे अन्नके सेवनसे कफ न्यून होकर वादी और पित्तको वृद्धिगत करता है, तब वह पित्त (तथा वात) पवनकी प्रेरणासे अग्नि बढ़ाकर भस्मकरोग उत्पन्न करदेता है.

भस्मकरोग लक्षण—जो खायाजावे सो भस्म होजावे,दाह मूर्च्छा उत्पन्न हो और खाया हुआ पदार्थ तो क्या परंतु समग्र धातुयें भी भस्म हुईसी मान पडें, तो इसे भस्मक रोग जानो.

---

१ मंदाग्निवालेको बहुधा रोगदशा रहती है ।

२ तीक्ष्णाग्निवालेको पैत्तिक रोग विशेष होते हैं ।

३ विषमाग्निवालेको वातिकरोग विशेष होते हैं ।

४ समाग्निवाला पुरुष बहुधा सुखी (रोग रहित रहताहै)

५ यह रोगीका प्राणान्तकही है ।

अजीर्णरोगोत्पत्ति कारण—अतिशय जलपान, विषपान, मल मूत्र वेग प्रतिबंध, दिवस निद्रा और रात्रि जागरणसे अजीर्णरोग होता है.

अजीर्णरोग लक्षण—पथ्य, हलका, समयानुकूल और यथोचित भोजन भी पाचन न हो आठों प्रहर चित्तमें ईर्षा, भय क्रोध, लोभ, दीनता तथा कोई अन्यविकार बनाही रहे और वांछित भोजन अंग न लगे, तो उस पुरुषको अजीर्णरोग उत्पन्न हुआ जानो.

अजीर्णरोगसामान्यलक्षण—मनमें ग्लानि, शरीरमें भारीपन, पेटमें अफरा और चित्तमें भ्रम रहे, अधोवायु स्वच्छतासे न निकले, बंधकुष्ठ हो और वारम्वार द्रव रेचन (पतलादस्त) हो तो सामान्य अजीर्ण जानो.

अजीर्णरोग ६ प्रकारका होता है, अर्थात् "१ आमाजीर्ण, २ विदग्धाजीर्ण, ३ विष्टब्धाजीर्ण, ४ रसशेषाजीर्ण, ५ दिनपाकीअजीर्ण और ६ प्राकृताजीर्ण" इनकी परिभाषा नीचे देखो.

१ आमाजीर्ण—जिसमें खायाहुआ कच्चाही अन्न गुदाद्वारासे बाहर निकल जाता है, यह कफसे उत्पन्न होता है.

२ विदग्धाजीर्ण—पित्तसे उत्पन्न होता है. जिसमें भक्षितान्न जलजाताहै.

३ विष्टब्धाजीर्ण—वायुसे उत्पन्न होताहै. जिसमें भक्षितान्न विष्टब्ध (बंधना=दृढ होना) होकर उदरमें पीडा उत्पन्न होती है.

४ रसशेषाजीर्ण—जिसमें खाया हुआ अन्न उत्तमरीतिसे पाचन न होके रसरूप होजाताहै और वह द्रवरूपी मल गुदाद्वारसे बाहर निकलताहै.

५ दिनपाकी अजीर्ण—इसमें भक्षण कियाहुआ अन्न ८ प्रहर (दिन रात्रि) में पाचन होता है अर्थात् १ बार भोजन करनेसेही दिनभर भूख न लगकर दूसरे दिन क्षुधा लगे इसमें पेटमें पीडा नहीं होती सो निर्दोष है.

६ प्रकृत्याजीर्ण—जो कि, नित्यंही रहताहै जिसकी शांतिके लिये शतपद गमन (सौपग चलना) अथवा वामांग शयन (बायें करवटसे सोना अर्थात् सोते समय अपनी दाहनी बाजू ऊपर और बाईं बाजू नीचे रखके सोना) इत्यादि उपायहैं. अब इन्हींके लक्षण वर्णन करते हैं.

---

१ भोजन करनेपर तुरंत पुनः भोजन करना।

२ इसे सामान्यअजीर्ण भी कहते हैं यह वैकारिक नहीं होता।

१ आमाजीर्णलक्षण-शरीर भारी हो, वमनकी इच्छा रहै, जैसा भोजन किया हो वैसी डकारें आवैं और कच्चाही मल उतरै तो आमाजीर्ण जानो.

२ विदग्धाजीर्णलक्षण-भ्रम, प्यास दाह और पसीना होवै. धूमयुक्त खट्टी डकारें आवैं और उष्णता सम्बन्धी अनेक रोग उत्पन्न होवैं तो विदग्धाजीर्ण जानो.

३ विष्टब्धाजीर्णलक्षण-पेटमें शूल चलै, पेट फूल जावे, मल और अधोवायु रुकजावे, शिर जकड़ जावे और बादीके बहुत रोग हुआ करैं तो विष्टब्धाजीर्ण जानो.

४ रसशेषाजीर्णलक्षण-अन्नपर अरुचि होवै, हृदयमें पीडा होवै और शरीर तथा पेट भारी होवै, तो रसशेषाजीर्ण जानो.

५ दिनपाकी अजीर्णलक्षण-अन्नपर अरुचि, आलस्य और सर्व शरीरमें भारीपन होवै तो दिनपाकी अजीर्ण जानो.

६ प्राकृताजीर्णलक्षण-मनमें ग्लानि, भारीपन, विबंध (कब्जियत) भ्रम होवै, अधोवायु और मल अवरोधित होवै, तथा मलकी बारम्बार प्रवृत्ति होवै तो सामान्याजीर्ण जानो.

अजीर्णके उपद्रव-मूर्च्छा, प्रलाप, वमन, मुखसे लारका बहाव, शरीरमें शैथिल्यता और चित्तमें भ्रम ये अजीर्णके उपद्रव हैं, सो जिस रोगीको उक्त उपद्रव उत्पन्न हो जावैं, वह निश्चय कालवश होगा, जो मनुष्य अजीर्णमें भी पशुके समान भोजन करताही जावे उसे अनेकानेक रोग उत्पन्न होते हैं क्योंकि अजीर्ण समस्त रोगोंका मूलकारणही है, अजीर्ण गया कि रोग भी गये.

अजीर्णमें स्वल्प आम दोषोंसे बंद होके भी अग्निमार्गको नहीं रोकती इसलिये अजीर्णमें भी क्षुधा लगती है, उस कच्ची भूखमें भी जो पुरुष अविचारसे भोजन करताही जावे तो उपद्रवोंके उठाव (वेग) से नष्ट हो जावेगा. इत्यजीर्णनिदानम्.

विषूचिका[१] रोगोत्पत्तिकारण-प्रथम जिस पुरुषके मंदाग्निसे आमाजीर्ण

१ जिसे लोकमें बहुधा महामारी, मरी, गोली तथा सपाटेकी बीमारी कहते हैं, इसीको उर्दू भाषावाले हैजा और अंग्रेजीवाले कालरा (Cholera.) कहते हैं, इसका शीघ्रोपाय न किया जावे तो इससे रक्षा पाना दैववशही जानो।

हो उसीपर अतिगरिष्ठ वस्तु खाई जावे तो विषूचिका रोग होगा.

विषूचिकारोग लक्षण—जिस अजीर्णमें अंगमें वायु रहके सुइ छेदने कीसी पीड़ा होवे, मूर्च्छा आवे, अतिसार होवे, वमन आवे, तृषा लगै, पेटमें शूल चलै, भ्रम होवे, पैर ऐंठें, पग फूटनहो, जम्हुहाई आवें, दाह हो, शरीरका वर्ण पलट जावै, कँपने लगजावे और मस्तकमें पीडा होवे तो विषूचिका रोग जानो.

विषूचिकाके उपद्रव—यदि विषूचिकामें निद्रा न आवे, कोई वस्तु प्रिय न लगै, शरीर कम्पायमान हो, मूत्र रुकजावे और संज्ञा न रहै तो वह रोगी अवश्य नाशको प्राप्त हो जावेगा.

अलसरोगोत्पत्ति कारण—वायुजन्य विष्टब्धाजीर्णसे अलसरोग उत्पन्न होता है.

अलसरोग लक्षण—जिस रोगमें पेट तथा कूंखें अधिक फूलें आंतोंमें शब्द होवे. रोगी अतिविकल दशामें होवे, पवन (श्वास) नीचेको जानेसे रुककर ऊपरकी ओर कूंख, हृदयखंडादि स्थानोंमें प्राप्त होवे. मल, मूत्र और अधोवायु रुक जावे, तृषा अधिक लगै और डकार अधिक आवें तो उसे अलसरोग जानो.

विलंबिकारोगोत्पत्ति—विदग्धाजीर्णद्वारा विलंबिका रोग उत्पन्न होता है.

विलम्बिकारोग लक्षण—जिसमें भोजन किया हुआ अन्न कफ और वायुसे दूषित होके ऊपर नीचे न जा सके अर्थात् न तो वमन होके मुखद्वारसे निकलै न मलद्वारसे मल होके निकले बरन् बीचमेंही रहके क्लेश देवे इसेही विलम्बिका[1]रोग जानो.

विषूचिका, अलस और विलम्बिका तीनोंके संयुक्तोपद्रव—जब इन रोगोंमें रोगीके दांत, नख और ओष्ठ काले पडजावें, संज्ञा न रहै. वमन प्रचारित रहै, नेत्र भीतरको घुसे जावें, घरघर शब्दोच्चारण होवे और शरीरकी सर्व संधियां ढीली पडजावें; तो वह रोगी अवश्य मृत्युको प्राप्त होगा.

अजीर्णरोग निवृत्तिलक्षण—डकार शुद्ध आनेलगे, शरीरमें उत्साह बढ़े,

---

१. कोई कोई ग्रंथोंमें इसका नाम "दंडालसक" भी दिया है, इसकी चिकित्सा बडी कठिनाईसे होती है ।

मल, मूत्र और अधोवायुका सरण भली भाँति होनेलगै, शरीरमें हलकापन आजावे और क्षुधा, तृषा, भलीभाँति प्राप्त होजावे तब अजीर्णरोग नष्ट हुआ जानना चाहिये.

इति नूतनामृतसागरे निदानखण्डे मंदाग्न्यादिरोगाणां लक्षणनिरूपणं नाम नवमस्तरंगः ॥ ९ ॥

कृमि।

पांडोः कृमेः कामलाया निदानं च यथाक्रमात् ॥
हलीमकस्य रोगस्य दिगूमों लिख्यते मया ॥ १ ॥

भाषार्थ—कृमि, पांडु, कामला और हलीमक रोगका निदान हम इस दशवें तरंगमें यथाक्रमसे लिखते हैं.

कृमिरोगोत्पत्ति—कृमि दो प्रकारकी होती है अर्थात् १ शरीरके बाहर और दूसरी भीतर. फिरभी मैल, कफ, रक्त और विष्ठासे उपजकर कृमि चार प्रकारकी हैं अर्थात् १ विष्ठासे लट्टें, पसीनासे, २ जुआं, ३ चामजुआं और ४ लीखादि. पेटकी कृमि हैं सो केंचुएके सदृश होती हैं.

कृमि उत्पत्ति—अजीर्णमें भोजन, मीठा, खट्टा, द्रवपदार्थका विशेप सेवन, व्यायामका अभाव, दिनको निद्रा और विपरीत आहार विहारादिकके करनेसे पेटमें कृमि उत्पन्न होती हैं.

कृमिलक्षण—ज्वर चढै, शरीर विवर्ण होजावे, पेटमें शूल चलै, हृदयमें पीडा होवे, तथा भ्रम, अरुचि और अतिसार जिस मनुष्यको होजावे उसे अवश्य कृमिरोग उत्पन्न हुआ जानो.

पांडुरोगोत्पत्ति—पांडुरोगके ५ भेद हैं. अर्थात् वे पाँच कारणोंसे उत्पन्न होतेहैं. १ वात, २ पित्त, ३ कफ, ४ सन्निपात और ५ मृत्तिकाभक्षणसे. अधिक श्रम, दिनको निद्रा और खटाई तथा तीक्ष्ण वस्तुओंके विशेष भक्षणसे वात, पित्त, कफ, तीनों कुपित होकर रुधिरको बिगाड देते हैं जिससे त्वचा पीली पडजाती है, इसीको पांडु अथवा (पीलिया) रोग कहते हैं.

---

१ ये सर्व प्रकार मिलकर और भी इनके विस्तृतरूपसे २१ भेद कियेहैं, इसके समस्त भेदोंसे ज्ञात होना हो तो माधवनिदान देखो।

पांडुरोगका पूर्वरूप—त्वचा फटने (चरांने) लगै, अंगमें पीडा होवे, मृत्तिका भक्षणपर इच्छा दौडे, नेत्रोंपर कुछ सूजन होवे, मूत्र पीला पड-जावे और अन्न पाचन न होवे तो उसे पांडुरोग जानो.

वातपांडुलक्षण—जिसकी त्वचा, नेत्र, मूत्र रूखे, काले या लाल हो-जावें शरीरमें कम्प तथा पीडा होवे, पेट फूला रहै और आमादिक, होवें तो वातपांडु जानो.

पित्तपांडुलक्षण—जिसकी त्वचा, नेत्र, मूत्र, मल पीला हो, शरीरमें दाह प्यास और ज्वर रहै और मल पतला होजावे उसे पित्तका पांडुरोग जानो.

कफपांडुलक्षण—मुखसे कफ गिरै, शरीरपर शोथ, तन्द्रा, आलस्य तथा बोझ हो, त्वचा, नेत्र, मूत्र श्वेत होजावें तो कफपांडु जानो.

सन्निपातपांडुलक्षण—ज्वर, अरुचि, हृदयपीडा, वमन, तृषा विकलता, क्षीणता और इन्द्रियोंका विषय त्याग होजावे तो सन्निपातपांडु है.

मृत्तिकाभक्षण पांडुरोगोत्पत्ति—मृत्तिकाभक्षणसे एकही दोष कुपित होकर पांडु उत्पन्न होता है, इसका निर्णय देखो—कसैली मृत्तिका भक्षणसे वायु, खारी मृत्तिकासे पित्त तथा मीठीसे कफ कुपित होकर यह मृत्तिका सप्तधातु और भक्षित आहारको रूखा कर देती है और आप तो परिपाक नहीं होती परन्तु नसोंको फुलाकर (रसादि बहानेवाली) नाडि-योंके छिद्रोंको भरके उन्होंका कर्म (रसादिका बहाव) बंद कर देती है तब शरीरका बल, अंतःकरणकी शक्ति, देहकी कान्ति और जठराग्नि नाश होजाती है; इसप्रकारसे उक्त रोग उत्पन्न होता है.

मृत्तिकाभक्षण पांडुरोगलक्षण—त्वचाका पीतवर्ण हो, शरीरमात्रका विवर्ण होकरके, तंद्रा, आलस्य, कास, श्वास, शूल, अर्श, अरुचि, नेत्र-पर, इन्द्रिय आदिपर शोथ, पेटमें कृमि, अतिसार और (कफ तथा रक्तसे युक्त) मल ये लक्षण हों तो मृत्तिकाभक्षण पांडुरोग जानो.

पांडुमात्रके असाध्यलक्षण—शरीरका रुधिर नाश हो जावे, शरीरका रंग श्वेतसा दीखे, दांत, नख, नेत्र पीतवर्ण होजावें, सर्व देहपर शोथ आजावे,

१ इसपर वैद्यको चिकित्सा करना व्यर्थही है, क्योंकि आरोग्यतो होनाही नही फिर क्या लाभ ?

अतिसार तथा ज्वर होवे और रोगीको सर्व पदार्थ पीलेही पीले दृष्टिपडैं तो जानो कि, यह पांडुरोगी अवश्यही मृत्युवश हो जावेगा.

कामलारोगोत्पत्ति–जो पांडुरोगी, अत्यंत उष्ण, पित्तकारकवस्तुका भक्षण करै तो उसका पित्त, रुधिर और मांस दग्ध होकर कामलारोग उत्पन्न होता है.

कामलारोगलक्षण–जिसके नेत्र, त्वचा, नख, मुखादि हलदीके समान पीले पडजावें, मल, मूत्र कुछ रक्तवर्णको लिये हों, शरीरका वर्ण पीले मेंढककेसा होजावे, इन्द्रियां निर्बल दशामें होजावें. दाह अन्नसे अरुचि, अन्न पाचन और शरीरमें क्षीणत्व (दुर्बलता) होजावे तो कामलारोग जानना चाहिये.

हलीमकरोगका विषय–यदि पांडुसे रोगी पुरुषकी त्वचाका वर्ण हरा धूसर, काला, पीला होजावे. बल उत्साहसे रहित होजावे, तंद्रा, मंदाग्नि, जीर्णज्वर रहै, कामोद्दीपनी शक्ति न रहै, अंगपीडा, दाह, तृषा, अरुचि और भ्रम ये लक्षण हों तो हलीमकरोग जानो.

इति नूतनामृतसागरे निदानखंडे कृमिप्रभृतिरोगलक्षणनिरूपणंनामदशमस्तरंगः॥ १०॥

रक्तपित्त, रोगराट्, शोष।

निदानं रक्तपित्तस्य रोगराट्शोषकास्तथा॥
ज्यामृगांकमिते चास्मिन् तरंगे लिख्यते मया॥ १॥

भाषार्थ–रक्तपित्त, रोगराट् (राजरोग) और शोष इन रोगोंका निदान इस ११ वें तरंगमें लिखते हैं.

रक्तपित्तरोगोत्पत्ति–घाममें भ्रमण, श्रम, मार्गगमन, मैथुन, शोक और उष्ण, तीक्ष्ण, कटु नमक तथा खटाईके भक्षण इन कार्योंकी अति बहुतायत होनेसे पित्त दग्ध होके शरीरस्थ रुधिरको दग्ध कर देता है, तब वह रुधिर ऊर्द्ध्वमार्ग (नाक, नेत्र, कान, मुख) तथा अधोमार्ग (लिंग, योनि, गुदा) से निकलता है, अथवा जो रुधिर अत्यन्तही कुपित होजावे तो सर्व देहके रोमद्वारसे भी निकलने लगता है, इसे रक्तपित्त कहते हैं.

---

१ हलीमक भी पांडुकाही भेद है जो वातपित्तकोपसे उत्पन्न होता है।

रक्तपित्तका पूर्वरूप-अंगमें पीडा, शैथिल्यता, शीतलताकी अभिलाषा, कंठ तथा मुखसे धुआं निकलता हुआ जान पडे, वमन, रुधिर मुखमें आवे और जमुहाई तथा श्वासमें तप्त लोहके सदृश गंध आवे तो विचारलो कि, इसे रक्तपित्त होगा.

रक्तपित्त भेद–यह रोग १ कफ २ वात ३ पित्त और ४ सन्निपातसे उत्पन्न होनेके कारणसे चार भागोंमें विभाजित किया गया है.

कफजरक्तपित्त लक्षण–जो रक्त गाढ़ा, कुछ कफयुक्त, पांडुवर्ण, चिकना तथा मयूरके चन्देवेके समान वर्णवाला हो तो कफज रक्तपित्त जानो.

वातजरक्तपित्त लक्षण–जो रक्त श्यामता लिये फेनयुक्त पतला और रूखा हो तो वातजरक्तपित्त जानो.

पित्तजरक्तपित्त लक्षण–जो रक्त लाल, पीला, खैर आदिके क्वाथसमान या काला, गो मूत्रसमान, वमनीसमान चिकना, अंगारसमान, धूसर और सुरमेके रंगसमान हो तो पित्तज रक्तपित्त जानो।

सन्निपातज रक्तपित्त लक्षण–जिसमें तीनों दोषोंके लक्षण युक्त मिलते हों उसे सन्निपातज रक्तपित्त जानो.

रक्तपित्तके साध्यासाध्य लक्षण–जो रुधिर, नाक, नेत्र, कान और मुख इन ऊर्द्धद्वारोंसे गिरै तो साध्य, लिंग, योनि, गुदादि अधोद्वारसे गिरै तो जाप्य और दोनों मार्गोंसे प्रचलित होजावे तो असाध्य जानो.

रक्तपित्तके उपद्रव–दुर्बलता, श्वास, कास, ज्वर, वमन, मादकता, पांडुता, दाह, मूर्च्छा, भोजनपर अतिदाह, सर्वदा अधैर्य, हृदयमें अतिपीडा, तृषा, मल द्रवदशामें हो, मस्तकमें ताप, थूकमें दुर्गंधि, अन्नपर अरुचि और अन्नका अनपचन ये रक्तपित्तके उपद्रव हैं, इनसे युक्त रोगीको ईश्वरही बचावे.

रक्तपित्तके दुर्लक्षण–यह रोग वृद्ध तथा रोगक्षीण पुरुषको प्राणहारक ही है. जो इस रोगमें रोगीको आकाश भी लाल रुधिरसमान दीखने लगे अथवा नेत्र रुधिरवत् लाल होजावें और सर्वत्र रुधिर सदृश दीख पडे तो वह अवश्य निधन (मृत्युको प्राप्त) होवेगा.

राजरोगोत्पत्ति-मल, मूत्र, अधोवायुका अवरोध, वीर्यकी क्षीणता, साहस[१]

१ अपनी शक्तिसे अधिक परिश्रम करना इसे साहस कहते हैं।

अधिक गरिष्ठ तथा विषमाशनसे राजरोग होता है. यह त्रिदोषरूपही है. परन्तु कफ प्रधान माना है सो कफ, वात और पित्त ये कुपित होके रस संचारके मार्गको रोक लेते हैं तब रक्तादिका बढ़ाव बंद होनेसे मनुष्य सूखता (कृश) जाता है. अथवा विशेष मैथुनसे भी वीर्य क्षीण होनेसे वायु कुपित होके मज्जाको सुखाय अस्थ्यादि (हाड) रसपर्यंतको क्षय करता है, तब वह मनुष्य दिनप्रति क्षीण शरीर होकर सूखने लगता है ऐसे कारणसे राजरोग उत्पन्न होता है.

राजरोग भेद—यह रोग ५ प्रकारका होता है, अर्थात् १ वातज २ पित्तज ३ कफज ४ सन्निपातज और ५ प्रहारज. इसके रोगराज, क्षय, शोष और राजयक्ष्मा ये नाम भी हैं. शोष ६ प्रकारका है.

राजरोग पूर्वरूप—कास, श्वास, अंगपीडा, खाँसीद्वारा कफ पतन, तालु सुखावे, वमन, अग्निमंद, मादकता, पीनस, नाकका बहाव, निद्राकी आधिक्यता, श्वेतनेत्र, मांसभक्षणेच्छा और मैथुनेच्छा इनकी विशेषता हो तो राजरोग होगा ऐसा जानो.

राजरोगलक्षण—१ कांधे तथा पार्श्वभागमें पीडा हो, हाथपाँवमें दाह हो और सर्वांगमें ज्वर रहे तो राजरोग जानो.

तथा २ भोजनमें अरुचि, ज्वर, कास, श्वास, थूकके संग रुधिरका संसर्ग और शब्दमें घरघराहट हो तो राजरोग जानो.

वातजराजरोगलक्षण—स्वरभंग (बोलनेमें घरोटा) शूल और कन्धों तथा पार्श्वभागमें संकोच (खिंचाव) हो तो वातजराजरोग जानो.

पित्तजराजरोगलक्षण—ज्वर, दाह, अतिसार और मुखसे रुधिरपतन हो तो पित्तजराजरोग जानो.

कफजराजरोगलक्षण—मस्तकमें भारीपन, भोजनमें अरुचि, खाँसी और गला (गलापकडना) लगजावे तो कफजराजरोग जानो.

सन्निपातजराजरोगलक्षण—जिसमें उक्त वात पित्त और कफ इन तीनोंके लक्षण हों उसे सन्निपातजराजरोग जानो.

हृदयप्रहारजराजरोगलक्षण—शरीरमें पीडा हो, मुखसे वमनमें रुधिर

---

१ भोजनपर पुनः भोजन कभी अधिक कभी थोड़ा, कभी अबेरा कभी सबेरा, इस प्रकार जो भोजन किया जावे सो विषमाशन कहाता है।

२–३ ये दोनों महाअध्याय हैं।

गिरै और शरीर रूखा पडजावे तो हृदयकी चोटसे यह राजरोग उत्पन्न हुआ जानो.

असाध्यराजरोगलक्षण—जिस रोगीके नेत्र श्वेत पडजावें अन्नसे अरुचि होवे और श्वास, प्रमेह तथा मूत्रकी अतिवृद्धि हो तो वह रोगी अवश्य मर-जावे. यदि असाध्य राजरोगपर सद्वैद्य उत्तमप्रकारसे चिकित्सा करै तथा रोगी तरुण, द्रव्यमान और पथ्याधारी हो तो १००० दिन पर्यंत जीवित रहकर पश्चात् मरजावेगा.

साध्यराजरोगलक्षण—रोगी ज्वर रहित हो, बलयुक्त हो, वैद्यकी दीहुई औषध कटु होवे तो भी उस अमृतसदृश स्वीकार करले, अतितीव्र क्षुधा लगै और पुष्ट हो तो उसे साध्य जानो.

शोषरोगोत्पत्ति—यह राजरोगकाही एक भेद है. छः प्रकारसे उत्पन्न होता है अर्थात्—१ अधिक स्त्री प्रसंग, २ अधिक शोक, ३ जरा[1], ४ अधिक मार्गगमन, ५ व्यायामादि अतिश्रम और ६ हृदयमें चोट लग-नेसे यह शोषरोग होता है.

१ अधिक स्त्रीप्रसंगसे उत्पन्न हुए शोषरोगके लक्षण—लिंगेन्द्रिय और पोतोंमें पीडा हो, मैथुनशक्ति न रहै, शरीर पीला पडजावे, चिन्ताग्रस्त रहै, शरीर शिथिलसा बना रहै, सब धातुयें क्षीण होते होते केवल अस्थि-मात्र रहजावें, तथा राजरोगके लक्षण भी युक्त हों तो स्त्रीप्रसंगकी आधि-क्यतासे उत्पन्न हुआ शोपरोग जानो.

२ शोकजशोषरोगलक्षण—इसके लक्षण उक्त लक्षणोंसेही मिलते हैं विशेषता यही है कि, इसमें वीर्य क्षय नहीं होता.

३ जराशोषलक्षण—शरीर कृश होजावे, वीर्य बल बुद्धिका क्षय होवे, शरीर कम्पायमान हो, भोजनमें अरुचि हो, शब्दमें घरोटा हो, कफ बढ़-जावे, देह भारी पडजावे, पीनस होजावे, अंग रूखासा होजावे तो जराशोषरोग जानो.

४ अधिक मार्गगमन शोषरोगलक्षण—अंग शिथिल होकर भूंजासा हो जावे, रूखापन आजावे, सर्वांग स्पर्शज्ञानरहित होजावे, तृषास्थान (कंठ मुखादि) सूखता रहै तो मार्गगमनशोष जानो.

१ जरा = वृद्धावस्था = बुढ़ापा = तृतीयावस्था ।

५ श्रमजशोषरोगलक्षण—उक्त लक्षण होकर हृदयमें चोट लगनेके लक्षण भी हों तो श्रमजशोषरोग जानो.

६ हृदयप्रहारज शोषरोगलक्षण—अधिक भार आदि उठानेसे हृदयमें धक्का (भार—चोट) बैठकर तथा अतिमैथुन करके रूखे पदार्थ भक्षणसे यह रोग उत्पन्न होता है तब उस मनुष्यके ये लक्षण होते हैं अर्थात् हृदय पार्श्व, तथा कटिमें पीडा, अंग सूखना, कम्प, बल, वीर्य, रुचि और अग्निकी न्यूनता, पीले कफयुक्त खांसी, कभी कभी खांसीमें रक्तभी आना रुधिरयुक्त वमन, व मूत्र, ज्वर, अतिसार और सबको अतिकृपण अनाथ सदृश दृष्टि पडे तो हृदयमें चोट लगकर अतिगम्भीर व्रणद्वारा शोष-रोग जानो.

इति नूतनामृतसागरे निदानखण्डे रक्तपित्तराजरोगादिलक्षणनिरूपणं नामैकादशस्तरंगः ॥ ११ ॥

कास, हिक्का, श्वास ।

अथ कासस्य हिक्कायाः श्वासस्य हि यथा क्रमात् ॥
तरंगे द्वादशे चास्मिन् निदानं लिख्यते मया ॥ १ ॥

भाषार्थ—इस बारहवें तरंगमें अब हम कास, हिक्का और श्वासका निदान यथाक्रमसे लिखते हैं.

कासरोगोत्पत्ति—मुखमें धुवाँ तथा धूलिका प्रवेश, रूखे अन्नका भक्षण भोजनमें कुपथ्य, मल, मूत्र, तथा छींकका प्रतिरोध और चिकनाई या मूली आदि वस्तुओंके भक्षणपर जलपानके करनेसे खांसीका रोग उत्पन्न होता है. सो यह रोग हृदयकी प्राणवायुसे युक्त होके कंठस्थ उदानवायुको लेता हुआ दोनोंको युक्तकर बिगाड देता है तब कंठका बिगडा हुआ उदानवायु मनुष्यके कंठसे कांसे (फूल) के फूटे पात्रके समान शब्द मुख-द्वारा बडे वेगसे बाहर निकलता है यही कास रोग है, यह पाँच प्रकारसे होता है अर्थात्—१ वात, २ पित्त, ३ कफ, ४ प्रहार और ५ क्षयीसे उत्पन्न होता है. इन पाँचों प्रकारोंमें एकसे दूसरे उत्तरोत्तर बलाढ्य हैं. जैसे वातसे पित्त, पित्तसे कफ, कफसे प्रहार और प्रहारसे क्षयीका कास बलाढ्य होता है.

कासरोगका पूर्वरूप–गलेमें कांटे पडजावें, कंठके भीतर खुजाल चलै और भोजन न किया जावे तो जानो कि, इसे कासरोग होगा.

वाय कासरोग लक्षण–हृदय, कनपटी, मस्तक, उदर और पार्श्वमें शूल चलै मुख निस्तेज हो जावे, पराक्रम, वल तथा स्वर नष्ट हो जावे, भोजन करते समय कंठमें व्यथा हो, सूखी खांसी चलै और बोलनेमें टूटा हुआ शव्द निकल तो वातकास जानो.

पित्तकासरोग लक्षण, हृदयमें दाह, ज्वर, मुखमें फीकापन, मुख सूखना, प्यास लगना, कटु वमन होना और शरीर पीला पडजाना ये लक्षण हों तो पित्तकी खांसी जानो.

कफ कासरोग लक्षण–मुख कफसे लिपटा रहै मस्तकमें पीडा हो, भोजनमें अरुचि रहै शरीर भारी हो कंठमें खुजाल चलै और मुखसे थूकमें कफके डल्लेकेडल्ले आवैं तो कफकास जानो.

प्रहारज कासोत्पत्ति–अति मैथुन, बोझ उठाना, मार्गगमन, मल्लयुद्धादि करना, घोड़े, हाथी आदिपर चढके दौडाना और रूखे पदार्थोंके भक्षणसे वाय कुपित होकर हृदयमें चोट लगतीहुई खांसी उत्पन्न करती है.

प्रहारज कासलक्षण–प्रथम सूखी खांसी चलै, तदनंतर खँखारके साथ रुधिर गिरने लगै, कंठ, अस्थि संधियोंमें पीडा, ज्वरं, शूल, श्वास, प्यास और कवूतरक सदृश घरघर शव्द हो तो प्रहारज कासरोग जानो.

क्षयीकासरोगोत्पत्ति–कुपथ्य, विषमाशन, अतिमैथुन, मल मूत्रावरोध और अतिशोकसे मनुष्योंकी अग्नि मंद होकर वात पित्त और कफ कुपित होते हैं तव उस मनुष्यको क्षयी होकर कासको उत्पन्न करती है.

क्षयीकासरोगलक्षण–शरीर क्षीण होजावे, दाह, ज्वर, मोह हो, सूखी खांसीचलै = देह दिनोंदिन दुर्वल होती जावे, रक्तमांसकी हीनता हो जावे और खखारमें राध (पीवं) गिरै तो असाध्य क्षयीकास जानो.

कासमात्रके असाध्य लक्षण–वात, पित्त तथा कफकी खांसी साध्य और प्रहारज तथा क्षयीकी खांसी असाध्य जानो. जो यह रोग वृद्धावस्थामें उत्पन्न हो तो असाध्यही है.

हिक्कारोगोत्पत्ति–उष्ण, वातल, भारी, रूखी, तथा वासी वस्तु भक्षण

मुखमें रज (धूलि = बारीक मृत्तिका) का प्रवेश, श्रम मार्गगमन और मलमूत्रका वेग रोकनेसे हिक्का (हिचकी) रोग उत्पन्न होता है.

हिक्काकी परिभाषा–वायु दोनों ओरके पार्श्व (पसुली) तथा अँतडियोंको क्लेश देती हुई, बडे शब्दयुक्त होकर ऊपरको चढती है. और प्राणोंको त्रास देतीहुई मुखसे भयंकर शब्द निकालती है उसे हिक्का कहते हैं. वायु और कफके संयोगसे ५ प्रकारकी हिक्का उत्पन्न होती है. अर्थात् १ अन्नजा २ यमला ३ क्षुद्रा ४ गम्भीरा और ५ महती.

हिक्काका पूर्वरूप–कंठ, हृदय भारी हो, मुख कसैला हो और कुक्षि (कूंख) में अफरा हो तो अनुमान कर लो कि, इसे हिक्का उत्पन्न होगी.

१ अन्नजा हिक्कालक्षण--अयुक्तिपूर्वक अधिक अन्नभक्षण तथा अधिक जलपानसे वायु कुपित होके ऊर्ध्वगामी होती है इसे अन्नजा कहते हैं.

२ यमलाहिचकी लक्षण--कुछ समयके अंतरसे दोदो हिचकी रोग आकर शीश और ग्रीवाको कम्पित करैं उसे यमला जानो.

३ क्षुद्राहिक्का लक्षण–जो कंठ तथा हृदयकी संधिसे उत्पन्न होके वेर वेर (समय [illegible] अंतर देकर) मंद २ चलै उसे क्षुद्राहिचकी जानो.

४ गम्भी[illegible]चकी लक्षण–जो हिचकी नाभिस्थानसे भयंकरतापूर्वक उठके विशेष पीडा तथा उपद्रवोंके साथ उत्पन्न होती है.

५ महतीहिचकीलक्षण–जो सर्व मर्मस्थानोंको पीडित और शरीरको कम्पित करतीहुई उठै सो महतीहिचकी जानो.

हिक्का असाध्य लक्षण–रोगीको हिचकी चलते समय शरीरमें कम्प आवे ऊर्द्ध दृष्टि हो, अँधियारी आजावे, शरीर क्षीण हो, छींकैं अधिक आवैं और भोजनमें अरुचि हो जावे तो असाध्य हिक्का जानो.

श्वासरोगोत्पत्ति–जिन वस्तुओंके भक्षणसे हिक्का रोग उत्पन्न होता है बहुधा उन्हींसे श्वासरोग भी होता है. यह भी पाँच प्रकारका है अर्थात् १ महाश्वास २ उर्द्धश्वास ३ छिन्नश्वास ४ तमकश्वास और ५ क्षुद्रश्वास.

श्वासरोग पूर्वरूप–हृदयमें पीडा, शूल, अफरा, मलमूत्रावरोध, मुख बेरस (नीरस) और कनपटीमें पीडा हो तो जानो कि, अब श्वास उत्पन्न होगा.

---

१ बहुधा इन लक्षणोंयुक्त गम्भीरा और महती हिक्काही हुआ करती है ।

श्वासरोगस्वरूप--सर्व शरीरमें भ्रमणकारी कफसे मिलके समस्त नसोंको रोक देवे और वायुका बहाव बंद होकर श्वास (दम) चल उठै इसे श्वासरोग कहते हैं.

१ महाश्वासलक्षण—मनुष्य श्वाससे दुःखित हो, मतवाले वृषभके समान निरंतर ऊँचे स्वरसे श्वास खींचे, श्वासका शब्द दूर पर्यंत सुनाई देवे, नेत्र कायरतायुक्त होवें, संज्ञाहीन होजावे, मुख फटजावे, नेत्र फट जावें, बोलनेमें असमर्थ हो, अतिदीन जैसा दृष्टि पड़े तो महाश्वास जानो.

२ ऊर्द्ध्वश्वासलक्षण--श्वास ऊपरको लेवे और वह श्वास नीचे नहीं आवे मुख कफयुक्त होजावे, नेत्र ऊपरको चढ़कर चकित विचकित (घबराहट युक्त) होजावें, मोह और ग्लानि हो तो ऊर्द्ध्वश्वास जानो.

३ छिन्नश्वासलक्षण—सर्व शरीरके पांचो वायु (प्राण, अपान समान, उदान और व्यान) से पीडित टूटती हुई श्वास लेवे, क्लेशित हुआ श्वास नले, मर्मस्थान टूटै, अफरा हो आवे, पसीना निकले, नेत्र फटजावें, श्वास लेते समय नेत्र रक्तवर्ण होजावें, संज्ञा न रहे और शरीरका वर्ण विपर्यय हो जावे तो छिन्नश्वास जानो.

४ तमकश्वासलक्षण--शरीरका पवन उलटा घूमके नसोंको रोक देवे है, तब ग्रीवा शिरको पकडके कफ उपजाती वह कफ कठमें जाके घुरघुर शब्द करता हुआ प्राणांतक श्वासको उपजाता है, जिसके वेगसे रोगीको ग्लानि प्राप्त होती है. रोगीकी अग्नि रुकजाती है, श्वास लेनेके समय मोह होता है, कफसे अतिदुःख पाता है, गलेका कफ मुखद्वारा बाहर निकलनेपर एक या दो घड़ी सुखसे बीतते हैं और भाषणभी कर सक्ता है, सोता है तभी श्वास आजाती है, निद्रा नहीं आती, बैठनेमें भी चैन नहीं पडता है, उष्णता प्रिय होती है, नेत्रोंपर शोथ आजाता है, ललाटपर पसीना हो आता है, मुख सूखता है लुहारकी भाथी (धोकनी) सदृश श्वास आती है, वर्षाकी पवन, मधुर और शीतल वस्तुओंसे श्वासवृद्धि पाती है, ये लक्षण जिस रोगीको हों उसे तमकश्वास जानो.

५ क्षुद्रश्वासलक्षण—रूखी वस्तुके भक्षण और परिश्रमसे क्षुद्रश्वास उत्पन्न

१-२-३ ये तीनों महाअसाध्य है इनसे रक्षा दैववशही है ।

होती है, यह श्वास मनुष्यके खानपानकी गतिको नहीं रोकती, इन्द्रियोंको विशेष पीडाभी नहीं देती, किन्तु श्वासमात्र चलती है.

श्वासका साध्यासाध्य निर्णय–क्षुद्रश्वासभी प्रथम अवस्थामें साध्य परन्तु विशेषकरके तरुणावस्थामें बलाढ्य पुरुषको साध्यही है, तमकश्वास कष्टसाध्य परंतु महाऊर्द्ध और छिन्नश्वास ये तीनों तो महाअसाध्य और प्राणहारकही जानो.

इति नूतनामृतसागरे निदानखण्डे कास, हिक्का, श्वासरोग लक्षण निरूपणंनाम द्वादशस्तरंगः ॥ १२ ॥

स्वरभङ्ग, अरोचक, छर्दि ।

स्वरभेदारोचकयोश्छर्देश्चात्र यथाक्रमात् ॥
तरंगे रामचन्द्रे हि निदानं लिख्यते मया ॥

भाषार्थ–अब हम इस तेरहवें तरंगमें स्वरभंग, अरोचक और छर्दि इन रोगोंका निदान यथाक्रमसे वर्णन करते हैं.

स्वरभंगरोगोत्पत्ति–दीर्घस्वरसे भाषण, पठन, विष भक्षण और कंठमें किसीप्रकारकी चोट लगजानेसे वातादि दोष कुपित होनेके कारणसे कंठसे शब्दप्रकाश करनेवाली नाडियोंमें स्थिर होके स्वरको भंग कर देते हैं. सो यह स्वरभंग रोग छः प्रकारका होता है, अर्थात् १ वात २ पित्त ३ कफ ४ सन्निपात ५ शरीरकी स्थूलता और ६ क्षयीरोगसे स्वरभंग होता है.

वातस्वरभंगलक्षण–जिसके नेत्र, मुख, मल, और मूत्र श्याम हों गर्दभ सदृश टूटा हुआ शब्द निकले तो वातस्वरभंग जानो.

पित्तस्वरभंगलक्षण–नेत्र, मुख, मल, मूत्र पीले हों और बोलनेके समय कंठमें दाह हो तो पित्तस्वरभंग जानो.

कफस्वरभंग–सदा कंठ कफसे रुका रहे, क्लेशके साथ मंद बोलना बने और रात्रिके समय कफ अधिक बढ़जावे तो कफस्वरभंग जानो.

सन्निपातस्वरभंग–जिसमें वात, [illegible] कफ तीनोंके लक्षण युक्त हों उसे सन्निपातस्वरभंग जानो.

स्थूलतास्वरभंग–गलेके भीतर ही भीतर बोले, शब्द स्पष्ट न जानपडे विलंबसे शब्द निकले और प्यास अधिक लगै तो स्थूलताको स्वरभंग जानो.

क्षयीस्वरभंग–जिसके बोलते समय मुखसे वाफ (वाष्प निकले उसे क्षयी स्वरभंग जानो.

अरोचकरोगोत्पत्ति–शोक, क्रोध मोह, लोभ, भय, दुर्गंध, ग्लानिकारक भोजन और ग्लानिकारक रूप देखनेसे त्रिदोष कुपित होके अरोचक (अरुचि करनेवाले) रोग उत्पन्न करते हैं.

अरोचक रोग ५ प्रकारका है अर्थात्–१ वात, २ पित्त, ३ कफ, ४ सन्निपात और ५ शोकादिसे उत्पन्न होनेवाला.

वातारोचकलक्षण–मुख कसैला रहै, हृदयमें शूल रहै और अन्नपर रुचि न रहै तो वातारोचक जानो.

पित्तारोचकलक्षण–मुख कडुवा, खट्टा, उष्ण, नीरस या सलोना रहै शरीरमें दाह और मुखशोष हो तो पित्तारोचक जानो.

कफारोचकलक्षण–मुख मीठा तथा चिकना रहै, शरीर भरमें बंधकुष्ठ हो, मुखसे लार गिरै, शरीरके प्रत्यवयवमें पीडा हो और भोजनकी ओर जीव नहीं चलै तो कफारोचक जानो.

सन्निपातारोचकलक्षण–जिसमें त्रिदोषके युक्त लक्षण मिले हों, उसे सन्निपातारोचक जानो.

शोकारोचकलक्षण–क्षुधा न लगै, मुखसे खाया न जावे, अर्थात् मुखमें ग्रास इधर उधर घूमने लगै तो शोकारोचक जानो.

अरोचक रोगका पूर्वरूप–मुखमें अन्नादि पदार्थका लियाहुआ ग्रास कुछभी स्वाद न दर्शावे तो जानो कि, अरोचक होगा.

भुक्तद्वेषलक्षण–जिस पुरुषको भोजनके देखतेही तथा भोजनका नाम लेतेही अतिशय ग्लानि प्राप्तहोकर चित्त खिन्न होजावे और भोजनकी रुचि किंचित् मात्रभी न रहै, उसे भुक्तद्वेष रोग जानो. यह भी अरोचकका एक विशेष भेदही है.

अथ छर्दिरोगोत्पत्ति–अधिक पतली, चिकनी, ग्लानिकारक वस्तु अति शीघ्रतापूर्वक भोजन दुर्गंधि, दुर्गंधितस्थानावलोकन, उदरमें कृमि

१ यह अच्छा नहीं हानिकारक है।

(और स्त्रियोंको गर्भधारण) से वात, पित्त, कफ, कुपित होके अंगोंको पीडित करते हुए मुखकी ओर दौडते हैं, तब भक्षित पदार्थ मुखद्वारा निकल जाता है इसे छर्दि (वमन, वांति, उलटी, छांटनी, तथा उछाल) रोग कहते हैं.

छर्दिरोगके ५ भेद हैं अर्थात्–१ वात, २ पित्त, ३ कफ, ४ सन्निपात और ५ ग्लानिकारक पदार्थ सेवनसे उत्पन्न होता है.

छर्दिरोगका पूर्वरूप–प्रथमही खट्टा, कडुवा रस हृदयमें आवे, डकार न आवे, मुखसे लार गिरे, मुखसे बार बार खट्टा पानी झिर आवे, मुख कडुवा रहे, अन्न जलपर रुचि न चाहे तो जानो कि, इसे कुछ कालमें अवश्य वमन होगा.

वातछर्दिलक्षण–हृदय, पार्श्वभाग मस्तक नाभिमें पीडा हो, मुखशोष हो, स्वरभेद हो, डकारमें उच्चस्वर निकले, फेन काले रंगयुक्त कसैला बडे वेगसे अतिक्लेशपूर्वक वमन हो तो वातछर्दिजानो.

पित्तछर्दिलक्षण–मुखशोप, मूर्च्छा, तृष्णा, अन्धेरी, और चक्कर आवे तालु नेत्र उष्ण हों और हरे तथा लाल रंगकी उष्ण उलटी हो तो पित्तछर्दि जानो.

कफछर्दिलक्षण–तंद्रा, भोजनमें अरुचि, शरीरमें भारीपन होवे, मुख मीठा हो, नींद न आवे और चीकना "मीठा" गाढा कफयुक्त वमन हो तथा वमन होतेसमय सर्व रोम रोम खडे होजावें, तो कफछर्दि जानो.

सन्निपातछर्दिलक्षण–शूल, अपच (पचे नही) अरुचि, दाह, श्वास, प्रमेह इत्यादि समस्त रोग निरंतर रह और सलोना, खट्टा, नीला तथा लाल, गाढ़ा उष्ण वमन होय तो सन्निपातछर्दिजानो.

ग्लानिछर्दिलक्षण–जिस ग्लानिकारक पदार्थके संसर्गसे उल्टी हुई हो उसीका बारबार स्मरण बना रहै, तो ग्लानिछर्दिजानो.

विशेषतः–ग्लानि छर्दिमें भी त्रिदोषका निर्णय पूर्वोक्त रीत्यनुसारही करना चाहिये, छर्दिमात्रके साध्यासाध्य लक्षण तथा उपद्रवोंसे विशेष ज्ञाता होना चाहो तो चरक, सुश्रुतादिक ग्रंथ देखो.

इति नूतनामृतसागरे निदानखण्डे स्वरभेदारोचकछर्दिरोगाणांलक्षण निरूपणं नाम त्रयोदशस्तरङ्गः ॥ १३ ॥

तृषा, मूर्च्छा, मदात्यय ।

आर्याछंद ।

अष्टयब्जेऽत्र तरङ्गे च तृषा मूर्च्छामदात्ययादीनाम् ॥
रोगाणां हि निदानं विचार्य लिख्यते मया यथासंख्यम् १॥

भाषार्थ—अब हम इस चौदहवें तरंगमें यथाक्रमसे तृषा, मूर्च्छा और मदात्यादि रोगोंका निदान लिखते हैं.

तृषारोगोत्पत्ति—भय, श्रम, बलनाशसे बढ़ा हुआ पित्त, वायुसे मिलके तालुमें प्राप्तहोता है इसलिये जलप्रसारणी नसें रुककर तृषा उत्पन्न होतीहै तृषारोग सात प्रकारका है अर्थात्--१ वायु, २ पित्त, ३ कफ,४ शस्त्रप्रहार, ५ बलनाश, ६ आम, (आँव) और ७ भोजन करनेसे उत्पन्न होता है.

तृषारोगका स्वरूप--निरंतर जल पीनेपर भी तृप्ति न होवे, जल पीनेमें ही चित्त लगा रहै, तो तृषारोग उत्पन्न हुआ जानो.

१ वायुतृषालक्षण—मुख उतर (कांति रहित हो) जावे कनपटी और मस्तकमें पीडा होतीरहै, नसें रुक जावें, मुखमें रसका स्वाद नाश हो जावे और शीतल जलपानसे तृषा बढ़े तो वाततृषा जानो.

२पित्ततृषा लक्षण--मूर्च्छा, भोजनपर अरुचि, दाह, नेत्र रक्त, मुखशोष होजावे, ठंढी वस्तु प्रिय लगै, मुख कटु होजावे, शरीरमें ज्वर रहै और मल, मूत्र, नेत्र, पीतवर्ण होजावे तो पित्ततृषा जानो.

३ कफतृषोत्पत्ति—कफद्वारा जठराग्निका रुकाव होकर जलप्रसारणी नसोंका शोषण होता है तब कफतृषा उत्पन्न होकर ये लक्षण हो जाते हैं.

कफतृषालक्षण—रोगी तृषासे पीडित होताहै, अधिक निद्रा आने लगती है,शरीर बोझल हो जाता है, मुखमीठा रहकर दिनप्रति सूखता जाता है ये लक्षण कफतृषाके हैं.

४ शस्त्रप्रहारतृषा—शस्त्रादिकी चोट लगनेसे शरीरावयवोंमें रुधिरप्रवाह होनेके कारण अधिक पीडा होनेसे बारबार तृषा लगै उसे शस्त्रप्रहार तृषा जानो.

५ बलनाशतृषालक्षण—क्षीणता होकर हृदयमें पीडा होवे, कफ बढ़ जावै, मुखशोष हो और अधिक जलपान करनेपर भी तृषा न मिटै तो क्षीणताकी तृषा जानो.

६ आमतृषालक्षण—क्षीणताकी तृषाके लक्षणही इसके लक्षण हैं

७ भोजनतृषालक्षण—चिकना, खट्टा, खारा, भारी अन्न अधिक खानेसे जो तत्काल तृषा लगे उसे भोजनतृषा जानो.

तृषारोगोपद्रव—मुखका स्वर मंद पडजावे, कण्ठ, तालु, सूख जावें, ज्वर मोह, कास, श्वास ये सब हों तो इन उपद्रवोंसे बचना कठिनही है.

मूर्च्छारोगोत्पत्ति—क्षीणता, अतिकुपथ्य, मलमूत्रावरोध, प्रहारसे बाहिरी इन्द्रियों (नेत्र, कर्ण आदि) तथा मनःस्थानमें त्रिदोषप्रवेश होनेसे संज्ञा प्रवाहिणी नसोंको रोक देते हैं तब अन्धेरी प्राप्त होकर वह मनुष्य काष्ठसदृश पृथ्वीपर गिरपडता है उसे सुख दुःखादिका बोध नहीं रहता, इसे वैद्य मूर्च्छा तथा मोह भी कहते हैं. मूर्च्छारोग छः प्रकारका है अर्थात् १ वात, २ पित्त, ३ कफ, ४ रुधिर, ५ मद्यपान और ६ विषभक्षणसे होता है परन्तु उक्त छहों प्रकारमें पित्तप्रधान रहता है.

मूर्च्छासामान्यरूप—कुपत्थी, पराक्रमहीन, क्षीणतायुक्त और मद्यप पुरुषके अज्ञानका मुख्यहेतु पित्तरूप तमोगुण बढ़के ज्ञानरूप सतोगुण और रजोगुणको आच्छादित कर देता है, तब दशों इन्द्रियोंमें त्रिदोषका प्रवेश होके ज्ञानवाही नसें भी आच्छादित होजाती हैं. अतएव ज्ञाननाशक बढ़ेहुए तमोगुणके वेगसे मनुष्य बेसुध होकर पृथ्वीपर गिर पडता है इस दशामें प्राप्त होके वह मूर्च्छित कहाता है.

मूर्च्छाका पूर्वरूप—हृदयमें पीडा होवे, विशेष जँभाई आवें, मनमें ग्लानि हो और संज्ञा नष्ट होकर चित्त भ्रान्तिसी जान पडे तो अनुमान करो कि किंचित्कालमें इस पुरुषको मूर्च्छा आवेगी.

वातमूर्च्छा लक्षण—प्रथम आकाशका वर्ण काला, नीला, या लाल सा दीखे, तदनंतर अन्धकारमें प्रवेश हुआसा जान पडे अल्पकालमें पुनः ज्ञानयुक्त होजावे, शरीरमें कम्प, हडफूटन हृदयमें पीडा, शरीर कृशतायुक्त और शरीरकी त्वचा लाल तथा धूसर (धूमके रङ्ग सदृश) दृष्टिपडे तो वातमूर्च्छा जानो.

पित्तमूर्च्छा लक्षण—प्रथम आकाशका वर्ण लाल, हरा, तथा पीला दृष्टि पड़कर मूर्च्छा आजावे, तदनंतर पसीना आनेपर संज्ञायुक्त होवे,

तृषा लगे, शरीर सन्तप्त होजावे, नेत्रोंका रंग लाल तथा पीला पडजावे मुखसे टूटते हुए (अस्पष्ट) अक्षर निकलें और शरीर पीला पडजावे तो पित्तमूर्च्छा जानो.

कफमूर्च्छा लक्षण--प्रथम आकाश मेघाच्छादितसा दीख पडे, पश्चात् मूर्च्छा आवे; फिर कुछकाल पश्चात् संज्ञा प्राप्त होवे, शरीरपर जान पडे कि मैंने कुछ चर्म या गीला वस्त्र बोझलसा ओढाहै, मुखसे लार गिरने लगे, बार बार थूके तो कफमूर्च्छा जानो.

सन्निपातमूर्च्छा लक्षण--उक्त तीनों दोषोंके लक्षणयुक्त हो तो सन्निपात मूर्च्छा जानो. सो सन्निपातकी मूर्च्छा मनुष्यको अपस्मार (मिरगी) के समान गिरा देती है, परन्तु अपस्मारमें रोगीकी वीभत्स (भयानक) चेष्टा होजाती है, और सन्निपातमूर्च्छामें यह दशा नहीं होती. यह मूर्च्छा ६ प्रकार की मूर्च्छासे भिन्न होनेसे मूर्च्छामें नहीं गिनी जाती.

रक्तजामूर्च्छा लक्षण--जिसको रक्त देखतेही अथवा दुर्गन्धमात्रसे पृथ्वी आकाशभरमें अन्धकाररूपसे दृष्टि पडे, फिर थबराकर मूर्च्छा होआवे नेत्र तनजावें और भलीभाँति श्वास न आवे तो रक्तमूर्च्छा जानो.

मद्यमूर्च्छा लक्षण--अधिक मद्यपानसे मनुष्य कुछका कुछ बकता हुआ धरणीपर गिरपडे, संज्ञाहीन होके (जब तक मद न उतरजावे) हाथ पैर पीटता हुआ भूमिपर पडा रहता है और तृषा अधिक लगे तो मद्यमूर्च्छाजानो.

विषमूर्च्छा लक्षण--शरीर कम्पित हो, निद्रा अधिक आवे, प्यास विशेष लगे, संज्ञाहीन होजावे, मुख काला पडजावे और अतिसार होकर भोजनसे अरुचि होजावे तो विषमूर्च्छा जानो.

विशेषतः--मनुष्य जिस प्रकार मूर्च्छामें अचेत होजाता है, तैसेही भ्रम, तंद्रा, निद्रा और संन्यासमें भी संज्ञाहीन होजाता है, परन्तु इन चारोंके लक्षण मूर्च्छासे भिन्न रहते हैं अतए जुदे दर्शावेंगे तथापि ये मूर्च्छाके भेदही हैं.

भ्रमलक्षण--रजोगुण और वात पित्तके संयोगसे भ्रम होता है.

तन्द्रालक्षण--तमोगुण और वात कफके संयोगसे तंद्रा होती है.

निद्रालक्षण--तमोगुण और कफके मिलापसे प्राणियोंका मन और

दशों इन्द्रियां खेदित होकर अपने अपने विषयोंको त्याग कर देतीं हैं तब निद्रा आती है.

संन्यास लक्षण–त्रिदोषके वेगसे मनुष्यकी नाड़ी, देह, और मनकी क्रिया नष्ट होकर निर्बल पुरुषको संन्यासरोग उत्पन्न होता है, तब वह पुरुष पीडित होकर काष्ठ, तथा मृतक सदृश पडा रहता है. इस रोगपर वेगही चिकित्सा करनी चाहिये नहीं तो प्राणनाशमें कुछ विलंब नहीं है.

मदात्यय रोगोत्पत्ति–अति विरुद्ध नियमसे मदिरा (मद्य, दारु, ब्रांडी शराब) पानकरो तो मदात्ययरोग उत्पन्न होता है. क्योंकि जो गुणागुण विषमें हैं वही मद्यमें होते हैं, मद्य जो युक्तिसे सेवन किया जावे तो अमृतके समान लाभदायक होताहै तथा अयुक्तिसे पीवे तो विषसदृश प्राणनाशक होता है। जैसे नियत समयपर परिमित आहार करना अत्युपयोगी होकर रोगरहित बल वीर्ययुक्त रखता, परंतु कुसमयपर अप्रमाणसे भक्षितान्न रोगकारक तथा शरीरनाशक होजाता है. यथावत् विष और मद्य भी युक्तिसे रक्षक तथा अयुक्तिसे भक्षक ही होता है. अतएव जिन लोगोंकी जातिमें मद्यपानसे कुछ दोष न होवे तो वे निम्न लिखित शास्त्रोक्त नियमोंसे पानकरें तो मदात्ययरोग न होके शरीर आरोग्य रहेगा. परंतु जिन वर्णोंके लिये मद्यपान शास्त्रादिसे वर्जित है, वे उसके गुणोंकी ओर ध्यान देके कदापि इच्छा न करें नहीं तो स्वधर्मसे च्युत होकर अन्तमें नरकवासी होंगे अतएव मनुजी आदि ऋषिमुनियोंकी आज्ञा है कि, जो मद्यपान करनेवाले भी मद्यका त्याग करदें तो महापुण्यफलके विभागी होकर स्वर्गगामी होवेंगे.

मद्यपानविधि–प्रातःकाल स्नानादिक करके प्रसन्नचित्तसे २ टकेभर उत्तम मद्यपान करो, तदनंतर मध्याह्नकालमें घृत शर्करादि उत्तम व्यंजनके संसर्गसे ४ चार टकेभर मद्य पियो, तदनंतर सायंकालको भी प्रथम प्रहरमें भोजनके साथ ८ आठ टकेभर पियो और उत्तमोत्तम फल, दुग्ध-मलाई आदि पदार्थ भक्षणकरो तो सदा तरुण रहकर काम, तेज, बल, बुद्धि, स्मृति और हर्षादिक नित्यप्रति वृद्धिंगत होंगे और जो अन्यथा पियोगे तो बल बुद्धि, तेज, स्मृति, हर्ष, लज्जा और संज्ञाहीन तथा मदात्यय रोग, आलस्य, प्रलापादिसे पूरित होकर शरीरका नाश होजावेगा.

मदात्ययरोगोत्पत्ति–क्षुधित, सर्वदा अनियमित काल, प्रमाणहीन, आधिक्यता, क्रोध, भय, तृषा, श्रम, निर्बलता, मलमूत्रका वेग, खट्टे पदार्थ और उष्णतासे पीड़ित दशा इन बातोंके मिलापसे जो मदिरा सेवन करोगे तो मदात्यय, परमद, पानाजीर्ण तथा पानविभ्रमरोग होंगे मदात्ययरोगके चार भेद हैं १ वात, २ पित्त, ३ कफ और ४ सन्निपात, मदात्यय.

वातमदात्यय लक्षण–हिचकी, श्वास, शिरःकम्प, पार्श्वशूल, निद्राभाव और अतिप्रलाप (अनर्थ वाक्य कथन) करे तो वातमदात्यय जानो.

पित्तमदात्यय लक्षण–अति तृषा, दाह, ज्वर, पसीना, मोह अतिसार होवे चक्कर आवे और शरीर हरा पडजावे तो पित्तमदात्यय जानो.

कफमदात्यय लक्षण–अरुचि, खट्टा तथा सलोने भक्षित पदार्थयुक्त वमन हो, तन्द्रा, शरीरमें भारीपन हो तो कफमदात्यय जानो.

सन्निपातमदात्यय लक्षण–जिसमें वात, पित्त, कफ तीनोंके लक्षण मिश्रित हों, उसे सन्निपातमदात्यय जानो.

परमदरोग लक्षण–पीनस, शीश, अंगमें पीडा, शरीरमें भारीपन, मुखस्वादका नाश, मल मूत्रकी रुकावट, तंद्रा, अरुचि, प्यास हो तो परमद, रोग जानो.

पानाजीर्ण लक्षण–पेट अधिक फूले, वमन हो, दाह उठे और अजीर्ण हो तो पानाजीर्ण जानो.

पानविभ्रमरोग लक्षण–शीश, हृदय, अंगमें पीडा हो, कफ थूके, खसे धुआं निकले, मूर्च्छा हो, वमन आवे, ज्वर चढे और मद्य तथा मिठाई पर अरुचि हो तो पानविभ्रमरोग जानो.

मदात्ययके असाध्य लक्षण–रोगीका नीचेका ओष्ठ लटक जावे, शरीर ऊपर ठंढा होजावे, हृदयमें अतिदाह हो मुखमें तेलकी गंध आवे, जीभ दांत काले पडजावें, नेत्र काले लाल या पीले पडजावें, हिचकी आवें, ज्वर चढे, वमन होवे, पार्श्वशूल उठे, खांसी चले और चक्कर आवे तो असाध्य मदात्यय रोग जानो.

इति नूतनामृतसागरे निदानखण्डे तृषामदात्ययादिरोगाणां लक्षण निरूपणं नाम चतुर्दशस्तरंगः ॥ १४ ॥

दाह, उन्माद.

शरौषधीधवे चास्मिन् तरंगे हि यथाक्रमात्॥
दाहोन्मादरुजोर्नूनं निदानं लिख्यते मया॥ १॥

भावार्थ—अब हम इस १५ वें तरंगमें दाह और उन्मादरोगका निदान यथाक्रमसे लिखते हैं॥ १॥

दाहरोगोत्पत्तिकारण—१ पित्त, २ दुष्ट (विकारी) रुधिरवृद्धि, ३ कोठेमें शस्त्रादिकी चोट, ४ मद्यादिपान, ५ तृषावरोध, ६ धातुक्षय और ७ मर्म स्थानमें प्रहार लगनेसे दाहरोग उत्पन्न होता है. यह रोग उक्त सात कारणोंसे उत्पन्न होकर उक्त सातही विभागोंमें विभाजित किया गया है.

१ पित्तदाह लक्षण—सर्व लक्षण रोगीके शरीरमें पित्तज्वरकी नाईं उपस्थित हो तो पित्तदाह जानो.

२ रुधिरवृद्धिदाह लक्षण—सर्व शरीरमें दाह लगजावे, शरीरसे धुआं निकले, शरीर और नेत्रोंका वर्ण ताम्र सदृश (तांबेके समान) लाल हो जावे, मुखसे रक्तकी गंध आवे और सब अंग अग्निसमान जलने लगे तो दुष्टरुधिरवृद्धिदाह जानो.

३ कोठेमें शस्त्रकी चोटसे उत्पन्न दाह लक्षण—कोठा रुधिरसे भरा रहे, शरीरमें अति दुःसह दाह उठे तो उक्तदाह जानो, यह असाध्य प्राणान्तकहै.

४ मद्यपानदाह लक्षण—मद्यपानकी उष्णता पित्त और रक्तसे बढ़ी हुई त्वचामें प्राप्त होके भयंकर दाह उत्पन्न करती है, जिससे सर्व शरीर अत्युष्ण हो जाता है इसे मद्यकी दाह जानना चाहिये.

५ तृषावरोधदाह लक्षण—प्यास रोकनेसे शरीरकी जलसम्बन्धी द्रव (रस, रक्त आदि) धातुयें क्षीण होकर पित्तकी उष्णता बढ़जाती है इस लिये शरीर भीतर बाहरसे दग्धहोकर मनुष्य अचेत होजाता है तब उसका कंठ, तालु आदि सूखकर जीभ बाहर निकलके तडफडाने लगती है. इन लक्षणोंसे युक्त हो तो तृषावरोधदाह जानो.

६ धातुक्षयदाह लक्षण—रोगी, मूर्च्छा, तृषायुक्त होकर सूक्ष्म स्वर हो जावे और उठने बैठने तथा कार्यकी शक्ति न रहे तो धातुक्षयदाह जानो इस दाहसे बचना भी दुर्लभही है.

७ प्रहारजदाह—शिर, हृदय, मूत्राशय आदि मर्मस्थानमें चोट लगकर दाह उत्पन्न हो तो प्रहारजदाह जानो.

दाहके असाध्य लक्षण—ऊपरसे शरीर शीतल और रोगीके हृदयान्तरमें अत्यंत दाह हो तो असाध्य जानो.

उन्मादरोगोत्पत्तिकारण—प्रकृति विरुद्ध पदार्थ, अपवित्र भोजन और धतूरा, भाँग विषादि भक्षण, देवता, गुरु, ब्राह्मण, तपस्वी, राजा आदिका अपमान, भय तथा हर्षकी आधिक्यतासे मनुष्यका मन बिगडकर वातादि दोषयुक्त होजाता है. तब मनुष्यकी स्मरणशक्ति नाश होकर वह उन्मत्त (मदयुक्त, दिवाना, गहला, पागल, खफ्ती) हो जाता है.

उन्मादरोगभेद—यह रोग ६ प्रकारका होता है. अर्थात् १ वात, २ पित्त ३ कफ, ४ सन्निपात, ५ शोक, ६ विषोन्माद.

उन्मादस्वरूप—क्षीण पुरुषके विरुद्ध आहारसे त्रिदोष दूषित होकर बुद्धिके स्थान (हृदय) को बिगाड देते हैं. और मन प्रवाहिणी नाडियोंमें प्राप्त होकर मनुष्यके मनको मोहित (कार्याकार्यके विचार रहित= स्थिर) कर देते हैं. वह पुरुष (पागल) उन्मत्त कहाता है.

उन्मादरोगका पूर्वरूप—बुद्धि ठिकाने न रहे, शरीरका पराक्रम नाश होजावे, धैर्यता जाती रहै, दृष्टि स्थिर न रहै, भलीभाँति वार्तालाप न कर सके, हृदय सूना पडजावे, तो अनुमान करो कि, इसे उन्मादरोग होगा.

१ वातोन्माद लक्षण—रूखी या शीतल वस्तु भक्षण और विरेचनकी विशेषतासे धातु क्षीण होकर वादी बढजाती है, तब उस मनुष्यका हृदय बिगडकर स्मरण तत्काल नाश होजाता है. जो वह मनुष्य निष्कारणही हँसे, नाचे, गावे, रोवे, हाथ और मुखसे वानरकी नाईं चेष्टा दिखावे, शरीर कठोर, काला, या लाल, होजावे और भोजन करके पाचन हुए पर यह रोग भी बढे तो वातोन्माद जानो.

२ पित्तोन्माद लक्षण—अजीर्णपर भोजनकरने तथा कडुवा, खट्टा या उष्णपदार्थ खानेसे बढा हुआ पित्त हृदयको बिगाडकर उन्मादरोग उत्पन्न करता है. तब वह मनुष्य किसीकी बात नहीं मानता, नग्न होजाता, मारने लगता, इधर उधर भागता, शरीर पीला पडजाता, उष्ण वस्तुकी इच्छा

करता और मुख पीला पड़जाता है. जिस रोगीके ये लक्षण हों उसे पित्तोन्माद जानो.

३ कफोन्माद लक्षण—जो मनुष्य अधिक खाकर श्रम नहीं करते उनके पित्तसहित कफ बढ़कर हृदयमें प्रविष्ट होजाते हैं. और चित्तके बिगाड़से बुद्धि, स्मृति नष्ट करके मनुष्यको उन्मत्त कर देते हैं जो रोगी अल्प भाषण करे, क्षुधारहित होजावे, निद्रा, स्त्री और एकान्त स्थान,अतिप्रिय लगे, वमन हो, बलहीन होजावे और मुखादिक श्वेत होजावें तो कफोन्माद जानो.

४ सन्निपातोन्माद लक्षण—उक्त तीनों (वात, पित्त, कफ) दोषोंके लक्षण हों तो सन्निपात (त्रिदोष) उन्माद जानो.

५ शोकोन्माद लक्षण—राजा, प्रबलशत्रु, चोर अथवा सिंहादिक भयंकर जीवोंका भय, धन, बन्धु (पुत्र, कलत्र, भ्रातादि) का विछोह, मैथुनके लिये इच्छित स्त्रीकी अप्राप्ति और कामशांतिमें बाधा पड़नेके कारणसे शोक और दुःख होकर उन्मादरोग होता है, जो रोगी विचित्र बातें करने लगे, मनका अभिप्राय यथार्थरूपसे प्रदर्शित करनेकी संज्ञा न रहे. कभी गावे, कभी हँसे और कभी रोवे तो शोकोन्माद जानो.

६ विषोन्माद लक्षण—नेत्र लाल हों, दीन होजावे, शरीरका बल तथा इन्द्रियोंकी कान्ति नाश होजावे और मुख श्याम पडजावे, जो ये लक्षण हों तो विषभक्षणका उन्माद जानो इससे बचना दुर्लभ है.

उन्मादरोगके असाध्यलक्षण—जो रोगी नीचा मस्तक या ऊंचा मुख रक्खे शरीरका बल और मांस नाश होजावे, निद्रा न आवे. वरन् जागताही रहे तो वह उन्मादरोगी मर जावेगा.

इति षड्विधो उन्मादरोगनिदानं समाप्तम् ।

अब हम इसके अनंतर भूतोन्मादादि ब्रह्मराक्षसोन्मादपर्यंत १६ विशेष उन्मादोंका निदान लिखते हैं.

१ भूतोन्माद लक्षण—भूत लगे हुए रोगीकी वाणी, चेष्टा, पराक्रम और ज्ञानाज्ञान यथास्थित न रहकर विचित्र ढंगका ही रहता है, परंतु मनुष्यत्वसे कुछ विरुद्ध नहीं होजाता है.

२ देवोन्माद लक्षण–जो रोगी सब बातोंसे संतुष्ट, पवित्र और ब्रह्मण्य (शीलस्वभावादि ब्राह्मणके नवगुण युक्त) रहे, सुन्दर पुष्पोंकी माला और सुगंधित (गंध, चंदनादि) पदार्थ धारण करता रहे, नेत्र न मींचे, विनपढे भी संस्कृत गद्य पद्य भाषण श्लोक और वार्ता करनेलगे, शरीरका तेज बढता जावे और अन्य लोगोंको इच्छित वरदान देनेलगे, तो शरीरमें देवता प्रवेश होनेका उन्माद जानो.

३ असुरोन्माद लक्षण–रोगीके शरीरमें पसीना न निकले, ब्राह्मण, गुरु देवतामें दोषबतावे, दृष्टि कुटिल होजावे, किसीप्रकार के कहनेका भय न लगे, कुमार्गमें प्रीति बढे, किसी वस्तुसे तृप्ति न हो भोजनादिमें दुष्टात्मा हो, तो असुर प्रवेशका उन्माद जानो.

४ गंधर्वोन्माद लक्षण–दुष्टात्मा हो पुष्पवाटिकामें निवास स्वीकार करे, गाना, बजाना, नृत्यमें प्रीति हो, अल्पभाषी हो और आचार[1]में मन लगा-रहे, तो गन्धर्वोन्माद जानो.

५ यक्षोन्माद[2]लक्षण–नेत्र लाल हो, मलिन तथा रक्तवस्त्र धारण करे, अपना अभिप्राय दर्शित न करे, तेजयुक्त हो शीघ्रतासे चले, सहनशील हो और " किसको क्या दूं " ऐसा कहता रहे तो यक्षोन्माद जानो.

६ पितृजोन्माद लक्षण–जो मनुष्य दर्भ (डाभ=एक प्रकारका घास=कुश) पर अपने पितरोंको सर्वदा पिंडा देता रहे शांतस्वभाव हो दाहिने कांधे पर अँगोछा धरके पितरोंके अर्थ तर्पण करता रहे, सदा पितृभक्तिमें लगा रहे और मांस, गुड़ क्षीर आदिके भक्षणकी इच्छा रक्खे तो पितृजोन्माद जानो.

७ सर्पोन्माद[3] लक्षण–सर्पग्रहग्रहीत मनुष्य कभी सर्पके सदृश लोट-जावे, कभी, सर्पके सदृश जीभसे गलफरा चाटे, क्रोध करे, गुड़, दूध, मधु क्षीर, इनके भक्षणकी इच्छाकरे तो सर्पोन्माद जानो.

---

१ शिष्टजन महात्माओंने जो रीति स्वीकार की सो आचार कहाता है।

२ यक्षोन्माद और गन्धर्वोन्मादके लक्षण पूर्वामृतसागरमें समानही लिखेथे परन्तु वे परस्पर जुदे है, अतएव यह हमने यक्षोन्मादलक्षण माधवनिदानसे लिखे है।

३ सर्पोन्मादभी पूर्वामृतसागरमें नहीं था: इसलिये माधवनिदानसे लिखा है।

राक्षसोन्मादलक्षण–जो मांस, रक्त, तथा मद्यकी इच्छा करे, निर्लज्जता, निष्ठुरता, शूरता, क्रोध, अपवित्रता, बलकी विशेषता हो और रात्रिमें विचरता रहे, तो राक्षसोन्माद जानो.

९ पिशाचोन्माद लक्षण–ऊपरको हाथ किये रहे, मनमानी बकवाद करे, शरीरमें दुर्गंधि, अपवित्रता, लालच, चंचलत्ता रहे, बहुत खावे, उद्यान (निर्जन वन) में निवासकी इच्छा करे, रोता हुआ नाना प्रकारकी चेष्टा करे तो पिशाचोन्माद जानो.

सूचना–ये नवों उन्माद निदानग्रंथोंसे लिखे हैं। अब इसके आगे पूर्वामृतसागरसे लिखते हैं.

१ सतीदोषोन्मादलक्षण–निश्चल मन न रहे, निस्सन्तान होजावे, सतीका इतिहास (प्राचीन कथा) सुननेकी रुचिकरे, मौन होजावे यदि बोले तो वरदान देवे, पवित्रतापूर्वक उत्तमवस्तुओंमें मन लगावे, तो सती दोषोन्मादलक्षण जानो.

२ क्षेत्रपालदोषोन्मादलक्षण–मुख और नाकसे रुधिर गिरे, मस्तकमें श्मशानकी भस्म डाले, खोटे स्वप्न देखे, पेट और सन्धियोंमे पीडा हो चित्त स्थिर न रहे, तो क्षेत्रपालदोषोन्माद जानो.

३ देव्युन्मादलक्षण–पक्षाघात हो, शरीर और रुधिर सूख जावे, मुख और हाथ पाँव टेढे हो जावें, क्षीण देह होजावे, और स्मरणका अभाव हो जावे, तो देव्युन्माद जानो.

४ कामनउन्मादलक्षण–कांधे और मस्तक भारी रहें, मन स्थिर न रहे, क्षीणाङ्ग होजावे, नाक, आँख, हाथ और पाँवमें दाहहो, वीर्य न्यून पड़ जावे, शरीर सूखकर सुई चुभानेके समान पीडा हो, तो कामन (जादू) का उन्माद जानो.

५ शंखिनी, डंकिनी, दोषोन्माद लक्षण–सर्वांगमें पीडा हो, नेत्र बहुत दूखैं, मूर्च्छा हो, शरीर कँपै, रोवे, हँसे, प्रलाप करे, भोजनमें अरुचि, स्वर भंग हो शरीरका बल और क्षुधा नाश होजावे, ज्वर चढे, चक्कर आवे तो शंखिनी, डंकिनी (डाकन) दोषोन्माद जानो.

६ प्रेतोन्माद लक्षण–जो मनुष्य प्रातःकालही घरसे उठउठ कर भागे,

१ देव्युन्माद–देवीका उन्माद जिसे मारवाडमें विजासनीदेवी अथवा मावल्यांभी कहते हैं।

कुवाच्य भाषण करे, बहुत चिल्लावे, शरीर कँपे, रोवे, खाने, पीनेसे अभाव हो और लम्बी २ श्वासें छोडे तो प्रेतोन्माद जानो.

ब्रह्मराक्षसोन्माद लक्षण--देव, ब्राह्मण, गुरुसे द्वेष रक्खे. आप स्वयं वेदवेदान्तादिसे ज्ञाता हो, स्वयं अपने शरीरको पीडित करै, पर नाश न करे तो ब्रह्मराक्षसोन्माद जानो.

सूचना--ये सातों उन्माद पूर्वामृतसागरसे लिखे हैं परन्तु माधवनिदानमें नहीं लिखे गये हैं.

उन्मादरोगके असाध्य लक्षण--नेत्र फटेसे होजावे, सदा इधर उधर गिरे, घूमता रहे, मुखसे फेन, निद्रा अधिक आवे, खडे खडेही कम्प आकर गिरपडे, तो असाध्योन्मादरोग जानो.

उन्मादप्रवेशकाल--१ उक्तलक्षणयुक्त उन्माद पूर्णमासीको हो तो देवोन्माद, संध्यासमय हो तो भूतोन्माद तथा असुरोन्माद, अष्टमीको हो तो गन्धर्वोन्माद, प्रतिपदाको हो तो यक्षोन्माद, अमावास्याको हो तो पितरोन्माद, पंचमीको हो तो सर्पोन्माद, चतुर्दशीकी रात्रिको हो तो राक्षसोन्माद, तथा पिशाचोन्माद, जानो.

उन्मादनिवृत्तिकाल--जो जो तिथि और समय जिस जिस उन्मादके प्रवेशका कहा गया है,वही वही काल उनके बलिप्रदान तथा शमनकाभी जानना चाहिये.

शंका--आपने देवोन्मादादिमें यह दर्शित किया कि, मनुष्यके शरीरमें इनका प्रवेश होता है, तो शरीरमें समाते हुए वे हमको दीखते क्यों नहीं हैं, प्रवेश हों तो दीखना चाहिये.

समाधान--सुनियेगा--जिस प्रकार दर्पण या जलमें तुम्हारे शरीरका प्रतिबिम्ब, शरीरमें शीतोष्णता और कान्तिमणि तथा सूर्यमुखी काँचमें सूर्यकिरणें प्रवेश होते दृष्टि नहीं-पडती हैं परंतु यथार्थमें प्रवेशित होकर अग्निको उत्पन्न करती हैं और तुम्हारे शरीरका बिम्बभी तुम ज्योंका त्यों देखते हो. तिसी प्रकार देवग्रहादिभी मनुष्यके शरीरमें प्रवेश होते हुए नहीं दीखते. परन्तु प्रवेश होके उन्मादको उत्पन्न कर नाना प्रकारकी चेष्टा दिखाते हैं.

इति नूतनामृतसागरे निदानखण्डे दाह उन्मादरोगलक्षणनिरूपणंनाम पंचदशस्तरंगः १५

अपस्मार, वातरोगाः ।

अपस्मारस्य रोगस्य वातजानां यथाक्रमात् ॥
रसौषधीशे भङ्गेस्मिन् निदानं लिख्यते मया ॥ १ ॥

भाषार्थ–अब हम इस १६ सोलहवें तरंगमें मृगी और बादीसे उत्पन्न होनेवाले रोगोंका निदान यथाक्रमसे लिखते हैं.

अपस्मार (मृगी) रोगोत्पत्ति कारण–चिन्ता, शोक आदिसे कुपित हुए वात, पित्त, कफ हृदयकी नसोंमें प्राप्त होके स्मरणमात्रको नाश कर-देते हैं, इस दशाको लोकमें मृगीरोग कहते हैं.

अपस्मार भेद–यह रोग चार प्रकारका है. अर्थात्–१ वातज, २ पित्तज, ३ कफज, और ४ सन्निपातज.

अपस्मार पूर्वरूप–हृदय कम्पे, शून्य होजावे, पसीना निकले, एक ध्यान लगजावे, मूर्च्छा आजावे, निद्रा न आवे और ज्ञाननाश होजावे तो अनुमान करो कि, इस मनुष्यको अपस्माररोग उत्पन्न होगा.

अपस्मार सामान्यरूप–अन्धकारमें प्रवेश हुआसा जानपड़े, नेत्र घूम जावें, शरीर मटके (हिले) हाथ पैर और अंग फेंकताहुआ मूर्च्छित होकर धरणीपर गिरपडे तो अपस्मार प्राप्त हुआ जानो.

१ वातापस्माररोग–कम्प आवे, दां किरकिरावे, मुखसे फेन गिरे, श्वास वेगसे चले, काले पीलेसे कुछ आकार रोगीकी दृष्टिमें आवें तो वादीकी मृगी जानो.

२ पित्तापस्मारलक्षण–मुखसे पीला फेन गिरे, त्वचा, मुख, नेत्र पीले पडजावें. तृषा अधिक लगे, सर्वांग उष्ण होजावें, पीला पीलासा दीखे और समस्त जगत्मात्रमें अग्नि व्याप्त देख तो पित्तकी मृगी जानो.

३ कफापस्मारलक्षण–मुखसे श्वेत फेन गिरे, शरीरकी त्वचा, नेत्र, मुख श्वेत होजावें, जाडा लगे, रोमांच हो आवे और सर्व जगत्मात्रमें श्वेतही श्वेतसे पदार्थ दृष्टि पडें तो श्लेष्मिक अपस्मार जानो.

सन्निपातापस्मारलक्षण–पूर्वोक्त दोनों दोषोंके लक्षण हों तो सन्निपात (त्रिदोषज) मृगी जानो.

असाध्यापस्मारलक्षण–भौंहें चढजावें और नेत्र फिरजावें तो असाध्यापस्मार जानो, यह रोगी

अपस्मार प्राप्तकाल निर्णय–बारहवें दिन वातापस्मार, पंद्रहवें दिन पित्तापस्मार और तीसवें दिन कफापस्मार प्राप्त होताहै, परन्तु उक्त नियमसे कुछ न्यूनाधिक कालमें भी प्राप्त हो सक्ते हैं जिस प्रकार नियत कालमें उत्पन्न होनहार वनस्पति अन्नादि भी आगे पीछे उत्पन्न हुआ करते हैं उसीप्रकार मृगीभी कभी कभी अपने सूचित कालसे आगे पीछे होती है परन्तु उसका समय पूर्ण विपर्यय नहीं होता है.

वातव्याधि रोगोत्पत्ति कारण–कसैले, कडुवें, तीक्ष्ण, रूखे पदार्थ खानेसे, स्वल्प, शीतल ठंढा (बासी) भोजन करनेसे, परिश्रम मैथुन, धातु क्षीणता, शोक, भय, मांसक्षीणता, वमन, विरेचन, आमदोष, मल वेगावरोध, वृद्धपन, लंघन, जलक्रीडा और प्रहार इनकी विशेष प्रबलतासे, तथा वर्षाऋतु व तीसरे प्रहर व १ प्रहर रात्रि शेष रहनेके समय बलवान् वायु कुपित होनेसे शरीरकी खाली नसोंमें प्रवेश होकर (एक तथा सर्वांगमें रहनेवाले) रोगोंको उत्पन्न करती है. जिनके निम्न लिखित ८४ चौरासी भेद हैं.

शुद्धनाम.	व्यवहारीनाम
१ शिरोग्रहरोग,	मस्तकका दुखना.
२ अल्पकेशरोग,	छोटे बालरहना.
३ जृंभादिकरोग,	अधिक जमुहाई आना.
४ हनुग्रहरोग,	ठुड्डी न हिलना.
५ जिह्वास्तंभरोग,	जीभ न हिलना.
६ गद्गद्‌रोग,	अटककर बोलना.
७ अल्पभाषणरोग	धीरेधीरे बोलना.
८ मूकरोक,	गँगापन.
९ प्रलापरोग,	कुछका कुछ बोलना.
१० वाचालरोग,	अधिकबोलना.
११ नीरसरोग,	जिह्वाकास्वाद नाशहोना
१२ बधिररोग,	बहिरापन.
१३ कर्णनाद,	कानोंमें घरघरशब्दहोना
१४ त्वक्शून्यरोग,	शरीरकोस्पर्शज्ञाननरहना
१५ अर्दितरोग,	मुखएक ओर टेढाहोना
१६ मन्यास्तंभरोग,	ग्रीवा न मुडना.
१७ बाहुशोषरोग,	भुजा सूखजाना.
१८ अपबाहुकरोग,	भुजा न मुडना.
१९ चर्चितरोग,	*
२० विश्वाचीरोग,	उँगलियोंके नीचेखुजाल
२१ ऊर्ध्ववातरोग,	अधिक डकार आना.
२२ आध्मानरोग,	अफरा (पेटफूलना.)
२३ प्रत्याध्मानरोग.	नाभिसे पेटतक फूलना.
२४ वाताष्ठीलारोग,	नाभिकेनीचेगुठलीहोना
२५ प्रत्यष्ठीलारोग.	नाभिकेनीचेपीडायुक्तगु.
२६ तूनीरोग,	गुदा और लिंगकीपीडा.
२७ प्रतितूनीरोग,	मूत्राशयकी पीडा
२८ विषमाग्निरोग,	अनियमित पाचनशक्ति
२९ आक्षेपरोग,	पेट की नसोंका तनाव.
३० पार्श्वशूलरोग,	पसली दुखना.
३१ पृष्ठशूलरोग,	पीठकी पीडा.
३२ बहुमूत्ररोग,	अधिकमूत्र रोग

* चर्चित अभिलाषिक और लोद इन तीनो रोगोंके व्यवहारी नाम नहीं पाये जातेहैं ।

शुद्धनाम.	व्यवहारीनाम.
३३ वस्तिवातरोग,	मूत्र रुक जाना.
३४ मलदृढता,	कठिनमल होजाना.
३५ मलावरोध,	मल न उतरना.
३६ गृध्रसीरोग,	मंदगतिहोजाना.
३७ कलायखंजरोग,	कंपितगति होना.
३८ खंजरोग,	लगडापन.
३९ पंगुरोग,	पँगुलापन.
४० क्रोष्टुशीर्षकरोग,	घुटनेकी पीडा.
४१ खल्लीरोग,	पाँव हाथ मुडजाना,
४२ वातकंटकरोग,	घुसुकुरोंकी पीडा.
४३ पादहर्षरोग,	झिनझिनी.
४४ पाददाहरोग,	पावोंमें जलन पडना.
४५ आक्षेपरोग,	शरीर डुगना (डुलना)
४६ दंडकरोग,	काष्ठसदृश.
४७ वाताक्षेपरोग,	वातसे शरीर डुगना.
४८ पित्ताक्षेपरोग,	पित्तसे शरीर डुगना.
४९ दंडापतानकरोग,	सूखेकाष्ठसमानपडे रहना
५० अभिवाताक्षेपक रोग.	शरीर डुगते चोटसी लगना.
५१ अंतरायामरोग,	नेत्रोंका खिंचाव.
५२ बाह्यायामरोग,	पीठकी नसोंका खिंचाव
५३ धनुर्वात,	शरीर कमानकेसमानहोजाना
५४ कुब्जकरोग,	कुबडापन.
५५ अपतन्त्ररोग,	शरीरकेझुकाव सहित. नेत्रफटना.
५६ अपतानरोग,	केवलनेत्रफटान.
५७ पक्षाघातरोग,	लकवा मारजाना.

शुद्धनाम	व्यवहारीनाम.
५८ अभिलषिकरोग,	×
५९ कम्परोग,	शरीर काँपना.
६० स्तम्भरोग,	शरीर जकडना.
६१ व्यथारोग,	शरीर चटकना.
६२ लोदरोग,	×
६३ मेदरोग,	मेदका बढ़ना.
६४ स्फुरणरोग,	अंगफरकना.
६५ रूक्षता,	रूखापन.
६६ श्यामतारोग,	कालापन.
६७ क्षीणतारोग.	दुबलापन.
६८ शीतलतारोग,	शरीर ठंढा रहना.
६९ रोमाञ्चरोग,	पुलकित शरीर होना.
७० अंगमर्दरोग,	हडफूटन होना.
७१ अंगविभ्रमरोग,	अंगभ्रांति.
७२ स्नायुसंकोच,	नसोंका सिमिट जाना.
७३ अंगशोषरोग,	शरीरसूखजाना.
७४ भयरोग,	डरना.
७५ उन्मादरोग,	पागलपन.
७६ मोहरोग,	असावधानी.
७७ निद्रानाश,	नींदनआना,
७८ स्वेदभाव,	पसीना न निकलना.
७९ बलक्षीणरोग,	निर्बलता-नाताकती.
८० वीर्यनाशरोग	धातुक्षीणहोना,
८१ रजोधर्मरोग,	स्त्रीको मासिकरजप्राप्ति,
८२ गर्भनाशरोग,	गर्भगिरजाना.
८३ अश्रमश्रम,	विनाश्रमथकजाना.
८४ श्रमनाश,	थकावट दूर होना.

ये चौरासी प्रकारके वातरोग हैं जिनमेंसे मुख्य मुख्यके निदान लक्षण आगे लिखते हैं.

शिरोग्रहरोगलक्षण—कुपित हुआ वात रक्तमें प्रवेश होके मस्तकको धारण करनेवाली नसोंको रूखी पीडायुक्त और काली करके मस्तकको जकड़ देता है इसे शिरोग्रहरोग कहते हैं. यह असाध्य है.

अल्पकेशरोगलक्षण–रोमकूपस्थ वायु कुपित होके उस स्थान (बालों-के रंध्र=छिद्र) की नसोंको निर्बल करदेता है इसलिये वहाँ थोड़े बाल निकलते हैं इसे अल्पकेशरोग कहते हैं इस रोगमें मुख्य कारण निर्बलताही है. जृम्भादिकरोगलक्षण–प्रथम मुखकी एक श्वासको मुखहीमें पीकर तदनंतर उसी श्वासको मुखद्वारा बाहर निकालनेको जमुहाई कहते हैं और जमुहाईकी बहुतायतको जृम्भाधिकरोग कहते हैं.

हनुग्रहरोगलक्षण–दतौनके चीरनेसे जिह्वाको अधिक घिसनेसे अधिक चबेना खाने और किसी प्रकार चोट लगनेसे डाढ़ीकी जडमें रहनेवाला वायु कुपित होके मुखको खुला या मूँदाही रख देता तब उस मनुष्यके खाने बोलनेमें अतिकष्ट पडता है इसे हनुग्रहरोग कहते हैं.

जिह्वास्तम्भरोगलक्षण–शब्दको प्रवृत्त करनेवाली नसोंमें रहनेवाली वायु कुपित होनेसे जीभको खींचकर स्थिर (जैसीकी तैसी) रख देता है तब मनुष्य खाने, पीने, बोलनेसे असमर्थ होजाता है इसे जिह्वास्तम्भ रोग कहते हैं.

इति नूतनामृतसागरे निदानखण्डे अपस्मारवातव्याधिरोगलक्षण निरूपणंनाम षोडशस्तरंगः ॥ १६ ॥

वातोद्भवरोगाः।

भंगेचास्मिँल्लिख्यतेसप्तचंद्रे रोगाणांवै कारणं वातजानाम् ॥ मान्यान्ग्रंथान्सुश्रुतादीन्विचार्य ज्ञाने येषां सन्ति वैद्यास्सु वैद्याः ॥ १७ ॥ सुपूज्याःपाठोवा ॥ शालिनीवृत्तमिदम् ॥ इति.

भाषार्थ–अब हम इस सत्रहवें तरंगमें वातरोग (बादीसे उत्पन्न होने-वाले रोगों) का निदान माननीय सुश्रुतादि ग्रंथोंको विचारके लिखते हैं. जिन वातरोगोंका पूर्णज्ञान होनेसे वैद्य सुवैद्य (सुन्दर वैद्य, सब वैद्योंमें पूज्य, सत्कारपात्र) होजाता है. किम्वा जिन सुश्रुतादि प्राचीन ग्रंथोंके बोधसे वैद्य सुवैद्य होजाता है.

---

१ इस रोगका निदान पूर्वामृतसागरमें नहीं लिखाहै, परन्तु हमने "स्थानानामनुरूपैश्च लिंगैः शेषान् विनिर्दिशेत्" इस श्लोकके आशयसे लिख दिया है।

त्वचाशून्यरोगलक्षण—जिस पुरुषको शीत, उष्ण, कोमल, कठोर आदिका स्पर्शज्ञान नष्ट होजावे उसे त्वचाशून्यरोग जानो.

अर्दितरोगलक्षण—अत्यन्त दीर्घ शब्दसे बोलने, कठिन पदार्थ खाने, जमुहाई लेते समय हँस देने, ऊंची, नीची गर्दन करके सोने, मस्तकपर अधिक बोझा उठाने इत्यादि कारणोंसे मस्तक, नाक, ओंठ, ठुड्डी, ललाट और नेत्रकी संधियोंमें रहनेवाली वायु कुपित होनेसे मुखको किसी एक ओर टेढ़ा करके अर्दितरोग उत्पन्न करती है, जिससे ग्रीवा सहित मुख टेढ़ा होकर मस्तक हिलता रहता है, बोलते नहीं बनता, नेत्रादिक विकृत होजाते और मुख जिस ओर टेढ़ा होता उसी ओरको गर्दन, ठुड्डी, दाँत और पार्श्वशूलमें भी पीडा होती है, जिस रोगीको ये लक्षण हों उसे अर्दितरोग जानो. सो यह रोग तीन प्रकारका है अर्थात् १ वातज २ पित्तज ३ कफज.

१ वातार्दितरोगलक्षण—लार अधिक गिरे, शरीरमें अधिक पीडा हो. शरीर कम्पित हो, शरीर फर्के, ठुड्डी न मुडे और ओंठ सूजजावे तो वातार्दितरोग जानना चाहिये.

२ पित्तार्दितरोगलक्षण—मुख पीला पडजावे, ज्वर चढ़े और तृषा अधिक लगे तो पित्तार्दितरोग जानो.

३ कफार्दितरोग लक्षण—अधिक मोह हो, कंठ, शीश, गर्दन इन तीनों, स्थानोंमें शोथ हो और ये तीनों अंग स्तब्ध होजावें तो कफार्दितरोग जानो.

असाध्यार्दितरोग लक्षण—क्षीण पुरुष जिसकी पलक न लगे, बोली स्पष्ट बूझ न पड़े, जीभ, नाक, नेत्रसे जल बहतारहे, कँपतारहे और जो ३ वर्षसे अधिक अवधि होगई हो तो यह नहीं सुधरेगा.

मन्यास्तम्भरोगलक्षण—दिनमें अधिक सोने और अधिक बैठे रहनेसे विकारको प्राप्त हुआ कफ वायुसे मिलके ग्रीवाको नहीं मुडने देता, इसे मन्यास्तम्भरोग कहते हैं.

बाहुशोषरोगलक्षण—कांधेमें रहनेवाला वायु कुपित होनेसे भुजा स्तब्ध होकर सूख जाती है इसे बाहुशोषरोग कहते हैं.

अपबाहुकरोगलक्षण—भुजाकी नसोंमें रहनेवाला वायु कुपित होनेसे

नसोंको संकुचित (इकट्ठी) करके भुजाको स्तम्भित कर देता है, इसे अपबाहुक या भुजास्तम्भ रोग कहते हैं.

विश्वाचीरोगलक्षण--हाथकी अँगुलियोंके नीचे खुजाल चले तथा भुजाके पीछे खुजली होकर भुजाको निरुपयोगी करदेवे तो विश्वाची रोग जानो.

ऊर्द्ध्ववातरोगलक्षण--कुपथ्य सेवनसे अधोवायु कुपितहोके कफयुक्त होकर बारंबार डकार उत्पन्न करती है इसे ऊर्द्ध्ववायुरोग कहते हैं.

आध्मानरोगलक्षण--पेटमें अफरा चढ़जावे, पीड़ा हो, मूलद्वारकी पवन (वायुसरण) बंद होजावे तो आध्मानरोग जानो.

प्रत्याध्मानरोगलक्षण--पार्श्वभाग तथा हृदयपर तो अफरा न हो केवल नाभिस्थानसे पेटमात्रपरही अफरा हो तो प्रत्याध्मानरोग जानो.

वातष्ठीलारोगलक्षण--नाभिके नीचे अचल या (सचल) गुल्मीके सदृश गोल ऊपरकी ऊंची, इधर उधर नीची और दृढ़ एक गठान (गांठ) उत्पन्न होती है जिससे मल मूत्र रुक जाता है इसे वातष्ठीलारोग कहते हैं.

प्रत्यष्ठीलारोगलक्षण--वही वातष्ठीला पीड़ायुक्त, मल, मूत्र तथा अधोवायु प्रतिबंधक और पेटमें तिर्छीदरोग हो तो प्रत्यष्ठीलरोग जानो.

तूनीरोगलक्षण--मलमूत्राशयमें रहनेवाली वायु कुपित होकर गुदा और लिङ्गेन्द्रियमें पीडा उत्पन्न करे उसे तूनीरोग कहते हैं.

प्रतितूनीरोगलक्षण--गुदा और लिंगमें रहनेवाली वायु गुदा और लिंगको पीडा करती हुई पेडू (नाभिके तलेका स्थान) में पीडा उत्पन्न करे उसे प्रतितूनीरोग कहते हैं.

त्रिकशूलरोगलक्षण--कटि कमर की तीनों हड्डी, पीठकी तीनों हड्डी और बांसमें[1] पीडा उत्पन्न हो उसे त्रिकशूल जानो.

बस्तिवातरोगलक्षण--मूत्राशयमें रहनेवाला वायु कुपित होनेसे मत्रको रोकके[2] नानाप्रकारके रोग उत्पन्न करे उसे बस्तिवात कहते हैं.

---

१ पीठकी समस्त सूक्ष्म अस्थियोंको धारणकरिणी दीर्घास्थि [बडी हड्डी] जिसे पीठकी "नागन" भी कहते है ।

२ बस्तिवातमें या तो मूत्र बूंद २ करके उतरता है, या पूर्णरूपसे बंदही होजाता है इसीलिये चिकित्साखण्डमें दोनोंप्रकारकी चिकित्साभी जुदी २ वर्णन कीगई है.

गृध्रसीरोगलक्षण—यह रोग पहिले कूले फिर क्रमशः कमर, पीठ, जाँघें, घुटने, पिंडुरी और पाँवमें प्राप्त होकर पैरोंको जकड देता, सुई चुभानेके सदृश वेदना करता, तथा कम्प उपजाता और पाँवकी गति मंद कर देता है ये लक्षण हों तो गृध्रसीरोग जानो. यह दो प्रकारका होता है. अर्थात् १ वात और २ वातकफसे उत्पन्न हुआ.

१ वातगृध्रसीरोगलक्षण—अधिक पीडा हो, शरीर टेढा होजावे, जाँघें घुटने और संधियोंमें स्तम्भ तथा फूटन हो तो वातगृध्रसी रोग जानो.

२ वातगृध्रसीरोगलक्षण—शरीर भारी होजावे, अग्नि मंद पड़जावे और मुखसे लार अधिक गिरै तो वातकफगृध्रसी रोग जानना चाहिये.

इति नूतनामृतसागरे निदानखण्डे वातरोगलक्षण निरूपणंनाम सप्तदशस्तरंगः ॥ १७ ॥

वातोद्भवरोगाः ।

हेतुं गदानां हि समीरजानां पीयूषसिन्धौ लिखितम्पुराणे ॥ भंगेलिखाम्यत्रयथाष्टचंद्रे लोकोपकाराय सुभाषयाहम् ॥१८॥

इन्द्रवज्रेयम्.

भाषार्थ—अब हम इस अठारहवें तरंगमें वातोद्भव रोगोंका निदान प्राचीनामृतसागरकी पद्धतिसे मनुष्योंके लाभके लिये सुन्दर नागरी भाषामें लिखते हैं.

खंजरोग लक्षण—कमरमें रहनेवाला वायु जाँघोंकी नसोंको पकड़के १ पाँवको स्तम्भित कर देता है उसे लगड़ापन कहते हैं.

पंगुरोगलक्षण—कमरमें रहनेवाला वायु जाँघोंकी नसोंको ग्रहण करके दोनों जाँघोंकी नसोंका नाश कर देता है तब मनुष्य चलनेसे असमर्थ होजाता है उसे पंगुरोग कहते हैं.

कलायखंजरोग लक्षण—संधियोंकी बंधनरूपी नसें ढीलीं पडजानेसे मनुष्य कम्पित होकर लँगडाते हुए चलता है उसे कलायखंजरोग कहते हैं.

क्रोष्टुशीर्षकरोग लक्षण—घुटनोंमें बादी और रक्तविकारसे शोथ होवे, विशेष पीडा होवे और घुटने शृगाल (स्यार) के मस्तक सदृश कठोर होजावें तो क्रोष्टशीर्षकरोग जानो.

खल्लीरोग लक्षण–पैर, पिंडुरी, जांघैं और पहुँचे मरोडे खाजावें, तो खल्लीरोग जानो.

वातकंटकरोग लक्षण–ऊँचे नीचे स्थानमें पाँव रखनेसे श्रम ज़ान पड़े और पाँवकी गट्टियोंमें पीड़ा हो तो वातकंटकरोग जानो.

पाददाहरोग लक्षण–वात, पित्त और रक्त तीनों युक्त होकर पादतल (पगतली, तलुवों) में दाह (जलन) उत्पन्न करते हैं उसे पाददाह कहते हैं.

पादहर्षरोग लक्षण–दोनों या एक पाँव झनझन करके सोजावें और दाबने या झटकन देनेसे पुनः पूर्ववत् जग उठें (झनझनाहट मिटकर अच्छे होजावें) उसे पादहर्ष (या झिनझिनी चढ़ना) रोग जानो.

आक्षेपकरोग लक्षण–वायु कुपित होके रक्तप्रसारणी सर्वनाड़ियोंमें प्राप्त होता है तब वारम्वार चलित होके शरीरको हिलाता है उसे आक्षेपकरोग कहते हैं.

विशेषतः–चोट लगनेसे वायु कुपित होकर आक्षेप उत्पन्न हुआ हो तो साध्य और अन्यथा कारणसे हो तो असाध्य जानो.

अंतरायामरोग लक्षण–पैरकी अँगुली, एँडी, पेट, हृदय, छाती और गलेमें रहनेवाला वायु वेगयुक्त होकर नसोंके समूहको खींच लेता है तब मनुष्यके नेत्र, ठुड्डी और पँसुली स्तब्ध होकर मुखसे आपही आप कफ गिरता और दृष्टिभ्रमसे आगेको धनुषाकार बना हुआ दीखता है जो ये लक्षण हों तो अन्तरायामरोग जानो.

बाह्यायामरोग लक्षण–जिसप्रकार अन्तरायाममें वायु आगेकी नसोंमें प्राप्त होकर आगेको झुका देता है, उसीप्रकार बाह्यायाममें वायु पीछेकी सर्व नसोंमें निवास करता हुआ कुपित होकर पीछेको नवा (झुका) देता है. जिसमें कमर, पँसुरी और जाँघोंकी नसैं टूटजावें उसे असाध्य बाह्यायाम जानना चाहिये.

धनुस्तम्भरोग लक्षण–जिसका शरीर धनुष (कमान) के सदृश होजावे, शरीरका वर्ण पलट जावे, मुख मूँद (बँध) जावे, देह शिथिल होजावे, चैतन्यता न रहे और पसीना भी निकलै तो धनुर्वात जानो. इस रोगमें रोगीको जीनेकी १० दिनकी अवधि होती है.

कुब्जकरोग लक्षण—वायु कुपित होके हृदय या पीठको ऊंचीकरके अधिक पीडा करतीहै. उसे कुब्जकरोग कहते हैं.

अपतंत्ररोग लक्षण—वातल वस्तुके सेवनसे वायु कुपित होके अपने स्थानको छोड देता और हृदयमें प्राप्त होके शिर और कनपटीमें पीडा उत्पन्न करता है, जो रोगीका शरीर कमानकासा नव (झुक) जावे, रोगी मोहको प्राप्त हो, अत्यंत कष्टपूर्वक ऊपरको श्वास लेवे, नेत्र फटे रहजावें या मिच जावें, कंठमें घरघर शब्द होनेलगै और संज्ञा नाश होती जावे तो अपतंत्ररोग जानो.

अपतानकरोग लक्षण—नेत्र फट जावें, संज्ञाहीन होजावे, कंठमें कफका घरांटा चले, संज्ञा आनेसे चैतन्य होकर असंज्ञा होनेपर पुनः मोहित होकर चैतन्यताका अभाव होजावे, ये लक्षण हों तो अपतानक रोग जानो. यह असाध्य रोग स्त्रीको गर्भपात और पुरुषको अधिक रुधिर निकलनेसे तथा अत्यंत चोट लगनेसे होताहै.

पक्षाघातरोग लक्षण—किसी कारणसे वायु कुपित होके मनुष्यके अर्द्ध शरीरको ग्रहण कर लेता और शरीरकी मोटी तथा मध्यम नसोंको सुखाकर संधियोंके बंधन ढीले कर देता है तब मनुष्यका अर्धांग (एक ओरका पक्ष अर्थात् नाक, कान, आँख, हाथ पाँव) शिथिल होकर बेकाम तथा अचेत होजाता इसे पक्षाघातरोग कहते हैं. जिस प्रकार यह अर्धांग शिथिल होता है उसी प्रकार सर्वांग भी शिथिल होजाता है. इस रोगके १ पित्तवात पक्षाघात और २ कफवातपक्षाघात ये दो भेद हैं. कोई कोई आचार्योंने इसे एकांग रोग, कोई पक्षबद्धरोग और लोकमें बहुधा लकवा रोग कहते हैं.

पित्तवातपक्षाघात लक्षण—शरीरके भीतर, बाहर दोनों ओर दाह हो और मूर्च्छा आवे तो पित्तवातपक्षाघातरोग जानो.

कफवातपक्षाघात लक्षण—शरीर भीतर तथा बाहरसे शीतलसा जान पड़े, अंगपर सूजन हो और देह भारी हो तो कफवात पक्षाघात जानो.

पक्षाघात असाध्यलक्षण—यदि केवल वायुसे पक्षाघात हो तो कष्टसाध्य और गर्भिणी स्त्री, प्रसूता स्त्री, बालक, वृद्ध, क्षीण पुरुष, घायल मनुष्य और (जिसके शरीरमें रुधिर निकल गया हो) शून्य शरीरवालेको पक्षाघात हो तो असाध्य जानो.

निद्रानाशरोग लक्षण—कटु, तीक्ष्ण आदि पदार्थ भक्षण, चिंता और कामादिका वेग रोकनेसे वायु कुपित होकर निद्राको नाश कर देता है तब मनुष्यको लेटे रहनेपरभी निद्रा नहीं आती. ये लक्षण हों तो निद्रानाशरोग जानो.

सर्वांगकुपितवात लक्षण—समस्त अंगभरका वायु कुपित होकर देहभरमें पीडा उपजावे तो सर्वाङ्गकुपितवात जानो.

त्वग्गत कुपितवायु लक्षण—त्वचामें रहनेवाला वायु कुपित होनेसे त्वचा रूखी, फटी हुई, शून्य, पतली, काली, पीडायुक्त, लाल होकर खिंचती हुई जान पडै और त्वचाका रसशोषण होजावे तो त्वग्गतवायु कुपित हुआ जानो.

रक्तगत कुपितवायु लक्षण—रक्तस्थ वायु कुपित होनेसे अंगमें संताप सहित तीव्र पीडा उत्पन्न होवे, शरीरका वर्ण कुरूप होजावे, अरुचि होवे, शरीरमें फोडे फुनसी होकर देह काली पडजावे और भोजन करनेपर शरीर जकडजावे तो रक्तगत वायु कुपित हुआ जानो.

मांसमेदोगत कुपितवायु लक्षण—शरीरजकडकर भारी होजावें और दंडा तथा मुक्कीके प्रहार समान पीडाहो तो मांसमेदोगत वायु कुपित जानो.

अस्थिमज्जागत कुपितवायु लक्षण—हड्डी और पाँवोंमें पीडा हो, संधियोंमें शूल चलै, मांस, बल और निद्राका अभाव होकर समस्त शरीरमात्रमें निरंतर पीडा होती रहे तो हड्डी तथा मज्जा (चिकना फेन, शरीरस्थ सप्तधातुओंमें चतुर्थधातु) की वायु कुपित जानो.

शुक्रगत कुपितवायु लक्षण—पुरुषका वीर्य स्त्री प्रसंगके समय शीघ्र पात होजावे या विलम्बतक पात न हो और स्त्रीका गर्भ नियतकालसे पूर्व गिरजावे या विलम्बतक प्रसवोत्पत्ति न हो तथा वीर्य और गर्भमें कुछ दुष्टविकार उत्पन्न हो तो वीर्यस्थ वायु कुपित जानो.

कोष्ठगत कुपितवायु लक्षण—मल मूत्र रुकजावे, उदरपीडा, हृदयशूल अर्श, गुल्म और पार्श्वशूल उत्पन्न हो तो कोष्ठगत वायु कुपित हुआ जानो.

आमाशयगत कुपितवायु लक्षण—हृदय, पार्श्व, नाभिमें पीडा हो, तृषा लगै, मुख, कंठ सूख जावे, डकारें अधिक आवें और विषूचिका उत्पन्न हो तो आमाशयका वायु कुपित हुआ जानो.

पक्वाशयगत कुपितवायु लक्षण—आँतोंमें शब्द हो, पेटमें शूल हो, पीठमें पीडा हो, मलमूत्र कष्टसे उतरै और अफराहो तो पक्वाशयस्थ वायु का कोप जानो.

गुदास्थकुपितवायु लक्षण—मल, मूत्र रुकजावे, उदरशूल और आध्मान (अफरा) हो, जांघ, पीठ और पार्श्वभागमें पीड़ा हो और पथरीका रोग हो, तो मूलद्वार (गुदा) का वायु कुपित जानो.

हृदयगत कुपितवायु लक्षण—हृदयमें पीड़ा हो तो हृदयके वायुका कोप जानो.

कर्णादि इन्द्रियस्थ कुपितवायु लक्षण—कर्णादिक इन्द्रियकी शक्ति नाशको प्राप्त हो तो इन्द्रियस्थ वायुकोप जानो.

शिरागतकुपितवातलक्षण—शरीरकी नसोंमें तड़क उठकर नसोंका गोला बँध जावे (इकट्ठी हो जावें) तो शिरास्थवायुका कोप जानो.

संधिस्थकुपितवातलक्षण—शरीरकी संधियोंमें (जोड़ोंमें) शूल चलै और तड़क उठे तो संधिस्थवातका कोप जानो.

इति नूतनामृतसागरे निदानखण्डे वातरोगलक्षणनिरूपणं नामाष्टादशस्तरंगः ॥ १८ ॥

वातोद्भवरोगाः ।

नोक्तं येषां वातजानां पुराणेऽमृतसागरे ॥
नन्दसोमे तरंगेतन्निदानं लिख्यते मया ॥ १९ ॥

भाषार्थ—अब हम इस १९ वें तरंगमें उन रोगोंका निदान वर्णन करते हैं. जिनका निदान पूर्वामृतसागरमें नहीं लिखागया है.

स्नायुगतकुपितवातलक्षण—शीरानामक रक्तप्रसारणी नसोंसे अन्य नसोंमें प्राप्त हुआ कुपित वायु सर्वांग रोगको और किसी एकही विशेष अंगकी नसोंमें प्राप्त होनेसे एकांग रोगको उत्पन्न करता है इसे स्नायुगतकुपितवात जानो.

दंडापतानकरोगलक्षण—शरीरकी नसोंमें कफयुक्त कुपितवायु प्राप्त होनेसे मनुष्य दंडेके समान (जडरूप) होकर पडा रहता है, उसे दंडापतानक रोग कहते हैं.

व्रणायामरोगलक्षण–मर्मस्थानके कोठेमें कुपित हुआ वायु प्रवेश होनेसे सब देहमें फैलके शरीरको नवा (झुका) देता है. उसे व्रणायाम कहते हैं.

जिह्वास्थितमूकादिरोगलक्षण–कफयुक्त वायु कुपित होके जिह्वाकी शब्दप्रसारणी नसोंको घेर लेता है तब दोषोंकी न्यूनाधिकतासे जिह्वामें मूक, मिन्मिन और गद्गद रोग उत्पन्न हो जाते हैं, सो जिसमें सर्वतोभाव भाषा बंद होजावे सो मूकरोग, नासिकास्वरसे बोले सो मिन्मिनरोग और हकलाके बोले सो गद्गदरोग[1] जानो.

कम्पवातरोगलक्षण–जिसमें सर्व अंग और शिर कँपता रहै उसे वेपथु (और कम्पवात) रोग कहते हैं.

अनुक्तवातरोगसंग्रहार्थमाह ।

स्थाननामानुरूपैश्च लिंगैश्शेषान्विनिर्दिशेत् ।
सर्वेष्वेतेषु संसर्गं पित्ताद्यैरुपलक्षयेत् ॥ १ ॥

भावार्थ–अवशिष्ट वातरोगोंका निदान तथा उनके स्थानके नामानुरूप चिह्न और उक्त समस्त वातरोगोंमें पित्तादिकके संसर्ग ये सब अपनी बुद्धिसे जानो.

पित्तकफयुक्त पंचवायुके कार्य–(१) पित्तयुक्त प्राणवायु हो तो वात और दाह होय. कफयुक्त हो तो दुर्बलता, शैथिल्यता, झपकी और मुख स्वाद रहित होगा. (२) उदानवायु पित्तयुक्त होनेसे दाह, मूर्च्छा, भ्रम और घबराहट हो, कफयुक्त हो तो पसीनाका अभाव, रोमांच, मंदाग्नि और शीतलता होगी. (३) सामान्यवायु पित्तयुक्त हो तो शरीरमें दाह, उष्णता, मूर्च्छा और पसीना आवेगा. कफयुक्त हो तो रोमाञ्च होकर मल मूत्रकी रुकावट होजावेगी. (४) अपानवायु पित्तयुक्त होवे तो दाह उष्णता औ मूत्र लाल होगा, कफयुक्त हो तो शरीरके तल भागमें भारीपन और जाडा लगैगा. (५) व्यानवायु कफयुक्त होनेसे शोथ, शूल और शरीर जकडकर दंडके समान रहजावेगा. पित्तयुक्त होनेसे दाह और घबराहट होकर हाथ पाँव पटकेगा.

---

१ अटकते अटकते बोलना, एक अक्षरको अनेकबार उच्चारना.जैसे "पानी" कहनेके लिये "प-प-प-प-पा ! पानी" कहकर कठिनाई पूर्वक पानी शब्दका उच्चारण करना ।

पंचविधस्य प्रकृतस्य वायोः कार्यलिङ्गंचाह।
अव्याहतहगतिर्यस्य स्थानस्थः प्रकृतौ स्थितः ॥
वायुस्स्यात् सोऽधिकं जीवेद्वीतरागःसमाःशतम् ॥ १ ॥
(इति माधवः)

भाषार्थ–अब पाँचों प्रकारकी वायुके कार्य और चिह्न लिखते हैं–जिस मनुष्यकी पंचवायु शरीरमें अपने स्वभाव व स्थानानुकूल स्थित रहकर किसी प्रकारसे अवरोधित न हो वे वह मनुष्य १०० सौ वर्ष पर्यन्त रोगरहित जीवेगा, क्योंकि शरीरस्थ वायुके विकारसेही प्राणी रोगयुक्त होके पूर्ण आयु नहीं भोगने पाते हैं. इस बातपर प्रत्येक वैद्य और मनुष्योंको पूण ध्यान देना चाहिये. उक्त १०० वर्षका आयुप्रमाण कलियुके मनुष्योंका है, इसलियेही मनु महाराजने अपनी मनुस्मृतिमें लिखा है.

अरोगाःसर्वसिद्धार्थाश्चतुर्वर्षशतायुषः ॥
कृतत्रेतादिषु ह्येषामायुर्ह्रसति पादशः ॥ म० १ अ० ८३ श्लो० ॥
अन्यच्च–शतायुर्वैपुरुषः ॥ इति सुश्रुतेः ॥
शतशब्दोत्र बहुत्वपरः कलिपरो वा ॥

भाषार्थ–मनुष्योंकी आयु सतयुगमें ४०० वर्ष, त्रेतायुगमें ३०० वर्ष द्वारपरयुगमें२०० वर्षथी और अब कलियुगमें १०० वर्षकी है. आयुके उक्त निश्चित वर्षोंसे अधिक आयु भोगनेके लिये मुख्यकारण स्वधर्ममें तत्पर रहना और अल्पायु होनेका मुख्यकारण स्वधर्मसे च्युत होकर अधर्म सेवन करनाही है. क्योंकि अधर्मसम्बन्धी कार्य करनेसे रोगोत्पत्ति और रोगोत्पत्ति होनेसे आयु नष्ट होजाती है.

सूचना–इस तरंगमें जो रोगनिदान लिखे हैं वे पूर्वामृतसागरमें नहीं थे परन्तु हमने माधवनिदानादि ग्रंथोंसे लेके लिखे हैं.

इति नूतनामृतसागरे निदानखण्डे अनुक्तवातरोगलक्षण
निरूपणं नामैकोनविंशतितमस्तरंगः ॥ १९ ॥

ऊरुस्तम्भादि पित्त-कफरोगाः ॥

भङ्क्षेऽभ्रनेत्रे रोगाणामूरुस्तंभामवातयोः ॥
पित्तजानां श्लेष्मजानां निदानं लिख्यते मया ॥ १ ॥

भाषार्थ–इस बीशवें तरंगमें ऊरुस्तम्भ, आमवात, पित्तरोग और कफ-रोगोंका निदान लिखते हैं.

ऊरुस्तम्भरोगोत्पत्ति–शीतल, उष्ण, भारी या चिकनी वस्तु, अधिक क्षुधा या अल्पाजीर्णमें खाने, दिनको शयन और रात्रिके जागरणसे वायु कुपित होके पित्तको बिगाड देती है, तब दोनों जाँघे स्तंभित होकर सूनी होजाती और मनुष्य हलने चलनेसे असमर्थ हो जाता है.

ऊरुस्तम्भपूर्वरूप–निद्रा, अरुचि, छर्दि, रोमांच अधिक हो, ध्यान लग जावे, कुछ ज्वरांश हो और दोनों जाँघोंमें पीडा हो तो ऊरुस्तम्भ होगा.

ऊरुस्तम्भ[1]रोगलक्षण–दोनों पाँव सूजजावें, पीडा होवे, पाँव कठिनाईसे उठें, दोनों जाँघोंमें पीडा हो, दाह हो, पृथ्वीपर पाँव रखते समय विशेष पीडा हो, शीतोष्ण तथा स्पर्श ज्ञान न हो, गतिनाश हो जावे, जाँघें काष्ठ सदृश टूटीसी जानपडें तो महावातव्याधि तथा ऊरुस्तम्भरोग जानो.

असाध्य ऊरुस्तम्भलक्षण–शरीरमें दाह, पीडा और कम्प प्राप्त हो तो वह रोगी अवश्य नाशको प्राप्त होगा.

आमवातरोगोत्पत्ति–मंदाग्निवाला मनुष्य कुपथ्यपूर्वक चिकना अन्न खानेपर परिश्रम न करे तो वायुकी प्रेरणासे भक्षितान्नका कच्चारस कफाशय (हृदय) में प्राप्त होके नसोंमें प्रवेश होता है. और वही रस त्रिदोषसे अतिदूषित होनेसे शरीरकी नसोंको पूरित करके अग्निमांद्यको प्रगट करता है, तब शरीर भारी होकर आम तथा सर्व रोग उत्पन्न होते हैं.

आमवातलक्षण–मंदाग्निवाला मनुष्य अजीर्णमें भोजन करता है इसलिये उसके उदरमें आम उत्पन्न होकर अनेक रोगोंको उत्पन्न करती है तब मस्तक, अंग, स्कंध, पृष्ठ, कटि, घुटनोंमें पीडा होतीहै, नसोंको संकोच होता और शरीर स्तंभित होजाता है, ये लक्षण हों तो आमवात जानो.

ग्रन्थांतरोक्त आमवात रोग विशेष लक्षण–अंगमें पीडा, भोजनमें अरुचि, शरीरमें भारीपन, तृषा और आलस्यकी आधिक्यता, पाचनशक्तिका अभाव, अंगमें सूनापन और ज्वरका वेगहो तो आमवात जानो.

१ धन्वतरीजीने सुश्रुतमें उसी ऊरुस्तम्भको महावातव्याधिरोग नाम भी दिया है इसलिये हमने उपरोक्तलक्षण सुश्रुतोक्तही लिखे हैं ।

पित्तरोगोत्पत्ति कारण—कड़वी, खट्टी, उष्ण, दाहकारक, तीक्ष्ण, रूखी, वस्तु भक्षणसे, भूँख, मैथुन, क्रोध, परिश्रम, मद्यपानकी विशेषतासे, तृषा, क्षुधाका वेग रोकनेसे, घाममें फिरनेसे, और अधिक नोन खानेसे पित्त कुपित होजाता है. तथा अपच होनेसे, शरदृऋतु, ग्रीष्मऋतु, मध्याह्न काल और अर्द्धरात्रिके समयमें भी पित्त कोपको प्राप्त होता है, तब कुपित पित्तसे निम्नलिखित ४० प्रकारके रोग उत्पन्न होते हैं.

रोगनाम.	रोगनाम.
१ तरुणावस्थामें श्वेत बाल होना.	२२ दाह (शरीर जलना)
२ रक्तनेत्र (आँखें लाल होजाना)	२३ अतिसार (दस्त लगना)
३ रक्तमूत्र (लाल पेशाब उतरना)	२४ उष्णतापर अरुचि.
४ पीतनेत्र (पीले नेत्र होजाना)	२५ शीतलतापर प्रीति.
५ पीतमत्र (पीला पेशाब उतरना)	२६ सर्वग्राह (किसीवस्तुसेपूर्णता न होना)
६ पीतमल (पीला दस्त होना)	
७ पीतनख (नख पीले पडजाना)	२७ सर्व वस्तुओंसे विशेष स्नेह.
८ पीतदंत (दांत पीले पडजाना)	२८ भोजनानंतर दाह प्राप्त.
९ पीतशरीर (देह पीली पडजाना)	२९ क्षुधावृद्धि (भूख बहुत लगना)
१० अँधियारीआना.	३० नकसीर (नासके रक्त गिरना)
११ सर्वत्र पीतही पीत दृष्टि पडना	३१ मलद्राव (पतला दस्त.)
१२ अल्पनिद्रा (थोडी नींद आना)	३२ मलोष्णता (गर्म दस्त होना)
१३ मखशोष (मुँह सूखना)	३३ मूत्रोष्णता (गर्मपेशाब उतरना)
१४ मुखदुर्गन्धि (मुँहकी बुरी वास)	३४ मत्रकृच्छ्र.
१५ मुखतीक्ष्ण (मुँह तीखा रहना)	३५ वायक्षीणता.
१६ उष्ण श्वास (श्वास गर्म चलना)	३६ शरीरोष्णता (अंग तप्त रहना)
१७ मुखमें खट्टापन.	३७ पसीनाकी विशेषता.
१८ डकारके साथ बाफ निकलना.	३८ पसीनामें दुर्गन्धि आना.
१९ चक्कर आना.	३९ हाथ पाँवका चर्म फटना(ब्याऊ)
२० इन्द्रियोंकी शैथिल्यता.	४० शरीर फूटन या फोडे आदिकी अधिकता.
२१ क्रोधाधिक्यता (गुस्सा चढ़ीरहै)	

ये चालीस रोग पित्तप्रकोपकी उष्णताद्वारा उत्पन्न होते हैं.

कफरोगोत्पत्ति कारण–भारी, मीठी, चिकनी, शीतल वस्तु तथा दधि भक्षणसे, मन्दाग्निसे, दिनमें सोनेसे और अधिक बैठे रहनेसे कफ कुपित होता है. तथा प्रभातसमय भोजन किये पश्चात् और वसंतऋतुमें भी कफ कोपको प्राप्त होता है तब इसके प्रकोपसे आगे लिखित २० प्रकारके रोग उत्पन्न होते हैं.

रोगनाम.	रोगनाम.
१ मुख मीठा रहना.	११ क्षुधाकाअभाव (भूख न लगना)
२ मुख कफसे लिप्त रहना.	१२ मंदाग्नि.
३ मुखसे लार गिरना.	१३ रेचनाधिकता (बहुतदस्तहोना)
४ अधिक निद्रा आना.	१४ श्वेत मल उतरना.
५ कंठमें घरांटा चलना.	१५ मूत्राधिक्यता (बहुतपेशाबहोना)
६ कटु रसकी इच्छा.	१६ श्वेतमूत्र (सफेदपेशाबउतरना)
७ उष्णताकी इच्छा.	१७ वीर्याधिक्यता.
८ बुद्धिजडता (अक्कुकुंदहोजाना)	१८ निश्चलता (जडत्व)
९ स्मरणशक्तिकी अल्पता.	१९ शरीरमें भारीपन.
१० आलस्याधिक्यता (सुस्ती)	२० शरीरमें शीतलता.

कफके प्रकोपसे ये २० प्रकारके रोग उत्पन्न होते हैं.

इति श्रीनूतनामृतसागरे निदानखण्डे ऊरुस्तम्भ, आमवात, पित्तरोग, कफरोगाणां लक्षणनिरूपणं नाम विंशतितमस्तरंगः ॥ २० ॥

वातरक्त, शूलादिरोगाः ।

निदानं वातरक्तस्य शूलादीनां यथाक्रमात् ॥
एकविंशतिमे भंगे रोगाणां लिख्यते मया ॥ २१ ॥

भाषार्थ–अब हम इस २१ वें तरंगमें वातरक्त और शूल आदि रोगोंका निदान यथाक्रमसे लिखते हैं.

वातरक्तरोगोत्पत्ति–नोन, उष्ण वस्तु, सडाहुआ मांस, मूंगकेबडे, कुलथी, उर्द, शाक, मांस, मछली, दही और अन्य विरुद्ध वस्तु खाने;मद्य और

कांजी पीने, अजीर्ण दशामें भोजन करने, हाथी, घोड़ा, ऊंटपर आरूढ़ होने, दिनको निद्रा लेने और क्रोध करनेकी विशेष आधिक्यतासे सुकुमार और सुखग्राही पुरुषोंको वातरक्तरोग उत्पन्न होता है.

वातरक्तपूर्वरूप—पसीना किंचित् न निकले, या बहुतही निकले, शरीर काला पड़जावे, शरीरका स्पर्शज्ञान नष्ट हो जावे, अल्प प्रहारपर विशेष पीडा हो, समस्त संधियाँ ढीली पडजावें, अधिक आलस्य आवे, शरीरमें फुन्सी बहुत हों, घुटने, जाँघें, कमर, हाथ, पैरमें पीडा विशेष हो, शरीर भारी पडजावे, देह शून्य होजावे, देहमें दाह हो, वर्ण विपर्यय (रंग बदल जाना) होजावे और शरीरपर लाल चट्टे पडजावें तो जानो कि, वातरक्त उत्पन्न होगा.

वातरक्तस्वरूप—सर्व शरीरका रक्त दग्ध होकर दोनों पाँवोंमेंसे चूने (टपकने) लगता है, इसे वातरक्त कहते हैं. इसके ५ भेदहैं—अर्थात् १ वाताधिक २ पित्ताधिक ३ कफाधिक ४ रक्ताधिक और ५ सन्निपातकी आधिक्यतासे उत्पन्न हुआ वातरक्त जानो.

१ वाताधिक वातरक्तलक्षण—पाँवोंमें अधिक शूल हो, पाँवपर कुछ शोथ भी हो, पाँवके तलवे, चर्म या कोर रूखी और काली पड़जावें, चौवीसों नाड़ी और अंगुलियोंकी संधियोंमें संकोच हो, शरीर जकड़कर कँपे और सूना पड़जावे तो वाताधिक वातरक्त जानो.

२ पित्ताधिक वातरक्तलक्षण—शरीरमें दाह, मोह, मूर्च्छा, मद, तृषा, पसीनाका बहाव, स्पर्शासहन, पीड़ा, शोथ, पकाव और उष्णताकी विशेषता हो तो पित्ताधिक वातरक्त जानो.

३ कफाधिक वातरक्तलक्षण—शरीरमें शूल (कुकरी) भारीपन, शून्यता, चिकनाहट, शीतलता और कंडुत्वकी आधिक्यता हो तो कफाधिक वातरक्तरोग जानो.

४ रक्ताधिक वातरक्तलक्षण—शरीरपर शोथ, पीड़ा, ललाई, चमक और कंडुत्व (खुजलाहट) हो तो रक्ताधिक वातरक्त लक्षण जानो.

५ सन्निपात वातरक्तलक्षण—जिसमें पूर्वोक्त त्रिदोषोंके लक्षण एकत्र दृष्टि पड़ें उसे सन्निपातवातरक्त जानो.

हस्तवातरक्तलक्षण–जैसे पाँवकी पगथली तैसे ही हाथकी हथेलीमें भी फुन्सी होकर अंतमें सर्व शरीरभरमें हो जातीहैं, उसे हस्तवातरक्त कहतेहैं.

वातरक्त असाध्यलक्षण–पाँवके तलुवोंसे घुटनोंतक सर्वत्र फुन्सियाँ होजावें शरीर फटने और चूने लगे, बल, मांस और जठराग्निकी हीनता होजावे तो असाध्य वातरक्त जानो. यह रोग १ वर्षकी अवधितक याप्य रहताहै.

वातरक्तोपद्रव–निद्राका अभाव, अन्नपर अरुचि, श्वास, शिरपीडा, शिरमें वेदना, मांसका गलना, फुन्सियोंका पकना, अंगुलियोंमें टेढ़ापन या गलाव तृषा, ज्वर, मोह, कम्प, हिचकी और ब्योंची ये वातरक्तके उपद्रव हैं.

शूलरोगभेद–यह रोग आठप्रकारका है अर्थात् १ वात २ पित्त ३ कफ ४ सन्निपात ५ आमरस (कच्चारस) ६ वातकफ ७ कफपित्त और ८ वातपित्तका शूल.

१ वातशूलरोगोत्पत्तिकारण–घोडेआदि पशुओंपर आरूढ़ होकर दौडाने, मैथुन, जागरण, जलपान, भीगाहुआ अन्न, सूखा मांस, विरुद्ध पदार्थ भक्षण करने, मल, मूत्र और वायु रोकने और शोक, लंघन, हास्यकी आधिक्यतासे वायु कुपित होकर हृदय, दोनों पार्श्वभाग और रोमकूपमें शूलरोगको उत्पन्न करती है.

वातशूललक्षण–संध्यासमय बदली (बद्दल) होनेपर या शीतकालमें उक्त हृदयादि स्थानमें शूल चलनेलगे, चलते चलते बारम्बार रुकजावे, मल, मूत्र रुकजावे और अतिपीड़ा हो तो वातशूल जानो.

२ पित्तशूलोत्पत्तिकारण–खारी, तीखी, उष्ण, खट्टी वस्तु, कालीमिर्च, तिल, खली, कुल्थीके विशेष भक्षण, काँजी, मदिरा, आसवके विशेष पान, श्रम, मैथुन, क्रोध और धूपमें घूमनेकी आधिक्यतासे पित्त कुपित होकर शूल उत्पन्न करता है.

पित्तशूललक्षण–तृषा, दाह, मूर्च्छा, भ्रम, क्रोध विशेष हो, मध्याह्न, अर्द्धरात्रि, ग्रीष्मऋतुमें शरदऋतुमें और शूल अधिक चलै और नाभिपर अधिक पसीना आवे तो पित्तशूल जानो.

३ कफशूलोत्पत्तिकारण–अनूपदेशज पशुका मांस, मछली, खोवा,

(मावा) पेठा, मैदाके पक्वान्न, विशेष खाने और दूध गन्ना (ईख) का रस मधुर रसके विशेष पानसे कफ कुपित होकर शूल उत्पन्न करता है.

कफशूललक्षण–हृदयमें पीडा, वमन होनेकी इच्छा, खाँसी, भोजनमें अरुचि, उदर और मस्तकमें भारीपन, मलमूत्रका रुकाव होवे भोजन करने पर अधिक पीडा और प्रातःकाल या वसन्तऋतुमें शूलचलै तो कफशूल जानो.

४ सन्निपात शूलरोगोत्पत्तिकारणलक्षण–पूर्वोक्त तीनों दोषोंके कारण और लक्षण हों तो सन्निपात शूल जानो.

५ आमशूलरोग लक्षण–अफरा, वमन, शरीरमें भारीपन, मूत्राशयमें गुड़गुड़ाहट, हृदयमें जकड़पन होवे, लार गिरे और कफशूलके सर्व लक्षण मिलैं तो आमशूल जानो.

६ वातकफशूललक्षण–पेडू, हृदय, कंठ और दोनों पार्श्वभागमें शूल चलै तो वातकफशूल जानो.

७ कफपित्तशूल लक्षण–कुक्षि, हृदय और नाभिस्थानमें शूल चलै तो कफपित्तशूल जानो.

८ पित्तवातशूल लक्षण–दाह और ज्वरयुक्त शूल चलै तो पित्तवात शूल जानो.

द्रष्टव्य–शूलरोगके और भी विशेष भेद हैं, परन्तु हमने प्राचीनामृतसागरमें लिखित भेदोंकेही लक्षण लिखेहैं, जिन्हें विशेष भेद देखना हों वे चरक सुश्रुतादि ग्रंथ देखें. इसी शूलके तीन उपभेद और सुनो.

परिणामशूलरोगोत्पत्ति कारण–उपरोक्त लेखानुसार केवल इसमें कुपित वायु कफपित्तसे मिलकर शूलको उत्पन्न करती है.

परिणामशूल लक्षण–भोजन करनेके पश्चात् शूल उठै तो परिणामशूल जानो.

अन्नद्रवशूल लक्षण–भक्षित भोजन पचे या न पचे पर शूल सदैव रहै पथ्य करनेपर भी शांत न हो तो अन्नद्रवशूल जानो.

ज्वरत्पित्तशूल लक्षण–भोजन पाचन होतेही शूल उठै उसे जरत्पित्त शूल जानो.

शूलरोगोपद्रव–तृषा, मूर्च्छा, अफरा, अरुचि, शरीरमें भारीपन, श्वास कास, हिक्का और उदरमें विशेष पीड़ा होना ये शूलके नव उपद्रव हैं.

इति नूतनामृतसागरे निदानखण्डे वातरक्त, शूलरोगलक्षण निरूपणं नामैकविंशतितमस्तरंगः ॥ २१ ॥

उदावर्त्त अनाह.

उदावर्त्तस्य रोगस्य चानाहस्य यथाक्रमात् ॥
द्वाविंशेऽस्मिस्तरंगे हि निदानं लिख्यते मया ॥ २२ ॥

भाषार्थ–अब हम इस २२ वें तरंगमें उदावर्त्त और अनाह रोगका निदान यथाक्रमसे लिखते हैं.

उदावर्तरोगोत्पत्ति कारण--१ अधोवायुवेग, २ मलवेग, ३ मूत्रवेग, ४ जमुहाईवेग, ५ अश्रुवेग, ६ छींकवेग, ७ डकारवेग, ८ वमनवेग, ९ कामवेग, १० क्षुधावेग, ११ तृषावेग, १२ श्वासरोग, और १३ निद्रावेग, इन तेरह वेगोंके प्रतिरोधसे १३ प्रकारका उदावर्त रोग उत्पन्न होता है.

१ अधोवायु वातरोधोदावर्त लक्षण–मल, मूत्र रुक जावे, अफरा चढै, गुदा मूत्राशय लिंगेन्द्रियमें पीडा हो तथा अन्य वादीके अनेक उदर रोग हों तो अधोवायु (सरण) रोकनेका उदावर्त जानो.

२ मलवेगावरोधोदावर्त लक्षण–पेटमें गुड़गुड़ शब्द हो, शूल उठै, ढूमें पीडा हो, मल न उतरे, डकारें अधिक आवैं, और मुखसे मल निकल आवे तो मल रोकनेका उदावर्त जानो.

३ मूत्रावरोधोदावर्त लक्षण–मूत्राशय लिंगेन्द्रियमें शूल हो, मूत्र कष्टसे उतरै, मस्तकमें पीडा हो, आमांशके अभावप भी पेडूमें अफराहो तो मूत्र रोकनेका उदावर्त जानो.

४ जृम्भावरोधोदावर्त लक्षण–गर्दन और कंठ रुक जावे, शिरोग्रह हो, जमुहाई अधिक आवें, नाक, कान, आँखोंमें अधिक पीडा हो और वादीके अनेकानेक रोग हों तो जमुहाई रोकनेका उदावर्त जानो.

५ अश्रुअवरोधोदावर्त लक्षण–आनंद और शोक दो दशामें अश्रुपात होते हैं, जो किसी भी दशामें आंसू रोकै तो शिर भारी और नेत्ररोग होंगे, ये लक्षण हों तो आंसू रोकनेका उदावर्त जानो.

६ छिक्कावरोधोदावर्त लक्षण—ग्रीवा न मुरकै, मस्तकमें शूल चलै, आधा शीशी हो और सर्व इंद्रियां दुर्बल होजावें तो छींक रोकनेका उदावर्त जानो.

७ उद्गारावरोधोदावर्त लक्षण—कंठ और मुख भोजन करनेपर भी भारी रहें, मोह और व्यथा हो, अधोवायु सरण न हो और वायुके अनेक विकार हों, तो डकारका वेग रोकनेका उदावर्त जानो.

८ वमनावरोधोदावर्त लक्षण—मच्छरादि जीवोंके काटने सदृश, ददोरा (दाफड़) होजावें, शरीरमें खुजाल चलै, अन्नपर अरुचि, मुखपर छाया शोथ, पांडुरोग, ज्वर, कुष्ठ, हृदयपीडा और विसर्प हो तो वमन रोकनेका उदावर्त जानो.

९ कामावरोधोदावर्त लक्षण—पेडू, गुदा, पोते और लिंगेन्द्रियमें पीडा हो, मूत्र रुक जावे, उपस्थेन्द्रियसे वीर्य आपही गिरनेलगै, शर्करा (पथरी) नेत्रविकार और शोथरोग हों तो विर्य रोकनेका उदावर्त जानो.

१० क्षुधावरोधोदावर्त लक्षण—हाथ पाँवमें फूटन, तंद्रा, क्षीणता, दृष्टिमंदता, अरुचि और बिनश्रम कियेही थकावट हो तो भूखका वेग रोकनेका उदावर्त जानो.

११ तृषावरोधोदावर्त लक्षण—कंठ और मुख सूख जावें, श्रवणेन्द्रिय मंद पडजावें और हृदयमें पीडा हो तो प्यास रोकनेका उदावर्त जानो.

१२ श्वासरोधोदावर्त लक्षण—परिश्रमसे उत्पन्न हुई श्वास रोकनेसे हृदयमें पीडा, मोह और पेटमें गोला उठता है, ये लक्षण हों तो श्वास रोकनेका उदावर्त जानो.

१३ निद्रावरोधोदावर्त लक्षण—अधिक जमुहाई आवें, हडफूटन होवे, नेत्र भारी होजावे, शिर भारी होकर तन्द्रा हो तो नींद रोकनेका उदावर्त जानो.

उदावर्त सम्प्राप्ति—रूखे, कसैले, कडुवे, भोजनसे कोठेकी वायु कुपित होकर उदावर्तरोग उत्पन्न करती है.

उदावर्त सामान्य या विशेष लक्षण—उक्त कारणसे वायु कुपित होके मल, मूत्र, वायुसरण, आंशू, कफ और मेदप्रसारणी नाडी तथा मल मूत्रको भी ऊर्द्धगामी करदेती है, तब हृदय तथा पेडूके शूल और उबकाई (वमनेच्छा) से मनुष्य विकल होकर बडे कष्टपूर्वक मल, मूत्र और अधोवायुका त्याग करता है और उसे उक्तरोगके लक्षण पूरक श्वास,

कास, दाह, मोह, तृषा, ज्वर, वमन, हिचकी, मस्तकरोग, मनोभ्रम, श्रवण भ्रम (कानोंमें भनभनाहट सुनाई पडना) और प्रतिश्याय (नाकबहना, जुखाम) तथा अन्य बहुतेरे वातविकारभी उत्पन्न होते हैं.

उदावर्तासाध्य लक्षण—जो उदावर्तवाला रोगी तृषा, क्षीणता, शूल और क्लेशसे विकल हो तथा मुखसे मल गिरनेलगै तो वह पूर्ण रोगग्रसित होगया उसका बचना दैववशातही जानो.

आनाहरोगोत्पत्तिकारण—आँवकिम्वा मल उदरमें क्रमसे संचित होने पर कुपितवायुसे बँध जाते हैं (सूखके दृढ होजाते हैं) तब मूलद्वारसे वह दृढ मल यथार्थ सुगमतापूर्वक न निकलनेके कारण पेट फूलकर तन जाता है इसे अनाह (अफरा) का रोग कहते हैं.

आमानाहरोग लक्षण—तृषा, शिरोग्रह, आमाशयमें शूल, शरीरमें भारी पन, हृदयमें पीडा, उबकाई, प्रतिष्याय और डकारोंका अभाव हो तो आँवका अफरा जानो.

मलानाहलक्षण—शरीर और कनपटी जकड जावें, मल, मूत्र, रुक-जावे मूर्च्छा और श्वास आवे, पक्काशयमें शूल चलै, मलयुक्त उल्टी हो और अलस रोगोक्त लक्षण हों तो पक्काशयमें मलके संग्रहकी अनाह जानो.

इति नूतनामृतसागरे निदानखण्डे उदावर्त-आनाहरोगलक्षण निरूपणं नाम द्वाविंशातितमस्तरंगः ॥ २२ ॥

गुल्मरोगः।

अथ पञ्चविधस्यात्र गुल्मरोगस्य हि क्रमात् ॥
त्रयोविंशे तरंगेस्मिन्निदानं लिख्यते मया ॥ २३ ॥

भाषार्थ—अब हम इस २३ वें तरंगमें ५ प्रकारके गुल्मरोगका निदान क्रमसे लिखते हैं.

गुल्मरोगोत्पत्तिकारण-आहार विहारकी विरुद्धतासे वात, पित्त और कफ कुपित होकर पुरुष तथा स्त्रियोंके मूत्राशयसे हृदयपर्यन्त गोलेके आकारकी एक गाँठ (नससमूल) उत्पन्न कर देतेहैं इसीको गुल्मरोग कहतेहैं. यह गुल्म-रोग १ वात, २ पित्त, ३ कफ, ४ सन्निपात और ५ रुधिरसे उत्पन्न होताहै.

गुल्मरोगस्थान—दोनों पार्श्वशूल, हृदय, नाभि और पेडू, मूत्राशय इनमेंसे किसी एक स्थानमें गुल्मरोग उत्पन्न होता है.

गुल्मरोगसंप्राप्ति–हृदय और मूत्राशयके मध्य एक गोल गाँठ होकर फिरनेलगे या स्थिर रह जावे. दिनप्रति उसका आकार बढ़ता जावे, अन्न पर अरुचि हो. मल, मूत्र, कष्टसे उतरे, वायु बढ़जावे, आँतोंमें शब्द होवे, अफरा चढ़े और पवन ऊर्द्ध्वगतिको प्राप्त होजावे तो गुल्मरोग उत्पन्न हुआ जानो.

१ वातगुल्मोत्पतिकारण–रूखा अन्न भक्षण, विषमासन बैठक, मल-मूत्रावरोध, शोच, प्रहार, मल क्षीणता, लंघन, विरुद्ध चेष्टा और अपनी-अपेक्षा विशेष बलवान् पुरुषसे मल्लक्रीड़ादि युद्ध करनेसे वातका गुल्म होता है.

वातगुल्मलक्षण–गोला कभी न्यून और कभी अधिक पीड़ा देवे अधो-वायु निकले नहीं, मल न उतरे, मुख और कंठ सूखे, शरीरकी कांति (वर्ण) काली पड़जावे, शीतज्वर चढ़े, हृदय, कूख और पार्श्वभागमें पीडा हो, भोजन पचनेके पश्चात् पीडा अधिक और भोजन करनेपर घटजावे, रूखे कसैले और कडवे पदार्थ भक्षणसे पीडाकी अधिकाई हो तो वादीसे उत्पन्न हुआ गुल्मरोग जानो.

पित्तगुल्मोत्पत्तिकारण–कडुवा, खट्टा, तीक्ष्ण और उष्ण रससेवन, मद्यपान करने, क्रोध करने, धूपमें बैठने, अग्नि तापने, चोट लगने, रुधिर बिगड़ने और आँवके बढ़ावसे पित्तगुल्म होता है.

पित्तगुल्मलक्षण–शरीरमें ज्वर, तृषा, पीड़ा, दाह, व्रण होवे पसीना अधिक निकले, भोजन करते समय और गोलोंके हाथ लगनेसे अत्यंत पीड़ा हो तो पित्तगुल्म जानो.

३ कफगुल्मोत्पत्तिकारण–शीतल, भारी, चिकनी वस्तु खाने, दिनको सोने और बैठे रहनेसे कफगुल्म उत्पन्न होता है.

कफगुल्मलक्षण–शीतज्वर चढ़े, शरीरमें पीड़ा, भोजनपर अरुचि, अंगमें भारीपन, खाँसी और मुखसे कडुवे, खट्टे रसयुक्त वमन हों तो कफका गुल्म (गोला) जानो.

सन्निपातगुल्मोत्पत्तिकारण–पूर्वोक्त तीनों दोषोंके कोपसे सन्निपातगु-ल्म होता है.

सन्निपातगुल्मलक्षण–पूर्वोक्ततीनों दोषोंके लक्षण हों तो सन्निपातगुल्मजानो.

रुधिरगुल्मोत्पत्तिकारण–यह रुधिरगुल्म पुरुषको नहीं बरन् स्त्रीकेही होता है, नव मासके पूर्व कच्चा गर्भ गिरने, कुपथ्य भक्षण और मिथ्या आहार विहार करनेसे गर्भके ऋतुसमय अथवा विनऋतुही वायु कुपित होकर रक्तका संग्रह करके गुल्मको उत्पन्न करता है.

रुधिरगुल्मलक्षण–स्त्रीके उदरमें पीडा उठे, दाह चले, शूल होवे वह अवयवरहित गोला पेटमें चारोंओर घूमे, पित्तगुल्मके सर्व चिह्न हों और गर्भधारणके सदृश सर्व लक्षण दृष्टिपड़े तो रुधिरगुल्म जानो.

विशेष द्रष्टव्य–वैद्यको चाहिये कि, इस (रुधिरगुल्म) का निश्चय १० दशमास पूर्ण होनेपर करे क्योंकि रुधिरगुल्मके और गर्भधारणके लक्षण समानही होते हैं ईश्वरकी विचित्र गति है न जाने गुल्मका विश्वास करके यत्न किया जावे और गर्भ हो तो पूर्ण अनर्थ हो जावेगा. इसलिये १० मास गर्भसे बालोत्पत्तिकी अवधि तक ठहरे जो गर्भ हो बालक उत्पन्न होगाही और न तो फिर गुल्मरोगकी चिकित्सा आयुर्वेदोक्त रीतिसे करे.

१ गुल्मरोगके असाध्यलक्षण-जो गुल्म क्रमशः बढ़ताहुआ समस्त उदरमें व्याप्त होकर धात्वन्तरमें प्राप्त होजावे, नसोंसे लिपटाहुआ कछुएके आकार होजावे. दुर्बलता, अरुचि, उबकाई, खाँसी, उलटी, विकलता, तृषा, ज्वर, तन्द्रा और प्रतिश्याय ये उपद्रव उत्पन्न करे तो असाध्य गुल्मरोग जानो.

तथा २–रोगीके हृदय, नाभि, हाथ, पाँवपर सूजन चढ़े, ज्वर, श्वास, वमन और अतिसारकी वृद्धि हो तो वह रोगी निश्चय कालवश प्राप्त होगा.

तथा ३-रोगीके शूल, तृषा, अन्नपर द्वेष होजावे और गुल्मकी गाँठ अकस्मात् गुप्त प्रकट होती जावे तो इस रोगीका कुशल रहना असंभवही जानो.

इति नूतनामृतसागरे निदानखण्डे गुल्मरोगलक्षणनिरूपणंनाम त्रयोविंशस्तरंगः॥ २३॥

यकृत्–प्लीहा–हृद्रोग.

यकृत्प्लीहाहृद्गदानां तरंगेस्मिन् यथाक्रमात् ॥
समुद्रलोचनामिते निदानं लिख्यते मया ॥

भाषार्थ–इस २४ चौवीशवें तरंगमें यकृत, प्लीहा और हृद्रोगका निदान यथाक्रमसे लिखते हैं.

यकृत्-प्लीहान्तर-यकृत् और प्लीहा शरीरके अंग हैं. हृदयके नीचे दक्षिण पार्श्वभागमें यकृत् वामपार्श्वमें प्लीहा रहता है. प्लीहा रोग नसोंके बहावका मुख्य स्थान है. इसका रोगी अतिक्लेशपात्र होता है. यकृत् और प्लीहामें केवल दाहिने बाँयेंकाही अंतर है, इसलिये उन दोनोंकी लक्षणोत्पत्ति तथा चिकित्सा भी तुल्यही है. प्रथम हम प्लीहाको दरशाते हैं.

प्लीहारोगोत्पत्तिकारण-मनुष्यके उष्णवस्तु तथा दही आदि कफकारी पदार्थ भक्षण करनेसे रुधिर या कफ बढ़कर प्लीहाको बढा देते हैं.

प्लीहारोगकी सम्प्राप्ति-मंदज्वर मंदाग्नि होकर बलनाश होजावे, शरीरमें कुपित कफ पित्तके लक्षण होजावें और शरीर पीत वर्णका होजावे तो प्लीहारोग (पिलही) उत्पन्न हुआ जानो. यह रोग १ वात, २ पित्त, ३ कफ और ४ रुधिरसे उत्पन्न होता है.

१ वातप्लीहालक्षण-पेटमें नित्य अफरा रहा करे, उदावर्त रोग हो और पेटमें शूल चले तो वादीका प्लीहा जानो.

२ पित्तप्लीहालक्षण-ज्वर, तृषा, दाह, मोह हो और शरीरका वर्ण पीला पडजावे तो पित्तका प्लीहा जानो.

३ कफप्लीहालक्षण-पेटमें मंद मंद पीडा हो, प्लीहा दृष्टि पडे, भारी हो, शरीरमें बोझ जानपडे और भोजनमें अरुचि हो तो कफ प्लीहा जानो.

४ रुधिरप्लीहालक्षण-सर्व इंद्रियाँ शिथिल होजावें शरीरका वर्ण विपरीत होजावे, अंग भारी हो पेट लाल हो और भ्रम, दाह, मोह हो तो रुधिरप्लीहा जानो.

असाध्यप्लीहालक्षण-जिसमें पूर्वोक्त तीनों दोषोंके लक्षण हों वह असाध्यहै.

यकृत्‌रोग-इसकी उत्पत्तिलक्षणादि सब प्लीहाके समानही हैं इसीलिये प्रथम यकृत्‌रोगके विषयमें कुछ न लिखा.

हृद्रोगोत्पत्तिकारण-उष्ण, भारी, कसैली, खट्टी, तीक्ष्णके अधिक भक्षण, अधिक श्रम हृदयमें चोट, अतिचिन्ता और मलमूत्रावरोधके कारणसे हृद्रोग उत्पन्न होता है. यह रोग १ वात, २ पित्त, ३ कफ, ४ सन्निपात और ५ कृमि इन पाँच कारणोंसे उत्पन्न होता है.

---

१ प्लीहा वही रोग है जिसे मारवाडीभाषामें फिया बुन्देलखण्डीभाषामें खपरा और उर्दूभाषामें इसको तापातिल्ली भी कहते हैं.

हृद्रोगसामान्यस्वरूप–भोजनका रस प्रथम हृदयमें प्राप्त होकर त्रिदोष की प्रेरणासे बिगड जाता है, तब छाती (हृदय) में अत्यन्त पीडा उत्पन्न होती है, इसे वैद्यलोग हृद्रोग कहते हैं.

वातहृद्रोगलक्षण–हृदयमें पीडा फैलजावे, सुई चुभाने, दही मथने, आरीसे चीरने, कुल्हाडीसे फाडने, या हाथसे चीरडालनेके सदृश पीड़ा होवे तो वादीका हृद्रोग जानो.

पित्तहृद्रोगलक्षण–तृषा, दाह, घबराहट, मूर्च्छा, मुखसे कुछ दुर्गंध हो, मुख सूखे, हृदयमें चूसनेके समान पीडा हो और मुखसे धुवाँ निकले तो पित्तका हृद्रोग जानो.

कफजहृद्रोगलक्षण–हृदय भारी हों, मुखसे कफ गिरे भोजनमें अरुचि हो, शरीर जकडबंद होजावे, हृदयमें कफ जम जावे, मुख मीठारहे, और अग्नि मंद होजावे तो कफका हृद्रोग जानो.

सन्निपातजहृद्रोगलक्षण–जिसमें उक्त कहेहुए तीनों दोषोंके लक्षण दृष्टि पडे और तीव्र सुई छेदनेके सदृश पीडा हो तो सन्निपातका हृद्रोग जानो.

कृमिजहृद्रोगलक्षण–रोगीको खाज, उबकाई, थूकी (थुकनेकी इच्छा) शूल, हृदयमें पीडा, नेत्रोंके सामने अँधियारी, भोजनपर अरुचि, नेत्रोंमें पीडा हो तो कृमिका हृद्रोग जानो.

हृद्रोगके उपद्रव–क्लोम (तृषास्थानकी ग्लानि) और भ्रम हो, मुख सूखे और कफकृमिके सर्व उपद्रव हों तो हृद्रोगके उपद्रव जानो.

इति नूत० नि० यकृत्-प्लीहा-हृद्रोग लक्षण निरूपणं नाम चतुर्विंशतितमस्तरंगः ॥ २४ ॥

मूत्रकृच्छ्र=मूत्राघात.

मूत्रकृच्छ्रस्य रोगस्य मूत्राघातस्य वै क्रमात् ॥
तरंगे बाणनेत्रेऽस्मिन् निदानं लिख्यते मया ॥ २५ ॥

भाषार्थ–इस पचीसवें तरंगमें मूत्रकृच्छ्र और मूत्राघात रोगोंका निदान यथाक्रमसे लिखते हैं.

मूत्रकृच्छ्र रोगोत्पत्ति–तीक्ष्ण, रूखा, कच्चा अन्न खाने, जलचर जीवोंका मांस भक्षण करने, भोजनपर पुनः भोजन करने, अजीर्ण होने, परिश्रम होने, मद्यपीने, नृत्यकरने, घोड़े आदिकी आरूढ (सवारी) करनेसे मनुष्यके मूत्राघातरोग उत्पन्न होता है.

यह रोग १ वात, २ पित्त, ३ कफ, ४ सन्निपात, ५ प्रहार, ६ मलावरोध, ७ शुक्रावरोध और ८ पथरीसे उत्पन्न होनेके कारण आठ प्रकारका है.

मूत्रकृच्छ्ररोगके सामान्यलक्षण-वात, पित्त, कफ, अपने अपने कारणोंसे कुपित हो मूत्राशयमें प्राप्तहोकर मूत्रमार्गमें पीडा करते हैं तब मूत्र अतिकष्टपूर्वक चिनक चिनककर उतरताहै मूत्रका रुकाव तो थोडा परन्तु पीडा अधिक होती है जो ये लक्षण होनेलगें तो मूत्रकृच्छ्र हुआ जानो.

१ वातमूत्रकृच्छ्रलक्षण–जाँघ, लिंगेन्द्रिय, मूत्राशय और मूत्राशयकी सन्धियोंमें पीडा होवे, थोड़ा थोड़ा मूत्र वारंवार उतरे तो वातमूत्रकृच्छ्र जानो.

२ पित्तमूत्रकृच्छ्रलक्षण–पीला या लाल तथा अत्यन्त उष्ण मूत्र लिंगेन्द्रियसे बडी तडकपूर्वक उतरे तो पित्तमूत्रकृच्छ्र जानो.

३ कफमूत्रकृच्छ्रलक्षण–मूत्राशय और लिंगेन्द्रिय दोनों भारी हों दोनोंमें शोथ हो, मूत्रमें फेन आजावे और मूत्र कष्टसे उतरे तो कफमूत्रकृच्छ्र जानो.

४ सन्निपातमूत्रकृच्छ्रलक्षण–तीनों दोषोंके समस्त लक्षण दृष्टि पडें तो सन्निपातमूत्रकृच्छ्र जानो.

५ प्रहारजमूत्रकृच्छ्रलक्षण–मूत्र रुकजावे और वातमूत्रकृच्छ्रके समस्त लक्षण हों तो चोट लगनेका मूत्रकृच्छ्र जानो. इससे बचना दैववशात है.

६ मलावरोधमूत्रकृच्छ्रलक्षण–मलके वेग रोकनेसे वायु कुपित होकर मूत्राशयमें और पेटमें अफरा करती है. जो जाँघोंमें पीडा और मूत्र कष्टसे उतरे तो मलावरोधमूत्रकृच्छ्र जानो.

७ शुक्रावरोधमूत्रकृच्छ्रलक्षण-मूत्राशय और लिंगेन्द्रियमें शूल चले वीर्यमिश्रित मूत्र अतिकष्टपूर्वक उतरे तो वीर्य रोकनेका मूत्रकृच्छ्ररोग जानो.

८ पथरीमूत्रकृच्छ्रलक्षण-पथरी और शर्करा (रेती) ये दोनों अंत्रस्थान पोतोंमें रहती हैं. पथरी पित्तसे पकती, वादीसे सूखती और कफसे

घिसती हुई रेतीरूप होकर मूत्रमार्गसे निकलनेके समय मूत्रको रोकती है तब रोगीके हृदयमें पीडा, शरीरमें कम्प, कुक्षिमें शूल, मंदाग्नि और मूर्च्छा होती है ये लक्षण हों तो पथरीका मूत्रकृच्छ्र जानो. यह अतिदारुण है.

मूत्राघातरोगोत्पत्तिकारण—कुपथ्य करनेसे वात, पित्त, कफका प्रकोप होकर मूत्राघातरोग उत्पन्न होता है. यह रोग १ वातकुंडलिका, २ अष्ठीला, ३ वातबास्ति, ४ मूत्रातीत, ५ मूत्रजठर, मूत्रोत्संग, ७ मत्रक्षय, ८मत्रग्रंथि, ९ मूत्रशुक्र, १० उष्णवात, ११ मूत्रसाद, १२ विड्विघात और १३ बस्तिकुण्डली, ये १३ प्रकारका है.

१ वातकुण्डलिकालक्षण—रूखी वस्तु खाने और मत्रकृच्छ्रके धारणसे वायु मूत्राशयमें प्राप्त होकर पीडा करता, मूत्रकी नसोंमें विचरता हुआ कुपित होता है. तब कफ मूत्रके छिद्रको रोक देता है, और वायु कुंडलाकार होकर लिंगेन्द्रियके मुखमें रहता है, इसलिये मनुष्य थोडा थोडा अत्यन्त पीडापूर्वक मूतता है जो ये लक्षण हों तो वातकुण्डलिका जानो यह असाध्य है रोगीका बचना दुर्लभही जानो.

२ अष्ठीलारोगलक्षण—मूत्राशयमें अफरा हो, गुदासे वायुसरण न हो, गुदामें वायुकी दृढ और पत्थरसदृश गांठ पडजावे, मल न उतरे और अति पीडा हो तो अष्ठीलारोग जानो.

३ वातबस्तिलक्षण—मूत्रका वेग रोकनेसे मूत्राशयमें वायु प्राप्त होकर मूत्रप्रसारणी नसोंका मुख रोक देती है, जो मूत्र न उतरे, कूख तथा मूत्राशयमें पीडा हो तो बस्तिवात जानो, यह अतिकष्टकारी रोग होता है.

४ मूत्रातीतलक्षण—जो मनुष्य मूत्रको विलम्बतक रोके रहे पश्चात् मूत्र वेगसे न उतरे मंद धारासे प्रवाह हो तो मूत्रातीत जानो.

५ मूत्रजठररोगलक्षण—मूत्रका बेग रोकनेसे गुदाकी अपानवायु उदरको पवनसे भरके नाभिके नीचे अफरा और अत्यन्तपीडा उत्पन्न करे तो मूत्रजठररोग जानो.

---

१ मूत्राघात और मूत्रकृच्छ्रमें विशेषान्तर नहीं मूत्रकृच्छ्रमें मूत्र थोड़ा रुकता पर पीडा अधिक होती है. और मूत्राघातमें मूत्र अधिक रुकता पर पीडा थोडी होती है अर्थात् एक दूसरेसे विपरीत है.

६ मूत्रोत्संग लक्षण—पेडू या लिंगेन्द्रियकी नसोंमें प्राप्त हुए मूत्रको रोक रखनेसे मूत्रके संग थोडा थोडा रुधिर पीडायुक्त या विनापीडाही गिरने लगे तो मूत्रोत्संगरोग जानो.

७ मूत्रक्षयरोग लक्षण—अतिश्रमसे शरीर रूखा होकर मूत्राशयमें रहनेवाले वात, पित्त, कफ, मूत्रको नष्ट कर देते हैं. तब अतिदाह और पीडापूर्वक किंचित २ मूत्र उतरता है इसे मूत्रक्षयरोग कहते हैं.

८ मूत्रग्रंथि लक्षण—मूत्राशयमें अकस्मात् छोटीसी स्थिर अतिदृढ़ आंवलेके समान गोल वातकी गांठ उत्पन्न होजावे सो मूत्रग्रंथि जानो.

९ मूत्रशुक्ररोग लक्षण—मूत्रके वेगकेसमय स्त्रीसे मैथुन करनेको प्रवृत्त होतो पुरुषकी वायु शुक्रस्थानको भ्रष्टकर मूत्रस्राव (पेशाब कर चुकने) के पूर्व या पश्चात् भस्मके पानीके सदृश वीर्यको गिराती है इसे मूत्रशुक्र कहते हैं.

१० उष्णवातरोग लक्षण—स्त्रीप्रसंग, श्रम और धूपकी आधिक्यतासे पेडूमें रहनेवाले वात, पित्त, पेडु, लिंगेन्द्रिय और गुदाको दग्धकरते हुए अतिकष्टपूर्वक हल्दीके समान पीतवर्ण या रुधिरसंयुक्त रक्तवर्ण मूत्र उतरने देवे तो उष्णवातरोग जानो.

११ मूत्रसादरोग लक्षण—कुपथ्यके कारण मूत्राशयका वात पित्त और कफ बिगडकर मूत्रको अत्यन्त कष्टपूर्वक उतरने देते हैं, तब रोगीका शरीर सूख जावे, पीला लाल श्वेत गोरोचन समान, रक्तसमान, या चूना सदृश और गाढ़ा तथा थोडा थोडा मूत्र उतरे तो मूत्रसादरोग जानो.

१२ विड्घातरोग लक्षण—अति रूखा अन्न खानेसे मनुष्य दुर्बल होकर अतिकष्टपूर्वक मलयुक्त मूत्र छोडे और मूत्रकी दुर्गन्धि मलसदृश आवे तो विड्घातरोग जानो.

१३ बास्तिकुण्डलीरोग लक्षण—विशेष वेगपूर्वक दौडने, लंघन और श्रमकी दीर्घता तथा किसीप्रकारके प्रहारसे मूत्राशयमें गांठ पड़के गर्भके समान निश्चल होजावे, शूल और दाह हो, गाँठ दबानेसे बूंद बूंद और विशेष दबानेसे मूत्रकी धारा गिरनेलगे तथा शस्त्रकी चोट लगनेके सदृश दीर्घ पीडा हो तो बास्तिकुंडलिकारोग जानो. यह असाध्य है इससे बचना दैववशात् है.

विशेषतः–वातकुण्डलिकासे बस्तिकुण्डलिकापर्यन्त जो ऊपर १३ विकार लिख आये हैं ये तेरहों मूत्राघातके विशेष भेद हैं.

इति नूतनामृतसागरे निदानखण्डे मूत्रकृच्छ्र-मूत्राघातरोगोत्पत्तिलक्षण निरूपणं नाम पञ्चविंशतितमस्तरंगः॥ २५ ॥

अश्मरी-प्रमेह-पिड़िका.

अश्मरीमेहपिडिकागदानां च यथाक्रमात्
रसपक्षमिते भङ्गे निदानं लिख्यते मया ॥ २६ ॥

भाषार्थ–अब हम इस छब्बीसवें तरंगमें अश्मरी, प्रमेह और पीडिका रोगका निदान यथाक्रमसे लिखते हैं.

अश्मरी (पथरी) रोगोत्पत्तिकारण–मूत्राशयमें रहता हुआ वायु मूत्राशयके वीर्य, मूत्र, पित्त और कफको सुखाकर क्रम क्रमसे पथरीको उत्पन्न करता है, जैसे गौके हृदय (पित्ते) अन्तरस्थानमें गोरोचन बढ़जाता है तैसेही मनुष्यके पथरी बढ़जाती है, यह तीनों दोषोंके कोपसे होती है. कुछ एकसेही नहीं.

अश्मरी पूर्वरूप–पेट फूले, लिंगेन्द्रिय, मूत्राशय और अंत्रस्थान(अंडकोश) आदिमें अत्यंत पीडा हो, हृष्टपुष्ट बकरेके सदृश गंध मूत्रकी आवे, मूत्रकृच्छ्र, ज्वर और अरुचि प्राप्त हो तो पथरी होनेवाली जानो.

अश्मरीसामान्यरूप–नाभि, मूत्रनस (सीवन) मूत्राशय, मस्तकमें अत्यंत पीडा हो, मूत्रकी धारा एकसी बँधी हुई नहीं किन्तु टूटती टूटती हुई गिरे, मूत्रमार्ग रुकजावे, पथरीसे, मूत्रमार्ग खुल जानेपर सुखपूर्वक पीला और उसी पथरीसे मूत्रमार्ग बंद होजानेपर दीर्घ वेदनापूर्वक लाल मूत्र उतरे तो पथरीका प्रवेश होचुका जानो.

अश्मरीभेद–यह रोग १ वात, २ पित्त, ३ कफ और ४ वीर्यावरोधसे उत्पन्न होकर चारप्रकार का है परन्तु चारोंके साथ कफका संसर्ग सदैव बनाही रहता है.

१ वाताश्मरी लक्षण–लघुशंका (मूत्र) करतेसमय इन्द्रिय और नाभिमें पीडाके मारे चिल्ला उठे, रेचन होजावे, कम्पित होवे, मूत्र बूंद बूंद उतरे

दाँत चाबने लगे और कांटेयुक्त श्याम रंगकी पथरी हो तो वादीकी पथरी जानो.

२ पित्ताश्मरीलक्षण—पेडूमें पकेहुए फोडोंके समान वेदना और उष्णता होवे. भिलावेंके बीज सदृश आकार हो और पथरीका रंग पीला, लाल या काला हो तो पित्तकी पथरी जानो.

३ कफाश्मरीलक्षण—पेडू शीतल या भारी रहनेपर पीडा अधिक हो. पथरी चिकनी, गिलगिली, श्वेत और मुर्गीके अंडेके बराबर हो तो कफकी पथरी जानो.

४ शुक्रावरोधाश्मरीलक्षण—मैथुन करनेकी योग्यावस्थामें (वीर्य पूर्व रूपसे भर चुकनेपर) प्राप्त होनेपर भी किसी प्रकारसे वीर्यको रोककर पात न होने देवे तो वह (वीर्य) वायुकी प्रेरणासे मूत्राशय और अंडको-शके बीचमेंही सूखकर पथरी उत्पन्न कर देता है. जो पेडूमें शूल चले, अंडकोश पर शोथ, मूत्रमें पीडा और वीर्यका अभाव होजावे तो वीर्य की पथरी जानो.

उपभेद—यही शुक्राश्मरी लिंग और अंडकोशका मध्यभाग दबानेसे वायुकी प्रेरणाद्वारा रेतीके सदृश बारीकरूप होकर मूत्रके साथ गिरती है तब शर्करा और परमाणुरूप होकर गिरती है तब सिकता कहलाती है. जब वायु अनुलोम गतिमें होता है, तब तो यह पथरी मूत्रमार्गसे एक साथही निकलजाती परन्तु वायु प्रतिलोम होनेसे पुनः एकत्र होकर बंद रहती है तब यह (पथरी) मूत्र प्रवाहिणी नाडियोंमें जमकर उपद्रवोंको उत्पन्न करती है.

अश्मरी उपद्रव--निर्बलता, अंगशैथिल्यता, कृशता, कुक्षिशूल, अरुचि, पाण्डुवर्ण, उष्णवात. तृषा, उलटी और हृदयमें दबानेके सदृश पीडा ये पथ-रीकेउपद्रव हैं. इन्हें प्रथम दबाओ तब पश्चात् मूलरोगको दबाना चाहिये.

असाध्याश्मरीलक्षण—नाभि और अंडकोशमें शोथ हो, मल मूत्र रुक-

१-२-३पथरी कुछ ऊपर दीखती नहीं परंतु सद्वैद्य शस्त्रक्रियासे इसे निकाल सक्ते हैं उक्तवि-धिसे निकालीहुई पथरियोंकी परीक्षा तथा निरीक्षण करनेसे उपरोक्त वर्णित लक्षण तथा आकार निस्संदेह प्रत्यक्ष, देखे गये हैं.

कर विशेष पीडा हो तो पथरी, शर्करा या सिकता इस रोगीको नष्टकर देवेगी, इससे बचना दुर्लभही जानो.

प्रमेहरोगोत्पत्ति–बैठे रहना, सोतेरहना, श्रम न करना, मैथुन करना, धूपमें फिरना, नवीनजल या मद्यपान करना, दही, भेड़ियेका मांस, गड़ आदि मिष्टपदार्थ, कफकारी पदार्थ, विरुद्ध भोजन, उष्ण भोजन और खट्टा या कडुआ रस खाना, इन क्रियाओंकी विशेषाधिक्यता होनेसे मनुष्यको प्रमेह (परमा) रोग उत्पन्न होता है, सो यह रोग वात, पित्त और कफके प्रभेदके कारण २० प्रकारका है इनके प्रभेदका स्पष्टीकरण दरशाते हैं.

१ वातप्रमेहसम्प्राप्ति–अपनी अपेक्षा क्षीण कफ, पित्तकी क्षीणताके कारण मूत्राशयके शुद्ध मांसस्नेह (वसा) मज्जा और शरीरके रसको वायु (मूत्राशयकी) नसोंके मुखमें स्थित करके ४ प्रकारका प्रमेह उत्पन्न करती है.

२ पित्तप्रमेहसम्प्राप्ति–उष्ण पदार्थोंसे कुपित हुआ पित्त मूत्राशयके मेद मांस और शरीररसको दूषित करके ६ प्रकारका प्रमेह उत्पन्न करता है. कफप्रमेहसम्प्राप्ति–स्वाकारणीय कुपित हुआ कफ मूत्राशयके मेदमांस और शरीररसको दूषित करके १० प्रकारका प्रमेह उत्पन्न करता है.

१ वातप्रमेहान्तर्गत भेद– १ वसाप्रमेह, २ मज्जाप्रमेह, ३ मधुप्रमेह और ४ हस्तिप्रमेह ये वातसे होते हैं.

२ पित्तप्रमेहान्तर्गत भेद–१ क्षारप्रमेह, २ नीलप्रमेह, ३ कालप्रमेह, ४ हारिद्रप्रमेह, ५ मांजिष्टप्रमेह और ६ रक्तप्रमेह ये पित्तसे होते हैं.

३ कफप्रमेहान्तर्गत भेद–१ उदकप्रमेह, २ इक्षुप्रमेह, ३ सांद्रप्रमेह, ४ सुराप्रमेह, ५ पिष्टप्रमेह, ६ शुक्रप्रमेह, ७ सिकताप्रमेह, ८ सीतप्रमेह, ९ शनैःप्रमेह, और १० लाला प्रमेह ये दश कफसे होते हैं.

विशेष भेद–१ पूयप्रमेह, २ तक्रप्रमेह, ३ पिडिकाप्रमेह, ४ शर्कराप्रमेह, ५ घृतप्रमेह और ६ अतिमूत्रप्रमेह, ये ६ प्रकारके प्रमेह उक्त २० प्रमेहोंसे व्यतिरिक्त हैं. क्योंकि पूर्वोक्त २० प्रमेह चरक, सुश्रुत, वागभट्ट और

---

१ वात, पित्त और कफकी पथरी तों बाल, वृद्ध, युवा सभी को होती है, परन्तु शुक्राश्मरी केवल तरुण पुरुषोंको ही (जो पूर्ण वीर्यपूरित होगये हों) होती है. शर्करा और सिकता ये दोनों शुक्राश्मरीके भेदहैं ।

भावप्रकाशके मतसे तथा उपरोक्त ६ प्रमेह आत्रेयमतसे निश्चित किये गये हैं अतएव २६ प्रकार भी हो सक्ते हैं.

साध्यासाध्यप्रमेहनिर्णय—१ वायुसे दूषित मज्जादि सर्व शरीरव्यापी गंभीर धातुओंके नाश होनेसे वातप्रमेह असाध्य. २ दोष और दुष्योंके विषमपनेसे पित्तप्रमेह याप्य. ३ और दोष और दूष्योंके समान यत्न होनेसे कफप्रमेह साध्य होता है.

प्रमेहपूर्वरूप—जीभ, तालु और दाँतोंमें अधिक मैल जमे, हाथ पाँवमें दाह हो तृषा अधिक लगे, मुख मीठा बना रहे और देह चिकनी होजावे तो अनुमान करलो कि, प्रमेह उत्पन्न होगा.

प्रमेहसामान्यलक्षण—अत्यंत गाढ़ा या अत्यंत पतला मूत्र उतरे तो जानो कि, इसे प्रमेह उत्पन्न हो चुका है.

वातप्रमेहान्तर्गतभेद लक्षण।

१ वसाप्रमेहलक्षण—मत्रके साथ वसाभी गिरे, मूत्रका रंग कुछ कुछ नीलवर्ण हो तो वसाप्रमेह जानो.

२ मज्जाप्रमेहलक्षण—मज्जा (हाड़की गूदे) के सदृश अथवा मज्जायुक्त मूत्र उतरे तो मज्जाप्रमेह जानो.

३ मधुप्रमेहलक्षण—कसैला या मधुके समान मीठा और रूखा मूत्र उतरे तो मधु (क्षौद्र) प्रमेह जानो.

४ हस्तिप्रमेहलक्षण—वेगरहित और स्निग्ध (चिकनाहट) सहित तथा अवरोधयुक्त मतवाले हाथीके समान मूत्र उतरे तो हस्तिप्रमेह जानो.

पित्तप्रमेहान्तर्गत लक्षण.

१ क्षारप्रमेहलक्षण—खारके पानी सदृश मूत्रका वर्ण होजावे और इन्द्रियमें खारसदृश जलन होवे तो क्षारप्रमेह जानो.

२ नीलप्रमेहलक्षण—जिसके मूत्रका रंग नीलके समान होजावे उसे नीलप्रमेह जानो.

---

१ वात पित्त और कफ ये दोष, तथा रस मांसादि दोषोंसे नष्ट होनेवाले दूष्य कहाते हैं.
२ शुद्ध मांसका मिश्रण, चिकना, घृतसदृश पदार्थ जिसे उर्दू भाषामें चर्बी कहते हैं.
३ प्रमेहका कोईभी भेद बहुत दिनोंतक निरौषध रहने और कुपथ्यपूर्वक व्यवहारसे मधुप्रमेह हो जाता है यह महाअसाध्य है.

३ कालप्रमेहलक्षण--जिसके मूत्रका रंग काला (श्याहीसदृश[1]) होजावे उसे कालप्रमेह जानो.

४ हरिद्राप्रमेहलक्षण--जिसके मूत्रका रंग हल्दीके समान पीला होजावे और अतिकटु तथा दाहयुक्त मूत्र उतरे तो हरिद्राप्रमेह जानो.

५ मांजिष्ठप्रमेहलक्षण--मँजीठके रंगसदृश मूत्रका रंग होजावे और मूत्रकी दुर्गंधि आवे तो मांजिष्ठप्रमेह जानो.

६ रक्तप्रमेहलक्षण--मूत्रका रंग रक्तसदृश, अत्यंत, दुर्गन्धियुक्त उष्ण और नमकयुक्त हो तो रक्तप्रमेह जानो.

कफप्रमेहान्तर्गतभेदलक्षण.

१ उदकप्रमेहलक्षण--निर्मल, शीतल, श्वेतवर्ण, चिकना, गाढा और गंधरहित जलसदृश तथा बहुत मूत्र उतरे तो उदकप्रमेह जानो.

२ इक्षुप्रमेहलक्षण--ईखके रससमान अत्यंत मीठा, मूत्र उतरे जिसपर चींटी या मक्खी आ बैठे उसे इक्षुप्रमेह जानो.

३ सांद्रप्रमेहलक्षण--बासीपानीके सदृश गाढा मूत्र उतरे तो सांद्रप्रमेह जानो,

४ सुराप्रमेहलक्षण--मदिराके समान गंधित, निर्मल, गाढा और बहुत मूत्र उतरे तो सुराप्रमेह जानो.

५ पिष्टप्रमेहलक्षण--चावलके आटे मिले जलके समान, गदला, गाढा और श्वेत मूत्र उतरे, लघुशंकाके समय पीडा होकर रोमाञ्चित होजावे तो पिष्टप्रमेह जानो.

६ शुक्रप्रमेहलक्षण--वीर्यके सदृश या वीर्ययुक्त मूत्र उतरे तो शुक्रप्रमेह जानो.

७ सिकताप्रमेहलक्षण--वीर्यके कणको लियेहुए मूत्र उतरे उसे सिकता प्रमेह जानो. सिकता--रेती या बालू.

८ शीतलप्रमेहलक्षण--बारम्बार शीतल (ठंढा) और बहुत मूत्र उतरे उसे शीतलप्रमेह जानो.

९ शनैःप्रमेहलक्षण--जो शनैःशनैः (धीरे धीरे रहरहकर) मंद धारासे और थोडा थोडा मूत्र उतरे तो शनैःप्रमेह जानो.

---

१ इसके लक्षणानुसार तो कालप्रमेहकी अपेक्षा "श्यामप्रमेह" नामही कहा होता, क्योंकि कालशब्द मृत्युबोधक होनेसे उसका अर्थ मृत्युप्रमेह होजावेगा।

१० लालाप्रमेहलक्षण–लार (मुँहका थूक, चिकना जल) के सदृश तार चलता हुआ मूत्र उतरे तो लालाप्रमेह जानो.

१ वातप्रमेहोपद्रव–उदावर्त रोग होजावे, शरीरमें पीड़ा होवे, हृदय कंपे, सर्व रस भक्षणेच्छा रहै, पेटमें शूल हो, निद्रा न आवे, शरीर सूख जावे और श्वास खाँसी हो तो वातप्रमेहके उपद्रव हैं.

२ पित्तप्रमेहोपद्रव–पेडू और इन्द्रियमें शूल हो, पोते फटने लगैं. ज्वर, मोह, तृषा, मूर्च्छा, अतिसार हो और खट्टी डकारें आवें ये पित्तके प्रमेहके उपद्रव हैं.

३ कफप्रमेहोपद्रव–अन्न पाचन न हो, भोजनमें अरुचि हो, वमन हो, निद्रा अधिक आवे, खाँसी चलै और पीनसका रोग हो. ये कफप्रमेहके उपद्रव हैं, इन्हें प्रथम दबाओ पश्चात् चिकित्सा करो.

आत्रेयमतनिर्मित षड्विध प्रमेहलक्षण.

१ पूयप्रमेहलक्षण–राधा (पीव) के सदृश मूत्र उतरे या पीवके समान गंध उठे तो पूयप्रमेह जानो.

२ तक्रप्रमेहलक्षण–छाँछ (मठा) के सदृश मूत्र उतरे या मूत्रमें मठा कीसी गंध आवे उसे तक्रप्रमेह जानो.

३ पिड़िकाप्रमेहलक्षण–जिसके मूत्रमें वीर्यकी डली (ढेला) गिरे उसे पिडिकाप्रमेह जानो.

४ शर्कराप्रमेह लक्षण–मूत्र शर्करा तथा मिश्रीके समान मीठा और मिश्रीके सदृश वर्णधारी हो तो शर्कराप्रमेह जानो.

५ घृतप्रमेहलक्षण–मूत्रका वर्ण और स्वाद घृतके समान होजावे तो घृतप्रमेह जानो.

६ अतिमूत्रप्रमेह लक्षण–रात्रि, दिन क्रमशः अधिक मूत्र उतरे और रोगी भी क्रमशः निर्बल होताजावे तो अतिमूत्रप्रमेह जानो.

प्रमेह असाध्य लक्षण–वात पित्त और कफके प्रमेह अपने अपने उपद्रवयुक्त होजावें तथा प्रमेहपर पिडिका प्राप्त होजावे तो महाअसाध्य होगया उस रोगीका बचना असम्भव जानो.

प्रमेहमुक्त लक्षण–जिस रोगीका मूत्र निर्मल पानीसदृश पतला, कडुआ और तीक्ष्ण होजावे उसका प्रमेह नाश हुआ जानो.

विशेष दृष्टि—जिस रोगीका शरीर हल्दीके सदृश पीला और मूत्र-रुधिरके समान लाल हो जाताहै, उसे बहुतसे वैद्य भ्रमसे रक्तप्रमेह जानते हैं सो रक्तप्रमेह नहीं वह रक्तपित्तका कोप जानो. यह भी रक्तप्र-मेहका एक विभेदही है.

अनेक आचार्योंका ऐसा मत है कि, रजोधर्मसे स्त्रियोंके अनेक रोग दूर हो जाते हैं, इसीलिये उन्हें प्रमेह नहीं किन्तु प्रदर होता है.

पिड़िकारोगोत्पत्तिकारण—प्रमेह रोगपर विशेष कालतक औषधादि उपचार न होनसे संधि, मर्मस्थान और मांसल (शरीरमें, चूतड़, जाँघ आदिमें मांस भरे) अवयवोंमें पिडिका उत्पन्न होती है, यह रोग, (१ शराविका, २ कच्छपिका, ३ जालिनी, ४ विनिता, ५ अलजी, ६ मसूरिका, ७ सर्षपिका, ८ पुत्रिणी, ९ विदारिका और १० विदध्रि) १० प्रकारका है.

१ शराविकापिडिकालक्षण—फुन्सी ऊपरसे ऊंची और बीचमें गड्ढा हो तो शराविका जानो.

२ कच्छपिका लक्षण—शरीरके [illegible]में सरसोंके समान, दाह-युक्त और कछुवेके आकारकी फुन्सी हो त[illegible]ग्रथित, [illegible]छपिका जानो.

३ जालिनी लक्षण—मांसके समूहमें दाहयुक्त फुन्सी हों, तो जालिनी पिडिका जानो.

४ विनतालक्षण—पीठपर या पेटपर दाहयुक्त बडी बडी फुन्सी हों तो विनतापिडिका जानो.

५ अलजी लक्षण—पीडायुक्त लाल या काली फुन्सी हों और बहुत फटें तो अलजीपिडिका जानो.

६ मसूरिका लक्षण—मसूरके बराबर आर मसरके रंगसमान लाल रंगकी फुन्सी हों तो मसूरिका जानो.

७ सर्षपिका लक्षण—सरसोंके प्रमाण और सरसोंके रंग सदृश फुन्सी हों तो सर्षपिका जानो.

८ पुत्रिणी लक्षण—बड़ी फुन्सियोंके चहुँओर बारीक बारीक बहुतसी फुनसी हों तो पुत्रिणी जानो.

९ विदारिका लक्षण—विदारीकंदके समान गोल और उसीके रंगके समान रंगवाली फुनसी हों तो विदारिका जानो.

१० विदध्रिपिडिका लक्षण—ये फुन्सी ६ छः प्रकार की होती हैं जिन का निदान आगे लिखैंगे.

आत्रेयमतानिर्मितपिडिकालक्षण.

१ वातपिडिका लक्षण—काली फुन्सी हों, शरीर कँपने लगै, लघुशंका करनेमें शूल हो और रोगी विकल हो जावे, तो वातपिडिका जानो.

२ पित्तपिडिका लक्षण—लाल या काली फुन्सी दाहयुक्त हों तो पित्तपिडिका जानो.

३ कफपिडिका लक्षण—श्वेत, मोटी और शीतल हों, शोथयुक्त हों तो कफपिडिका जानो.

४ सन्निपातपिडिका लक्षण—उक्त तीनों दोषोंके लक्षण हों तो सन्निपात पिडिका जानो.

पिडिकाके उपद्रव—तृषा, खाँसी, मोह, हिचकी, मंदज्वर, विसर्प और मर्मरोग होवें, तथा मांसका संकोच (खिंचाव) हो ये पिडिकाके उपद्रव जानो.

असाध्यपिडिका लक्षण—गुदा हृदय, मस्तक, कंधे और मर्मस्थानोंमें फुन्सियाँ होजावें तथा मंदाग्निवालेको पिडिकारोग होजावे तो असाध्य जानो.

विशेषता—यह रोग विशेषकर प्रमेहवाले रोगीको ही होता है, परन्तु मेद बिगडनेसे विना प्रमेह भी उत्पन्न हो जाता है.

इति नूतनामृतसागरे निदानखण्डे अश्मरी, प्रमेह, पिडिका लक्षण निरूपणंनाम षड्विंशातितमस्तरंगः॥ २६ ॥

मेद, अतिस्थूल, कार्श्य, उदररोग.

मेदोरोगस्य स्थूलस्य कार्श्यस्य चोदरस्य वै ॥
मुनिपक्षमिते भंगे निदानं लिख्यते मया ॥ २७ ॥

भाषार्थ—अब हम इस २७ वें तरंगमें मेद, अतिस्थूल, कार्श्य और उदररोगका निदान यथाक्रमसे लिखते हैं.

मेदरोगोत्पत्तिकारण—अत्यंत परिश्रम करने, बैठे रहने, दिनको सोने,

कफकारक पदार्थ भक्षण करने और घृत तथा मधुरान्नका भोजन करने से मेद (चर्बी) बढ़कर समस्तधातुओंका मार्ग रोकदेती है, तव अन्य धातुयें पुष्ट नहीं होने पातीं अतएव मेदवृद्धिवाला पुरुष सर्व कार्योंके करनेमें अशक्त हो जाता है.

मेदवृद्धिसम्प्राप्तिलक्षण—क्षुद्रश्वास, तृषा, मोह, निद्राधिक्यता अकस्मात् श्वासावरोध, शरीरमें पीडा तथा शैथिल्यता, छींके आना, पसीना न निकलना, शरीर दुर्गंधि, निर्बलता और मैथुनाशक्तता होजावे, तो मेदवृद्धि हुई जानो. सर्व प्राणिमात्रको मेद रहतीही है परन्तु विशेष वृद्धि होनेपर उक्त लक्षण होकर बहुधा पेट बढजाया करता है.

मेदवृद्धिद्वारा जठराग्नि वृद्धिकारण—मेदसे वायु संचारमार्ग रुकनेसे वायु कोठेमें विशेष विचरता हुआ जठराग्निको दीप्त और आहारको शोषण करता है. इसलिये भोजन किया हुआ आहार शीघ्र पचकर पुनः—क्षुधा प्राप्त होती है. यही व्यतिक्रम कुछकाल पर्यंत चलनेसे उस मनुष्यको अनेक भयंकर विकार उत्पन्न होते हैं. जैसे--अग्नि—पवनकी सहायतासे प्रज्वलित होकर वनको भस्म कर देता है, तिसी प्रकार उदरस्थ अग्नि और वायु मिलकर उस मेदरोगीको दग्ध कर देते हैं.

विशेषता—मेद अत्यंत बढ़जानेपर वातादि दोष अकस्मात् घोरोपद्रव उत्पन्न करके रोगीका प्राण नष्ट करदेते हैं.

अतिस्थूललक्षण—मनुष्यके शरीरमें मेद और मांस विशेष बढजानेसे उसके कूले, पेट और स्तन (छाती) बहुत भारी होजाते हैं बलवृद्धि उत्साह जाते रहें, यह मोटा तो मर्यादासे बाहर होजाता परन्तु अशक्त रहता है, उसे स्थूल (मोटा) कहते हैं. यह मेदरोगकाही भेदहै.

कार्श्यरोगोत्पत्तिकारण—वातकारक और रूखे पदार्थोंके भक्षण लंघन मैथुन, श्रम, भय, धन, पुत्रादि नाश और चिंता इनकी आधिक्यतासे मनुष्यको कार्श्य (कृशता, दुबलापन, क्षीणता) रोग होताहै.

कार्श्यरोगसम्प्राप्तिलक्षण—कूले, पेटकी पँसुली, गर्दन सूखती जावे, नसें दीखनेलगें, शरीरमें हड्डियां और चर्ममात्र शेष रहजावें और दुबला होजावे तो कार्श्यरोग प्रकट हुआ जानो. इसी क्षीणतासे प्लीहा, खाँसी, क्षयीरोग, गुल्म, अर्श, उदररोग, संग्रहणी और आध्मान इत्यादि रोग भी उत्पन्न होते हैं.

विशेषतः—अनेक मनुष्य दीखनेमें तो अत्यन्त कृश हैं परन्तु उनके शरीरमें मेदका भाग अति न्यून और वीर्यका भाग विशेष होनेके कारण वे मैथुनादि कृत्य तथा स्त्रीको गर्भधारण करानेमें अपनी प्रबलतासे समर्थ रहते हैं. उन्हें क्षीण रोगयुक्त न जानो और अनेक मनुष्योंके शरीरमें मेदभाग विशेष रहनेसे वे देखनेमें तो पुष्ट जान पडते हैं परन्तु वीर्यांश न्यून रहनेसे मैथुन तथा अन्यकृत्योंमें भी बलहीन और असमर्थ रहते हैं उन्हें क्षीणरोगयुक्त जानो.

कार्श्यरोग असाध्यलक्षण--जो मनुष्य स्वतःस्वभावसेही क्षीण हो, मंदाग्नि होजावे और शरीर बलहीन होताजावे तो असाध्य जानो.

उदररोगोत्पत्तिकारण—मन्दाग्नि, अजीर्ण, मलिनान्न, क्षीरमत्स्यादि भोजन, मलसंचय और कुपथ्यादि कारणोंसे वात, पित्त, कफ संचित होकर पसीना तथा जलकी बहानेवाली नसोंको रोक देते हैं तब प्राण-वायु जठराग्नि और अपानवायु दूषित होकर उदररोग उत्पन्न होता है. यद्यपि समस्तरोग जठराग्निकी मंदतासे होते हैं, तथापि उदररोग तो प्रायःमन्दाग्निसेही उत्पन्न होता है,

उदररोगसामान्यलक्षण—अफरा, गमनशक्तिका अभाव शरीरमें दुर्बलता, अग्निमांद्य, शोथ, अंगशैथिल्यता, हडफूटन, तन्द्रा, अधोवायु और मलावरोध हो तो उदररोग जानो. यह रोग १ वात २ पित्त ३ कफ ४ सन्निपात ५ प्लीहा ६ बद्धगुदा ७ क्षति और ८ मलकी भिन्नताके कारण ८ आठ प्रकारका है.

१ वातोदरलक्षण--हाथ, पाँव, नाभि और कुक्षिमें सूजन हो. कुक्षि, पार्श्व (पसली) पेट, कटि और पीठमें पीडा हो, सन्धियोंमें फूटनकी सी वेदना हो, सूखी खाँसी, शरीर मर्दन, नाभिके नीचे भारीपन, मलावरोध और पेटमें "गुड गुड" शब्द हो, शरीरकी त्वचा, नख और नेत्र काले या लाल या धूसरवर्ण हो जावें तो बादीका उदररोग जानो.

२ पित्तोदरलक्षण—ज्वर, मूर्च्छा, दाह, तृषा, मुखमें कडुपन, भ्रम, अतिसार हो, त्वचा पीली, पेटपर हरापन पेटकी नसें पीली या ताम्रवर्ण दृष्टि पडैं, पसीना तथा उष्णतासे पेटमें जलन पडैं, धूमयुक्त डकारें आवें और त्वचा कोमल तथा पकीसी जानपडे तो पित्तका उदररोग जानो.

३ कफोदररोगलक्षण-शरीरमें शिथिलता, भारीपन और शोथ होजावे, निद्राधिक्यता, अन्नपर अरुचि, श्वास कास और पेटभारी, वमन होनेकीसी इच्छा हो, अन्नपर अरुचि हो, पेटमें गुडगुडाटा हो, शरीर तथा पेट ठंढा, चिकना और श्वेत नसोंसे पूरित होजावे, तो कफसे उदररोग हुआ जानो.

४ सन्निपातोदरलक्षण–उक्त तीनों दोषोंके लक्षण संयुक्त हों तो सन्निपातोदर जानो. माधवनिदानमें इसी सन्निपातोदरकोही "दुष्योदर" करके माना है, जिसका कारण और लक्षण आगे देखो.

दुष्योदरकारण–जिस मनुष्यको दुष्ट स्त्रियाँ वशीकरणके[1] लिये अपने या किसी सिंहादि पशुके नख, रोम, मूत्र, विष्ठा या आर्त्तव (रजोधर्म होनेके समय योनिप्रवाही रुधिर) को अन्नमें मिश्रित करके खिला देवें तथा कोई शत्रु विषयुक्त अन्नपानादि भक्षण करादेवे, या संयोगज विष जैसे समभाग घृत और मधुयुक्त होनेसे विषरूप होजाता है इसे (संयोगज विष कहते हैं) किम्वा मलीन जल आदि पीनेमें आजावे तो उक्तकारणोंसे वात, पित्त, कफ तथा रुधिर समस्त शरीरमें कुपित होके उदररोगको उत्पन्न करते हैं. यह उदररोग शीत, वायु तथा दुर्दिन (जिस दिन सूर्य मेघोंसे आच्छादित हो) में विशेष प्रकोपको प्राप्त होता है.

दुष्योदरलक्षण–रोगीके शरीरमें जलन हो, मूर्च्छा आवे, दुबला होजावे, प्यास अधिक लगे, और अंगका रंग पीला पडजावे तो दुष्योदर जानो.

५ प्लीहोदरलक्षण–दाहकारक तथा कफकारक पदार्थोंके विशेष सेवनसे रुधिर कुपित होकर कफसे प्लीहाको बढ़ता है, तब बायेंपार्श्वभागमें पीडा, मंदाग्नि, जीर्णज्वर और कफ पित्तके अन्य रोग उत्पन्न होकर वह मनुष्य बलहीन होताजाता है ये लक्षण हों तो प्लीहोदर जानो.

विशेषतः–जो दाहने पार्श्वभागमें पीडा होके उक्त समस्त लक्षण हों तो यकृतोदर जानो, यह प्लीहोदरकाही विशेष भेद है.

१ जो कुभार्या तथा अन्य दुष्ट स्त्री अपने पति या अन्यजन को किसी कुशिक्षा किम्वा स्वेच्छासेही वशीकरणार्थ उक्त कार्य करती है सो इससे कुछ वह वशीभूत नहींहोता वरन् केवल धर्म और आरोग्यता भ्रष्ट होकर शरीर नाश होता है और वह कार्यसाधक (स्त्री) ऐसा महान् दुष्टकर्म करके इस लोक तथा परलोकमे अपराधपात्र होकर नरकगामिनी होती है।

६ बद्धगुदोदरलक्षण-बिना पके अन्न भक्षणसे पेटकी महीन आँतें रुककर वातादि दोष सहित मलका संग्रह हो जाता है, वह मल थोडा थोडा अत्यंत कष्टपूर्वक गुदाद्वारसे बाहर निकलता तथा हृदय और नाभिके बीचमें पेट बढ़जाता है, ये लक्षण हों तो बद्धगुदोदर जानो.

७ क्षतोदरलक्षण—कांटा, कंकर, रेती आदि छेदक वस्तु अन्नके साथ भक्षण करनेसे पक्काशयमें प्राप्त होकर आँतोंको छेदन करदेती हैं, तब उस घायल आँतोंसे गुदाद्वारा बहुतसा द्रवभाग स्राव होकर पेडू बढ़जाता है और शूल उठकर चीरनेके समान पीडा होती है ये लक्षण हों तो क्षतोदर जानो. इसीको " परिस्रावी " भी कहते हैं.

८ जलोदरलक्षण—घृतादि स्नेहवस्तु पान करने, बस्तिकर्म करने, रेचन (जुलाब) लेने और वमन करने पश्चात् शीघ्रही शीतल जल पीनेमें आजावे तो जलकी बहनेवाली नसें दूषित होकर चिकनाईसे लिपटीहुई क्रम क्रमसे बढ़के जलोदरको उत्पन्न करती हैं. जिस रोगीके पेटपर नाभिके आस पास चिकनाहट और गुलाई होजावे, शरीर कम्पित हो, रोगीके पेटमें शब्द और क्लेश हो तो जलोदर जानो. इसे 'उदकोदर' भी कहते हैं.

उदररोग साध्यासाध्यनिर्णय—ये समस्त आठों प्रकारके उदररोग उत्पन्न होतेही कष्टसाध्य हैं, बलवान पुरुषको जलोदर न होनेतक ७ उदररोग कुछ कालके हों तो याप्य या ईश्वरेच्छासे साध्य भी होजासक्ते हैं. और बद्धगुदोदर उत्पन्न होनेसे १५ दिनतक साध्य तथा १५ दिन पश्चात् असाध्य होजाता है. परन्तु क्षतोदर और जलोदर तो उत्पन्न होतेही असाध्यही होते हैं.

उदररोग असाध्यलक्षण—रोगीके नेत्रोंपर सूजन होवे, उपस्थेंद्रिय टेढ़ी होजावे, शरीरकी त्वचा गलजावे, रक्त मांस और जठराग्नि क्षीण होजावे पार्श्वास्थि (पँसुलियोंकी हड्डी) टूटीसी टेढी होजावें अन्नपर अरुचि, शरीरपर शोथ और अतिसार होजावे तथा रेचन (दस्त) होनेके

---

१ जिसप्रकार पखाल (मशक) में भराहुआ पानी इधर उधर हिलनेसे शब्द होता है, तिसी प्रकार जलोदरवाले रोगीका पेटभी मशककी नाईं तनाहुआ, चिकना, हिलताहुआ और शब्दमय होजाता है।

पश्चात् पुनः पेट पूर्ववत् फूलकर भर जावे तो असाध्योदर रोग जानो. इससे बचना दैववशात् ही है.

इति नूतनामृतसागरे निदानखण्डे मेदोरोग, कार्श्यरोग उदररोगलक्षण-निरूपणं नाम सप्तविंशतितमस्तरंगः ॥ २७ ॥

शोथ, अंडवृद्धि, वर्ध्म.

शोथवृद्धिवर्ध्मरुजां तरंगेऽत्र यथाक्रमात् ॥
वसुनेत्रमिते भंगे कारणं वर्ण्यते मया ॥ २८ ॥

भाषार्थ–अब हम इस २८ अट्ठाईसवें तरंगमें शोथ अंडवृद्धि और वर्ध्मरोगोंका निदान यथाक्रमानुसार वर्णन करते हैं.

शोथरोगोत्पत्तिकारण–वमन, विरेचन, ज्वर पांडुरोग, लंघनसे दुर्बल होकर मनुष्य खारे, खट्टे, तीखे, उष्ण भारी पदार्थ, दही आदि कच्चे पदार्थ, मृत्तिका, शाकपत्र तथा मैदा आदि विरुद्ध, दूषित और विषयुक्त अन्न खा लेवे, अर्शरोग बहुत दिनोंका होजावे, पेटमें आमांश बढजावे, गर्भ-स्थानमें चोट लगजावे, अनियमित कालमें गर्भ गिरजावे, तथा विरेच-नादि पंचकर्म मिथ्योपचार पूर्वक कियेजावें तो शोथरोग उत्पन्न होता है. सो यह रोग १ वात २ पित्त ३ कफ ४ वातपित्त ५ वातकफ ६ कफ-पित्त ७ सन्निपात ८ प्रहर और विषके अंतरके कारणसे ९ प्रकारका होता है यह रोग "सूजन" के नामसे बहुधा कहाजाता है.

शोथरोगपूर्वरूप–नेत्रादिकसे तीव्र उष्णता होवे, नसें तनके पीड़ित होवें, शरीर भारी पडजावे और जिस अंगमें सूजन आनेवाली हो उस अंगमेंभी कुछ बोझसा जानपडे तो शोथ उपजनेवाला जानो.

शोथरोगोत्पत्ति–स्वकारणीय दूषितवायु, दूषित रक्त, पित्त और कफ-को बाहरकी नसोंमें प्राप्त करके अपना वायु संचार बंद कर लेता है, तब चर्मके नीचे मांस ऊंचा हो जाता है, इसे शोथ कहते हैं.

शोथसामान्यलक्षण–शरीर भारी, चित्त विकल, ऊँचा, संतप्त और रोमांचित होजावे, वर्णविपर्ययता (शरीरका रंग विचित्र) सा होजावे और नसें महीन पडजावें, तो शोथरोग उत्पन्न हुआ जानो.

१ वातशोथरोगलक्षण—जो शोथ चर (एक अंगसे दूसरे अंगपर हो-जानेवाला) होवे, शरीरकी त्वचा कठोर, लाल या काली शून्य (सूनी स्पर्शबोधहीन) रोमहर्ष और पीडायुक्त होवे. निष्कारणही न्यूनाधिक होजावे, दबानेसे दबकर पुनः ऊँचा होजावे, रात्रिको न्यून और दिनको अधिक बलिष्ठ रहै तो वातशोथ जानो.

२ पित्तशोथलक्षण—जो शोथ स्पर्शमें कोमल, गंधयुक्त हो, त्वचाका वर्ण लाल या पीला होजावे. भ्रम, ज्वर, स्वेद (पसीना) तृषा, मद और रक्त नेत्र हों, शोथमें दाह और छूनेसे पीडा तथा पाकयुक्त हो तो पित्त शोथ जानो.

३ कफशोथलक्षण—जो श्वेत, भारी, स्थित हो, अन्नपर अरुचि. निद्रा, उलटी और अग्निमांद्य हो, लार गिरै, शोथ दबानेसे दबजावे, रात्रिको विशेष वेग तथा दिनको न्यून होजावे, तो कफशोथ जानो.

४ वातपित्तशोथलक्षण—जिसमें वात और पित्त दोनोंके लक्षण दृष्टि पड़ें उसे वातपित्तशोथ जानो.

५ वातकफशोथलक्षण—जिसमें वात और कफ दोनोंके लक्षण दृष्टि पड़ें उसे वातकफशोथ जानो.

६ कफपित्तशोथलक्षण—जिसमें कफ और पित्त दोनोंके लक्षण दृष्टि पड़ें उसे कफपित्तशोथ जानो.

७ सन्निपातशोथलक्षण—जिसमें वात, पित्त और कफ तीनोंके लक्षण दृष्टि पड़ें उसे सन्निपातशोथ जानो.

८ क्षतजशोथलक्षण—चोट लगने, शस्त्रप्रहार होने, शीत पवन लगने, दधि भक्षण करने, भिलावा, कौंचकी फलीके रुआँ या (जमीकंद) आदि पदार्थ लगनेसे जो शोथ होता है, वह शरीरमें चहुँओर फैल जाता है लाल रंग और दाहयुक्त होता है और बहुधा पित्तशोथके लक्षणोंसे मिला हुआ होता है ये लक्षण हों तो चोटका शोथ जानो.

९ विषजशोथलक्षण—विषवाले जीवोंके मल, मूत्र, वीर्यादि स्पर्श, या उनकी डाढ़, दंतादि लगने, तथा विषैले वृक्षकी पवन लगने, किंवा मनुष्यादिके दाँत, डाढ़, नखादि लगनेसे जो शोथ होता है, वह शरीरमें अधिक फैलता और दाहयुक्त होता है, ये लक्षण हों तो विषका शोथ जानो.

शोथोपद्रव—कास, तृषा, छर्दि (वमन) भोजनमें अरुचि, शरीरमें दुर्बलता और ज्वर हो तो रोगीका बचना दुर्लभहै, अतएव ऐसे रोगीका यत्न करनाही निष्फल है.

साध्यासाध्य निर्णय—जो शोथ पेडू (मूत्राशय) स्तनपर्यन्त हो, वह कष्टसाध्य और शरीरमात्रपर शोथ हो तो असाध्य है, पुरुषको जो शोथ पांवसे चढ़कर मुख पर्यन्त आवे, तथा स्त्रियोंको मुखसे चढ़कर पश्चात पांवतक आवे सोभी असाध्य है. परन्तु गुह्यस्थान (योनि, लिंग, गुदा) पर उत्पन्न हुआ शोथ तो पुरुष स्त्री दोनोंके लिये असाध्यही जानो.

अंडवृद्धिरोगोत्पत्ति—यह रोग १ वात २ पित्त ३ कफ ४ रुधिर ५ मद ६ मूत्र ७ अंत्र इन सात कारणोंसे उत्पन्न होकर सातही विभागोंमें विभाजित किया गया है, इनमेंसे मूत्र और अंत्रज ये दोनों वातसेही उत्पन्न होते हैं, परन्तु इनमें केवल हेतु भेदमात्र है. यह वही रोग है जिसे वृद्धि अंत्रवृद्धि और लोकमें बहुधा "गोई बढ़ना" भी कहते हैं.

अंडवृद्धिसामान्यलक्षण—स्वकारणीय कुपित अधोगामी वायु स्वस्थानसचल जाँघोंके ऊपर और पेडूके नीचे (जाँघ और पेडूके मध्य) एक ओरकी संधियोंमेंसे अंडकोशमें प्राप्त होके अंडकोशकी आधारभूत नसोंको पीड़ित करताहुआ अंडकोश (गोई) का आकार बढ़ा देता है, इसे अंडवृद्धि कहते हैं.

१ वातांडवृद्धिलक्षण—अंडकोश पवनसे भराहुआ लुहारके धौंकनी या पखाल (मशक) के समान जानपडे, रूखा हो और निष्कारणही पीडा हो तो वातांडवृद्धि जानो.

२ पित्तांडवृद्धिलक्षण—अंडकोश, पके गूलरफल समान दाहयुक्त, पाकयुक्त और शोथयुक्त हो तो पित्तसे अंडवृद्धि जानो.

३ कफांडवृद्धिलक्षण—अंडकोश ठंढा, भारी, चिकना, कठोर, पीडा और खुजालयुक्त हो तो कफसे अंडवृद्धि जानो.

४ रक्तांडवृद्धिलक्षण—अंडकोश काले फोडेसे व्याप्त और पित्तांडवृद्धिके लक्षणयुक्त हो तो रुधिरकी अंडवृद्धि जानो.

५ मेदांडवृद्धिलक्षण—अंडकोश कोमल तथा तालफल सदृश हो और कफज अंडवृद्धिके लक्षण जान पडैं तो मेदसे उत्पन्नहुई अंडवृद्धि जानो.

६ मूत्रांडवृद्धिलक्षण—चलनेके समय अंडकोश जलभरी पखाल (मशक)

सदृश तनाहुआ शब्दमय नीचे लटकाहुआ पीडायुक्त और कोमल हो तथा मूत्र कष्टसे उतरै तो मूत्रसे अंडवृद्धि जानो. जो मनुष्य मत्रवेगको बहुत दिनतक रोका करै उसे यह अंडवृद्धि होती है.

अंत्रांडवृद्धिलक्षण—वायुप्रकोपकारी आहार, मलमूत्रावरोध, शीतलजलमें तैरना, युद्धमें पदसंचाल, बोझ उठाना, मार्गगमन, अंगको एढ़ा टेढ़ा करना, भयोत्पादक कार्य करना, तथा अन्य वायुकोपकारी कार्योंके करनेसे वायु शरीरकी छोटी आँतोंको द्विगुण करके उनके स्थानमें नीचेके भागमें प्राप्त होता है और पेडू, जाँघ और कमरकी संधिरूप वंक्षण स्थानमें प्राप्त होकर गाँठ सदृश शोथको उत्पन्न करता है, जब इस शोथका उपाय बहुत कालतक नहीं होता तब अंडकोशमें प्राप्त होकर अफरा, शूल और मलमूत्रावरोधके साथ अंडवृद्धि उत्पन्न होजाती है, इस अंत्रज अंडवृद्धिको युक्तिसे दबाओ तो "घुण घुण" शब्द होता हुआ पेटमें जाता और छोड़नेसे पुनः अंडकोश फूल जाता है, इन लक्षणोंसे युक्त हो तो अंत्रजअंडवृद्धि जानो.

अंडवृद्धिअसाध्यलक्षण—वायुका संचय अधिक होनेसे आँतें और अवयव मिलके अंत्रजअंडवृद्धि होती है सो जो वह वातांडवृद्धिके लक्षण सदृश हो तो असाध्य जानो.

वध्मरोगोत्पत्ति—कफकारक, दाही पदार्थ, या भारी अन्न या सूखा, दुर्गंधित मांसभक्षण तथा पित्तकारी मिथ्या विहार (स्त्रीसंगादिकी विपुलता) से सपित्त या केवल वायु कुपित होकर वंक्षण (मूत्राशय और जंघास्थलका संधिस्थान) में गठानके समान शोथ उत्पन्न करता है, उसे वध्मरोग कहते हैं.

वध्मरोगसम्प्राप्तिलक्षण—उपरोक्त गठान होकर शरीरमें ज्वर, शूल और शिथिलता हो तो वध्मरोग जानो.

विशेषतः—इसी वध्मको लोकमें "बद "भी कहते हैं. अनुमान करते हैं कि या तो "वध्म" का अपभ्रंश होकरही "बद" शब्द बनगया है. या यावनी भाषाके "बद" शब्दसे (जिसका अर्थ बुरा है) बना है क्योंकि इस रोगसे वह मनुष्य " बद या बादी या अपशय " को प्राप्त होता है.

इति नूतनामृतसागरे निदानखंडे शोथ अंडवृद्धि-वध्मरोगलक्षणनिरूपणं नामाष्टविंशतितमस्तरंगः ॥ २८ ॥

गलगंड, गंडमाला, अपची, ग्रंथि, अर्बुदरोग.

गलगंडादिरोगाणामर्बुदस्य यथाक्रमात् ॥
अंकनेत्रे तरंगेऽस्मिन्निदानं लिख्यते मया ॥ २९ ॥

भाषार्थ—अब हम इस २९ उन्तीसवें तरंगमें गलगंड, गंडमाला, अपची, ग्रंथि और अर्बुदरोगोंका निदान यथाक्रमसे वर्णन करते हैं.

गलगंडरोगोत्पत्ति—वात, कफ और मेद गलेके स्थानमें दूषित होकर गलेकी दोनों ओर स्थित होके अपने अपने चिह्नोंयुक्त गलगंडरोग करतेहैं.

गलगंडरोगसामान्यलक्षण—जिस मनुष्यके गलेमें अंडकोशके समान दृढ शोथ होकर लटके वह शोथ वढा हो या छोटा, उसे गलगंडरोग जानो. यहरोग १वात २कफ और ३मेदकी भिन्नताके कारण तान प्रकारका है.

१ वातगलगंडरोगलक्षण—जिसमें पीडा अधिक हो, गलेकी नसें काली या लाल हों, कठोर हों, विलम्बसे बढै, शोथ नहीं पके, मुख निस्स्वादरहे और कंठ तालू सूखते रहे, उसे वातगलगंड जानो.

२ कफगलगंडरोगलक्षण—गलेमें अंडकोशके समान लटकताहुआ स्थिर, भारी, शीतल, खुजालयुक्त और अल्प पीडादायक, शोथ हो, जो बिलम्बसेही वढै और विलम्बसेही पकै, रोगीका मुख मीठा और कंठ तालू कफसे लिपटे रहैं तो कफका गलगंडरोग जानो.

३ मेदगलगंडरोगलक्षण—जो शोथ, चिकना पीला, कोमल, स्वल्प पीडायुक्त, अतिकटु होकर गलेकी संधिमें तुम्बडीके समान लटका रहै, जडमें पतला और रोगीकी देहानुसार न्यूनाधिक हो, रोगीका मुख चिकना और गलेमेंही बोले तो मेदगलगंड जानो.

गलगंडरोगअसाध्यलक्षण—रोगीको श्वास बडे कष्टसे आवे, सर्वांग कोमल हो, रोग उत्पन्न होनेसे १ वर्ष बीतजावे, भोजनमें अरुचि हो, शरीर क्षीण होजावे, शब्द (स्वर) स्पष्ट न निकलै तो असाध्य गलगंड जानो. ऐसे रोगीकी चिकित्सा करनाही व्यर्थ है.

गंडमालारोगोत्पत्तिलक्षण—मेद और कफके कारण मनुष्यके गले या काँख, या ग्रीवा, या पेडू, या जाँघकी संधियों (वंक्षणस्थानों) में जो वेर या आँवलके समान दृढ गठोंने हो जाती हैं, सो गंडमाला कहाती हैं.

अपचीरोगोत्पत्तिलक्षण–उपरोक्त (गंडमाला) रोगकी गठानेंही बहुत पुरानी होनेपर पककर पीब बहने लगती, एक अच्छी होती तो दूसरी होजाती उसमें विलम्ब अधिक होती ये लक्षण हों तो अपचीरोग जानो. यह गंडमालाकाही एक अवस्थाभेद है.

अपचीअसाध्यलक्षण–पार्श्वशूल, कास, ज्वर और वमनयुक्त अपची हो तो असाध्यरोग जानो.

ग्रंथिरोगोत्पत्ति–वात, पित्त और कफके कोपसे मांस,रक्त,मेद और नसें दूषित होकर गोल, ऊंची और शोथयुक्त गठान उत्पन्न होती है, इसे ग्रंथिरोग कहते हैं. यह रोग १ वात २ पित्त ३ कफ ४ मेद और ५ नसोंकी भिन्नताके कारणसे ५ प्रकारका है.

१ वातजग्रंथिलक्षण–जो गठान प्रथम त्वचा (चर्म) को खींचकर बडा होवे पश्चात् उसमें काटने,छेदने,उठाकर फेकने, मथन करने और फोडनेके समान पीडा हो,गाँठ काली, कोमल और पखाल (मशक) के समान तनी रहै तथा फूटनेपर उसमेंसे केवल निर्मल रक्त निकले ये लक्षण हों तो वातजग्रंथि जानो.

२ पित्तजग्रंथिलक्षण–गठानमें अत्यन्त दाह, धुआँ निकलता सा और सिंगी लगानेके समान पीडा जानपडै, पककर फूटनेपर पीली या लाल या लालपीली पीब अथवा अत्यंत दुष्ट रुधिरप्रवाह हो तो पित्तजग्रंथि जानो.

३ कफजग्रंथिलक्षण–जो गठान ठंढी रोगीके रंगसे मिलतीहुई अल्प पीडाकारक, विशेष कंडू (खुजाल) युक्त, पत्थरसी दृढ (कड़ी) बहुत कालसे पकने या बढनेवाली और फूटनेपर सफेद और गाढी पीब बहै तो कफकी गठान जानो.

४ मेदोजग्रंथिलक्षण–जो गठान रोगीका शरीर मोटाहोनेसे बडी और दुर्बल होनेसे छोटी, चिकनी, अधिक कंडुयुक्त अल्पपीडायुक्त हो और फूटनेपर खल्ली (ढेप) या घीके समान मेद (चर्बी) निकले तो मेदकी गठान जानो.

५ शिराजन्यग्रंथिलक्षण–जो निर्बल पुरुष सबलोंके सदृश व्यायामादि करे तो ऐसे अशक्तिजकार्योंसे वायु संकोपित होकर नसोंके समूहको

संकोचित पीड़ित और सूखा करके गोल ग्रंथि उत्पन्न करती है, उक्त लक्षण हों तो नसोंकी ग्रंथि जानो.

साध्यासाध्यग्रंथिलक्षण–शिराजन्यग्रंथि पीड़ासहित, चंचल हो तो कष्टसाध्य और पीडारहित, अचल, ऊंची हो तो असाध्य, अथवा मर्म-स्थानमें हो तो असाध्यही जानो.

अर्बुदरोगोत्पत्तिकारण–जो मनुष्य थोडा अन्न और अधिक मांस भक्षण करै, उसके वात, पित्त और कफ दूषित होकर रुधिर मांसको बिगाड़ देते हैं. तब सर्व शरीर या किसीएक विशेष भागमें एक वडी, गोल, स्थिर अल्पपीड़ायुक्त, दृढ़ बलवाली, विलम्बसे बढनेवाली और पकनेवाली एक गठान ऊँचीसी उत्पन्न होती है जिसे वैद्यक शास्त्रज्ञलोग अर्बुदरोग कहते हैं. यह रोग "रक्तार्बुद और मांसार्बुद" दो प्रकारका होता है.

१ रक्तार्बुदलक्षण–स्वकारणीय कुपित पित्त रक्त और नसोंको संकुचित तथा पीडित करके मांसपिंडको ऊँचा करता है, तब वह व्रण कुछ पककर स्रवित होता तदनंतर मांसके अंकुरोंसे आच्छादित और वृद्धिंगत होके उसमें निरंतर रुधिर बहता रहता है, उसे रक्तार्बुद कहते हैं. यह रक्तार्बुद असाध्य होता है, क्योंकि इससे रक्तका क्षय और उपद्रवोंसे पीडित होनेके कारण रोगीका शरीर पांडुवर्णयुक्त हो जाता है.

२ मांसार्बुदलक्षण–मनुष्यके शरीरमें मुष्टिप्रहार आदिसे प्रहारित स्थानका मांस दूषित होकर शोथ उत्पन्न करता है, वह शोथ पीडारहित, चिकना, पाकरहित, पत्थरसदृश कठोर, अचल और देहके वर्णसदृश हो तो मांसार्बुद जानो. यह भी असाध्यही है.

अध्यर्बुद तथा द्व्यर्बुद अन्तर–एकबार अर्बुदरोग होकर पुनः उसी स्थानपर हो उसे अध्यर्बुद और जो एक साथ या दो दोषोंकी प्रकोप साहचर्यसे हो उसे द्व्यर्बुदरोग जानो. यह भी असाध्य तथा अर्बुदका भेदही है.

अर्बुदनिष्पाककारण-अर्बुदरोगमें कफ और मेदकी अधिकता होनेसे

१ स्थूल रीतिसे गाल, गला, कंधा, हृदय, शरीरकी संधियाँ, पीठ और गुदाके निकटवर्ती स्थानको मर्मस्थान मान सकते हैं।

तथा दोषोंकी स्थिरता व ग्रंथि रहनेसे और स्वभावसे भी अर्बुदरोगका व्रण नहीं पकता.जो अर्बुद रक्त तथा पित्तसम्बन्धी होता है वह भी नहीं पकताहै.

इति नूतनामृतसागरे निदानखण्डे गलगंड-गंडमाला-अपची-ग्रंथि-अर्बुदरोगाणां लक्षणनिरूपणं नामैकोनत्रिंशस्तरंगः ॥२९॥

श्लीपद-विद्रधि.

रोगस्य श्लीपदस्यात्र विद्रधेश्च यथाक्रमात् ॥
तरंगऽत्रबृहद्धानौ निदानं कथ्यते मया ॥ ३० ॥

भाषार्थ-अब हम इस ३० तीसवें तरंगमें श्लीपद और विद्रधि रोगोंका निदान वर्णन करते हैं.

श्लीपदरोगोत्पत्तिकारण-छहों ऋतुओंमें तालावादिकका पुराना जल पीनेसे या विशेप शीत देशोंमें विशेष निवास करनेसे या जिन देशोंमें सदा पुराना पानी बना रहता है, वहाँ निवास करनेसे श्लीपदरोग उत्पन्न होताहै.

श्लीपदसामान्यलक्षण-स्वलक्षण प्रकटकारक वातादि दोषोंसे पाँवमें मेद और मांसका आश्रयभूत जो शोथ हो, उसे श्लीपदरोग कहते हैं, इस रोगमें कफप्रधान है.

तथा पेड़ू और जंघास्थलकी संधियों पीडायुक्त और ज्वरसहित शोथ उत्पन्न होके पश्चात् क्रमशः पाँवोंपर उतर आवे उसे शोथ कहते हैं.

विशेषतः-अनेक आचार्योंका यह मत भी है कि यह रोग हाथ, पाँव, नाक, कान, आँख, लिंग और ओष्टमें भी होता है. यह रोग १ वात २ पित्त ३ कफ और ४ सन्निपातकी जुदाईसे चार प्रकारका है.

१ वातश्लीपद लक्षण-काला, रूखा, फटाहुआ, अत्यंत पीडायुक्त और विशेष ज्वरसहित हो तो वायुका श्लीपद जानो.

२ पित्तश्लीपदलक्षण-जो श्लीपद पीला, दाहयुक्त, ज्वरसहित और कोमल हो तो पित्तश्लीपद जानो.

३ कफश्लीपदलक्षण-जो चिकना, श्वेत या पांडुवर्ण, भारी और स्थिर हो उसे कफका श्लीपद जानो, इसके लक्षण पूर्वामृतसागरमें नहीं लिखे हैं.

---

१ श्लीपद यह वही रोग है, जिसे लोकमें "हाथीपॉव" कहते हैं यह रोग कलकत्तेकी ओर बंगाल प्रदेशमें बहुधा पाया जाता है।

४ सन्निपातश्लीपदलक्षण–जो अनेक छिद्रयुक्त. बांबी (सर्पछिद्र) के समान हो और चूने (बहने) लगे उसे सन्निपातश्लीपद जानो यह असाध्य है.

श्लीपद असाध्यलक्षण–जो श्लीपद मधुरादि कफकारक आहार और दिवस शयनादि मिथ्या विहारोंसे उत्पन्न हुआ हो, रोगीकी प्रकृति कफ सम्बन्धी हो श्लीपदसे पानी झिरनेलगे, जो ऊँचा या खाज (खुजाल) युक्त हो और त्रिदोषज चिह्न दृष्टि पड़ें तो असाध्य जानो.

विद्रधिरोग–दो प्रकारकाहै अर्थात् १ बाह्यविद्रधि २ अंतरविद्रधि.

बाह्यविद्रधिरोगोत्पत्तिकारण–अस्थिनिवासी वात, पित्त, कफ स्वकारणोंसे कुपित होके त्वचा, मांस और मेदको दूषित करते हैं, तब धीरे धीरे गहन (गहरे) मूलवाला, पीडायुक्त, गोल या लम्बा शोथ चर्मपर उत्पन्न होता है, उसे विद्रधिरोग कहते हैं. यह रोग " १ वात २ पित्त ३ कफ ४ सन्निपात ५ क्षतज और ६ रक्तज" छः प्रकारका है.

१ वातजविद्रधिलक्षण–जो शोथ लाल या काला, कभी छोटा, कभी बडा, अति पीडायुक्त और जिसका बढना तथा पकनाही विचित्र ढंगसे हो उसे बादीकी विद्रधि जानो.

पित्तजविद्रधिलक्षण–गूलरके पकेफल सदृश, कुछ कालापन लिये पीला रंग हो, ज्वर दाहयुक्तहो, शीघ्रही पके और बढ़ै तो पित्तजविद्रधि जानो.

३ कफजविद्रधिलक्षण–जो सराव (सराई, दिया, चिराग़) के आकारका हो पांडुवर्ण, ठंढा, खुजालयुक्त, चिकना, अलपपीडायुक्त हो बढने- और पकनेमें शीघ्रता करै तो कफकी विद्रधि जानो.

विशेषलक्षण–वातजसे पतली, पित्तजसे पीली और कफज विद्रधिसे श्वेत पीब निकलती है.

सन्निपातविद्रधिलक्षण--नानाप्रकारकी पीडा हो. अनेक भाँतिसे पीब बहै, घडेसदृश ऊँचा शोथ हो, जिसका कभी घटाव और कभी बढाव होता रहै और इसीप्रकार पकनाभी हो तो सन्निपातविद्रधि जानो.

५ क्षतजविद्रधिलक्षण--पत्थर या लाठीकी चोट लगै या किसी शस्त्रादिकी मारसे घाव पडजावे, उसपर कुपथ्य करनेसे घावकी गरमी वायुसे

बढ़कर रक्तसहित पित्तको कुपित कर देती है, तब तृषा, दाह और ज्वरयुक्त विद्रधि उत्पन्न होकर पित्तविद्रधीके लक्षण धारण कर लेती है, ये लक्षण हों तो क्षतज (चोट लगनेकी) विद्रधि जानो.

६ रक्तजविद्रधि लक्षण–फोडे श्याम हों. परंतु स्थानका धूसरवर्ण हो, तीव्र दाह, ज्वर, पीडा और पित्तजविद्रधिके लक्षण हों तो रक्तजविद्रधि जानो.

बाह्यविद्रधि साध्यासाध्यनिर्णय–जो विद्रधि नाभिस्थानके ऊपर होती है, पककर फूटनेके समय उसका मुँह भीतरकी ओर होके फूटे तो उसमेंसे पीब ऊपर मुखद्वारसे बाहर निकलती है. जो विद्रधि नाभिस्थानके नीचे होती है पककर फूटनेके समय उसका मुँह भीतरकी ओर होके फूटे तो उसमेंसे पीब नीचे गुदाद्वारासे बाहर निकलती है. जो विद्रधि नाभिमेंही होती है उसकी पीब मुख या गुदा दोनों मार्गसे बाहर निकलसक्ती है इसलिये नीचेकी ओर गुदामार्गसे पीब निकले तो वह रोगी न मरै और मुखद्वारा पीब निकले तो वह रोगी बचना असम्भव है किंतु मरजावेगा. यहाँ यही सिद्धांत ठहरा कि नाभिस्थानके तलेकी विद्रधि साध्य और ऊपरके स्थानोंमें हो तो असाध्य है. नाभिमेंही विद्रधि होकर उसका बहाव ऊपरको हो तो असाध्य और नीचेको हो तो साध्य जानो.

विशेषतः–जो विद्रधि हृदय, नाभि और पेडूमें हो तो असाध्य, तथा इनसे व्यतिरिक्त स्थानोंमें होकर मुख बाहरकी ओरको होके फूटै तो साध्य जानो इसके कच्चेपन, पक्केपन और विदग्धत्वको शोथकी नाईं विचारलो.

अंतरविद्रधिरोगोत्पत्तिकारण–कुपथ्यके कारण वात, पित्त और कफ (मिले हुए न्यारेन्यारे) कुपित होकर शरीरके भीतर कोठेमें एक गोलाकार बांबी (सर्पगृह) के समान ऊँची गाँठ उत्पन्न करते हैं इसे वैद्य अंतरविद्रधि (भीतर रहनेवाली) विद्रधि कहते हैं.

अंतरविद्रधिस्थान–यह रोग १ गुदा २ पेडूके मुख ३ नाभि ४ कुक्षि (कूंख) ५ वंक्षण (पेडू और जंघाका संधिस्थान) ६ हृदय और तृषास्थानके बीच ७ प्लीहा (या यकृत्) ८ हृदय ९ नाभिके दक्षिणविभाग और १० तृषाके स्थानमें उत्पन्न होता है. इनके लक्षण पूर्वोक्त बाह्यविद्रधिके सदृश वातादि दोषोंपरही अवलम्बित नहीं बरन् स्थानविशेषसे लक्षण भी विशेष होगये हैं.

१ गुदाविद्रधिलक्षण–भली भाँति पवनका सरण न होकर, अधोवायुका अवरोध होजावे तो गुदाकी विद्रधि जानो.

२ पेडूविद्रधिलक्षण–मूत्रकृच्छ्र हो तो पेडूकी विद्रधि उत्पन्न हुई जानो.

३ नाभिविद्रधिलक्षण–हिचकी अधिक आवें और अफरा रहै तो नाभिमें विद्रधि उत्पन्न हुई जानो.

४ कुक्षिविद्रधिलक्षण–कुक्षिमें वायुका कोपहो तो कूखकी विद्रधि जानो.

५ वंक्षणविद्रधिलक्षण-कटि(कमर)में पीडा हो तो वंक्षणकी विद्रधि जानो.

६ हृदयतृषास्थानमध्यवर्तीविद्रधिलक्षण–पार्श्व संकोच और पार्श्व शूल हो तो उक्त विद्रधि जानो.

७ प्लीहाविद्रधिलक्षण–श्वास रुककर निकलै तो प्लीहाविद्रधि जानो.

८ हृदयविद्रधिलक्षण–सर्वांगमें पीडा होकर अंग जकडजावे और खाँसी चलै तो हृदयकी विद्रधि जानो.

९ नाभिके दक्षिणभागजविद्रधि लक्षण--श्वासका रोग हो तो नाभिकी दहिनी ओर विद्रधि जानो.

१० तृषास्थानजविद्रधि लक्षण–तृषा अधिक लगै औ जल पीनेपर भी तृप्ति न हो तो तृषास्थानमें विद्रधि हुई जानो.

अंतरविद्रधिसाध्यासाध्यनिर्णय–विद्रधिरोगमें अफरा वमन, तृषा, हिचकी और पीडा अधिक हो तो असाध्य जानो यह रोगी मर जावेगा. जो विद्रधि कच्ची, वायुजन्य, बडी या छोटी और मर्मस्थानमें हो तो कष्टसाध्य और सन्निपातकी विद्रधि असाध्य होती है. जो सन्निपातज विद्रधि हृदय, नाभि और पेडूमें होकर रुकजावे और मुँहके समान हो तो असाध्य जानो.

विशेषतः–जिसप्रकार अंतरविद्रधि होती है तिसीप्रकार शरीरके भीतर मांस और रुधिरका एक गोला भी होता है. इनमें परस्पर यही भेद है कि, विद्रधि पकती पर यह गोला पकता नहीं है.

इति नूतनामृतसागरे निदानखण्डे श्लीपद, विद्रधिरोग-
लक्षणनिरूपणं नाम त्रिंशस्तरंगः ॥ ३० ॥

व्रणशोथ–व्रणरोग.

व्रणशोथस्य व्रणस्य ह्यग्निदग्धस्य च क्रमात् ॥
चन्द्ररामतरंगेऽस्मिन् निदानं कथ्यते मया ॥ ३१ ॥

भाषार्थ–अब हम इस ३१ वें तरंगमें व्रणशोथ, व्रण और अग्निदग्ध रोगका निदान क्रमानुसार वर्णन करते हैं.

व्रणशोथरोगोत्पत्तिकारण–शरीरके किसीएक देश (स्थान) में शोथ आवे, उसे व्रणका पूर्वरूप जानो. यह शोथ छः कारणो "१ वात २ पित्त ३ कफ ४ सन्निपात ५ रक्त और ६ आगन्तुक (चोट)" से होता है जिनके लक्षण शोथनिदानम कह आये हैं.

विशेपलक्षण–वातजव्रणशोथ विषम (कहीं कच्चा कहीं पक्का) पकता पित्तज व्रणशोथ शीघ्र पकता कफज व्रणशोथ विलम्बसे पकता, तथा रक्तज और आगंतुक शीघ्रही पकता है.

अपक्क व्रणशोथलक्षण–जिस व्रणशोथमें पीडा उष्णता और सूजन थोडी हो रंग त्वचाके रंगसे मिलता हो और छूनेमें कठोरता हो तो कच्चा व्रणशोथ जानो.

पकतेहुए व्रणशोथके लक्षण–व्रणशोथमें अग्निसदृश जलन पडै, क्षारके पकने समान पकै, चींटी काटने या छेदने या शस्त्र मारने या हाथसे भीतर दबाने या दंडा मारने या सुई चुभाने या मुखसे चूसने या अँगुलीसे फाडने या विच्छू काटनेके सदृश वेदना हो, किसीएक भागमें दाह हो, वर्णविपर्य (रंग तब्दील) होजावे और सोते बैठते किसी भी प्रकारसे शांति न हो, व्रणशोथ फूलकर पखालके समान होजावे और ज्वर, तृषा, अरुचि ये उपद्रव होजावें तो निश्चय करो कि व्रणशोथ पकरहा है.

पक्वव्रणशोथलक्षण–व्रणशोथकी पीडा, ललाई, उँचाई, न्यून पड-जावे उसपर सल (झिल्ली कुकरी) पडजावें, बारंबार पीडा और खुजाल उठे, उपद्रवोंकी शांति हो, त्वचा फटीसी जानपडै और अँगुली दबानेसे पीब इधर उधर घूमने लगै तो व्रणशोथ पका जानो.

विशेषतः–चाहे एकदोषजन्य व्रण भी हो परन्तु उसके पकनेके समय

तीनों दोष मिलकर उसे पकाते हैं अर्थात् वातसे पीडा, पित्तसे पकाव और कफसे पीब बनती है. तथा अनेक विद्वानोंका यह मत भी है कि कालान्तरसे बढा हुआ पित्त अपनी प्रबलतासे वात और कफको वश करके रक्तको पचताहै तब व्रणशोथ पकता है.

पीब भरेहुए व्रणशोथमें दोष–जिसप्रकार घासकी गंजी (ढेर) पुंज समूहमें लगाहुआ अग्नि वायुकी प्रेरणासे प्रज्वलित होकर बलात्कारसे घासको जला देता है तिसीप्रकार पके व्रणशोथमें रहीहुई पीब भी उस स्थानके मांस और नसोंका नाश कर देती है. इसलिये सद्वैद्यको चाहिये कि पकेहुए व्रणशोथमेंसे पीब अवश्य निकाल देवे.

विशेषतः–जो वैद्य कच्चे, पकतेहुए और पक्के व्रणका पक्कापक्क निश्चय न करसकै और वैद्यक जीविका करनेलगै उसे चोरसदृश और जो कच्चे व्रणको फोड डालै तथा पक्केको न फोडै उस अविचारी वैद्यको चांडालके समान जानना चाहिये.[1]

व्रणरोगोत्पत्ति कारण–शरीरके और आगन्तुक दो कारणोंसे उत्पन्न होकर यह रोग उक्त दोही प्रकारका है. वातादि दोषोंसे उत्पन्न हो तो शारीरक और शस्त्रादिके प्रहारसे उत्पन्न हो तो आगन्तुक व्रण कहाता है.

शारीरकव्रणोत्पत्ति–शारीरक व्रण मुख्य चार कारणों "१ वात २ पित्त ३ कफ ४ रक्त"से उत्पन्न होता है. परन्तु रक्तके सम्बन्धसे द्विदोषज और त्रिदोषज होनेके कारण गौणरीतिसे ८ प्रकारका होजाता है, अर्थात् ५ वातपित्त ६ वातकफ ७ कफपित्त और ८ सन्निपात (त्रिदोषज)

१ वातव्रणलक्षण–जो व्रण स्थिर, कठोर, अल्पस्रावित, दीर्घ पीडित, फूटनयुक्त, धूसर या श्यामवर्ण और सुई चुभानेकीसी पीडा करै, उसे वादीका व्रण (खता–फोडा) जानो.

२ पित्तव्रणलक्षण–जो व्रण तृषा, मोह, ज्वर, दाह, आर्द्रत्व (गीलापन) पीबमें दुर्गंधियुक्त हो और चर्म फटै तो पित्तका व्रण जानो.

३ कफव्रणलक्षण–जो व्रण विशेष गिलबिला (कोमल) भारी, चिकना

[1] आमं विदह्यमानं च सम्यक्पक्वं च लक्षणैः। जानीयात्स भवेद्वैद्यः शेषास्तस्करवृत्तयः ॥१॥ यश्छिनत्त्याममज्ञानाद्यश्च पक्वमुपेक्षते। श्वपचाविव मंतव्यौ तावनिश्चितकारिणौ॥१॥ इत्युक्तं माधवाचार्येण ॥

अचल, श्वेतवर्ण, अल्प आर्द्र और अल्प पीड़ायुक्त हो उसे कफसे उत्पन्न हुआ जानो.

४ रक्तव्रणलक्षण—जिस व्रणका रंग लाल और रक्तही रक्त बहाकरै उसे रुधिरसे उत्पन्न हुआ जानो.

५ वातपित्तजव्रणलक्षण—जिसमें वात और पित्त दोनोंके लक्षण दृष्टि पड़ें उसे वातपित्तज व्रण जानो.

६ वातकफजव्रणलक्षण—जिस व्रणमें वात और कफ दोनोंके लक्षण हों उसे वातकफज व्रण जानो.

७ कफपित्तजव्रणलक्षण—जो कफ और पित्त दोनोंके लक्षणोंसे युक्त हो उसे कफपित्तका व्रण जानो.

८ सन्निपातजव्रणलक्षण—जिसमें वात, पित्त, कफ तीनों दोषोंके उक्त वर्णित लक्षण हों, उसे सन्निपातका व्रण जानो.

विशेषतः—उक्त समस्त व्रणोंके २ दो भेद " १ दुष्टव्रण और २ शुद्ध व्रण" किये गये उनके लक्षण ये हैं.

१ दुष्टव्रणलक्षण—जिससे निकलती हुई पीब या रक्तमें सडनेकी दुर्गंधि आवे, बहुत ऊंचा हो, बहुत पुराना होगया हो और शुद्धव्रणके लक्षणोंसे सर्व विरुद्ध लक्षण हों उसे दुष्टव्रण जानो.

२ शुद्धव्रणलक्षण—जो जिह्वाके तलभाग समान कोमल और उसीके सदृश (तथा अरुण) वर्णयुक्त हो पीडा और पीबका बहाव न हो और सर्वप्रकारसे सुन्दर व्यवस्था हो तो शुद्ध व्रण जानो.

भरतेहुए व्रणके लक्षण—किनारे (कोरे) कपोतवर्ण, (धूसर और पांडुवर्ण का संयोग कबूतरकासा रंग) होजावे, पीब आदिके बहावयुक्त, स्थिर और मांसके अंकुर (खे खे) निकल आवें तो जानो कि, यह व्रण भरने लगाहै.

भरितव्रण लक्षण—पीबका वहाव बंद होगया हो, गांठ सूजन या पीडा कुछ न हो तो जानलो कि, यह व्रण भलीभाँति भरगया है.

सुखसाध्य व्रणलक्षण—जो व्रण त्वचा और मांससे उत्पन्न हुआ हो, मर्म स्थानमें न हो, तरुण पुरुषको उपद्रवरहित तथा हेमन्त, शिशिर और वसंतऋतुमें उत्पन्न हुआ हो उसे सुखसाध्य (सुखपूर्वक अच्छा होजाने वाला स) जानो.

कष्टसाध्यव्रणलक्षण--जिसमें सुखसाध्य व्रणके उक्त लक्षण कुछ भी न हों तथा कुष्ठी, विषभक्षक, शोषरोगी, मधुप्रमेहयुक्त पुरुषको और व्रणमें व्रण उत्पन्न हो तो उसे कष्टसाध्य जानो.

असाध्यव्रणलक्षण--सुखसाध्यव्रणोक्त समस्तलक्षण रहित हो उसे असाध्य जानो. वातादिदोषज व्रणमेंसे वसा (मांसगत स्नेह, घृत, चर्बी,) मेद (केवल चर्बी) मज्जा (हड्डियोंके भीतरका गूदा) और मस्तुलिंग (मस्तक के भीतरका कपास) ये शरीरांतर्गत पदार्थ बहते रहैं; तो असाध्य जानो. ये लक्षण आगंतुकव्रणमें हों तो असाध्य नहीं पर साध्य है. जिन व्रणोंमेंसे मदिरा या अगर या जांईपुष्प या कमलपुष्प या चन्दन या चम्पाके पुष्पसदृश दिव्यसुगंध आवे, मर्मस्थानमें न होनेपर भी मर्मस्थानकीसी पीडा हो, भीतरसे जलै और बाहरसे ठंढा हो, या बाहरसे जलै तो भीतर से ठंढाहो, रोगीको मांस बल क्षीण होजावे और श्वास, कास, क्षय, अरुचिकारक पीडाहो, तो असाध्य जानो. जिन व्रणोंसे पीब या रक्त बहता रहै, मर्मस्थानमें हो और शास्त्रोक्तविधिसे उपचार करनेपर भी कुशल न हो तो असाध्य जानो. उपरोक्त लक्षण धारणीय असाध्य व्रण ह सद्वैद्यको उचितहै कि, जो यशकी इच्छा हो तो ऐसे असाध्य रोगोंपर चिकित्सा करनेको कदापि हाथ न उठावे.

आगंतुक व्रणोत्पत्तिकारण--असि (तलवार) बाण (तीर) तोमर (भाला) छुरिका (छूरी-चाकू) आदि नाना प्रकारके तीक्ष्णधारा मुखवाले शस्त्र, अस्त्रोंके प्रहारसे शरीरके नानाभागोंमें अनेकाकृतिके व्रण (घाव-रूपक) उत्पन्न होते हैं जिन्हें आगंतुक व्रण कहतेहैं. वे व्रण पृथक् पृथक् संज्ञासे ६ प्रकारके " १ छिन्नव्रण, २ भिन्नव्रण, ३ विद्धव्रण, ४ क्षतव्रण, ५ पिच्चितव्रण और ६ घृष्टव्रण" हैं.

१ छिन्नव्रणलक्षण--शस्त्रके लगनेसे सीधा या तिरछा कटै, घाव लम्बा हो, एक भाग कटकर समस्त गिरपडै या न भी गिरै उसे छिन्नव्रण जानो

२ भिन्नव्रणलक्षण--शक्ति (बर्छी) कुंत (भाला) इषु (बाण) खड्ग (तलवार) या सींगके अग्रभाग (नोक) के लगनेसे कोष्ठ, विदीर्ण होके कुछ थोडासाही रक्त बहनेपर वह कोष्ठ (कोठेका) स्थान भरजावे और

१ स्थानान्यामाग्निपक्वानांमूत्रस्य रुधिरस्य च। हृदुंडुकः फुप्फुसश्च कोष्ठ इत्य[illegible]भिधीयते ॥ १ ॥ इत्युक्तं कोष्ठस्थानं माधवाचार्येण॥

रोगीको ज्वर, दाह, तृषा, मूर्च्छा, श्वास, आध्मान, अरुचि, रक्तनेत्र, मल मूत्र और अधोवायुका अवरोध, मुख मूलद्वार और मूत्रमार्गसे रुधिर प्रवाह मुखमें तप्त लोहसदृश गंधि, शरीरमें दुर्गंधि हृदय और पार्श्वमें शूल हो तो भिन्नव्रण जानो,

विशेषतः—यदि कोष्ठस्थानसे वहाहुआ रुधिर आमाशयमें एकत्रित हुआ हो तो मुखसे वमनद्वारा रुधिर गिरै, पेट अधिक फूलै और शूल चलेगा. और जो वही रुधिर पक्काशयमें इकट्ठा हुआहो तो पेट भारी हो और शरीरका तलभाग विशेष ठंढा रहैगा. ये बातें पूर्वामृतसागरमें नहीं थीं इसलिये हमने माधवनिदानसे लेकर लिखी हैं.

३ विद्धव्रणलक्षण—जो बारीक नोकवाले काँटे आदिसे आशय विना जो अंग छिदकर वह काँटेकी अनी उसीमें रहै या निकल जावे उसे विद्धव्रण कहते हैं.

४ क्षतव्रणलक्षण—जो बहुत कटा भी न हो और छिदा भी न हो पर छिन्न और भिन्न व्रणके लक्षणोंमें मध्यवर्त्ती हो तथा शरीरमें विषमता (टेढापन)लिये हो उसे क्षतव्रण जानो. पूर्वामृतसागरमें इसके लक्षण नहीं लिखेहैं

५ पिच्चितव्रण लक्षण—जो अंग गिरपड़ने या दबजानेके चोटसे हड्डीसहित चिपटकर फैलजावे (चपटा हो जावे) और उसमेंसे मज्जा और रक्त बहने लगै उसे पिच्चितव्रण जानो.

६ घृष्टव्रणलक्षण—जो अंगके घर्षण (रगड़ या घिसाव) या किसीप्रकारके प्रहारसे ऊपरका चर्म छिलजावे उसमें दाह उठे, लासेके समान कुछ रक्तमिश्रित रस जल बहनेलगै उसे घृष्टव्रण जानो.

सशल्यव्रणपरीक्षा—जो व्रण काला या धूसर, शोथित और छोटी छोटी फुनसियों युक्त हो बारम्बार ठहर ठहरके रक्त निकलै, व्रणका मांस कोमल और पानीके बुलबुलेके समान ऊँचा तथा पीडायुक्त हो उसे सशल्यव्रण जानो अर्थात् उसके भीतर काँटा या किसी तीर आदिकी अनी रहगई है

कोष्ठभेदलक्षण—जो बाणादि शस्त्र त्वचाको भेदनकर नसोंको भी भेदन करैं (या नभी करैं) और कोष्ठस्थानमें रहजानेसे पूर्वोक्त भिन्नव्रण दर्शित उपद्रवोंको उत्पन्न करैं तो जानो कि, कोठेमें कोई अनी रहगई है,

असाध्यकोष्ठभेदलक्षण—पांडुवर्ण हो, हाथ, पाँव, मुख और श्वास शीतल

पडजावें, नेत्र लाल हो आवें और पेट फूलजावे तो असाध्य कोष्ठभेद जानो सद्वैद्यको यशकी इच्छा हो तो इसपर चिकित्सा न करे.

मर्मप्रहारलक्षण--भ्रम, प्रलाप (अनर्थक वाक्य कथन), पतन (गिर पडना),विचेष्टन (इधर उधर लोट पोट होना) ग्लानि,विकलता, (घबराहट) उष्णता, शिथिलता, मूर्च्छा डकार और वातज आक्षेप आदि तीव्र रोग होवें, व्रणसे मांस धोवनसदृश रक्त बहै और सर्वेन्द्रियां अपना अपना कार्य परित्याग करदेवें तो विचारकरोकि "१ मांस, २ संधि, ३ शिरा, ४ स्नायु और ५ अस्थि इन पाँचोंमेंसे किसीके" मर्मस्थानमें व्रण (घाव) होगया है.

१ मर्मरहितशिरादिविद्धलक्षण--जो शिरा बाण आदिसे कटगई या छिदगई हो तो वीरबहूटी[१] (वर्षाजन्यजीव)के वर्णसदृश बहुतसा रक्त बहै और रक्तके बहावसे वायु कुपित होकर आक्षेपादि अनेक रोग हों तो जानो कि, शिरामें मर्मस्थान छोडकर अन्त घाव लगा है.

२[२] स्नायुविद्धलक्षण-घावजन्य पीडासे रोगीके कूबड निकल आवे,सर्वांग उपांगसहित शरीर शिथिल होजावे, सर्व कार्य करनेसे असमर्थ होजावे अति पीड़ायुक्त घाव बहुत दिनोंमें भरै तो स्नायु छिदी या कटीहुई जानो.

३ संधिविद्धलक्षण--शोथका बढ़ाव, घोर पीडा, मलक्षय, गाँठोंमें फूटन या सूजन और संधियोंके कार्योंका उपराम (बंद होजाना) होजावे तो जानोकि, शरीरकी कोई चल या अचल संधि छिद गई है.

४ अस्थिविद्धलक्षण--सर्वकाल वेदना होनेसे कभी और कहीं भी सुख न मिले उसकी अस्थि (हड्डी) छिद गई जानो.

५ शिरादिमर्मस्थानविद्धलक्षण--जिस जिस ठिकानोंमें घाव लगा हो उसीके अनुसार तथा पूर्वोक्त भ्रम प्रलाप आदि सामान्यही लक्षण जानो.

६ मांसमर्मविद्धलक्षण--मर्म ताडित मांसका पांडुवर्ण, वर्णविपर्यय, उस स्थानपर स्पर्श ज्ञानरहित होजावे, तो मांसके मर्मस्थानमें चोट लगी जानो.

---

१ एक प्रकारका कीडा जो बहुधा वर्षाऋतुमें निकलताहै; इसकी त्वचा लाल मखमलके समान होती है, साधारण भाषामें " गोकुलगाय " और मारवाड़ प्रांतमें " सावनकी डोकरी " के नामसे विख्यात है.

२ ययास्वमेतानि विभावयेच्च लिंगानि मर्मस्वभिताडितेषु ॥ इति माधवः ॥

व्रणोपद्रव—१ विसर्प, २ पक्षाघात, ३ शिरास्तंभ, ४ अपतानक, ५ मोह, ६ उन्माद, ७ व्रणपीडा, ८ ज्वर, ९ तृषा, १० हनुग्रह, ११ कास, १२ वमन, १३ अतिसार, १४ हिचकी, १५ श्वास और १६ कम्प ये व्रणके सोलह उपद्रव हैं.

अग्निदग्धउत्पत्तिकारण—अग्निदग्ध दो प्रकारसे होता है, अर्थात् १ अग्निसेही जलकर, २ अग्नितप्त तेल घृतादि स्निग्धपदार्थ और लोहादि धातु पदार्थसे जलकर, सो यह चार प्रकारका है अर्थात् १ प्लुष्ट, २ दुर्दग्ध, ३ सम्यग्दग्ध, ४ अतिदग्ध.

१ प्लुष्टलक्षण—जो अग्निसे जलकर कुछ औरही प्रकारका होजावे उसे प्लुष्टदग्ध जानो.

२ दुर्दग्धलक्षण—जले हुये अंगमें अति दाह, अति पीडा, फोडे होजावें और विलम्बसे विश्राम हो तो दुर्दग्ध जानो.

३ सम्यग्दग्धलक्षण—जले हुए अंगमें ताम्रवर्ण, अतिदाह और पीड़ायुक्त तथा स्थिर होजावें तो सम्यग्दग्ध जानो.

४ अतिदग्धलक्षण—त्वचा और मांस सर्व दग्ध होकर शरीरसे पृथक् होजावें शिरा, स्नायु, संधिस्थानादि सर्व दग्ध होकर शरीरमात्रमें पीडा, दाह, ज्वर, तृषा और मूर्च्छा होजावे वर्ण विपर्यय होकर अंकुर (भराव) विलम्बसे आवे तो अतिदग्ध जानो.

विशेषतः-शरीर अग्निमें जलनेसे जहाँ तहाँ फूलकर पसीना भर आता है जिसे "फफोला" कहते हैं.

इति नूतनामृतसागरे निदानखण्डे व्रणशोथ, व्रणाग्निदग्धरोगाणां लक्षण-निरूपणं नामैकत्रिंशस्तरंगः ॥ ३१ ॥

भग्नरोग, नाडीव्रणरोग.

निदानं भग्नरोगस्य तथा नाडीव्रणस्य च ॥
नेत्ररामतरंगेस्मिँल्लिख्यते हि यथाक्रमात् ॥ ३२ ॥

भाषार्थ—अब हम इस ३२ बत्तीसवें तरंगमें भग्नरोग और नाडीव्रणका निदान यथाक्रमसे लिखते हैं.

भग्नरोगोत्पत्तिकारण--यह रोग सामान्यरीतिसे दो प्रकारका है अर्थात् १ संधिभग्न जिसमें हड्डी जोडपरसे उखड जाती है, और दूसरा काण्डभग्न जिसमें हड्डी बीचमेंसे टूटजाती है. इनमेंसे प्रथम सन्धिभग्नके छः भेद " अर्थात् १ उत्पिष्ट, २ विश्लिष्ट, ३ निवर्तित, ४ तिर्यग्गत, ५ क्षिप्त और ६ अधः " हैं.

सन्धिभग्नसामान्यलक्षण--अंग फैलाने, समेटने, इधर उधर फिरने उठने बैठनेमें अत्यन्त पीडा हो, किसीके समीप बैठना या अंगस्पर्श करना न सुहावे तो जानलो कि इसकी किसी हड्डीका जोड़ उखडगया है.

१ उत्पिष्टसंधिभग्नलक्षण-दो हड्डियोंके जोड उखड़जानेसे उस स्थानके चहुँओर शोथ होकर रात्रिको अधिकपीडा हो तो उत्पिष्ट संधिभग्न जानो.

२ विश्लिष्टसंधिभग्नलक्षण–दो हड्डियोंका जोड उखडजानेसे उस स्थानके आस पास शोथ होकर निरंतर (रात्रि दिन) अत्यंत पीडा हो तो विश्लिष्ट संधिभग्न जानो.

३ विवर्तितसंधिभग्नलक्षण–जोड उखडेहुए स्थानमें सर्वदा शोथयुक्त पीडा और पार्श्वभाग (पँसुली)में तीव्र वेदना हो तो विवर्त्तितसंधिभग्नजानो.

४ तिर्यग्गतसंधिभग्नलक्षण–तिर्यग्गत संधिके टूट जाने या उखड जानेसे उस स्थानमें अत्यंत तीव्र पीडा होती है.

५ क्षिप्तसंधिभग्नलक्षण–जंघास्थलमें कभी अधिक और कभी न्यून पीडा होती है उसे क्षिप्तसंधिभग्न कहते हैं.

६ अधस्सन्धिभग्नलक्षण–संधिकी हड्डियोंमें परस्पर घर्षण और नीचेकी ओर पीडा हो उसे अधःसंधिभग्न जानो.

कांडभग्नभेद–कांडभग्नके १२ भेद हैं. अर्थात् १ कर्कट, २ अश्वकर्ण, ३ विचूर्णित, ४ अस्थिछिल्लिका, ५ पिच्चित, ६ कांडभग्न, ७ अतिपतित, ८ मज्जागत, ९ स्फुटित, १० वक्र, ११ छिन्न और १२ द्विधाकर, ये टूटी हुई हड्डियोंके १२ भेद हैं.

१ कर्कट कांडभग्नलक्षण–दोनों ओरसे हड्डी दबकर बीचमें ऊँची होजावे. उसे कर्कटकांडभग्न जानो.

२ अश्वकर्ण कांडभग्नलक्षण–जो हड्डी चिपट या टूटकर घोडेके कानके समान होजावे उसे अश्वकर्णकांडभग्न जानो.

३ विचूर्णित कांडभग्नलक्षण—जो हाड भीतरका भीतरही चूर चूर होकर हाथसे देखनेसे चूराचूरा जानपडे उसे विचूर्णित कांडभग्न जानो,

४ अस्थिछिल्लिकाकांडभग्नलक्षण—हड्डीके कोई भागका छिलका निकल जावे उसे अस्थिछिल्लिका कांडभग्न जानो.

५ पिच्चित कांडभग्नलक्षण—जो हड्डी दबकर किसीप्रकार से पिचक जावे उसे पिच्चित कांडभग्न जानो.

६ कांडभग्नलक्षण—जिस हाड़की नली टूटजावे उस कांडभग्न जानो.

७ अतिपतित कांडभग्नलक्षण—सब हाडमात्र टूटकर जुदा होजावे उसे अतिपतित कांडभग्न जानो.

८ मज्जागत कांडभग्नलक्षण—हाड टूट जानेसे मज्जा बाहरको निकल आवे उस मज्जागत कांडभग्न जानो.

९ स्फुटित कांडभग्नलक्षण—जिस हाडके टुकडे होजावें उसे स्फुटित कांडभग्न कहते हैं.

१० वक्र कांडभग्नलक्षण—जो हाथ किसी चोटसे टेढ़ा होजावे उसे वक्र कांडभग्न कहते हैं.

११ छिन्न कांडभग्नलक्षण—जिस हाड़के छोटे छोटे टुकडे होजावें उसे छिन्न कांडभग्न जानो.

१२ द्विधाकर कां भग्नलक्षण—१भागका हाड अच्छा बचकर उसीके दूसरे भागका हाड चूरा चूरा होजावे उसे द्विधाकर कांडभग्न जानो, ये कांडभग्नके १२ भेद पूर्वामृतसागरमें नहीं लिखे हैं. अतएव हमने माधवनिदानसे लेकर लिखे हैं.

कांडभग्नसामान्यलक्षण—अंगशैथिल्यता, शोथ, ठनका छिन्नस्थानमें दबानेसे शब्द, स्पर्शअसह्यता, इसु छेदन सदृश पीडा, अंग फडकना और सर्वत्र सर्वदा सुखकी अप्राप्ति हो तो हड्डी टूटी जानो.

भग्नरोग कष्टसाध्यलक्षण—रोगी स्वल्प आहारी हो, कुपथ्य करै, वातुलप्रकृतिवाला हो और ज्वर अतिसारादि उपद्रव होजावें तो रोगीका बचना कष्टके साथ होगा.

भग्नरोग असाध्यलक्षण—रोगीका कपाल फूटजावे, कमरकी हड्डी टूट

जावे, किसी स्थानकी संधि खुलजावे, हड्डी नीचेको उतर आवे, जाँघें पिचक जावें, ललाट, स्तन, गुदा, कनपटी, पीठ और मस्तक इनमेंसे कोई भाग फूट टूट जावे तो असाध्य भग्नरोग जानो.

दूषितभग्नरोगअसाध्यलक्षण—हाड जोडनेके समय ठीक ठीक न जुडे यदि ठीक ठीक जुडा हो तो यथार्थ गठनेसे न बाँधाजावे, या भलीभाँति बँधनेपर भी किसी प्रकारका धक्का लगजावे, तथा ऐसी क्लिष्ट दशामें मैथुन किया जावे तो ऐसे कारणोंके प्रसंगसे भग्नरोग दूषित होकर असाध्य होजाता है. वैद्यको उचित है कि, ऐसे रोगीको असाध्य जान छोड देवे.

भग्नरोगदशा—नाक, कान, नेत्रकी हड्डियां कोमल होनेसे नै जाती हैं इनका नै जानाही भग्न है. नलीकी हड्डी फूट जाती है. कपाल, जांघ और कूलेकी हड्डियाँ टुकडे होजाती हैं दाँत टूट जाते हैं. हाथके पहुँचे, दोनों पँसुली, पीठ, छाती, पेट, गुदा और पाँव इन स्थानोंमें जो गोल गोल चक्रवत् कंकणाकृति चक्र हैं वेभी टूट जाते हैं.

नाडीव्रणरोगोत्पत्तिकारण—जो वैद्यकी अज्ञानतासे व्रणके पकजाने पर भी फोडकर उसकी पीब न निकाली जावे तो वह पीब व्रणकी अभ्यंतर नसोंमें प्राप्त होके त्वचा, मांस, शिरा, स्नायु, संधि, अस्थि, कोष्ठ और मर्मस्थानको विदीर्ण करतीहुई नाडियोंद्वारा अतिवेगसे बाहरको वहने लगती है, जिसप्रकार नलमें पानी ऊपरको वेग देता है, उसीप्रकार नाडीमेंसे पीब भी बाहरको बढ़तीहुई निकलती है इसीसे इसे, नाडीव्रण[1] संज्ञा दीगई है, सो यह रोग १ वात, २ पित्त, ३ कफ, ४ सन्निपात और ५ प्रहारज नाडीव्रण पाँच प्रकारका है.

१ वातजनाडीव्रणलक्षण—जो रात्रिके समय दृढ़, रूखा, सूक्ष्म छिद्रयुक्त, शूलयुक्त और फेनसहित पीबका विशेष बहाव हो तो वातज नाडीव्रण जानो.

२ पित्तजनाडीव्रणलक्षण—प्यासलगै, ज्वरचढ़ै, सूक्ष्म दाह हो और पीली पीब वहै तो पित्तका नाडीव्रण जानो.

३ कफजनाडीव्रणलक्षण—व्रणकके मुखपर रुधिरयुक्त, श्वेत, गाढ़ी, पीब वहै और रात्रिको व्रणपर पीडा तथा खुजालचलै, तो कफका नासूर जानो.

१ यह नाडीव्रण लोकमें बहुधा "नासूर" इस नामसे प्रसिद्ध है।

४ सन्निपातनाडीव्रणलक्षण–जिसमें दाह, ज्वर, श्वास, मूर्च्छा, मुख,
शोष और पीवकी अतिगम्भीर (अथाह) गति हो तो सन्निपातका नासूर
जानो इस व्रणके रोगीका रक्षण ईश्वराधीनही है.

५ शस्त्रप्रहारजनाडीव्रणलक्षण–शरीरमें वाण या गोली आदि भीतर
पैठ जानेसे सद्वैद्य युक्तिसे निकालते हैं परन्तु यदि उसके निकालनेपर भी
वहाँ किसी प्रकारसे व्रण पडजावे और उसमेंसे फेनसहित रुधिरमिश्रित
पीव बहती रहे, किसीप्रकारसे शरीर हिलतेही पीडा होनेलगे, तो उसे
क्षतजनाडीव्रण जानो.

नाडीव्रणसाध्यासाध्यलक्षण–सन्निपातका नाडीव्रण असाध्य और
शेष चारों प्रकारके नाडीव्रण सुथान होनेसे साध्यही होते हैं.

इति नूतनामृतसागरे निदानखण्डे भग्नरोग, नाडीव्रणरोगलक्षण
निरूपणं नाम द्वात्रिंशस्तरंगः ॥ ३२ ॥

भगन्दर, उपदंश.

भगन्दरस्यामयस्य चोपदंशस्य वै क्रमात् ॥
रामरामामिते भंगे निदानं कथ्यते मया ॥ ३३ ॥

भाषार्थ–अब हम इस ३३ तेतीसवें तरंगमें भगंदर और उपदंश रोगका
निदान यथाक्रमसे वर्णन करते हैं.

भगंदररोगोत्पत्ति–गुदाके आस पास २ अंगुलके घेरेमें १ फुन्सी होकर
पकती, फूटती और उसमेंसे सदा पीव बहती रहती है, उसे भगंदररोग
कहते हैं. यह रोग भग (योनि) के चहुँओर तथा गुदा और वास्तिके
बीचमें भी होता और भगके आकारका होनेके कारण भगंदर कहाता है.
यह रोग १ वात, २ पित्त, ३ कफ, ४ सान्निपात और ५ शस्त्राभिघातजन्य
होनेसे ५ प्रकारका होता है.

१ वातजशतपोतकभगंदरलक्षण–कसैला, रूखा पदार्थ, अधिक खा-
नेसे वात कुपित होकर गुदाके समीप फुन्सी उत्पन्न करता है. यदि आल-
स्यवश इसका यत्न न किया जावे तो वही फुन्सी पककर विशेष पीडा
करती और फूटनेपर उसमेंसे पीव, मल, मूत्र, वीर्य भी निकला करतेहैं.
और उसके चलनीसदृश छिद्र होजाते हैं, ये लक्षण हों तो शतपोतक भगं-
दर जानो.

२ पित्तजउष्ट्रग्रीवभगंदरलक्षण--उष्ण वस्तु विशेष खानेसे पित्त कुपित होकर गुदाके चहुँओर २ अंगुलके घेरेमें लाल फुन्सी उत्पन्न करता है जो वह फुन्सी तत्काल पककर उसमें उष्ण उष्ण पीब वहै और फुन्सीकी आकृति ऊंटकी गर्दनके समान हो तो पित्तजउष्ट्रग्रीवभगंदर जानो.

३ कफजपरिस्रावी भगंदरलक्षण- फुन्सीके स्थानमें अधिक खुजाल चले, पीडा थोडी हो, फुन्सीका रंग श्वेत ो और उसमें सदा पीब वहा-करे तो कफजपरिस्रावी भगंदर जानो.

४ सन्निपातज शम्बुकावर्त्तभगंदरलक्षण—फुन्सीमें अनेक प्रकारकी पीडा हो नानाप्रकारका वर्ण हो, सदैव पीब वहाकरे, फुन्सी गौके थनके आकारकी हो और उसका छिद्र घोंघेके घेरेके समान घूमता हुआ हो तो सन्निपातजन्य शंबुकावर्त्तभगंदर जानो.

५ क्षतजउन्मार्गिभगंदरलक्षण—गुदाके समीप किसी प्रकारकी चोट लगकर विशेषकालपर्यंत कुछ उपाय न किया जावे तो वह घाव वढ़ता हुआ गुदातक पहुँच जाताहै यदि फिर भी कुछ उपाय न करो तो उसमें कृमि पडकर नानाप्रकारके छिद्र कर देते हैं ये लक्षण हों तो उन्मार्गिभ-गंदर जानो.

असाध्यभगंदरलक्षण—यह सर्वथा अतिकष्टसाध्यही है तथापि त्रिदोषज और क्षतज तो महाअसाध्यही हैं तथा भगंदरसेही अधोवायु, मल, वीर्य, मूत्र और कीडे निकलनेलगे तो वह रोगी इस रोगसे नष्ट होजावेगा.

उपदंशरोगोत्पत्तिकारण—किसीप्रकार हाथकी चोट लगना नख या दाँत लगना, लिंगको स्वच्छतापूर्वक न धोना, हस्तमैथुन करना, मिथ्या अहार विहार करना, अति मैथुन करना और रोगयुक्त योनिके दोष इन कारणोंसे लिंगमें १ वात, २ पित्त, ३ कफ, ४ रक्त और ५ सन्निपात ये पांचप्रकारके उपदंश होते हैं.

१ वातोपदंशलक्षण—लिंगेन्द्रियमें सुई कोंचने या चीरनेके समान पी-डा हो, लिंग फरके और श्यामवर्णके छाले हों तो वातोपदंश जानो.

२ पित्तोपदंशलक्षण—लिंगमें दाह हो और पीले रंगके बहुत बहनेवाले छाले हों तो पित्तका ऊपदंश जानो.

६ कफोपदंशलक्षण—लिंगमें खुजाल चले, शोथ हो, श्वेत रंगके बड़े बडे

छाले हों और उनमसे सर्वदा गाढ़ी पीब बहतीरहे तो कफोपदंश जानो.

४ रक्तोपदंशलक्षण—जिसके छाले मांसके सदृश हों, उसे रक्तका उपदंश जानो. यह एक पित्तोपदंशकाही भेद है.

५ सन्निपातोपदंशलक्षण—नानाप्रकारकी पीडा नानाप्रकारकी पीबका बहाव और पूर्वोक्त दोषों समस्त लक्षण हों तो सन्निपातोपदंश जानो.

उपदंशके असाध्यलक्षण—लिंगका मांस बिखरजावे, कीडे पडजावें, सर्वलिंग गलजावे, केवल अंडकोशमात्र रहजावें तो असाध्य उपदंश जानो. तथा यह रोग होनेपर असावधानीसे यत्न करके विषयासक्तही बनारहे तो कुछ दिनोंमें लिंग सूजकर कीडे पडजावेंगे और पककर दाह होगी तब लिंग गलकर गिरजानेसे वह रोगी मृत्युको प्राप्त हो जावेगा.

लिंगवर्तिरोगलक्षण—लिंगके अग्रभागपर चमडेके नीचकी संधिमें धान्यके अंकुर या मुर्गेकी चोटी या कुल्थी या कमलपत्रके सदृश मांसके अंकुर निकलकर दाह और सुई चुभानेके समान पीडा करते, प्यास लगती और इन्द्रिय चूने लगती है इसे लिंगवर्ति तथा लिंगार्श भी कहते हैं.

विशेषतः—सुश्रुतमे लिखा है कि उपदंशरोग स्त्रियोंको भी होताहै परन्तु उन्हें मासिक रजोधर्म होनेसे मनुष्योंके समान प्रत्यक्ष प्रकट होता नहीं दिखाई देता है.

शूकरोगोत्पत्तिकारण—जो मूर्ख मनुष्य अविचारसे लिंगवृद्धिके हेतु औषधियोंकी पट्टी तथा लेपादि करते हैं, उन्हें लिंगमें १८ प्रकारका शूकरोग होता है अर्थात् १ सर्षपिका, २ अष्ठीलिका, ३ ग्रंथित, ४ कुंभिका, ५ अलजी, ६ मृदित, ७ सम्मूढ़पीडिका, ८ अवमंथ, ९ पुष्करिका, १० स्पर्शहानि, ११ उत्तमा; १२ शतपोनक, १३ त्वक्पाक, १४ शोणितार्बुद, १५ मांसार्बुद, १६ मांसपाक, १७ विद्रधि और १८ तिलकालक.

१ सर्षपिकालक्षण—लिंगपर किसीप्रकारकी सरसोंके समान श्वेत फुन्सियां हों उसे सर्षपिका जानो.

२ अष्ठीलिकालक्षण—लिंगपर किसीप्रकारसे कडी और पीडायुक्त फुन्सियां हों उसे अष्ठीलिका जानो.

---

१ यह वही रोग है जो लोकमें गर्मी और उर्दूभाषामें आतशकके नामसे प्रख्यात है।

३ ग्रंथितलक्षण–लिंगपर गठानसी हो जाती हैं, उसे ग्रंथित जानो.

४ कुम्भिकालक्षण–लिंगपर जामुनकी गुठली सदृश फुनसी होजावे उसे कुम्भिका जानो-

५ अलजीलक्षण–लिंगपर प्रमेहकी फुनसी होजाती हैं उन्हें अलजी जानो.

६ मृदितलक्षण लिंगको शूकरोगके दशामें दबानेसे जो सूजन हो आती है उसे मृदित जानो.

७ सम्मूढपीडिकालक्षण–लिंग दोनों हाथसे दबाया जावे, तो उससे जो फुनसियां हो जाती हैं उन्हें सम्मूढपीडिका जानो.

८ अवमंथलक्षण–लिंगमें किसी कारणसे बड़ी बड़ी सघन फुनसियां होकर कफ रक्त विकारसे पीड़ा और रोमांच होता है उसे अवमंथ कहते हैं.

९ पुष्करिकालक्षण–लिंगकी सुपारीपर रक्तपित्तके प्रकोपसे बहुत मिलीहुइ फुनसियां हो जाती हैं उन्हें पुष्करिका कहते हैं.

१० स्पर्शहानिलक्षण–जो इन्द्रिय पीडाके मारे हाथ आदिका स्पर्श (छूना) न सहसकें उसे स्पर्शहानि कहते हैं.

११ उत्तमालक्षण–अजीर्ण तथा रक्तपित्तके प्रकोपसे इन्द्रियपर मूंग या उर्दके समान लाल फुनसियां हो आती हैं उन्हें उत्तमा कहते हैं.

१२ शतपोनकलक्षण–रक्तवातके कोपसे लिंगपर अनेक छिद्र पड़ जातेहैं उन्हें शतपोनक कहते हैं.

१३ त्वक्पाकलक्षण–तीनों दोषोंके प्रकोपसे इन्द्रिय पककरदाह होती और उसकी पीडासे शरीरमें ज्वर होता है उसे त्वक्पाक कहते हैं.

१४ शोणितार्बुदलक्षण–इन्द्रियपर काली या लाल फुनसी होकर पीडा होती है उसे शोणितार्बुद कहते हैं.

१५ मांसार्बुदलक्षण–इन्द्रियपर कठोर फुनसी होती हैं सो मांसार्बुद कहातीहैं.

१६ मांसपाकलक्षण–त्रिदोषके प्रकोपसे इन्द्रियका मांस बिखरके पीडायुक्त हो जाता है उसे मांसपाक जानो.

१७ विद्रधिलक्षण–सन्निपातके प्रकोपसे लिंगपर जो फुनसियां उठती हैं उन्हें विद्रधि कहते हैं.

१८ तिलकालकलक्षण--त्रिदोषके प्रकोपसे इन्द्रियपर काली या लाल तथा अन्य रंगोंकी विषहरी फुनसी होकर पकती और उनमेंसे पीब बहकर इन्द्रिय गल जाती है उन्हें तिलकालक कहते हैं.

शूकरोग असाध्यलक्षण--१ मांसार्बुद, २ मांसपाक, ३ विद्रधि और ४ तिलकालक ये चारों पिछले शूकरोग जो उत्पन्न हुए तो फिर शरीरके साथही नष्ट भी होते हैं असाध्य हैं परन्तु पहिले १४ शूकरोग कष्टसाध्य होते हैं.

इति नूतनामृतसागरे निदानखण्डे भगंदरोपदंशलिंगवर्तिशूकरोगाणां लक्षणनिरूपणं नाम त्रयस्त्रिंशस्तरंगः ॥ ३३ ॥

कुष्ठरोग.

निदानं कुष्ठरोगस्य विवर्णो येन जायते ॥
नराणां वेदरामेस्मिँस्तरंगे वर्ण्यते मया ॥ ३४ ॥

भाषार्थ--अब हम इस ३४ चौतीसवें तरंगमें मनुष्यके वर्णविदूषक कुष्ठ रोगका निदान यथाक्रमसे वर्णन करते हैं.

कुष्ठरोगोत्पत्तिकारण--विरुद्ध आहार विहार, पतली, चिकनी वस्तु भक्षण, मलमूत्रावरोध, अग्नितापन, विशेष भोजन, शीतोष्णका विचार न रखना, श्रम, घाममें फिरना, भय, धूप, श्रमकी विकलतापर तत्काल जलपान, अजीर्णपर भोजन, वमन विरेचनपर कुपथ्य, नवीन जलपान, दही, मछली, खटाई, नमक, उर्द, मूली, तिल, गुड और बासीहुआ अन्नभक्षण दिनको निद्रा, स्त्रीसंग. ब्राह्मणादिका शाप तथा नानाप्रकारके पापोंसे मनुष्यके तीनों दोष कुपित होकर सप्त धातुओंको विगाडके अठारह प्रकारके कुष्ठ उत्पन्न करते हैं.

अष्टादश कुष्ठभेद--१ कापालिक २ औदुम्बर ३ मंडल ४ ऋक्षजिह्व ५ पुंडरीक ६ सिध्म (विभूति तथा सेहुआ) ७ काकण ८ एककुष्ठ ९ गजचर्म १० चर्मदल ११ किटिभ १२ वैपादिक १३ अलस १४ दद्रु (दाद) १५ पामा (खुजली) १६ विस्फोटक १७ सतारु और १८ विचर्चिका (ब्योंची) इनमेंसे पहिले ७ महाकुष्ठ और पिछले ११ साधारण कुष्ठ जानो.

कुष्ठरोगपूर्वक–जिस स्थानका चर्म अति चिकना या खरखरा हो विशेष पसीना निकले या निकलेही नहीं, रंग बदल जावे, दाद, खाज शून्यता, सुई कोंचने सदृश पीडा, ददोरा, बिन परिश्रम थकावट और व्रण होजावें व्रणमें शूल उठे, व्रण शीघ्र उत्पन्न होकर बहुत कालतक रहें, व्रण भरआवें और उनके मिटजानेपर भी वह स्थान खरदरा बना रहे, उसी पूर्वस्थानपर किंचित् सूक्ष्म कारणसेही पुनः व्रण होआवे, रोमांच होवे और रक्त काला पड़जावे तो जानो कि इस स्थानपर कुष्ठरोग उत्पन्न होगा.

कुष्ठसामान्यलक्षण–पूर्वजन्मके पापोंसे मनुष्यकी बुद्धि भ्रष्ट होकर कुपथ्य करातीहै, इस कुपथ्यसे त्रिदोष कुपित होकर शरीरकी नसोंमें प्राप्त होतेहुए शरीरकी त्वचा, रक्त, मांसको दूषित करके त्वचाका रंग बदल देताहै सो कुष्ठ कहाता है.

विशेषतः–वातप्रकोपसे कापालिक एककुष्ठ, पित्तप्रकोपसे औदुम्बर, कफप्रकोपसे मंडल, वात–पित्त प्रकोपसे विचर्चिका, ऋक्षजिह्व, वात–कफप्रकोपसे गजचर्म, किटिभ, सिध्म, अलस, वैपादिक, पित्त–कफ–प्रकोपसे दद्रु, सतारु, पुंडरीक, विस्फोटक, पामा, चर्मदल और तीनों दोषोंके प्रकोपसे काकण कुष्ठकी उत्पत्ति होती है.

१ कापालिकलक्षण–शरीरकी त्वचा काली, लाल, फटीहुई, रूखी, कठोर सूक्ष्म होकर अधिक पीडा हो उसे कापालिक कुष्ठ जानो. यह कुष्ठ विषम है, इसलिये कठिनाईसे दूर होवेगा.

२ औदुम्बरलक्षण–त्वचामें दाह, ललाई और खुजाल विशेषहो, रोम पीले पड़जावें और त्वचा गूलरके पक्के फल सदृश होजावे उसे औदुम्बरकुष्ठ कहते हैं.

३ मंडललक्षण–त्वचा श्वेत या लाल, या चिकनी होजावे गीली ऊंची और स्थिर रहे उसे मंडल कहते हैं.

४ ऋक्षजिह्वलक्षण-जो कुष्ठ किनारोंपर लाल और बीचमें पीलापन-लिये काला हो, कर्कश और पीडायुक्त हो तथा रीछकी जिह्वाके आकारका हो सो ऋक्षजिह्व कुष्ठ कहाता है.

५ पुंडरीक लक्षण–त्वचा कमलकी पँखुरीसदृश ललाई लियेहुए श्वेतवर्णकी हो उसे पुंडरीक कहते हैं.

६ सिध्मलक्षण—त्वचा श्वेत या ताम्रवर्ण और सूक्ष्म होजावे, खुजाल चले और कुष्ठ क्रमशः फैलता जावे उसे सिध्मकुष्ठ जानो.

७ काकणलक्षण—त्वचा गुंजाके समान बीचमें काली और आस पास लाल हो, पके नहीं पर पीडा अधिक हो तो काकणकुष्ठ जानो.

८ एककुष्ठलक्षण—त्वचामें पसीना न आवे और मछलीके टुकडेके समान बडी होजावे सो एककुष्ठ कहाता है.

९ गजचर्मकुष्ठलक्षण—त्वचा हाथीके चमड़े सदृश मोटी होजावे उसे गजचर्म कहते हैं.

१० चर्मदलकुष्ठलक्षण—त्वचाका वर्ण लाल हो, शूल, खाज और फोडोंसे पूरित हो, फटजावे और वस्त्रका स्पर्शभी सहन न करसके उसे चर्मदलकुष्ठ कहते हैं.

११ किटिभलक्षण—त्वचा सूखेहुए व्रणके समान काली और कठोर हो उसे किटिभकुष्ठ जानो.

१२ वैपादिकलक्षण—हाथ पाँवका चर्म फटकर दरारें पडजावें और पीडा देवैं उसे वैपादिक (बिवांई) कहते हैं.

१३ अलसलक्षण—त्वचामें खुजालयुक्त बडी बडी फुन्सी हो जाती हैं. उसे असलकुष्ठ कहते हैं.

१४ दद्रुकुष्ठलक्षण--त्वचापर ऊँची लाल खुजालयुक्त फुन्सियां होजाती हैं उसे दद्रु (दाद) कहते हैं. इसीका नाम एक भेद कच्छदाद है जो हाथ पाव, कूले और काछोंमें होती है.

१५ पामालक्षण--त्वचापर छोटी छोटी खुजालयुक्त चेप और दाहसहित लाल और अनेक फुन्सियां होती हैं उसे पामा (खुजली) कुष्ठ जानो.

१६ विस्फोटकलक्षण—त्वचामें काली, लाल, तथा छोटी छोटी फुन्सियां होजाती हैं उन्हें विस्फोटक कुष्ठ कहते हैं.

१७ सतारुकुष्ठलक्षण—त्वचामें लाल, काली, और दाहयुक्त फुन्सियां होवें उसे सतारुकुष्ठ जानो.

१८ विचर्चिकालक्षण—हाथ पाँवकी त्वचापर खुजालयुक्त, काली तथा चेपयुक्त फुन्सियां हों उन्हें विचर्चिका (ब्योंची) कहते हैं.

सप्तधातुगतकुष्ठनिर्णय रसधातुगत कुष्ठसे कुरूप, शरीर रूखा, चर्म-शून्य, रोमांच और पसीनेकी विशेषता होती है, रक्तगत कुष्ठसे शरीरमें खाज और पीबकी विपुलता होती है, मांसगत कुष्ठसे व्रणकी बृहत्ता, मुख सूखना, कठोर फुनसियां होना, सुई चुभाने सदृश पीडा होना चर्म फटना और घावकी अचलता होती है. मेदोगत कुष्ठसे हाथोंका टेढ़ापन, चलनेमें अशक्ति, अंगोंका फूटना घावोंका फैलाव, तथा रस, रक्त, मांस गत कुष्ठके लक्षण भी होते हैं अस्थि और मज्जागत कुष्ठसे नाक बैठजाना नेत्रोंमें ललाई, स्वरभंग और व्रणोंमें कीडे पड जाते हैं, और वीर्यगत कुष्ठसे पूर्वोक्त छहों धातुगत कुष्ठके लक्षण होते हैं, जो पुरुषके वीर्य और स्त्रीके रज दोनोंमें कुष्ठका प्रवेश हो तो उनके संतान भी कुष्ठयुक्तही होवेंगे.

कुष्ठसाध्यासाध्यलक्षण—जो कुष्ठ वात कफसे होकर त्वचा, रक्त और मांसमेंही रहे, तो साध्य द्वन्द्वजन्य होकर मेदतक प्राप्त होजावें तो याप्य और त्रिदोषजन्य होकर मज्जातक जा पहुँचे, कृमि पडजावें, मंदाग्नि और दाह हो जावे, तो असाध्य जानो. तथा जो कुष्ठ वीर्यतक जा पहुँचे, विपरजावे, चूने लगे. स्वरभंग होजावे और वमन, विरेचनादिके पंच कर्म भी अपना प्रभाव न दिखासकें उसे महाअसाध्य जानो. यह गलितकुष्ठ प्राणनाशकही होता है.

कुष्ठभेद--श्वित्र तथा किलास लक्षण--श्वित्र श्वेत और किलास कुछ लाल होता है, ये पकते पर बहते नहीं, रक्त, मांस, और मेदमें रहते हैं पर विशेष पीडा नहीं देते, ये दोनों त्रिदोषसेही होते हैं, इनका सम्प्राप्ति-कारण कुष्ठके समानही जानो.

श्वित्रकिलासके साध्यासाध्य लक्षण--श्वित्रमें रोम श्वेत होजावें. उनकी श्वेतता भी मलीनही हो चिह्न एक दूसरेसे न मिले हों, नवीन (अल्प-कालिक) हो अग्निदग्धसे उत्पन्न न हुआ हो तो यह श्वित्र साध्य-तथा जो गुदा, योनि, लिंग, हथेली, तलुवे, ओष्ठमें हुआ हो प्राचीन (बहुकालिक) हो तो असाध्य श्वित्र जानो. और किलास कुष्ठ तो सर्व-था असाध्यही होता है.

स्पर्शजन्यरोग—इस प्रसंगपर स्पर्शसे उत्पन्न होनेवाले रोग(जैसे १ कुष्ठ, २ शोष, ३ ज्वर, ४ राजरोग, ५ नेत्रपीडा, (आँखें आना) ६ शीत

भी लिखते हैं. ये छहों रोगवाले रोगीके शरीरसे शरीर मिलाने, एक ठाँव भोजन करने, एक ठाँव सोने, एक दूसरेके वस्त्र बदलकर पहिनने, एक दूसरेका लगाया हुआ अवशिष्ट चंदनादि लेप लगाने और मैथुनसे निरोगी को भी उत्पन्न होजाते हैं, इसलिये सबको इनका बचाव रखनाही योग्यहै.

इति नूतनामृतसागरे निदानखण्डे कुष्ठरोगलक्षणनिरूपणं नाम चतुस्त्रिंशस्तरंगः ॥ ३४ ॥

शीतपित्त-उदर्द-कोढ़-उत्कोढ़अम्लपित्त-विसर्परोग.

शीतपित्तादिरोगाणामम्लपित्तविसर्पयोः ॥
पञ्चरामामिते भङ्गेनिदानं लिख्यते मया ॥ ३५ ॥

भाषार्थ– इस ३५ पैंतीसवें तरंगमें शीतपित्त, उदर्द, कोढ़, उत्कोढ़, अम्लपित्त और विसर्परोगोंका निदान क्रमानुसार लिखते हैं.

शीतपित्त-उदर्द-कोढ़-उत्कोढ़ रोगोत्पत्ति कारण-शीतलपवनके स्पर्शसे कफ और वात कुपित होके पित्तसे मिलतीहुई भीतर रक्त और बाहर चर्ममें फैलकर शीतपित्त, उदर्द, कोढ और उत्कोढको उत्पन्न करते हैं.

तथा पूर्वरूप–तृषा, अरुचि, उबकाई, मोह, (घबराहट) अंगमें शैथिल्यता, भारीपन और नेत्रोंमें ललाई ये लक्षण दृष्टिपड़ें तो विचारलो कि, अब उक्तरोग उत्पन्न होनेवाले हैं.

शीतपित्त लक्षण–चर्मपर बरैयोंके काटनेके समान ददोरे होकर उनमें खुजाल, सुई चुभानेकीसी वेदना, वमन,ज्वर और दाह हो तो उसे शीतांग जानो इसमें बादीप्रधानहै.

उदर्दलक्षण–जो ददोरे बीचमें गहिरे, किनारोंपर ऊँचे ललाईयुक्त और खुजाल सहित हों उन्हें उदर्दरोग जानो. यह रोग शिशिरऋतुमें कफकी विशेषतासे होता है.

कोढ़लक्षण–आते हुए वमनको रोकनेसे पित्त, कफ कुपित होकर त्वचापर खुजालयुक्त लाल लाल ददोरे उत्पन्न करते हैं उन्हें कोढ़ कहते हैं.

उत्कोढ़लक्षण–जो यही कोढ़ विशेष काल पर्यंत रहै तो उसीको उत्कोढ कहते हैं.

अम्लपित्तरोगोत्पत्तिकारण—रूखी, खट्टी, कटु, उष्णवस्तुओंके भक्षणसे पित्त कुपित होकर अम्लपित्तरोगको उत्पन्न करता है.

अम्लपित्तसामान्यलक्षण—अन्न न पचै, विना श्रम थकावट हो, वमन हो, खट्टी डकारें आवें, शरीर भारी हो, हृदय तथा कंठमें दाह हो और भोजनपर अरुचि हो तो अम्लपित्त प्राप्त हुआ जानो. यह रोग १ ऊर्द्ध्वगामी, २ अधोगामी दो प्रकारका है.

ऊर्द्ध्वगामी अम्लपित्त लक्षण—जो हरा, पीला, नीला, काला, अति निर्मल तथा मांस जलसदृश, चिकना ढद, कडुवा, खारा, तीखा, कफयुक्त और बहुतसा वमन करै तो मुखद्वारसे निकलनेवाला अम्लपित्त जानो.

अधोगामी अम्लपित्त लक्षण—नानाप्रकरके वर्णयुक्त मल उतरै दाह, मूर्च्छा, वमन और मोह होवे, हृदयमें पीडा, शरीरमें ददोरे, शरीरमें ज्वर, भोजनमें अरुचि, कंठ, कुक्षि, हृदय, हाथ और पाँवमें दाह होकर बहुत डकारें आवें तो उसे मूलद्वारसे निकलनेवाला अम्लपित्त जानो.

वातयुक्त अम्लपित्त लक्षण—शरीरमें कंप, मूर्च्छा, प्रलाप, चिमचिमाहट, पीडा, शूल, मोह और रोमहर्षहोकर अँधेरी तथा चक्र आ[illegible] [illegible]म्लपित्तमें वातका संसर्ग जानो.

कफयुक्त अम्लपित्त लक्षण—थूकमें कफ, शरीरमें भारीपन, अरुचि, ठंढ, वमन, निस्तेज, (कांतिरहित) निर्बलता, खुजाल होकर निद्राकी बहुतायत हो तो अम्लपित्तमें कफका संसर्ग जानो.

अम्लपित्त साध्यासाध्यलक्षण—यह रोग नवीनदशामें साध्य मध्यमदशामें याप्य और प्राचीन दशामें कुपथ्य होनेसे असाध्य हो जाताहै.

विसर्परोगोत्पत्तिकारण—नोन, खटाई और उष्णवस्तुके विशेष भक्षणसे १ वातज, २ पित्तज, ३ कफज, ४ सन्निपतज, ५ वातपित्तज, ६ वातकफज और ७ कफपित्तज एवं सातप्रकारके विसर्परोग उत्पन्न होते हैं.

विसर्परोग समान्य लक्षण—पउरोक्त करणोंसे त्रिदोष कुपित होकर शरीरके रक्तादि सप्तधातुओंको दूषित करके त्वचापर छोटी छोटी फुन्सियोंके मण्डलको फैला देते हैं इसालिये इस रोगको विसर्परोग कहते हैं.

१ वातजविसर्पलक्षण—अपने कारणोंसे वात कुपित होकर शरीरमें कहीं

भी छोटी छोटी फुनसियां उत्पन्न करता है तब शरीरमें वातज्वरके समस्त लक्षण, शोथ, पीड़ा और खुजाल होकर वे फुनसियाँ फटने लगती हैं, ये लक्षण हों तो वातका विसर्प जानो.

२ पित्तजविसर्पलक्षण—स्वकारणोंसे पित्त कुपित होकर शरीरमें छोटी बडी लाल फुनसियां करके फैला देताहै तब शरीरमें पित्तज्वरके समस्त लक्षण होते हैं उसे पित्तविसर्प कहते हैं.

३ कफजविसर्पलक्षण—स्वकारणीय कुपित कफ शरीरमें छोटी मोटी खुजालयुक्त, तथा चिकनी फुनसियोंको फैलाकर कफज्वरके सर्वलक्षण दर्शाता है उसे कफविसर्प कहते हैं.

४ सन्निपातजविसर्पलक्षण—स्वकारणीय कुपित सन्निपात शरीरमें छोटी बडी, पूर्वोक्त तीनों दोषोंके लक्षणयुक्त फुनसियां उत्पन्न करके फैलाता और सन्निपातज्वरके लक्षण करताहै उसे सन्निपातजविसर्प जानो.

५ वातपित्तजअग्निविसर्पलक्षण—स्वकारणोंसे वात, पित्त कुपित होकर शरीरमें छोटी बडी अग्निके वर्णसदृश लाल फुनसियां उत्पन्न करके फैला देतेहैं, तब शरीरमें वात पित्तज्वर लक्षण, वमन, मूर्च्छा, अतिसार, तृषा, भ्रम, अंगपीडा, हडफूटन, अँधेरी, अरुचि, दाह, श्वास, हिचकी विकलता होती और विसर्पस्थानका चर्म काला, नीला अथवा लाल होजाता संज्ञा और निद्राका अभाव रहता और मन देहादि बिगडजातेहैं ये लक्षण हों तो वातपित्तज, अग्निविसर्प जानो. यह महाअसाध्य है.

६ वातकफजग्रंथिविसर्पलक्षण—विशेष रक्तवाले मनुष्यका कफसे सूखा हुआ वायु कुपित होकर कफ और त्वचा, शिरा, स्नायु, मांसगत रक्तको दूषित करके शरीरपर लम्बी, छोटी, गोल, मोटी, खरखरी और लाल आदि गठानोंकी मालासी उत्पन्न करता है तब रोगीको ज्वर, श्वास कास, अतिसार, मुखशोष, हुचकी, मोह, वांति, मूर्च्छा, विवर्णता, अंगफूटन और मंदाग्नि ये विकार होते हैं, ये लक्षण हों तो वातकफजग्रंथिविसर्प जानो.

७ कफपित्तजकर्दमविसर्पलक्षण—स्वकारणीय कुपित कफपित्तसे कर्दम विसर्प उत्पन्न होकर शरीरमें जकडाव, निद्रा, तन्द्रा, शिरोरुक, शैथिल्यता, विकलता, प्रलाप, अरुचि, भ्रम, मन्दाग्नि, मूर्च्छा, हडफूटन, तृषा,

भारीपन आममिश्रित मल, नासिकादिछिद्रोंका पकाव, सर्वशरीरमें काली, लाल, मैली, चिकनी, भारी, शोथयुक्त, विशेप पीवयुक्त, फुन्सियां होकर फैलना, कम्पआना, शरीरकी नसोंका निकलना और मृतकके समान दुर्गंधिका आना ये लक्षण होजाते हैं उसे कर्दमविसर्प कहते हैं.

क्षतजविसर्पलक्षण–शस्त्रादिकी चोट लगनेसे वात कुपित होकर रक्त और पित्तको बिगाड देता है इसलिये शरीरमें कुलथीके समान फुन्सियां उत्पन्न होकर पश्चात् वेही फुन्सियां फोडेकी आकृतिमें होजाती हैं तब फुन्सियोंमें शोथ, शरीरमें ज्वर, और कालारक्त पड जाता है. ये लक्षण हों तो क्षतज (चोट लगनेका) विसर्प जानो.

विसर्पोपद्रव–रोगीके शरीरमें ज्वर, अतिसार, वमन, तृषा, अरुचि, अन्नका निष्पचन, बुद्धिकी स्थिरता न रहकर मांस बिखर जाता है.

विसर्परोगसाध्यासाध्यलक्षण–वातज, पित्तज और कफज विसर्प साध्य सन्निपातज और क्षतज तथा काले रंगका पित्तज विसर्प असाध्य और मर्मस्थानमें उत्पन्न हुआ विसर्प अतिकष्टसाध्य होता है.

इति नूतनामृतसागरे निदानखण्डे शीतपित्तोदर्दकुष्टोत्कुष्टाम्लपित्तरोगाणां लक्षणनिरूपणंनाम पंचत्रिंशस्तरंगः ॥ ३५ ॥

स्नायु, विस्फोटक, मसूरिका, फिरंगवात.

निदानं लिख्यतेस्नायुविस्फोटकमसूरिका- ॥
फिरंगवातरोगाणां भङ्गे रसधनंजये ॥ ३६ ॥

भाषार्थ--अब हम इस ३६ छत्तीसवें तरंगमें स्नायु, विस्फोटक, मसूरिका और फिरंगवात रोगोंका निदान यथाक्रमसे लिखतेहैं

स्नायुरोगोत्पत्तिकारण--मलिन जलपान और दुष्टान्न भक्षणसे वायु कुपित होकर हाथ या पाँवके किसी भागमें फफोला या शोथ उत्पन्न करके उसे फोड डालता है तब उस स्थानकी नसोंको कुपित पित्त सुखाकर तांतके समान तारको उत्पन्न करता और कुपित वायुको बढ़ाता है तिससे इस स्नायुरोगवाला रोगी अत्यंत क्लेशग्रस्त रहता है. जबतक वह धागा (तार) उस स्थानसे समस्त बाहर न निकले तबतक वैद्य उसे स्नायु तथा लोकमें नहरुआ और मारवाड़देशमें बालारोग कहते हैं.

विस्फोटकरोगोत्पत्तिकारण—कडुवी, खट्टी, तीखी, उष्ण, दाहकारक रूखी, खारी वस्तुके विशेष सेवन, अजीर्ण, भोजनपर भोजन करने, धूपमें फिरने और ऋतुके विपर्ययसे तीनों दोष कुपित होकर शरीरकी त्वचामें प्राप्त होते हैं तब रक्त, मांस और अस्थिको दूषित करके प्रथम ज्वर और फिर उसी ज्वरके साथही शरीपर भयंकर विस्फोटक रोगके फोडोंको उत्पन्न करते हैं.

विस्फोटकसामान्यरूप—शरीरमें कहीं कहीं अथवा सर्वत्र रक्तपित्तसे तथा अग्निसे जलनेके समान फफोले आजाते हैं उन्हें विस्फोटक जानो.

१ वातज विस्फोटक लक्षण—फोडोंमें पीडा शरीरमें ज्वर, तृषा, हाड-फूटन, शिरोग्रह और, फफोलोंका रंग कालासा हो तो वातज विस्फोटक रोग जानो.

२ पित्तजविस्फोटक लक्षण—शरीरमें दाह, ज्वर पीडा, तृषा फफोलें का पकाव तथा बहाव और वर्ण नारंगी (संतरा) के समान हो तो पित्तका विस्फोटक जानो.

३ कफजविस्फोटक लक्षण—शरीरमें वांति, अन्नपर अरुचि, भारीपन, खुजाल, व्रणोंकी कठोरता, पांडुवर्ण, निर्वेदना और विलम्बसे पकाव हो तो कफजविस्फोटक जानो.

४ द्वन्द्वजविस्फोटक लक्षण—वात पित्तज विस्फोटकमें तीव्र वेदना होती.

५ कफपित्तजविस्फोटकमें खाज, दाह, ज्वर और वांति होती है.

६ वातकफजविस्फोटकमें खाज, आलस्य और भारीपन होता है.

७ सन्निपातजविस्फोटक लक्षण—फफोले बीचमें गहरे, किनारोंपर ऊँचे कठोर और अलपपाकी हों, शरीरमें दाह, तृषा, मोह वांति, मूर्च्छा, वेदना, ज्वर, प्रलाप, कम्प और तंद्रा ये लक्षण हों तो त्रिदोषका विस्फोटक जानो.

८ रक्तविस्फोटक लक्षण—जो फफोले घुंघची (गुंजा) के समान हों उसे रक्तजविस्फोटक जानो. इसके कारण भी पित्तजविस्फोटकके समान ही होते हैं अनेक यत्नोंसे भी नहीं मिटता.

विस्फोटक उपद्रव—इस रोगमें हिचकी, श्वास, अरुचि, तृषा, आलस्य, शरीरमें वेदना, विसर्प, ज्वर और उबकाई आना ये उपद्रव हैं.

विस्फोटके साध्यासाध्यलक्षण—एकदोषज विस्फोटक साध्य, द्वंद्वज कष्टसाध्य और त्रिदोषज तथा उपद्रवयुक्त हो उसे घोर असाध्य जानो.

मसूरिकारोगोत्पत्तिकारण—कटु, खट्टा, नोन, खारा, विरुद्धभोजन, दुष्टान्न और मटरका शाक खाने भोजनपर भोजन करने, जल पवनके विकार तथा सूर्यादि ग्रहोंके प्रकोपसे तीनों दोष कुपित रक्तके संयोगसे मसूराकृति फुन्सियां उत्पन्न करते हैं, इसे मसूरिका रोग कहते हैं.

मसूरिका पूर्वरूप—ज्वर, कंडु, अंगमर्दन, अरुचि,[१] चित्तभ्रम, त्वचापर शोथ, नेत्रोंमें ललाई होकर शरीरका वर्ण बिगडजावे तो जानो कि इसे मसूरिका निकलैगी.

१ वातजमसूरिकालक्षण—मसूरिकाकी फुन्सियां कालापनलिये लाल, रूखी, कठोर, तीव्र पीडायुक्त और विलम्बसे पकनेवाली हों, संधि, हाड और अँगुलियोंके पोरोंमें फूटन हो, शरीरमें कास, कम्प, विकलता, तृषा और अरुचि हो, तथा जीभ, तालु और ओष्ठ सूखजावें तो बादीकी मसूरिका जानो.

२ पित्तजमसूरिकालक्षण—जो लाल, पीली, श्वेत, कोमल, शीघ्र पकनेवाली पीडायुक्त फुन्सियां हों तो पित्तसे उत्पन्न हुई मसूरिका जानो. इस के रोगीको प्यास, दाह, अरुचि, मख नेत्रोंका पकना, तीव्रज्वर अन्न न पचना और फूटाहुआ मल होना ये लक्षण होते हैं.

३ रक्तजमसूरिकालक्षण—इसके लक्षण भी पित्तजके समानही होते हैं. केवल इसमें अंगफूटन विशेष होती है.

४ कफजमसूरिकालक्षण—रोगीके मुखसे कफ गिरै, अंग गीलासा रहै शिरमें पीडा हो, शरीरभारी हो, अरुचि हो, उबकाई आवे, तंद्रा आलस्य हो, श्वेत, चिकनी, अति, मोटी, खाज, मंद वेदनायुक्त और चिरपाकी फुनसियां हों तो कफकी मसूरिका जानो.

---

१ इनमें विस्फोटकरोग लोकोंमें शीतला, माता, देवी आदि नामसे प्रख्यात है ।

२ मसूरिकाबोदरी माता या छोटी माताके नामसे प्रख्यात है ।

५ त्रिदोषजमसूरिकालक्षण–जो नीले रंगकी, चिपटीहुई, फैली, बीचमें गहरी अति पीडायुक्त, बहुत दिनोंमें पकनेवाली फुन्सियाँ हों, जिनमेंसे दुर्गंधित पीब सदैव बहती रहै उसे त्रिदोषकी मसूरिका जानो.

६ चर्ममसूरिकालक्षण–कंठ रुकजावे, अरुचि, तंद्रा, प्रलाप और विकलता हो तो चर्ममसूरिका जानो.

७ रोमांतिकमसूरिकालक्षण–जो रोमकूपके समान ऊंची, लाल, कास और अरुचियुक्त फुन्सियां हों तो रोमांतिक मसूरिका जानो. इनसे प्रथम ज्वर आता और ये कफपित्तके विकारसे होती हैं.

सप्तधातुगत मसूरिकालक्षण–पानीके बबूलोंके आकारकी फुन्सियाँ अल्प दोषसे उत्पन्न होकर फूटनेपर पानी निकले तो रसगत. लाल, शीघ्रपाकी पतलीत्वचावाली, अतिदोषयुक्त फुन्सियां होकर उनके फूटनेपर रक्तबहै तो रक्तगत. जो कठोर, चिकनी, मोटीत्वचावाली, चिरपाकी फुन्सियां हों जिनसे शरीरमें शूल, विकलता, खाज, मूर्च्छा, दाह और तृषा हो तो मांसगत. जो गोल, कोमल, कुछ ऊंची, घोरज्वरयुक्त, चिकनी और बडी बडी फुन्सियाँ जिनसे शरीरमें पीडा, मोह, विकलता और संताप हो तो मेदोगत. जो छोटी छोटी शरीरके वर्ण समान, रूखी, चिपटी, कुछ ऊंची फुन्सियां होकर भ्रम, मोह, पीडा, बिकलता, मर्मस्थानपर छेदनेकीसी पीड़ा और हाड़ोंमें भौंराके काटने सदृश वेदना हो तो आस्थि तथा मज्जागत और जो पकनेके समान चिकनी, बुलबुलित फुन्सियां होकर पीडा, आलस्य, विकलता, मोह, दाह और उन्माद हो तो शुक्रगत मसूरिका जानना चाहिये.

मसूरिका साध्यासाध्यलक्षण–रक्त पित्त, कफ, और कफपित्तज तथा रक्तगता मसूरिका साध्य, वातजा, वातपित्तजा और वातकफजाको कष्टसाध्य. तथा त्रिदोपजा, मेद अस्थि मज्जा और शुक्रता मसूरिकाको असाध्य जानो. जो मसूरिकावाले रोगीको कास, हिचकी, मोह, तीव्रज्वर, प्रलाप, विकलता मूर्च्छा, तृषा, दाह और चक्र आके मुखसे रक्त गिरे, कंठमें घुरघुर शब्द हो और श्वास बहुत चलैं तो असाध्य मसूरिका जानो.

मसूरिकाउपद्रव–मसूरिका निकलनेपर रोगीके पाँव, जाँघ, पहुँचा और कांधोंपर शोथ आजावे तो यह उपद्रव दुश्चिकित्स्य दारुण है

फिरंगवातसेरोगोत्पत्तिकारण–उपदंशरोगयुक्तास्त्रीसे मैथुनकरनेसे उपदंशरोगीके मूत्रपर लघुशंका करनेसे, उपदंशरोगीके साथ भोजनादि संसर्गसे वात कुपित होकर फिरंगवातको उत्पन्न करता है. अथवा क्षीण-पुरुष अत्यंत मैथुन करै तो त्रिदोष कुपित होकर आगन्तुकसंज्ञक फिरंग-वातको उत्पन्न करते हैं.

फिरंगवातसामान्यलक्षण–१ जो शरीरमें चींटी काटनेके सदृश ददोर आकार पीठ और जाँघमें पीडा तथा शोथ हो तो जानो कि, अभी फिरंगवात शरीरकी संधि और नसोंमें प्रवेश हुआ है. २ जो लिंगेन्द्रियपर थोड़ी फुन्सियां और फटनेकेसे चिह्न हों तो जानो कि, फिरंगवात त्वचा-परही है. ३ और जो ये सब लक्षण होकर बहुत काललक रहे तो जानो कि, अब फिरंगवात त्वचाके बाहर और भीतर दोनों ओर प्राप्त होगई है.

फिरंगवात उपद्रव–शरीरक्षीणता, बलनाश, अग्निमांद्य और मांस, रुधिर नष्ट होकर हड्डीमात्र रहजावें तथा नाक गलजावे तो इन उपद्रवोंसे युक्त रोगीका बचना हरीहरही है,

इति नूतनामृतसागरे निदानखण्डे स्नायुविस्फोटक-मसूरिका फिरंगवात रोगाणां लक्षणानिरूपणं नाम षट्त्रिंशस्तरंगः ॥ ३६ ॥

अथ क्षुद्ररोगाः ।

अजगलिकादिक्षुद्राणां रोगाणां च यथाक्रमात् ॥
तरङ्गे मुनिरामेऽस्मिन्निदानं लिख्यते मया ॥ ३७ ॥

भाषार्थ–अब हम इस ३७ सैंतीसवें तरंगमें अजगलिका आदि रोगोंका निदान यथाक्रमसे लिखते हैं.

१ अजगलिकालक्षण–कफ, वात, प्रकोपसे शरीरपर चिकनी, शरीरके वर्ण सदृश पीड़ा रहित मूँग प्रमाणकी जो फुन्सियां हों उन्हें अजगलिका जानो.

२ यवप्रक्षालक्षण–कफ, वातप्रकोपसे यवके समान, बड़ी, गठीली फुन्सियां मांसमें होजाती हैं उन्हें यवप्रक्षा कहते हैं.

३ अंत्रालजीलक्षण--कफ, वातप्रकोपसे भारी, सीधी, ऊँची, मंडलाकार और पीवयुक्त फुन्सियां हों सो अंत्रालजी कहाती हैं.

४ विवृतालक्षण--फटेहुए शिरवाली, विशेप दाहयुक्त, गूलरके पके फल सदृश, मंडलाकार फुन्सियां हों उन्हें विवृता जानो.

५ कच्छपिका लक्षण--कफ, वातके प्रकोपसे कछुवेके समान ऊंची, पाँच छः भयंकर गाँठें होती हैं उन्हे कच्छपिका कहते हैं.

६ वल्मीकलक्षण--कुपथ्य करनेसे कंधे, बगल, हाथ, पाँव और गलेमें वांबीके समान, ऊँची, पीड़ायुक्त, विसर्पकीसी गाँठें उत्पन्न होकर बढ़ें तदनंतर उनमेंसे अनेक मुखद्वारा पीव बहे तो उसे वल्मीक जानो.

७ इंद्रवृद्धलक्षण--कमलगट्टेके आकारकी फुन्सी होती है उसे इंद्रवृद्ध कहते हैं.

८ गर्दभिकालक्षण--वात, पित्तके प्रकोपसे मंडलाकार, गोल, ऊँची, लाल और पीड़ायुक्त जो फुन्सियां होतीं उन्हें गर्दभिका कहते हैं.

९ पापाणगर्दभिकालक्षण--दाढ़ीकी संधिमें शोथयुक्त, स्थिर, मंदपीड़ित और चिकनी फुन्सियां हों उन्हें पाषाणगर्दभिका जानो.

१० पनसिकालक्षण--कानके बीचमें विशेष पीडायुक्त और स्थिर फुन्सी वातकफसे होती हैं उन्हें पनसिका कहते हैं.

११ जालगर्दभलक्षण--पित्तप्रकोपसे जो शोथ प्रथम थोडा, पश्चात् फैलता हुआ, निष्पाक और दाह, ज्वरकारक हो उसे जालगर्दभ जानो.

१२ इरवेल्लिकालक्षण--सन्निपात प्रकोपसे शिरमें गोल विशेष पीडा और ज्वरयुक्त फुन्सियां होती हैं उन्हें इरवेल्लिका जानो.

१३ कक्षालक्षण--पित्त प्रकोपसे बाँह, काँख, काँधे और पँसुलियोंमें पीडा और फफोलेयुक्त, काला, फोडा हो सो कक्षा(कांखविलाई) कहाता है.

१४ अग्निरोहणीलक्षण--त्रिदोषके कोपसे मांसको विदीर्ण करनेवाले अन्तर्दाह, ज्वरकारक, प्रज्वलित अग्निके समान फफोले होते हैं उन्हें अग्निरोहिणी जानो. इसका रोगी ७ या १२ या १५ दिनमें मरजावेगा.

१५ चिप्पलक्षण--वात पित्त नखके समीपी मांसमें रहकर अपने दाहसे नखको पका देते हैं उसे चिप्प कहते हैं.

१६ कुनखलक्षण–जो तीनों दोषोंकी अल्पतासे चिप्परोग होवे उसे कुनखरोग कहते हैं. इसमें नख नहीं रहने पाता.

१७ अनुशयीलक्षण–पाँवके ऊपर या भीतर पकनेवाला, अल्पशोथ-युक्त, रंगमें देहके समान जो फुनसी हो तो अनुशयी कहाती है.

१८ विदारिकालक्षण–त्रिदोषसे विदारीकंदके समान गोल और लाल फुनसी काँख या कमरकी संधिमें होती सो विदारिका कहाती है.

१९ शर्करालक्षण–कफ, मेद, मांस और वात नसोंमें प्राप्त होकर १ गांठ उत्पन्न करते हैं जिसमेंसे फुटनेपर मधु, या घृत या वसा(चर्बी) के समान पीब बहती रहती है तब स्राव होनेसे पुनः वात कुपित होकर शरीरके मांसको सुखाके छोटी रेतके कण सदृश फुनसियां उत्पन्न करता है, उसे शर्करा कहते हैं.

२० शर्करार्बुदलक्षण–यदि शर्करासेही अनेक रंगोंका दुर्गंधित रक्त बहनेलगे तो उसीको शर्करार्बुद कहते हैं.

२१ पाददारिकालक्षण–अधिकचलनेसे वायु कुपित होकर पाँव रूखे करदेती है. तब पाँवकी एड़ीमें पीड़ायुक्त दरारें पड़जातीहैं उन्हें पाददारिका (व्यवाँई) कहते हैं.

२२ कदरलक्षण–पाँव हाथमें काँटा या कंकरी चुभनेसे बेरके समान गांठ पडजाती है उसे कदर (चाई या टांकी) कहते हैं.

२३ अलसलक्षण–पाँव भीगे रहनेसे या दुष्ट कीचड लगनेसे अँगुलियोंकी संधिमें चर्म सड़कर दाह और खुजाल आती है उसे अलस (खरवात)कहते हैं.

२४ इन्द्रलुप्तलक्षण–रोमकूपमें रहनेवाला पित्त वातके संयोगसे बढकर वालोंको झड़ादेता है तदनंतर कफ, रक्तके संयोगसे रोमकूपोंको रोककर दूसरे रोम उत्पन्न नहीं होने देता इसे इन्द्रलुप्त (चांद) कहते हैं.

२५ अरुंषिकालक्षण–कफ, रक्त और कृमिके कोपसे मस्तकपर अनेक मुखवाले व्रण होते हैं उन्हें अरुंषिका कहते हैं.

२६ पलितरोगलक्षण–शोक, क्रोध और परिश्रमकी विशेषतासे शरीरमें उष्णता और पित्त बढकर तरुणावस्थामें केशोंको पका देते हैं. उसे पलित कहते हैं,

२७ न्यच्छलक्षण—जो बड़ा या छोटा, काला या धूसर, पीडारहित मंडल शरीरके किसी भी स्थानमें हो उसे न्यच्छ कहते हैं.

२८ माषलक्षण—वातप्रकोपसे शरीरपर वेदना रहित, उर्दके समान काला, ऊंचा, मांसका अंकुर हो उसे माष (मसा) कहतें हैं.

२९ तिलकालकलक्षण—जो पीडारहित, काले तिलके समान, चर्मके समान मंडल हो उसे तिलकालक (तिल) कहते हैं.

३० उग्रगंधालक्षण—जो कफ रक्तके प्रकोपसे त्वचापर काला, चिकना, पीडारहित मंडल शरीरके साथही उत्पन्न हो उसे उग्रगंधा (लहसुन) कहते हैं.

३१ लिंगवर्त्तीलक्षण—इन्द्रियके मर्दन तथा चोट लगनेसे विचरता-हुआ वायु लिंगेन्द्रियके चर्मको उलटके सुपारीके नीचे एक लम्बी गड्डे सहित गाँठको उत्पन्न करता है उसे लिंगवर्त्ती कहते हैं.

३२ अवपाटिकालक्षण—लघुछिद्र योनिवाली, रजस्वलाधर्म रहित स्त्रीसे मैथुन करनेसे, हस्त मैथुनसे लिंगेन्द्रियके बंद मुखको बलात्कारसे खोलनेसे, लिंगको दवाने या मसलनेसे और निकलते हुए बीर्यको रोकनेसे लिंगको मूचनेवाला चर्म बहुधा फटजाता है, उसे अवपाटिका कहते हैं.

३३ निरुद्धप्रकाशलक्षण—वातप्रकोपसे लिंगका चर्म लिंगके माथे(अग्र-भाग, सुपारी) पर चिपट जाता है तब वह मस्तक और मूत्रमार्ग दोनों बंदहोकर मूत्रकी धारा धीरे धीरे पीडारहित गिरती है और लिंगका मस्तक खुलता नहीं उसे निरुद्धप्रकाश कहते हैं.

३४ मणिरोगलक्षण—निरुद्धप्रकाश होनेके पश्चात् पीडारहित महीन मूत्र धारा गिरै और मूत्र निकलनेका छिद्र चौडा होजावे तो मणिरोग जानो.

३५ वृषणकच्छुलक्षण—जो पुरुष लिंग और अंडकोषको धोकर स्वच्छ नहीं रखता उसके कफ रक्तकोपसे अंडकोशका मैल पसीनेके योगसे फूलकर खाज होती है और यही खाज कुछ कालमें फोडे होकर उनमेंसे पीब और पानी बहने लगता है उसे वृषणकच्छुरोग कहते हैं.

३६ निरुद्धगुदलक्षण—मलका वेग रोकनेसे गुदामें रहनेवाला वायु मल निकलनेके छिद्रको रोककर छोटा करदेता है तब मल बडी कठि-ताईसे उतरता है उसे निरुद्धगुद

३७ गुदभ्रंशलक्षण–रूखे तथा दुर्बल पुरुषके काँखने (खाँसने, कूलने) और अतिसारसे गुदा बाहरको निकल जातीहै उसे गुदभ्रंश (रेचनकालमें काँच निकलना) कहते हैं.

३८ शूकरदंष्ट्रलक्षण–जो लाल किनारेवाला, त्वचाको पकानेवाला दाह, कण्डु, तीव्र पीड़ा और काली शोथ हो उसे शूकरदंष्ट्ररोग कहते हैं.

इति नूतनामृतसागरे निदानखंडे क्षुद्ररोगलक्षणनिरूपणं नाम सप्तत्रिंशत्तरंगः ॥ ३७॥

शिरोरोग-नेत्ररोग।

वसुवैश्वानरे भंगे कारणं च शिरोरुजाम् ॥
तथा हि नेत्ररोगाणां कथ्यतेऽत्र यथाक्रमात् ॥ ३८॥

भाषार्थ–अब हम इस ३८ अड़तीसवें तरंगमें शिरोरोग और नेत्ररोगोंका निदान यथाक्रमसे लिखते हैं.

शिरोरोगोत्पत्तिकारण–१ वात, २ पित्त, ३ कफ, ४ सन्निपात, ५ रक्त, ६ क्षीणता, ७ कृमि, ८ सूर्यावर्त्त, ९ अनंतवात, १० शंखक और ११ अर्द्धावभेद इन ग्यारह कारणोंसे ११ प्रकारका शिरोरोग होता है.

१ वातज शिरोरोगलक्षण–मनुष्यके मस्तकमें निष्कारणही अत्यंत पीडा होकर दिनको न्यून और रात्रिको अधिक होनेलगै और शिरको बाँधने या तपानेसे पीडा शांत होजायाकरै तो बादीका शिरोरोग जानो.

२ पित्तज शिरोरोगलक्षण–मस्तक फूट जावे, अग्नि सदृश जलन पडै नेत्रोंमें भी पीड़ा और नाकमें जलन पडकर रात्रिको शीत कारणसे पीडा कुछ शांत होजावे तो पित्तका शिरोरोग जानो.

३ कफज शिरोरोगलक्षण–मस्तक भीतर कफसे भराहुआ, जड (भारी) ठंढा हो, नेत्र, नासिका और मुखपर शोथ हो तो कफका शिरोरोग जानो.

४ सन्निपातजशिरोरोगलक्षण–जिसमें पूर्वोक्त तीनों दोषोंके लक्षण पाये जावें उसे त्रिदोषसे उत्पन्न हुई मस्तककी पीडा जानो.

५ रक्तजशिरोरोगलक्षण–पित्तज शिरोरोगके समस्त लक्षण होकर मस्तक हस्तस्पर्शमात्र भी सहन न करसकै तो रक्तका शिरोरोग जानो.

६ क्षयजशिरोरोगलक्षण–मस्तकमें रक्त, बसा, कफ, और वायुकी न्यूनता होनेसे छींकें आतीं और शिर तपकर अति वेदना होती है. उसे क्षयजशिरोरोग जानो.

७ कृमिजशिरोरोगलक्षण–मस्तकमें सुई चुभानेके समान, या कीड़े काटनेके समान पीडा और जलन होकर शिर फडके और नासिका मार्गसे रक्तयुक्त पीबका विशेष बहाव हो तो कृमिका शिरोरोग जानो.

८ सूर्यावर्त्तशिरोरोगलक्षण–सूर्योदय होतेही मस्तकमें मंद मंद पीडा उत्पन्न होकर सूर्यके तेजोवृद्धिके साथ साथ नेत्र भौंह और शिरकी पीडा भी मध्याह्नकालतक बढ़ती जावे और मध्याह्न पश्चात सूर्यके तेज सदृश क्रमशः न्यून होते होते सूर्यास्तको समस्त पीडा शांत होजावे तो सूर्यावर्त्त शिरोरोग जानो.

९ अनंतवातशिरोरोगलक्षण–वात, पित्त, कफ दूषित होकरके ग्रीवा, नेत्र, भौंह और कनपटीमें अत्यन्तपीडा करते, डाढ़का स्तम्भन कपोल (गाल) का फड़कन संचाल और नेत्ररोग उत्पन्न करके शिरमें अत्यन्त वेदना उत्पन्न करते हैं उसे अनंतवातशिरोरोग कहते हैं.

१० शंखकशिरोरोग लक्षण–वात पित्त कफ दूषित होकर कनपटीमें तीव्र वेदना, दाह और लाल वर्ण युक्त शोथ उत्पन्न करके मस्तक और गलेको रोक देते हैं, उसे शंखकशिरोरोग कहते हैं, इसका यत्न ३ दिनके भीतर करलो न तो हरीहरही है.

११ अर्द्धावभेदशिरोरोगलक्षण–रूखी वस्तुका विशेष सेवन, भोजन पर भोजन, अतिमैथुन, मलमूत्रावरोध, श्रम, व्यायामकी विशेषता और पूर्वकी वायु सेवनसे केवल वायु या कफसहित वायु कुपित होकर बलिष्ट हो जाती और ललाटके आधेभागको ग्रहणकरके उसभागकी ग्रीवा, भौंह, कनपटी, कान, नाक और उस आधे ललाटमें शस्त्रसे काटने या चीरनेके समान तीव्र वेदना उत्पन्न करता है, उसे अर्द्धावभेद (आधाशीशी, अधकपाली) शिरोरोग कहते हैं. यह रोग विशेष वृद्धिंगत होनेसे कान या नेत्रको नष्ट कर डालता है.

१ नेत्ररोगोत्पत्तिकारण–धूपसे तपा हुआ पानीमें प्रवेश करे, दूरकी

वस्तु अधिक देखाकरै दिनको शयन करै रात्रिको जागै, नेत्रमें पसीना धूरि या धुआँ प्रवेश होने, वमन अधिक होने, तथा वमन,आँसू, मल,मूत्र, अधोवायुके वेग रोकने, पतले अन्नके सेवन करने, शोक तथा क्रोध करने मस्तकके कूटने, अति मद्यपानकरने, ऋतुविरुद्ध आहार विहारके करने क्लेशप्रद कार्योंके करने, अतिमैथुन तथा अतिरुदन करने और अत्यन्त महीन वस्तुओंको देखने इन कारणोंसे वातादि दोप कुपित होके नेत्रोंमें अनेक प्रकारके रोगोंको उत्पन्न करते हैं.

२ नेत्रमण्डलमान–नेत्र मण्डल २॥ अढ़ाई अंगुल या अपने अंगुष्टके उदर प्रमाण होता है, इसमें शार्ङ्गधरके मतसे ९४ सुश्रुतके मतसे ७६ और अनेक आचार्य तथा चरकके मतसे ७८ अठहत्तर रोग होते हैं जिनकी संख्या निम्नलिखित क्रमानुसार जानो.

३ नेत्ररोगसंख्या–१४ दृष्टिमें ४ नेत्रके काले भागमें ११ श्वेत भागमें २१ नेत्रमार्गमें २ नेत्रपक्ष्मोंमें ९ नेत्र संधिमें १७ समस्त नेत्रमात्रमें इस प्रकार ७८ नेत्ररोग हैं,

४ दृष्टिवर्ण–नेत्रमंडलकी काली पुतलीमें मसूरकी दाल सदृश एक प्रकाशित तारा है वह तारा पंचमहाभूतोंसे उत्पन्न तेजरूप है यह तारा नेत्र गोलके पलांडु (कांदा, प्याज) के छिलकेके तुल्य ४ पटल (झिल्ली) उत्पन्न कर देता है जिससे सब नेत्र आच्छादित होता रहता है,इस पटलके अंतर्गत जल और रुधिरके आधारभूत जो देखनेकी शीतलशक्तिहै उसे दृष्टि कहतेहैं.

५ पटलवर्णन–दृष्टिका प्रथम पटल तेज और जलके आधार, सर मांसके आधार, तीसरा, तेज, जल, मांस, मेद और अग्निके आधार और चौथा केवल तेजाधार है.

६ प्रथमपटलादिगतदोषवर्णन–प्रथम पटलमें दोप प्राप्त होनेसे वस्तुका यथार्थ रूप नहीं दीखता, दूसरे पटलमें दोष प्राप्त होनेसे मक्खी मच्छरके समूह उडतेसे दिखाई देते, दूरकीवस्तु समीप और समीपकी दूर दिखाई पडती है,दृष्टिभ्रमसे विह्वलित रहती यहाँतक कि सुईका छिद्रभी कठिनाईसे दीखता है. तीसरे पटलमें दोष प्राप्त होनेसे ऊपरकी वस्तु दीखती पर नीचेकी नहीं दीखती, वस्तु समूह भी नहीं दीखता किन्तु सन्मुखवस्त्रका

ओटसी हो आतीहै कान, नाक, नेत्र यथार्थ नहीं पर विचित्र डौलकेही दीखतेहैं यदि इसी पटल (उपरदे) में विशेष दोष होजावे तो नीचेकी ऊपर और ऊपरकी वस्तु नीचे दृष्टि पडती है, यदि नेत्र पार्श्व (बगल) में दोष प्राप्त होजावे तो दाहनी और बाई ओरकी वस्तु नहीं दीखती, यदि नेत्रोंके चहुँ ओर दोष प्राप्त होजावे व्याकुलतासे नेत्रोंमें चकचौंधी आजाती है, यदि दृष्टिमध्यगत दोष होतो बडी वस्तु छोटी दीखती है यहि समस्त दृष्टिगत दोष होतो दाहनी वाँई ओरकी वस्तुएँ एकको दो दोकी तीन और अधिक हों तो असंख्यात दृष्टि पडती हैं, चतुर्थ पटलमें दोष प्राप्त होनेसे आँखकी पुतली नीले कांचके सदृश होकर विशेषदोषसे सूर्य, चंद्र, नक्षत्र, आकाश, बिजुली आदि निर्मल तेजोमय वस्तुओंको भी भलीभाँति नहीं देख सक्ती किन्तु यह सब भ्रमतेसेही दीखतेहैं.

७ दृष्टिरोग–दृष्टिमें १ वातजलिंगनाश २ पित्तजलिंगनाश ३ कफज लिंगनाश ४ सन्निपातज लिंगनाश ५ रक्तजलिंगनाश ६ परिम्लायि लिंगनाश ७ पित्तविदग्ध दृष्टि ८ कफविदग्ध दृष्टि ९ धूमदर्शी १० ह्रस्वजात्य ११ नकुलांध्य और १२ गंभीरदृष्टि ये बारह तथा दो आगन्तुक लिंगनाश जो कि, एक निमित्तसे और दूसरा अनिमित्तसे होता है, इसप्रकार चौदह रोग होते हैं.

८ षड्विधलिंगनाशलक्षण–सर्ववस्तु भ्रमित, मलीन, टेढी और लाल दृष्टि पडे तो १ वातज लिंगनाश, सूर्य, चंद्र, नक्षत्र, अग्नि, इन्द्रधनुष्य, बिजली ये सब भ्रमतेहुए नीले दृष्टिपडें तो २ पित्तज लिंगनाश, नेत्रोंमें जल भरारहकर सर्व वस्तुएँ श्वेत तथा चिकनीसी दृष्टि पडें तो ३ कफज लिंगनाश, जिसमें पूर्वोक्त तीनों दोषोंके लक्षण मिलें तथा वस्तुके आकार नानाप्रकारके छोटे बडे और तेजरूप दृष्टि पडें तो ४ सन्निपातज लिंगनाश, जिसे प्रत्येक पदार्थ लाल या श्वेत, या काले हरे, या पीले दृष्टि पडें तो ५ रक्तज लिंगनाश और जिसे दशोंदिशा पीली, अनेक सूर्योंका उदय, जुगुनुवोंसे तथा अग्निसे व्याप्त वृक्ष दृष्टि पडें तो ६ परिम्लायि[1] लिंगनाश जानो.

विशेषतः–वातसे गुलाबी, पित्तसे पीततायुक्त, नील या शुद्ध नीलवर्ण

---

१ परिम्लायि–रक्तमूर्च्छित [illegible] जो लिंगनाश होता है वह परिम्लायिकहाताहै

कफसे श्वेत, रक्तसे लाल, सन्निपातसे अद्भुत रंग और परिम्लायिसे लाल तथा धूसरवर्ण लिंगनाशरोग होनेसे दृष्टि पडता है ॥ इति पड्विध लिंगनाश (तिमिर) लक्षण ॥

९ लिंगनाशे नेत्रमंडललक्षणम्—१ वातज लिंगनाशमें नेत्रके भीतर लाल कठिन और चंचल, २ पित्तज लिंगनाशमें नेत्रके भीतर नीला या काँसेके समान तथा पीला, ३ कफज लिंगनाशमें नेत्रके भीतर बड़ा चिकना, शंख या कुंदपुष्प अथवा चंद्रसदृश श्वेत वर्णका, चंचल और श्वेत बिन्दुयुक्त, ४ सन्निपातज लिंगनाशमें नेत्रके भीतर तीनों दोषोंके उपरोक्त लक्षणयुक्त तथा चित्र विचित्र रंगका, ५ रक्तज लिंगनाशमें नेत्रके भीतर लाल और ६ परिम्लायि लिंगनाशमें नेत्रके भीतर मोटे काँचके समान अरुण या नीला मंडल होता है. इति लिंगनाशे नेत्रमंडललक्षणम् ॥

१० पित्तविदग्धदृष्टिलक्षण—मिथ्या आहार विहारादिसे पित्त दूषित होकर नेत्रोंको पीत करदेताहै. जिससे सर्ववस्तु पीलीही पीली दृष्टि पडती हैं, इसे पित्तविदग्ध दृष्टिरोग जानो. इस रोगमें प्रथम तथा दूसरे परदेमें पित्त रहता है और इस पित्तके तृतीयपटलमें प्राप्त होनेसे दिनको नहीं दीखता और रात्रिको चन्द्रमाकी शीतलतासे पित्तकी अल्पता होनेके कारण दीखने लगता है इसे दिवांध (दिनौंधी) रोग कहते हैं, यह भी पित्तविदग्ध दृष्टिरोगकाही एक विभेद है.

११ कफविदग्धदृष्टिलक्षण८—दृष्टि कफदूषित होनेसे, मनुष्यको सब रूप श्वेतही श्वेत दीखते हैं इसे कफविदग्ध दृष्टिरोग जानो और जब वही कफ तीसरे पटलमें प्राप्त होजाताहै तब रात्रिको नहीं दीखता और दिन को सूर्य तेजसे कफ न्यून होनेके कारण दीखता है, इसे नक्तान्ध (रतौंधी) कहते हैं यह भी कफविदग्ध दृष्टिका एक विभेद है.

धूमदर्शीरोगलक्षण ९—शोक, ज्वर, श्रम और शिरोरोगके कारण दृष्टि पीडित होकर सब पदार्थ धूमरूप दीखते हैं, इसे धूमदर्शी रोग कहते हैं.
ह्रस्वजात्यरोग लक्षण १०—दिनको बड़ा रूप भी अत्यंत क्लेशसे छोटासा दीखे और रात्रिको यथार्थ दीखे तो ह्रस्वजात्य रोग जानो.

नकुलांध्यरोगलक्षण ११–दोषोंसे दूषित दृष्टि होके नकुल (मुंगस) की दृष्टि समान चमके और उस मनुष्यको दिनको चित्रविचित्र दीखे तो नकुलांध्यरोग जानो.

गंभीरदृष्टिलक्षण १२–वायुदूषित दृष्टि विरूप होकर अतिपीड़ा पूर्वक भीतरसे सिकुड़ती जावे उसे गंभीरदृष्टिरोग जानो.

आगन्तुकनिमित्तजलिंगनाशलक्षण–१३जो मस्तकपीडासे तथा अभीष्यंदके लक्षणों करके निश्चय किया जावे, उसे आगंतुकनिमित्तज० जानो.

आगंतुकअनिमित्तजलिंगनाशलक्षण–१४ जिस मनुष्यकी देव, ऋषि, गंधर्व, बडे सर्प और सूर्य इनके देखनेसे दृष्टि दूषित होकर प्रत्यक्षतामें सुन्दर तथा निर्मलभी रहे और उसे कुछ न दीखपडे तो आगंतुक अनिमित्तजलिंगनाश जानो. यह १४ चौदह दृष्टिमें रोग होते हैं.

वाग्भटके मतसे लिंगनाशकालक्षण–लिंगनाशरोगको लोकमें, नजला तथा मोतियाबिंदु भी कहते हैं, यह मोतियाबिंदु कच्चा और पक्का ऐसे दो प्रकारका होता है.

कच्चामोतियाबिंदु १ कुछ कुछ धूंधरसा दीखे, नेत्रोंमे पीडा हो और सर्व लक्षण पक्के मोतियाबिंदुसे विरुद्धदृष्टिपड़ें तो कच्चा मोतियाबिंदु जानो.

पक्कामोतियाबिंदु२–पुतली पर दही तथा मट्ठेके समान बूंद होकर उसे कुछभी न दीख पड़े और नेत्रोंमें किसीप्रकारकी पीड़ा न हो तो पक्का मोतियाबिंदु जानो.

इति दृष्टिरोगाः ।

अथ श्यामभागरोगाः ।

नेत्रके श्यामभागमें १ सव्रणशुक्र, २ अव्रणशुक्र, ३ अक्षिपाकात्यय और ४ अजकाजात ये चार रोग होते हैं.

१ सव्रणशुक्रलक्षण–नेत्रके कालेभागपर सुईसे किये हुए छिद्रसमान गहरी फूली पडकर जिससे उष्ण अश्रुपात होते रहें उसे सव्रणशुक्र कहतेहैं.

यदि वह फूली नेत्रकी पुतलीसे दूर गाँठ, तथा पीडा और बहुस्राव रहित हो तो साध्य इसके व्यतिरिक्त हो तो असाध्य जानना चाहिये.

२ अव्रणशुक्रलक्षण–नेत्र दूखनेसे काले भागमें फूली उत्पन्न होके चुभ-

नेके समान पीडायुक्त तथा शंख, चंद्र, कुन्दपुष्प अथवा मेघके समान हो तो उसे अव्रणशुक्र जानो. यद्यपि अव्रणशुक्र साध्य है परन्तु जो फूली दूसरे पटलादिमें प्राप्त होकर मोटी वडी और बहुत कालिक हो तो कष्ट साध्य जानो.

और जो फूलीके बीचमें छिद्रसा होकर चहुँ ओरसे मांस घिर आवे तथा संचारी महीन नसगत, दृष्टिनाशक, द्वितीय पटलके किनारेपर लाल और बहुत दिनोंकी हो तथा नेत्रसे उष्ण अश्रुपात हो नेत्रमें मूंगके समान फुन्सी हो और तीतरके पंखके समान वर्ण और मूंगके आकारवाली फूली हो तो अव्रणशुक्र साध्या जानो.

३ अक्षिपाकात्ययरोग लक्षण—नेत्रके काले भागपर चहुँओरसे श्वेतवर्ण होजावे उसे अक्षिपाकात्ययरोग कहते हैं, यह त्रिदोपज हो तो असाध्य अन्यथा कष्टसाध्य जानो.

४ अजकाजातलक्षण—बकरीकी मेंगनीके समान, पीडायुक्त, लाल फूली होकर काले भागको ढाँककर बढे और उसमेंसे लाल तथा चिकने आँसू बहते रहें तो अजकाजातरोग जानो. इति श्यामभागरोग ४

अथ श्वेतभागरोगाः ।

नेत्रके श्वेतभागमें १ प्रस्तार्यर्म, २ शुक्लार्म, ३ रक्तार्म, ४ अधिमांसार्म ५ स्नाय्वर्म, ६ शुक्तिका, ७ अर्जुन, ८ पिष्टक, ९ शिशजाल, १० शिराडिका और ११ बलासग्रथित ये ग्यारह रोग होते हैं.

१ प्रस्तार्यर्मलक्षण—नेत्रके श्वेतभागमें, पतला, विस्तृत, काला, या लाल मंडल हो उसे प्रस्तार्यर्म रोग जानो.

२ शुक्लार्मलक्षण—नेत्रके श्वेतभागमें श्वेत और कोमल मण्डल होकर बहुत दिनोंमें बढ़े उसे शुक्लार्मरोग जानो.

३ रक्तार्मलक्षण—नेत्रके श्वेतभागमें मांस संचयसे लाल कमलसदृश तथा कोमल मंडल हो उसे रक्तार्म कहते हैं.

४ अधिमांसार्मलक्षण--नेत्रके श्वेतभागमें विस्तृत, कोमल, मोटा, लालतामिश्रित श्याम (लाखी) मण्डलहो तो अधिमांसार्मरोग जानो.

५ स्नाय्वर्मलक्षण—नेत्रके श्वेतभागमें स्थिर, विस्तृत, मांसयुक्त और सूखामंडल हो उसे स्नाय्वर्मरोग जानो.

६ शुक्तिकालक्षण–नेत्रके श्वेतभागमें काले और सीपके आकार मांस समान बिन्दु हों तो शुक्तिका रोग जानो.

७ अर्जुनरोगलक्षण–नेत्रके श्वेतभागमें शशेके रक्त सदृश एक बिंदु हो उसे अर्जुनरोग जानो.

८ पिष्टकलक्षण–वातकफके कोपसे, नेत्रके श्वेतभागमें आटेके समान मांस ऊंचा होकर मैले दर्पण सदृश दृष्टि पड़े उसे पिष्टकरोग जानो.

९ शिराजाललक्षण–नेत्रके श्वेतभागमें कठोर नसोंसे बना हुआ विस्तृत लाल जाला (फन्दा) सा हो उसे शिराजालरोग जानो.

१० शिरापिडिकारोगलक्षण–नेत्रके श्वेत भागमें श्याम मंडलके समीप श्वेत नसोंसे आच्छादित जो फुन्सियाँहों उसे शिरापिडिका रोग जानो.

११ बलासग्रथितरोगलक्षण–नेत्रके श्वेतभागमें काँसेके पात्र वर्ण सदृश पानीके बूंदकी आकार और कठोर चिह्न हों उसे बलासग्रथितरोग जानो.

इति श्वेतभागरोगाः ११.

अथवर्त्मस्थानरोग–नेत्रमार्गमें १ उत्संगिनीपिड़िका २ कुंभिका ३ पोथकी ४ वर्त्मशर्करा ५ अर्शोवर्त्म ६ शुष्कार्श ७ अंजना ८ बहुलवर्त्म ९ वर्त्मबंधक १० क्लिष्टवर्त्म ११ वर्त्मकर्दम १२ श्यामवर्त्म १३ प्रक्लिन्न वर्त्म १४ अक्लिन्नवर्त्म १५ वातहर्तवर्त्म १६ वर्त्मार्बुद १७ निमेष १८ शोणितार्श १९ लगण २० विसवर्त्म और २१ कुंचन ये इक्कीस रोग होतेहैं.

१ उत्संगिनीपिडिका लक्षण–पलकके भीतर मुखवाली, लाल छोटी छोटी फुनसियोंके मध्य जो खाजयुक्त एक बडी फुनसी बाहरको ऊँचीसी दृष्टिपडे उसे उत्संगिनीपिडिका जानो.

२ कुंभिकाल०–पलकके किनारेपर कुम्हडेके बीजके समान श्वेत और प्रवाहिनी फुनसी हो उसे कुंभिका जानो. ये दोनों त्रिदोषसे होती हैं.

३ पोथिकी ल०–पलकमें लाल सरसोंके बीज समान, भारी, बहने वाली खाजयुक्त और पीडाकारिणी फुनसियां हों उन्हें पोथिकी जानो.

४ वर्त्मशर्कराल०–पलकमें कठिन तथा दूसरी छोटी फुनसियांयुक्त जो बडी फुनसी हो उसे वर्त्मशर्करा जानो.

५ अर्शोवर्त्मलक्षण–ककडीके बीजसमान, नुकीली, चिकनी, किंचित् पीडायुक्त फुनसियां हों उन्हें अर्शोवर्त्मजानो.

६ शुष्कार्शलक्षण–पलकके भीतर, लंबी, अंकुरवाली, कर्कश, कठिन दारुण दुःखदायिनी फुनसी हो उसे शुष्कार्श रोग जानो.

७ अंजनालक्षण–पलकमें सुई चुभानेके समान अल्प पीडायुक्त, लाल कोमल और दाहदात्री जो फुनसी हो उसे अंजना जानो.

८ बहुलवर्त्मलक्षण–पलक चहुँओरसे चर्मके रंगकी स्थिर फुनसियोंसे व्याप्त होजावे, उसे बहुवर्त्मरोग जानो.

९ वर्त्मबंधरोगलक्षण–पलकमें खाज तथा अल्प वेदनायुक्त शोथ होनेसे वह नेत्रोंको पूर्ण रूपसे न ढँकसके उसे वर्त्मबंधरोग जानो.

१० क्लिष्टवर्त्मलक्षण–पलकमें अकस्मात्, किंचित् वेदना ललाई और कोमलता होजावे तो उसे क्लिष्टवर्त्मरोग जानो.

११ वर्त्मकर्दमलक्षण–क्लिष्टवर्त्मरोगकोही, पित्तयुक्त रक्त दूपित करके नेत्रोंको कीचड (गीड) युक्तही किये रहे उसे वर्त्मकर्दम जानो.

१२ श्यामवर्त्मलक्षण–पलक, बाहर भीतरसे काले और वेदनायुक्त सूजे रहें उसे श्यामवर्त्म रोग कहते हैं,

१३ प्रक्लिन्नवर्त्मलक्षण–पलक, बाहर पीडारहित और शोथयुक्त होकर भीतर अधिक कीचडयुक्त रहें उसे प्रक्लिन्नवर्त्मरोग जानो.

१४ अक्लिन्नवर्त्मलक्षण–जिसकी पलक निष्पाक, निष्पीडित दशामें भी धोनेसे या धोनेपर भी बारबार चिपकजावें उसे अक्लिन्नवर्त्मरोग जानो.

१५ वातहतवर्त्मलक्षण–जिसकी पलककी सांधि ढीली होनेसे पलक भलीभाँति नेत्रको खोलने और मूँदनेमें असमर्थ होकर ज्योंकी त्यों रह जावें उसे वातहतवर्त्म जानो.

१६ वर्त्मार्बुदलक्षण–पलकके भीतर, पीडारहित, टेढी, मोटी, लाल एक गठान होती है, उसे वर्त्मार्बुदरोग कहते हैं.

१७ निमेषरोगलक्षण–पलकको खोलने तथा मींचनेवाला नसानिवासी-वायु पलकमें प्राप्त होकर उनको बारबार चलाते रहता है इसे निमेषरोग जानो.

१८ शोणितार्शलक्षण–पलकके अंतमें मांसका कोमल, लाल अंकुर बढ़कर काटनेपर भी बढ़जाता है उसे शोणितार्श जानो.

१९ लगणलक्षण—पलकमें छोटे बेरके समान पाकरहित, कठोर, निष्पीडित, कंडूयुक्त जो चिकनी गठान हो उसे लगणरोग जानो.

२० विसवर्त्मलक्षण—त्रिदोषकोपसे पलकके ऊपर शोथ उत्पन्न होकर उस पलकके कमलनाल सदृश अनेक छिद्र होजाते हैं जिनसे सदैव पानी बहा करता है उसे विसवर्त्म रोग जानो.

२१ कुंचनलक्षण—त्रिदोष पलकको संकोचित करके, मनुष्यको देखनेसे असमर्थ कर देते हैं उसे कुंचनरोग जानो. इति वर्त्मरोगाः २१

पक्ष्मरोग—नेत्रके पक्ष्म (पांखों) में १ पक्ष्मकोप और २ पक्ष्मशात ये दो रोग होते हैं.

१ पक्ष्मकोपलक्षण—वात कोपसे, पलकके रोम नेत्रोंमें घुसकर बारंबार घिसनेसे श्वेत या काले भागमें शोथ होकर प्रायः रोम झडजाया करते हैं. इसे पक्ष्मकोप कहते हैं.

२ पक्ष्मशातलक्षण—पित्तकोपसे पलकके रोम झडकर, खुजाल और दाह उत्पन्न हो उसे पक्ष्मशातरोग कहते हैं. इति पक्ष्मरोगाः २

सन्धिरोग—नेत्रकी संधिमें १ पूयालसक २ उपनाह ३ पैत्तिकस्राव ४कफस्राव ५ सन्निपातस्राव ६ रक्तस्राव ७ पर्वणी ८ अलजी और ९ जन्तुग्रन्थी ये नव रोग होते हैं.

१ पूयालसकलक्षण—नेत्रकी पुतलीकी सन्धिमें, शोथ होकर पके और ठोंचने सदृश पीडा होकर दुर्गन्धित पीब निकले उसे पूयालसकरोग जानो.

२ उपनाहलक्षण—नेत्रकी सन्धिमें क्वचित् पकनेवाली खाजयुक्त, पीडा रहित और बडी गाँठ हो उसे उपनाहरोग जानो.

३ पित्तस्रावलक्षण—आँसू मार्गोंसे नेत्रोंकी सन्धिमें वातादि दोष प्राप्त होनेसे अपने लक्षणोंयुक्त नेत्रस्राव उत्पन्न करते हैं, इसके पित्तस्राव, कफस्राव, रक्तस्राव और सन्निपातस्राव ये चार भेद हैं. जिसमें नेत्रकी संधिसे, हलदीसमान पीला, उष्ण, या केवल जलसदृश झिरता है उसे पित्तस्राव जानो.

४ कफस्रावल०—जो श्वेत, गाढा, चिकना बहता रहे सो कफस्राव जानो.

५ रक्तस्रावल०—जो बहुतसा उष्ण रक्त बहता रहे सो रक्तस्राव जानो.

६ सन्निपातस्रावलक्षण—सन्धि पककर अति दुर्गन्धित पीबसे बहे उसे सन्निपातस्राव जानो.

७ पर्वणीलक्षण–जो नेत्रसन्धिमें लाल, दाह और पाकयुक्त पतली तथा गोल सूजन हो उसे पर्वणीरोग जानो.

८ अलजीलक्षण–यदि पर्वणी सफेद और कालेभागके मध्य (संधि) में हो तो अलजीरोग जानो.

९ जन्तुग्रंथिलक्षण–पलक तथा पक्ष्मके मध्य (संधि)में कीड़े उत्पन्न होकर खुजाल चलाते हैं तथा वे फिरते हुए नेत्रोंको बिगाड देते हैं, इसे जंतुग्रंथीरोग जानो. इति संधिरोगाः ९.

समस्तनेत्ररोग–सब नेत्रमें १ वाताभिष्पंद, २ पित्ताभिष्पंद, ३ कफाभिष्पंद, ४ रक्ताभिष्पंद, ५ वाताधिमन्थ, ६ पित्ताधिमन्थ, ७ कफाधिमन्थ ८ रक्ताधिमन्थ, ९ सशोथपाक, १० अशोथपाक, ११ हताधिमन्थ, १२ वातपर्याय, १३ शुष्काक्षिपाक, १४ अन्यतोवात, १५ अम्लाध्यूषित, १६ शिरोत्पात और १७ शिरोहर्ष ये सत्रह रोग होते हैं.

१ वाताभिष्पंदलक्षण–नेत्रोंमें सुई टोंचनेसमान पीडा, जडता, कर्कराहट, रूखापन, कीचड और ठंढे आँसुओंका बहाव होकर रोमांच हो और शिर तप्त हो तो वाताभिष्पन्द (वादीसे नेत्र दुखने आये)जानो.

२ पित्ताभिष्पंदलक्षण–नेत्रोंमें पककर दाह, ठंढे पदार्थोंकी इच्छा, धुँवे निकलने समान पीडा और उष्ण आँसुओंका विशेष बहाव होकर नेत्र पीले हों तो पित्ताभिष्पंद (पित्तसे नेत्रोंका दूखना) जानो.

३ कफाभिष्पंदलक्षण–उष्ण पदार्थोंपर प्रीति, नेत्रोंमें भारीपन, शोथ, कंडू, चिकना, ठंढा होकर चिकना कीचड आवे तो कफाभिष्पंद जानो.

४ रक्ताभिष्पंदलक्षण-लाल नेत्र होकर लाल आंसू बहें और नेत्रमंडल (गार) पर अति लाल रेखा होके पित्ताभिष्पंदके समस्त लक्षण हों तो रक्ताभिष्पंद जानो.

५-६-७-८ वाताद्यधिमंथ--अभिष्पंदरोग होनेपर उसका यथार्थ यत्न न होकर कुपथ्य हो तो वाताधिमन्थ, पित्ताधिमन्थ, कफाधिमन्थ और रक्ताधिमन्थ होते हैं, इन चारोंके लक्षण उक्त चारों अभिष्पंदोंके समानही जानो.

विशेषतः–इस रोगपर पूर्ण यत्न न हो तो ५ वाताधिमन्थ ६ दिनमें

१ अभिष्पंदको लोकमें आँखें दुखनी आई कहते हैं.

६ पित्ताधिमन्थ तत्काल ७ कफाधिमन्थ ७ दिनमें और ८ रक्ताधिमन्थ ५ दिनमें दृष्टिको नाश कर देते हैं.

९ सशोथपाकलक्षण—नेत्रमें आँसू, खाज, शोथ, ललाई होकर नेत्र गूलरके पक्कफल सदृश होजावें तो सशोथपाक जानो.

१० अशोथपाकलक्षण—नेत्रोंपर शोथ न हो. खुजाल आवे. गूलरके पके फलसमान होकर लाल होजावें उसे अशोथपाक जानो.

११ हताधिमन्थलक्षण—जिसके नेत्रोंसे कुछ दिखाई न दे, तीव्र वेदना हो और कमल सूखजावे तो हताधिमंथरोग जानो.

१२ वातपर्यायलक्षण—किसी समयमें भौंहोंमें, किसी समय नेत्रोंमें, वायु प्राप्त होकर तीव्र वेदना करे तो वातपर्यायरोग जानो.

१३ शुष्काक्षिपाकलक्षण—नेत्रमिचेरहैं. पलककठिन, रूखी और जलती रहैं, स्वच्छ न दिखाई देवे और निद्रा खुलनेपर तत्क्षण नेत्र न खोलेजावें उसे शुष्काक्षिपाक जानो.

१४ अन्यतोपाकलक्षण—दाढ़ी कान, भौं और आँखोंमें वातकारणसे विशेष पीड़ा हो उसे अन्यतोपाक जानो.

१५ अम्लाध्युषितलक्षण—खटाईके विशेष सेवनसे नेत्रोंका मध्यभाग और आसपास लाल होकर नेत्र पक जाते हैं, उनमें दाह शोथ और आँसूओंका बहाव हो तो अम्लाध्युषित जानो. इसे लोकमें सवलवातभी कहते हैं.

१६ शिरोत्पातलक्षण—पीड़ारहित या पीड़ासहित नेत्रोंकी नसें लाल होकर बारंबार रंग बदलती रहें उसे शिरोत्पातरोग जानो.

१७ शिरोहर्षलक्षण—शिरोत्पातका उपाय न होनेसे नेत्रोंमेंसे ताम्रवर्ण आँसू बहते नेत्र रूप देखनेको असमर्थ होजाते हैं, उसे शिरोहर्ष कहते हैं.

नेत्ररोगमुक्तलक्षण—जबतक नेत्रोंमें पीडा, ललाई शोथ, खुजाल और वेदना बनी रहे, तबतक नेत्र, रोगयुक्त ही जानो. परंतु पीडा ललाई, शोथ, खुजाल, वेदनारहित होकर नेत्र सुंदर होजावें और संपूर्ण सूक्ष्म वस्तुओंका स्वरूप भी यथार्थ देखसके तो जानो कि, नेत्र रोगरहित होगये.

इति नेत्ररोगनिदानम्.

इति नूतनामृतसागरे निदानखण्डे शिरोरोगनेत्ररोगलक्षण-
निरूपणं नामाष्टत्रिंशस्तरंगः ॥ ३८ ॥

अथ कर्णरोग–नासारोग।

निदानं कर्णरोगस्य तथा नासामयस्य च॥
नन्दरामे तरंगेऽस्मिन् कथ्यते हि यथाक्रमात्॥ ३९॥

भावार्थ–कर्णरोग तथा नासारोगका इस ३९ उनचालीसवें तरंगमें यथाक्रमसे निदान कहते हैं.

कर्णरोगनिदान–सुश्रुतमें १ कर्णशूल, २ कर्णनाद, ३ वाधिर्य, ४ कर्णक्ष्वेड, ५ कर्णस्राव, ६ कर्णकण्डू, ७ कर्णगूथ, ८ कर्णप्रतिनाह, ९ कृमिकर्ण १० आगन्तुक कर्णव्रण, ११ दोषज कर्णव्रण, १२ कर्णपाक, १३ पूतिकर्ण १४ वातकर्णशोथ, १५ पित्तकर्णशोथ, १६ कफकर्णशोथ, १७ रक्तकर्णशोथ, १८ वातकर्णार्श, १९ पित्तकर्णार्श, २० कफकर्णार्श, २१ रक्तकर्णार्श २२ वातकर्णार्बुद, २३ पित्तकर्णार्बुद, २४ कफकर्णार्बुद, २५ रक्तकर्णार्बुद, २६ मांसकर्णार्बुद, २७ मेदकर्णार्बुद, और २८ शिराकर्णार्बुद, ये अट्ठावीस २८ कर्णरोग कहेहैं, परन्तु कर्णपालीमें १ परिपोटक, २ उत्पात, ३ उन्मंथ ४ दुःखवर्द्धन और ५ परलेहिन ये पांच रोग विशेष होते हैं.

१ कर्णशूललक्षण–कानमें कुपित वायु प्रविष्ट हो शूल उत्पन्न करती है. इसे कर्णशूल जानो.

२ कर्णनादलक्षण कानमें वात प्राप्त होनेसे उस मनुष्यको भेरी मृदंग और शंख आदि अनेक शब्द सुनाई पडते हैं, इसे कर्णनादरोग जानो.

३ वाधिर्यलक्षण--शब्दज्ञाता छिद्रमें कफयुक्त या केवल वायुप्रवेश होनेसे उस मनुष्यको शब्द सुनाई नहीं पडता, इसे वाधिर्यरोग कहते हैं. यह वहरेपनका रोग बाल या वृद्धावस्थामें होकर बहुत कालतक रहनेसे महाअसाध्य होजाता है यत्नसे भी अच्छा नहीं होता.

४ कर्णक्ष्वेडलक्षण–कानमें पित्त, कफयुक्त वायु प्राप्त होके वाँसुरीकासा शब्द करता है उसे कर्णक्ष्वेडरोग कहते हैं.

५ कर्णस्रावलक्षण–मस्तकमें चोट लगने या कानोंमें जल भर जानेसे तथा कर्णविद्रधि पकनेसे कानमेंसे पीव बहा करती है इसे कर्णस्राव कहते हैं.

६ कर्णकण्डूलक्षण–कफयुक्त वायु कानमें प्राप्त होकर खाज उत्पन्न करता है उसे कर्णकण्डू कहते हैं.

७ कर्णगूथलणक्ष–पित्तकी उष्णतासे कानमें कफ सूखनेसे मैल अधिक निकले उसे कर्णगूथ जानो.

८ कर्णप्रतिनाहलक्षण–जब वही कर्णगूथ तैलादिकके योगसे पतला होकर नाक मुखमें प्राप्त होजाता है, उसे कर्णप्रतिनाह कहते हैं, इससे अर्द्धावभेद (आधाशीशी भी) उत्पन्न होजाती है.

९ कृमिकर्णलक्षण–कानमें कीड़े पड़के या बुग, पतंग, कनखजूरा आदि प्रवेश होके जब फड़फड़ाते हैं तब अत्यंत वेदना व्याकुलता और कुरकुराहट होती है और उनका फडफडाना या चलना बंद होनेपर पीड़ा न्यून होजाती है, उसे कृमिकर्णरोग जानो.

१० आगंतुककर्णव्रणलक्षण–कानमें किसी प्रकारकी चोट आदि लगनेसे व्रण होकर रक्त पीव आदि बहे उसे आगंतुक कर्णव्रण जानो.

११ दोपजकर्णव्रणलक्षण–कानमें वातादि दोपोंसे व्रण उत्पन्न होकर उससे रक्त, पीव आदि बहे तो दोपज कर्णव्रण जानो.

१२ कर्णपाकलक्षण–पित्तकोपसे कान पककर उससे गाढ़ी पीव बहे तो कर्णपाक जानो.

१३ पूतिकर्णलक्षण–कान पककर गंधावे या उससे दुर्गंधित पीव बहेतो पूतिकर्णरोग कहते हैं.

१४ वातकर्णशोथ, १५ पित्तकर्णशोथ, १६ कफकर्णशोथ और १७ रक्तकर्णशोथ इन चारोंके लक्षण सूजेहुये कानको देखकर पूर्वोक्त शोथरोगके समान जानो.

१८ वातकर्णार्श, १९ पित्तकर्णार्श, २० कफकर्णार्श और २१ रक्तकर्णार्श इन चारोंके लक्षण कानमें अर्श (मसा) देखकर पूर्वोक्त अर्शरोगके समान जानो.

२२ वातकर्णार्बुद, २३ पित्तकर्णार्बुद, २४ कफकर्णार्बुद, २५ रक्तकर्णार्बुद, २६ मांसकर्णार्बुद, २७ मेदकर्णार्बुद और २८ शिराकर्णार्बुद इन सातोंके लक्षण कानमें गठान देखके पूर्वोक्त अर्बुदरोगके समान जानलो ये समस्त २८ रोग कानके भीतर होते हैं.

कर्णपाली (कानकी लोलकके) रोगोंको लिखते हैं.

१ परिपाटकरोगलक्षण—कानकी कोमल लोलकके छिद्रको शीघ्र बढ़ानेसे वहाँ शोथ होकर चर्म छिल जाता है तब वहाँ पीडा और वहाँ कुछ श्यामतायुक्त लाल रंग होता है, उसे परिपाटक जानो.

२ उत्पातकलक्षण—लोलकके छिद्रमें भारी आभूपणके पहनाने या किसी प्रकारके खिंचावसे लोलकमें शोथ, दाह, पाक और पीडा उत्पन्न होती है, उसे उत्पातक कहते हैं.

३ उन्मंथलक्षण—बलात्कार (जबरी) से कान बढ़ानेसे कफयुक्त कुपित्त वात वहाँ प्राप्त होकर शोथ और खाज उत्पन्न करती है, उसे उन्मथ कहते हैं.

४ दुःखवर्द्धनलक्षण—कानकी लोलक कर्णवेधके समय अनुचित छेदनेसे पककर पीडित हो, उसे दुःखवर्द्धनरोग कहते हैं.

परिलेहिनलक्षण—कफ रक्तके कोपसे लोलकपर सरसों समान फुन्सियां होकर खाज, दाह और पाक उत्पन्न कर देती हैं, उसे परिलेहिन कहते हैं. इति कर्णरोगनिदानम्.

नासारोग—नाकमें १ पीनस, २ पूतिनश्य, ३ नासापाक, ४ पूयरक्त, ५ क्षवथु, ६ क्षवथुभ्रंश, ७ दीप्त, ८ प्रतिनाह, ९ प्रतिस्राव, १० नासाशोष, पांच प्रतिश्याय, १५ सप्त नासार्बुद २२ चार नासार्श २६ चार नासाशोथ और ३० चार नासारक्तपित्त ये ३४ चौतीस रोग होते हैं.

१ पीनसरोगलक्षण—कफकोपसे नाकमें श्वास न आकर नाक रुक जावे और सूखकर धुवा निकलता रहे और जिसे सुगन्ध दुर्गंधका ज्ञान न हो उसे पीनसरोग कहते हैं.

२ पूतिनश्यलक्षण—कफ पित्त और रक्तके दग्ध होनेसे गले और तालूमें वायु बढ़कर मख और नासिकासे दुर्गंधि निकलने लगती है, उसे पूतिनश्य कहते हैं.

३ नासापाकलक्षण—नासास्थित पित्त दूषित होकर नाकमें फुन्सियां उत्पन्न करता है, इसे नासापाकरोग कहते हैं.

४ पूयरक्तलक्षण—वातादि दोपके प्रकोप या ललाटकी चोटसे नासिकाद्वारा रक्तमिश्रित पीब बहा करती है उसे पूयरक्त कहते हैं.

५ क्षवथुलक्षण—कुपित पवन नाकके मर्मस्थानको दूषितकर कफयुक्त होकर विशेष छींकें उत्पन्न करता है इसे क्षवथु (छींक) रोग कहते हैं.

और मिरची, राई, नास आदि, तीक्ष्ण वस्तुओंके सूँघनेसे या सूर्यकी ओर देखनेसे या बत्ती, तृण आदि नाकमें चलनेसे जो छींकें आवें उसे आगंतुक क्षवथुरोग जानो यह भी क्षवथुकाही एक विभेद है.

६ क्षवथुभ्रंशलक्षण—पित्तसे नाकका कफ दग्ध होकर छींकें नहीं आवें तो क्षवथुभ्रंश जानो.

७ दीप्तरोगलक्षण—पित्तकोपसे नाकमें दाह होकर धुवाँ निकला करे उसे दीप्तरोग कहते हैं.

८ प्रतिनाहलक्षण—वातयुक्त कफ नाकका छिद्र रोककर श्वास नहीं आने देता उसे प्रतिनाह जानो.

९ प्रतिस्रावल०—नाकसे गाढा, पीला, या श्वेत कफ गिरे उसे प्र० कहते हैं.

१० नासाशोषलक्षण—वात, पित्त, कफके कोपसे नाक सूखकर श्वास न आवे तो नासाशोषरोग जानो.

अथ प्रतिश्यायरोगोत्पत्ति—पीनसरोग होनेपर यत्न न किया जावे तो उसके बढानेसे प्रतिश्यायरोग उत्पन्न होता है. यह १ वातज, २ पित्तज, ३ कफज, ४ सन्निपातज और ५ रक्तज होनेसे पाँच प्रकारका होता है.

प्रतिश्यायपूर्वरूप—छींकें आवें, मस्तक भारी होजावे, रोमांच हो अंग जकड जावे इत्यादि उपद्रव हों तो जानो कि, प्रतिश्याय उत्पन्न होगा,

१ वातजप्रतिश्यायलक्षण—नाक भारी रहकर थोडी थोडी बहे, कंठ तालु और ओष्ठ सूखकर कनपटीमें सुई कोचने समान पीडा और स्वरभंग होजावे तो वातज प्रतिश्याय जानो.

२ पित्तजप्रतिश्यायलक्षण—नाकसे तप्त और पीली कफ गिरकर स्वरभंग होजावे वह रोगी कृश, पांडुवर्ण, संतापयुक्त और उष्णतासे पीडित होकर उसके नाकसे धुआँसा निकले तो पित्तजप्रतिश्याय जानो.

३ कफजप्रतिश्यायलक्षण—नाकसे श्वेत ठंढा और बहुतसा कफ गिरकर नेत्रोंपर सूजन आजावे मस्तक भारी, कंठ, तालु, ओष्ठोंमें खुजाल होकर मनुष्य श्वेतसा दृष्टिपडे तो कफजप्रतिश्याय जानो.

४ सन्निपातजप्रतिश्यायल० [illegible] होहोकर पक्का या कच्चाही मिट जावे तथा तीनोंदोषोंके पूर्वोक्त [illegible] सन्निपातजप्रतिश्याय जानो.

५ रक्तजप्रतिश्यायलक्षण—नासिकासे रक्तगिरे, नेत्र लाल होजावें, श्वास और मुखसे दुर्गंधि आवे, सुगंधि, दुर्गंधि ज्ञानहीन होजावे छातीमें प्रहार करनेके सदृश पीडा हो तो रक्तजप्रतिश्यायरोग जानो.

दुष्टप्रतिश्यायलक्षण—बारबार नासिका बहे तथा सूख जावे और बंद होजावे पुनः खुलजावे, श्वासमें दुर्गंधि आवे, गंध ज्ञान न हो तो दुष्ट प्रतिश्याय जानो यह कष्टसाध्य है.

असाध्यप्रतिश्यायलक्षण—आलस्यवश होकर प्रतिश्यायका यत्न न करे तो प्रतिश्याय मात्र असाध्य हो जाते हैं, विशेषतः—प्रतिश्यायसे नाकमें श्वेत, चिकने और छोटे कृमि उत्पन्न होजावें तो शिरोरोग, बाधिर्य, नेत्ररोग, शोथ, अग्निमांद्य और कास, ये रोग भी उत्पन्न होजाते हैं.

सात नासार्बुद २२ चार नासार्श २६ चार नासाशोथ ३० और चार नासारक्तपित्त ३४ इन उनैसोंके लक्षण इनके निदानोक्त जानो.

इति नासारोग ३४ निदानम्.

इति श्रीनूतनामृतसागरे निदानखण्डे कर्णरोगनासारोगलक्षण
निरूपणं नामैकोनचत्वारिंशस्तरंगः ॥ ३९ ॥

अथ मुखरोगोत्पत्ति।

क्रमान्मुखामयानां हि दृष्ट्वा ग्रंथाननेकशः ॥
वियद्वेदे तरंगेऽत्र निदानं कथ्यते मया ॥ ४० ॥

भाषार्थ—वैद्यकके अनेक ग्रंथोंको देखके मुखरोगोंका निदान इस ४० चालीसवें तरंगमें यथाक्रमसे करते हैं.

अनूपदेशज जीवोंके मांस भक्षणसे दूध दही उड़द आदिके अधिक सेवनसे दोष कुपित होकर मुखरोगको उत्पन्न करते हैं.

मुखके १ ओष्ठ २ मसूढ़े ३ दाँत ४ जिह्वा ५ तालु ६ कंठ और कंठस्थानसे लेके समस्त मुख ये ७ सात अंग हैं, इन सातों अंगोंमें, ८ ओष्ठके १६ मसूढ़ोंके ८ दन्तोंके ५ जिह्वाके ९ तालूके १८ कंठके ३ सर्व मुखके ऐसे ६७ सरसठ रोग होते हैं, ओष्ठरोग १ वातज २ पित्तज ३ कफज ४ सन्निपातज ५ रक्तज ६ मांस ७ मेदोज और क्षतज ऐसे ८ प्रकारके ओष्ठरोग हैं.

१ वातजओष्ठरोगलक्षण—ओष्ठ कठिन, खरधरे, गाढ़े, काले, चिरेहुए और तीव्रवेदनायुक्त हों तो वातसे हुआ ओष्ठरोग जानो.

२ पित्तजओष्ठरोगलक्षण—ओष्ठोंमें फुन्सियां होकर टपकने लगें और उनमें चहुँओरसे पीडा, दाह, पाक होकर पीली होजावें तो पित्तसे रोग हुआ जानो.

३ कफजओष्ठरोगलक्षण—ओष्ठ देहके वर्ण सदृश होकर चूने लगें और उनमें पीडारहित फुन्सियां होकर खुजाल आवे और उसमेंसे ठंढा तथा गाढा पीब निकले तो कफजन्य ओष्ठरोग जानो.

४ सन्निपातजओष्ठरोगलक्षण—ओष्ठ कभी काले, कभी पीले और कभी श्वेत तथा फुन्सियोंसे पूरित रहें तो सन्निपात ओष्ठरोग जानो.

५ रक्तजओष्ठरोगलक्षण—खजूरके फल समान फुन्सियां होकर लाल वर्ण और पीडायुक्त होजावें तो रक्तसे हुआ ओष्ठरोग जानो.

६ मांसजओष्ठरोगल०-जो ओष्ठ भारी मांसके पिंडसमान ऊँचे होजावें और दोनों गलफरोंमें कीडे, उत्पन्न होकर निकलें तो मांससे हुआओ०जानो.

७ मेदोज ओष्ठरोगलक्षण—ओष्ठ घी या मांड (चाबलोंका उबला हुआ पानी) के समान दीखें खाजयुक्त भारी रहें, स्वच्छ स्फटिकमणि-सदृश जल भरे और ओष्ठव्रण कठोर होकर अच्छे न हों, ये लक्षण हों तो मेदसे ओष्ठरोग हुआ जानो.

८ क्षतज ओष्ठरोगलक्षण—चोट आदिके लगनेसे ओष्ठ चिरने या फटनेसे उनमें गठान होकर खुजाल और आर्द्र (गीले) रहें तो चोट लगनेसे हुआ ओष्ठरोग जानो. इति ओष्ठरोगाः ।

दन्तमूल (मसूढोंके) रोग।

मसूढोंमें १ शीतोद २ दन्तपुप्पुट ३ दंतवेष्ट ४ सौषिर ५ महासौपिर ६ परिदर ७ उपकुश ८ वैदर्भ ९ खलिवर्द्धन १० अधिमांस ११ वातनाडी राह १२ पित्तनाडीराह १३ कफनाडीराह १४ सन्निपातनाडीराह १५ क्षतजनाडी और १६ दंतविद्रधि ये सोलह रोग दाँतोंके मसूढोंमें होतेहैं.

१ शीतोदलक्षण—मसूढोंमें निष्कारणही दुर्गंधित काला रक्त निकलने लगे. मसूढे कोमल होकर [illegible] और एकके लगनेसे दृ[illegible] सडनेलगे तो शीतोदरोग जानो.

२ दंतपुप्पुटलक्षण–कफ–रक्तसे दो या तीन दाँतोंमें बहुत सूजन होजावे उसे दंतपुप्पुट जानो.

३ दंतवेष्टलक्षण–मसूढोंसे रक्तयुक्त पीब निकलकर हिलनेलगें उसे दंतवेष्ट जानो.

४ सौषिरलक्षण–कफ रक्त विकारसे दाँतोंकी जडोंमें वेदना सहित शोथ होकर लार गिरे तो सौषिर रोग जानो.

५ महासौषिरलक्षण–त्रिदोषसे दाँत मसूढोंको छोडदेवें, तालुमें छिद्र पडजावें उसे महासौषिर जानो.

६ परिदरलक्षण–पित्त रक्त या कफके कारणसे मसूढे विखरजावें पर रक्त न निकले उसे परिदर जानो.

७ उपकुशलक्षण–पित्त, रक्तसे मसूढोंमें दाह, पाक होकर दाँत हिलने लगें, परस्पर दबानेसे रक्त गिरकर मसूढे पुनः फूल जावें, वेदना अल्प परन्तु मुखसे दुर्गंध आनेलगे तो उपकुश जानो.

८ वैदर्भलक्षण–मसूढोंमें किसी प्रकारकी चोट लगनेसे या दतोन आदिकी रगडसे सूजकर दाँत हिलनेलगें उसे वैदर्भरोग कहते हैं.

९ खलिवर्द्धनलक्षण–वात, कोपसे मसूढोंसें दाँत बढ़कर विशेप पीडा करता है उसे खलिवर्द्धन जानो.

१० अधिमांसलक्षण–कफसे नीचेकी दाढके अंतमें विशेष सूजन और पीडा, होकर मुखसे लारगिरे तो अधिमांसरोग जानो.

११ वातनाडीराह १२ पित्तनाडीराह १३ कफनाडीराह १४ सन्निपात-नाडीराह और १५ सतजनाडीराह इन रोगोंसें मसूढ़ोंमें नासूर पड जाते हैं इसलिये इनके लक्षण पूर्वोक्त नाडीव्रण सदृश जानो.

१६ दंतविद्रधिलक्षण–मसूढ़ोंमें पीवयुक्त रक्त बहकर कुछ सूजन, दाह और पीडा होवे उसे दंतविद्रधि जानो.

दंतरोग–दाँतोंमें १ दालन, २ कृमिदंत, ३ भंजन, ४ दंतहर्ष, ५ दंत-शर्करा, ६ कपाली, ७ श्यावदंत और ८ कराल ये आठ रोग होते हैं.

१ दालनलक्षण–बादीसे दाँतोंमें टूटनेके सदृश पीडा हो तो दालन-रोग जानो.

२ कृमिदंतलक्षण–वातकोपसे, दाँतोंमें काले छिद्र पडकर हिलने

लगें शोथ होकर उनमेंसे रुधिर वहे और बिनाकारणही पीड़ा हो तो कृमिदंतरोगजानो.

३ भंजनलक्षण—वातकफसे मुख टेढा होकर दाँत टूटजावें उसे भंजनरोग जानो.

४ दंतहर्षलक्षण—वातकोपसे दाँत, शीतल जल, खारी वस्तु, शीतल पवन, खटाई आदिका स्पर्श न सहसके उसे दंतहर्ष कहते हैं.

५ दंतशर्करालक्षण—वातपित्तके कारणसे दाँतोंका मैल सूखकर वालूके समान खरखरानेलगे तो दंतशर्करारोग जानो.

६ कपालिकालक्षण—शर्करारोगमें मैलयुक्त दाँत ठिकरे समान फूटने लगें तो कपालिका रोग जानो.

७ श्यावदंतलक्षण—रक्तमिश्रित पित्तसे दाँत जलकर पीले काले या नीले होजावें तो उसे श्यावदंत रोग कहते हैं.

८ करालक्षण—वातसे दाँतोंमें धीरे धीरे भयंकर कुडौल ऊँचे नीचे कर दे तो करालरोग जानो. यह असाध्य होता है विशेषतः ग्रन्थांतरसे हनुमोक्षरोगको लिखते हैं.

कुपितवात—दाढमें या दाँतमें प्रवेश होकर पीडा करे और अर्दितरोगके भी लक्षण मिलें तो हनुमोक्षरोग जानो. इति दन्तरोग.

जिह्वारोग—जिह्वामें १ वातज जिह्वारोग, २ पित्तज जिह्वारोग, ३ कफज जिह्वारोग, ४ अलास और ५ उपजिह्वा ये पाँच रोग होते हैं.

१ वातजजिह्वारोगलक्षण—जिह्वा फटकर सूज जावे, हरि होकर काँ पडजावें, और स्वादका ज्ञान न रहे तो जिह्वारोग जानो.

२ पित्तज जिह्वारोगलक्षण—जीभमें दाह, काँटे होकर लाल वर्ण होजावे तो पित्तजजिह्वारोग जानो.

३ कफज जिह्वारोगलक्षण—जीभ भारी और मोटी होकर श्वेत काँटे पडजावें तो कफज जिह्वारोग जानो.

४ अलासलक्षण—जिह्वाके नीचे, विशेष शोथ और पाक होकर जीभ और दाढी अकडजावे इसे अलास जानो.

५ उपाजिह्वालक्षण—जीभके अग्रभागपर शोथ होकर दूसरी जीभके समान ज़ान पडे और लार, खाज, दाहयुक्त हो तो उपजिह्वारोग जानो.

इति जिह्वारोग.

तालुरोग–तालुमें १गलसुंडी २ तुंडकेशरी ३ ध्रुव ४ कच्छप ५ तालव्बुर्द ६ मांससंघात ७ तालुपुप्पुट ८ तालुशोप और ९ तालुपाक ये नौ रोग होते हैं.

१ गलसुंडील०–कफ रक्तके कोपसे तालुकी जडसे शोथ बढ़कर फूली हुई भाथीके समान हो जावे और तृपा, कास, श्वास उत्पन्न करे तो गलसुंडी जानो.

२ तुंडकेशरीलक्षण–कफ लोहीसे तालुकी जडसे उत्पन्न हुआ शोथ दाह, पीड़ा और पाकको उत्पन्न करता है उसे तुंडकेशरीरोग जानो.

३ ध्रुवल०–तालुमें लाल शोथ होकर ज्वर उत्पन्न करे उसे ध्रुवरोग जानो.

४ कच्छपरोगलक्षण–कफके कारणसे तालुमें कछुएके आकारका वेदनारहित शोथ हो उसे कच्छपरोग जानो.

५ तालव्बुर्द ल०–तालुमें कमलाकार बड़ा अंकुर होजावे उसे ता०

६ मांससंघातलक्षण–तालुमें पीडारहित विकारी मांस बढ़े उसे मांस संघातरोग जानो.

७ तालुपुप्पुटलक्षण–तालुमें पीडारहित बेरके समान शोथ हो जावे उसे तालुपुप्पुटरोग जानो.

८ तालुशोप ल०–तालुसूखकर फटजावे और श्वास चढ़े तो ता०जानो.

९ तालुपाकलक्षण–गर्मीसे तालु विशेष पकजाता है, उसे तालुपाक रोग जानो. इति तालुरोग ९.

कंठरोग–कंठमें १ वातजारोहिणी २ पित्तजारोहिणी ३ कफजारोहिणी ४ सन्निपातजारोहिणी ५ रक्तजारोहिणी ६ कंठशालूक ७ अतिजिह्वा ८ वलय ९ वलास १० एकवृंद ११ वृंद १२ शतघ्नी १३ गिलायु १४ गलविद्रधि १५ गलौघ १६ स्वरघ्न १७ मांसतान और १८ विदारी ये अठारह रोग होते हैं.

१ वातजारोहिणीलक्षण–सर्व जिह्वामें विशेप पीडा होकर मांसांकुर निकल आवे इसकारणसे कंठ रुककर वातके समस्त उपद्रव हों तो वातजारोहिणी जानो.

२ पित्तजारोहिणीलक्षण–जिसका गला पककर दाह और ज्वरयुक्त हो तो पित्तजारोहिणी जानो.

३ कफजारोहिणीलक्षण–जो कंठको रोककर गलेमें अचलांकुरयुक्त धीरे धीरे पकनेवाली फुन्सी हो उसे कफजारोहिणी जानो.

४ सन्निपातजारोहिणीलक्षण—गलेके भीतरही भीतर पकनेवाली और उक्त तीनों दोषोंके लक्षणयुक्त ग्रंथि हो तो सन्निपातजारोहिणी जानो, यह असाध्य होती है.

५ रक्तजारोहिणीलक्षण—जो गलेमें शीघ्रपाकी छोटे छोटे फोडेहों और पित्तजारोहिणीके भी लक्षण दृष्टिपडें तो रक्तजारोहिणी जानो.

६ कण्ठशालूकलक्षण—कफसे गलेमें जंगली बेरकी गुठली समान, खरखरी, अचल, काटेंसी गडनेवाली गठान हो उसे कंठशालूकरोग जानो.

७ अधिजिह्वालक्षण—रक्तमिश्रित कफसे जिह्वापर जिह्वाकी अनीसमान सूजन उत्पन्न हो उसे अधिजिह्वा कहते हैं, यदि यह सूजन पकजावे तो अच्छा होना ईश्वराधीन है.

८ वलयलक्षण—कंठमें रहनेवाला कफ गलेमें लंबी, चौडी, ऊंची, अन्न, जल जानेके मार्गको रोकनेवाली गठान उत्पन्न करता है उसे वलय रोग कहते हैं.

९ वलासरोगलक्षण—वर्द्धित कफ और वायु गलेमें श्वास तथा पीडा युक्त सूजन उत्पन्न करते हैं, उसे वलास कहते हैं, यह मर्मस्थानको छेदन करनेवाला अति कठिन रोग होता है.

१० एकवृन्दलक्षण—कफ और रक्तके कोपसे गलेमें गोल, ऊंचे किनारोंकी, दाह तथा खुजालयुक्त, पकनेपर भी कठिन ऐसी एक सूजन उत्पन्न होती है इसे एकवृन्दरोग कहते हैं.

११ वृन्दरोगलक्षण—पित्त रक्तकोपसे गलेमें ऊँचा अति दाह तथा ज्वरयुक्त पीडारहित सूजन उत्पन्न हो उसे वृन्दरोग कहते हैं, यदि इसमें सुई चुभनेके समान पीडा हो तो वातज जानो.

१२ शतघ्नीरोगलक्षण—त्रिदोषसे गलेमें बत्तीके समान कंठ रोकनेवाली, मांसके अंकुरोंसे घिरीहुई, कठिन, अनेक प्रकारकी पीडा देनेवाली जो सूजन हो उसे शतघ्नी कहते हैं यह प्राणहारिणी होतीहै.

१३ गिलायुरोगलक्षण—कफ और रुधिरसे गलेमें आँवलेकी गुठली समान, अचल, अल्प पीडायुक्त एक गठान होतीहै जिससे गलेमें कुछ अटकासा जान पडता है, ये लक्षण हों तो गिलायुरोग जानो.

१४ मलविद्रधिलक्षण—गलेमें त्रिदोषसे सब प्रकारकी पीडा करने

वाला शोथ हो उसे गलविद्रधि कहते हैं,इसके सब लक्षण त्रिदोपविद्रधिके समान होते हैं.

१५ गलौघ लक्षण-कफ, रक्तसे गलेमें अग्नि, जल और श्वासको भी रोकनेवाला तीव्र ज्वरयुक्त बडा शोथ (सूजन) हो उसे गलौघरोग कहते हैं.

१६ स्वरघ्नरोगलक्षण--गलेमें वायु (हवा)के निकलनेका मार्ग कफसे रुककर गलाघरघराने लगे और श्वास लेनेमें भी क्लेश हो उसे स्वरघ्नरोग जानो.

१७ मांसतानरोग ल०-त्रिदोपसे सब गलेमें फैलनेवाला, अति कष्टकारक, लटकता हुआ शोथ होकर गलेको रोक लेता है उसे मांसतान कहते हैं.

१८ विदारीलक्षण--पित्तसे गलेके भीतर दाह, तीव्र वेदनायुक्त शोथ (सूजन) होकर दुर्गंधियुक्त मांसको गला गलाकर गिराता है जिससे रोगी किसी करवटपरही सोते रहता है, उसे विदारीरोग कहते हैं. इति कण्ठरोग.

सर्वमुखरोग--सब मुखके भीतर १ वातजसर्वसर, २ पित्तजसर्वसर और ३ कफजसर्वसर ये तीन रोग होते हैं.

१ वातजसर्वसरलक्षण--मुखमें सुई कोंचनेकीसी पीडायुक्त छाले होजावें उसे वातज सर्वसर जानो.

२ पित्तज सर्वसरलक्षण—पीले तथा, लालवर्णवाले, दाहयुक्त छाले सब मुख भरमें होजावें तो पित्तज सर्वसररोग जानो.

३ कफज सर्वसरलक्षण—पीडारहित; खुजालसहित, चर्मके वर्णसमान वर्णवाले छालोंसे मुख भर जावे, तो कफज सर्वसररोग जानो इस प्रकार सब ६७ मुखरोग हैं.

मुखरोग असाध्यलक्षण—ओष्ठरोगोंमें १ मांसज, २ रक्तज और ३ त्रिदोषज दन्तमूल रोगोंमें १ सन्निपात, २ नाडीव्रण और ३ सौषिर. दन्तरोगोंमें १ श्यावदन्त, २ दालन और ३ भंजन. जिह्वारोगोंमें १अलास. तालुरोगोंमें १ अर्बुद. गलरोगोंमें १ स्वरघ्न, २ वलय, ३ वृन्द, ४ वलास, ५ विदारी, ६ गलौघ, ७ मांसतान, ८ शतघ्नी और ९ रोहिणी ये रोग असाध्य हैं इनपर चिकित्सा करो तोभी प्रथम कहदो कि ये रोग अच्छे न होंगे. इति मुखरोगनिदानम्.

इति नूतनामृतसागरे निदानखण्डे मुखरोगलक्षणनिरूपणंनाम चत्वारिंशस्तरंगः ॥ ४० ॥

स्त्रीरोगनिदानम्.

अथात्र प्रदरादीनां स्त्रीरोगाणां यथाक्रमात् ॥
विधुवेदे तरंगे वै निदानं कथ्यते मया ॥ ४१ ॥

भाषार्थ–अब हम इस ४१ इकतालीसवें तरंगमें स्त्रियोंके प्रदर आदि रोगोंका निदान यथाक्रमसे कहते हैं.

प्रदररोगोत्पत्ति–भोजनपर भोजन, अति मैथुन, अति शोक, अति सवारी (वाहनारोहण) लंघन, उपवास, भार उठाना, दिनको सोना, इन कार्योंके विशेष करनेसे और गर्भपात तथा चोट लगनेसे स्त्रियोंके १ वातज २ पित्तज ३ कफज और ४ सन्निपातज ऐसे चार प्रकारका प्रदररोग होता है.

प्रदरसामान्यलक्षण–योनिसे बिन मासिकधर्मही नानाप्रकारका रुधिर (लोहू) निकलै और उसके निकलनेसे हड़फूटन पीड़ा हो तो प्रदररोग जानो.

१ वातजप्रदरलक्षण–योनिसे रूखा, फेनयुक्त, मांसके धोवन सदृश रक्त बहै तो उसे वातज प्रदररोग जानो.

२ पित्तजप्रदरलक्षण–योनिसे उष्ण, लाल, पीला, या नीला तथा काले वर्णका, शरीरमें दाह तथा पित्तजन्य व्याधिकारक अधिक लोहू बहै तो पित्तज प्रदर जानो.

३ कफजप्रदरलक्षण–योनिसे आँवके, या चावलोंके मांडके तथा कुदई तथा साँठी चावलोंके धोवनसदृश, पांडु वर्णवाला, रुधिर बहै तो कफज प्रदर जानो.

४ सन्निपातजप्रदरलक्षण–योनिसे मधु या घी या मज्जा (चर्बी) के समान, दुर्गंधित, हरतालसदृश वर्णवाला, लोहू बहै तो सन्निपात प्रदर जानो. यह असाध्य है. प्रदरके उपद्रव, प्रदररोगयुक्त स्त्रीको दुर्बलता, थकवाय, मूर्च्छा, तृषा, दाह, प्रलाप, देहका वर्ण पीला, तंद्रा और वातरोग हो तो निश्चय करो कि अब प्रदरका अतिवेग है.

प्रदर असाध्यलक्षण–योनिसे निरंतर रुधिर बहताही रहै और उक्त उपद्रवसहित हो तो असाध्य जानो. इसका अच्छा होना ईश्वराधीन है.

शुद्धार्त्तवलक्षण–योनिसे यथार्थ मासानुमास, चिकनाई, जलन और

पीडारहित न थोडा न बहुत, किंतु यथायोग्य लोहू बहता हुआ पाँच दिनतक दृष्टि पडै तो शुद्धार्थ (रोगरहित शुद्ध रज) जानो. तथा योनिसे शशा (खरगोश) के रक्त समान या लाखके रसके समान वर्णवाला जो कि पानीसे धोयेपर कपडेसे निकल जावे, जिसका चिह्न (दाग) कुछभी न रहे ऐसा दाहरहित लोहू प्रथम कथित नियत दिनोंतक बहै तो अति शुद्ध रज, विकाररहित जानो. इति प्रदररोग.

सोमरोग.

सोमरोगोत्पत्तिकारण—अति मैथुन, अति शोक, अति श्रम, अति रेचक सेवनसे गर (कृत्रिम विष) के संयोगसे सर्व शरीरका जल क्षुभित होकर योनिद्वारसे बहने लगता है जिससे स्त्री वारंवार अत्यंत मूतने लगती है इसे सोमरोग कहते हैं.

सोमरोगलक्षण—योनिसे स्वच्छ, निर्मल, ठंढा, निर्गंध, पीडा रहित और श्वेत मूत्र, वारंवार उतरै जिससे वह स्त्री सर्वदा सुखहीन, दुर्बल, मस्तक शिथिल, मुख तालुका सूखना, मूर्च्छा, जमुहाई, प्रलाप (बडबडाना) त्वचा रूखी तथा भक्ष्य, भोज्य और जलपानसे अतृप्ति, इन लक्षणोंयुक्त हो जाती है ये लक्षण दृष्टि पडैं तो सोमरोग जानो. शरीरस्थ जलने शरीरको धारणकर रक्खाहै, इसलिये उस जलकी सोमसंज्ञा है, उसके क्षीण होनेसे स्त्रियोंके सोमरोग होता है.

स्त्री योनिरोग.

मिथ्या आहार, विहार करनेसे वात, पित्त, कफ कुपित होकर स्त्रियोंकी योनिमें २० प्रकारके रोग उत्पन्न करते हैं, उन रोगोंयुक्त होनेसे वह योनि १ उदावृत्ता, २ वंध्या, ३ विप्लुता, ४ परिप्लुता, ५ वातला, ६ लोहितक्षरा ७ दुःप्रजाविनी, ८ वामिनी, ९ पुत्रघ्नी, १० पित्तला, ११ अत्यानंदा, १२ कणिनी, १३ चरणा, १४ अतिचरणा, १५ श्लेष्मला, १६ स्तनी, १७ पंडी, १८ अंडिनी, १९ विवृता और २० सूचीवक्रा कहाती है.

१ उदावृत्तायोनिलक्षण—जिस योनिसे रजोधर्मके समय अति कष्टसे झाग (फेन) युक्त रुधिर निकलै उसे उदावृत्तायोनि जानो.

२ वंध्यायोनिलक्षण—जिस योनिसे महीने के महीने रुधिर न बहै (रजो-

१ सोमरोगमनुष्योंकेभीहोजाताहैजिसे रत्नावलीग्रंथमेंबहुमूत्रतथामूत्रातिसारभीमानाहै.

धर्म न हो) तो उसे वंध्यायोनि जानो. वंध्यायोनिवाली स्त्रीके बालक न होनेसे वह स्त्रीभी वंध्या (वाँझ) कहाती है.

३ विप्लुतायोनिलक्षण—जिस योनिमें नित्यही पीडा होती रहै, उसे विप्लुतायोनि जानो.

४ परिप्लुतायोनिलक्षण—जिस योनिमें मासिक रज (लोहू) बहते समय अत्यंत पीडा हो उसे परिप्लुतायोनि जानो.

५ वातलायोनिलक्षण—जो योनि कठोर हो और उसमें शूल चलै तो वातलायोनि जानो. ये पाँचो योनिरोग, दूषित बादीसे होते हैं.

६ लोहितक्षरायोनिलक्षण—जिस योनिसे दाहयुक्त रुधिर निकलता रहै उसे लोहितक्षरायोनि जानो.

७ दुष्प्रजाविनीयोनिलक्षण—जो योनि झरती रहै और मैथुन समय अतिघर्षण होनेसे बाहरको निकल आवे सो दुःप्रजाविनीयोनि कहाती है. इस योनिवाली स्त्रीको संतान होनेमें बडा कष्ट होता है, इसे प्रस्रविणीयोनि भी कहते हैं.

८ वामिनीयोनिलक्षण--जिस योनिसे पवन और रुधिरयुक्त वीर्य निकलै उसे वामिनीयोनि जानो.

९ पुत्रघ्नीयोनिलक्षण—जो योनि रक्तक्षयसे रहे रहे गर्भको गिरा देती है सो पुत्रघ्नी योनि कहाती है.

१० पित्तलायोनिलक्षण—जो योनि दाहयुक्त होकर पकजावे और शरीरमें ज्वर उत्पन्न करदे उसे पित्तला योनि कहते हैं. ये पाँचो योनिरोग दूषित पित्तसे होते हैं.

११ अत्यानंदायोनिलक्षण—जो योनि अत्यंत मैथुनसे भी संतुष्ट न हो उसे अत्यानंदा जानो.

१२ कर्णिनीयोनिलक्षण—जिस योनिमें कमल (योनिफूल) के चहुँ-ओर कर्णफूलके समान मांसकी ककनी (किनारी) सी बनजावे उसे कर्णिनीयोनि जानो.

१३ चरणायोनिलक्षण—जो योनि मैथुन करनेमें मनुष्यसे पहिलेही स्खलित हो जाती है सो चरणायोनि कहाती है.

१४ अतिचरणायोनिलक्षण–जो योनि अत्यंत मैथुन करनेपरभी मनुष्यसे पीछे खलास (स्खलित) हो सो अतिचरणायोनि कहाती है.

१५ श्लेष्मलायोनिलक्षण–जो योनि, अति चिकनी, खुजालयुक्त और ठंढी रहै, उसे श्लेष्मला योनि जानो. ये पाँचो योनिरोग दूषित कफसे होते हैं.

१६ स्तनीयोनिलक्षण–जो स्त्री रजस्वला न हो और स्तन छोटे छोटे होवें, उसे स्तनीयोनि जानो, बहुतसी स्त्रियोंको मासिकधर्म होकर भी स्तनीयोनि रोगसे छोटे ही स्तन रहजाते हैं.

१७ षंडीयोनिलक्षण–जो योनि मैथुन करनेमें खरखरी मालूम हो उसे षंडीयोनि जानो.

१८ अंडिनीयोनिलक्षण–छोटी अवस्थावाली स्त्रीकी योनिमें बडे लिंगवाले पुरुषके संग होनेसे जो योनि अंडके समान लटक आवे उसे अंडिनीयोनि जानो.

१९ विवृत्तायोनिलक्षण–जो योनि बड़ी हो और फैली रहै इसे विवृत्ता या महती योनि जानो.

२० सूचीवक्रायोनिलक्षण–जिस योनिका बारीक छेद हो उसे सूचीवक्रायोनि जानो. इति स्त्री योनिरोग.

योनिकन्दरोगोत्पत्ति–दिनको अति शयन, अति क्रोध, अतिश्रम, अति मैथुन इनके करनेसे तथा योनिमें नख दंत आदिके लगनेसे वातादिदोष कुपित होकर योनिकंदरोगको उत्पन्न करते हैं.

योनिकंदरोगस्वरूप–योनिमें रुधिरयुक्त पीबवाली गूलरके फल समान एक गठान उत्पन्न होती है उसे योनिकंद कहते हैं यह रोग १ वातज, २ पित्तज, ३ कफज और ४ सन्निपातज, ऐसे चारप्रकारका होता है.

१ वातजयोनिकन्दलक्षण–योनिमें रूखी, विवर्ण (फूटी फटीसी) जो गठान हो तो उसे वातजयोनिकन्दरोग जानो.

२ पित्तजयोनिकंदरोगलक्षण–योनिमें दाह, ललाई और ज्वरयुक्त जो गठान हो उसे पित्तजयोनिकन्दरोग जानो.

३ कफजयोनिकंदलक्षण–योनिमें अलसीके नीले पुष्पसमान खुजालयुक्त जो गठान हो तो उसे कफजयोनिकंदरोग जानो.

४ सन्निपातजयोनिकंदलक्षण–योनिमें उक्त तीनों दोषके लक्षण

युक्त गठान हो तो सन्निपातजयोनिकन्द जानो. इस रोगवाली स्त्रीकाभी रजोधर्म बंद होजानेसे वह वंध्या (बाँझ) हो जाती है. इति योनिकंदरोगनिदानम्.

अथ गर्भस्राव तथा गर्भपातरोगोत्पत्तिः ।

अतिमैथुन, मार्गगमन, सवारीपर चढ़ना, दौडना, उपवास, अजीर्णपर भोजन करनेसे, वमन या विरेचनके लेनेसे, ज्वरके आने तथा उदरपीडासे तथा तीक्ष्ण, कटु, उष्ण, रूखी वस्तुओंके भक्षण, विषमाशन और भय इन कारणोंसे पेटमें शूल चलकर स्त्रीका गर्भस्राव तथा गर्भपात होता है.

गर्भस्राव तथा गर्भपातलक्षण—गर्भ रहनेके दिनसे चार मास पर्यंतका गर्भ गिरनेको गर्भस्राव कहते हैं १ और चार मास उपरांत पांचवें तथा छठे महीनेमें गर्भ गिरे तो गर्भपात कहाता है २ जैसे वृक्षके लगे हुए कच्चे या पक्के फल हवाके वेगसे या वृक्षके हिलानेसे अपने गिरनेके समयसे पूर्वही तत्क्षण गिर पडते हैं इसी प्रकार उक्त कारणोंसे गर्भ भी उत्पन्न होनेके समयसे पूर्वही गिर पडता है इसलिये स्त्रियोंको चाहिये कि उक्त मिथ्या आहार विहार न करें. इति गर्भस्राव, गर्भपातनिदानम्.

शुष्कगर्भलक्षण—जिस स्त्रीका उदर पूर्ण दृष्टि नपडे तो जानो कि इसका गर्भ वायुसे सूख गया.

मूढगर्भरोगोत्पत्ति—अपने कारणोंसे कुपित वायु गर्भाशयमें रुककर गर्भकी गतिको रोकता है, उसे मूढगर्भ कहते हैं. इससे योनि, पेट, कमर आदिमें शूल और मूत्रभी रुक जाता है, तब वह गर्भ दूषित वायुसे टेढा होकर योनिसे निकलनेके समय योनिद्वारको १ मस्तकसे, या २ पाँवसे, या ३ शररिके कुबडेपनसे तथा ४ एक हाथसे या ५ दोनों हाथोंसे तथा ६ टेढे होनेसे ७ नीचेको मुख होनेसे और ८ पसुरियोंके टेढे होनेसे ऐसी अपनी आठ प्रकारकी गतिसे रोकता है. इस मूढगर्भकी इन उक्त गतिसे व्यतिरिक्त १ कीलक, २ प्रतिखुर, ३ परिघ और ४ बीजक. ये चार गति और होनेसे इन नामोंयुक्त मूढगर्भ कहाता है.

१ कीलकमूढगर्भलक्षण—जो हाथ पाँव उँचे करके मस्तकसे योनि मुखको कीलसदृश रोक लेता है सो कीलक मूढगर्भ कहाता है.

२ प्रतिखुरमूढगर्भलक्षण—जो दोनों हाथ पाँव बाहर निकालकर मध्य शिरसे योनि मुखपर रुक [illegible] मूढगर्भ कहाता है.

३ बीजकमूढ़गर्भलक्षण–जो दोनों भुजाके मध्यमें मस्तक रखके योनि मुखपर अड जाता है सो बीजकमूढ़गर्भ कहाता है.

४ परिघमूढगर्भलक्षण–जो द्वार (दरवाजे) की आगलके समान आडा होकर योनिद्वारपर अड जाता है सो परिघमूढ़गर्भ कहाता है.

मूढगर्भअसाध्यलक्षण–जिस गर्भिणीका मस्तक झुका, शरीर ठंढा, लज्जाका अभाव और कुक्षि (कूँख) की नसें नीली होगईं तो जानलो कि,इसके गर्भका बालक और ये दोनों नाश हो जावेंगे.

गर्भमें बालकके मरजानेके लक्षण–पेटमें बालक, हिलना, चलना, प्रसूतिकालके चिह्न जैसे बारंबार योनिसे मूत्रादिका स्राव तथा पीडोंका चलना ये न हों गर्भिणीके शरीरका वर्ण काला, पीला या पांडु हो जावे और उसके मुखकी श्वासमें मुर्देकीसी दुर्गंध आवे तथा पेटमें शूल चलै तो जानलो कि, इसके गर्भमें बालक मरगया.

गर्भमें बालक मरनेके कारण–माताको बंधु धनादिके नाश तथा वियोगजन्य मानसी दुःख होनेसे या चोट लगनेसंबंधी आगंतुक दुःख होनेसे या रोगोंसे गर्भ पीडित होकर वह बालक कूँखमें मरजाता है.

गार्भिणीके असाध्यलक्षण–कूँखमें गर्भका चिपटना, योनिसंवरणरोग, मक्कलरोग और श्वासकासादि उपद्रवयुक्त मूढगर्भ ये सब स्त्रियोंको नाश करनेवालेही जानो.

१ योनिसंवरणरोगलक्षण–वातल अन्नपान, मैथुन, रात्रि जागरणादिके करनेसे गार्भिणी स्त्रीके योनिनिवासी वायु कुपित होके योनिमार्गको संकुचित कर देता है और ऊर्द्ध्वगतिसे कोठेमें जाके गर्भको पीडित करता हुआ गर्भाशयका द्वार रोक लेता है. तब गर्भका मुख बंद होनेसे श्वास रुकके वह बालक मरजाता है. पेटमें उस मृत बालकके फूलनेसे गर्भिणीके सब मार्ग रुकनेसे उसका हृदय रुककर वह मरजाती है इसे योनि संवरणरोग जानो. किसीग्रंथमें लिखा है कि, यह मृत्युरूप रोग है.

२ मक्कलरोगलक्षण–प्रसूता स्त्रीके मिथ्या आहार विहारसे वायु कुपित होकर गर्भाशयसे निकले हुए रुधिरको रोकके उसके हृदय, मस्तक और पेडूमें शूल उत्पन्न करता है, इसे मक्कलरोग कहते हैं. इति मूढगर्भ निदानम्.

अथ सूतिकारोगोत्पत्ति.

मिथ्या आहार, विहारसे, क्लेशसे, विषमासनसे और अजीर्णमें भोजन करनेसे प्रसूता स्त्री (जिसके बालक उत्पन्न होगया हो उस स्त्री) को प्रसूतिरोग उत्पन्न होता है, जिसे लोकमें जापेका, तथा प्रसूतिका रोग भी कहते हैं.

सूतिकारोगलक्षण—प्रसूता स्त्रीके अंगका टूटना, ज्वर, शरीरका काँपना, तृषा, जडता सूजन पेटमें शूल, खाँसी और अतिसार ये लक्षण हों तो जानलो कि, इसके सूतिकारोग होगया.

विशेषतः—पेटका अफरना, तंद्रा, बलनाश, अन्नपर अरुचि, पसीनेका छूटना ये तथा सूतिकारोगोक्त ज्वरादि और कफ, वात, संबंधी रोग, मांस जठराग्नि और बलके नाश होनेसे कष्टसाध्यही होजाते हैं इसीलिये इनको सूतिकाके उपद्रवभी कहते हैं. इति सूतिकारोगनिदानम्.

स्तनरोगोत्पत्तिः—दुग्धयुक्त, या दुग्धरहित स्त्रीके स्तनोंमें स्वकारणोंसे कुपित वायु, पित्त और कफ प्राप्तहो मांसको दूषित करके १ वातज, २ पित्तज, ३ कफज, ४ सन्निपातज और ५ आगंतुक ऐसे पाँच ग्रंथीरूप स्तनरोग उत्पन्न करते हैं. इन पाँचोंके लक्षण रक्तविद्रधिके विना बाह्य विद्रधिनके समान जानो. इतिस्तनरोग.

इति नूतनामृतसागरे निदानखण्डे स्त्रीरोगलक्षणनिरूपणंनामैकचत्वारिंशस्तरंगः ॥ ४१ ॥

अथ बालरोग-मंथज्वर ।

हेतुं कुमाररोगाणां तथा मंथज्वरस्य च ॥
नेत्रवेदे तरंगेऽस्मिन् कथ्यते हि मया क्रमात् ॥ ४२ ॥

भाषार्थ—अब हम इस ४२ बयालीसवें तरंगमें बालरोग और मंथज्वर (मोतीझरे पानीझरे) का निदान क्रमसे कहते हैं.

बालरोगोत्पत्तिः—धात्रृ (धाय, दूध पिलानेवाली माता या कोई अन्य स्त्री) के गरिष्ठादि मिथ्या आहार, विहारसे वातादि दोष कुपित होके दूधको बिगाड देते हैं. तब उस [illegible] अनेक रोग उत्पन्न होते हैं.

जिनमें वात दूषित दुग्धपानसे वातरोग, पित्तदूषित दुग्धपनसे पित्तरोग और कफदूषित दुग्धपानसे कफरोग होते हैं.

अथ दुग्धपरीक्षा ।

१ वातदूषित दुग्धलक्षण—जो दूध स्वादमें कसैला और पानीपर तिर-जावे उसे वातदूषित दुग्ध जानो.

२ पित्तदूषित दुग्धलक्षण—जो दुग्ध, कडुआ, खट्टा, सलोना और पीली रेखाओंसे युक्त हो उसे पित्तदूषित दुग्ध जानो.

३ कफदूषित दुग्धलक्षण—जो दुग्ध, चिकना और भारी (पानीमें डूब-नेवाला) हो उसे कफदूषित दुग्ध जानो. इसीप्रकार दो दोषोंके लक्षणयुक्त होनेसे द्विदोष दूषित और तीनों दोषोंके लक्षणयुक्तको त्रिदोषदूषित जानो.

४ शुद्धदुग्ध लक्षण—जो दुग्ध मीठा, श्वेत, पानीमें मिलनेसे भी अपने रंगको न छोडके एकसा होजानेवाला, देखनेमें भी निर्मलवर्णका हो उसे दोष रहित शुद्धदुग्ध जानो, शुद्धदुग्धपानसे बालक बलयुक्त और रोग रहित तथा दूषित दुग्धसे बलहीन रोग युक्त होजाता है, यह दुग्धकी परीक्षा पुराने अमृतसागरेंम कुछ भी नहीं थी, परन्तु हमने अन्य अन्य वैद्यक ग्रंथोंसे लिखी है. इसीप्रकार अनेक बातें जो कि, पुराने अमृतसागरमें नहीं थीं और हमने इस नूतन अमृतसागरमें ग्रंथांतरसे लिखी हैं जिनकी सूच-ना कहीं दी और कहीं नहीं भी दी है, परन्तु विद्वान पुरुष स्वयं जान लेवेंगे. अब वातादि दोषदूषित दुग्ध पीनेसे जो जो रोगयुक्त बालक हो-जाता है सो दरशाते हैं जिसे निम्नलिखित प्रकारसे जानो.

१ वातदूषित दुग्धपान लक्षण—क्षीण, श्वेतमुख, कृशशरीर, मलमूत्रका रुकना आदि और भी बादीके रोगोंयुक्त लक्षण दृष्टि पडैं तो जानलो कि इसे वातदूषित दुग्धपानसे ये रोग हुए हैं.

२ पित्तदूषितदुग्धपानलक्षण—पसीना, मल पतला, शरीर पीला, अति तृषा और अंग उष्ण आदि पित्तरोगयुक्त लक्षण दृष्टि पडैं तो जानो कि पित्तदूषित दुग्धपानसे ये ऐसा है.

३ कफदूषित दुग्धपानलक्षण—लार अधिक गिरे, नींद अधिक आवे, शरीर सूना, भारी, श्वेत नेत्र, वमन, कास, श्वास आदि कफरोगयुक्त लक्षण दृष्टिपडैं तौ जानलो कि कफदूषित दुग्धपानसे यह बालक ऐसा रोगीहुआहै.

इसी प्रकार दो दोषदूषित दुग्धपानसे दो दोषोंके लक्षण और तीन दोषदूषित दुग्धपानसे तीनों दोषोंके लक्षणको विचार लो. विशेषतः–ज्वरादि समस्त रोग बालकोंको भी बडे मनुष्योंके समानही होते हैं, परन्तु उनसे व्यतिरिक्त जो जो रोग बालकोंको होते हैं उनको दरशाते हैं.

बालकोंको १ कृमिजन्यज्वर, २ कुकूण, ३ पारिगर्भिक, ४ तालुकंटक, ५ महापद्म, ६ तुंडिगुदपाक, ७ अहिपूतना, ८ अजगल्ली, ९ दंतरोग, १० बालग्रह और ११ मातृकादोष ये ग्यारह रोग प्रायः होते हैं.

१ कृमिजन्यज्वरलक्षण–बालकोंके सामान्य ज्वरादि रोग उसके रुदनादिसेही ज्ञात होते हैं, परन्तु शरीर विवर्ण, पेटमें शूल, हृदयपीडा, वमन, भ्रम, भोजनमें अरुचि और अतिसार इनसहित ज्वर हो तो कृमिसे उत्पन्न हुआ ज्वर जानो.

२ कुकूणरोगलक्षण-दुग्धदोपसे बालकोंके नेत्रोंकी पलकोंमें कुकूणरोग होताहै; इसके होनेसे नेत्रोंमें खुजाल और उनसे पानीका बहाव होकर बालक ललाट, नेत्र, पीठ और नासिकाको घिसता तथा सूर्यादिके तेजको देखने और नेत्रोंको खोलने मूचनेमें वह असमर्थ होता है.

३ पारिगर्भिकरोग लक्षण–गर्भवती माताके दुग्ध पीनेसे बालकको कास, मंदाग्नि, उल्टी, तंद्रा कृशता, अरुचि और भारीपन होजाता है. ये लक्षण हों तो पारिगर्भरोग जानो.

४ तालुकंटकलक्षण–कुपितकफसे तालुके मांसमें तालुकटंकरोग होता है जिससे तालुके ऊपर कांटे होके तालु बैठ जानेसे वह बालक माताके स्तनोंको नहीं पीता यदि पिये भी तो बडेकष्टसे पीता उसका मल पतला, तृषा, वांति, नेत्र, कंठ और मुखरोगयुक्त होकर अपनी गर्दन भी नहीं सँभालसक्ता ये लक्षण हों तो तालुकंकटरोग जानो.

५ महापद्मविसर्पलक्षण–त्रिदोपसे बालकके पेडू या मस्तकमें कमलके आकार कनपटीसे हृदयपर्यंत जानेवाला, या हृदयसे गुदापर्यंत जानेवाला ऐसा महापद्मविसर्परोग होता है इस रोगसे बालक नहीं बचता.

६ तुंडीगुदापाकरोगलक्षण–बालककी गुदा पककर नाभिमें पीडा अधिक हो तो तुंडीगुदापाक जानो.

७ अहिपूतनारोग लक्षण–जिस बालककी गुदा सर्वदा मलमूत्रयुक्त

तथा लालही रहै जिसके धोने या पोंछने तथा तपानेसे उसमें खुजाल उठकर फोडे होजावें और गुदासे पानी झरता रहै तो अहिपूतनारोग जानो.

८ अ. गल्लीरोग लक्षण–जिसके शरीरमें चिकनी, लाल, मूंगे प्रमाण पीडारहित बहुतसी फुनसीयां होजावें, उसे अजगल्लीरोग कहते हैं. अहिपूतना और अजगल्लीके विशेष लक्षण देखना चाहो तो क्षुद्ररोगके निदानमें देखो.

९ दंतरोग लक्षण–बालकके दाँत निकलते समय ज्वर, अनेक वर्णका विरेचन, वमन, क्षीणता, मस्तक पीडा, नेत्रपीडा और चक्र आना, इत्यादि लक्षण दृष्टि पडे तो जानो कि,दंतरोगहै ये सब लक्षण प्रत्येक बालकको दंत निकलनेके समय होते और प्रत्येकके दंतनिकल जाने पर शांतभी होजातेहैं.

बालकरोगनिश्चय–बालक बोलनेको असमर्थ होता है इसलिये उसके रोगोंको जाननेका उपाय कहते हैं, १ बालक पीडाकी, न्यूनाधिक्यताको बालकके थोडे बहुत रोनेसे जानो. थोडा रोवे. तो थोडी पीडा और बहुत रोवे तो अधिक पीडा जानो. २ बालकके जिस अंगमें हाथ लगानेसे वह रोवे या चमके उसके उसी अंगमें पीडा जानो. ३ बालक नेत्र न खोलै तो उसके मस्तकमें पीडा जानो.

४ जीभ और ओठोंको दबावे, दाँत पीसे, श्वास ले और मूठी बाँधे तो बालकके हृदयमें पीडा जानो.

५ मलमूत्रका रुकना, उल्टी आँतोंका बोलना, पीठका फूलना या नवना, पेटका फूलना या नवना और माताके स्तनोंको काटना ये लक्षण हों तो बालकके कोठेमें पीडा जानो.

६ मलमूत्रका अवरोध होकर बालक घबराके चहुँ ओर देखै तो उसके पेडू (मूत्राशय) अथवा इन्द्रिय तथा गुदादि गुह्य स्थानमें पीडा जानो.

विशेषतः–इन्द्रियोंको तथा हाथ पाँव आदि अंगोंको और समस्त संधियोंको बडे यत्नसे बारंबार देखके रोगोंका निश्चय करो. यदि बालरोगोंसे तथा उनकी चिकित्सासे अधिक ज्ञात होना होतो सुश्रुतमें देखो. ये बालरोग जाननेके उपाय माधवनिदानादि ग्रंथोंसे हमने लिखे हैं.

बालग्रहरोग ११.

बालकोंको १ स्कंदग्रह, २ स्कंदापस्मार, ३ शकुनी, ४ रेवती,

५ पूतना, ६ अंधपूतना, ७ शीतपूतना, ८ मुखमंडिका और ९ नैगमेय ये नव बालग्रह ग्रहण करके पीडित करते हैं.

ग्रहगृहीतबालकके सामान्य लक्षण--बालक चमके, डरै, रोवे, नख तथा दंतोंसे अपने तथा माताके शरीरको विदीर्ण करे, ऊपरको देखै, दाँत चाबै, कूल्हे (काखे) जँभुवाई ले, भौंहैं तथा ओठ चलावे, मुखसे बारबार फेन गिरावै, शरीर कृश, रात्रि निद्रानाश, शोथ, मलका फूटना, स्वर का बैठना, अल्प अहार और शरीरमें मांस तथा रक्तके तुल्य दुर्गंध ये लक्षण हों तो जानो कि इस बालकको उक्त नव बालग्रहोंमेंसे किसी भी बालग्रहका कोप है.

१ स्कंदग्रहगृहीत लक्षण--जिस बालकका एक नेत्र बहै, एक ओरका अंग फरकै, कँपता रहै, ऊपरको टेढा मुख करके देखै, शरीरसे रक्तकिसी बास आवे दाँत किरकिरावे शिथिलता और दूधपर अरुचि हो तो उसे स्कंदग्रहगृहीत जानो.

२ स्कंदापस्मारगृहीतलक्षण--अचेत पडाहुआ मुखसे फेन उगलै, सचेत होनेपर अत्यंत रुदन करै और शरीरसे रक्त पीबकीसी दुर्गंध आवे तो उस बालकको स्कंदापस्मारगृहीत जानो.

शकुनीग्रहगृहीतलक्षण--जो बालक अंगशिथिल, भयसे चकित, सर्व शरीर व्याधि, दाह, पाक और स्रावयुक्त फोडोंसे क्लेशित हो तो शकुनी-ग्रहगृहीत जानो.

४ रेवतीग्रहगृहीतलक्षण--जिसका शरीर फूटेहुये प्राचीन या नवीन फोडोंसे पूरित हो, जिनसे कर्दमकीसी दुर्गंधयुक्त रक्त बहै, मल फूटा हो दाह और ज्वर भी हो तो उस बालकको रेवतीग्रहगृहीत जानो.

५ पूतनाग्रहगृहीतलक्षण--जो बालक अतिसार, तृषा, ज्वर, तिरछा देखना और निद्रानाश इन लक्षणोंयुक्त हो तो उसे पूतनाग्रहगृहीत जानो.

६ अंधपूतनाग्रहगृहीतलक्षण--जो बालक वमन, ज्वर, कास, तृषा, शरीरमें मज्जा (चरबी) कीसी बास और अत्यंत रुदनयुक्त हो उसे अंध पूतनाग्रहगृहीत जानो.

शीतपूतनाग्रहगृहीतल०--जो बालक कम्प,कास, क्षीणता, नेत्ररोग, दुर्गंध, वमन और अतिसारयुक्त हो उसे शीतपूतनाग्रहगृहीत जानो.

८ मुखमंडिकाग्रहगृहीतलक्षण--जो बालक प्रसन्न मुख, सुन्दर वर्ण

उघडी हुई नसोंसे व्याप्त, बह्वाशी (बहुत खानेवाला हो) और जिसके शरीरसे मूत्रकी दुर्गंध आवे तो उसे मुखमंडिकाग्रहगृहीत जानो.

९ नैगमेयग्रहगृहीतलक्षण—जो बालक वमन, पसीना, कंठ और मुख शोष, मूर्च्छा, दुर्गंधयुक्त होकर ऊपरको देखता रहै, उसे नैगमेयग्रहगृहीत जानो और इन्हीं लक्षणोंयुक्त डाकिनीदोषवाला बालकभी होता है.

इति बालग्रहनिदानम्.

अथ द्वादशमातृकादोषनिदानम्.

१ नंदामातृकादोषलक्षण—बालकके जन्म होने पश्चात् १ दिन १ मास १ वर्षमें ज्वर होकर वह बालक अधिक रोवे या अचेत होजावे तो नंदामातृकादोष जानो.

२ शुभदामातृकादोषलक्षण—जन्मसे दूसरे दिन, दूसरे मास, दूसरे वर्ष बालकको ज्वर हो, नेत्र नहीं मूँचे शरीर कँपे, निद्राका नाश हो अत्यंत चिल्लावे और निश्चेष्ट ये लक्षण हों तो शुभदामातृकादोष जानो.

३ पूतनामातृकादोषलक्षण—तीसरे दिन, तीसरे मास, तीसरे वर्ष बालक ज्वर, कंप, भाषणरहित, मुष्टिका बांधना, चिल्लाना और आकाशकी ओर देखना इन लक्षणोंयुक्त हो तो पूतनामातृकादोष जानो.

४ मुखमंडिकादोषलक्षण—चौथे दिन, चौथे मास चौथे वर्ष, बालकके ज्वर हो, ग्रीवा न झुकै, नेत्र फटे रहैं, मुखसे नहीं बोलै, रोतारहै या अत्यंत सोवे, हाथकी मुट्ठी बंधी रक्खै, ये लक्षण हों तो मुखमंडिकामातृका दोष जानो.

५[1] पूतनामातृकादोषलक्षण—५ वें दिन, ५ वें मास, ५ वें वर्ष,बालकको ज्वर, कंप, भाषणाभाव, मुष्टिबंधन ये लक्षण हों तो पूतनामातृकादोष जानो.

६ शकुनीमातृकादोषल०—६ वें दिन, ६ वें मास, ६ वें वर्ष, बालकको ज्वर, कंप, रात्रिदिन क्लेश और उर्द्धदृष्टि ये लक्षण होंतो शकुनीमा०जानो.

७ शुष्करेवतीमातृकादोषलक्षण—७ वें दिन, ७ वें मास, ७ वें वर्ष बालकको ज्वर, गात्रकंप, मुष्टिबंधन, अधिक रुदन ये लक्षण हों शुष्करेवतीमातृकादोष जानो.

---

१ ये पूतना मातृका पंचम दिनादिमें दोषकारिणी और पूर्वोक्त पूतना तीसरे दिन आदिमें दोषकारिणी होनेसे इन दोनोंको पृथक् पृथक् जानो।

८ नानामातृकादोषल०-८ वें दिन,८वें मास, ८ वें वर्ष, बालकको ज्वर, शरीरमें दुर्गंध, आहार नाश और गात्रकंप ये लक्षण हों तो नानामा०जानो.

९ सूतिकामातृकादोषलक्षण-९वें दिन, ९ वें मास, ९ वें वर्ष, बालकको ज्वर, शरीरमें पीडा और वमन हो तो सूतिकामातृदोष जानो.

१० क्रियामातृकादोषलक्षण-१० वें दिन, १० वें मास, १० वें वर्ष, बालकको ज्वर,कंप,रुदन और मलमूत्र त्याग हो तो क्रियामातृदोष जानो.

११पिपीलिकामातृकादोषल०--११ वें दिन, ११ वें मास, ११ वें वर्ष, बालक ज्वरयुक्तहो और आहारहीन हो तो पिपीलिकामातृकादोष जानो.

१२ कामुकामातृकादोषलक्षण -१२ वें दिन, १२ वें मास, १२ वें वर्ष, बालक ज्वरयुक्त हो, हँसै, वस्त्र आदिको हाथसे फेकनेलगै, पुकारै और अधिक श्वास ले तो कामुकामातृकादोष जानो. यह रावणकृत कुमारतंत्र चक्रदत्तमें लिखा है. इति मातृकादोषः--इति बालरोगनिदानम्.

अथ मंथज्वरलक्षणम् ।

श्लोकाः-ज्वरो दाहो भ्रमो मोहो ह्यतिसारो वमिस्तृषा ॥
अनिद्रा च मुखं रक्तं तालुजिह्वा च शुष्यति ॥ १ ॥
ग्रीवादिषु च दृश्यंते स्फोटकाः सर्षपोपमाः ॥
घृताशनात्स्वेदरोधान्मंथरो जायते नृणाम् ॥ २ ॥

इत्याह क्षीरपाणिः ।

हारितोप्याह-ज्वरस्तंद्रा च वैयस्य दन्तोष्ठेषु च श्यामता ॥
घ्राणजिह्वास्यकंठेषु रक्तताक्षि च कर्बुरम् ॥ १ ॥
मुक्ताहारो गले यस्य सप्ताहाद्धार्यते न चेत् ॥
तत्रिसप्तदिनादर्वाक् स्फोटा स्युस्सर्षपोपमाः ॥ ५ ॥

भाषार्थ-अब मंथज्वरके लक्षण लिखते हैं--जिसे लोकमें मोतीझिरा, मधूरा, मोतीमाता, या मोतीज्वर भी कहते हैं. यद्यपि यह रोग ज्वरप्रकरण-मेंही लिखने योग्य था परंतु यह बालकोंकोही विशेष करके निकला करता है इसलिये बालरोगके अंतमें लिखते हैं. तरुण ज्वरमें, घी खाने

और पसीनेके रोकनेसे, ज्वर, दाह, भ्रम, मोह, अतीसार, वांति, तृषा, निद्रानाश, मुखरक्तता ,तालु, जिह्वाशोष इन सहित गलेसे नीचे नीचे उतरतेहुए सरसों समान मोतीसे दाने दृष्टि पड़ते हैं उन्हें मंथज्वर कहते हैं ऐसा क्षीरपाणिने कहा है.

और हारीत ऋषि भी कहते हैं कि ज्वर, तंद्रा, दंत ओष्टोंमें श्यामता नासिका; जिह्वा, मुख और कंठमें रक्तता और नेत्र कर्बुर इन लक्षणोंयुक्त गलेमें मोतियोंके हार सदृश दानोंकी पंक्ति निकलती है उस समय उस रोगीको ७ दिन पर्यंत मोतियोंका हार[1] पहनाना चाहिये यदि न पहनावे और स्वच्छातादि ठीक ठीक प्रयत्न न रक्खे तो उसके २१ दिनके भीतर २ अंग भरमें सरसोंके समान मोतीसे दाने होजाते हैं. ये लक्षण हों तो मंथज्वर (बडा मोतीझिरा) जानो, इसे लोकमें पानीझिरा भी कहते हैं. ये तीनों दोषोंके कोपसे होनेके कारण कठिन रोग होता है, विशेष उपद्रव न उठैं तो कष्टसाध्य और उपद्रवयुक्त होनेसे असाध्य जानो. इससे आरोग्य होना परमेश्वरके आधीन है.

इति नूतनामृतसागरे निदानखण्डे बालरोगमंथज्वरलक्षण-
निरूपणं नाम द्विचत्वारिंशस्तरंगः ॥ ४२ ॥

क्लीवरोग ।

कारणं क्लीवरोगस्य नृणां लज्जाप्रदस्य वै ॥
रामवेदे तरंगेऽस्मिन् कथ्यते च मया क्रमात् ॥ १ ॥

भाषार्थ—मनुष्योंको लज्जा प्राप्त करनेवाले क्लीब (नपुंसक, षण्ढ) रोग का इस ४३ तेंतालीसवें तरंगमें क्रमसे निदान कहते हैं.

अथ नपुंसकानाह ।

श्लोकः—आसेक्यश्च सुगन्धी च कुम्भीकश्चेर्ष्यकस्तथा ॥
अमी सशुक्रा बोद्धव्या अशुक्रः षण्ढसंज्ञकः ॥ १ ॥

इत्युक्तं भावप्रकाशे ।

भाषार्थ—अब जन्मसेही जो नपुंसक होते हैं उनको दर्शाते हैं, गर्भा-

[1] यह रोगोंमें राजाके समान है इसालिये मोतियोंका हार पहिनाना लिखा है ।

धानके समय स्त्रीका रज (रक्त) और पुरुषका वीर्य ये दोनों समान (बराबर) होनेसे गर्भ नहीं रहता है. यदि दैववशात् रह भी जावे, तो वह बालक नपुंसक (स्त्री और पुरुषसे भिन्न) होता है. जो जन्मसे नपुंसक होते हैं वे १ आसेक्य, २ सुगंधि, ३ कुंभीक, ४ ईर्ष्यक, ५ षंढ ऐसे पाँच प्रकारके होते हैं. इन्होंमें पहिले चार वीर्यसहित और पिछला (षंढ) निर्वीर्यही होता है और जो वातादि दोषोंसे तथा मनके विकारसे नपुंसक होजाते-हैं वे ७ प्रकारके होते हैं.

१ आसेक्यनपुंसकलक्षण—माता पिताके अत्यल्प (अति न्यून) रज वीर्यके कारण आसेक्यनपुंसक होता है. जोकि अपने मुखमें दूसरेसे मैथुन कराके आप उसके वीर्यको पीजाता है तब उसका लिंग चैतन्य होता है इसका दूसरा नाम मुखयोनि भी है.

२ सौगंधिकनपुंसकलक्षण—जो दुर्गंधयुक्त योनिसे उत्पन्न होता है, वह सौगंधिकनपुंसक कहाता है. वह जब योनि और लिंगको सूंघता है तब मैथुन करनेको समर्थ होता है इसका दूसरा नाम नासायोनि भी है.

३ कुंभीकनपुंसकलक्षण-जो अपने गुदामें दूसरेसे मैथुन करवानेपर स्त्रीसे मैथुन करनेको समर्थ होताहै उसे कुंभीकनपुंसक तथा गुदायोनिभी कहतेहैं.

४ ईर्ष्यकनपुंसकलक्षण—जो दूसरेको मैथुन करता देखे तब आप भी मैथुन करनेको समर्थ हो सो ईर्ष्यक या दृष्टियोनिनपुंसक कहाता है.

५ षंढनपुंसकलक्षण—जो पुरुष अज्ञानसे ऋतुदान (गर्भाधान) के समय आप नीचे और स्त्रीको ऊपर करके मैथुन करता है उसके सकाशसे उत्पन्न हुआ बालक षंढनपुंसक कहाता है जिसका स्त्रीके समान (दाढ़ी मूंछरहित) आकार और स्त्रीकीसी चेष्टा (चटकमटक) तथा दूसरेसे अपनी गुदामें मैथुन भी कराता है. इसके वीर्यका लेशमात्र भी न होनेके कारण आप किसी प्रकार मैथुन नहीं कर सक्ता, ये पांचप्रकारके नपुंसक जन्म-सेही होते हैं.

षंढास्त्रीलक्षण—ऋतुसमयमें जो स्त्री पुरुषको नीचे सुलाके आप ऊपर होके मनुष्यके समान मैथुन करे उसके गर्भसे यदि कन्या उत्पन्न हो तो वह पुरुषके सदृश बोलचाल करनेवाली और दूसरी स्त्रीको नीचे सुलाके उसकी

योनिसे योनि घसनेवाली होती है. ऐसे लक्षणोंवाली स्त्रीको षंढा कहते हैं.

अथ दोषमानसान्नपुंसकानाह ।

श्लोकः–क्लीबः स्यात्सुरताशक्तस्तद्भावः क्लैब्यमुच्यते ॥
तच्च सप्तविधं प्रोक्तं निदानं तस्य कथ्यते ॥ १ ॥

इत्युक्तं भावप्रकाशस्योत्तरखण्डे ॥

भाषार्थ–जन्मसे जो ५ प्रकारके नपुंसक होते हैं उनको पहले कह अब वातादि दोषोंसे तथा मनके बिगाड़से जो नपुंसक होते हैं उनको दरशाते हैं.

जो पुरुष मैथुन (स्त्रीसंग) करनेमें समर्थ न हो उसे क्लीब और उस क्लीबके भावको क्लैब्य कहतेहैं, अर्थात् जन्मसे नपुंसक न होके और पश्चात् नपुंसकताको प्राप्त होजावे सो क्लैब्य ७ प्रकारके होतेहैं तिसका निदान कहते हैं.

१ मानसक्लैब्यलक्षण–मैथुनके समय भय, शोक, क्रोध, लज्जा और शंका इन कारणोंसे अथवा मनको ग्लानि उत्पन्न करनेवाली स्त्रीसे मनका उत्साह (हर्ष) नष्ट होकर लिंग शिथिल पडजाताहै, इसे मानसक्लैब्य कहतेहैं.

२ पित्तजक्लैब्यलक्षण–पित्त बढकर वीर्यको नष्ट करदेता है, जिससे मनुष्यका लिंग शिथिल पडजाता है इसे पित्तजक्लैब्य कहते हैं.

३ शुक्रक्षयहेतुक क्लैब्यलक्षण–जो पुरुष अत्यन्त मैथुन करे और वाजीकरण औषधियोंका सेवन न करे सो वीर्यकी क्षीणतासे नपुंसक हो जाता है इसे शुक्रक्षयहेतुकक्लैब्य जानो.

४ लिंगरोगजक्लैब्यलक्षण–लिंगमें उपदंशादि रोग होनेसे जो नपुंसकताको प्राप्त होजाता है सो लिंगरोगजक्लैब्य कहाता है.

५ वीर्यबाहीशिराछेदजक्लैब्यलक्षण–वीर्यको बहानेवाली नसके छिद जानेसे जो नपुंसक होजाता है सो वीर्यवाहीशिराछेदजक्लैब्य कहाता है.

६ शुक्रस्तंभजक्लैब्यलक्षण–जो बलवान् पुरुष मैथुनकी इच्छासे मन चंचल होनेपर भी वीर्यको रोकके ब्रह्मचर्यमें रहता वह वीर्यनिरोधनिमित्तसे नपुंसकताको प्राप्त होता है इसे शुक्रस्तम्भजक्लैब्य कहते हैं.

७ सहजक्लैब्यलक्षण–जो जन्मसेही नपुंसक होता है सो सहजक्लैब्य कहाता है इस सहजक्लैब्यके ५ भेद प्रथम कह चुके हैं.

असाध्यक्लैब्यलक्षण–वीर्यवाही शिरा छेदजक्लैब्य और सहजक्लैब्य ये दोनों असाध्य और शेषक्लैब्य कष्टसाध्य जानो. यह नपुंसकरोगका निदान हमने भावप्रकाशसे लिखा है.

इति नूतनामृतसागरे निदानखण्डे नपुंकरोगलक्षणनिरूपणं नाम त्रिचत्वारिंशस्तरंगः ॥ ४३ ॥

अथ स्थावर जंगमविषनिदानम् ।

द्विविधस्यविषस्यात्र स्थावरस्य चरस्य च ॥
तरंगे सिंधुवेदे हि निदानं कथ्यते मया ॥ १ ॥

भाषार्थ–स्थावर और जंगम विषका इस ४४ चवालीसवें अंतिम तरंगमें निदान कहते हैं १.

श्लोकः–स्थावरं जंगमं चैव द्विविधं विषमुच्यते ॥
मूलात्मकं तदाद्यं स्यात्परं सर्पादिसंभवम् ॥ १ ॥

भाषार्थ–अब विषका निदान लिखते हैं, स्थावर और जंगम भेदसे विष दो प्रकारका होता है. जिसमें वृक्षादिसे उत्पन्न हो सो स्थावर विष और सर्पादिजनित जंगम विष कहाता है १.

१ स्थावरविषस्थितिः–स्थावर विष १ वृक्षकी जड़ २ पत्र ३ पुष्प ४ फल ५ छाल ६ दुग्ध ७ सार ८ रस (गोंद) ९ धातुमात्र (हरतालादि) और कन्द (सिंगी, मोहरा आदि) में रहता है.

२ जंगमविषस्थितिः–जंगमविष १ मनुष्योंकी दृष्टि २ सर्पादिकी श्वास तथा हाड़ ३श्वान, शृगाल आदिकी दाढ़ ४सिंह व्याघ्रादिके नख, तथा रोम ५ विषहरा (छिपकली) आदिके मल मूत्र ६ बदर आदिके वीर्य ७ बावरे (पागल) श्वान तथा शृगालादिकी लार ८उष्ण वस्तुखानेवाली स्त्रीकी योनि ९ उष्ण वस्तु खानेवाले मनुष्यकी गुदा १० नकुल (मुंगसे) तथा मछलीके पित्ते ११ भँवरे आदिके डंक और १२ मूषक (चूहा) के दाँतमें रहता है.

स्थावरविषसामान्यलक्षण–हिचकी, दन्त खट्टे होना, गला घुटना, वमन, डैनोंका गिरना, अरुचि, श्वास और मूर्च्छा ये उपद्रव हों तो स्थावरविष संसर्ग जानो.

स्थावरविषभक्षणविशेष लक्षण।

१ मूलविषलक्षण–विषहरे मूल (कनेर आदिकी जड़) भक्षणसे देहमें ऐंठन, प्रलाप और मोह होता है.

२ पत्रविषल०–विषहरे पत्र भक्षणसे, जमुहाई, कंप, श्वास और मोह होता है.

३ पुष्पविषलक्षण–विषहरे पुष्प भक्षणसे वमन, आध्मान और श्वास होता है.

४ फलविषलक्षण–विषहरे फल भक्षणसे मुखपर शोथ, दाह और अन्न द्रोह होता है.

५ त्वचा ६ सार ७ रसविषकेलक्षण–विषहरे त्वचा, सार और रस भक्षणसे, मुखदुर्गंध, शरीरमें खरखराहट, शिरमें पीडा और कफ गिरता है.

८ दूधविषलक्षण–विषहरे वृक्षके दूध भक्षणसे, मुखसे फेनोंका गिरना, मल फूटना और जिह्वाका ऐंठना ये उपद्रव होते हैं.

९ धातुविषलक्षण–अशुद्ध हरतालादि धातु भक्षणसे, हृदयमें पीडा मूर्च्छा और तालुमें दाह ये उपद्रव होते हैं ये पूर्वोक्त सब विष कुछकाल पर्यंत क्लेश देके नष्ट करते हैं.

१० कन्दविषलक्षण–कन्दविष (अशुद्ध बच्छनाग, सिंगी मोहरा) आदिके भक्षणसे हरतालादि धातु विषभक्षण समान उपद्रव होकर वह पुरुष तत्कालही मरजाता है.

विशेषतः–उक्त स्थावर विषको वैद्यक शास्त्रोक्त रीतिसे शुद्ध करके खिलाया जावे तो अमृतसमान गुण कराता है.

१ विषबल–विशमें रूखापन होनेसे यह बुद्धिको बिगाड़ता और सर्व शरीरके बंधनोंको ढीले कर देता है.

२ विषमें सूक्ष्मता होनेसे शरीरके अंग अंगपर बढ़ जाता है.

३ विषमें प्रबलता होनेसे यह स्त्रीसंग अधिक करता है.

४ विषमें नाशक शक्ति होनेसे यह शरीरके वातादि दोषोंको, सप्त धातु और मलको बिगाड देता है.

५ विषमें शीघ्रता शक्ति होनेसे यह शरीरको क्लेश देता है.

१ विषयुक्त शस्त्रप्रहारलक्षण—जिस मनुष्यका घाव शस्त्रप्रहार होतेही पकजावे और उसमेंसे काला रक्त बारंबार निकले वह घाव सर्वदा भीगा-हुआ रहे तथा उस घावसे मांस गल गलकर गिरनेलगे और उस प्रहार-युक्त मनुष्यको तृषा, मूर्च्छा, ज्वर तथा दाह होवें तो जानलो कि विषमें बुझाया हुआ शस्त्र लगा है.

विशेषतः—यदि कोई शत्रु साधारण घावपर, भी विष किसी प्रकारसे डालदे तोभी यह लक्षण होजाते हैं इसलिये घावका यत्न अपने विश्वासी पुरुषसेही कराओ.

अथ जंगमविषविशेषलक्षण ।

प्रथम सर्पके काटनेके विषका लक्षण लिखते हैं. सर्प भी कई प्रकारके होते हैं जिनको अग्रलिखित लक्षणोंसे जानो.

श्लोकः—वातपित्तकफात्मानो भोगिमंडिलराजिलाः ॥
यथाक्रमं समाख्याता द्व्यन्तराद्वंद्वरूपिणः ॥ १ ॥

भाषार्थ—१ फणवाले सर्पोंको भोगी जानो ये वातप्रकृतिवाले होते हैं.

२ जिन सर्पोंके अंगपर मंडल होते हैं उनको मंडली जानो ये पित्त-प्रकृतिवाले होते हैं.

३ जिन सर्पोंके शरीरपर रेखा होतीहैं उनको राजिल सर्प जानो. ये कफप्रकृतिवाले होते हैं.

इसीप्रकार माता पिताके जातिविपर्ययसे जो संकर (दोगले) जा-तिके सर्प होते हैं वे द्वंद्वज कहाते हैं.

१ भोगीसर्पके काटनेका लक्षण—भोगी सर्प जहाँ काटता है वहाँ काला चिह्न होकर उसको सर्व वातरोग उत्पन्न होते हैं.

२ मंडलीसर्प काटनेका लक्षण—डंश, सूजाहुआ, पीला, कोमल और पित्तविकारकारक हो तो जानो कि इसे मण्डलीसर्पने काटा है.

३ राजिलसर्प काटनेका लक्षण—स्थिर, शोथयुक्त, चिकना, फेनके सदृश श्वेत, आर्द्र, रक्तयुक्त डंश हों और कफके विकार दृष्टिपड़ें तो राजि-लसर्प काटा जानो.

सर्प काटेके असाध्यलक्षण—पीपलके नीचे, देवमंदिर, श्मशान, चौमार्ग

बांबीपर तथा संध्यासमयमें, भरणी, मघा, आर्द्रा, श्लेषा, मूल, कृत्तिका इन नक्षत्रोंमें पंचमी आदि तिथिमें और शरीरके मर्मस्थानाम सर्प काटे तो असाध्य होनेसे वह मनुष्य बचना हरिहर है.

यदि अजीर्ण, उष्णता, वाव, प्रमेह, क्षीणता और क्षुधायुक्त मनुष्योंको बालक, वृद्ध, गर्भवती स्त्रीको तथा जिनके मुख, इंद्रिय और गुदासे रुधिर गिरता हो ऐसेको सर्प काटे तो असाध्य जानकर यत्न मत करो ये नहीं बचते.

दूषी विषभक्षण लक्षण--दूषीविष भक्षणसे मनुष्य मूर्च्छा, भ्रम और वमनादिद्वारा क्लेशित होकर बचजाता है, अर्थात् मरता नहीं.

दूषीविषलक्षण-- श्लोकः ।

जीर्णं विषघ्नौषधिभिर्हतं वा दावाग्निवातातपशोषितं वा ॥
स्वभावतो वा गुणविप्रहीनं विषं हि दूषीविषतामुपैति॥१ ॥

भाषार्थ--पुराना अथवा विषनाशक औषधियोंसे तेजहीन या दावाग्नि, धूप पवनसे सूखा हुआ अथवा स्वभावसेही अपने गुणहीन होजावे, सो दूषीविष कहाता है इसमें अल्प पराक्रम होनेसे यह मनुष्यको मार नहीं सक्ता.

१ दूषीविष मूषकदष्ट लक्षण--मूषकके काटनेसे तत्क्षणही उस स्थानसे रक्तका बहाव, शरीरमें पांडुवर्णकी मंडल, ज्वर अरुचि, रोमांच और दाह ये लक्षण हों तो दूषीविष मूषक काटा जानो, इसके काटनेसे प्राणहानि नहीं होती.

२ प्राणहर मूषकदष्टलक्षण--मूर्च्छा, शरीरमें शोथ, कुरूपता, उबकाई, बधिरता, ज्वर शरीरमें भारीपन, लारका बहाव और रक्तकी वांति (वमन) हो तो प्राणहर मूषकके काटनेका विष जानो. इन लक्षणोंयुक्त रोगी असाध्य होता है.

३ कृकलासदष्टलक्षण--जहाँ काटे वहाँ काला, धूसर, या अनेक रंगका डंश मोह और मलका फूटना हो तो कृकलास (किरकांट, गिरगिट) के काटनेका विष जानो.

४ वृश्चिकदष्टलक्षण--जिसके डंक मारतेही अंगारसी जलनेलगे, तदनंतर ऊपरको विदीर्ण करता हुआ चढ़के बहुतकाल पश्चात् डंकहीपर आके ठहरजावे तो वृश्चिक (बिच्छू) के काटनेका विष जानो.

असाध्यलक्षण–जिसके हृदय, नाक और जीभमें बिच्छू काटे और वहाँसे मांस गिरने लगे तथा अत्यंत पीडा हो तो असाध्य जानो.

५ मेढ़कदष्टलक्षण–जहाँ काटे वहाँ पीडायुक्त शोथ, तृषा, निद्राधिकता और वमन हो तो विषहरे मेढ़कने काटा जानो.

६ नक्रदष्टलक्षण–शरीरमें दाह और दंशस्थानपर पीडायुक्त शोथ हो तो विषहरे मगरका काटा हुआ जानो.

७ जलौकादष्टलक्षण–दंशस्थानपर कंडूयुक्तशोथ ज्वर और मूर्च्छा हो तो जलौका (जोंक) के,काटनेका विष जानो.

८ पल्लीदष्टलक्षण–दंशस्थानपर दाह तथा पीडायुक्त शोथ होकर शरीरसे पसीना निकले तो पल्ली (छिपकली, विषमरा) के काटनेका विष जानो.

९ शतपददष्टलक्षण–कनखजूरेके काटनेसे दंशमें, पसीना, पीडा और दाह होती है.

१० मशकदष्टलक्षण–दंशस्थानपर खाज, शोथ और मंद मंद पीडा हो तो मच्छरने काटा जानो.

११ वनमशकदष्टलक्षण–विषहरे वनमच्छरके काटनेसे दंशस्थानपर पित्तीके समान लाल घाव सदृश, गहरी पीडायुक्त मंडल होता है.

१२ सविषमक्षिकादष्टलक्षण–विषहरी मक्खी या भौंर मक्खीके काटनेसे दंशस्थानपर दाहयुक्त काला व्रण, ज्वर, मूर्च्छा होती है, इसका काटा हुआ मनुष्य मरणप्राय अरिष्ट पाता है या मरजाता है.

१३ सिंहव्याघ्रादिदष्टलक्षण–सिंहव्याघ्रादिके काटनेसे दंशस्थानमें घाव पककर उसमेंसे पीबका बहाव और ज्वर होता है.

१४ उन्मत्त श्वानादिदष्टलक्षण–पागल कुत्ते तथा स्यारके काटनेसे उस दंशस्थानसे श्याम रक्तका बहाव, हृदय तथा शिरमें पीडा, ज्वर, अंगजकडाव, तृषा, वर्णविपर्यय, चक्र, दाह दंशस्थानपर खाज, शोथ, पीडा और पाकयुक्त गांठ तथा, फोडे होजाते हैं.

उन्मत्त श्वानादि परीक्षा–जिस श्वान या शृगालके मुखसे लार गिरे अंध तथा बधिर होकर चहुँओर भागता फिरे पूँछ सीधी होजावे जिसकी ठुड्डी गर्दन, शिर अधिक पीडित ... नीचेकोही रहै, तो उसे उन्मत्त (पागल, बावरा, दिवाना) ...

श्वानदष्टअसाध्यलक्षण—जिसको पागल कुत्ता काटे, उस पुरुषको जल काँच, तैलादिमें कुत्ता दीख पडे, उसके देखतेही पुकारनेलगे, श्वानकीसी चेष्टा करनेलगे और पानीसे डरे, तो जानो कि, यह रोगी असाध्यहै नहीं बचेगा.

विषभक्षण करनेवालेकी परीक्षा--मुखकी चेष्टा तथा वाणी बदल जावे, प्रश्नका उत्तर न दे सके, जिसके मुखसे ठीक ठीक वाक्य न निकले, इधर ऊधर देखनेलगे, पृथ्वीको अपनी अंगुलीसे खोदनेलगे. घरके बाहर निकलना चाहे, हँसने लगे और चित्त घबराय जावे इत्यादि लक्षण जिसमें दृष्टि पडें उसे जानलो कि इस मनुष्यने अवश्य विष (ज़हर) खाया है.

इति नूतनामृतसागरे निदानखण्डे स्थावरजंगमविषलक्षणनिरूपणं नाम चतुश्चत्वारिंशस्तरंगः ॥ ४४ ॥

सकलरोगनिर्णययुतोऽयं निदानखण्डःसमाप्तः ॥ ३ ॥

सूचना वाचक—महात्मागण ।

विदितहो कि, नूतनामृतसागरके इस चतुर्थ खण्डमें निदानखण्डोक्त समस्त रोगोंकी चिकित्सा (रोगकी नाशकारिणी क्रिया) भली भाँति विस्तारपूर्वक वर्णन की गई हैं, इसीलिये इसे " चिकित्साखण्ड " संज्ञा दी गई है. इस खण्डमें ४४ तरंग हैं, जिनमेंसे जिन जिन तरंगोंमें जिन जिन रोगोंकी चिकित्सा उल्लिखित की गई है, तिनका व्योरा तो आप तरंगके शीर्ष श्लोकसे ज्ञात करही लेवेंगे, परन्तु विशेषतः यह कि जहां कहीं श्लोकमें आदि तथा प्रभृति शब्द भी योजित दृष्टिगोचर हों तहाँ स्वयं विचार लीजियेगा कि, इस तरंगमें श्लोककथित रोगोंसे भी कुछ अधिक रोगोंकी चिकित्सा दीगई हैं. किंबहुनोल्लेखेन.

श्लोकः ।

शंखं चक्रं जलौकां दधदमृतघटं चापि दोर्भिश्चतुर्भिः
सूक्ष्मस्वच्छातिहृद्यांशुकपरिविलसन्माल्यमम्भोजनेत्रम् ।
कालांभोदोज्ज्वलांगंकटितटविलसच्चारुपीताम्बराढ्यं
वन्दे धन्वंतरिं तं निखिलगदवनप्रौढदावाग्निलीलम् ॥ १

धन्वतरिजीका चित्र ३. औषधालय चित्र ४.

श्रीः ।

चिकित्साखण्डः ४.

तत्रादौ चिकित्सालक्षणम् ।

या क्रिया व्याधिहरणी सा चिकित्सा निगद्यते ।
दोषधातुमलानां या साम्यकृत्सैव रोगहृत् ॥ १ ॥

इत्युक्तं भावप्रकाशे.

भाषार्थ—जो क्रिया व्याधिको[1] हरण करनेवाली हो सो चिकित्सा कहाती है क्योंकि जो चिकित्सा वात, पित्त, कफ तथा सप्तधातु और मलको यथा योग्य करनेवाली होगी वही रोगको दूर करेगी (ऐसा भावप्रकाशमें) लिखाहै.

पृथग्दोषैःप्रभूतानां ज्वराणां हि यथाक्रमात ॥
तरंगे प्रथमे चात्र चिकित्सालिख्यते मया ॥ १ ॥

भाषार्थ—वातादि पृथक् पृथक् दोषोंसे उत्पन्न हुए जो वात, पित्त, कफ, ज्वर तिनकी चिकित्सा इस पहिले तरंगम यथाक्रमसे लिखते हैं.

ज्वरयत्न ।

अब प्रथम ज्वरादि रोगोंके यत्न अमृतसागर मूलग्रंथमें लिखे अनुसार दरशाते हैं.

सामान्यज्वरयत्न १—उष्ण जल पिलाना, हलके लंघन कराना, मलके बलानुसार हलका पथ्य कराना,वायुविबंधक[2] स्थानमें रखना, उत्तम महीन वस्त्रपर सुलाना, ज्वर आनेसे तीन दिनतक कडुवी, कसैली औषध तथा विरेचन (जुलाब) न देना पश्चात " २ मासे सोंठ और १ मासे धनियांका " क्काथ बनाकर पिलावे तो सामान्यज्वर दूर होकर भूँख लगेगी.

वातज्वरयत्न १—वातज्वरवालोंको लंघन मत कराओ, पर हलकी वस्तु खानेको दो और चिरायता, नागरमोथा, नेत्रवाला (कमलतंतु), दोनों

---

१ वात, पित्त कफसे जो पीडा उत्पन्नहो सो व्याधि और मानसीचिंताको आधि कहते हैं ।

२ जिस घरमें वायुका समावेश अधिक न हो ।

कटाई, गिलोय (गुर्वेल) और सोंठ ये सब औषध छदाम छदामभर लेकर क्वाथ बनावो और ५ दिनतक पिलाओ तो वातज्वर दूर होगा.

अथवा २–सोंठ, नीमकी छाल, धमासा, पाठा, कचूर, अडूसा, अरंडीकी जड़ और पोहकरमूल छदाम छदामभर लेके क्वाथ बनाकर दो.

तथा ३–छोटी पीपल और शुद्ध किया हुआ सिंगीमुहरा पानीमें खरल करके आधीरत्ती प्रमाणकी गोलियाँ बनाके नित्य १ गोली ५ दिनतक खिलाओ यह हिंगलेश्वर रस है.

तथा ४–१ छदामभर शतावरी और १छदामभर गुर्वेलका क्वाथ बनाके उसीमें छदामभर पुराना गुड़ मिलाओ और पाँच दिनतक पिलाओ,

तथा ५–बडादाख, पीपल, पित्तपापडा और सौंफ ये सब छदाम छदामभर लो और क्वाथ बनाकर पिलाओ.

उक्त पाँच उपायोंमेंसे एक एक यत्नही वातज्वरको नष्ट कर सक्ता है.

२ पित्तज्वरयत्न निम्नलिखित २१ यत्नसे पित्तज्वर नष्ट होगा.

यत्न १–नागरमोथा, धमासा, पित्तपाडा, कमलतंतु, चिरायता और नीमकी छाल छदाम छदामभरका क्वाथ बनाकर पिलाओ.

तथा २–छदाभर खैरसारका चूर्ण, २ मासे कुटकी और २ टंक मिश्रीका चूर्ण बनाके सेवन करो.

तथा ३–१ टंक चंदन, १ टंक खश और दो पैसेभर मिश्रीका चूर्ण बनाके ४ पैसेभर फालसेके रसमें डालके पिओ, यह त्रिशत ग्रंथमें लिखा है

तथा ४–चावलकी खीलोंके पानीमें मिश्री डालकर पिओ.

तथा ५ कुटकी, किरबारेकी गिरी, नागरमोथा, हर्रकी छाल और पित्तपापडा छदाम छदामभरका क्वाथ बनाकर पिओ तो उक्त ज्वर, प्यास, दाह प्रलाप (बकवाद), मूर्च्छा सर्व नाश होवें. यह वैद्य विनोदमें लिखा हैं.

तथा ६–गेहूँका आटा और मिश्री पानीमें डालकर पकाओ; पूर्ण परिपक्व होनेसे उतारके ठंढा होनेके पश्चात् पीजाओ, यह हरीरा [illegible]ता है.

तथा ७–मीठे अनारका शर्बत (रस) पीओ तो दाह भी शांत होगी

तथा ८–यदि केवल दाहरूपी ज्वर हो तो अति सुन्दर, चतुर, स्वरूपवती, पुष्पहार तथा महीन वस्त्र धारिणी, श्यामा (१६ वर्षकी अवस्थावाली)स्त्रीसे मैथुन करो. योंहीं तोता, मैना, किम्बा बालककी मधुरवाणी सुनना, पुष्प-

वाटिकाकी वायु सेवन करना, पुष्पहार तथा कमलपुष्पादि धारण करना कपूरादि सुगन्धित पदार्थ सूंघना मनोहर शृंगाररसयुक्त कथा सुनना, सुन्दर स्त्रियोंके समीप वार्तालाप करना और जलके फुहारोंके समीप बैठना इत्यादि उपायोंसे भी दाहज्वर नाश होकर शीतलता होती है.

तथा ९–फालसेके रसमें सेंधानमक मिलाकर पिओ.

तथा १०–मूँगकी दालके पानीमें मिश्री डालकर पिओ.

तथा ११–दाखके रसमें मिश्री मिलाकर पिओ.

तथा १२ पित्तपापड़ा, नागरमोथा और चिरायता ये ताना ५ टक लेके क्वाथ बनाकर ३ दिन पिओ. ये सब यत्न ज्वरतिमिरभास्करमें लिखे हैं.

तथा १३–रक्तचंदन, पद्मकाष्ठ, धनियां, गिलोय और नीमकी छाल छदाम छदामभर लेकर क्वाथ बनाकर ५ दिन पिओ तो पित्तज्वरके व्यतिरिक्त दाह, प्यास और वमन भी नष्ट होवें. यह यत्न लोलिम्बराजमें लिखा है.

तथा १४–यदि पित्तज्वर अति दाहयुक्त हो तो रोगीको कमलपुष्पशय्यापर सुलाओ.

तथा १५–अथवा केलेके कोमल पत्रोंपर सुलाओ.

तथा १६–अथवा–उत्तम पुष्पवाटिकामें रक्खो.

तथा १७–अथवा खसकी टट्टियोंकी शीतलतामें रक्खो.

तथा १८–अथवा गुलाबका तेल मर्दन करो.

तथा १९–अथवा १०० या १००० वारके धोयेहुएघृतका मर्दनकरो.

तथा२०–नीमके कोमल पत्तोंको पीसके पानी डालो, इस जलको मट्ठाकी रीतिसे मंथन करो तब इसमें जो फेन निकलेगा उस फेनको रोगीके शरीरमें मर्दन करो.

तथा २१–किम्वा उक्त फेनमेंही वहेडेकी बीजीको पीसके शरीरपर लेप करो ये यत्न वैद्यजीवनमें लिखे हैं.

उपरोक्त २१ इक्कीसों उपायोंमेंसे एक एक भी पित्तज्वरकी शान्तिके लिये विशेष उपकारी होसक्ता है. इति पित्तज्वरयत्न.

३ कफज्वरयत्न–निम्न लिखित ९ उपायोंसे कफज्वर नाश होगा.

कफज्वरयत्न १–नीमकी छाल, सोंठ, गिलोय, पसरकटाली, पोहकर

मूल, कुटकी, कचूर, अडूसा, कायफल, छोटी पीपल और शतावरी छदाम छदामभर लेके, क्वाथ बनाकर ७ सात दिन पिओ.

तथा २ कायफल, पीपल, काकडासिंगी और पोहकरमूलका चूर्ण छदाम छदामभर लेके मधुमें मिलाके चाटो. वैद्यविनोदमें लिखा है कि, उक्तौषधसे श्वास और खांसीके विकार भी नष्ट होंगे.

तथा ३–सेरभर पानी औटाते हुए तीन पाव पीनेको रखकर पीनेको दो. बल देखकर लंघन करावो. लंघनके पश्चात् जब लंघन तोड़ो तब मूंग मोठ या कुलथीकी दालका पानी पिलाओ. दिनको मत सोने दो. पथ्यके साथही बिजौरेकी केशर (खट्टीकली) में सेंधानमक मिलाकर खिलाओ.

तथा ४–सोंठ, काली मिर्च, छोटी पीपल, चित्रक, पीपलामूल, श्वेत-जीरा, श्यामजीरा, लौंग इलायची, सेकी हुई हींग, अजवायन और अजमोद् बराबर बराबर लेके चूर्ण बनाओ इस चूर्णकी छदाम छदामभरकी मात्रा उष्ण जलके साथ खिलाओ तो कफज्वर नाश होकर इसके व्यति-रिक्त अन्न पाचन होकर भूख बढ़ेगी.

तथा ५–कटियाली, गिलोय, सोंठ, पोहकरमूल और अडूसा धेले धेले भर लेके क्वाथ बनाकर सातदिन पिओ.

तथा६–कटियाली, पीपल, काकडासिंगी, गिलोय और अडूसा दो दो टंक लेके क्वाथ बनाओ और इसे १० दिन पर्यन्त पिओ.

तथा ७–केवल अडूसेका क्वाथ छदामभरकी मात्रासे १० दिन पर्यंत पिओ.

तथा ८–शीतभंजीररस २ रत्तीको अडूसा और सोंठके काढेके अनुपानसे ७ सातदिन पिओ.

शीतभंजीररसविधान–शोधा हुआ पारा ५ टंक, शोधा हुआ गंधक ५ टंक, तांबेश्वर ५ टंक, शुद्ध किया हुआ सिंगीमुहरा २ टंक, सोंठ २ टंक, मिर्च ५ टंक, पीपल ५ टंक और शुद्ध सुहागा ५ टंक इन सबको बारीक पीसके चित्रकके रसकी ३ पुट दो, फिर अद्रखके रसकी ७ पुट, तदनंतर पानके रसकी३पुट देके १ रत्ती प्रमाणकी गोलियां बनावे इसेही शीतभंजीर

रस कहते हैं. उक्त विकारके व्यतिरिक्त वादी और शीतांगके रोगोंको भी नाशकारी है.

उक्त उपायोंसे कफज्वरनष्ट होजावेगा.

इति नूतनामृतसागरे चिकित्साखंडे वातादिज्वरत्रययत्ननिरूपणं नाम प्रथमस्तरंगः ॥ १ ॥

द्वन्द्वजज्वर ।

द्वन्द्वदोषैःप्रसूतानां ज्वराणां हि यथाक्रमात् ॥
तरंगे द्वितीये चात्र चिकित्सा लिख्यते मया ॥ २ ॥

भाषार्थ—वातादि दो दो दोषोंसे उत्पन्न हुए जो द्वन्द्वज (वातपित्त, वातकफ और पित्तकफ) ज्वर तिनका इस दूसरे तरंगमें यथाक्रमसे यत्न लिखते हैं.

४ वातपित्तज्वरयत्न—निम्नोपाय उक्त रोगकी निवृत्ति हेतु करो.

तथा १—खरेटी (बलाबल), गिलोय, एरंडकी जड़, नागरमोथा, पद्म काष्ठ, भारंगी, छोटी पीपल, खश और रक्तचंदन पाँच पाँच मासे लेके क्वाथ बनाओ छदाम छदामभर १२ दिवसतक पिओ.

तथा २—गिलोय, पित्तपापड़ा, चिरायता, नागरमोथा, और सोंठको पीसकर चूर्ण बनावे इस चूर्णमें प्रतिदिन छदामभरका क्वाथ बनाके १२ बारह दिन पर्यंत पिओ. यह पंचभद्र क्वाथ कहाता है.

तथा ३—गिलोय, पित्तपापड़ा, सोंठ, नागरमोथा,अडूसा इनको समान भाग लेके चूर्ण बनालो. इस चूर्णमेंसे छदामभरका क्वाथ बनाकर पिओ.

तथा ४—पटोल, नीमकी छाल, गिलोय और कुटकी समान भागले चूर्ण बनाओ और छदामभर चूर्णका क्वाथ बनाकर १२ दिन पिलाओ.

तथा ५—महुआ, मुलेठी, लोध, गौरीसर(हंसराज), नागरमोथा और किरवारेकी गिरी (गूदा) समान भाग लेके छदामभरका क्वाथ बनाकर १२ दिन पर्यन्त पीओ.

तथा ६—चावलोंकी खीलोंमें मिश्री और मधु मिलाकर १२ दिन पिलाओ.

तथा ७—सोंठ, मिर्च, पीपल परस्पर तुल्य और इन्हीं तीनोंके तुल्य

मिश्रीका चूर्ण बनाकर प्रतिदिन अधेलेभर चूर्ण मधुके साथ मिलाकर १० दिनपर्यंत सेवन करे.

उक्त ७–उपायोंसे वातपित्तज्वर शांत होजावेगा.

५ वातकफज्वरयत्न १–इस रोगवालेको १० लंघन कराओ. औटाया हुआ जल (जोकि सेरभरका आधासेर रहा हो) पीनेको दो १० दिनके पश्चात् चिरायता, नागरमोथा, गिलोय और सोंठ वराबरका चूर्ण बनाके इसमेंसे छदामभरका क्वाथ बनाकर पिलाओ, फिर पथ्य दो और जो इस ज्वरवालेको कुछ उपद्रव उत्पन्न न हो तो ३ दिन पश्चात् फिरसे यह क्वाथ दो.

तथा २–कायफल, देवदारु, भारंगी,नागरमोथा, धनियां, पित्तपापड़ हरेंकी छाल,शुंठी और कंणाचकी जड समान भागके चूर्णमेंसे २ टंकभरका क्वाथ पिला ओ तो वातकफज्वर खांसी, श्वास और सूजन भी नाश होगी.

तथा ३–नागरमोथा, पित्तपापडा, गिलोय, सोंठ और धमासा तुल्य लेकर चूर्ण करो इसमेंसे छदाम छदामभरका क्वाथ १० दिनतक पियो तो वातकफज्वर, उलटी, दाह, मुखशोथ भी दूर होंगे.

तथा ४–कटियाली, शुंठी, गिलोय और पीपल समान लेके चूर्ण करो इसमेंसे छदामभरका क्वाथ बनाकर पियो.

तथा ५–शालपर्णी (बूटी विशेष), पृष्ठपर्णी (बूटी विशेष), दोनों कटोंई गोखरू, वेलकी गिरी, अरणी, अरलू, कुम्भेर और पांठा इनका क्वाथ पीपलयुक्त करके १० दिवसपर्यन्त प्रतिदिन पिलाओ.

तथा ६–यदि उक्त रोगीका मुख और तालू सूखकरके जिह्वा कठोर पडजावे तो विजौरेकी कलीमें सेंधानमक और काली मिर्च मिलाकर जिह्वाको लेप करो तो उक्त विकारको नष्ट करेगी.

तथा चिरायता, गिलोय, देवदारू, कायफल और बचको समान लेके चूर्ण करो और इसमेंसे छदामभर चूरेका क्वाथ बनाकर पिलाओ. ये सब यत्न ज्वरतिमिर भास्करमें लिखे हैं.

---

१ केवाँच या बहुकंटकी भी कहेत है। २ ऊंटकटाई और पसरकटाई। ३ इसे संस्कृतमें अग्निमन्थ और श्रीपर्णी भी कहते हैं। ४ इसे " अलाम्बु तथा आलक " कहते हैं। ५ इन दशों औषधियोंके समूहको " दशमूल " सज्ञा दी है।

८ कफपित्तज्वरयत्न–इस रोगवालेको १४ लंघन कराके उष्ण जल (जोकिसेरभरका औटातेहुए आधपावरहजावे) पिलाओ और यह क्वाथदो

तथा १–गिलोय रक्तचंदन, सोंठ, कमलतंतु, कायफल और दारुहल्दी, समान भागके छदामभर चूरेका क्वाथ १० दिनतक पिलाओ.

तथा २–नीमकीछाल,[१] रक्तचंदन, पद्मकाष्ठ, गिलोय और धनियांका क्वाथ १० दिवस पर्यन्त दो तो कफ, पित्तज्वर, दाह, प्यास, उल्टी भी नाश होगी. यह लोलिम्बराजमें लिखा है.

तथा ३–गिलोय, इन्द्रयव, नीमकी छाल, पटोल, कुटकी, सोंठ, अगरचंदन, नागरमोथा और पीपलको तुल्योतुल्य लेके चूर्ण बनाओ उसमेंसे ४ मासे प्रतिदिवस अष्टावशेष जलके संयोगसे पिलाओ तो कफ, पित्तज्वर, खांसी, दाह, अरुचि और हृदयपीडा भी दूर होगी.

तथा ४–गिलोय, दोनों कटियाली, दारुहल्दी, पीपल, अडूसा, पटोल, नीमकी छाल और चिरायतके चूर्णमेंसे प्रतिदिन छदामभरका क्वाथ प्रातःकाल तथा सायंकाल १० दिवस पिलाओ.

तथा ५–दाख, किरवारेकी गिरी, धनियां, कुटकी, नागरमोथा, पीपलामूल, सोंठ और पीपलके चूर्णमेंसे छदामभरका क्वाथ दोनों समय दश दिनतक पिलाओ तो कफ पित्तज्वर, शूल, भ्रम, मूर्च्छा, अरुचि और उल्टी ये सब दूर हों.

तथा६–अथवा यह रस दो.५ टंक हिंगुलसे निकालाहुआ शुद्ध पारा ५ टंक शोधा हुआ गंधक, ५ टंक कालीमिर्च और ५ टंक शुद्ध सुहागा, इन सबोंको महीन पीसकर अद्रखके रसकी ७ पुट और पानके रसकी ७ पुट देकर १ रत्तीप्रमाणकी गोली बनालो, इनमें १ गोली प्रातःकाल और १ संध्याकालके समय ७ दिवसपर्यंत दो उक्त प्रत्येक यत्न कफ, पित्तज्वर नाशक होगा.

इति नूतनामृतसागरे चिकित्साखण्डे वातादिद्वन्द्वजज्वरयत्न निरूपणं नाम द्वितीयस्तरंगः ॥ २ ॥

---

१ कड़वी तुरई जिसे जंगली तुरई भी कहते हैं इसका स्वाद महा कटु है।

जो जल अपने शीतल रूपकी अपेक्षा औटानेपर १ अष्टमांश रहजावे (जैसे १ सेरका आधापाव) अष्टावशेष कहाता है।

सन्निपातज्वर।

गुणदोषैः प्रभूतस्य सन्निपातज्वरस्य हि॥
तरंगे तृतीये चात्र चिकित्सा लिख्यते मया॥ ३॥

भाषार्थ–त्रिदोषोंसे उत्पन्न हुआ जो सन्निपातज्वर तिसकी चिकित्सा इस तीसरे तरंगमें लिखते हैं.

स्थितिवर्णन–उक्त रोगसे दुःखित पुरुषके लिये उत्तम स्वच्छ कूपके जलमें १ टंक सोंठ डालके औटाओ. जब वह जल औटकर आधा रहजावे तब छानकर रखलो, जब वह रोगी जल चाहे तब यही दो. परन्तु दिनका औटाया हुआ जल रातको और रातको औटाया हुआ दिनको मत पिलाओ अर्थात् रातका रातको और दिनका दिनहीको पिलाना चाहिये वायु विबंधक स्थानमें रक्खो. उसके पास १ दो चतुर मनुष्योंको सदैव रक्खो. इस रोगीको शीतल यत्न कदापि न करो और मणिधारण, दान, हवन, शिवाभिषेक तथा मंत्रजपादि सदैवावश्य कराओ, फिर निम्नलिखित यत्न करो.

सन्निपातयत्न १-कायफल, पीपलामूल, इन्द्रयव, भारंगी, सोंठ, चिरायता, कालीमिर्च, पीपल, काकडासिंगी, पोहकरमूल, रास्ना, दोनों कटाई, अजमोदा, छठीली, वच, पाठ और चव्य समान समानका क्वाथ बनाकर पिलाओ तो सान्निपातके व्यतिरिक्त वस्तु अज्ञान (किसी वस्तुका ज्ञान न रहना) पसीनाकी अधिकाई, शीत, उदरशूल, अफरा, वात और कफके सर्व रोग इस क्वाथसे नष्ट होंगे.

तथा २–अर्कमूल जवासा (यवास किम्वा दुरालभा भी कहाता है) चिरायता, देवदारु, रास्ना, (राठ तथा एलापर्णी भी कहाता है) निर्गुंणी वच, अर्णी, सहिंजना (शोभांजना और सुंगना), पीपल, पीपलामूल, चव्य, चित्रक, सोंठ, अतीस और जलभंगराके २ टंक चूरका क्वाथ दोनों समय दो तो सन्निपातके व्यतिरिक्त धनुर्वात, दंतस्तम्भन[1], शीताङ्ग, प्रसूतरोग, श्वास, कास और वायु व्याध्यादि सब इससे नष्ट होवेंगे. यह लोलिम्बराजमें लिखा है.

---

१ दांत जकड़ना, दँतकड़ी बँधजाना।

तथा ३–जो सन्निपातमें जिह्वास्तम्भन[1] हुआ हो तो विजौरेकी केशरमें सेंधानोन और कालीमिर्च बारीक पीसकरके रोगीकी जिह्वापर लेपन करो तो जड़ता निकलकर कोमलता प्राप्त होगी.

तथा ४–जो स्मृतिभ्रंश[2] हुई हो तो वच, महुआ, सेंधानोन, मिर्च और पीपल समान समान पिसे हुए कपड़छानकरके उष्णजलके साथ नास[3] दो तो ज्ञान प्राप्त होकर सर्व भ्रान्ति दूर होगी.

तथा ५–५ टंक पारा और ५ टंक गंधककी कजलीके[4] समान प्रमाण सोंठ, मिर्च, पीपलका चूर ये दोनों पदार्थ (कजली और चूर्ण) धतूरेके फलके रसकी ३ पुट देके एक दिनभर खरल करो और इस रसकी नास दो तो सन्निपात दूर हो. इसे उन्मत्त रस संज्ञा दीगई है.

तथा ६–भैरवांजनसेभी सन्निपात दूर होगा. पारा, गंधक, कालीमिर्च और पीपली तुल्यका चूर्ण बनाओ और इसका चतुर्थांश जमालगोटा लेके पारे और गंधककी कजली मिलाओ तदनंतर जंभीरीके रसमें ८ दिन खरल करके नेत्रोंमें लगाओ. यह वैद्यरहस्यमें लिखा है.

तथा ७–जमालगोटकी १० टंक बीजी, १ टंक कालीमिर्च और १ टंक पीपलामूल, इन तीनोंको जम्भीरीके रसमें सात ७ दिवस पर्यंत खरल करके इस अंजनको नेत्रोंमें लगाओ.

तथा ८–शिरसके बीज, पीपल, कालीमिर्च, सेंधानोन, लहसुन, मैनशिल और वच, ये सब बराबर लेके बारीक चूर्ण करलो. तदनंतर २१ दिवस गोमूत्रके साथ खरल करके इस अंजनको नेत्रोंमें लगाओ.

तथा ९–५ टंक हिंगुलसे निकाला हुआ पारा, ५ टंक पीपली, ५ टंक कालीमिर्च और ५ टंक कजली (पारे-गंधकके योगसे बनाहुआ पदार्थ) इन सबको धतूरेके बीजके तेलमें ४ घडी खरल करके १ रत्ती-प्रमाणकी गोली बाँधलो, इस गोलीको अद्रखके रसके साथ दो । परन्तु इस रसपर दही और चावलके व्यतिरिक्त अन्यान्न मत खिलाओ, यह वैद्यरहस्यमें लिखा है और यह पंचवक्ररस कहाता है.

---

१ जीभ कडी पड जाना, जीभ न लौटना । २ किसी बातका ध्यान, ज्ञान न रहना, बेसुध होजाना, पागलसा होजाना । ३ सुंघनी नासिकासे ऊपर खींचना । ४ पारा और गंधक दोनोंको साथ घर्षण करनेसे एक काला पदार्थ उत्पन्न होजाता है इसे कजली कहते हैं ।

तथा १०–५ टंक हिंगुलसे निकालाहुआ पारा, ५ टंक शुद्ध किया हुआ गंधक, ५ टंक सिंगीमुहरा, २ टंक जायफल और १० टंक पीपल जिनमेंसे प्रथम पारे और गंधककी कजली करके शेष औषधि उसमें डाल दो और अद्रखके रसमें एक दिन पर्यन्त खरल करके १ रत्तीप्रमाणकी गोली बनाकर रोगीको दो तो सन्निपातके व्यतिरिक्त शीतज्वर, विषमज्वर, विषूचिका, जीर्णज्वर, मंदाग्नि और मस्तकरोग सर्व नष्ट होजावेंगे यह वैद्यरहस्यमें लिखा है. इसका नाम आनंदभैरवरस है.

तथा ११–यदि सन्निपातमें शीतोत्पन्न होवे तो कालीमिर्च, पीपल, सोंठ, हरेकी छाल, लोध पोहकरमूल, चिरायता, कुटकी, कूट, कचूर और इन्द्रयव तुल्योतुल्यका कपड़छान चूर्ण करके शरीरमें मर्दन करो तो पसीना और शीताङ्ग दूर होंगे.

तथा १२–५ टंक पारा, ५ टंक सिंगीमुहरा, २० टंक कालीमिर्च, ४० टंक धतूरेके फलकी भस्मको बारीक पीसके शरीरमें मर्दन करो तो अत्यंत पसीना, शीताङ्ग और सन्निपात दूर होगा.

तथा १३–पारा, सिंगीमोहरा, कालीमिर्च, नीलाथोथा और नौसादरका बारीक चूर्ण, धूतरे और लहसनके रसमें मसलके टिकिया बनाओ तदनंतर रोगीके मस्तकपर क्षौर बनवाके वह टिकिया १ प्रहरपर्यंत रक्खो तो महासन्निपात दूर हो. इस प्रयत्नमें ध्यान रक्खो कि जो रोगीके शरीरमें ताप प्राप्त होके चैतन्य होजावे, तो वह अवश्य बचजावेगा और जो ताप न हो तो अवश्यही मृत्युको प्राप्त होजावेगा.

तथा १४–लहसन, राई और सुंगनेकी जडको पीसके गोमूत्रमें रोटी बनाओ और १२ वें नियमानुसार उपचार करो तो उपरोक्त फल होगा.

तथा १५–सन्निपातके रोगीको बिच्छूसे कटावे तो महाभयंकर सन्निपात दूर होजावेगा.

तथा १६–एवं उक्त रोगीको सर्पसे कटाना भी वैद्यकशास्त्रमें लिखा है परन्तु लोकविरुद्ध है अतएव विचारके करना चाहिये.

तथा १७–लोहेकी तप्त शलाका रोगीकी पगथली (पैरों के तलुए) या

---

१ शाल्मलिकाष्ठ अर्थात् सेमर वृक्षकी लकडी ।

भौंहके बीचमें अथवा ललाटके मध्यमें चैक (लगा) देवो और यंत्र मंत्रादिकसे भी सन्निपात नष्ट होता है.

वैद्यको चाहिये कि इन सर्व बातोंपर पूर्ण ध्यान देके अपनी बुद्धिबलके विचारसे जो प्रयत्न योग्य समझै सो करै, परन्तु सन्निपातके रोगीको दिनके समय कदापि निद्रा न लेने देवे और आम तथा कफनाशक प्रयत्नोंको अवश्य करै तथा दोषानुसार लंघन करावे.

सुश्रुतादि ग्रंथोंमें सन्निपातको एकही माना है परन्तु अन्यान्य ऋषियोंके मतानुसार संधिगादि १३ प्रकारका सन्निपात लिखा है, सो अब हम उन तेरहोंके जुदे जुदे प्रयत्न लिखते हैं.

१ संधिगसन्निपातके यत्न—हरेकी छाल, गिलोय, मुगना, चित्रक, लज्जालू, सोंठ, देवदारु, कुटकी, कचूर, अडूसा, वायविडंग, शालपर्णी, पृष्ठपर्णी, दोनों कटाई, बेलकी गिरी, अरणी, अरलू, कुम्भेर, पाठा और पीपल तुल्योतुल्यके चूर्णमेंसे २ टंकका क्वाथ बनाके दोनों समय पिलावे तो सर्व लक्षणयुक्त भी संधिगसंनिपात दूर होगा.

२ अंतकसन्निपात—वाला रोगी मरजाता है उसके लिये कोई यत्न नहीं तथापि किसी वैद्यकी बुद्धिमें आवे तो अवश्य करै.

३ रुग्दाह—हरेकी छाल, पित्तपापडा, नीमकी छाल, कुटकी, देवदारु गिरवारेका गूदा, द्राक्ष और नागरमोथा तुल्योतुल्यके चूर्णमेंसे २ टंकका क्वाथ बनाके दोनों समय पिलाओ.

४ चित्तभ्रम—ब्राह्मी, वच, लाजवंती (लजनी) त्रिफला, कुटकी, खरेटी अमलतासकी गिरी, नीमकी छाल, नागरमोथा, कडवीतुरईकी जड, द्राक्ष, शालपर्णी, पृष्ठपर्णी, दोनों कटाई, गोखरू, बेलकी गिरी, अरणी, अरलू, कुम्भेर और पाठा समानके चूरेमेंसे २ टंकका क्वाथ दोनों समय ११ दिवस पर्यंत सेवन कराओ.

५ शीतांगसन्निपात--यह भी महा असाध्यहै, इसका रोगी बचना दैवाधारही है तथापि कुछेक यत्न लिखते हैं.

---

१ जो बहुधा लोकमें "लजनी" के नामसे प्रसिद्ध है, इस बूटीमें यह गुण है कि जो इसके एक पत्रको भी छूदो तो सर्व लताभर कुम्हिलासी जावेगी, मानों वह तुम्हारे स्पर्शसे लज्जित होकर सकुचगई हो इसीलिये इसे [illegible] नाम दियागया है।

यत्न १–उक्त रोगीको बिच्छूसे कटाओ और बारीक पिसाहुआ सिंगी
मुहरा तेलमें मिलाके शरीरमें मर्दन करो.

तथा २–सिंगीमूहरा, लहसन, और राईको गोमूत्रमें पीसकर रोटीसी
बनाके रोगीके क्षौर किये मस्तकपर धर दो, जब रोगीका शरीर उष्ण होजावे
तब उसे निकाल लो और शरीर उष्ण न होतो वह रोगी निश्चय मरजावेगा.

तथा ३–अथवा ४ टंक पारा, ५ टंक सिंगीमुहरा, २० टंक कालीमिर्चे,
और ४० टंक धतूरेके फलोंकी भस्म इन सबोंको बारीक पीसके शरीरमें
मर्दनकरो तो शीतांग सन्निपात दूर हो.

४ तान्द्रिक–भारंगी, गिलोय, नागरमोथा, कटियाली, हरंकी छाल
और पोहकरमूल समानके चूर्णमेंसे २ टंकोंका क्वाथ बनाकर पिलाओ.

५ कण्ठकुब्ज–काकडासिंगी, चित्रक, हरंकी छाल, अडूसा, कचूर, चिरा-
यता, भारंगी, दारुहलदी, कटियाली, पोहकरमूल, नागरमोथा, कूडा
(इन्द्रवृक्षकी छाल) इन्द्रयव, कुटकी और कालीमिर्च तुल्योतुल्यके चूर्ण-
मेंसे २ टंकका क्वाथ बनाके दोनों समय ८ दिन पर्यंत पिलाओ.

६ कर्णिकसन्निपात–रास्ना (राठ, रालापर्णी और सुगंधा भी कहते
है) असगंध, नागरमोथा, दोनों कटाई, भारंगी काकडासिंगी, हरंकी
छाल, वच, पोहरकमूल और कुटकी, बराबरके चूर्णमेंसे २ टंकका क्वाथ ब-
नाके दोनों समय ३० दिनतक दो इसी कर्णिक तथा, अन्य सन्निपातमें भी
कानके तले सूजन आ जाती है, इसे वैद्यकशास्त्रमें कर्णमूल कहते हैं, आगे
इसका उपाय देखो.

७ कर्णमूलयत्न–हल्दी, हिंगनबेटके वृक्षकी जड़, कूट, मुगनेकी जड,
सेंधानमक, दारुहल्दी, देवदारु और इन्द्रायणकी जडको समान लेके
आंकडेके दूधमें खरल करे और कर्णमूलपर ठंढाही लेपकरो तो कर्णमूल
नाश होगा.

८ अथवा–कर्णमूलके उत्पन्न होतेही जोंक लगाके उसका रुधिर
निकलवा डालो तो कर्णमूल नष्ट होजावेगा.

९ भग्ननेत्रसन्निपात–दारुहल्दी, जंगली या कडवी तुरई, किम्बा तूमडी,
पत्रज, नागरमोथा, कटियाली, कुटकी, हल्दी, नीमकी छाल और त्रिफला
तुल्यके चूर्णमेंसे २ टंकका क्वाथ दोनों समय १५ दिवसपर्यंत पिलाओ.

१० रक्तष्ठीवी, नागरमोथा, पद्मकाष्ठ, पित्तपापडा, रक्तचन्दन, महुआ, कमलतंतु, शतावरी, मलयागिरिचंदन, और बकायनकी छाल तुल्यके चूर्णमेंसे २ टंकका क्वाथ बनाके १५ दिवसपर्यन्त पिलाओ.

अथवा—दूबके रस या अनारके रसका नास दो.

११ प्रलाप—नागरमोथा, कमलतंतु, शालपर्णी, पृष्टपर्णी दोनों कटियाली, बेलकी गिरी, अरलू, कुम्भेर, पाठा, सोंठ, पित्तपापडा, चंदन और अडूसा, तुल्यमेंसे प्रतिदिन १ टंकका क्वाथ बनाकर १० दिनपर्यंत पिलाओ.

१२—जिह्वक—वच, कटियाली, जवासा, रास्ना, गिलोय, नागरमोथा, सोंठ, कुटकी, काकडासिंगी, पोहकरमूल, ब्राह्मी, भारंगी, नीमकी छाल, अडूसा और कचूरके चूर्णमेंसे दो टंकका क्वाथ प्रतिदिन १० दिवस पर्यंत सेवन कराओ.

१३ अभिन्याससन्निपात—भारंगी, रास्ना, जंगलीतुरई, देवदारु, हल्दी, सोंठ, पीपल, अडूसा, इन्द्रायणकी जड़, ब्राह्मी, चिरायता, नीमकी छाल, कमलतंतु, कुटकी, वच, पाठा, आल, दारुहल्दी, कटियाली, गिलोय, निसोत,झाऊवृक्षकीजड, पोहकरमूल, नागरमोथा,जवासा,इन्द्रयव, त्रिफला और कचूर तुल्योतुल्यके चूर्णमेंसे २ टंक (प्रतिदिन १२ दिनतक दोनों समय) का क्वाथ बनाकर पिलाओ. अथवा यह नास दो.

अभिन्यासनाशक नास-कालीमिर्च, महुआ, सेंधानोन, चित्रक, जायफल और पीपल. इन सबोंको बारीक पीसके उष्ण जलमें नास दो.

अष्टज्वरनाशक चिन्तामणिरस—हिंगुलसे निकलाहुआ शुद्ध पारा, शोधाहुआ गंधक, अभ्रक, ताँबेश्वर, सोंठ, कालीमिर्च, पीपल, हर्रकी छाल, आंवला और शुद्ध जमालगोटा तुल्यभागको देडघेलके पत्तोंके रसमें २ प्रहरतक खरल करके धूपमें सुखाकर १ रत्तीप्रमाणकी गोली बनालो यह एक गोली देनेसे आठोंप्रकारके ज्वर, उदरशूल, अजीर्ण और आमवात आदि सर्व रोग नष्ट होंगे ऐसा वैद्यरहस्य तथा वैद्यविनोदमें लिखा है.

---

१ यह एक वृक्ष है जो बहुधा नदियोंके तीरके समीप होता है । २ इसे गूमा कहते हैं, यह लम्बा हाथ १॥ आसरे ऊंचा होता है; बीचबीचमें इसकी डंडीपै फूल होते हैं और दो दो पत्ते होते हैं, यह एकप्रकारका जंगली शाक है जो मारवाडदेशमें " दडघळ " नामसे प्रसिद्ध है ।

अमृतसंजीवनीगुटिका–२ टंक हिंगुलसे निकालाहुआ शुद्ध पारा, २ टंक शुद्ध गंधक, २ टंक शुद्ध सिंगीमुहरा, १ टंक पीपल और चार टंक कालीमिर्च लेके प्रथम पारे और गंधककी कजली बनाओ और उसमें उपयुक्तौषध मिलाके इन सबोंको ब्राह्मीके रसमें १ पुट और १ पुट चित्रककी देके १ रत्ती प्रमाणकी गोली बनाओ. तदनंतर इस गोलीको अद्रखके संयोगसे दो, तो सन्निपात, मूर्च्छा, आमवात, वायुशूल, शीतज्वर, विषमज्वर और मंदाग्नि ये सब रोग दूर होवेंगे. रसमंजरीमें लिखा है कि, इस अमृतसंजीवनीसे मृतकभी जीवित होसकता है.

कालारिरस–१२ मासे शुद्ध पारा, २० मासे शुद्ध गंधक, १२ मासे शुद्ध सिंगीमुहरा, २० मासे कालीमिर्च, ४१ मासे पीपल, १६ मासे लौंग, १३ मासे धतूरेके बीज, २० मासे शुद्ध सुहागा, २० मासे जायफल और १२ मासे अकरकरा लेके प्रथम पारे और गंधककी कजली बनाओ और उसीमें उपरोक्त औषध पीसकर अद्रखके रसमें ३ दिन, नींबूके रसमें तीन दिन और केलीके रसमें तीन दिन खरल करो, तदनंतर १ तथा दो रत्ती प्रमाणकी गोली बनाके १ गोली रोगीको खिलाओ तो बादी और सन्निपातके रोग दूर हों, यह योगचिंतामणिमें लिखा है.

त्रिपुरभैरवरस–४ पैसेभर कालीमिर्च, ४ पैसेभर सोंठ, ३ पैसेभर शुद्ध तेलिया सुहागा और १ पैसेभर शुद्ध सिंगीमुहराको महीन पीसकर नींबूके रसमें ३ दिन, अद्रखके रसमें ६ दिन और पानके रसमें ३ दिन खरल करो और १ रत्ती प्रमाणकी गोली बनाकर १ गोली अद्रखके रसमें दो तो सन्निपात दूर हो.

संज्ञाकरणरस–शुद्ध सिंगीमुहरा, सेंधानमक, कालीमिर्च, रुद्राक्ष, कटाली कायफल, महुआ और समुद्रफल समान महीन पीस छानके आकके खारकी तीन पुट दो तदनंतर १–२ तथा तीन रत्ती (अवश्यकतानुसार) कान तथा नाकके छिद्रमेंसे फूकद्वारा अंतर प्रविष्ट करो तो संज्ञा[1] होकर सन्निपात दूर होगा.

ब्रह्मास्त्ररस–३ टंक पारेकी भस्म, ३ टंक शुद्ध गंधक, ७ टंक शुद्ध

१ मनुष्य तथा वस्तुओंके नाम पहँचानना बोधमय होना.

सिंगीमुहरा और १२ टंक कालीमिर्च इन सबोंको बारीक पीसके कल-हारी, बंदाल और ज्वालामुखी इन तीनोंके रसमें खरल करो तदनंतर अद्रखके रसकी २१ पुट देके १ रत्तीप्रमाणकी गोलियां बाँधलो इसकी गोली देनेसे सन्निपात दूर होगा.

इति नूतनामृतसागरे चिकित्साखण्डे सन्निपातज्वरयत्ननिरूपणंनाम तृतीयस्तरंगः ॥ ३ ॥

आगन्तुकज्वर

आगन्तुक प्रभृतीनां ज्वराणां हि यथाक्रमात् ॥
तुर्ये तरंगे वै चात्र चिकित्सा लिख्यते मया ॥ ४ ॥

भाषार्थः—अब हम इस चौथे तरंगमें शस्त्रादि चोटसे उत्पन्न हुए जो आगन्तुक ज्वर तिनका यत्न लिखते हैं.

चोटपर यत्नानुपान—इसज्वरसे पीडित रोगीको लंघन मत कराओ, कषैली और उष्णौषध न दो. मधुर चिकनी वस्तु (हरीरा और हलुआ) खानेको दो, चोटपर सेंको, लेप करो, अथवा पट्टी बांधो और सीवन लगाओ.

भूतादिबाधाजन्यज्वरानुपान—इस ज्वरवालेको बांधके ताडनादि करो, नास दो, अंजन लगाओ, तथा यंत्र मंत्रादिक उपयोग करो तो भूतबाधा दूर हो.

भूतबाधानाशकमंत्रः-"ओं ह्रां ह्रीं ह्रूं नमो भूतनायक समस्तभुवन भूतानिसाधय २ हुं ३" इस मन्त्रको पढ़के मयूरपक्षसे झाड दो तो भूत खडा न रहैगा.

नृसिंहरक्षामंत्रः-"ओं नमो नारासिंहाय हिरण्यकशिपुवक्षस्थलविदारणाय त्रिभुवनव्यापकाय भूतप्रेतपिशाचशाकिनीकीलोन्मूलनास्तम्भोद्भवसमस्त दोषान् हनहन सरसर चलचल कम्पकम्प मंथमंथ हुं फट्फट्फट् ठः ठः महारुद्रो जापयति स्वाहा" इस मंत्रको पढकर मयूरपक्षसे झाड दो तो भूत निकलजावे.

---

१ कलाली तथा लांगली नामसे प्रख्यात है। २ कंटकफल यावनालक फलकरके प्रसिद्ध है। ३ एक बूटी है जो [illegible] तलाइयोंमें उगती है ।

भूतको बुलवाने (भाषण कराने) का मन्त्र–"ओं नमो भगवते भूतेश्वराय कालिकलिताक्ष्याय रौद्रदंष्ट्रकरालवक्त्राय त्रिनयनभूषिताय धगधगितपिशंगललाटनेत्राय तीव्रकोपानलायामिततेजसे पाशशूलखड्गांगडमरुकधनुर्बाणमुद्गरभयदंडत्राशमुद्राव्यग्रदशदोर्दंडमंडिताय कपिलजटाजूटकूटार्द्धचन्द्रधारिणे भस्मरागरंजितविग्रहाय उग्रफणिपतिघटाघोषमंडितकंठदेशाय जयजय भूतडामरेश आत्मरूपं दर्शयदर्शय नृत्ययनृत्यय सरसर बलबल पाशेन बंधबंध हुंकारेण त्रासय त्रासय वज्रदंडेन हनहन निशितखड्गेन छिंधिछिंधि शूलाग्रेण भिद्यभिद्य मुद्गरेण चूर्णय चूर्णय सर्वग्रहाणां आवेशय आवेशय" इस मंत्रसे गऊके घृतमें गूगल मिलाके (जिसे भूत लगाहो उसके पास) धूप दो और इसी मन्त्रसे उर्द मंत्रितकर करके उसपर फेंकते जाओ तो वह बोलने लगैगा तब उससे जो कुछ वृत्तान्त पूँछना हो सो पूँछलो और फिर पूर्वोक्त मंत्रसे उसे निकाल दो.

भूतबाधानाशक अंजन तथा नास–लहसनके रसमें हींग पीसके नाकसे सुंघाओ अथवा नेत्रोंमें अंजन लगादो तो भूत भाग जावेगा.

भूतबाधानाशकतंत्र–८ तुलसीके पत्र, ८ कालीमिर्च और सहदेईकी जड (रविवारके दिन पवित्र होकर लो) इन तीनोंको एकत्र करके कंठमें बाँध दो तो भूत दूर हो, यह तंत्रोपचार ग्रंथोंमें लिखा है.

विषज्वरयत्न–इस ज्वरवालेको लघुवमन तथा विरेचन दो. विषानुसार उसका उतार दो. उतार इस ग्रन्थके अंतमें लिखैंगे.

कामज्वरयत्न–कामज्वरित पुरुषको अत्यंत सुन्दर, रूपवती, तरुणी स्त्रीसे सम्भोग कराओ और कामज्वरित स्त्रीके पतिसे सम्भोग कराओ.

क्रोधज्वरयत्न–उक्त रोगीको प्रिय मधुर मनोहर वचनोंसे समझाओ अथवा उसके अपराधीसे प्रार्थना कराओ.

शोकज्वरयत्न–उक्त रोगीको धैर्य दिलाकर ज्ञानोत्पादनी कथा नित्य सुनाओ अनेक मिष्टान्न रुचिवर्द्धक पदार्थ खिलाकर पुष्पवाटिकादिमें भ्रमण कराओ तो शोक निवारण होकर ज्वर जाता रहै.

भयज्वरयत्न–उक्त रोगीको वीररस सम्मिलित, हर्षोत्पादनी कथा वार्त्ता श्रवण कराके पक्ष (हिम्मत) दो तो भयजन्य ज्वर दूर हो.

१ इस धूनीमें हो सके तो नीमकें सूखे पत्र और सांपकी कांचली भी डालदो।

शापजज्वरयत्न–जिस योग्यपुरुषके तिरस्कार करनेसे शाप हुआ है उसे मृदुभाषण, द्रव्य, प्रार्थना, शांति, क्षमादि यत्नोंसे प्रसन्न करनेसे शापजज्वर नष्ट होगा.

विषमज्वरयत्न–उक्त रोगीको मूंग या मोठकी दालका हलका जल पिलाओ, ठंढा पानी पीनेको न दो और निम्नौषध दो.

तथा १–पटोल, हर्रकी छाल, इन्द्रयव, गुरच और जवासा तुल्योतुल्यको कूटकर चूर्ण करो इस चूर्णमेंसे २ टंकका क्वाथ बनाकर दोनों समय ७ दिवस पर्यंत पिलाओ तो संततज्वर दूर हो.

तथा २–कटियाली, धनियां, शुंठी, गिलोय, नागरमोथा, पद्मकाष्ठ, रक्तचन्दन, चिरायता, पटोलपत्र, अडूसा, पुहकरमूल, कुटकी, इन्द्रयव, नीमकी छाल, भारंगी और पित्तपापड़ा समानके चूर्णमेंसे २ टंकका क्वाथ दोनों समय १० दिन पिलाओ तो संततादि शीतज्वर नष्ट हों. यह क्षुद्रादि क्वाथ है.

तथा ३–चिरायता, नीमकी छाल, कुटकी, गिलोय, हर्रकी छाल, नागरमोथा, धनियां, अडूसा, त्रायमाण, कटियाली, काकड़ासिंगी, सोंठ, पित्तपापडा, प्रियंगुपुष्प, पटोल, पीपली और कचूरको तुल्य तुल्य महीन पीस छानके इसमेंसे १। सवा टंक प्रतिदिन शीतल जलके संयोगसे ८ दिवस तक पिलाओ तो विषमज्वर नष्ट होगा इसे षोडशांग चूर्ण कहते हैं.

तथा ४–चिरायता, कुटकी, निसोत, नागरमोथा, पीपली, वायविडंग, सोंठ और नीमकी छाल, तुल्यको महीन पीस छानकर चूर्ण बनाओ और इसमेंसे १ टंक प्रतिदिन उष्ण जलके साथ ७ दिनतक लेवे तो विषमज्वर नष्ट होकर भूख बढैगी.

तथा ५–शंखियाको पीले पकेहुए भांटेमें रखके बंदकरदो फिर उसे अग्निमें दाबकर भरता करलो इसीप्रकार १४ भांटोंके साथ बदल बदलकर १४ बार भरता करलो तदनंतर उसे निकालकर उसीके समान प्रमाणकी पीपल और समानही हिंगुल ये तीनों पदार्थ (पकाहुआ शंखिया १ पीपल २ और हिंगुल ३) बारीक पीसकर पानके रसके साथ राईप्रमाणकी गोली बनालो, रोगीको ज्वरका जाड़ा लगनेके पूर्व एक गोली बतासेमें रखकर खिलादो तो अन्येद्यु, तृतीयक [illegible], इत्यादि समस्त ज्वर ३ तथा ५ गोलीके देतेही नष्ट [illegible] ज्वरांकुशरस कहते हैं.

जीर्णज्वरयत्न—१ भाग सोनेके पत्र, २ भाग मोतीका चूर्ण, ३ भाग हिंगुल, ४ भाग कालीमिर्चे और ८ भाग शुद्ध खपरिया इन सर्वोषधोंको पीसकरके गौके मक्खनमें (जहाँतक मक्खनकी चिकनाहट न मिटै) खरल करो, उक्त पदार्थ प्रस्तुत होनेपर बटी बनालो, यह रस जो पीपल और मधुके संयोगसे १ या दो रत्तीप्रमाणकी मात्रासे दियाजावे तो जीर्णज्वर धातुजन्य (उपदंश, प्रमेहादि) रोग, संग्रहणी, मूत्रकृच्छ्र, कास, श्वास और प्रदरादि सर्व रोगोंको नष्ट करदेगा, इसीको वसंतमालिनीरस कहते हैं.

तथा २—कटियाली, गिलोय और सोंठ इन तीनोंका क्काथ दश १० दिन पर्यंत पिलाओ तो जीर्णज्वर दूर हो.

तथा ३—कचूर, पित्तपापडा, सोंठ, नागरमोथा, कुटकी, कटियाली और चिरायता समानके चूर्णमेंसे २ टंक प्रतिदिनका क्काथ ११ दिनतक पिलाओ तो जीर्णज्वर और विषमज्वर दोनों दूर होवेंगे.

तथा ४—एक सेरभर पीपलकी लाख, ६ सेर मीठा जल और १० टंक लोह इन सबोंको मृत्तिकाके घटमें रखकर मंद मंद आँचसे औटाओ, जब चतुर्थांश रहजावे तब उतारकर छानलो तदनंतर इसी रसमें सेरभर गऊका दही, सेरभर मीठा तेल २ टंक सौंफ २ टंक असगंध २ टंक हल्दी २ टंक देवदारु २ टंक सम्भालू २ टंक पित्तपापड़ा २ टंक कुटकी २ टंक मूर्वा २ टंक मुलहटी २ टंक नागरमोथा २ टंक रक्तचंदन और दो टंक रासना ये सर्व पदार्थ बारीक पीसकर डाल दो फिर (लाखका रस, घी, तेल, दही और ये सब औषधोंका चूर्ण) उक्त सर्व पदार्थोंको हाथसे भली भाँति एकत्र मिलाकर मिट्टीके चिकने घडेमें भर दो इस घटको अग्नि पर चढाके मन्दमन्द आँच दो और जब लाखका रसादि सर्व पदार्थ जलकर केवल तेलही तेल रहजावे तब उतारके छानकर शुद्ध तेल बनालो इसे लाक्षादि तेल कहते हैं इस तेलके मर्दनसे जीर्णज्वर दूर होता और शरीरमें बल बढ़ता है.

तथा ५—रोगीको प्रथम दिन ३ दूसरे दिन ४ तीसरे दिन ५ इसी प्रकारसे २१ पिप्पलीतक बढ़ाते जाओ और इसीप्रकार एक एक प्रति दिन कमती करतेहुए ३ तीनहीतक लेआओ तो जीर्णज्वर नाश होजावेगा इसे

° इसीको मधूलिका, गोकर्णी और पीलुपर्णी भी कहते हैं.

वर्द्धमानापिप्पली कहते हैं. कोई कोई वैद्य इन्हींको ५ पिप्पलीसे बढ़ाकर ८ ही तक लाते हैं.

तथा ६–बकरीके दूधके फेनको प्रतिदिन पिलाओ.

नीमके पत्र, त्रिफला, सोंठ, कालीमिर्च, पिप्पली, अजमोद, सेंधानोन, सोंचरनोन, बिड़नोन, जवाखारनोन, चित्रक, चिरायता और पित्तपापडा तुल्येतुल्यके महीन चूर्णमेंसे १ टंक प्रातःकाल जलके साथ दो तो जीर्णज्वर तथा विषमज्वरभी नष्ट हो. इसे निम्बादिचूर्ण कहते हैं.

तथा ८–त्रिफला, दारुहल्दी, दोनों कटियाली, कनेर, सोंठ, कालीमिर्च, पिप्पली, पीपलामूल, मूर्वा, गुरुच, धनियां, अडूसा, कुटकी, त्रायमाण, पित्तपापडा, नागरमोथा, कमलतंतु, नीमकी छाल, पोहकरमूल, मुलहठी, अजवायन, इन्द्रयव, भारंगी, सुंगनेके बीज, फिटकरी, वच, तज, कमलगट्टा, पद्मकाष्ठ, चन्दन, अतीस, [१]खरेंटी, (बलाबल) वायविडंग, चित्रक, देवदारु, पटोल, चव्य, लवंग, वंशलोचन और पत्रज ये सब औषध बराबर लेके इन सबके बोझसे अर्द्धभाग चिरायता लो इन सबके बारीक चूर्णमेंसे १ टंक शीतल जलके साथ प्रतिदिन लो तो समस्त ज्वरमात्र तथा विषमज्वर भी नष्ट होजावें. इसे सुदर्शनचूर्ण कहते हैं.

तथा ९–यदि उक्त यत्नोंसे भी जीर्णज्वर न मिटै तो रोगीकी शक्तिके विचारानुसार वमन अथवा विरेचन कराओ तो विषम और अजीर्णज्वर नाश होवेंगे.

अजीर्णज्वरप्रयत्न–अजमोद, हर्रकी छाल, सोंचरनोन और कचूर बराबरका चूर्ण बनाकर इसमेंसे १ टंक उष्ण जलके साथ दो तो अजीर्णज्वर दूरहो.

दृष्टिज्वरयत्न १–सेकीहुई हींग, कालीमिर्च, पिप्पली और सोंठके बारीक चूर्णमेंसे २ टंक उष्ण जलके संयोगसे दो तो दृष्टिज्वर दूर हो.

तथा २ मोहरा आदिको धोके उसका जल पिलाओ तो दृष्टिज्वर दूर हो.

रुधिरप्रकोपज्वरयत्न १ द्राक्ष, अडूसा, कटियाली, हल्दी, गिलोय, हर्रकी छाल समानके चूर्णमेंसे २ टंकका क्वाथ बनाक अधेलेभर मधुके साथ सात दिनतक दो तो रक्तज्वर नष्ट हो.

---

१ एक प्रकारका पत्थर (प्रसिद्ध है) जिसमें बाँधकर धागा अग्निमें डालनेसे नहीं जलता है।

मलज्वरयत्न १-कुटकी, पीपलामूल, नागरमोथा, हरंकी छाल और किरमालेका गूदा समानके चूर्णमेंसे २ टंकका क्काथ बनाके पिलाओ तो मलज्वर दूर हो.

कालज्वरयत्न-गऊ, पृथ्वी, स्वर्ण, अन्न और वस्त्रादि निज श्रद्धानुसार दान करो, परमात्माका ध्यान करो, तथा सन्निपातोक्त यत्न करो, जो परमेश्वरकी कृपा हो तो आरोग्यता प्राप्त होजावेगी नहीं तो कालज्वरसे बचना तो दुर्लभही है. इत्यागंतुकयत्न.

इति नूतनामृतसागरे चिकित्साखण्डे आगंतुकादि ज्वरयत्न निरूपणं नाम चतुर्थस्तरंगः ॥ ४ ॥

ज्वरोपद्रव ।

ज्वरस्योपद्रवाणां च श्वासादीनां यथाक्रमात् ॥
तरङ्गे पञ्चमे चात्र चिकित्सा लिख्यते मया ॥ ५ ॥

भाषार्थ-ज्वरके तृट् (प्यास) आदि १० उपद्रवोंकी चिकित्सा इस पाँचवे तरंगमें यथाक्रमसे वर्णन करते हैं.

तृषोपद्रवयत्न १-धनियां, नागरमोथा और पित्तपापड़ाके बारीक चूर्णमेंसे २ टंकका क्काथ बनाकर ३ दिन पिलाओ तो प्यास, दाह और अतिसार ये तीनों उपद्रव नाश होजावेंगे.

तथा २-बड़के अंकुर, चावलोंकी लाही और कमलगट्टाको बारीक पीसके मधुके साथ गोली बनाओ और इसमेंसे एक गोली मुँहमें रक्खो तो प्यास न लगेगी.

ज्वरमें उत्पन्न हुई खांसीका यत्न २-पीपल, पीपलामूल, सोंठ, भारंगी खैरसार, कटियाली, अडूसा, कलंजी और बहेडा तुल्यके चूर्णमेंसे १ टंकका क्काथ बनाके प्रतिदिन ७ दिनतक पिलाओ तो खांसी दूर होगी.

ज्वरमें श्वासका उपाय १-सोंठ, मिर्च, पीपल, नागरमोथा, काकडासिंगी, भारंगी और पोहकरमूलके १ टंक चूर्णका क्काथ प्रतिदिन सात दिवसपर्यंत पिलाओ तो ज्वरकी श्वास दूर हो.

ज्वरकी हिचकीका यत्न १-जलमें सैंधानोन पीसके नास दो तो हिचकी बंद होजावेगी.

तथा २–मोरके चँदेवेकी राख और पीपल दोनों मधुके साथ चटाओ तो हिचकी और वमन दोनों दूर हों.

ज्वरमें वमनका यत्न १–एक टंकभर गुर्चका क्वाथ मधुके संग दो तो ज्वर और वमन दोनों नष्ट होवेंगे.

तथा २–चावलोंकी लाही और पीपल मधुके संग चटाओ तो ज्वर और वमन दोनों नाश होवेंगे.

ज्वरमें अतिसारका यत्न–१ सोंठ, अतीस, नागरमोथा, चिरायता, गिलोय और कूड़की छालके २ टंक चूरेका क्वाथ प्रतिदिन ७ दिवसपर्यंत पिलाओ तो ज्वर और अतिसार दोनों बंद होजावेंगे.

तथा २–पिपली, पीपलामूल, चव्य, चित्रक, सोंठ, बेलकी गिरी, नागरमोथा, चिरायता, कूडेकी छाल और इन्द्रयवके २ टंक चूर्णका क्वाथ प्रतिदिन ७ दिनपर्यंत पिलाओ तो ज्वरातिसार, हुचकी, मुखशोष, वमन और श्वास कास ये सर्व रोग दूर होवेंगे.

ज्वरमें अरुचिका यत्न–सैंधानोन, सेकीहुई भांग, आलूबुखारा, सोंठ, पीपल और द्राक्ष इन सबकी गोली बनाके मुखमें रक्खो तो अरुचि नाश हो.

ज्वरमें बंधकोष्ठ और अफराका यत्न–साबुनकी बत्ती बनाके मूलद्वार (गुदा) पर रक्खो तो बंधकोष्ठ और अफरा दोनों नाश होवेंगे.

ज्वरमे मूर्च्छाका यत्न–किरवारेकी गिरी, द्राक्षा, पित्तपापडा, हर्रेकी छालके २ टंक चूर्णका क्वाथ बनाके पिलाओ तो मूर्च्छा जावेगी.

ज्वरमें मुखशोप और जिह्वाकी नीरसताका यत्न–द्राक्षा, मिश्री तथा अनारदानेसे कुरले कराओ तो मुखशोप और नीरसता दोनों मिट जावें.

ज्वरमें निद्राके अभावका यत्न–एक रत्ती आलूबुखारा और एक रत्ती भंगके चूर्णको मधुके संयोगसे चटाओ तो भूख और निद्राकी वृद्धि होकर अतिसार और संग्रहणी नष्ट होजावेगी.

तथा २–अलसी और अंडी दानाके तेलको काँसे (फूल) की थालीमें घिसकर नेत्रोंमें अंजन लगाओ तो निद्रा अवश्य आवेगी.

---

१ जहां किसीप्रकारका प्रमाण न दिया हो तहां उन सर्वौषधोंको तुल्यहीतुल्य समझो प्रतिवारके लिखनेकी कोई आवश्यकता नहीं ।

ज्वरनाश होनेके पश्चात् बल पूर्ण होनेको रोगीको किस नियमसे रखना चाहिये—

नियम--१ पथ्य रक्खो २ मैथुन न करने दो ३ व्यायाम तथा किसी भी प्रकारका परिश्रम न करने दो ४ बोझा न उठाने दो ५ और अधिक भोजन न करने दो इत्यादि, विपरीत आहार विहारादिपर पूर्ण ध्यान रक्खो नहीं तो नियमभंग होकर ज्वरकी पुनरावृत्ति हुई तो फिर आरोग्य होना कठिनही है.

इति नूत० चिकित्साखण्डे ज्वरोपद्रवयत्ननिरूपणंनाम पंचमस्तरंगः ॥ ५ ॥

अतिसार ।

षड्विधस्यातिसारस्य वातादेर्हि यथाक्रमात् ॥
षष्ठे तरङ्गे वै चात्र चिकित्सा लिख्यते मया ॥ ६ ॥

भाषार्थ—अब हम इस छठवें तरंगमें वातादि ६ प्रकारके अतिसारकी चिकित्सा यथाक्रमसे लिखते हैं.

वातातिसारयत्न १ अतीस, नागरमोथा, इन्द्रयव और सोंठके चूर्णमेंसे २ टंकका क्काथ प्रतिदिन ७ दिनतक पिलाओ तो वातातिसार दूर हो.

तथा २—इन्द्रयव, नागरमोथा, देवदालीकी गिरी, आमकी गुठली और धावडेके पुष्प दो २ टंक चूरणको भैंसके मट्ठाके साथ ७ दिनतक पिलाओ तो वातातिसार दूर हो.

पित्तातिसारयत्न १--बेलकी गिरी, इन्द्रयव, नागरमोथा, कमलतंतु और अतीसके दो २ टंक चूर्णका क्काथ आठ दिनपर्यंत पिलाओ, तो पित्तातिसार जावे.

तथा २—रसोत, अतीस. इन्द्रयव, सोंठ, धावडेके फूलका २ टंक चूर्ण चावलोंके पानीके साथ सहता सहता ७ दिनतक पिलाओ तो अतिभयंकर पित्तातिसार भी दूर होगा.

तथा ३—बेलकी गिरी, कमलतंतु, नागरमोथा, इन्द्रयव और अतीसके २ टंक चूर्णका क्काथ ७ दिनतक दो तो पित्तातिसार नाश हो.

रक्तातिसारयत्न—१ इन्द्रवृक्षकी छाल और अनारके छिलके२दो टके भरके क्काथमें ५ टंक सहत मिलाके ७ दिनपर्यन्त पिलाओ तो रक्तातिसार जावे.

तथा २—इन्द्रवृक्षकी छाल, अतीस, नागरमोथा, नेत्रवाला, लोध, रक्तचंदन, धावडेके फूल और अनारके छिलकेमेंसे दो टंकके क्काथमें २ टंक मधु मिलाके ७ दिनपर्यन्त पिलाओ तो दाह, मल और रक्तातिसार नाश हो.

तथा ३—एक टंक श्वेत चन्दन (पीस डालो या घिस लो) २ टंक मधु और २ टंक मिश्री एकत्र कर ८ दिवसपर्यंत चटाओ तो रक्तातिसार दूर हो

तथा ४ मीठे अनारका पुटपाक बनाके चटाओ तो रक्तातिसार दूर हो.

तथा ५—बकरीका दूध, माखन, मधु और मिश्री मिलाकर खिलाओ तो रक्तातिसार दूर हो.

तथा ६—२ टंक बेलकी गिरी बकरीके दूधके साथ ७ दिनतक पिलाओ तो रक्तातिसार दूर हो.

गुदा पकजानेपर यत्न १—पटोल, मुलहठी और महुआ इन तीनोंको पानीमें औटाके शीतल होनेपर छान लो और इस जलसे गुदा धोओ तो गुदापक्क नष्ट हो.

तथा २—गेहूंके आटेमें घी मिलाके पानीसे उसनडालो तदनंतर उसे रोटीके समान सेंकके सहता सहता सेंको तो गुदापाक नष्ट होगा.

कफातिसारयत्न १—उक्त रोगीको २ या चार लंघन कराके अनंतर थोडा थोडा मूंगका पथ्य दो और निम्न क्काथ पिलाओ तो कफातिसार दूर हो.

तथा २—चव्य, अतीस, कूट, बेलकी गिरी, सोंठ, कुडेकी छाल और तजके २ टंक चूरेका क्काथ बनाकर ७ दिन पिलाओ तो कफातिसार दूरहो.

तथा ३—सेंकीहुई हींग, सोचरनोन, सोंठ, कालीमिर्च, पिप्पली और अतीसका १ टंक चूर्ण, प्रतिदिन ७ दिनपर्यंत खिलाओ तो कफातिसार दूर हो.

सन्निपातातिसारयत्न १—पीपल, पिपलामूल, चव्य, चित्रक, सोंठ, खरेंटी, बेलकी गिरी, गिलोय, मोथा, पाठा, चिरायता, कुड़ेकी छाल और इन्द्रयवके २ टंक चूर्णका क्काथ प्रतिदिन १० दिवस पर्यन्त पिलाओ तो सन्निपातातिसार दूर हो.

तथा २—बडीहर्र, सोंठ और नागरमोथा २ टंक चूर्ण प्रतिदिन ७[1] दिनतक पिलाओ तो त्रिदोषज (सन्निपात) अतिसार दूर हो.

---

१ बहुधा उसी औषधको ७ दिन (आदि) पिलाओ तो वही समझी जावेगी, परंतु ऐसे (उक्त सदृश) प्रसंगपर उतनी उतनी औषध एक एक दिनके लिये है।

तथा ३ कुड़ेकी छालके (पुटपाक रीतिसे निकालेहुए) रसमें ५ टंक मधु मिलाकर प्रतिदिन १० दिनतक पिलाओ तो सन्निपातातिसार दूर हो.

शोक तथा भयातिसार–इस तरंगके आदिमें वातातिसारके जो यत्न लिख आये हैं वेही इसके भी जानो.

आमातिसारयत्न १–हर्रकी छालका २ टंक चूर्ण मधुके संयोगसे ५ दिन पर्यंत चटाओ तो आमातिसार दूर हो.

तथा २–धनियां, सोंठ, बेलकी गिरी, नागरमोथा और त्रायमाणके २ टंक चूर्णका क्वाथ ७ या १० तथा १५ दिवस (रोगानुसार) पिलाओ तो आमातिसार और उदरशूल भी बंद होजावेगा, इसे धान्य (धना) पंचक कहते हैं.

तथा ३–बड़ीहर्र, मोथा, सोंठ, अतीस और दारुहल्दीके दो टंक चूर्ण का क्वाथ बनाके सात दिनपर्यंत पिलाओ तो आमातिसार दूर हो.

तथा ४–बड़ीहर्र, अतीस, सेंकीहुई हींग, सोंचरनोन और सेंधोनोनका २ टंक चूर्ण उष्ण जलके साथ दो तो आमातिसार दूर हो.

तथा ५–सोंठको जलमें पीसके गोला बनाओ. इस गोलेपर एरंडीके पत्ते लपेटकर धागेसे दृढ़ बांध दो और ऊपरसे मिट्टी लपेटकर मंद मंद आँचसे पकाओ पकनेपर उसे स्वच्छ (निर्मल) कर प्रतिदिन २ टंकके प्रमाणसे मधुरयुक्त कर ७ दिनतक खिलाओ तो आमातिसार दूर हो.

पक्वातिसारयत्न १–लोध धावडेके फूल, बेलकी गिरी, मोथा, आमकी गुठली और इन्द्रयवके २ टंक चूर्णको भैंसकी छाँछके साथ पिलाओ तो पक्वातिसार जाय.

तथा २–अजमोद, मोचरस, सोंठ, धावडेके फूल, जामुनकी गुठली और आमकी गुठलीका २ टंक चूर्ण गऊके मट्ठाके साथ पिलाओ तो पक्वातिसार नाश हो यह लघुगंगाधर चूर्ण है.

तथा–३ सोंठ, जायफल, अहिफेन (आफू, अफीम) और कच्चे-अनारके बीज इन सबोंको कच्चे अनारमें भरके अनारको पुटपाट करडालो. अनंतर उन चारोंको पीसके गुंजा (चिरमी) प्रमाणकी गोलियां बना डालो जो इसमेंसे प्रतिदिन एक गोली गौकी छाँछके संग ७ दिन-तक खिलाओ तो पक्वातिसार नष्ट होजावेगा.

शोथयुक्त अतिसारका यत्न—सांठी (विषखपरेकी जड), इन्द्रयव, पाठा, वायविडंग, अतीस, नागरमोथा और कालीमिर्चके २ टंक चूर्णका क्काथ ७ दिवसपर्यंत पिलाओ तो शोथयुक्त अतिसार दूर हो.

अतिसारमें वमनका उपाय १—आमकी गुठली, बेलकी गिरी २ टंकका क्काथ २ टंक मधु और २ टंक मिश्री मिलाकर प्रतिदिन ७ दिनतक पिलाओ तो वमन, अतिसार दोनों बंद होजावें.

तथा २ भुँजेहुए मूँग और चावलोंकी लाही दोनोंको पानीमें औटाके उसे मधुके साथ ५ दिनतक पिलाओ तो वमन, अतिसार, दाह और ज्वर ये सब दूर होवेंगे.

छहों प्रकारका अतिसारमात्र नष्ट करनेका उपाय १-पांच टंक भृंगराजका रस दहीके संयोगसे सात ७ दिनतक पिलाओ तो छहों प्रकारका अतिसार नाश हो.

तथा २—२ टंक राल, १० टंक मिश्री (इसी प्रमाणानुसार) दोनोंका चूर्ण रोगानुसार मात्रासे १० दिनपर्यंत दो तो छहों प्रकारका अतिसार नाश हो.

तथा ३—धनियां, सोंठ, पीपली, सेंधानोन, अजमोदा, भूंजीहुई हींग और जीरेका २ टंक चूर्ण मट्ठेके साथ पिलाओ तो सर्वप्रकारका अतिसार शूल और आम दूर होकर क्षुधा लगे और रुचि बढ़ैगी. ऐसा वृंदमें लिखाहै.

तथा ४—नागरमोथा, मोचरस[1], लोध, धावडेकेफूल, बेलकी गिरी, इन्द्रयव, आफू और (शुद्ध पारे+गंधककी) कजलीमें इन सबका चूर्ण मिलाके ३ रत्ती छाँछके साथ १० दिनतक पिलाओ तो अतिसार, पेटका मुरो और संग्रहणी भी इससे नाश होगी इसे गंगाधररस कहते हैं.

तथा ५—अफीमको मृत्तिकाके पात्रमें सेंकके खिलाओ.

तथा ६—जायफल, लवंग, धावडेके फूल, बेलकी गिरी, नागरमोथा, सोंठ, मोचरस, हिंगुल और अफीम इन सबको पोस्तेके रसके संग खरल करके १ या २ रत्ती प्रमाणकी गोली बनालो. इनमेंसे १ एक गोली प्रति दिन चावलके पानी अथवा छाँछके साथ ७ सात दिनतक खिलाओ तो निश्चय है कि, सर्वप्रकारके अतिसार दूर होवेंगे.

---

१ शालमलि (अर्थात् सेमर) वृक्षकी गोंदको मोचरस कहते हैं.

तथा ७–एक भाग आफू, २ भाग हिंगुल, ३ भाग लवंग, ४ भाग मोचरस और ३ भाग मिश्रीका १ या २ रत्ती चूर्ण षष्टिक तंडुल जल अथवा छाँछके साथ पिलाओ तो भयंकर अतिसार भी नष्ट होगा.

तथा ८–जायफल, खारक और अफीम (तीनों समान भाग) को नागर बेलके पानके रसमें खरल करके १ रत्ती प्रमाणकी गोली बनाओ. रोगीको उक्त १ गोली प्रतिदिन छाँछके साथ ७ सात दिनतक खिलाओ ते अतिसार भी नाश होगा.

मुर्रा अतिसारका यत्न १–बेलकी गिरी, लोध और कालीमिर्च ये तीनों १ एक पैसेभर लेकर महीन पीसकर चूर्ण बनाओ इसमेंसे १ टंक मधुके साथ चटाओ तो मुर्रा अतिसार दूर हो.

तथा २–२टंक धावडेके फूलका चूर्ण दहीके संसर्गसे ७ दिनपर्यंत खिलाओ तो मुर्रा अतिसार दूर हो.

तथा ३–८टंक कवीट (कैथा) का रस मधुके साथ ७ दिनपर्यंत खिलाओ तो भी मुर्रा नष्ट होगा.

तथा ४–३टंक लोध ७ दिनतक दहीके साथ खिलाओ. ये मुर्रेके यत्न भावप्रकाशमें लिखे हैं.

अतिसाररोगमें वर्जित वस्तु–जिस पुरुषको अतिसाररोग हुआ हो वह उष्ण, भारी, चिकना पदार्थ, नवीनान्न भक्षण, घाममें घूमना, परिश्रम, स्नान, मैथुन और चिन्ता इतनी बातोंसे कदापि सम्पर्क न करै. ऐसा वैद्यविनोदमें लिखा है.

इति नूतनामृतसागरे चिकित्साखण्डे अतिसारचिकित्सानिरूपणं नाम षष्ठस्तरंगः ॥ ६ ॥

संग्रहणी.

पृथग्दोषैः समस्तैश्च चतुर्था ग्रहणीगदः ॥
तरङ्गे सप्तमे तस्य चिकित्सा लिख्यते मया ॥

भाषार्थः–वात, पित्त, कफ तथा सन्निपातसे जो चार प्रकारका संग्रहणी रोग उत्पन्न होताहै उसकी चिकित्सा हम सातवें तरंगमें लिखते हैं.

---

१ यह भी एक अतिसारका भेदहै जिससे पेटमें मरोडा उठता है, यह चारप्रकारका होता है जिसमें हम ऊपर चारोंकी चिकित्सा लिखचुके हैं।

वातसंग्रहणीयत्न १–सोंठ, गुर्च, नागरमोथा और अतीसके २ टंक चूर्णका क्काथ १५ दिवस पर्यंत पिलाओ तो उक्त रोग दूर होकर भूख बढ़ेगी.

तथा २–सोंठ, पीपल, पीपलामूल, चव्य, चित्रकका २ टंक चूर्ण नित्य गऊकी छाँछके संयोगसे पिलाओ ऊपरसे २ चार बार और भी छाँछही पिलाओ तो वातसंग्रहणी दूर हो.

तथा ३–२ टंक शुद्ध गंधक, १ टंक शुद्ध पारदकी कजली, १० मासे सोंठ, २ टंक कालीमिर्च, १० मासे पीपली, १०मासे पांचोंनोन, ५टंक सेंका हुआ अजमोद, ५ टंक भुनीहुई हींग, ६ टंक सेंका सुहागा और पैसेभर भुनीहुई भंग इन सबको पीस छानके कजली मिलादो। तदनंतर इसे २ दिन पर्यन्त और भी खरल करो तो चूर्ण बनगया. इसमेंसे २ तथा चार मासे चूर्ण गऊकी छाँछके संयोगसे पिलाओ तो वातसंग्रहणी, मंदाग्नि, अतिसार, बवासीर, पेटकी कृमि और क्षयी ये सब रोग दूर होजावेंगे, इसीको लाई चूर्ण कहते हैं.

पित्त संग्रहणीयत्न १–रसोत, अतीस, इन्द्रयव, तज, धावडेके फूलका २ टंक चूर्ण, गऊकी छाँछ या मधु या चावलोंके जलके साथ १५ दिनतक पिलाओ, तो पित्तसंग्रहणी दूर हो.

तथा २–जायफल, चित्रक, श्वेतचन्दन, वायविड़ंग, इलायची, भीमसेनी कपूर, वंशलोचन, जीरा, सोंठ, कालीमिर्च, पीपल, तगर, पत्रज और लवंग तुल्यका चूर्ण बनाकर इस सब चूर्णसे दूनी मिश्री और थोडी बिन सेंकी भंग ये सर्व एकत्र करलो, इसमेंसे ४ या छःमासे चूर्ण गऊकी छाँछके संग १५ दिवस पिलाओ तो पित्तसंग्रहणी दूर हो–ऐसा वैद्यरहस्यमें लिखा है.

कफसंग्रहणीयत्न १–हर्रकी छाल, पिप्पली, सोंठ, चित्रक, सोंचरनोंन और कालीमिर्चका २ टंक चूर्ण, नित्य गऊकी छाँछके संग १५ दिवस पर्यंत पिलाओ तो कफसंग्रहणी दूर हो.

सन्निपातसंग्रहणीयत्न १–बेलकी गिरी, मोचरस, नेत्रवाला, नागरमोथा, इन्द्रयव, कुड़ेकी छालका २ टंक चूर्ण नित्य बकरीके दूधके संग २५ दिवस पर्यंत पिलाओ तो सन्निपातसंग्रहणी दूर हो.

तथा २–१ टंक अनारदाना, १ टंक जीरा, २५ पैसेभर धनियां १ टंकभर शोथ, १ टंकभर कालीमिर्च, मिश्रीका २ टंक चूर्ण नित्य गौके छाँछके संगसे १ मासपर्यंत पिलाओ तो सन्निपातसंग्रहणी, आमातिसार, पार्श्वशूल, अरुचि और पेटमेंका गोला सब दूर होवें.

तथा३–गंधक, पारा, सिंगीमुहरा (तीनों शोधेहुए चाहिये)सोंठ, कालीमिर्च, पीपली, सेंका सुहागा, सार (लोहभस्म अर्थात् कांतीसार) अजमोद और अफीम तुल्य भाग लो और इन समस्तके तुल्य अभ्रककी भस्म लेके इन सबोंको चित्रक क्वाथमें १ दिन खरल करो और कालीमिर्चके समान गोली बना लो, इसको अभ्रकगुटिका कहते हैं. उक्त रोगीको इसकी १ गोली नित्य प्रति १ मासभरतक खिलाओ तो सन्निपात संग्रहणी दूर हो.

तथा ४–(शुद्धगंधक शुद्धपारेकी) कजली, अभ्रक, हिंगुल, जवाखार, (खार) जायफल, बेलकी गिरी, मोचरस, शुद्ध सिंगीमुहरा,अतीस, सोंठ, कालीमिर्च, पीपल, धावडेके फूल घृतमें सेंकी हरेकी छाल, कवीट, अजमोद, चित्रक, अनारदानां, इन्द्रयव,धतूरेके बीज, कणकच, (करंज,केवांच, अर्थात् बहुकंटकी) और अफीम तुल्य भागका चूर्ण (उसीमें कजली भी) पोस्तके[1] साथ खरल करके कालीमिर्चके सदृश गोली बनालो उक्त रोगीको नित्य प्रति १ गोली १५ दिवस पर्यंत खिलाओ तो सन्निपातसंग्रहणी, शूल, अतिसार और विषूचिका ये सब रोग दूर होंगे वैद्यविनोदमें इसका नाम संग्रहणीकंटकरस लिखा है.

आमवातसंग्रहणीयत्न[2]–सन्निपातसंग्रहणीके पूर्वीय यत्नही जानो.

संग्रहणीमात्रपर विशेषयत्न–८ भाग कवीट, ६ भाग मिश्री, ३ भाग अजमोद, ३ भाग पीपली, ३ भाग बेलकी गिरी, ३ भाग धावड़ेके फूल, ३ भाग अनारदाने,३भाग डांसरयां[3],१ भाग सोंचरनोंन, १भाग नागकेशर, १ भाग धनियां, १ भाग तज, १भाग पत्रज, १ भाग कालीमिर्च, १भाग

१ अफीमका डोंडा जिसके बीजको खशखश कहते हैं।

२ यह सन्निपातसंग्रहणीकाही एक भेद है।

३ जिसे " डासरफल तथा तंतडीक बीज " भी कहते हैं।

अजवायन, १ भाग पीपलामूल, १ भाग नेत्रवाला, १ भाग इलायची, इन सबके महीन छने हुए चूर्णमेंसे २ टंक चूर्ण नित्य गौकी छाँछके साथ पिलाओ तो (सर्व) संग्रहणी अतिसार और गोला सर्व दूर होवेंगे, इसे कपित्थाष्टक चूर्ण कहते हैं.

संग्रहणीके रोगीको वर्जितपदार्थ–भारी, आमोत्पादक, क्षुधानाशक तथा अतिसारमें जो वस्तु वर्जित कीगई हैं, इन वस्तुओंसे विशेष अंतर रखके क्षुधावर्द्धक वस्तुओंका सेवन कराओ.

इति नूतनामृतसागरे चिकित्साखण्डे संग्रहणीयत्ननिरूपणंनाम सप्तमस्तरंगः ॥ ७ ॥

अर्शरोग ।

निदानखण्डे प्रोक्तश्च षड्विधस्यार्शसोऽत्रवै ॥
तरंगे चाष्टमे तस्य चिकित्सा लिख्यते मया ॥ ८ ॥

भाषार्थ–निदानखण्डमें जो छः प्रकारका अर्शरोग कहा गया है इस खण्डके ८ वें तरंगमें हम उसकी चिकित्सा लिखते हैं.

वातार्शयत्न १–जमींकन्दपर मट्टी लपेटकर भुरता बनाओ, उसे घृत या तेलमें लपेटके १ टकेभर नित्य प्रति २१ दिन खिलाओ.

तथा २–आकके पत्तोंपर पाँचोंनोन लगाके इन्हींपर तेल या खटाई लगादो और इन्हीं पत्तोंको जलाके भस्म करदो, अब इसीमेंसे १। सवा या २॥ अढ़ाई टंक नित्य प्रति १५ दिन खिलाओ तो वातार्श दूर हो. यह वैद्यविनोदमें लिखा है.

तथा ३–गौकी छाँछमें सैंधानोन डालकर बहुत दिनतक पिलाओ तो वातार्श दूर हो.

तथा ४–५ टंक हर्रकी छाल, १ टंक कालीमिर्च, १ टंक पीपलामूल, १ टकेभर पीपली, १ टकेभर जीरा, १ टकेभर चव्य, १ टकेभर चित्रक १ टकेभर सोंठ, १ टकेभर शुद्ध भिलावा, ऽ। पावभर पकाया हुआ भूकन्द (ज़मींकन्द) और १ टकेभर जवाखार इन सबोंको महीन पीसके इन

सबके प्रमाणसे दूना गुड मिलाकर १ टकेभरकी गोलियां बनालो. इनमेंसे १ गोली नित्यप्रति खिलाओ तो वातार्श जावे.

तथा ५–बनालेकी बेलके पत्र पानीमें औटाकर उस जलसे गुदा धोओ तो अर्शके मसे दूर हों.

तथा ६–बनालेकी डोंडोंकी धूनी दो तो मसे दूर हों.

तथा ७–बनालेके डोंडे काँजीमें पीसकर मसोंपर लेप करो तो मसे दूरहों.

तथा ८–नीमके पत्ते, कनेरके पत्ते, गुड, कडवी तुरईकी जड, इन सबको काँजीमें पीसकर मसोंपर लेप करो तो मसे झडकर गिर पडें.

तथा ९–हल्दी, कडवी तुरई, अकावके पत्र, मुनगाकी जड, इनको काँजीके पानीमें पीसकर मसोंपर लेप करो तो मसें झडकर गिर पडें.

तथा १०–एरंडकी जड, मुलहठी, रास्ना, अजवायन और महुआको काँजीके जलमें पीसकर उष्णकर सहतेहुए मसोंपर लेप करो अथवा उन्हें सेंको तो मसोंकी तड़क (चमकीली पीडा) शीघ्र दूर होकर कालान्तरमें मसे झडजावेंगे. ये यत्न वैद्यरहस्यमें लिखे हैं.

तथा ११–हीराकसीस, सैंधानोन, पीपल, सोंठ, कूट, कलेहारीकी जड, पाषाणभेद (पथरचटा) कनेरकी जड, वायविडंग, दात्यूनी, चित्रक, हरताल चोखके चूर्णसे तिगुना तेल और उन तेलसहित औषधोंसे चौगुना थूहर, आकका दूध और गोमूत्र लेकर सबको एकत्रितकर पकाओ (चुरैलो) जब तेलमात्र रहजावे तब उतारकर छानलो. जो यह तेल मसों-पर मर्दन करो तो मसे गलजावें, बवासीर दूर हो और त्रिवलीकी पीडा मिटजावे. यह क्षारतैल वैद्यरहस्यमें लिखा है.

तथा १२–१६ भाग पकायाहुआ, जमीकंद, ८ भाग चित्रक, ८ भाग सोंठ, २ भाग त्रिफला, ८ भाग पीपलामूल,८भाग शुद्ध भिलावाँ, ४ भाग इलायची ८ भाग वायविडंग, ८ भाग शतावरी १६ भाग बिधायरा और आठ भाग भंग इनके चूर्णमें दूना गुड मिलाकर ५ टंक प्रमाणकी गोली

१ बनालेके डोडे जो घोडोंके मसालेमें डाले जाते हैं।

२ इसे कलाली और लांगली भी कहते हैं।

३ यह एक प्रकारका काष्ठ है जिसे वृद्धदारु और गर्भवृद्धिभी कहते हैं।

बाँधलो, जो यह १ गोली नित्यप्रति १ मासपर्यंत खिलाओ तो अर्श
हिचकी, श्वास, राजरोग और प्रमेह ये सब रोग दूर होवेंगे यह बृहत्सू-
रणमोदक वैद्यरहस्यमें लिखा है.

पित्तार्शयत्न १–२ टंक रसोतका चूर ४ घडीपर्यन्त जलमें भिगोकर
यही जल नित्य २ मासपर्यंत पिलाओ तो पित्तार्श दूर हो.

तथा २–पीपलकी लाख, मुलहटी, हल्दी, मजीठ और कमलगट्टेकी
बीजीका २ टंक चूर्ण नित्य ४९ दिनतक खिलाओ तो पित्तार्श दूर हो.

तथा ३–नागकेशर, मक्खन, मिश्री प्रतिदिन ५ टंकभर ४९ दिन
तक खिलाओ तो पित्तार्श दूर हो.

तथा ४–१०० टकेभर कुड़ेकी छालको पीसके १६ सेर पानीमें
औटाओ, अष्टमांश रहनेपर छानलो तदनंतर १ टकेभर नागरमोथा, १टके
भर सोंठ, १ टकेभर कालीमिर्च, १ टकेभर पीपली, ३ टकेभर त्रिफला,
२ टकेभर रसोत, २ टकेभर चित्रक, १ टकेभर इन्द्रयव और १ टकेभर
वच इन सबको कूट छानके बारीक चूर्ण करलो. तदनंतर कूड़ेकी छालके
जलमें गुडकी चासनी बनाकर उसमें उक्त चूर्ण १ सेरभर मधु और १ सेर-
भर गऊका घी डालकर इन सब (चासनी, चूर्ण, मधु, घृत) को एकत्रि-
त करलो. अब यह कूडेकी छालका अवलेह बनगया. यदि रोगीको इस-
मेंसे नित्यप्रति १ एक टकेभर खिलाओ तो पित्तार्श सर्वतोभाव नष्ट होगा
यही जुदे जुदे अनुपान (जैसे ऊपरसे छाँछ सेवन आदि) से पांडु, संग्र-
हणी, क्षीणता और शोथ ये रोग भी नाशकरसक्ता है.

तथा५–(पारे और गंधककी) कजली, बीजाबोल और मोचरस इन
तीनोंका महीन चूर्ण बनाके ३ मासे नित्य मधुके संग, २१ दिनतक सेवन
कराओ तो पित्तार्श, अतिसार, प्रमेह, स्त्रीका प्रदर और भगंदर ये
सब नाश होवेंगे.

तथा ६–२ रत्ती वसंतमालतीरस २ तथा ४ पिप्पलीके साथ मधु और
मिश्रीके संयोगसे नित्य २५ दिवस चटाओ तो पित्तार्श और संग्रहणी भी
दूर हो–यह वैद्यरहस्यमें लिखा है.

तथा ७–जो बवासीरमें बंधकुष्ठ होकर मसे ऊंचे होजावें, खुजाल चलै

और रक्तस्राव होनेलगे तो उन मसोंपर जोंक (जलजंतु विशेष) लगाकर रुधिर निकाल दो तो ववासीर दूर हो.

कफार्शयत्न १-१ टकेभर अद्रखका क्वाथ प्रतिदिन २१ दिवसपर्यंत पिलाओ तो कफार्श दूर हो.

तथा२-हल्दीको थूहरके दूधके ७ पुट देके वह हल्दी मसोंपर लेप करो तो कफार्श दूर हो.

तथा३-त्रिफला, दशमूल, चित्रक, निसोत, दात्यूणी (जमालगोटेकी जड) ये पांचों औषध सेरभर लेके कूट छान २० वीस सेरजल और ७ सेर गुडके साथ मृत्तिकाके पात्रमें डालदो इस पात्रका मुँह बाँधकर२१ दिन धरतीमें गडा रक्खो, तदनंतर डमरूयंत्रद्वारा (मधुसदृश)रस उतारलो जो रोगीको नित्य १ टंक प्रमाणसे पिलाओ तो कफार्श सर्वथा नष्ट होगा वृन्दमें इसे दात्यूणीरस नाम दिया है.

सन्निपातार्शयत्न १-३ टकेभर अद्रख १ टकेभर कालीमिर्च, पावभर ऽ।पीपली,१टकेभरचव्य,५टकेभर नागकेशर,१टकेभर,१टकेभरपीपलामूल, १ टकेभर चित्रक, ५ टकेभर इलायची,१ टकेभर अजमोद और १ टकेभर जीरेके चूर्णमें ३० टकेभर गुड़ मिलाकर ५ टंक प्रमाणकी गोलियां बानालो. रोगीको प्रातःकाल १ गोली खिलाकर ऊपरसे पथ्यपूर्वक भोजन कराओ तो सन्निपातार्श, मूत्रकृच्छ्र, बादीके रोग, विषमज्वर, पांडु, गोला-प्लीहा (फिया तथा तापतिल्ली) कास, श्वास वमन अतिसार और हिचकी ये सर्व रोग जुदे जुदे अनुपानसे नष्ट होजावेंगे. यह प्राणदागुटिका सर्वसंग्रहमें लिखा है.

तथा २-त्रिफला, कालीमिर्च,[1] पीपल, तज, पत्रज, इलायची, वच, सेंकी हींग, पाठा, सज्जी, जवाखार, दारुहल्दी, चव्य, कुटकी, इन्द्रयव, सौंफ, पांचोंनोन, पीपलामूल, बेलकी गिरी और अजमोदका २ टंक चूर्ण नित्य उष्ण जलके साथ पिलाओ तो बवासीर, कास, श्वास, हिचकी, भगंदर, पार्श्वशूल, गोला, उदररोग, प्रमेह, पांडु, अंत्रवृद्धि, (पोते बढ़ना) संग्रहणी, विषमज्वर, जीर्णज्वर और उन्माद, ये सर्व रोग जुदे जुदे अनुपानसे दूर होवेंगे यह विजयाचूर्ण भावप्रकाशमें लिखा है.

---

१ वैद्यरहस्यमें लिखा है कि उक्त दशामें इससे उत्तम कोई भी प्रयत्न नहीं है।

तथा ३-१ टकेभर शुद्ध पारा, २ टकेभर शुद्ध गंधक, ३ टकेभर ताम्बेश्वर, ३ टकेभर लोहसार, ३ टकेभर सोंठ, २ टकेभर कालीमिर्च, २ टकेभर पिप्पली, १ टकेभर शुद्ध सिंगीसुहरा, १ टकेभर दात्यूणी,२ टकेभर चित्रक, २ टकेभर बेलकी गिरी, ५ पैसेभर जवाखार, २ पैसेभर सुहागा और ५ टकेभर सैंधानोन इनके महीन चूर्णको ३२ टकेभर गोमूत्र और ३२ टकेभर थूहरके दूधमें मिलाकर मृत्तिकापात्रमें रख मंद मंद आँचसे पकाओ. जब वह द्रवसे दृढ दशामें आजावे तब २ मासे प्रमाणकी गोली बाँधलो १ गोली नित्य उष्ण जलके साथ खिलाओ तो महाअसाध्य सन्निपातिकार्श भी इससे नाशहोगा-यह हररसकुठार योगतरंगिणीमें लिखा है.

तथा४-शुद्ध पारा और शुद्ध गंधक समान लेकर कजली बनाकर उसे घृतसे चुपडलो और उससे दूना बीजाबोल उसी कजलीके साथ खरल करके टिकिया बनाओ यह टिकिया लोहेके पात्रमें धरके आँच दो जब वह पिघलकर द्रव होजावे तब केलेके पत्तेपर ढलका दो और जमजानेपर निकाल लो यह पदार्थ प्रतिदिन ३ रत्तीप्रमाण १५ दिवसतक खिलाओ तो सन्निपातकी बवासीर दूर होगी-यह पर्पटीरस वैद्यविनोदमें लिखा है.

रक्तार्शयत्न-पित्तार्शमें जो यत्न लिख आये हैं वेही इसके यत्नभी जानो. विशेषतः-यह है कि, इसमें रक्त बहुत गिरता है सो हम आगे रक्तावरोधकयत्न लिखते हैं जिनसे रुधिर गिरना बंद होगा.

रक्तार्शरक्तावरोधक यत्न १-पावभर गोघृत लोहेकी कडाहीमें तपाकर उसीमें ४ पैसे भर बडी बेरीके पान और ४ पैसेभर आँवले डालो जबतक कि, यह भलीभाँति औटकर एक रस न होजावे. यह घृत ४ मासे प्रति प्रभात २१ दिनपर्यंत खिलाओ जलसे केवल कुल्ला करलेने दो पर पीने न दो उष्ण वस्तु, बाजरा, करेला, मिर्च, अचार, बैंगन (भटा) उर्द और केले आदि न खाने दो पर पथ्यसे रक्खो तो मसोंसे रुधिरस्राव बंद होजावेगा.

तथा २ निबोलीकी बीजी और औलिया दोनोंको समान ले पानीके साथ खरल करके १ रत्ती प्रमाणकी गोली बांधलो इनमेंसे १ गोली नित्य रसौतके रसके साथ११ दिनपर्यंत खिलाओ तो मसोंसे रक्त गिरना बंद हो.

रक्तार्शके मसोंका यत्न-रसोत, चिनियां कपूर और निबोलीकी बीजी

इन तीनोंको महीन पीसके मसोंपर लेप करो तौ मसें छूछ निर्जीव पड जावेंगे तब उनपर नीलेथूथेका लेप करो तो झडकर सर्वतः गिरपडेंगे.

सहजार्शयत्न—मनुष्यके माता पिताके रजवीर्यदोषसे सहजार्श होता है इस पर कोई यत्न नहीं है. रोगीको योग्य है कि,पथ्यसे रहै, घृतका विशेष सेवन करै और दान, पुण्य, ईश्वरभजन करै तो सहजार्शका क्लेश विशेष न होगा.

सर्व अर्शमात्रके यत्न—एक समय श्रीनारदमुनिराजजीने मनुष्योंको अर्श (बवासीर) के असाध्य रोगसे अत्यंत पीडित देखके श्रीमहादेवजीसे प्रश्न किया कि, हे महाराज ! अर्शरोगके निवारणार्थ वैद्यक ग्रंथोंमें शंखिया (सम्बल) आदि विषक्रिया कई प्रकारसे वर्णन की हैं परन्तु विषक्रियाके व्यतिरिक्त आप कोई ऐसा सुगम उपाय बताइये कि, जिससे उक्त रोग मनुष्योंको त्रास न देकर समूल नष्ट होजावे तब महादेवजीने उक्त विनयानुसार लोकोपकारार्थ नारदजीको निम्न लिखित सार बताया कि, जिसके सेवनसे अर्शादि अनेक रोगोंसे मनुष्योंका छुटकारा होता है. सो अब हम शिवमतसे कांतिसार बनानेकी विधि लिखते हैं.

कांतिसारविधि—कांति लोहके बारीक २ पत्र बनाके तेल, छाँछ, मूत्र, काँजी और त्रिफलाके रसमें यथाक्रमसे ७ सात वार बुझाओ फिर रेतीसे रेतके चूर्ण कर डालो इसी चूरेके तुल्य मैनसिल और तुल्यही सोनामक्खी इन तीनोंको अग्निझालके रसमें खरल करके शरावसम्पुटमें बंद करदो. अब यह सम्पुट लुहारकी भट्टीमें धरके धौकनीसे तीक्ष्ण आंच दो जलजाने पर (जब इसकी गंध आना बंद होजावे) निकालकर उसे अष्टमांश पारेके साथ आँबलेके रसमें खरल करो और उक्त रीत्यनुसारही उसे चार बार ताव देके खलमें पीसलो अब यह जलपर तैरनेवाला उत्तम सार होगया तदनंतर इसपर विषखपरेके रसकी १० पुट पलासके रसकी १० पुट, थूहरके

१ सम्बलको अर्शनाशक अनेक पदार्थों (जैसे मक्खनादि) के संयोगसे मसोंपर लगानेसे मसें जड़से कटकर गिरपडते हैं परन्तु इस प्रयोगसे अनेक मनुष्योंकी प्राणहानी होगई है, इसलिये ऐसे विषप्रयोगादि उपाय कदापि उचित नहीं हैं।

२ अर्थात् गजेवलि, बीड या फौलाद जिसके पात्रमें दूध औटानेसे अधिक आँच देनेपर भी नहीं उफनताहै। इसलिये ऐसेही लोहके सार बनानेके उपयोगमें लाओ और अन्यको कदापि न लो।

दूधकी १० पुट,पुनर्नवाके रसकी १० पुट, शतावरीके रसकी १० पुट, गुरचके रसकी २० पुट, जामुनके वक्कलके रसकी ७ पुट, गूलरके वक्कलके रसकी ७ पुट, ग्वारपाठेके रसकी १० पुट, तेंदूके रसकी ७ पुट, आँवलासार (गंधक) की २० पुट, नींबूके रसकी २० पुट, पलाशके वक्कलकी२० पुट, सारसे बारहवाँ भाग हिंगुल ग्वारपाठेके रसके साथ १ पुट,घृतकी १० पुट और मधुकी १० पुट देके लोहसार सिद्ध करलो.

नित्य प्रति प्रातःकाल पिप्पली और मधुके संयोगसे १ रत्ती खिलाओ और क्रमशः बढ़ाते बढ़ाते ३ रत्ती पर्यंतकी मात्रा कर दो. खानेवालेसे स्वयं शिवजीका पूजन कराओ तथा ब्राह्मणद्वारा वेदमंत्रोंसे कराओ औषध देते समय इस मंत्रको पढ़ो या रोगीसे पढ़ाओ "ॐ अमृतं भक्षयामि स्वाहा " ऐसा कह मात्रा देदो और ऊपरसे खरेंटीका क्वाथ सेवन कराओ. इसपर पेठा, तेल, उर्द, मद्य और खटाई आदिक कुपथ्थी वस्तुयें रोगीको कदापि सेवन न करने दो.

जो उक्तौषध उक्त नियमानुसार दो तो वृद्धपुरुष भी तारुण्यताको प्राप्त हो, सर्वप्रकारके अर्श, मन्दाग्नि, श्वास, कास, पांडु, वातरक्त, मूत्रकृच्छ्र और अंत्रवृद्धादि अनेक असाध्यरोग भी नाश होंगे.

यह विधि वृहदात्रेय तथा भावप्रकाशमें लिखी है. इति क्रांतिसार.

तथा २-२ टंक हर्रकी छालमें ५ टंक पुराना गुड मिलाकर नित्यप्रति जलके साथ खिलाओ तो अर्श दूर हो.

तथा ३-अधोपुष्पी, खरेंटी, दारुहल्दी, पृष्टपर्णी, गोखुरू, इन्द्रयव, साइलके फूल, वडके अंकुर, गूलर (ऊमर) के अंकुर और पीपलके कोमल पत्र ये सर्वौषध २ दो टकेभर लेके कूटकर चूरा बनाओ. इस चूरेमेंसे नित्य दो टंकका क्वाथ बनाकर पिलाओ (और उसपर यह घृत खानेको दो तो और भी उत्तम होगा) तो बवासीर मात्र दूर हो.

१ ये इतनी पुट एकसंगही नहीं वरन् एकके पीछे एक क्रमशः देना चाहिये पुट इस प्रकारसे दीजावे कि, जिसका पुट देना हो उसी वस्तुके साथ सारको खरल करके टिकिया बनाकर सुखालो और सम्पुटमें रखके फूंक दो या वैसेही लोहेके पात्रमें रखके गोवरी (कंडा उपली) की आँच देदो ।

२ यह नील फूलकी एक बूटी है जिसे अन्धाहोली भी कहते हैं ।

तथा ४ जीवन्तीकी जड, कुटकी, पीपलामूल, कालीमिर्च, सोंठ, देवदारु, शतावरी, चंदन, रसोत कायफल, चित्रक, मोथा, प्रियंगु, खरेंटी शालपर्णी, कमलगट्टा, मँजीठ, कटियाली, बेलकी गिरी, मोचरस और पाठा ये सब औषध अधेले २ भरका चूरा कर इनके क्वाथका चार सेर रस लो इन औषधोंका चार सेर क्वाथ १ सेर गोघृतके साथ कडाहीमें औटाओ. क्वाथ जलजानेपर घृतको छानलो. यह शुद्धौषध संयोगित घृत नित्य २ टकेभर खिलाओ तो बवासीरमात्र दूर होगी.

तथा ५–सीसेकी गोली गौके घृतमें घिसकर १० दिनतक मसोंपर लगाओ.

तथा ६–२ टंक विष्णुक्रांता (बुटी विशेष) २ टंक कालीमिर्च और एक मासे भाँगको जलमें घोटके पिलाओ. इस ५ और ६ वें उपायसे बवासीर दबी रहैगी.

अर्शरोगीको वर्जित कार्य–मल मूत्रावरोध, स्त्रीसंग, घोडा, ऊंटादि पशुओंकी आरूढि (सवारी) दोनों पाँवके बल अधर बैठक और केले, करेले बाजरा इत्यादि उष्ण वस्तुएँ कदापि सेवन न करै.

चर्मकीलरोगयत्न[1] १–अग्नि तथा छार आदि क्रियासे मसे जलादो.

तथा २–चूना (खानेका) सज्जी, सुहागा और नीलाथोथा समानको ३ दिनतक नींबूके रसमें भिगाओ तदनंतर खरल करके चर्मकीलके मसोंपर लगाओ तो अवश्य नाश होजावेंगे.

इति नूतनामृ० चिकित्साखण्डे अर्शरोगयत्ननिरूपणं नामाष्टमस्तरंगः ॥८॥

मन्दाग्नि-भस्मक-अजीर्ण ।

मन्दाग्निभस्मकाजीर्णरोगाणां हि यथाक्रमात् ॥
तरंगे नवमे चात्र चिकित्सा लिख्यते मया ॥ ९ ॥

भाषार्थः–अब हम इस नवमें तरंगमें मन्दाग्नि, भस्मक और अजीर्ण रोगकी चिकित्सा यथाक्रमसे लिखते हैं.

---

[1] मूलद्वारके व्यतिरिक्त किसी अन्यपर मसे होना यह चर्मकीलरोग कहाता है इसका स्पष्टीकरण निदानखंडमें देखो ।

मन्दाग्नियत्न १–अद्रखके छोटे छोटे टुकड़े सैंधानोनके साथ नींबूके रसमें डालके मृत्तिकाके पात्रमें रखदो. इस अद्रखको थोड़ा थोड़ा नित्य खाया करो तो मंदाग्नि दूर हो यह वैद्यजीवनमें लिखा है.

तथा २–भोजनके पूर्व सैंधानोन और अद्रखकी चटनी नित्य खाया करो तो मन्दाग्नि नाश होकर क्षुधा बढ़े और जिह्वा तथा कंठकी शुद्धि होगी. भावप्रकाशमें लिखा है कि यह प्रयोग सदा पथ्यरूपही है.

भस्मकरोगयत्न–यदि भस्मकरोग साध्य हो तो रोगीको ऐसे पदार्थ भक्षण कराओ जो बढ़े हुए पित्तको शमन करके कफको विशेष वृद्धिगत करैं तो भस्मकरोग नाश होगा क्योंकि जो चिकित्सा कफकारक वही पित्तनाश होती है और जो पित्त नाश हुआ तभी भस्मकभी दूर होगा और जो असाध्य लक्षण हुए तब तो इससे रक्षा पाना दैववशातही जानो. भस्मक भस्म किये बिना क्या छोड़ैगा.

अजीर्णरोगयत्न १–हर्रकी छाल और सोंठके २ टंक चूर्णमें १० टंक गुड मिलाकर शीतल जलके साथ नित्य खिलाओ तो अजीर्ण दूर हो और क्षुधा बढै.

तथा २–हर्रकी छाल और सैंधानोनका नित्य सेवन करावो तो अजीर्ण मात्र नाश होकर क्षुधा बढ़ैगी.

तथा ३–सैंधानोन, सोंठ, कालीमिर्चका २ टंक चूर्ण नित्य गऊकी छाँछके साथ १५ दिवसपर्यन्त सेवन कराओ तो अजीर्ण, मंदाग्नि, पांडु और अर्श भी नाश होकर भूख लगैगी.

तथा ४–सोंठ, कालीमिर्च, पीपली, अजमोदा, सैंधानोन, श्वेत जीरा, श्यामा जीरा और सेंकीहुई हींगका १ तथा २ टंक चूर्ण घृतयुक्त खिचड़ीमें प्रथम ग्रासके साथ नित्य खिलाओ तो अजीर्णमात्र दूर होकर क्षुधा बढ़ै तथा गोला और प्लीहा भी दूर होंगे. इसे हिंगाष्टकचूर्ण कहते हैं.

तथा ५–जवाखार, सज्जी, चित्रक, पंचनोन, इलायची, पत्रज, भारंगी, पोहकरमूल, कचूर, निसोत, नागरमोथा, इन्द्रयव, डांसरफल, सेंकीहुई

१–२ मन्दाग्नि और भस्मकके यत्न प्राचीन अमृतसागरमें नहीं लिखेहैं इसलिये भावप्रकाश और वैद्यजीवनसे लिये हैं।

३ डांसरे ततड़ीके बीज जो खट्टे होते हैं।

हिंग, अमलवेत, जीरा, आँवले, हरेंकी छाल, पीपली, अजवायन, तिल्ली-का खार और पलाशके खारका चूर्ण, बिजौरेके रसमें ८ आठ पुट देके सिद्ध करो. जो इसमेंसे २ टंक नित्य जलके साथ सेवन कराओ तो अजीर्ण मात्र दूर होकर क्षुधा बढ़ैगी. इसीका नाम अग्निमुखचूर्ण है. गोला उदररोग, अंत्रवृद्धि और वातरक्तके लिये वडा लाभकारी है.

तथा ६–थूहर, आक, चित्रक, अरंडी, पुनर्नवा, तिली, आँधीझाड़ा, कदली, पलाश और डासरा (इन प्रत्येकका खार) अजवायन, अजमोद, जीरा, सोंठ, कालीमिर्च, पीपल और सेकीहुई हींग इन सबका चूर्ण अद्र-खके रसमें ६ पुट देकर खरल करो. यह चूर्ण नित्य शीतल जलके साथ सेवन कराओ तो अजीर्णमात्र दूर होकर क्षुधा बढ़ैगी. अनुपान बदलनेसे और रोग भी नाश करसक्ता है इसे वैश्वानरचूर्ण कहते हैं.

तथा ७–४ पैसेभर साँभरनोन, ३ पैसेभर सोंचरनोन, ५ टंक वाय-विडंग, ५ टंक सैंधानोन, ५ टंक धनियां, ५ टंक पीपली, ५ टंक पीप-लामूल, ५ टंक पत्रज, ५ टंक कालाजीरा, ५ टंक कालीमिर्च, ५ टंक नागकेशर, ५ टंक चव्य, ५ टंक अमलवेत, ५ टंक जीरा, ५ टंक सोंठ, १० टंक अनारदाने, १ टंक इलायची, १ टंक तज इनका ४ मासे चूर्ण प्रति दिन गऊकी छाँछ तथा काँजीके साथ नित्य सेवन करो तो अजीर्ण, गोला, प्लीहा, उदररोग, अर्श, संग्रहणी, बंधकोष्ट, शूल, शोथ, श्वास, कास, आमविकार, पांडु और मन्दाग्नि ये सर्व रोग दूर होंगे इसे लवणभास्कर चूर्ण कहते हैं.

तथा ८–१टंक सैंधानोन, २ टंक पीपलामूल, ३ टंक चव्य, ४ टंक चित्रक, ५ टंक सोंठ, ६ टंक हरेंकी छाल और इन सर्वौषधोंके तुल्य मिश्री डालकर चूर्ण बना लो, यह वड़वानलचूर्ण है नित्य दो टंक सेवनसे अजीर्ण नाशकर क्षुधा बढ़ाता है.

तथा ९–२ टंक शुद्धगंधक और १ टंक शुद्धपारेकी कजलीमें ५ टंक लोहसार और ५ टंक तांवेश्वर, मिलाकर लोहेके पात्रमें धरके अग्नि-पर चढ़ादो, पिघलजानेपर अरंडके पत्रोंपर ढालके १०० टकेभर जँभी-रीके रसके साथ खरल करो. फिर छायामें सुखाकर १०० टकेभर बिजो-रेके रसके साथ खरल करो. फिर छायामें सुखाके पीपली, पीपलामूल, चव्य,

चित्रक, सोंठके क्वाथकी ५ पुट दो–भलीभाँति सूख जानेपर इस सर्व पदार्थके तुल्य सेंकाहुआ सुहागा और आधा सोंचरनोन डालकर इन सबोंके तुल्य कालीमिर्च डालो. तदनंतर इसे चनेके खारकी ७ पुट देके प्रस्तुतकर काँचादिके पात्रमें धर दो, अब यह क्रव्यादिरस बनगया, जो दो मासे प्रतिदिन खिलाकर ऊपरसे सैंधानोन युक्त गोछाँछ पिलाओ तो अजीर्ण मात्र तत्क्षण दूर हो, अत्यंत गरिष्ठ भोजनभी पाचन होजावे, और शूल, गुल्म, वायुगोला, अफरा, प्लीहा, उदर येभी सब दूर होवेंगे.

तथा १०–जवाखार, सज्जी, सुहागा, शुद्ध पारा, शुद्ध गंधक, पीपली, पीपलामूल, चव्य, चित्रक, सोंठ इन सर्व पदार्थोंके तुल्य सिंकीहुई भाँग और आधी मुंगनेकी जड लो. पारे गंधककी कजली करके सर्वोषध डालके महीन पीसलो अनंतर १ दिन भाँगके रसमें, १ दिन मुंगनेकी जडके रसमें और १ दिन चित्रकके रसमें खरल करके धूपमें सुखाते जाओ और अंतको शरावसम्पुट करके गजपुटमें फूँक दो तदनंतर सात दिनतक अद्रखके रसमें खरलकरके निकाल धरो. अब यह ज्वालानलरस प्रस्तुत होगया जो १ या दो रत्ती गंधकके साथ चटाकर ऊपरसे गुड़का क्वाथ पिलाओ तो तत्क्षण अजीर्णमात्र दूर होकर क्षुधाकी दीर्घ वृद्धि हो और अतिसार, संग्रहणी, कफके रोग, उल्टी, अरुचि आदि भी दूर होवेंगे ये सर्व यत्न भावप्रकाशमें लिखे हैं.

तथा ११–शुद्ध गंधक, कालीमिर्च, चूक और सोंचरनोनका १ टंक चूर्ण नित्य जलके संग खिलाओ तो अजीर्ण मात्र दूर हो-बंधकुष्ठ जावे और क्षुधा लगै.

तथा १२–५ टंक शुद्ध पारा, ५ टंक शुद्ध गंधककी कजली, ५ टंक शुद्ध सिंगीमुहरा, १० टंक कालीमिर्च, २ टंक जायफल, इन सबको पीसके ५ दिनतक डासेरके रसमें खरल करो अब यह रामबाणरस बन-गया जो इसको एक रत्ती नित्यप्रति ७ दिनतक खिलाओ तो अजीर्ण-मात्र दूर होकर क्षुधा बढ़ैगी.

तथा १३–(शुद्ध पारा, गंधककी) कजली, अजमोद, त्रिफला, सज्जी, जवाखा , चित्रक, सैंधानोन, सोंचरनोन, जीरा, वायविडंग, साभर

नोन, सोंठ, कालीमिर्च, पीपल ये सर्वौषध तुल्य लेकर इन सबोंके तुल्य बकाइनके फलोंके छिलके लो, कजली सहित इन सबको जँभीरीके रसमें ७ दिनपर्यंत खरल करके १ रत्ती प्रमाणकी गोलियाँ बनालो. अब ये अग्नितुंडावती नामक गोली बनगई. जो नित्य १ गोली खिलाके ऊपरसे (हर्रेकी छाल, सोंठ, गुडका) क्वाथ पिलाओ तो अजीर्णमात्र दूर होके क्षुधा बढैगी और २ रोग भी इससे मिटैंगे.

तथा १४–१ भाग, सोंठ २ भाग कालीमिर्च, ३ भाग पिप्पली,४भाग सैंधानोन इन सबको नींबूके रसमें १० दिन खरल करके १ रत्तीकी गोलियाँ बनाओ. यह क्षुद्रबोधरस है जो एक गोली नित्य खिलाओ तो अजीर्ण मात्र दूर होकर क्षुधा बढैगी.

तथा १५–बिडनोन, सोंचरनोन, अजवायन, दोनों जीरे, हर्रेकी छाल, सोंठ, कालीमिर्च, पीपल, चित्रक, अमलवेत, अजमोद, धना और डासर फल तुल्य लेके कपडछान कर चूर्ण बनाओ जो यह चूर्ण नित्य २ टंक खिलाओ तो अजीर्ण मात्र दूर हो क्योंकि इसके बलसे एक बार पाषाण भी पाचन होवे तो अन्न पाचनमें क्या संदेह है.

तथा १६–शुद्ध गंधक,कालीमिर्च, पीपल, सोंठ, सैंधानोन, जवाखार और लौंगका चूर्ण १० दिनतक नींबूके रसमें खरल करके १ रत्तीप्रमाण की गोलियाँ बनाओ जो नित्य १ गोली दो तो अजीर्ण मात्र दूर होकर क्षुधा बढैगी.

तथा १७–६ भाग हर्रेकी छाल , ४ भाग पीपली, २ भाग चित्रक, २ भाग सैंधानोनका चूर्ण बनाकर २ टंक नित्य जलके साथ सेवन कराओ तो अजीर्ण दूर होकर क्षुधा लगैगी.

तथा १८–२टंक सेंका सुहागा, २ टंक पीपल, २ टंक शुद्ध सिंगी-मुहरा, २ टंक हिंगुल, २ टंक कालीमिर्चका चूर्ण १० दिनतक नींबूके रसमें खरल करके मटरके समान गोलियाँ बनालो. अब यह अजीर्ण-कंटकरस बना, जो इसकी १ तथा २ गोलियाँ जलके साथ सेवन कराओ तो अजीर्णमात्र दूर होकर भूख लगैगी. यह विषूचिका नाश करनेकी भी शक्ति रखता है.

तथा १९–२ टंक शुद्ध सिंगीमुहरा, २ टंक सेंका सुहगा, २ टंक

कालीमिर्च, २ टंक सेंधानोनके चूर्णमें १ सेरभर अद्रखका रस मिलाके (जिरादो, रिंजादो, मिलादो) फिर १ सेरभर नींबूका रस जिरादो अनंतर १ सेरभर दहीका पानी भी इसीमें जिराके १ रत्ती प्रमाणकी गोलियाँ बाँधलो. यह भी एक प्रकारका क्रव्यादिरस है इसकी १ गोली नित्य जलके साथ सेवन कराओ तो अजीर्णमात्र तत्क्षण दूर होकर क्षुधा वृद्धि होगी, अफरा, उदररोग, गोला, शूलभी इससे नाश होवेंगे.

तथा २०-१० टंक दालचीनी, १० टंक इलायची, १५ टंक लौंग, १० टंक सेंकासुहागा, १० टंक चित्रक, ५ टंक कालीमिर्च और २ पैसेभर सैंधानोनका चूर्ण बनाके नित्य १ $\frac{1}{4}$ सवाटंक चूर्ण उष्ण जलके साथ सेवन कराओ तो अजीर्ण तत्क्षण दूर होगा. इसे क्रव्यादिचूर्ण नाम दिया है ये सर्व यत्न वैद्यरहस्यमें लिखे हैं.

तथा २१-सोंठ, कालीमिर्च, पीपली, त्रिफला, पाँचोनोन, सेंका सुहागा जवाखार, सज्जी, (शुद्ध पारे और शुद्ध गंधक की) कजली, शुद्ध सिंगीमुहराके चूर्णको ७ पुट अद्रखके रसमें देके १ रत्ती प्रमाणकी गोलियाँ बनालो. अब यह क्षुधासागरचूर्ण, प्रस्तुत हुआ जो इसकी १ तथा २ गोली लौंगके क्वाथके संग खिलाओ तो तत्क्षण अजीर्णमात्र दूर होकर क्षुधा बढैगी.

तथा २२-१०० सौ हर्र गौके छाँछमें औटाकर गुठली निकालडालो सोंठ, कालीमिर्च, पीपली, चव्य, चित्रक, दालचीनी, पांचोंनोन[3] सेंकी हींग, जवाखार, सज्जी, दोनों जीरे, अजमोद और इन सबके समान चूक इनके चूर्णमें नींबूके रसकी दश पुटें देके यह चूर्ण उपरोक्त विधि प्रस्तुत हर्रोमें भर दो और इन्हें धूपमें सुखाके धरदो, अब ये अमृत हरीतकी बन गईं जो १ हर्र प्रतिदिन खिलाओ तो अजीर्णमात्र दूर होकर क्षुधावृद्धि हो तथा मंदाग्नि, उदररोग, गोला, शूल, संग्रहणी, बंधकुष्ठ, अफरा और आमवात भी नाश होंगे.

---

१ दहीको कपडेमें बांधकर ऊपर लटकादो और नीचे मृत्तिकाका पात्र रखदो इसमें जो दहीका पानी टपक जावेगा सो उक्तोपयोगमें लाओ।

२।३-१ सेंधा, २ सांभर, ३ सामुद्रीय, ४ बिडनोन और ५ सोंचरनोन।

तथा २३–७ टंक कालीमिर्च, २ टकेभर अजवायन, २ टकेभर चित्रक ७ टंक पीपल, २ टंक सोंचरनोन, २ टंक साँभरनोन, २ टंक सेंधानोन, (१ टंक शुद्ध पारा और १ टकेभर शुद्ध गंधककी) कजली, २ टकेभर पीपलामूल, ५ पैसेभर सोंठ, ५ पैसेभर हरंकी छाल, ५ टंक बहेड़ेकी छाल, १ टकेभर जीरा, ५ टंक चव्य और इन सबसे आधी लौंगके चूर्णको अद्रखके रसमें १० पुट देके इन सबके तुल्य चूक मिलाओ अनंतर बारीक पीसके २ मासे प्रमाणकी गोलियाँ बनालो वैद्यविनोदमें इसे लवंगामृत गुटिका नाम दिया है जो इसकी १ गोली जलके साथ नित्य खिलाओ तो अजीर्णमात्र दूर होकर क्षुधा बढ़ै पुष्टता होकर अन्य रोग भी नाश होंगे.

तथा २४–५ टंक दालचीनी, १० टंक लवंग, १० टंक दोनों जीरे १० टंक सोंठ, १० टंक काली मिर्च, ५ टंक अजमोद, ५ टंक हरंकी छाल ५ टंक पत्रज, १० टंक डांसरे, २० टंक सैंधानोन, २० टंक सोंचर-नोन, १५ टंक निसोत, पाव ऽ। भर सोनामक्खी, ऽ॥ आधसेर अना-रदाने इन सबके चूर्णको नींबूके रसकी १० पुट देकर इन सब पदार्थके तुल्य चूक मिलाओ और पीस सुखाके रख दो. यह राजवल्लभ चूर्ण बनगया, जो इसे २ टंक नित्य जलके साथ सेवन कराओ तो अजीर्णमात्र, बंधकुष्ठ, मंदाग्नि, उदररोग, गोला और प्लीहादि दूर होकर क्षुधा बढैगी.

तथा २५–हरंकी छाल, पीपल, सोंचरनोनका चूर्ण, नित्य २ टंक उष्ण जलके साथ सेवन कराओ तो सर्वप्रकारके अजीर्ण और आध्मान दूर होकर भूँख लगैगी.

तथा २६–दाख, हरंकी छाल, मिश्रीको पीसके मधुके साथ दो टंक, प्रमाणकी गोलियाँ बाँधलो जो जलके संग नित्य १ गोली सेवन कराओ तो अजीर्णमात्र दूर हो. यह वृंदमें लिखा है.

तथा २७–जीरा, सोंचरनोन, सोंठ मिर्च, पीपल, सेंधानोन, अजमोद, सेंकी हींग, हरंकी छाल (ये सब अधेले २ भर) और २ टके-भर निसोत इन सबका चूर्ण बनाके २ टंक नित्य उष्ण जलके साथ सेवन कराओ तो अजीर्णमात्र दूर होकर क्षुधा बढैगी इसे जीरकादि चूर्ण कहते हैं यह योगतरंगिणीमें लिखा है.

तथा २८–अजमोदा, हरेंकी छाल, चित्रक, लवंग, दालचीनी, सेंधा नोन इन सबका २ टंक चूर्ण नित्य जलके साथ खिलाओ तो अजीर्ण दूर होकर भूँख बढ़ेगी यह सर्वसंग्रहमें लिखा है.

तथा २९–२ टंक शुद्ध गंधक, २ टकेभर चित्रक, २ टंक कालीमिर्च, २ टंक पीपली, ५ टंक सोंठ, २ टंक जवाखार, १ टंक सेंधानोन, १टंक सोंचरनोन, १ टंक सांभरनोनके चूर्णको ७ दिनतक नींबूके रसमें खरल करके १ टंक प्रमाणकी गोलियाँ बांधलो इसे सर्वसंग्रहमें गंधकवटी नाम दिया है जो इसकी १ गोली नित्य जलके साथ खिलाओ तो अजीर्ण मात्र, शूल, आमदोष, गोला, आध्मान भी दूर होंगे.

ये अजीर्ण मात्रके यत्न दर्शित किये विशेषतः यह है कि, आमाजीर्ण पंचलवण विदग्धाजीर्ण-लंघन विष्टब्धाजर्णि-सेंक. तथा रसशेषाजीर्ण भी सेंक (ताव) से नाश होता है.

इति नूतनामृतसागरे चिकित्साखण्डे मंदाग्निभस्मक, अजीर्णरोग चिकित्सानिरूपणं नाम नवमस्तरंगः ॥ ९ ॥

विषूचिकादिरोगाः ।

विषूचिकालसकयोर्विलम्बिकाकृमिपांडुकामलानाम् ॥
चिकित्सा हलीमकस्य यथाक्रमेण रोगस्य ॥
वियन्निशाधवेऽस्मिन् तरङ्गे लिख्यते च विचार्य
तन्त्राणि ॥ १० ॥ पदचतुरूर्ध्वाभिधं वृत्तमिदम् ॥

भाषार्थ–अब हम इस १० दशवें तरंगमें १ विषूचिका, २ अलस, ३ विलम्बिका, ४ कृमि, ५ पांडु, ६ कामला और ७ हलीमक इन रोगोंकी चिकित्सा यथाक्रमसे अनेक आयुर्वेदीय ग्रन्थोंको विचारके लिखते हैं.

विषूचिकायत्न १–एक पोत्या लहसनकी बीजी, जीरा, शुद्ध गंधक, सेंधानोन, सोंठ, कालीमिर्च, पीपल और सेंकी हींगके चूर्णको नींबूके रसकी ५० पुट देकर छोटे बेरके समान गोलियां बनालो जो एक गोली जलके साथ खिलाओ तो विषूचिका तत्क्षण दूर हो. तथा अजीर्ण भी नाश होकर भूँख लगेगी.

तथा २–वायविडंग, सोंठ, पीपली, हरेंकी छाल, आंवला, बेहेड़ा, वच, गिलोय, शुद्ध भिलावाँ और शुद्धसिंगीमोहराके चर्णको १दिन गोमूत्रमें खरल करके १ रत्ती प्रमाणकी गोलियाँ वनालो. जो अद्रखके रसके साथ खिलाओ तो १ गोलीसे अजीर्ण, २ गोलीसे विपूचिका, ३ गोलीसे सर्प विष और ४ गोलीसे सन्निपात दूर होगा. इसे संजीवनीगुटिका कहते हैं.

तथा ३–सेंका सुहागा ५ टंक ५ टंक शुद्ध पारा, ५ टंक शुद्ध गंधक, ५ टंक शुद्ध सिंगीमुहरा ५ टंक पीली कौडीकी भस्म २ टंक सज्जी २ टंक पीपली २टंक सोंठ २ टंक कालीमिर्च प्रथम पारे गंधककी कजली बनाकर उसमें ये सर्वौषधें डालदो और ८ दिनतक जंभीरीके रसमें खरल करके १ रत्ती प्रमाणकी गोलियाँ बनालो. यह अग्निकुमाररस बनगया जो इसकी १ गोली खिलाओ तो विषूचिका नाश होवेगी.

तथा ४–१ सेर आकके पत्रका रस १ सेर धतूरेके पानका रस १ सेर थूहरका दूध १ सेर मुंगनेकी जडका रस २ टकेभर कूट २ टकेभर सैंधानोन १ सेर बेल ४ सेर काँजीका जल इन सबको कडाहीमें डालकर मंद मंद आँचसे औटाओ पकजानेपर जब रस जलकर तेलमात्र रहजावे उतार कर छानलो. जो इस तेलका मर्दन करो तो विषूचिका, पक्षाघातादि सब रोग दूर होवेंगे यह वैद्यरहस्यमें लिखा है.

तथा ५–कणगजके वीज, सागरगोटीकीजड़, आँधी झाडे (अपामार्ग) की जड, नीमकी छाल, गिलोय और कुडेकी छालके २ टंक चूरेका काथ नित्य तीन दिनतक पिलाओ तो विपूचिका जावेगी.

तथा ६–हरेंकी छाल, वच, सेंकीहींग, इन्द्रयव, भृंगराज, सोंचरनोन, अतीस इनका चूर्ण बनाकर २ टंक पानीके साथ नित्य सेवन कराओ तो विपूचिका तथा बवासीर दोनों नाश होवेंगे.

तथा ७–४ मासे इलायची, ४ मासे लौंग, १ मासे अफीम, १० मासे जायफल इनका ४ मासे चूर्ण नित्य उष्णजलके साथ खिलाओ तो विषूचिका तत्क्षण अच्छी होगी.

तथा ८–४ पैसेभर जौका आटा, ५ टंक जवाखार इनको छाँछमें पकाके सहता सहता उष्ण लेप करो तो पेटका शूल और विषूचिका दूर हो.

तथा ९–चूकेको औटाके सेरभर रस निकालो और उसमें ५ टंक सैंधा-नोन, १० टंककूट, ऽ। पावभर तेल डालकर मन्दाग्निसे पकाओ जब रस जल-कर तेलमात्र रहजावे तब उतारकर छानलो. यह तेल विषूचिकाके रोगीको मर्दन करो तो विषूचिका दूर होवेगी.

तथा १०–जो विषूचिकावालेकी कुक्षिमें पीडा हो तो कडवे तेलको उष्ण करके मर्दन करो पीडा नाश होगी.

तथा ११–विषूचिकावालेको प्यास अधिक लगै तो लवंगका क्वाथ पिलाओ तो प्यास मिट जावेगी.

तथा १२–जो विषूचिकाका वेग विशेष वृद्धिपर दीखै तो रोगीके दोनों पार्श्वभागमें दाग दो. विषूचिका नाश होगी.

तथा १३–बिजौरेकी जड, सोंठ, कालीमिर्च, पीपली, हल्दी, कणक-जके बीजोंको काँजीमें महीन पीसके अंजन लगादो तो विषूचिका दूर हो ये यत्न सर्वसंग्रहमें लिखे हैं.

अलस तथा विलम्बिकारोग यत्न १–६ टंक साबुन और १ टंक नीला-थोथा, दोनोंको पीसके गुदामें लगाओ तो बंद छूटकर उक्त रोग दूर हों.

तथा २–दारुहल्दी, चोष, कूट, सेंकी हींग और सैंधानोन काँजीके जलमें पीसके उष्णकर सहताहुआ उदरपर लेप लगाओ तो अलस और विलम्बिका दोनों दूर होवेंगे.

तथा ३–आधपावऽ= जौका आटा और १ टंक सज्जीको जलमें डालके पकाओ और कूँखपर लेप करो तो विषूचिका, अलस, विलम्बि-का ये सर्व रोग दूर होंगे.

कृमिरोगयत्न १–२ टंकभर अजवायन बाँसी जलके साथ नित्य सेवन कराओ तो उदरके कृमि मूलद्वारसे मलके साथ बाहर निकल जावेंगे.

तथा २–१ टंक पलासपापडा पानीमें पीसके २ टंक मधुके साथ नित्य ५ दिनतक पिलाओ तो कृमि दूर हों.

तथा ३–दो टंक वायविडंग महीन पीसकर नित्य मधुके साथ ७ सात दिनतक चटाओ तो कृमि दूर हों.

तथा ४–वायविडंग, सैंधानोन, हरेंकी छाल और जवाखारका

२ टंक चूर्ण नित्य छाँछके साथ सात दिनतक पिलाओ तो कृमि जावें.

तथा ५–उक्त चूर्णमेंही नीमके पत्तोंका १० टंक रस मिलाकर नित्य ७ दिन पिलाओ तो कृमि नाश हों.

तथा ६–१ टंक शुद्ध पारा और २ टंक शुद्ध गंधककी कजली तीव्र अजवायन ४ टंक, बकायनके फलोंके छिलके ५ टंक पलासपापडेका२टंक चूर्ण, ५ टंक मधुके साथ नित्य ७ दिन चटाओ तो कृमि दूर हों. ये सर्व यत्न सर्वसंग्रहमें लिखे हैं.

तथा ७–नागरमोथा, त्रिफला, देवदारु और मुँगनेकी छालके ५ टंक चूर्णका क्वाथ नित्य ७ दिनतक पिलाओ तो कृमि दूर हों.

तथा ८–वायविडंग, सैंधानोन, सेंकी हींग, पीपली, कपेला, सोंचरनो-नका २ टंक चूर्ण सात दिनतक उष्ण जलके साथ सेवन कराओ तो पेटके कृमि मात्र नाश होवें. यह वैद्यविनोदमें लिखा है.

शिरमेकी लीख तथा जुओंके नाशका उपाय १–धतूरेके पत्रोंके रसमें पारा घोटकर शिरमें लगाओ तो जुओंका नाश होगा.

तथा २–नागरवेलके पानके रसमें पारा रगडके लगाओ तो लीखे तथा जुयें निश्चय मरें.

सूलद्वारोद्भव सूक्ष्मकृमिका यत्न १ लहसन, कालीमिर्च, सेंधानोन हींगको पानीमें पीसके गुदाके भीतर लेप करो तो सूक्ष्म कृमि नाश होवें.

मच्छर, खटमल, चामजुयें आदिका यत्न १–महुएके फूल, वायविडंग, कलिहारी (लांगली) की जड, मैनफल, चंदन, राल, खश, कूट, भिलावाँ और लोबानका चूर्ण बनाकर घरमें धूनी दो तो मच्छर, खटमल आदि समस्त दूर होवेंगे ये सब यत्न वैद्यरहस्य तथा वैद्यविनोदमें लिखे हैं.

पांडु, कामला और हलीमकके यत्न १–सात दिनतक गोमूत्रमें, पकाये हुए कान्तिसारको महीन करके १ टंक नित्य जलके साथ १५ दिनतक सेवन कराओ तो पांडुरोग दूर हो.

---

१ गेरूके सदृश लाल रंगकी बुकनी प्रसिद्धही है ।

२ मूल द्वारका स्थान बडा कोमल रहता है इसलिये उक्तोपचार करनेके पश्चात् गुदाके भीतर घी लगादो यह लेप घृतके साथही करो अर्थात् पानीमें पीसनेके पल्टे घृतमें पीसो तो उत्तम होगा ।

तथा २–गोमूत्रमें पकायाहुआ १ टंक मंडूर नित्य गुडके साथ १५ दिनतक खिलाओ तो पांडुरोग दूर हो.

तथा ३–साँठीकी जड़, निसोत, सोंठ, मिर्च, पीपल, वायविडंग, दारुहल्दी, चित्रक, कूट, हल्दी, त्रिफला, दात्यूणी (जंगली, जमालगोटेकीजड) चव्य, इन्द्रयव, कुटकी, पीपलामूल, नागरमोथा, काकडासिंगी, करेलेकी वेल, अजवायन और कायफल ये सब टके टकेभर और इनसे दूना मंडूर लेके सबका चूर्ण करडालो. इस चूर्णको अष्टगुणे गोमूत्रमें पकाके १ टंक प्रमाणकी गोलियाँ बांधलो जो गोली नित्य गौकी छाँछके साथ १५ दिन तक सेवन कराओ तो असाध्य पांडु, कामला तथा हलीमक तीनों दूर हों. और श्वास, कास, शोथ, शूल, अफरा, प्लीहा, अर्श, संग्रहणी, कृमि, वातरक्त और कुष्ठ ये समस्त रोग भी दूर होंगे इसे पुनर्नवादि मण्डूर कहते हैं.

तथा ४–५ टंक हर्रकी छाल, ५ टंक आँवले, ५ टंक बहेरेकी छाल, ५ टंक सोंठ, ५ टंक कालीमिर्च, ५ टंक पीपली, ५ टंक नागरमोथा, ५ टंक वायविड़ंग, ५ टंक चित्रकके चूर्णमें ९ पैसेभर लोहसार मिलाओ. अब यह नवायसचूर्ण बनगया, इसमेंसे ९ रत्ती नित्य मधु या गौकी छाँछ या गोमूत्र तथा घृतसे १५ दिन खिलाओ तो पांडु, शोष, अग्निमांद्य और अर्श ये सर्व रोग दूर होवेंगे. कोई कोई वैद्य इसकी मात्रा २ से १८ रत्ती तक भी बढ़ा देते हैं.

तथा ५–अडूसा, गिलोय, नीमकी छाल, त्रिफला, चिरायता, कुटकीके २ टंक चूर्णका क्वाथ मधुके साथ नित्य १० दिनपर्यंत सेवन कराओ तो पांडु, कामला, हलीमक और रक्तपित्त ये सब रोग दूर होंगे.

तथा ६–त्रिफला, गुरुच, दारुहल्दी, या नीम इनमेंसे किसी १ का रस (तथा सर्व सांयोगिक रस) मधुके साथ १० दिनतक पिलाओ तो पांडु कामला और हलीमक ये सर्वरोग दूर होवेंगे.

तथा ७–दडघलका रस नेत्रोंमें आँजो तो उक्त तीनों रोग दूर हों. यह वैद्यरहस्यमें लिखा है,

तथा ८–चिरायता, कुटकी, देवदारु, नागरमोथा, गुरुच, पटोल, धमासा, पित्तपापड़ा, नीमकी छाल, सोंठ, कालीमिर्च, पीपली, चित्रक, त्रिफला, वायविडंगका चूर्ण और इन सबोंके तुल्यही कांतिसार इसमें मिला-

कर नित्य १ टंक मधु अथवा छाँछके साथ सेवन कराओ तो पांडु, कामला, हलीमक, शोथ, प्रमेह, संग्रहणी, श्वास, कास, रक्तपित्त, अर्श, आमवात, गुल्म और कुष्ठ ये सर्व रोग दूर होवेंगे. भावप्रकाशमें यह अष्टादशांगावलेह लिखा है.

तथा ९–कटुतुम्बीके रसका नास दो तो पांडु, कामला, दूर हो.

वर्जित पदार्थ–पांडुरोगसे पीडित मनुष्यको यव, गेहूं, चावल, मूंग, अरहर और मसूरके व्यतिरिक्त अन्यान्य भक्षणार्थ कदापि न दो.

इति नूतनामृतसागरे चिकित्साखण्डे विषूचिकादिहलीमकपर्यंत
रोगाणां यत्ननिरूपणंनाम दशमस्तरंगः ॥ १० ॥

रक्तपित्त, राजरोग, शोष ।

चिकित्सा रक्तपित्तस्य रोगराट्शोषयोस्तथा ॥
विधुभूमिमिते चास्मिन् तरङ्गे लिख्यते मया ॥ १ ॥

भाषार्थ–अब हम इस ग्यारहवें तरंगमें यथाक्रमसे रक्तपित्त, राजरोग और शोषकी चिकित्सा लिखते हैं.

रक्तपित्तयत्न १–जिसकी नासिका, नेत्र, कर्ण या मुखसे रुधिर गिरता हो उसे हर्र, त्रिफला, निसोत अथवा किरवारेका जुलाब दो तो रक्तपित्त दूर हो.

तथा २–जिसके अधोमागसे रक्त गिरता हो उसे वमन करानेसे रक्तपित्त दूर होगा.

तथा ३–खस, कमलगट्टा, अडूसा, गुरवेल, मुलहठी, महुआ, नागरमोथा, रक्तचन्दन और धनियांके २ टंक चूर्णका क्राथ मधुके संग पिलाओ तो रक्तपित्त दूर हो.

तथा४–प्रियंगु (गोंदनी) के फूल, लोध, रसोत , कुम्हारके चाककी मिट्टी और अडूसाके दो टंक चूर्णका क्राथ मधु और मिश्री मिलाके १० दिन पर्यन्त पिलाओ तो रक्तपित्त दूर हो.

तथा ५–नाकसे रुधिरगिरता हो तो दूबके रस या अनार पुष्परस या अलताईके रस या हर्रको शीतल जलमें पीसके उस जलका नास दो तो रुधिरप्रवाह बंद होगा.

तथा ६–दूर्वा और आँवलेकी शीतल जलमें पीसके मस्तकपर लेप करो तो नाकसे रुधिर गिरना बंद हो.

तथा ७–पका गूलर, या छुहारा (खारक) या द्राक्ष (मुनक्का) को मधुके साथ खिलाओ तो रक्तपित्त दूर हो. ये यत्न वैद्यविनोदमें लिखे हैं.

तथा ८–धनियाँ, आँवला, अडूसा, द्राक्ष, पित्तपापडेको जलमें भिगोकर ठंढाईके समान उसीमें पीस डालो और चार टंक छानके पिलाओ तो रक्तपित्त, ज्वर, दाह, प्यास ये सब दूर होवें.

तथा ९–दाख, चन्दन, लोध, गोंदनीके फूलोंको महीन पीसके मधुके साथ १० दिन पर्यंत सेवन कराओ तो सर्वप्रकारका रक्तपित्त नाश होकर रक्तबहाव बंद होजावेगा.

तथा १०–वसंतमालनीरस या वीजाबोलबद्धरस अथवा पर्पटीरस देओ तो रक्तपित्त दूर होकर नाकसे रक्त गिरना बंद हो.

तथा ११–काँदाके रसका नास दो तो रक्तपित्त बंद हो.

तथा १२–१०० शतवार शीतल जलसे घीको धोकर मस्तकपर लेप करो तो नकसीर (नाकसे रक्त गिरना) बंद हो.

तथा १३–श्वेत कूष्मांड (भूरा कुम्हडा) को छीलके सब बीज निकाल डालो. मृत्तिकाके पात्रमें डालके जलसे पकाओ, पकनेपर ठंढा करके गाढे वस्त्रसे छानलो जिससे पानी निकलकर शुद्ध पेठा रहजाय, इस घीके साथ कडाहमें डालकर मंद मंद आँचसे तल डालो इसके छनेहुए जलमें (जो पहिले छान धराथा मिश्रीकी चासनी बनाकर उसमें वह पेठा जो तलके धरा है) डालदो तथा उसीके साथही २ टकेभर पिप्पली, २ टकेभर सोंठ २ टकेभर जीरा २ टकेभर धनियाँ २ टंक पत्रज २ टंक इलायची और ५ टंक वंशलोचनका महीन पिसाहुआ चूर्ण और ऽ। पावभर मधु डालकर रखलो अब यह कूष्मांडावलेह प्रस्तुत होगया, जो इसको नित्य १ तथा २ टंक खिलाओ तो रक्तपित्तज्वर, दाह, प्यास, प्रदर, क्षीणता, वमन, स्वरभंग श्वास कास और क्षयी ये सर्व रोग दूर होंगे. श्वेतके अभावमें पका हुआ पीतकूष्मांड भी उपयोगमें ला सक्ते हैं.

तथा १४–इलायची, पत्रज, वंशलोचन, तज, दाख, पीपली ये सब एक

पैसेभर, १ टकाभर मिश्री, १ टकाभर मुलहटी, एक टकेभर खारकके चूर्णमें २ टकेभर मधु मिलाकर गोलियाँ बनालो जो इसमेंसे एक गोली नित्य खिलाओ तो रक्तपित्त, श्वास, कास, पित्तज्वर, हिचकी, मूर्छा, मद, भ्रम, प्यास, पार्श्वशूल, अरुचि, शोथ, स्वरभंग और क्षयी ये सर्व रोग, दूर होवेंगे इसे एलादि गुटिका कहते हैं ये सब यत्न वैद्यरहस्यमें लिखे हैं.

राजरोग शोषयत्न १–८ टंक वंशलोचन, ४ टंक पिप्पली, २ टंक इलायची, १ टंक तज और १६ टंक मिश्रीका चूर्ण मधु और मक्खनके साथ चटाओ तो राजरोग, शोथ, ज्वर, श्वास, कास, पार्श्वशूल, मन्दाग्नि, अरुचि, दाह और रक्तपित्त,ये सर्व रोग दूर होवेंगे. इसे शीतोपलादि अवलेह कहते हैं.

तथा २–गिलोयसत्व और लोहसारका मिश्रण करके प्रतिदिन १ टंक माखन और मधुके साथ खिलाओ तो राजरोग, शोष जाय.

तथा ३–३ भाग पारदभस्म (मराहुआ पारा) २ भाग स्वर्ण भस्म, १ भाग शिलाजीत और १ भाग गंधक इन सबको इकट्ठे पीसके पीली कौडियोंमें भर दो और बकरीके दूधमें सुहागा पीसके उन कौडियोंके मुखपर लगादो (जिसमें मुँह बंद होजाय) इन कौडियोंको एक गडहे (मिट्टीका छोटा बर्तन, डुवला) में भरके सराईसे कपडामिट्टी लगाकर उस बर्तनका मुख भली भाँति बंदकरके गजपुटमें फूकदो. स्वांग शीतल होजानेपर निकालके खरल कर डालो यह राजमृगांक बनगया, जो इसकी ४ रत्ती प्रमाणकी मात्रा १ मास पर्यंत वर्द्धमान पिप्पली और मधुके साथ सेवन कराओ तो राजरोग, शोष अवश्य दूर होवेंगे.

तथा ४–५ टंक भीमसेनी कपूर, ५ टंक तज, ५ टंक कंकोल, ५ टंक जायफल; ५ टंक लवंग; ७ टंक नागकेशर, ८ टंक पिप्पली, ९ टंक सोंठ और इन सबके बराबर मिश्री इन सबका चूर्ण बनाकर १ टंक नित्य सेवन कराओ तो राजरोग, शोष दूर होवेंगे यही कपूरादि चूर्ण जुदे जुदे अनुपानसे अरुचि कफ, क्षयी, श्वास, कास, गोला, अर्श, वमन और कंठरोगादि कोभी नाश करता है.

तथा ६–(५ टंक शुद्ध गन्धक ५ टंक शुद्ध पारा) की कजली ५ टंक हिंगुल, १ टंक मैनशिल, ५ टंक अभ्रक और इन सबसे आधा कांतिसार

इन्हें शतावरीके रसमें १४ पुट देके सुखालो यह कुमुदेश्वर रस बनगया जो इसकी २ तथा ३ रत्तीकी मात्रा प्रतिदिन प्रातःकाल मिश्रीके साथ सेवन कराओ तो राजरोग, शोष, वात, पित्त, कफके रोग और सर्व प्रकारके ज्वर दूर होवेंगे ये सर्व यत्न वैद्यरहस्यमें लिखे हैं.

तथा ६–चौलाईको पकाके घृतके साथ नित्य खिलाओ तो राजरोग; बहुमूत्र दूर होवें.

तथा ७–पकेहुए बडे गीले ५०० आँवले मृत्तिकाके पात्रमें पकाकर रस निकाल लो इस रसमें ५०० टकेभर मिश्री मृत्तिकाके पात्रमेंही डालकर चासनी बनाओ (हो सके तो इस चासनीको किसी चांदीके पात्रमें रक्खो न तो उसी मृत्तिकाके पात्रमें रहने दो)तदनंतर उसमें दाख,अगर,चंदन,कमलगट्टा, इलायची, हरेंकी छाल; काकोली, क्षीरकाकोली, ऋद्धि, वृद्धि, मेदा, महामेदा, जीवक, ऋषभ, गुरच, काकडासिंगी,पोहकरमूल, कचूर, अडूसा,विदारीकंद, खरेंटी, जीवंती, शालपर्णी, पृष्ठपर्णी, दोनों कटियाली, बेलकी गिरी, अरलू, कुंभेरपाठा ये सब औषध १ एक टकेभर तथा ६टकेभर मधु, १ टकेभर पिप्पली,२टकेभर तज, २ टंक पत्रज, २ टंक नागकेशर, २टंक इलायची और२टंक वंशलोचन इन सर्वौषधोंका चूर्ण डालकर उत्तमप्रकारसे संयुक्त करदो. अब यह चिमनप्रसावलेह बनगया. जो नित्य १ टकेभर खिलाओ तो राजरोग, दोष दूर होकर बल और शरीरकी पुष्टि बढै तथा इसके सेवनसे वृद्धभी तारुण्यता धारण कर सक्ता है.

तथा ८–१ टकेभर अडूसा और कटियालीका रस निकाल१ टकेभर मधु और २ टंक पिप्पलीके साथ नित्य सेवनकराओ तो राजरोग दूर हो.

तथा ९–१ भाग शुद्ध पारा और २ भाग शुद्धगंधककी कजलीमें १ भाग मृगांक (स्वर्णभस्म) और १ भाग अनाबिधे मोतियोंका चूर्ण मिलाकर इन सबोंको सराई (दिया, सकोरा) में रक्खो. इस दियेपर दूसरा दिया जमाकर कपड़मिट्टीसे बंदकरदो, इस शरावसम्पुटको सुखाकर मृत्तिकाके घड़े (आधे घड़ेमें नोन, बीचमें सम्पुट और ऊपरसे फिर मुँहतक नोन भरा हुआ) में धर दो और इस घड़ेको चार प्रहर १ दिनभर अच्छी तीक्ष्ण आँच देकर स्वाँग शीतल [illegible] घड़ेमेंसे सम्पुट और सम्पुटमेंसे रस बड़ी युक्तिपूर्वक [illegible] निकालो इसका कुमुदेश्वररस नाम

दिया है. जो नित्य १ तथा २ रत्तीकी मात्रा मिश्रीके साथ खिलाओ तो राजरोग दूर होवेगा.

तथा १०–पारा और गन्धक समान भागकी कजली करके पीली कौडियोंमें भर दो, इन कौडियोंके मुखपर सुहागेका डाट लगाकर अग्निसे तपाओ, तदनंतर इन कौडियोंको शरावसम्पुट करके गजपुटमें फूंक दो. स्वांगशीतल होजानेपर सरावसम्पुटमेंसे कौडियोंको निकाल कर महीन पीसलो यह पारदेश्वररस रुद्रदत्तमें लिखा है. जो इसकी एक रत्तीप्रमाणकी मात्रा नित्य सेवन कराओ तो राजरोग, शोप, श्वास, कास, संग्रहणी और ज्वरातिसार ये सर्व रोग दूर होवेंगे.

तथा११–चरकमें लिखा है कि शुद्ध शिलाजीतके सेवन करानेसे भी राजरोग नाश होजावेगा.

तथा–१२–१० टंक तालीसपत्र,१० टंक चित्रक,१० टंक हरेंकी छाल १० टंक अनारदाना, १० टंक डांसरपा, २ टंक आजमोद, २ टंक गज-पीपली, २ टंक अजवायन, २ टंक झाऊवृक्षकी जड़, २ टंक जीरा, २ टंक धनियां, २ टंक जायफल, २ टंक लौंग, २ टंक तज, २ टंक पत्रज, २ टंक इलायची और इन सबके समानही मिश्री इन सबका बारीक चूर्ण कर नित्य २ टंककी मात्रा बकरीके दूधके साथ सेवन कराओ तो राजरोग, शोप,क्षयी, पीनस, प्लीहा, अतिसार, मूत्रकृच्छ्, पांडु, प्रमेह और वात्त-पित्त-कफके अन्य भी बहुतसे रोग नाश होवेंगे. हरीतमें इसका नाम महातालीसादि चूर्ण लिखा है.

तथा १३–सोंठ, कालीमिर्च, पीपली, तज, पत्रज, इलायची, लौंग, जायफल, वंशलोचन, कचूर, बावची, अनारदाना इन सबका चर्ण करके चूर्णके तुल्यही कान्तिसार और इन सबोंके तुल्य मिश्री मिलाओ अब यह गगनायस चूर्ण बनगया जो इसे २ टंक नित्य बकरीके दूधके साथ खिलाओ तो राजरोग, मन्दाग्नि और २० प्रकारके प्रमेह मात्र इससे दूर होवेंगे.

तथा १४–लौंग, कंकोल, कालीमिर्च, खश, चंदन, तगर, कमलगट्टे, कालाजीरा, इलायची, अगर, नागकेशर, सोंठ, पीपली, चित्रक, नेत्रवाला भीमसेनीकपूर, जायफल, वंशलोचन और इन सबके आधी मिश्री

इन सबका महीन चूर्णकर नित्य १ टंक खिलाओ तो राजरोग, मंदाग्नि, कास, हिचकी, संग्रहणी, अतिसार, भगंदर, प्रमेह ये सब दूर हों इसे लवंगादि चूर्ण कहते हैं.

तथा १५–२ टकेभर अभ्रकभस्म, ४ मासे भीमसेनीकपूर, चार मासे जायपत्री, ४ मासे खश, ४ मासे पत्रज, ४ मासे लवंग, ४ मासे तालीसपत्र, ४ मासे दालचीनीका रस, ४ मासे धावेडके फूल, ६ मासे हरेंकी छाल, ४ मासे आँवला, ६ मासे बहेड़ेकी छाल, ६ मासे सोंठ और शुद्ध पारेगंधककी ६ मासे कजलीमें उक्त सर्वौषधका चूर्ण डालकर जलके साथ खरलकर चनेके समान गोलियाँ बनालो. यह शृंगार्यभ्रकगुटिका प्रस्तुत हुई इसकी चार गोलियाँ नित्य शीतल जलके साथ सेवन कराओ तो राजरोग, शोष, श्वास, कास, शूल, प्रमेह, वमन, अमलपित्त, अरुचि संग्रहणी, वातरक्त ये सर्व रोग नाश होकर पुष्टता प्राप्त होगी.

तथा १६–दशमूल, पीपली, चित्रक, कौंचबीज, बहेड़ेकी छाल, कायफल, काकड़ासिंगी, देवदारु, पुनर्नवाकी जड धनियाँ, लवंग, किरमालेकी गिरी, गोखरू, बिधायरा (वृद्धदारु, गर्भवृद्धि) कूट, इन्द्रायण, इनका २ दो टकेभर चूर्ण १६ सेर पानीमें डालकर उसीमें अच्छीं बडी बडी ४ चार सेर हरें भी डालदो. यह सर्व पदार्थ मृत्तिकाके पात्रमें मंद मंद आँचसे औटाकर हरें निकाल शीतल करलो, दूसरे मृत्तिकाके पात्रमें उत्तम मधुके साथ इन्हें ५ दिनतक रखकर निकाललो फिर तीसरे पात्रमें, दूसरे मधु (उपरोक्त छोड दो नया लो) के साथ १५ दिन रखके निकाल तदनंतर चौथे पात्रमें भी नये मधुके साथ १ मास पर्यंत डुबारक्खो तत्पश्चात उसी पात्रमें तज, पत्रज, इलायची, नागकेशर, पीपलका चूर्ण डालके इन सबको ऐसे मिलादो कि मधु हरें और चूर्ण एक जीव होजावें, जो प्रतिदिन १ हरें खिलाओ तो राजरोग, शोष, कास, श्वास, हिचकी, वमन, ज्वर, मूत्रकृच्छ, प्रमेह, वातरक्त, बवासीर, संग्रहणी, रक्तपित्त, दाह, विभूति, ब्योंची, (जो पाँवके मुरुओंमें होती है.) कुष्ठ, मृगी, और पांडु ये सर्वरोग दूर हों धन्वन्तरिसंहितामें इसे मधुपक्क हरीतकी नाम दिया है.

तथा १७–१ सेर अद्रखके रसमें १ सेर गुड़की चासनी मंद मंद आँचसे बनाओ इस पतलीचासनीमें तज, पत्रज, नागकेशर, लौंग, इलायची

सोंठ, कालीमिर्च, पिपली (एकटकेभर) का चूर्ण डालकर नित्य टकेभर खिलाओ तो राजरोग, मन्दाग्नि, श्वास, कास, अरुचि ये सर्व दूर हों यह अद्रकावलेह है.

तथा १८–बकरीके दूधमें समान जल और उसीमें ३ पीपली डालके मंद मंद आँच दो जब जल औटकर दूध मात्र रहजावे तब वे पिप्पली खाकर ऊपरसे वही दूध पीजाओ. इसीप्रकार १ मासतक एक एक पीपली बढाकर एकही एक घटाते घटाते पूर्व प्रमाणपर ले आओ तो राजरोग, शोष, कास, श्वास सब दूर हों. यह काशिनाथ पद्धतिमें लिखा है.

तथा १९–४ सेर दाख १ मन जलमें डालकर औटाते औटाते चौथाई रखलो और उसीमें पुराना गुड़, वायविड़ंग, प्रियंगुपुष्प, तज, पत्रज, इलायची, नागकेशर, (टके टकेभर) डालकर डमरूयंत्रसे मदिराकी रीतिपर रस निकाललो इसे टकेभर नित्य सेवन करो तो राजरोग, श्वास, कास ये सर्वरोग दूर होवें. योगतरंगिणिमें इसे द्राक्षासव संज्ञा दी है.

तथा २०–१ भाग मृगाङ्क, २ भाग रूपरस, ३ भाग तांबेश्वर, ४ भाग पारदभस्म, ५ भाग अभ्रक इनको एकत्र कर १ वायविडंग, २ भाग नागरमोथा, ३ कायफल, ४ निर्गुंडी, ५ दशमूल, ६ चित्रक, ७ हल्दी, ८ सोंठ, ९ कालीमिर्च और १० पिप्पलीकी १ एक पुट पृथक् पृथक् (एकके पश्चात् एक) देकर आधी रत्ती प्रमाणकी गोलियाँ बनालो. इसकी एक गोली नित्य खिलाओ तो राजरोग, कास, प्लीहा गोला ये सब नाश होवें यह पंचामृतरस सारसंग्रहमें लिखा है.

तथा २१–बड़े शंखको गोमूत्रमें जलाकर इस भस्मकी घरिया बनाओ इसमें ५ टंक पारा और ५ टंक गंधककी कजली भरके कपडामिट्टीसे वंदकर गजपुटमें फूंकदो शीतल होनेपर पीसकर रखलो यह भस्म १ रत्ती प्रतिदिन मधुके साथ चटाओ तो राजरोग दूर हो. रसार्णवमें यह विधि लिखी है.

तथा २२–ऽ। पावभर थूहरकी लकडी, १ टकेभर सेंधानोन, १ टकेभर सोंचरनोन, १ टकेभर साम्हरनोन, १ सेरभर मट्ठा, २ टकेभर चित्रक इन सबका चूर्ण शरावसम्पुटमें धरके गजपुटमें फूंक दो जो इस भस्ममेंसे

[१] इसे मूसभी कहते हैं जैसी सुनारलोग चाँदी सोना गलानेके लिये बनाते हैं.

१—मासा प्रतिदिन भोजनोपरान्त जलके साथ सेवन कराओ तो राजरोग, श्वास, बवासीर, शूल ये सब रोग दूर होके भोजन तुरंत पचै और आँव तत्काल भस्म होजावेगी. इसे क्षुद्राादिक्षार कहते हैं. यह "रसराजलक्ष्मी" नाम ग्रंथमें लिखा है.

तथा २३—नींबूके रसमें बुझाई हुई शंखकी १ टकेभर भस्म, १० टंक चव्य १० टंक जवाखार, १०टंक सेंकी हींग, १० टंक पांचोंनोन १० टंक सोंठ १० टंक कालीमिर्चें १० टंक पीपली १० टंक शुद्ध सिंगीमुहरा, १० टंक शुद्ध पारा और १० टंक शुद्ध गंधककी कजली, इन सबका चूर्ण नींबूके रसमें खरल करके चनेप्रमाणकी गोलियां बनाओ, जो एक गोली नित्य लौंगके जलके साथ सेवन कराओ तो राजरोग, संग्रहणी, शूल, गोला ये सब रोग दूर होवेंगे. यह शंखवटी योगतरंगिणीमें लिखीहै.

तथा २४—दशमूल, केवाँचकेबीज, शंखाहोली, कचूर खरेटी गजपीपली अपामार्ग (ऊँगा आधाझारा) पीपलामूल, चित्रक, भारंगी, पोहकरमूल इन सब २ टकेभर औषधोंका चूर्ण और १०० बडी हरैं सबके सब २० सेर ॥ऽ पानीमें डालके औटाओ. चतुर्थांश रहजानेपर हरोंकी गुठली निकालकर महीन पीस डालो फिर १०० टकेभर पुराने गुडकी चासनी बनाकर उसीमें उपरोक्त चूर्ण और ८ टकेभर गौका घृत डालदो. ये अगस्त्यहरैं बनगई. जो इन्हें १ टकेभर नित्य खिलाओ तो राजरोग, शोष, कास, श्वास, हिचकी, विषमज्वर, संग्रहणी, पीनस अर्श और अरुचि ये सर्व रोग दूर हों. यह विधानवृन्दमें लिखा है.

तथा २५—१०० टकेभर अडूसेको जलमें औटाकर चतुर्थांश क्काथ रखलो इसमें १०० टकेभर पुराने गुडकी चासनी बनाकर उसीमें आठ टकेभर तिलीका तेल ८ टकेभर गौका घृत १०० हरेंकी छिलकोंका चूर, २ टंक पीपली, २ टंक पीपलामूल, २ टंक कालीमिर्चें, २ टंक पोहकरमूल, २ टंक चव्य, २टंक चित्रक और २ टंक सोंठका महीन चूर्ण डालकर सिद्ध करलो जो इसको एक टकेभर खिलाओ तो राजरोग, अर्श, कास, श्वास, स्वरभेद, शोथ, अम्लपित्त, पांडुरोग, उदररोग, अग्निमांद्य और नपुंसकता ये सर्व रोग दूर होवेंगे ऐसा चरकमें लिखा है.

विशेषतः—वृन्दमें ऐसा लिखा है कि, राजरोग शोषरोगसे रोगति

पुरुषको षष्टितण्डुल, गेहूं, यव, मूंग, हरिणमांस, कुलथी, बकरीका घृत, बकरीका दुग्ध, मीठा अनार और आँवला ये पदार्थ अति हितकारी हैं इनके सेवनसेही उक्तरोग नाशमान होजावेंगे.

इति नूतनामृतसागरे चिकित्साखंडे रक्तपित्त-राजरोग-शोषरोग यत्ननिरूपणं नामैकादशस्तरंगः ॥ ११ ॥

कास—हिक्का—श्वास ।

अथ कासस्य हिक्कायाः श्वासस्य हि यथाक्रमात् ॥
नेत्रचंद्रमिते चोर्मौ चिकित्सा लिख्यते मया ॥ १२ ॥

भाषार्थ—अब हम इसके आगे १२ वें तरंगमें कास, हिक्का और श्वास-रोगकी चिकित्सा यथाक्रमसे लिखते हैं.

कासरोगयत्न १—५ टंक लवंग, ५ टंक कालीमिर्च ५ टंक बहेड़ेकी छाल और ५ टंक खैरसारके चूर्णको बबूलकी छालके क्वाथमें खरल करके २ रत्ती प्रमाणकी गोलियाँ बनाकर १ तथा दो या ३गोलियाँ नित्य खिलाओ तो खाँसी दूर हो. यह लवंगादिगुटिका लोलिम्बराजमें लिखी है.

तथा २—१ टंक शुद्ध पारा, २ टंक शुद्ध गंधक, ३ टंक पिप्पली; ४ टंक हरंकी छाल, ५ टंक बहेड़ेकी छाल, ६ टंक काकडासिंगीके चूर्णको बबूलके वक्कलके क्वाथमें २१ पुट देकर १ टंक प्रमाणकी गोलियाँ बना-लो इनमेंसे १ गोलि नित्य सोंठके क्वाथके साथ खिलाओ तो खाँसी अवश्य दूर रोगी. यह रससमूह तथा योगचिन्तामणिमें लिखा है.

तथा ३—२ टंक कालीमिर्च, २ टंक पिप्पली, १० टंक अनारके छिलके २ टकेभर गुड और १ टंक जवाखारको महीन पीसकर चने-प्रमाण की गोलियाँ बनालो जो २ तथा ४ गोली नित्य खिलाओ तो सर्व प्रकारकी खाँसी दूर हो.

तथा ४—पिप्पली, हरंकी छाल, पोहकरमूल, सोंठ, कचूर और नागर-मोथेका चूर्ण गुडमें मिलाकर २ रत्ती प्रमाणकी गोलियाँ बनाओ. जो २ तथा ४ गोली नित्य खिलाओ तो सर्व प्रकारकी खाँसी जावे.

१ एक प्रकारके चावल जो ६० दिनमें पक जातेहैं।

तथा ५—सोंठका क्काथ नित्य सेवन कराओ तो खाँसी नाश हो.

तथा ६—अद्रखके रसमें मधु मिलाकर नित्य सेवन कराओ तो खाँसी जाय.

तथा ७—कटियाली, गुर्च, सोंठ, पोहकरमूल और अडूसाका क्काथ पिलाओ तो खाँसी नाश हो इसे क्षुद्रादि क्काथ कहते हैं.

तथा ८—छोटी कटियालीका क्काथ बनाकर रस निकालो और उसमें पिप्पलीका चूर्ण डालकर नित्य पिलाओ तो खाँसी दूर होगी.

तथा ९— २ टंक सोंठ, २ टंक कालीमिर्च, २ टंक पिप्पली. २ टंक अमलवेत, २ टंक चव्य, २ टंक चित्रक, २ टंक जीरा, २ टंक डांसरा, २ मासे तज, २ मासे पत्रज और ४ मासे नागकेशरका चूर्ण ऽ। पावभर गुड़के साथ मिलाकर २ टंक प्रमाणकी गोलियाँ बांधलो इसकी एक गोली नित्य प्रभात खिलाओ तो खाँसी और श्वास दूर होगा.

तथा १०—हर्रकी छाल, पिप्पली, सोंठ, कालीमिर्चके चूर्णको गुडके साथ गोलियाँ बनाकर १ या २ तथा ३ गोली नित्यप्रति खिलाओ तो खाँसी दूर होगी.

तथा ११—२टंक लवंग, २ टंक पिप्पली, २ टंक जायफल, २ टंक कालीमिर्च, ८ पैसेभर सोंठ और इन सबके तुल्य मिश्री इन सबका चूर्ण कर नित्य २ टंककी मात्रा जलके साथ दो तो खाँसी, ज्वर, प्रमेह, अरुचि, श्वास, मन्दाग्नि, संग्रहणी ये सब रोग दूर हों. यह लवंगादि चूर्ण है.

तथा १२हिंगुल, कालीमिर्च, नागरमोथा सिंगीमुहराका चूर्ण, जंभीरी या अद्रखके रसके साथ खरल करके मूँग प्रमाणकी गोलियाँ बांधलो जो एक गोली नित्य खिलाओ तो कास और श्वास रोग दूर हो.

तथा १३—कालीमिर्च, नागरमोथा, कूट, वच, शुद्ध सिंगीमुहरा इन सबको अद्रखके रसमें खरल करके मूँग प्रमाणकी गोलियाँ बनालो जो एक गोली नित्य खिलाओ तो कास, श्वास, कफरोग, सूतिकारोग और संग्रहणी ये सब दूर हों.

तथा १४—२ टंक या १ टंक लौंग, २ टंक पिप्पली, ३ टंक हर्रकी छाल, ४ टंक बहेडेकी छाल, ५ टंक अडूसा, ६ टंक भारंगी और इन सबके तुल्य खैरसार इन सबके चूर्णको बबूलकी छालके क्काथमें २१ पुट

देकर मधुके साथ चनेप्रमाणकी गोलियाँ बनालो जो एक गोली नित्य खिलाओ तो कास श्वास क्षय सब दूर हों इसे कासकर्तरी गुटिका कहते हैं.

तथा १५–१ टंक भीमसेनी कपूर, १ टंक लौंग, २ टंक कालीमिर्च, २ टंक पिप्पली, २ टंक बहेड़ेकी छाल, २ टंक कुलींजन (नागर बेल पानकी जड़), १ टकेभर अनारका छिलका और इन सबके तुल्य खैरसार इन सबके चूर्णको जलमें खरल करके चने प्रमाणकी गोलियाँ बनालो जो एक गोली नित्य खिलाओ तो खाँसी दूर हो यह कर्पूरादि गुटिका है. ये सर्व यत्न वैद्यरहस्यमें लिखे हैं.

तथा १६–अर्कपुष्पके मध्यकी फुली और कालीमिर्च दोनोंको पीसके कालीमिर्चके समान गोलियाँ बांधलो जो एक गोली नित्य खिलाओ तो खाँसी नाशको प्राप्त होगी १६ और १७ वां दोनों यत्न रुद्रदत्तमें लिखे हैं.

तथा १७–अर्कपुष्पके मध्यकी फुली और लौंगको पीसकर १ रत्तीप्रमाणकी गोलियाँ बनालो जो १ गोली नित्य खिलाओ तो खाँसी दूर होगी.

तथा १८–४ सेर पसरकटियालीको पानीमें औटाकर क्वाथ बनाओ इस क्वाथमें १०० हर्रे डालकर औटाओ पकजानेपर शीतलकर गुठली निकाल डलो. १०० टकेभर गुडकी चासनीमें १ टकेभर सोंठ, १ टकेभर कालीमिर्च, १ टकेभर पिप्पली, १ टकेभर पत्रज, १ टकेभर तज, २ टकेभर नागकेशर, १ टकेभर इलायची इन सबका चूर्ण और ऊपर लिखी सौ हर्रोंका चूर्ण दोनों डालकर एकमेंएक करदो यह भृगुहरीतकी प्रस्तुत होगई. जो नित्य १ टकेभर खिलाओ तो सर्व प्रकारकी खाँसी जावेगी.

तथा १९–४ चार सेर कटियालीके क्वाथमें ४ सेर मिश्रीकी चासनी बनाकर उसमें १ टकेभर गुर्च, १ टकेभर काकडासिंगी, १ टकेभर चव्य, १ टकेभर चित्रक, १ टकेभर सोंठ, १ टकेभर नागरमोथा, १ टकेभर पिप्पली, १ टकेभर धमासा, १ टकेभर भारंगी, १ टकेभर कचूरका चूर और एक सेरभर मधु डालो यह कटियालीका अवलेह हुआ जो १ टकेभर नित्य खिलाओ तो सर्व प्रकारकी खाँसी दूर हो. यह भावप्रकाशमें लिखा है.

तथा २०–अडूसेके क्वाथमें मधु डालकर पिलाओ तो खाँसी दूर होगी.

तथा २१–अर्कपत्र, मैनसिल, सोंठ, कालीमिर्च और पिप्पली ये सब तमाखु सदृश चिलममें भरके पिलाओ तो खाँसी दूर होगी.

तथा २२-(शुद्ध पारे और गंधककी) कजली, शुद्ध सिंगी मुहरा, हिंगुल, सोंठ, कालीमिर्च, पीपली, सेंका सुहागा, इन सबको चूर्ण भृंगराजके रसमें १ दिन खरल करके तदनंतर ३ दिन बिजौरेके रसमें खरल करो तदनंतर आधीरत्ती प्रमाणकी गोलियाँ बांधकर १ गोली नित्य दश दिन पर्यंत खिलाओ तो खाँसी, क्षय, संग्रहणी, सन्निपात और मृगी ये सब रोग दूर हों यह आनंदभैरवरस कहाता है.

हिक्का रोगयत्न १-प्राणायाम करने, किसी प्रकार डरने, भयंकर बात सुनने, तथा वायु कफन्यूनक पदार्थके भक्षणसे हिक्का नाश होगी.

तथा २-बकरीके दूधमें सोंठ डालकर पकाओ जो यह दूध सोंठ सहित भक्षण कराओ तो हिचकी दूर होगी.

तथा ३-बिजौरेके रसमें यवका सत्तू और सैंधानमक, मिलाकर खिलाओ तो हिचकी दूर होगी.

तथा ४ सोंठ और पिप्पलीका चूर्ण मधुके साथ खिलाओ तो हिचकी शीघ्र मिट जावेगी.

तथा ५-मक्खीकी विष्टा दूधमें पीसकर नास दो तो हिचकी जावे.

तथा ६-गुड, सोंठ, पानीमें पीसकर नास दो हिचकी दूर हो.

तथा ७-कासकी जडके रसमें मधु मिलाकर नास दो तो हिचकी दूर हो.

तथा ८-मयूरपक्षकी भस्म मधुके साथ चटाओ तो हिचकी जावे.

तथा ९-बिजौरेकी केशरमें सैंधानोन मिलाके खिलाओ तो हिक्का दूर हो.

तथा १०-गुवारपाठेके रसमें सोंठ डालकर खिलाओ तो हिचकी दूर हो.

तथा ११-पोहकरमूल, जवाखार, कालीमिर्च का चूर्ण उष्णजलके साथ खिलाओ तो हिचकी दूर हो.

तथा १२-हल्दी, उर्दका चूर्ण निर्धूम अग्निसे तमाकू सदृश पिलाओ तो भयंकर हिक्का दूर हो. सर्व यत्न वैद्यविनोदमें लिखे हैं.

तथा १३-सनकी छालकाचूर्ण चिलममें भरके पिलाओ तो हिचकीजावे.

तथा १४-सोंठ, कालीमिर्च, पिप्पली, जवासा (दुरालभा), कायफल, करेलेकी बेल, पोहकरमूल, काकडासिंगी, इन सबका चूर्ण बनाकर २ टंक नित्य मधुके साथ चटाओ तो हिक्का दूर हो.

तथा१५—१ टंक पित्तपापडा, १ टंक पिप्पली और ५ टंक गुड इनका क्वाथ बनाकर पिलाओ तो हिक्का दूर हो.

तथा १६—१० टंक असालु (हालु) का क्वाथ बनाकर पिलाओ तो हिक्का तत्काल बंद हो. यह वैद्यरहस्यमें लिखाहै.

तथा१७—१टंक मुलहठीका चूरा मधुके साथ चटाओ तो हिचकी बंदहो.

तथा १८—१ टंक पिप्पली, मिश्रीके साथ सेवन कराओ तो हिक्का जावे.

तथा १९—दुग्धमें घृत डालकर कुनकुनासा पिलाओ तो हिक्का बंदहो.

तथा २०—बिजौरेका रस, मधु और सोंचरनोन मिलाकर पिलाओ तो हिक्का दूर हो वैद्यरहस्यमें लिखा है.

तथा २१—कवीट या आँवलेका रस मधु मिलाकर पिलाओ तो हिक्का और श्वास दोनों बंद होवें, यह काशिनाथपद्धतिमें लिखाहै.

तथा २२—इलायची, दालचीनी, नागकेशर, कालीमिर्च, पिप्पली, सोंठ; (उत्तरोत्तर वृद्धि क्रमसे) पहिला १, दूसरा २, तीसरा ३ टंकादि; लेकर इन सबोंके तुल्य मिश्री डालो इसे घृतमें सानकर प्रतिदिन २ टंक चूर्ण जलके साथ सेवन करो तो हिक्का, अजीर्ण, उदरोग, अर्श, श्वास और कास ये सब रोग दूर हों यह इला दिचूर्णवृन्दमें लिखा है.

श्वासरोगयत्न १—नमक, तेलको उष्ण करके हृदयको सेको तो श्वास दबजावेगा.

तथा २—अदरखके रसमें मधु मिलाके चटाओ तो श्वास दूर हो.

तथा ३—१ सेर अद्रखके रसमें ऽ। पावभर सोंठ ऽ। पावभर बहेडेकी छालका चूर्ण और २ दो सेर बकरीका मूत्र डालके मृत्तिकाके पात्रमें औटाओ; गाढ़ा होजानेपर ऽ॥ आधसेर मधु मिलाकर नित्य १ टंक सेवन करावो तो श्वास और कास, दोनों दूर हों.

तथा ४—दशमूल, कचूर, रास्ना, पिप्पली, सोंठ, पोहकरमूल, भारंगी, काकडासिंगी, गुड, चित्रक, इनके २ टंक चूरेका क्वाथ नित्य सेवन कराओ तो पार्श्वशूल ये सब दूर हों.

तथा ५—पेठेकी जडका १ टंक चूर्ण नित्य सेवन कराके ऊपरसे उष्ण जल पिलाओ तो श्वास दूर हो.

तथा ६–हल्दी, कालीमिर्च, मुनक्का, पिप्पली, रास्ना कचूर इन सबका १ टंक चूर्ण गुड़ और कडुवे (तिलीके) तेलके साथ सेवन कराओ तो श्वास, निश्चय दूर हो.

तथा ७–१ एक सेर भांरगीको औटाके रस निकालो, इसमें १०० टकेभर गुड़की चासनी बनाते समयही १ एक सेर हरंकी छालका चूर्ण डालके मिलादो. शीतल होजानेपर इसमें ६ टंक मधु और १ टकेभर सोंठ, १ टकेभर कालीमिर्च, १ टकेभर पिप्पली, १ टकेभर तज, १ टके-भर पत्रज, १ टकेभर नागकेशर, २ टकेभर जवाखार इनका महीन पिसा हुआ चूर्ण उसी चासनीसे मिलादो और एक पैसेभर नित्य खिलाओ तो श्वास, कास, अर्श, गुल्म, क्षय और उदररोग ये सब दूर होवे इसे भा-रंगी अवलेहकहते हैं. ये सब यत्न भावप्रकाशोक्त हैं.

तथा ८–२ टंक शुद्ध पारा और २ टंक शुद्धगंधककी कजली, २ टंक सिंगीमुहरा, २ टंक सेंका सुहगा, २ टंक मैनसिल, २ टंक कालीमिर्च, २ टंक सोंठ, २ टंक पिप्पली इन सबके चूर्णको अद्रखके रसकी १ पुट देकर सिद्ध करलो यह श्वास कुठार रस बनगया जो इसकी एक रत्ती प्रमाणकी मात्रा नित्य दो तो श्वास दूर हो.

तथा ९–१ भाग शुद्धपारा, २ भाग गंधक और ३ भाग तांवेश्वर तीनोंको ग्वारपाठेके रसमें खरल करके तांवेके सम्पुटमें रक्खो और वालुका यंत्रसे एक दिनभर आँच देकर सिद्ध करलो यह सूर्यावर्त रस बनालो जो इसे २ रत्ती नित्य सेवन कराओ तो श्वासरोग दूर हो. यह वैद्यविनोदमें लिखा है.

तथा १० काकड़ासिंगी, सोंठ, पिप्पली, नागरमोथा, पोहकरमूल, कचूर, कालीमिर्च और इन सबके तुल्य मिश्री डालकर चूर्ण बनालो, इसमेंसे २ टंक नित्य गुर्च, अडूसा, पिप्पली, पिप्पलामूल, चव्य, चित्रक, सोंठ (इतनेमें किसीएक) के क्काथके साथ सेवन कराओ तो श्वास दूर हो यह चक्रदत्तमें लिखा है.

तथा ११–पिप्पली, पोहकर मूल, हरंकी छाल, सोंठ, कचूर, कमलगट्टे, इन सबके चूर्णमें समान गुड़ मिलाकर चनेप्रमाणकी गोलियाँ बनालो जो एक तथा दो गोली नित्य सेवन कराओ तो श्वास रोग दूर हो.

तथा १२–शुद्धपारा, शुद्धगंधक, लोहभस्म और इन तीनोंसे दूनी सोंठ, कालीमिर्च, पिप्पली, पत्रज, नागकेशर, नागरमोथा, वायविडंग, सँभालू, कपेला, पीपलामूल ये सब लेकर चूर्ण कर डालो और जल पिप्पलीके रसमें ३ पुट देकर चनेप्रमाणकी गोलीयाँ बनालो इसकी १ गोली नित्य सेवनसे श्वास, बवासीर, भगंदर, संग्रहणी, हृदयशूल, पार्श्वशूल, उदररोग, प्रमेह ये सर्व रोग दूर हों. यह महोदधिरस सर्व संग्रहमें लिखा है.

तथा १३–(शुद्ध पारे और गंधककी) कजली, कांतिसार, सोहागा, रास्ना, वायविडंग, त्रिफला, देवदारु, सोंठ, कालीमिर्च, पिप्पली, गुर्च, कमलगट्टा, शुद्ध सिंगीमुहरा, इन सबका महीन चूर्ण मधुमें मिश्रित कर १ तथा २ रत्ती प्रमाणकी गोलियाँ बनालो इसकी १ गोली नित्य भक्षण कराओ तो श्वास दूर हो. वैद्यरहस्यमें इसे अमृतार्णवरस संज्ञा दी है.

तथा १४–(पारा और गंधक तुल्यकी) कजलीको चौलाईके रसमें ५ दिनपर्यंत खरल करके वज्रमूस (दृढ घरिया) में रख १ दिन पर्यन्त वालुका यंत्रसे आँच दो. इसमेंसे ६ रत्तीकी मात्रा नित्य पान अथवा पान के रसके साथ खिलाओ तो श्वास और हिक्का दोनों दूर हों. रुद्रदत्तमें इस का नाम "मेघडम्बररस" लिखा है.

इति नूतनामृतसागरे चिकित्साखण्डे कास-हिक्का-श्वासरोग
चिकित्सानिरूपणं नाम द्वादशस्तरंगः ॥ १२ ॥

स्वरभेद-अरोचक-छर्दि।

स्वरभेदारोचकयोश्छर्देश्चैव यथाक्रमात् ॥
तरंगेऽत्रयौषधीशेऽस्मिन् चिकित्सा लिख्यते मया ॥ १३ ॥

भाषार्थः–अब हम इस तेरहवें तरंगमें यथाक्रमसे स्वरभेद, अरोचक और छर्दि इन तीनों रोगोंकी चिकित्सा लिखते हैं.

स्वरभेदरोगयत्न १–नोनयुक्त तेलके पदार्थ भक्षण कराओ तो वात स्वरभंग दूर हो.

तथा २–उष्ण जल पिलाओ तो वातस्वर भंगदूर हो.

तथा ३ घृत गुड़के भक्षणसे वातस्वरभंग दूर हो.

तथा १–घृत-मधुको भक्षण कराओ तो पित्तका स्वरभंग दूर हो.

तथा २–उष्ण दूध पिलाओ तो पित्तस्वरभंग दूर हो.

तथा १-खारे, कड़ुवेपदार्थ अथवा मधु खिलाओ तो कफस्वरभंग दूर हो.

तथा २–पिप्पली, पिप्पलामूल और कालीमिर्च गोमूत्रमें पीसकर पिलाओ तो कफस्वरभंग दूर हो.

तथा ३–गलेके, तालुके मसूढोंका रुधिर निकाल डालो तो कफस्वरभंग दूर हो.

तथा ४–१०० टकेभर कटियाली, ५० टकेभर पीपलामूल, २५ टकेभर चित्रक, २५ टकेभर दशमूल इन सबका चूर्ण १ मन पानीमें औटाकर औटते औटते चार सेर रहजानेपर उतारलो; ठंढा होनेपर छानकर १०० टकेभर पुराने गुड़की पतली चासनी बनाओ तदनंतर इसमें ८पल पिप्पली, ३ पल जायफल, १ पल कालीमिर्चका चूर्ण और एक सेरभर मधु डालकर सबको एकमें एक करदो जो यह नित्य दो या तीन टकेभर खिलाओ तो सर्व प्रकारका स्वरभंग, छर्दि, श्वास, कास, मंन्दाग्नि, कण्ठरोग, गुल्म, प्रमेह, अनाह (अफरा) और मूत्रकृच्छ्र ये सब रोग दूर होंगे, यह निदग्धिकावलेह (कटियालीका अवलेह) भावप्रकाशमें लिखा है.

तथा ५ अजमोद, हल्दी, चित्रक, जवाखार, आँवलेका २ टंक चूर्ण नित्य घृत और मधुके साथ चटाओ तो भयंकर स्वरभंग भी दूर हो.

तथा ६–हरेंकी छाल, वच, पिप्पलीका चूर्ण उष्ण जलके साथ सेवन कराओ तो मेद, क्षयरोगका स्वरभंग दूर हो. यह वैद्यविनोदमें लिखा है.

तथा ७–बहेडेकी छाल, पिप्पली, सैंधानोन और आँवलेका चूर्ण गौकी छाँछ अथवा गोमूत्रके साथ सेवन कराओ तो स्वरभंग दूर हो. यह वृन्दमें लिखा है.

तथा ८–जायफल, पिप्पली, नील (वृक्ष विशेष जिससे नील एक प्रकारका रंग निकलता है) और बिजौरेकी कली इन सबको महीन पीसके मधुके साथ चटाओ तो सर्व स्वरभंग दूर होकर अति मनोहर स्वर होजावेगा. यह जायफलका अवलेह सर्वसंग्रहमें लिखा है.

तथा ९–कुलींजनको मुखमें रखकर उसका रस चूसते जाओ तो स्वरभंग दूर हो.

तथा १०–चव्य, अमलवेत, सोंठ, कालीमिर्च, पीपल, डांसेर, तज, पत्रज, जीरा, चित्रक, इलायची इन सवका २ टंक चूर्ण तिगुने गुडके साथ नित्य सेवन कराओ तो स्वरभंग, पीनस, कफरोग और अरुचि ये सव दूर हों. इसे चव्यादि चूर्ण कहते हैं.

तथा ११–पारदभस्म, तांवेश्वर, कांतिसार इन सवको तुल्य लेके कटियालीके रसमें २१ पुट दो और मूँगके समान गोलियां बनाकर एक गोली मुखमें रक्खो तो स्वरभंग दूर हो, ये गुरु गोरकनाथजीकी गोली है.

तथा १२–ब्राह्मी, वच, हरंकी छाल, अडूसा, पिप्पलीका २ टंक चूर्ण नित्य मधुके साथ १४ दिनतक सेवन कराओ तो स्वरभंग दूर होकर अति मनोहर (किन्नर सदृश) स्वर वन जावेगा ये सव यत्न वैद्यरहस्यमें लिखेहैं.

अरोचकरोगयत्न १–अद्रख और सैंधानोन भोजनके पूर्व खिलाओ तो अरोचक दूर हो.

तथा २–अद्रखके रसमें मधु डालकर पिलाओ तो अरुचि, कास, श्वास तीनों दूर हों.

तथा ३–मिश्री डालकर पक्की इमलीका रस वनाओ और उसमें इलायची, लौंग, भीमसेनी (शुद्ध) कपूरकी प्रतिवास. (भावना) देकर यह रस पिलाओ तो अरुचि दूर, हो.

तथा ४–राई, जीरा, सेकी हींग, सोंठ, सैंधानोनका चूर्ण गऊके दही तथा मट्ठाके साथ पिलाओ तो अरुचि दूर होकर क्षुधा वढे.

तथा ५–वस्त्रके छनेहुए गौके दहीमें मिश्री डालकर इलायची, लौंग, भीमसेनी कपूरके साथ पिलाओ तो अरुचि तत्काल दूर हो इसे शिखरन कहते हैं.

तथा ६–२ टकेभर अनारदाने, ८ टकेभर मिश्री, १ टकेभर सोंठ, १ टकेभर काली मिर्च, १ टकेभर पिप्पली, २ टंकभर तज, २ टंक पत्रज, २ टंक नागकेशर, इनके २ टंक चूर्णको नित्य जलके साथ सेवन कराओ तो अरुचि, तथा खाँसी दूर होगी. इसे दाडिमादि चूर्ण कहते हैं.

तथा ७–लवंग, कंकोलमिर्च (शीतलमिर्च), खश, चन्दन, अगर, तगर, कमलगट्टा, कमलतन्तु, कालाजीरा, नागकेशर, पिप्पली, सोंठ, चित्रक इलायची, भीमसेनी कपूर, जायफल, वंशलोचन और इन सबसे आधी

मिश्री इन सबका १ टंक चूर्ण नित्यजलके साथ सेवन कराओ तो अरुचि, मंदाग्नि, क्षीणता, बंधकुष्ठ, खाँसी, दाह, हिचकी, राजरोग, संग्रहणी, अतिसार, प्रमेह ये सर्व रोग दूर होंगे, इसे लवंगादि चूर्ण कहते हैं. ये सब यत्न भावप्रकाशमें लिखे हैं.

तथा ८–सौंफ, कालीमिर्च, डांसरा, असलवेत, सौंचरनोन, गुड, मधु, बिजौरेकी केशर, तज, पत्रज, वंसलोचन, इलायची, अनारदाना जीरा ये सर्वौषधि अधेले अधेलेभर लेके चूर्ण बनाओ और नित्य दो टंकके लगभग जलके साथ सेवन कराओ तो अरोचक दूर हो.

तथा ९–पिप्पली, पीपलामूल, चव्य, चित्रक, सोंठ, कालीमिर्च, अजमोद, डांसरा, अमलवेत, असगंध, अजवायन, कैथा (कवीट) ये सब अधेलेभर और ४ टंक मिश्री इन सबका २ टंक चूर्ण नित्य जलके साथ सेवन कराओ तो अरुचि, श्वास, कास, वमन, शूल, रक्तपित्त, ये सब दूर हों इसे बृहदेलादि चूर्ण कहते हैं, यह सर्व संग्रहमें लिखा है.

तथा १०–जवाखार, सज्जी, सेंका सुहागा, पाँचों नोन, सोंठ, कालीमिर्च, पिप्पली, त्रिफला, लोहसार, शुद्ध कपूर, चव्य, चित्रक, अनारदाना, डांसरा, अदरख इन सबके चूर्णको अजवायनके रसकी ३ पुट तदनंतर नींबूके रसकी ५ पुट तदनंतर अमलवेतके रसकी ३ पुट देकर चने प्रमाणकी गोलियां बांधलो जो इसकी १ गोली नित्य खिलाओ तो अरुचि, मन्दाग्नि, गुल्म, श्वास, कास, कफ, प्रमेह इत्यादि रोग पृथक् पृथक् अनुपानसे दूर होंगे यह अग्निकुमाररस सर्वसंग्रहमें लिखा है.

छर्दिरोगयत्न–१ धनियां, सोंठ, दशमूल इनका क्वाथ बनाकर पिलाओ तो वातछर्दि दूर हो.

तथा २–घृतमें सैंधानोन डालकर पिलाओ तो वातछर्दि दूर हो.

तथा ३–मूंग और आँवलेका औटाकर रस निकालो और इस रसमें घृत, सैंधानोन डालकर पिलाओ तो वातछर्दि दूर हो.

तथा ४–मूँग, मसूर, जौके आटेकी राब (लपसी) में मधु डालकर पिलाओ तो पित्तछर्दि दूर हो.

तथा ५-पित्तपापडेके क्वाथमें मधु डालकर पिलाओ तो पित्तछर्दि दूर हो.

तथा ६–गुर्च, नीमकी छाल, त्रिफला, पटोलके क्वाथमें मधु डालकर पिलाओ तो पित्तछर्दि दूर हो.

तथा ७–मक्खीकी बिष्टा (तथा पोदीनेका फूल), मिश्री, चंदन, इन तीनोंको घिसकर मधुके साथ चटाओ तो पित्तछर्दि दूर हो.

तथा ८–लाहीके सत्तूमें घृत, मिश्री और मधु डालकर खिलाओ तो पित्तछर्दि दूर हो.

तथा ९–मसूरके सत्तूमें मिश्री डालकर पिलाओ तो पित्तछर्दि दूर हो.

तथा १०–चावलोंके पानीमें मधु डालके पिलाओ तो पित्तछर्दि बंद हो.

तथा ११–अनारका रस मधुके साथ पिलाओ तो वात, पित्त, कफ तीनोंकी छर्दि दूर हो.

तथा १२–इलायची, नागरमोथा, नागकेशर, चावलोंकी लाही, गौरीसर, चंदन, वहुफली, बेरकी बीजी, लौंग, पिप्पली इन सबका १ या दो टंक चूर्ण मधुके साथ खिलाओ तो त्रिदोपज छर्दि दूर हो.

तथा १३–पीपलके पेंडके छिलके जलाकर पानीमें बुझाओ और यह बुझाहुआ जल पिलाओ तो उल्टी बंद होवेगी.

तथा १४–बेरकी बीजी, आँवलेकी बीजी, छोटी पीपल, मक्खीकी बीट, इनके काथमें मधु डालकर पिलाओ तो छर्दि बंद हो. या यत्न वैद्यविनोदमें लिखे हैं.

तथा १५–जामुनके कोमल पत्र और आमके कोमल पत्रोंको पानीमें औटाकर इसमें लाहीको महीन पीसो और मधु डालकर पिलाओ तो भयंकर छर्दि भी दूर हो.

तथा १६ यदि ग्लानिकारक वस्तुसे छर्दि हुई हो तो उत्तम मनोहर वस्तु (जिसके देखनेसे चित्तग्लानि दूर होकर उत्साह बढे) दिखाओ तो ग्लानिजन्य छर्दि दूर हो.

तथा १७–आँवसे छर्दि हुई हो तो लंघन कराओ छर्दि दूर होगी.

तथा १८–१ मासे केशर १ मासे इलायची २ रत्ती हिंगुल इन सबको महीन पीसकर मधुके साथ चटाओ तो सर्व प्रकारकी छर्दि दूर होगी. ये सर्व यत्न भावप्रकाशमें लिखे हैं.

इति नूतनामृतसागरे चिकित्साखण्डे स्वरभेद-अरोचक-छर्दिरोगाणां यत्न निरूपणं नाम त्रयोदशस्तरंगः ॥ १३ ॥

तृषा-मूर्च्छा-मदात्यय।

तृषायाश्चात्र मूर्च्छाया भंगे वेदविधौ क्रमात्॥
मदात्ययादिरोगाणां चिकित्सा लिख्यते मया॥ १४॥

भाषार्थः–अब हम इस चौदहवें तरंगमें यथाक्रमसे तृषा मूर्च्छा और मदात्यय रोगकी चिकित्सा लिखते हैं.

तृषारोगयत्न १–वायुकी तृषा उष्ण अन्न तथा उष्ण जल सेवन करनेसे दूर होगी.

तथा २–दही और गुड़ खिलाओ तो वाततृषा दूर हो.

तथा ३–स्वर्ण तथा चाँदीको अत्युष्ण (तपाके लाल) कर जलमें बुझा दो और यह जल पिलाओ तो पित्ततृषा दूर हो.

तथा ४–मिश्रीका ठंढा रस (शर्बत) पिलाओ तो पित्ततृषा दूर हो.

तथा–५–रात्रिभर धनियांको भिगोके ठंढाईके समान पीस डालो और मिश्री डालकर पिलाओ तो पित्ततृषा दूर हो.

तथा ६–अनारके रसमें मिश्री डालकर पिलाओ तो पित्ततृषा दूर

तथा ७–शीतल जलमें रहना, जलक्रीडा करना अथवा शीतल (गीले) वस्त्र पहिननेसे पित्ततृषा दूर होगी.

तथा ८–कपूर, चन्दन तथा अगरको शिर ललाट अथवा शरीरपर लपेटनेसे पित्ततृषा दूर होगी.

तथा ९–तीक्ष्ण, कटु वस्तुको खिलानेसे कफतृषा दूर हो.

तथा १०–लौंगका क्वाथ पिलाओ तो कफतृषा दूर हो.

तथा ११–जीरा, सोंठ, सोंचरनोनका चूर्ण जलके साथ सेवन कराओ तो कफतृषा दूर हो.

तथा १२–बकरेका रक्त पिलाओ तो शस्त्रप्रहारजन्य तृषा दूर हो.

तथा १३–बकरेके सोखे (मांस रस) में मधु डालकर पिलाओ तो प्रहारजतृषा जावे.

तथा १४–क्षीर (खीर=दूधमें पकाये हुए चावल) में मिश्री डालकर खिलाओ तो प्रहारजतृषा दूर हो.

तथा १५–गन्ना (सांटा=ईख) का रस पिलाओ तो क्षीणताकीतृषा दूर हो.

तथा १६ वडके अंकुर, मुलहठी, लाही, कमलगट्टे, इनको महीन पीसकर गोली बनाओ और इसमेंसे १ गोली मुँहमें रक्खो तो क्षीणतृषा दूर हो.

तथा १७–महुआको मुखमें रक्खो तो तृषा दूर हो.

१८–विजौरेकी जड, अनार, कवीटकी जड, चन्दन, लोध, वेरीकी जड इन सबको महीन पीसकर शिरपर लेप करो तो तृषा, दाह, शोष तीनों दूर हों.

तथा १९–वच और बेलका क्वाथ पिलाओ तो आँवकीतृषा दूर हो.

तथा २०–अति दुर्बल मनुष्यको तृषा हो तो दूध पिलानेसे दूर होगी.

विशेषतः–तृषासे मनुष्य मोहको प्राप्त होकर प्राण छोड देता है इसलिये किसी भी दशामें पानी पिलाना वंद न करो, वरन् रोगानुसार थोडा बहुत जल सदा देते ही रहो. ये यत्न वैद्यविनोद तथा भावप्रकाशमें लिखे हैं.

मूर्च्छारोगयत्न १-तिल्ली तथा इंडोली आदिसे सेंको तो वातमूर्च्छा दूरहो.

तथा २–शीतल रस (शर्बत) पिलाओ तो पित्तमूर्छा दूर हो.

तथा ३–चमत्कारी मणि धारणसे पित्तमूर्च्छा जावेगी.

तथा ४–कपूर, चंदनादि शीतल पदार्थोंके लेपसे मूर्च्छा दूर होगी.

तथा ५–बेरकी बीजी, शीतल मिर्च, खश, नागकेशर ये चारों पदार्थ ५ टंक लेके शीतल जलमें भिगादो गल जानेपर मसलकर छानलो यह छनाहुआ जल मिश्री और मधु डालकर पिलाओ तो मूर्च्छा दूर हो.

तथा ६-मीठे अनारके रसमें मिश्री डालकर पिलाओ तो मूर्च्छा जावे.

तथा७–दाखके रसमें मिश्री डालकर पिलाओ तो मूर्च्छा दूर हो.

तथा ८–साबुन (मार्जन) को घिसके (नेत्रोंमें) अंजन लगाओ तो कफकी मूर्च्छा दूर हो.

तथा ९–शिरस (वृक्षविशेष) के बीज पिप्पली, कालीमिर्च, सैंधानोन इनको गोमूत्रमें पीसकर नेत्रोंमें अंजन लगाओ तो कफकी मूर्च्छा दूर हो.

तथा १०–मैनसिल, वच, लहसुन इनको गोमूत्रमें पीसके आँखोंमें अंजन लगाओ तो कफ तथा सन्निपातकी मूर्च्छा दूर हो.

तथा ११–मैनसिल, महुआ, सैंधानोन, वच, कालीमिर्च इनको महीन पीसकर जलके साथ नास दो तो सर्व मूर्च्छा दूर हों.

तथा १२–शीतल जल शिरपर डालो अथवा अन्य शीतल यत्न करो तो रुधिर मूर्च्छा दूर हो.

तथा १३–जिसे मद्यकी मूर्च्छा हो उसे थोडा मधु पिलाओ तो मद्यकी मूर्च्छा दूर हो.

तथा १४–निद्रासे भी मद्यमूर्च्छा दूर होगी.

तथा १५–मैनफल या नीलाथोथा या फिटकरी या पिप्पलीको जलमें औटाकर वह जल पिलाओ जिससे वमन होजावे तो विषमूर्च्छा दूर हो.

तथा १६–पिप्पली, पारदभस्म, ताँबेश्वर, नागकेशर, इनकी १ रत्तीकी मात्रा शीतल जलके साथ सेवन कराओ तो सर्व मूर्च्छासे जागृत हो.

तथा १७–धमासेके क्वाथमें घृत डालकर पिलाओ तो चक्कर आना (जी घूमना, भौंर आना) बंद हो.

तथा १८–हर्र और आँवलेके क्वाथमें घृतडालकर पिलाओ तो चक्कर बंदहो.

तथा १९–सोंठ, पिप्पली, सौंफ, हर्रकी छाल ५ पांच टंकका चूर्णकर ६ टंकेभर गुडमें मिलादो और ५ टंकभरकी गोलियाँ बनाकर १ गोली नित्य खिलाओ तो चक्कर आना बंद हो.

तथा २०–सैंधानोन, कपूर मैनसिल,सरसों, पिप्पली, महुवेके पुष्प इन सबको घोडेकी लार (थूँक) में महीन पीसकर नेत्रोंमें अंजन लगाओ तो तन्द्रा तथा बहुनिद्रा दोनों दूर हों.

तथा २१–सहिंजनेके बीज, सैंधानोन, सरसों, कूठ, इनको बकरेके मूत्रमें पीसकर नास दो तो तंद्रा और अतिनिद्रा दूर हों.

तथा २२–कालीमिर्च, मुँगनेके बीज, सोंठ, पिप्पली, इनको अगस्त्य-पुष्प (फूल विशेष) के रसमें पीसकर नास दो तो तंद्रा और निद्रा दूर हो. ये सर्व यत्न भावप्रकाशमें लिखे हैं.

तथा २३-सोंठके रसमें मिश्री डालकर पिलाओ तो मूर्च्छा मात्र दूर हो.

तथा २४–केवाँचकी फली शरीरमें लगादो तो मूर्च्छा दूर हो.

मदात्यययत्न १–द्राक्षासव (अंगूरकी शराब) आदि शास्त्रोक्त उत्तम मद्य विधिपूर्वक सेवन कराओ तो वातमदात्यय दूर हो. जैसे अग्निसे जलने पर पुनः अग्निसे तपादो तो पीडा न्यून होकरके फफोला नहीं आता इसी प्रकारसे वातमदात्यय भी ५५५

तथा २–विजौरेकी केशर, अमलवेत, मीठे बेर, मीठी अनारकी भावना (पुट), अजवायन, जीरे, सोंठके महीन चूर्णमें देकर यह चूर्ण पुराने उत्तम मद्यके साथ पिलाओ तो वातमदात्यय दूर हो.

तथा ३–सोंचरनोन, सोंठ, कालीमिर्च, पिप्पलीका चूर्ण वैद्य शास्त्रोक्त विधिसे पिलाओ तो वातमदात्यय दूर हो.

तथा ४–चव्य, सोंचरनोन, सेंकी हींग, सोंठ, अजवायनका चूर्ण मधुके साथ खिलाओ तो वातमदात्यय दूर हो.

तथा ५–लवा (चंडून) तीतर अथवा मुर्गाका मांस खिलाओ तो वातमदात्यय दूर हो.

तथा ६–अतिस्वरूपवती चतुर १६ वर्षकी युवा स्त्रीसे मैथुन कराओ तो वातमदात्यय दूर हो. ये सर्व यत्न भावप्रकाशमें लिखे हैं,

तथा ७–दाख, अनार, खारिक, तथा महुआकी मदिरा मिश्रीके संयोगसे पिलाओ तो वातमदात्यय दूर होगा.

तथा ८–गौके मट्ठेमें मिश्री डालकर पिलाओ तो वातमदात्यय दूर हो. यह सारसंग्रहमें लिखा है.

तथा ९–समस्त शीतल यत्नोंसे पित्तमदात्यय दूर होगा.

तथा १०–शीतल जलमें मिश्री और मधु डालकर पिलाओ तो पित्तमदात्यय दूर हो.

तथा ११–मीठे अनारका रस मिश्री डालकर पिलाओ तो पित्तमदात्यय दूर हो.

तथा १२–मृग, लवाका मांस खिलाओ तो पित्तमदात्यय दूर हो.

तथा १३–बकरेका शोरुवा तथा साँठीचावल भक्षण कराओ तो पित्तमदात्यय नाश हो.

तथा १४–चंदन तथा खशका लेप करो तो कफमदात्यय नाशहो.

तथा १५–यव गेहूं तथा कुलथीका भोजन कराओ तो कफमदात्ययजावे.

तथा १६–कटु, खट्टी, खारी वस्तु खिलाओ तो कफमदात्यय दूर हो.

तथा १७–वमन या लंघन कराओ तो कफमदात्यय दूर हो.

तथा १८-सोंचरनोन, अमलवेत, जीरा, तज, इलायची, कालीमिर्च,

मिश्री इन सबका चूर्ण जलके साथ सेवन कराओ तो कफमदात्यय दूर हो.

तथा १९–पारे गंधककी १ टंक कजली, आँवलेके रसके साथ खिलाओ तो सन्निपातमदात्यय दूर हो.

तथा २०–दाखके रस तथा अनारके रसमें मधु और मिश्री मिलाकर पिलाओ तो पानविभ्रम दूर हो. यह वृन्दमें लिखा है.

तथा २१–पेठेके रसमें गुड डालके पिलाओ तो धतूरेके फल आदि भक्षणसे उत्पन्न हुआ मदात्यय नाश हो.

तथा २२–दूधमें मिश्री डालकर पिलाओ तो धतूरे और भंगका मदात्यय दूर हो.

तथा २३–कपासकी जडका रस या भंटेकी जड़का रस, या पतली छाँछ या घृत, या मिश्रीके जलमें नीबूका रस पिलाओ तो भंग तथा धतूरेका मदात्यय दूर हो.

विषमदात्ययत्न २४–१ मासे निबोलीकी बीजी और १ मासे नीला थोथेको कांजीकेसाथ पीसकर पिलाओ तो विषमदात्य मात्र दूर होगा. ये यत्न वैद्योपचारग्रन्थमें लिखे हैं.

इति नूतनामृतसागरे चिकित्साखण्डे तृषा-मूर्च्छा-मदात्ययादिरोगाणां यत्ननिरूपणं नाम चतुर्दशस्तरंगः ॥ १४ ॥

दाह-उन्माद ।

दाहोन्मादरुजोर्वै बाणकलानिधिमिते तरंगेऽस्य ॥
लोकहिताय लिखामि नवीनामृतसागरस्य सुचि-
कित्साम् ॥ १५ ॥ आर्याच्छदः ।

भाषार्थः–अब हम इस नूतनामृतसागरके पन्द्रहवें तरंगमें लोकहितार्थ दाह और उन्मादरोगकी उत्तम चिकित्सा लिखते हैं.

दाहयत्न १–घृतको १०० तथा १००० बार शीतल जलसे धोकर शरीरमें मर्दन कराओ तो शरीरकी दाह दूर हो.

तथा २–जो जौके सत्तमें मिश्री डालकर खिलाओ तो दाह दूर होगी.

तथा ३–आँवलोंके जलमें महीन वस्त्र भिगोकर उढ़ाओ तो दाह शीतल हो जावेगा.

तथा४–खश और चंदनको घिसकर शरीरमें लेप करो तो दाह शान्तहो.

तथा ५–केलेके कोमल पत्र या कमल पुष्पकी शय्यापर सुलाओ तो दाह शीतल हो.

तथा ६–जलके फुहारे तथा जलक्रीडा सेवन कराओ तो दाह नाश हो.

तथा ७–खशकी टट्टियोंके मध्य बिठाओ तो दाह शीतल हो.

तथा ८–उत्तम शीतल जल पिलाओ तो दाह नाश हो.

तथा ९–उपवनादि शीतल स्थानोंमें भ्रमण कराओ तो दाह ठंढी पडे.

तथा १०–चंदन, पित्तपापडा, खश, कमलगट्टे, धनियां, सौंफ और आँवलेके चूर्णमेंसे २ टंकका क्वाथ बनाकर पिलाओ तो दाह शान्तहो.

तथा ११–धनियाँको रात्रिभर शीतल जलमें भिगोकर प्रातःकाल भंगके समान घोट (पीस) डालो, जलमें वस्त्रसें छानकर मिश्रीके साथ पिलाओ तो दाह दूर हो. ये सब यत्न भावप्रकाशमें लिखे हैं.

तथा १२–यदि रक्त बिगाडसे दाह हुई हो तो उस मनुष्यके शरीर (फस्त) खुलवा दो तो दाह दूर होगी.

तथा १३–शुद्ध पारा, शुद्ध गंधककी कजली, भीमसेनी कपूर, चंदन, खश और नागरमोथा इन सबके चूर्णको जलके साथ खरल करके चनेके लगभग गोलियाँ बनालो. और एक गोली मुँहमें रखके चूसो (रसपान) करो तो शरीरकी दाह दूर हो यह दाहनाशक रस है.

तथा १४–१ तोला शुद्ध पारा, १ तोला शुद्धगंधककी कजली, १ तोला ताँबेश्वर, १ तोला अभ्रक इन सबको खरल करके नागरमोथाके रसकी १ पुट, मीठे अनारके रसकी १ पुट, केंवडेके रसकी एक पुट, सहदेवी (महाबला) के रसकी १ पुट, पिप्पलीके रसकी १ पुट, चंदनके रसकी १ पुट, और दाखके रसकी ७ पुट दो. तदनंतर छायामें सुखाके चने प्रमाणकी गोलियाँ बनालो जो इसकी १ गोली नित्य खिलाओ तो दाह, अम्लपित्त, मूत्रकृच्छ्र, प्रदर और प्रमेह ये सर्व रोग दूर हों. इसे चन्द्रकलारस कहते हैं. (चन्द्रकला=शीतल, ठंढा, शीतलतामें चन्द्रकी कला सदृश.)

उन्मादरोगयत्न १–घृतादि पिलाओ तो वातोन्माद दूर हो.

तथा २–अच्छे विरेचन (जुलाब) दो तो पित्तका उन्माद दूर हो.

तथा ३–वमन कराओ तो कफका उन्माद नाश हो.

तथा ४–वस्तिक्रिया (लिंगेन्द्रिय तथा गुदामें पिचकारी लगाना) करनेसे भी उन्मादरोग दूर होगा.

तथा ५–म्हूण्या (एक शाकका नाम. जिसे कुल्फाभी कहते हैं) का रस निकालकर उसके समान गुड़ मिलाओ यह गुड़ गौकी छाँछमें मिलाकर पिलाओ तो उन्मादरोग दूर होगा.

तथा ६–खरवटे (वृक्षविशेष) की डालीयोंका रस निकालकर पिलाओ तो उन्मादरोग दूर होगा.

तथा ७–रोगीके शरीरमें कडुए तेलका मर्दन करके घाममें खड़ा रक्खो तो उन्मादरोग दूर होगा.

तथा ८–कोई अद्भुत वस्तु दिखाओ अथवा इष्टका नाम लो तो उन्मादरोग दूर होगा.

तथा ९–उष्ण घृत या तेल या पानीका स्पर्श कराओ तो उन्मादरोग दूर हो.

तथा १०–केवाँचकी फली लगाओ तो उन्माद रोग दर हो.

तथा ११–कोड़े (चाबुक) की मार लगाओ तो त्रासके मारे उन्माद रोग दूर हो.

तथा १२–शस्त्र, सर्प या हस्ती तथा सिंहादिसे रोककर भय बताओ तो उन्मादरोग दूर हो.

तथा १३–कूट, असगंध, सैंधानोन, अजमोद, दोनों जीरे, सोंठ, कालीमिर्च, पिप्पली, पाठा, शंखाहोली और इन सबके बराबर वच इनका चूर्ण ब्राह्मीके रसमें १० पुट देकर छायामें सुखाओ जो इसमेंसे २ टंक चूर्ण नित्य घृत और मधुके साथ १५ दिनपर्यंत खिलाओ तो सर्व उन्माद, वायुजन्य विकार तथा प्रमेह भी दूर हो. बुद्धि बढ़कर कविताकी शक्ति प्राप्त होगी. यह सारस्वतचूर्ण ब्रह्माजीकृत है.

तथा १४–त्रिफला, पित्तपापड़ा, देवदारु, शालपर्णी, जवासा, तगर, हल्दी, दारुहल्दी, इन्द्रायणकी जड, गोरीसर, चंदन, पद्मकाष्ठ, कचूर, कमलगट्टे, इलायची, कटियाली, मजीठ, पत्रज, निसोत, वायविडग रुद्रवंती,

नागकेशर, मुलहटी, पृष्ठपर्णी, चमेलीके पुष्प ये सब औषधी अधेले अधेले भर लेकर चूर्ण बनाओ इसे १ सेरभर गोघृतके साथ ४ चार सेर जलमें डालकर मंद मंद आँचसे औटाओ पानी जल चुकने और घृतमात्र रह जानेपर उतारकर छानलो इसमेंसे ५ टंक घृत नित्य भोजनके साथ खिलाओ तो उन्माद, अपस्मार (मृगी) और पांडुरोग ये सब दूर होंगे इसे कल्याणघृत कहते हैं.

तथा १५–सोंठ, कालीमिर्च, पिप्पली, हींग, वच, सिरसके बीज, सेंधा नोन, सरसों, इन सबको गोमूत्रमें पीसके रोगीके नेत्रोंमें अंजन लगाओ तो उन्मादरोग दूर हो. ये यत्न वैद्यविनोदमें लिखे हैं.

तथा १६–अजमोद, हलदी, दारुहलदी, सैंधानोन, मुलहठी, वच, कूट, पिप्पली, जीरा इन सबको गोमूत्रमें पीसकर छायामें सुखाओ इसमेंसे २॥ ढाई टंक चूर्ण नित्य घृतके साथ खिलाओ तो उन्मादरोग दूर होकरके जिह्वापर सरस्वती वास करै. यह विश्वाद्य चूर्ण भावप्रकाशमें लिखा है.

तथा १७–ब्राह्मीका रस या पेठेका रस या पीपलामूलका रस अथवा शंखाहूलीका रस १ टंक नित्य पिलाओ तो उन्माद दूर होगा.

तथा १८–वच, कूट, शंखाहुली, धतूरेकीजड़ इनका चूर्णकर ब्राह्मीके रसकी ७ पुट और काले धतूरेके बीजोंके तेलकी ५ पुट देकर नास बनालो जो यह नास सुँघाओ तो उन्माद दूर हो ये सब यत्न वैद्यरहस्यमें लिखे हैं.

तथा १९–सिरसके फूल, मजीठ, पिप्पली, सरसों, वच, हलदी और सोंठको बकरीके दूधमें पीसकर गोलियां बनाओ सूखनेपर गोलीको घिस कर नेत्रोंमें अंजन लगाओ तो उन्माद दूर हो. यह योगरत्नावलीमें लिखाहै

तथा २०–सेंकी हींग, सोंचरनोन, सोंठ, कालीमिर्च, पिप्पली ये सब २ दो टकेभर लेके चूरा बनाओ और इसे १ सेर गोघृतके साथ ४ चार सेर गोमूत्रमें डालकर मंद मंद आँचसे औटाओ गोमूत्र जल चुकनेपर गोघृतमात्र रहजावे तब उतारकर छानलो जो यह घृत ५ टंकभर नित्य भोजनके साथ खिलाओ तो उन्मादरोग दूर होगा.

भूतोन्मादादियत्न–भूतोन्मादादिके यत्न करनेवालेको चाहिये कि आप पवित्र होकर अपने शरीरकी रक्षा नारायण कवचादिसे पश्चात् निम्नलिखित क्रमानुसार यत्न करै.

भूतबाधायत्न १—कालीमिर्च, पिप्पली, सैंधानोन और गोरोचनको महीन पीसकर मधुके सम्पर्कसे अंजन लगादो तो भूतबाधा दूर हो.

तथा २—ज्वरके प्रकारमें भूतज्वरपर जो नृसिंहजीका दिव्य मंत्र लिखा है उसका उपयोग करो तो भूतोन्माद दूर होगा.

तथा ३—अब भूतादिके उन्माद दूर करनेके लिये. (श्रीमहादेवजीने उड्डीस तंत्रमें जो साबरी मंत्र यंत्र लिखेहैं सो) मंत्र यंत्र लिखते हैं.

"ॐ नमो भगवते नारसिंहाय घोररौद्रमाहिषासुररूपाय त्रैलोक्यडंबराय रौद्रक्षेत्रपालाय ह्रों ह्रों क्रीं क्रीं क्रिमितिताड्य ताडय मोहय मोहय द्रंभि द्रंभि क्षोभय क्षोभय आभि आभि साधय साधय ह्रीं हृदये आं शक्तये प्रीतील-लाटे बंधय बंधय ह्रीं हृदये स्तम्भय स्तम्भय किलि किलि ईं ह्रीं डाकिनीं प्रच्छादय प्रच्छादय शाकिनीं प्रच्छादय प्रच्छादय भूतं प्रच्छादय प्रच्छादय अप्रभूति अदूरिस्वाहा राक्षसं प्रच्छादय प्रच्छादय ब्रह्मराक्षसं प्रच्छादय प्रच्छादय आकाशं प्रच्छादय प्रच्छादय सिंहिनीपुत्रं प्रच्छादय प्रच्छादय एते डाकिनीग्रहं साधय साधय शाकिनीग्रहं साधय साधय अनेन मंत्रेण डाकिनी शाकिनी भूत प्रेत पिशाचादि एकाहिक, द्वयाहिक, त्र्याहिक चातुर्थिक,पंचक,वातिक पैत्तिक,श्लैष्मिक, सन्निपात, केशरी डाकिनीग्रहादि मुंच मुंच स्वाहा गुरुकी शक्ति मेरी भक्ति फुरो मंत्र ईश्वरोवाच" इतिमंत्रः।

इस मंत्रको मुखसे उच्चारण करते हुए मयूरपक्ष या लोहेकी कोई वस्तु तथा छप्परमेंकी घाससे २१ इक्कीस वार झाड दो तो भूतादिके समस्त उन्माद दूर होवेंगे.

डाकिनी शाकिनीको भाषण करनेका मंत्र ४.

"ॐ नमो आदेश गुरुकूं ॐ नमो जय जय नृसिंह तीन लोक चौदह भुवनमें हाथ चाबि और ओठचाबि नयन लाल लाल सर्व बैरि पछाड़ मार भक्तनका प्राणराख आदेश २ पुरुषको" इतिमंत्र.

रोगीके सम्मुख बैठकर इस मंत्रको पढ़ो और इसीसे जल मंत्रित कर उसे पिलाओ तो डाकिनी शाकिनी आदि तत्क्षण मुखसे बोलने लगैंगी.

डाकिनी आदिको शरीरमें बुलानेका मंत्र ५.

"ॐ नमो चढ़ो चढ़ो शूरवीर धरतीचढ़ पातालचढ़ पगपातालीचढ़

कौन कौन बीर चढै हनुमान बीर चढै धरतीचढ़ पगपानीचढ़ एडी चढ़चढ सुखे चढचढ पिंडी चढचढ गोडे चढचढ जांघे चढचढ कटि चढचढ पेटचढ पेटसे धरनचढ धरनेसे पसलियों चढ पसलियोंसे हिये- चढ हियेसे छाती चढ छतीसे कांधे चढ खाँधेसे कण्ठचढ कण्ठसे मुख चढ मुखसे जिह्वा चढ जिह्वासे कर्ण चढ कर्णसे आंखों चढ आंखोंसे ललाट चढ ललाटसे शीशचढ शीशसे कपाल चढ कपालसे चोटी चढ हनुमान नारसिंह करवा रक्त्या चलाबीर समदबीर दीठबीर अगिया बीर संताबीर ये बीर चढे" इति मंत्र.

इस मंत्रसे डाकिनी आदिको बुलवाओ (बकुरावो) तो उस रोगीके शरीरमें आकर भाषण करने लगे तब उससे इच्छित वार्त्ता पूँछलो.

डाकिनीको चोट लगनेका मंत्र ६.

"ॐ नमो महाकाय योगिनी योगिनी पारशाकिनी कल्पवृक्षाय द्दिष्टि योगिनी सिद्धिरुद्राय कालदंभेन साधय साधय मारय मारय चूरय चूरय अ- पहर शाकिनी सपरिवारं नमः ॐठंछः ॐह्रीं छः ह्रोंह्रों फट्स्वाहा" इतिमंत्र.

इस मंत्रसे ७ वार गूगल मंत्रित करके उखलीमें डाल मूशलसे कूटो तो वह चोट डाकिनीको लगै, इसी मंत्रसे अस्तुरा (छुरा) लेके अपना घुटना मूंडो तो डाकिनीका शिर मुंडा जावे, इसी मंत्रसे उर्द मंत्रित करके फेंको तो डाकिनी आनकर नाचने कूदने लगै और इसी मंत्रसे जल मंत्रितकर नेत्रोंमें लगाओ तो डाकिनी बोलने लगैगी.

डाकिनीका दोष दूर होनेका मंत्र ७.

ॐ नमो आदेशगुरुको डाकिनीसिहारी किन्नेमारी यती हनुमान्ने मारी कहां जाय दबकी किनोंने देखी यती हनुमान्ने देखी सातवें पाताल गई सातवें पातालसे कौन पकड लाया, यती हनुमंत पकड लाया, यती हनुमंतवीर पकड लायके एक तालदे एक कोठा तोडा, दो तालदे दो कोठे तोडे, तीन तालदे तीन कोठे तोडे, चार तालदे चार कोठे तोडे, पांच तालदे पांच कोठे तोडे, छः तालदे छः कोठे तोडे, सातवां कोठा खोल देखे तो कौन कौन खडे हैं डाकिनी, सिहारी, भूत, प्रेतचले यती हनुमंत तेरे झाडेसे चले ॐ नमो आदेश गुरुको गुरुकी शक्ति मेरी भक्ति फुरोमंत्र ईश्वरोवाच" इति मंत्र.

इस मंत्रको मुखसे उच्चारणकर मयूरपक्ष तथा लोहेके चाकू आदिसे झाडदो तो डाकिनी आदिका दोष (बाधा) दूर हो.

डाकिनी शाकिनी आदि दूर करनेके यंत्र ८.

यन्त्रः प्रथमः १.

११९	६६	१	५
७	६	७	६
९	=	·।·	।·
८	१	ऽ	४०

यन्त्रः द्वितीयः २.

७	७	९	.८
ऽ	६	६	५
४	।।।	ऽ	११
७।	६	१।।	.।।.

प्रथम यंत्रको भोजपत्रादिपर लिखके बालकके गलेमें बाँधो और द्वितीय यंत्रको भी लिखकर शुद्ध जलमें घोलकर पिलाओ तो डाकिनी शाकिनी दर होकर बालक दोषसे निवृत्ति होजावेगा.

प्रत्यक्ष दर्शकविधि (जिसे हाजरायत भी कहते हैं)९.

मंत्र " ॐ नमःकामाख्यायै सर्वसिद्धिदायै (अमुककर्म) कुरु कुरु स्वाहा" अस्य मंत्रस्य वाह्नीकऋषिःजगतिच्छंदःकामाख्यादेवता—करन्यासः १ ॐनमः अंगुष्टाभ्यां नमः, २ कामाख्यायै तर्जनीभ्यां नमः स्वाहा, ३ सर्वसिद्धिदायै मध्यमाभ्यां वौषट्, ४ (अमुककर्म) अनामिकाभ्यांहुं, ५ कुरुकुरु कनिष्टिकाभ्यांवौषट् स्वाहा, करतलकरपृष्ठाभ्यां अस्त्रायफट्.

हृदयादिन्यासः—१ ॐ नमो हृदयाय, २ कामाख्यायै शिरसे स्वाहा, ३ सर्वसिद्धिदायैशिखायैवौषट्, ४ (अमुककर्म) कवचायहुं, ५ कुरुकुरु नेत्रत्रयाय वौषट्, ६ स्वाहाअस्त्रायफट्.

ध्यानम्—"योनिमात्रशरीराया कुंगुवासिनिकामदा ॥
रजस्वला महातेजा ध्येयाकामाक्षीसर्वदा"

उक्त मंत्रको १००० सहस्र जाप करके गूगल और (गुलतुरें के फूलकी ७०० शत आहुती दो और मैनफलकी राख (भस्म) को रुईमें मिलाकर बत्ती वनाओ यह बत्ती तेलभरे दीपकमें जलाकर उस दीपककी पूजा करो तदनंतर आठ दश वर्षकी अवस्था, उत्तम वर्ण, देवगणवाले पवित्र बालक (लडका तथा लडकी) को दीपकके सम्मुख बिठलाकर आप भी पवित्रतासे मंत्रके जपके संकलपका जल मैनफलपर डालदो और दीपकके सम्मुख इस

मंत्रको लिखके निम्नलिखित यंत्रकी पूजा करो, तथा बालककी हथेलीमें वह दिखाकर मैनफलकी राख तेलमें मिलाके बालककी हथेलीपर लगादो और पूजित यंत्र उसके गले या दक्षिणहस्तमें बाँधकर उससे कहो कि, तू अपनी हथेलीमें देखता जा फिर उससे जो कुछ पूँछनाहो सो पूँछो वह अपनी हथेलीमें देखकर जो कुछ कहै सो सत्य जानो. वह बालक सब बतलावेगा. तदनंतर उक्त मंत्रके जापका दशांश हवन, तद्दशांश तर्पण, तद्दशांश मार्जन और तद्दशांश ब्राह्मणभोजन कराओ. यह विधि उड्डीशमें लिखी है.

यही यंत्र बालकके हाथमें बाँधना चाहिये.

१	८	३	८
५	६	३	६
७	२	९	२
७	४	५	४

भूतोन्मादकायत्न १०—नीमके पत्ते, वच, हींग, सर्पकी काँचली और सरसों इनकी धूनी दो तो भूत डाकिनी आदि दूर हों.

तथा ११—कपासके कांकडे (बिनौला) मयूरपक्षका चन्देवा कटियाली, मरुआ दौना, तज, छड, शिवनिर्माल्य (शिवजीपर चढे हुए पुष्प बेलपत्री आदि) बैलका दाँत, बिल्लीकी विष्टा, वच, तूसा (चलनौसन जो आटा छाननेपर चलनीमें बच रहता है), बाल, सांपकी काँचली, गौका सींग, हाथीदांत, हींग, कालीमिर्च, इन सबके कूटेहुए चूरकी धूनी दो तो सर्व प्रकारकी भूतादि बाधा दूर हो यह महामहेश्वरधूप चक्रदत्तमें लिखी है.

तथा १२—पिप्पली, कालीमिर्च, सैंधानोन, गोरोचन इनको मधुमें पीसकर अंजन लगादो तो भूतबाधा दूर हो.

तथा १३—करंजकी जड़, दारुहल्दी, सरसों, कूट, हींग, वच, मजीठ, त्रिफला, सोंठ, कालीमिर्च, पिप्पली और प्रियंगुपुष्प, इनको बकरेके मूत्रमें पीसकर नास सुँघाओ तथा अंजन लगाओ तो भूतादि बाधा दूर हो.

तथा १४—गोरखककडी (गोरखी) को गोमूत्रमें पीसकर नास दो तो ब्रह्मराक्षस भी दूर भागेगा.

तथा १५—शंखाहुलीकी जडको चावलोंके पानीमें पीसकर तथा घृतके साथ रगडके नास सुँघाओ तो भूतादि बाधा दूर हो.

विशेषतः—भूतादि बाधा दूर करनेके लिये जो हम ऊपर मंत्र लिख चुकेहैं उन्हे पहिलेहीसे ग्रहणमें (ग्राससे मोक्षपर्यंत) जाप करलो तब वे मंत्र उपरोक्त दर्शित यथार्थ सिद्धिदाता होकर तत्तत्कार्यपर उपयोगी होवेंगे अन्यथा नहीं.

इति नूतनामृतसागरे चिकित्साखण्डे दाह-उन्माद-भूतादिबाधायत्न निरूपणं नाम पंचदशस्तरंगः ॥ १५ ॥

अपस्मार—वातव्याधि ।

अपस्मारस्यामयस्य वायुजानां यथाक्रमात् ॥
तरङ्गे रसचन्द्रेस्मिन् चिकित्सा लिख्यते मया ॥ १६ ॥

भाषार्थः—अब हम इस १६ सोलहवें तरंगमें अपस्मार (मृगी) और वातजन्य रोगोंकी चिकित्सा यथाक्रमसे लिखते हैं.

अपस्माररोगयत्न १—तिल्ली और लहसन मिलाकर खिलाओ तो वातापस्मार दूर होगी.

तथा २—दूधमें शतावरी डालकर पिलाओ तो पित्तापस्मार दूर हो.

तथा ३—ब्राह्मीका रस मधुके साथ पिलाओ तो कफापस्मार नाश हो.

तथा ४—राई या सरसोंको खिलाओ तथा गोमूत्रमें पीसकर शिरपर लेप करो तो मृगी दूर हो.

तथा ५—१ सेरभर तेल, ऽ४ चार सेर भुंगनेका रस, ऽ४ चार सेर ग्वांरपाठेका रस, ऽ४ चार सेर चिरचिरेका रस, ऽ१ सेरभर नींबूकी छालका रस, ऽ४ चार सेर गोमूत्र इनको एकत्रकर मंद मंद आँचसे औटाओ जब सब रस जलकर तेलमात्र रह जावे तब छानकर रोगीको मर्दन करो तो अपस्मार दूर हो.

तथा ६—मैनसिल, नलिकंठ (अथवा न हो तो कबूतर) की विष्ठा दोनोंको पीसकर अंजन लगाओ तो मृगी दूर हो.

तथा ७—पारदभस्म, अभ्रक, कांतिसार, शुद्धगंधक, माराहुआ मैनसिल, हरताल भस्म और रसोत इन सबको गोमूत्रमें १ दिनपर्यंत खरल करके इन सबसे दूने गंधकके बीचमें इन्हें धरदो अब ये सब लोहेके पात्रमें

रखकर १ प्रहरभर आँच दो शीतल होनेपर निकालकर १ रत्ती नित्य ७ दिनपर्यंत खिलाओ तो मृगी दूर हो.

तथा ८–सोंठ, कालीमिर्च, पीपली, सोंचरनोन, और सेंकीहुई हींग इन सबका २ टंक चूर्ण नित्य घृतके साथ १५ दिनतक खिलाओ तो मृगी दूर हो.

तथा ९–२ टंक मुलहठीका चूर्ण पेठेके रसके साथ ७ दिनपर्यंत खिलाओ तो मृगी दूर हो.

तथा १०–वच और कूट दोनोंका २ टंक चूर्ण ब्राह्मी या शंखाहुलीके रस अथवा पुराने गुड़के साथ १५ दिनतक सेवन कराओ तो मृगी दूर हो.

तथा ११–सेरभर गोघृत, आठ सेर पेठेका रस, दो सेर मुलहठीका क्वाथ इनको मिलाकर आँच दो जब घृतमात्र रह जावे तब छानकर रोगीको भोजनके साथ खिलाओ तो मृगी दूर हो.

तथा १२–मुंगनेकी छाल, कूट, नेत्रवाला, जीरा, लहसन, सोंठ, कालीमिर्च, पिप्पली, हींग, ये सब पैसे पैसेभर लेकर पीसलो और आधसेर तेलके साथ २ दो सेर बकरेके मूत्रमें डालकर आँच दो औटते औटते तेलमात्र रहजानेपर कपडेसे छानकर नाकमें डालो तो मृगी दूर होगी. ये सर्व यत्न भावप्रकाशमें लिखे हैं.

तथा १३–पिप्पली, पीपलामूल, चव्य, चित्रक, सोंठ, त्रिफला, वायविडंग, सैंधानोन, अजवायन, धनियाँ और जीरेका २ टंक चूर्ण उष्ण जलके साथ खिलाओ तो मृगी, संग्रहणी, उन्माद, अर्श आदि दूर हों.

तथा १४–पुष्यनक्षत्रके दिन कुत्तेका पित्ता (कलेजा) निकालकर उसका अंजन लगाओ या घीके साथ धूप दो तो मृगी दूर हो.

तथा १५–वचका २ टंक चूर्ण दूध या मधुके साथ खिलाओ तो मृगी दूर हो ये दोनों यत्न योगतरंगिणीमें लिखे हैं.

तथा १६–नकुल (न्योला)की विष्ठा, बिल्लीकी विष्ठा और कौवेकी विष्ठाको एकत्र कर धूनी दो तो मृगी दूर हो यह चक्रदत्तमें लिखा है.

वातव्याधियत्न १–मिष्ट, सलोनी, चिकनी, उष्ण वस्तु और आँवले खाने, निद्रा लेने, घाम (धूप) में फिरने, पसीना निकलने, तृप्तिपूर्वक भोजन करने, उष्ण उबटन लगाने, तेल मर्दन करने और वातहारक वस्तु भक्षणसे सामन्य वातजरोग दूर होंगे.

शिरोग्रहरोगयत्न २-दशमूलका क्वाथ, बिजौरेका रस और तेलको एकत्र कर आँच दो औटकर तेल मात्र रहजानेपर छानकर मर्दन करो तो शिरोग्रह दूर होगा.

तथा ३-कूट, अरंडकी जड, धतूरेकी जड, सहँजनेकी जड, सोंठ, पिप्पली, कालीमिर्च, सिंगीसुहरा इन सबको महीन पीस जलमें औटाओ और उष्ण उष्णका लेप करो तो शिरोग्रह दूर हो.

अल्पकेशरोगयत्न ४-देशी गोखरू और तिल्लीके पुष्पका चूर और इन दोनोंके समान मधु इन सबको घृतके साथ बालोंमें लगाओ तो बाल अधिक निकलकर बढैंगे.

तथा ५-मुलहठी, नील कमलकी नाल (जड) और दाख इन सबको घी या तेल या दूधमें भलीभाँति पीसकर बालोंमें लगाओ तो बाल चढ़कर अल्पकेशरोग दूर हो.

अधिक जमुहाईके शमनका यत्न ६-सोंठ, पिप्पली, सैंधानोन, काली मिर्च, अजमोद, इनका चूर्ण उष्ण जलके साथ खिलाओ तो जमुहाई बंद जावेगी.

तथा ७-कडुआ तेल मर्दन कराओ या मिष्ट भोजन कराओ या- ताम्बूल खिलाओ तो जमुहाई बंद हो.

तथा ८-मुख बंद होगया हो तो चिकनी वस्तुके सेंक (ताव) से प- सीना उत्पन्न करावो तो मुख खुलजावेगा. जिसका मुख खुला (चौडा = फटाहुआ) रहगया हो उसे शीतल वस्तुका उपचार करो तो मुख बंद होके चलने (घूमने) लगे. और जिसकी हनु (ठुड्डी=डाढ़ी) मुरकने (घू- मनेलौटने) से बंद होजावे उसे पिप्पली और अद्रख चबा चबाकर थुकवा- ओ तो डाढ़ी घूमनेलगै और हनुग्रहरोग दूर होगा.

तथा ९-तेलमें लहसनको तलके सैंधानोनके साथ खिलाओ तो हनुग्रह रोग दूर हो.

तथा १०-उर्दकी पिट्ठी (दाल भीगी पिसी) में सैंधानोन, हींग और अद्रख मिलाकर बडे बनाओ और तेलमें सेंक (तलके) खिलाओ तो हनुग्रहरोग दूर होगा.

तथा ११-तेलको उष्ण करके शिरमें मर्दन करो तो हनुग्रह दूर हो.

तथा १२-सौ१०० टकेभर पीपलके पञ्चांगका[1] चूर्ण कर १६ सेर पानी डालके औटाओ, चतुर्थांश (ऽ४ चार सेर) रहनेपर छानके इसीमें १०० टकेभर तिलीका तेल, १००टकेभर दहीका मट्ठा, १०० टकेभर काँजीका पानी, ४००टकेभर दूध और १ सेरभर खीप (प्रसारणी) का रस डालो तदनंतर चित्रक, पीपलामूल, महुआ, सैंधानोन,वच, सौंफ, देवदारु, रास्ना, गजपिप्पली,छडछडीला, रक्तचंदन, अरंडेकी जड, खेरंटीकी जड और सोंठ ये सब टके टकेभर लेके चूर्ण कर क्वाथ बनालो. तदनंतर यह क्वाथ उपरोक्त मिश्रित पदार्थोंके साथ युक्त करके मंद मंद आंचसे औटाओ सर्व पदार्थ जलकर तेलमात्र रहजानेपर छानलो. जो इस तेलको मर्दन करो या नास दो या खिलाओ तो वातके सर्व विकार, हनुस्तंभ, पंगुरोग, जिह्वास्तंभ, अर्दितरोग, स्कन्धस्तंभ, पृष्ठिकशूल, गृध्रसी, चाँयल, धनुर्वात और कुब्जरोग, ये सर्व विकार दूर होंगे यह प्रसारणीतैल कहाता है.

जिह्वास्तंभरोगयत्न १३-मीठा रस, नोन, खटाई, चिकनाई तथा उष्णता (उष्ण पदार्थ) को यथोचित जिह्वापर मर्दन करो तो जिह्वास्तंभ दूर हो.

तथा १४-उष्ण जलके कुल्ले कराओ तो जिह्वास्तंभरोग दूर होगा.

हिक्लाना, गुनगुनाना तथा गूँगेपनका यत्न १५-१ टंक मुंगनेकी जड़, १ टकेभरवच, १ टकेभर सैंधानोन, १ टकेभर धावडेके फूल, १ टकेभर लोध, इन सबका चूर्ण ४ चार सेर बकरीके दूधके साथ ऽ१ सेरभर गौके घृतमें डालकर मंद मंद आँचसे औटाओ, दुग्ध जलकर घृतमात्र रह जानेपर छानकर इसे निम्नलिखित सरस्वतीमंत्रसे विधिपूर्वक सेवन कराओ तो हिलाना, गुनगुनाना और मूकापन ये सब दूर होकर स्मृति बुद्धि और कान्ति बढेगी इसे सारस्वतघृत कहते हैं

घृतभक्षणाविधि-" ओंह्रींऐंह्रींओंसरस्वत्यैनमः" यह सरस्वतीजीका सिद्धमंत्र है सो इसके जितने अक्षर हैं उतने ही सहस्र (११००० ग्यारह हजार) जाप करके इस मंत्रको सिद्ध करो तदनंतर इस मंत्रसे पूर्वोक्त विधि प्रस्तुत घृतको मंत्रित करके रोगीको खिलाओ तो उक्त तीनों रोग दूर होकर सरस्वती प्रसन्न होवे.

[1] किसी वृक्षका पंचांग कहनेसे उसके मूल, छाल, पर्ण, पुष्प और फलका बोध होता है।

तथा १६–उक्त मंत्रसेही मालकांगनीके तेलको मंत्रित करके खिलाओ तो उक्त रोग दूर होकर बुद्धि तत्काल चमत्कारी होजावे.

तथा १७–हल्दी, वच, कूट, पिप्पली, सोंठ, जीरा, अजमोद, मुलहठी, महुआ और सैंधानोन इन सबका २ टंक चूर्ण नवनीतके साथ उक्त मंत्रसे मंत्रितकर विधिपूर्वक २१ दिनतक खिलाओ तो उक्त रोग दूर होकर वह मनुष्य श्रुतिधर (जो सुनै वही धारण) याद करलेनवाला और सहस्रों श्लोक कण्ठगत करनेकी शक्ति रखनेवाला होजावेगा इसे कल्याणकावलेह कहते हैं.

प्रलाप तथा वाचालरोगयत्न १८–अगर, तगर, पित्तपापडा, कुटकी, नागरमोथा, असगंध, ब्राह्मी, दाख, दशमूल, शंखाहुली, इन सबका क्काथ बनाकर पिलाओ तो प्रलाप और वाचाल रोग दूर हो.

जिह्वानीरसरोगयत्न १९–सोंठ, कालीमिर्च, पिप्पली, सैंधानोन, अमलवेत और चूकको पीसकर जिह्वापर लेपकरो तो जिह्वाको सर्व रसोंका बोध प्राप्त होगा.

तथा २०–ब्राह्मी, पलासपापडा, राई, कालीजीरी, पिप्पली, पीपलामूल, चित्रक और सोंठ इन सबका चूर्ण बनाकर जिह्वापर लेप करो या क्काथ बनाकर कुल्ले कराओ तो रसज्ञान प्राप्त होगा.

तथा २१–रोगीको बारम्बार अद्रख खिलाओ तो रसज्ञान प्राप्त होवे तथा बधिररोग और कर्णनाद भी दूर होगा.

इति नूतनामृतसागरे चिकित्साखण्डे अपस्मार-वातव्याधिरोग निरूपणंनाम षोडशस्तरंगः ॥ १६ ॥

त्वक्शून्यादि वातव्याधि ।

त्वक्शून्याद्यामयानां हि वातजानां यथाक्रमात् ॥
तरंगे मुनिसोमेऽस्मिन् चिकित्सा लिख्यते मया ॥ १७ ॥

भाषार्थः–अब हम इस सत्रहवें तरंगमें बादीसे उत्पन्न होनेवाले जो त्वचा शून्य प्रभृति रोग हैं तिनकी चिकित्सा यथाक्रमसे लिखते हैं.

त्वचाशून्यरोगयत्न १–इस रोगीके शरीरमेंसे रक्त निकलवा दो तो त्वचाशून्यरोग दूर हो.

तथा २–नोन और धमासा तेलमें डालकर शरीरमें मर्दन कराओ तो त्वचाशून्यरोग दूर हो.

अर्दितरोग १–इस रोगीको चिकने पदार्थ खिलाओ और नारायण तथा विषगभ आदि तेलका मर्दन कराओ या उष्ण वस्तु खिलाओ तथा अग्निसे दाग दो किम्वा उष्ण औषधोंसे पसीना निकालो अथवा वातहारक तेल मस्तकपर डलवाओ तो अर्दितरोग दूर हो.

वायुअर्दितरोगयत्न १–दशमूलका क्काथ पिलाओ वातार्दित दूर हो.

तथा २–बिजौरेका रस पिलाओ तो वातार्दित रोग दूर होगा.

तथा ३–खरैंटी, पिप्पली, पीपलामूल, चव्य, चित्रक और सोंठका क्काथ दो तो वातार्दित रोग दूर होगा.

तथा ४–हींग और लहसुनयुक्त उर्दके बडे खिलाकर ऊपरसे मांसका शुरुवा पिलाओ तो वातार्दित दूर हो.

पित्तार्दितरोगयत्न १–घृतके बस्तिकर्म (मूलद्वारपर घीकी पिचकारी लगाना) या दूध पिलानेसे पित्तार्दित दूर होगा.

कफार्दितरोगयत्न–१ वमन कराओ तो कफार्दित दूर हो.

तथा २ तिल्लीके तेलमें लहसुन मिलाकर खिलाओ तो कफार्दित दूर हो.

मन्यास्तंभनरोगयत्न १–दशमूलका क्काथ या पंचमूलका क्काथ तथा औषधों द्वारा पसीना लेने अथवा नास लेनेसे मन्यास्तम्भ दूर होगा.

तथा २–तेल मर्दन करके अरंडीके पत्ते बांधो तो मन्यास्तंभ दूर होगा

तथा ३ मुर्गीके अंडेके रसमें सैंधानोन और घी मिलाकर गर्दनमें लगाओ तो मन्यास्तंभ दूर हो.

बाहुशोषरोगयत्न १–उन्मादरोग चिकित्सापर जो कल्याणघृत लिख आये हैं उसका सेवन कराओ तो बाहुशोषरोग दूर हो.

तथा २–खरैंटीके क्काथमें सैंधानोन मिलाके पिलाओ तो मन्यास्तंभ और बाहुशोष दोनों रोग दूर होंगे.

अवबाहुकरोगयत्न १–शीतल जलका नास दो तो अवबाहुकरोग दूर हो.

तथा २–गूगल, मोईजडी (मारवाडमें प्रसिद्ध) की जडके क्काथमें गूगल मिलाकर नास दो तो अवबाहुक (भुजास्तंभ) रोग दूर हो.

तथा ३–उर्दके पानीका नास दो तो अवबाहुकरोग दूर हो.

तथा ४—उर्द, अलसी, जौ (यव), कटसेला, कटियाली, गोखरू, अरलू, केवाँचकी जड, कपासके बिनौला, मुंगनेके बीज, बेरीकी जड, कुल्थी, सांठी की जड, खींप (प्रसारणी) की जड, रास्ना, खरटीकी जड, गुरच, कुटकी इन सबको तेलमें डालकर पकाओ, पकनेपर छानकर इसे रोगीके मर्दन करो तो अवबाहुक रोग दूर होगा. यह माषतैल कहाता है.

विश्वाची रोगयत्न १—दशमूल, खरेंटी, उर्द, इनका क्वाथ बनाकर तेलके साथ पिलाओ तो विश्वाचीरोग दूर हो.

तथा २--उर्द सैंधानोन, खरेंटी, रास्ना, दशमूल, हींग वच और सोंठ इनका चूर्ण पानीमें औटाओ-तदनंतर यह पानी तेलमें डालकर आंचदो तेल मात्र रहजानेपर छानकर तेलको रोगीके मर्दन करो तो विश्वाची, बाहुशोष, अवबाहुक और पक्षाघात ये सब रोग दूर होंगे इसे भी माषादितैल कहतेहैं.

ऊर्द्ध्ववातरोगयत्न १—१०भाग सोंठ, १० भाग बधायरा, ५ भाग हर्रकी छाल, १ भाग असगंध, १ भाग सेंकी हींग, १ भाग सैंधानोन और इन सबके समान चित्रक, ५ भाग निसोत इन सबका २ टंक चूर्ण नित्य उष्ण जलके साथ खिलाओ तो ऊर्द्ध्ववातरोग दूर होगा.

आध्मानरोगचिकित्सा १—लंघन कराने, पाचक औषध देने, क्षुधावर्द्धक औषध खिलाने और बस्तिक्रिया करनेसे आध्मानरोग दूर होगा.

तथा २—२ टंक पिप्पली, १० टंक निसोत और १० टंक मिश्रीका चूर्ण करके इस्को २ टंक नित्य मधुके साथ चटाओ तो आध्मान (अफरा दूर हो.

तथा ३—वच, कूट, सौंफ, सेंकी हींग, सैंधानोन इन सबका चूर्ण कांजीके साथ महीन पीसकर उष्णकर पेटपर लगाओ तो आध्मान दूर हो.

तथा ४—१ टकेभर हर्रकी छाल, १ टकेभर किरवारेकी गिरी, १ टकेभर आँवला, १ टकेभर दात्यूणी, १ टकेभर कुटकी, १ टकेभर निसोत, १ टकेभर नागरमोथा, १ टकेभर थूहरका दूध, इन सबको पीसकर ४ सेर पानीमें औटाओ और ऽ॥ आधसेर रह जानेपर उसीमें १ टकेभर जमालगोटा (छिलके निकालकर महीन वस्त्रमें बाँधके) डालके मंद मंद आँचसे औटाओ, जब औटते २ पानी जलजावे तब जमालगोटा निकाललो यह शुद्ध होगया, इसमेंसे अष्टमांश जमालगोटा, जमालगोटेसे त्रिगुणी सोंठ, द्विगुणी कालीमिर्च, तुल्य पारा और तुल्य गंधक लेकर पारे, गंध-

ककी कजली करलो और उसमें उक्तौषधें मिलाकर १ प्रहर खरल करो तदनंतर १ रती प्रमाणकी गोलियां बनाकर गोली शीतल जलके साथ दो तो आध्मान, शूल, अनाह, उदवर्त्त, प्रत्याध्मान, गोला और उदर-व्याधि ये सर्व रोग दूर होवेंगे इसे महानाराचरस कहते हैं इसके खिला-नेसे रेचन होते हैं. सो रेचनानंतर दहीमें मिश्री मिलाकर खिलाओ और तदनंतर सैंधानमक डालकर दही और भात खिलादो तो आध्मान (अफरा) रोग तत्काल दूर होगा.

प्रत्याध्मानरोगयत्न १--यह रोगभी लंघन, पाचन और बस्तिक्रियासे दूर होगा.

वातष्ठीला तथा प्रत्यष्ठीला रोगका यत्न १--सेंकी हिंग पीपलामूल धनियां, जीरा, वच, चव्य, चित्रक, पाठा, कचूर, अमलवेत, सैंधा, सोंचर और साँभरनोन, सोंठ, कालीमिर्च, पिप्पली, जवाखार, सज्जी, अनारदाना, हरंकी छाल, पोहरकरमूल, डांसरा और झाऊकी जडके महीन चूर्णको अद्रखके रसकी ३ पुट देकर छायामें सुखालो—इसमेंसे २ टंक नित्य उष्ण जलके साथ खिलाओ तो वातष्ठीला तथा प्रत्यष्ठीला दूर होंगे.

तूणी तथा प्रतितूणीरोगयत्न १—इस रोगसे पीड़ित पुरुषकी गुदामें स्नेह[1] पदार्थोंसे बस्तिक्रिया करो तो ये रोग दर होंगे.

तथा २—सोंठ, पिप्पली, कालीमिर्च, सेंकी हींग, जवाखार, सज्जी और सैंधानोन इनका २ टंक चूर्ण उष्ण जलके साथ सेवन कराओ तो तूणी तथा प्रतितूणी नाश हो.

त्रिकशूलरोगयत्न १—वालू (रेती) से सेंको तो त्रिकशूल जावेगा.

तथा २—गुल्हीवोली (बबूलके वृक्षकी जातमें होती है) की जड़की छाल, असगंध, झाऊकी छाल, गुरच, शतावरी, गोखरू, रास्ना, निसोत, सौंफ, कचूर, अजवायन, शुंठी इन सबके समानशुद्धगूगल, गूगलसे चतुर्थांश घृत, इन सबको युक्तकर ८ मासे नित्य मद्य या मांसरस या उष्ण जलके साथ सेवन कराओ तो त्रिकशूल, जानुग्रह, भुजासांध, संधिगत वात (ग-ठिया वाय) अस्थिभंग, लँगड़ापन, गृध्रसी, पक्षाघात ये सर्व रोग दूर होंगे. इसे त्रयोदशांग गूगल कहते हैं.

---

१ घृत, तेल मज्जा, आदि चिकने पदार्थ स्नेह कहाते हैं ।

बस्तिवात (मूत्रावरोध) रोगयत्न १–खरेंटीकी जडकी छाल और मिश्रीका २ टंक चूर्ण गोदुग्धके साथ खिलाओ तो बस्तिवात दूर हो.

तथा २–त्रिफलाके चूर्णमें समान कांतिसार मिलाकर इसमेंसे ४ मासे मधुके साथ चटाओ तो बस्तिवात (जिसमें मूत्रकी २ बूंद गिरती हैं) दूर होगी.

तथा ३–४चार मासे जवाखार मिश्रीके साथ खिलाओ तो दीर्घ बस्ति वात (जो किंचित् मात्र भी मूत्र नहीं उतरता हो) कभी बंद खुलकर उत्तम सरलता पूर्वक मूत्र उतरने लगैगा.

तथा ४–पेठेके बीज और तेवरसी (फूटककडी) के बीज दोनोंको पानीमें घोटकर २ मासे जवाखार डालो और ऊपरसे मिश्री मिलाकर पिलाओ तो रुकाहुआ मूत्र उतरने लगैगा.

तथा ५–चिनियकपूरकी बत्ती बनाकर पुरुषकी लिंगेंद्रिय और स्त्रीकी भगेन्द्रियमें रक्खो तो अवरोधित मूत्र प्रसरण होने लगेगा.

गृध्रसीरोगयत्न १–वमन कराओ तो गृध्रसीरोग दूर हो.

तथा २–गृध्रसीरोग बस्तिक्रियासेभी दूर होगा, परन्तु इस रोगमें प्रथम हरेंका जुलाव देकर पश्चात् यह चिकित्सा करनी चाहिये.

तथा ३–एरंडीका तेल और गोमूत्रयुक्त अनुमानमुवाफिक १ मास पर्यंत पिलाओ तो गृध्रसीरोग दूर हो.

तथा ४–तैल, घृत, विजौरेका रस, अदरखका रस, चूक और गुड इन सबको मिलाकर, १ मास पिलाओ तो गृध्रसी, त्रिशूल, गोला, उदावर्त्त कटि और जंघाकी पीडा ये सर्व रोग दूर होंगे.

तथा ५–दूधमें एरंडीके बीजोंकी खीर बनाकर १ एक-मासपर्यंत खिलाओ तो गृध्रसी और पोतोंका शूल दूर हो.

तथा ६–एरंडीकी जड, वेलकी गिरी और कटियालीके क्राथमें तेल मिलाकर पिलाओ तो गृध्रसी और पोतोंका शूल दोनों दूर हों.

तथा ७–बिडनोन और सोंचरनोनको पीसकर, गोमूत्र और अरंडीके तेलके संयोगसे पिलाओ तो कफ-वातकी गृध्रसी दूर हो.

तथा ८–अडूसा, दात्यूणी और किरमालेकी गिरीके क्राथमें एरंडीका तेल मिलाकर पिलाओ तो गृध्रसीरोग दूर हो.

तथा ९–निर्गुण्डीका रस पिलाओ तो गृध्रसी दूर हो.

तथा १०–९ टकेभर रास्ना, ६ टकेभर गूगलका चूर्ण घृतके साथ मिलाकर ४ मासे प्रमाणकी गोलियाँ बनाओ. १ गोली नित्य खिलाओ तो गृध्रसी दूर हो.

तथा ११–गुरच, रास्ना, किरमालेकी गिरी, देवदारु, गोखरू, सोंठ, अरंडीकी जड़का क्वाथ बनाकर पिलाओ तो गृध्रसी, जंघापीडा, उदरपीडा, पार्श्वशूल, ये सब दूर होंगे इसे रास्नादि क्वाथ कहते हैं.

इति नूतनामृतसागरे चिकित्साखण्डे वातरोगयत्ननिरूपणं नाम सप्तदशस्तरंगः ॥ १७ ॥

खंजादि-वातव्याधिः ।

खंजादीनां वातजानां गदानां वस्त्विन्दौ वै लिख्यते ऽस्मिन्तरङ्गे । पुंसां वातव्याधिना पीड़ितानामारोग्यार्थं लाभदात्री चिकित्सा ॥ १८ ॥

भाषार्थः–अब हम इस अठारहवें तरंगमें वातव्याधिसे पीड़ित पुरुषों की आरोग्यताके हेतु खंज (लँगड़ापन) आदि रोगकी लाभदायिनी चिकित्सा लिखते हैं.

खंज तथा पंगुरोगयत्न १–विरेचन कराओ, औषधियोंसे उष्ण पसीना निकालो, योगराज आदि गूगल दो, वातहारक नारायण आदि तैल मर्दन करो, अथवा बस्तिकर्म करो तो ये प्रत्येक यत्न खंजरोग नाश करेंगे.

कलापखंजरोगयत्न १–विषगर्भादि तैल मर्दन करनेसे यह रोग नाश होगा.

क्रोष्टुशीर्षरोगयत्न १–२ टंक गुरुच, १० टंक त्रिफला दोनोंका क्वाथ बनाकर २ टंक गूगलके साथ १ मासपर्यंत पिलाओ तो क्रोष्टुशीर्ष रोग दूर होगा.

तथा २–७ सेर दूध, १० टंक एरंडीका तेल मिलाकर १ मासपर्यंत पिलाओ तो क्रोष्टुशीर्षरोग नाश हो.

तथा ३–ढाई टंक वधायरेका चूर्ण ऽ॥ आधसेर गोदुग्धके साथ पिलाओ तो ऊरुरोग दूर हो.

तथा ४–तीतरके मांसके शुरुवेमें दो टंक गूगल मिलाके पिलाओ तो क्रोष्टुशीर्षरोग दूर हो.

तथा ५–किशोर गूगल खिलाओ तो क्रोष्टुशीर्षरोग दूर हो.

घुटनेकी पीडानाशकयत्न १–प्रथम तेल मर्दन करके ऊपरसे सोंठका महीन चूर्ण मसलो तदनंतर पुनः ऊपरसे तेल चुपडकर बाँध दो तो घुटनेकी पीडा दूर हो.

तथा २–दो टंक केवाँचके वीज दहीके साथ ७ या चौदह दिन तक खिलाओ तो घुटनोंकी पीडा दूर हो.

खल्वरोगयत्न १–कूट और सैंधानोनके क्काथमें तेल और अमलवेतका रस डालकर आँचसे पकाओ, रस जलकर तेलमात्र रहजानेपर छानकर मर्दन करो तो खल्वरोग दूर हो.

वातकंटकरोगयत्न १–पाँवके गट्टोंमेंसे रुधिर निकालो तो वातकंटक दूर हो.

तथा २–१ मासपर्यंत ५ टंक अरंडीका तेल नित्य पिलाओ तो वातकंटक दूर हो.

पाददाहरोगयत्न १–मसूरकी दालका आटा पानीमें औटाकर ठंढा होनेपर कपडेसे छानके ५ सात बार पैरके तलुओंमें बाँधो तो पाददाह रोग दूर हो.

तथा२-पैरके तलुओंमें मक्खन लगाकर आँचसे सेंको तो पाददाह दूर हो.

तथा ३–अरंडीके बीज गौके दूधमें महीन पीसकर दाहस्थान (पाँवके तलुए या हाथकी हथेली) में मर्दन करो तो अत्यंत पाददाह भी दूर हो.

पादहर्षरोगयत्न १–कफ और वातहारक यत्नोंसे यह रोग दूर होगा.

पदफूटन (पगफूटनी) यत्न १–तिल्ली, सांभरनोन, हल्दी और धतूरेके बीजोंको पानीमें महीन पीसकर इन सबके बराबर गौका मक्खन और इन सबसे चौगुना गोमूत्र ये सब एकत्र करके आँचसे पकाओ जल और औषधियाँ जलकर घी मात्र रहजानेपर छानकर पैरके तलुओंमें मर्दन करो तो पैरफूटन बंद हो.

आक्षेपरोगयत्न १–खरेंटीकी जड, दशमूल, यव, कुलथी, बेरकी जडके अष्टावशेष क्काथमें तेल डालकर आँच दो पानी जलकर तेलमात्र रहजानेपर उस तेलमें सैंधानोन, अगर, राल, देवदारु, मजीठ, कूट,

पद्माख, इलायची, छड़, पत्रज, तगर, गौरीसर, शतावरी, असगंध, सौंफ और साँटीकी जड़ कूटकर डालो पुनः मंद मंद आँचसे पकाकर छानलो जो इस तेलका मर्दन करो तो सर्व प्रकारके आक्षेप, सर्व वातरोग, हिचकी, कास, श्वास, गोला, अंत्रवृद्धि, क्षीणता, अस्थिभंग और भ्रम ये सब रोग दूर होंगे. इसे महाबली तैल कहते हैं.

अन्तरायाम तथा बाह्यायाम रोगयत्न--जो हम ऊपर अर्दित रोगके यत्न लिख आये हैं वेही यत्न जानो.

धनुस्तंभ तथा कुब्जकरोगयत्न १--पूर्व लिखित प्रसारणी तेलसे धनुस्तंभ, कुब्जक और अंतरायाम, बाह्यायाम किम्वा वातजन्य सकल विकार दूर होवेंगे.

अपतंत्ररोगयत्न–कालीमिर्च, मुंगनेके बीज, अफीम, वायविडंग और महुआके चर्णका नास दो तो अपतंत्ररोग दूर हो.

त० । २--हर्रकी छाल, वच, रास्ना, सैंधानोन और अमलवेत इन सबका २ टंक चूर्ण नित्य घृत या अद्रखके रसके साथ सेवन कराओ तो अपतंत्ररोग दूर होगा.

अपतानकरोगयत्न १–दशमूलके क्काथमें पिप्पली डालकर पिलाओ तो अपतानकरोग नाश हो.

तथा २–तेल मर्दन कराओ तो अपतानकरोग दूर हो.

तथा ३–तीक्ष्ण वस्तुका नास दो तो अपतानकरोग दूर होगा.

तथा ४–घृत पिलानेसे अपतानकरोग दूर होगा.

तथा ५–स्नेहबस्ति करो तो अपतानकरोग दूर हो.

पक्षाघातरोगयत्न १–उर्द, केवाँचबीज, अरंडीकी जड और खरेंटीकी जडके क्काथमें सेंकी हींग और सैंधानोन मिलाकर पिलाओ तो पक्षाघातरोग दूर हो.

तथा २–पीपलामूल, चित्रक, सोंठ, पीपली, रास्ना, सैंधानोन और उर्दके क्काथमें तेल डालके पकाओ पानी जलकर तेलमात्र रहजानेपर छानकर मर्दन करो तो पक्षाघातरोग दूर होगा. इसे ग्रंथितैल कहते हैं.

तथा ३–उर्द, केवाँचबीज, अतीस, एरंडकी जड, रास्ना, सैंधानोन और सौंफके क्काथमें तेल डालकर पकाओ, क्काथ जलकर तेलमात्र रहजानेपर

छानकर मर्दन करो तो पक्षाघातरोग दूर होगा. इसे माषादितैल कहते हैं. ये सर्व यत्न भावप्रकाशमें लिखे हैं.

तथा ४–केवाँचबीज, खरैंटीकी जड, एरंडकी जड, उर्द, सैंधानोन और सोंठका क्वाथ पिलाओ तो पक्षाघात दूर हो, यह वैद्यविनोदमें लिखाहै.

तथा ५–महुआका रस ५ टंक, गूगल ५ टंक, बीजा बोल ५ टंक, बकरीकी लैंडी ५ टंक, कटियालीका रस ५ टंक, पलासपापडा ५ टंक, आँबाहल्दी ५ टंक, सुहागा ५ टंक, बिजौरेकी जड ५ टंक, इन सबको महीनकर रोगीके शरीरमें लेप करो और दो हाथ चौडा, दो हाथ लंबा, २ हाथ गहरा गढ़ा खोदके आग जलादो जब वह भलीभाँति तप्त होजावे तब अंगारे निकालकर गढेके पृष्टभागमें सर्वत्र आक (अकाव = आकडा) के पत्ते बिछादो तदनंतर उक्त रोगीको उस गढेमें बैठाकर पसीना निकालनेतक उसीमें बैठा रहने दो तो उक्त लेपके गुण तथा आकपत्रके तावसे पक्षाघातरोग अवश्य दूर होगा. रोगीका मुख गढेके बाहर रखना चाहिये जिससे इजा न हो.

निद्रानाशरोगयत्न १–सेंकी भाँगको महीन पीस कपडछान करके मधुकेसाथ रात्रिसमय चटाओ तो निश्चय निद्रा आकर क्षुधा बढ़ैगी. इसी यत्नसे अतिसार और संग्रहणीभी दूर होती है.

तथा२–पिप्पलीका चूर्ण, मधुके साथ खिलाओ तो नष्ट हुई निद्रा भी शीघ्र आवे.

तथा ३–कलिहारीकी जड पीसकर मस्तकपर बाँधो तो निद्रा आवे.

तथा ४–इच्छानुसार सहते सहते कँघवे (ककवा) से शिरके बाल ऐंछो तो निद्रा आवेगी.

तथा ५–कोमल हाथोंसे पैरके तलुओंको धीरे २ मलवाओ तो निद्रा अवश्य आवेगी.

तथा ६–भटे (बैंगन) का भरता मधु मिलाकर खिलाओ तो निद्रा आवे.

तथा ७–बैंगनका भरता तैलकी कांजी या खटाईके साथ रात्रिको खिलाओ तो निद्रा तत्काल आवेगी.

तथा ८–अरंड और अलसीका तेल दोनोंको काँसे (फूल) की थालीमें भलीभांति रगडके रोगीके आँखोंमें अंजन लगाओ तो बहुत निद्रा आवे.

तथा ९–सोंफ और भाँगका महीन चूर्ण बकरीके दूधमें औटाकर रोगीके ललाटपर लेप करो तो निद्रा आवेगी.

तथा १०–बकरीके दूधसे पैरके तलुओंको धोओ तो निद्रा आकर पैरोंकी दाहभी दूर होगी.

तथा ११–मृगमद (कस्तूरी)को स्त्रीके दूधमें पीसकर अंजन लगाओ तो बहुत दिनोंकी नष्ट हुई निद्राभी पुनः आवेगी.ये सब यत्न वैद्यरहस्यमें लिखेहैं.

सर्वांगकुपितवातयत्न--१विषगर्भादि तैल मर्दन करो तो उक्त रोग दूरहो.

सप्तधातुगत कुपितवातयत्न१--त्वचाके रसमें कुपित हुआ वात तैल मर्दन करनेसे नाश होगा.

तथा २–रक्तमें कुपित हुआ वात शीतल लेप तथा विरेचन या रुधिर निकलवानेसे अच्छा होगा.

तथा ३–मांसमें कुपित वात विरेचनसे शांत होगा.

तथा ४--मेदामें कुपितवातभी विरेचनसेही शांति पावेगा.

तथा ५–अस्थि (हड्डियों) में कुपितवात चिकने पदार्थोंके खिलानेसे अच्छा होगा.

तथा६-मज्जागतकुपितवातचिकनेपदार्थोंके खाने या मर्दनसे शांतहोगा.

तथा ७-वीर्यमें बिगडा हुआ वात पौष्टिकऔषधि भक्षणसे शांतिपावेगा.

कोष्ठगतकुपितवातयत्न १–पाचनादि औषध भक्षण तथा दुग्धपान करानेसे अच्छा होगा.

आमाशयगत कुपितवातयत्न १–१ दीपन पाचन औषध दो, २ लंघन कराओ, ३ वमन कराओ, ४ विरेचन दो और ५ पुराने मूँग चावल खिलाओ इनमेंसे एक उपाय भी उक्त रोगनाशक है.

तथा२–अथवा रोहिस (रोहितक) हरंकी छाल, कचूर, पोहकरमूल, गुरच, वेलका गूदा, देवदारु, सोंठ, वच, अतीस, पीपल और वायविडं-गका क्वाथ पिलाओ तो आमाशयगत कुपितवात कुशल हो.

पक्वाशय या हृदय तथा मूलद्वारगत कुपितवातयत्न १–गुर्च, काली-मिर्चका चूर्ण उष्ण जलके साथ सेवन कराओ तो उक्त रोग दूर हो.

तथा २--असगंध और बहेडेकी छालका चूर्ण गुड मिलाकर खिलाओ तो उक्त तीनों स्थानका कुपित वात दूर हो.

तथा २–देवदारु और सोंठका चूर्ण उष्ण जलके साथ पिलाओ तो तीनों स्थानोंका कुपितवात दूर हो.

कर्णादि इन्द्रियगत कुपितवातयत्न १-सेंक (ताव) तथा तैलादि मर्दनसे कर्णादि इन्द्रियगत कुपितवात शांत हो.

स्नायुगत कुपितवातयत्न–शीर छुड़ाने (जिसे यूनानीमालजेमें फस्त खुलवाना कहते हैं) से स्नायु (नस) गत कुपितवात शांत हो.

संधिगत कुपितवातयत्न १–सेंक तथा तेलमर्दनसे संधिगत कुपितवात दूर होगा.

तथा २–२ टंक इन्द्राणीकी जड और २ टंक पिप्पलीका चूर्ण गुड़ मिलाकर खिलाओ तो संधिगत कुपितवात अवश्य दूर हो.

इति नूतनामृ० चिकित्साखण्डे वातरोगयत्ननिरूपणं नामाष्टादशस्तरंगः ॥ १८ ॥

समस्त वातव्याधि ।

सर्वेषां वातरोगाणां नन्दानन्तामिते मया ॥
पूर्वोक्तानां तरंगेऽस्मिँल्लिख्यते रुक्प्रतिक्रिया ॥ १९ ॥

भाषार्थ–अब हम इस १९ उन्नीसवें तरंगमें निदानखंडालिखित समस्त वातरोगोंकी चिकित्सा लिखते हैं.

☙ वातव्याधिके सामान्य यत्न १–असगंध, खरेंटीकी जड, बेलका गूदा दोनों पाटल[1], कटियाली, गोखुरू, गंगेरनकी छाल, साठी (पुनर्नवाकी जड) अरलू, खींप और अरणी ये सब औषध १० टकेभर कूटकर १६ सोलह सेर पानीमें औटाकर चतुर्थांश रहजानेपर छानलो यह ४ सेर क्वाथ, ४ सेर तिल्लीका तेल, ४ सेर शतावरीका रस और १६ सेर गौका दूध ये सब एकत्रकर मंद मंद आँचसे पकाओ, पकते समय १ टकेभर कूट, २ टकेभर इलायची, २ टकेभर रक्तचन्दन, २ टकेभर वच, २ टकेभर छड़, २ टकेभर शिलाजीत, २ टकेभर सैंधानोन, २ टकेभर असगंध, २ टकेभर खरेंटी, २ टकेभर रास्ना, २ टकेभर सौंफ, २ टकेभर इन्द्राणी, २ टकेभर शालपर्णी,

---

१ श्वेत और लाल दोनों गुलाब, पाटल,=गुलाब या कुंज सेवती २ रंगकी होती है.

२ टकेभर उर्दपर्णी, ये सब औषध डालदो औटाते औटते सर्व पानी जलकर तेलमात्र रहजानेपर छानकर मर्दन करो या खिलाओ या बस्तिक्रिया करो तो पक्षाघात, हनुस्तंभ, मन्यास्तंभ, गलग्रह, बधिरपन, गतिभंग, कटिग्रह, गात्रशोष, नष्टशुक्र, विषमज्वर, अंत्रवृद्धि, शिरोग्रह, पार्श्वशूल, गृध्रसी और वायुके समस्त रोग दूर होवेंगे. इसे नारायणतैल कहते हैं.

तथा २–सोंठ, पिप्पली, पीपलामूल, चव्य, चित्रक, सेंकीहींग, अजमोद, सरसों, दोनों जीरे, सँभालू, इन्द्रयव, पाठा, वायविड़ंग, गजपीपली, कुटकी, अतीस, भारंगी, वच और मूर्वा, ये सर्वौषध चार चार मासेभर और इन सबके बोझसे दना त्रिफला तथा इन सबके प्रमाणसे दूना शुद्ध गूगल लेकर इन सबका चूर्ण करलो तदनंतर सबको एक जीव करके४मासे प्रमाणकी गोलियाँ बनालो इन गोलियोंको मृत्तिकाके चिकने पात्रमें धरके रास्नादि क्राथके साथ १ गोली नित्य खिलाओ तो समस्त वातव्याधि दूर हों, किरमालेका पंचांग क्राथके साथ दो तो कफके सर्व रोग दूर हो. दारुहल्दीके क्राथके साथ प्रमेह दूर हो, गोमूत्रके साथ खिलाओ तो पांडुरोग नाश होगा मधुके साथ खिलाओ तो वातरक्तरोग दूर होंगे और पुनर्नवादि क्राथसे खिलाओ तो उदरामय व्याधि दूर होगी, ये सब यत्न भावप्रकाशमें लिखे हैं. यह योगराजगूगल है.

विशेषतः–योगराजगूगलको सेवन करनेवाले रोगीको मैथुन (स्त्रीसंग) और खट्टे पदार्थ भक्षण करना कदापि योग्य नहीं है.

रास्नादिक्राथ१–रास्ना, साटी, सोंठ, गिलोय और अरंडकी जडका क्राथ रास्नादिक्राथ कहाता है, जिसे ऊपर योगराजगूगलके साथ दिया है.

महारास्नादिक्राथ२–रास्ना, धमासा, खरेंटीकी जड, अरंडकी जड, देवदारु, कचूर, वच, अड़ूसा, हरंकी छाल, किरमालेकी गिरी, चव्य, नागरमोथा, साटीकी जड, गुरच, बधायरा, सौंफ, गोखरू, असगंध, अतीस, शतावरी, सहँजनेकी बक्कल, धनियां और दोनों कटियालीका क्राथ महारास्नादिक्राथ कहाता है. इसके साथ योगराजगूगलको खिलाओ तो वायुके समस्त रोग दूर होंगे.

तथा ३–१ टकेभर लहसनका रस और १ टकेभर तेलमें सैंधानोन डालकर पिलाओ तो वायुके सर्व रोग दूर होंगे.

तथा ४–दूध या घृत या तेल या मांस रसके साथ १४ दिनपर्यंत लहसन खिलाओ तो सर्व प्रकारका वात, विषमज्वर, शूल, गोला, अग्निमांद्य, प्लीहा, मस्तकरोग, वीर्यके सर्व रोग दूर होंगे, ये दोनों (तृतीय और चतुर्थ यत्न) लहसनकल्प कहाते हैं.

तथा ५–थूहरपत्र, अरंडपत्र, बकायनपत्र, सँभालूपत्र, शोभाञ्जनापत्र और कनेरपत्र इन सबका रस, इन सब रसोंसे चतुर्थांश तेल और सोंठ इन सबको एकत्रकर पकाओ रस जल चुककर तेलमात्र रहजानेपर छानकर मर्दन करो तो सर्व वातरोग दूर होंगे यह अष्टांगतैल कहाता है.

तथा ६–धतूरेकी जड, निर्गुण्डी, पटोलकी जड, एरंडकी जड, असगंध, पवार, चित्रक, मुंगनेकी जड, काकलहरी, कलिहारीकी जड, नीमकी छाल, बकायनकी छाल, दशमूल, शतावरी, चिरपोटणी (मकोय) गौरीसर बिदारीकंद, थूहरके पत्ते, आकके पत्ते, सनाय, दोनों करनेकी छाल, आधा झाडा (ओंगा) और खीप ये सब औषध तीन तीन टकेभर और इन सब औषधोंके बराबर तिल्लिका तेल, इसी तेलके बराबर अंडीका तेल और दोनों तेलोंसे चौगुना जल ये सर्व एकत्रकर मंद मंद आँचसे औटाकर पानी जलके तेलमात्र रहजानेपर उतारकर छानलो पश्चात् सोंठ, मिर्च पिप्पली, असगंध, रास्ना, कूट, नागरमोथा, वच, देवदारु, इन्द्रयव, जवाखार, पाँचोंनोन, नीलाथोथा, कायफल, पाठा, भारंगी, नौसादर, गंधक, पोहकरमूल, शिलाजीत, हरताल ये प्रत्येक औषध धेले धेलेभर और २ टकेभर सिंगीमुहरा इन सबके चूर्णको उक्त तेलमें डालदो जो यह तेल मर्दन करो तो सर्ववायुरोग, तथा कुक्षि, भौं, जंघा, पृष्ठ, संधि इन स्थानोंमें स्थित कुपितवात, पदशोथ, गृध्रसी, मस्तकरोग, अंग फूटना, कर्णशूल, गंडमाला ये सर्व रोग दूर होवेंगे. इसे विषगर्भतैल कहते हैं.

तथा ७–मजीठ, देवदारु, चीड़ (वृक्षविशेष) दोनों कटियाली, वच, तज, पत्रज, शुद्धगंधक, हरंकी छाल, बहेड़ेकी छाल, कचूर, आँवला, नागरमोथा, ये सब दो दो टंक लेके क्वाथ बनालो, यह क्वाथ १ सेरभर तेलके साथ पकाकर तेलमात्र रह जानेपर इस तेलमें छड, मूर्वा, मैनफल, तज, चम्पाकी जड, कमलतंतु, पीपलामूल और सोंचरनोंन ये दो दो टकेभर,

तथा लोबान(ऊद)गंधापिरोजा, असगंध, नख (जोकि अष्टांगमें सुगंधि विशेष होती है) और छड़ ये टके टकेभर और इलायची, लौंग, चंदन जूहीके फूलोंकी कली, कंकोल, अगर और केशर ये पैसे पैसेभर और २ टंक कस्तूरी इन सर्वौषधोंका बारीक चूर्ण करके डालदो, इसको मंद मंद आँचसे पकाते पकाते औषधें मिलकर तेलमात्र रहजानेपर २ टंक कपूर डालके छानलो. अब इस तेलका मर्दन करो तो सर्व वातरोग, समस्त प्रमेह शोथ, गुल्म, ज्वर, ये सर्व रोग दूर होवेंगे. यह लक्ष्मीविलास महासुगंधित तैल चक्रदत्तमें लिखा है.

तथा ८–७ टकेभर सोंठ ७ टकेभर घीमें पीसकर पकालेओ. इसमें ७ टकेभर इकपोता लहसन और सात टकेभर मधु डालकर एकत्र करदो जो एक टकेभर नित्य खिलाओ तो पक्षाघात, हनुस्तंभ कटिभंग, भुजाकी पीडा और वायुके समस्त रोग दूर होवेंगे.

० तथा ९–मालकांगनी असालु, अजवायन,काला, जीरा मेथी और तिल इन सबको समान एकत्र कर तेलीके कोल्हू (घानी) से पेराओ जो इस तलको मर्दन करो तो वायुके समस्त रोग दूर होंगे. यह विजय भैरव तैलहै.

तथा १०–पारा, गंधक, हरताल और मैनासिल इनको ३ दिनतक काँजीके साथ खरल करके एक हाथभर महीन कपडेपर लपेट दो और इस कपडेकी वत्ती बनाकर ऊपरसे लपेट दो तदनंतर बत्तीको चौगुने तैलमें भिगोकर सुलगा (जलाके) दो और किसी लोहेके पात्रके ऊपर उसे पकड रक्खो बत्ती जलते समय उस पात्रमें जो तेल टपकेगा उसका मर्दन करो तो समस्त वातरोग दूर होवेंगे. यह भी विजयभैरव कहाता है.

तथा ११–३ टकेभर हरेंकी छाल, ३ टकेभर चित्रक, १ पैसेभर इलायची, १ पैसेभर तज, १ पैसेभर पत्रज, १ पैसेभर नागरमोथा, २ टंकभर सम्भालू, १० टंक सोंठ, १० टंक कालीमिर्च,१० टंक पिप्पली, १० टंक पीपलामूल, १० टंक शुद्ध सिंगीमुहरा, १० टंक लोहसार, १० टंक बंशलोचन,(१० टंक शुद्ध पारा, १० टंक शुद्ध गंधककी) कजली, इन सबको महीन पीसकर ३ वर्षके पुराने गुडके साथ बेरकी बीजीके समान गोलियाँ बनाके घृतके चिकने पात्रमें रखदो. ये रोगीके बलानुसार १ या दो

तथा तीन गोली २ मासपर्यंत नित्य खिलाओ तो कफ पित्तके सब रोग, ४ मासतक खिलाओ तो वायुके सर्व रोग, १ वर्षतक खिलाओ तो समस्त रोगमात्र दूर होवें, २ वर्षतक खिलाओ तो वृद्धता दूर होकर तरुणाई प्राप्तहो और इसी रसको ३ वर्ष पर्यंत युक्ति और प्रणपूर्वक सेवन कराओ तो शरीर सर्व प्रकारसे रोगरहित होकर आयुवृद्धि होगी. यह विजय भैरवरस है.

तथा १२–१ भाग शुद्धपारा, २ भाग शुद्धगंधक, ३ भाग त्रिफला, ४ भाग चित्रक, ५ भाग शुद्ध गूगल, इन सबको अरंडीके तेलमें दिनभर खरल करके हिंग्वाष्टक चूर्णके साथ १ दिनभर फिर खरल करो और २ टंक प्रमाणकी गोलियाँ वनाकर १ मास पर्यंत प्रतिदिन १ गोली रोगीको ब्रह्म-चर्य पूर्वक लौंग, सोंठ, अंडीकी जडके क्काथके साथ सेवन कराओ तो सर्वप्रकारके वातरोग दूर होंगे और साधारण वात तो ७ दिन मात्रके सेवनसेही दूर हो जाता है. इसको वातारिरस कहते हैं.

तथा १३–शुद्धगंधक, शुद्ध सिंगीमुहरा, सोंठ, कालीमिर्च, पारा, पीपली (पारेगंधककी कजलीके साथ) को महीन पीसकर मिला डालो और भाँगरेके रसकी सात पुट देके १ रत्ती प्रमाणकी गोलियां बनालो जो नित्य एक गोली अद्रखके रसके साथ खिलाओ तो सर्वप्रकारकी वायुकी पीडा दूर होगी. यह समीरपन्नग रस कहाता है.

तथा १४–उत्तम नवीन अफीम, कुचला, कालीमिर्च इन तीनोंको महीन पीसकर १ रत्ती प्रमाणकी गोलियाँ बनाओ. जो पानके रसके साथ प्रभातकाल १ गोली नित्य खिलाकर ऊपरसे पान खिलाओ तो समस्त वातरोग, शोथ, विषूचिका, अरुचि और अपस्मार ये सब रोग दूर होवेंगे. यह समीरगजकेशरी रस कहाता है. ये सब यत्न वैद्यरहस्यमें लिखे हैं.

तथा १५–तीव्रा (मदकारणी जिसे खुराशानी भी कहते हैं) अजवा-यन, जीरा, काकडासिंगी, अजमोद, असगंध इन सबका १ मासे चूर्ण नित्य उष्ण जलके साथ सेवन कराओ तो सर्व प्रकारका वायु, कास, श्वास, प्रलाप, अतिनिद्रा और अरुचि ये सर्व रोग दूर होंगे. इसे वृद्धचिंताम-णिरस कहते हैं.

---

१ जहाँ पारे और गंधकका संयोग हो तहाँ उनकी कजली बना लेना चाहिये।

तथा १६--२ टकेभर चित्रक, २ टकेभर हर्रेकी छाल, १ टकेभर पारा, १ टकेभर सोंठ, १ टकेभर कालीमिर्च, १ टकेभर पिप्पली, १ टकेभर पिप्पलामूल, १ टकेभर नागरमोथा, १ टकेभर जायफल, १ टकेभर बधायरा, ५ टंक इलायची, ५ टंक कूट, ७ टंक शुद्धगंधक, ५ टंक हिंगुल, ५ टंक अकरकरहा, ५ टंक मालकांगनी, ५ टंक तज, ५ टंक अभ्रक, ५ टंक शुद्ध सिंगीसुहरा और आठ टकेभर गुड, इन सबको पीस छान एकत्र करके जलभंगराके रसकी १ पुट दो और २ या ३ रत्ती प्रमाणकी गोलियाँ बनाके १ गोली नित्य खिलाओ तो सर्व वातरोग, कुष्ठ, प्रमेह, मृगी, क्षयी, आमवात, श्वास, शोथ, पांडु और अर्श ये सर्व रोग दूर होंगे यह अमृतनाम्नी गुटिका योगतरंगिणीमें लिखी है.

तथा १७–शुद्ध पारे और गंधककी कजलीको दूधीके रसकी १ पुट, तुलसीके रसकी १ पुट, बावची (मालबावरी) के रसकी १ पुट, मयूरशिखा (हरे पुष्पवाली बूटी) के रसकी १ पुट, मुलहटीके रसकी १ पुट, वाराहीकंदके रसकी एक पुट और बहुफलीके रसकी १ पुट यथाक्रमसे देके प्रत्येक पुटके साथ सुखाते जाओ. सर्व पुट हो चुकनेपर मुर्गीके अंडेका रस निकालकर खोखलाको पानीसे धोके इस खोखलामें पूर्वोक्त कजली भरदो इस कजली भरे हुए अंडेको ७ कपडमिट्टी (सुखा सुखाके एकान्तर एक) से लपेटकर गजपुटमें पकाओ इसी प्रकार तीन वार गजपुटमें फूंकके निकालली जो इसमेंसे १ रत्तीमात्र खिलाओ तो सर्व प्रकारकी बादी दूर होकर क्षुधावृद्धि होगी, यह राक्षसरस रसार्णवमें लिखा है.

तथा १८–शुद्ध पारे और गंधककी कजली बनाके उसमें इन दोनोंसे आधी हरताल डालो, इनमें इन तीनोंके समान राँगा डालकर चारोंको आकके दूधमें सात दिनतक खरल करो और सुखाके काँचकी दृढ आतसी शीशीमें भरदो इस शीशीको कपडमिट्टीमें लपेटके १२ प्रहरतक वालूयंत्र से आँच दो. स्वांग शीतल होजानेपर निकालकर आधीरत्ती पानमें रखके खिलाओ तो सर्वप्रकारका वात, उन्माद, क्षीणता, मन्दाग्नि, कुष्ठ, ब्रण और विषमज्वर ये सब दूर हों. यह वंगेश्वररस योगतरंगिणीमें लिखा है.

तथा १९–शुद्ध हरताल, शुद्ध गंधक, शुद्ध पारा, हिंगुल, सुहागा,

सोंठ, मिर्च, पीपल इन सबके चूर्णको अद्रखके रसकी १ पुट देके मूँग प्रमाणकी गोलियाँ बनालो, जो एक गोली नित्य प्रभात समय खिलाओ तो सर्व प्रकारकी वातव्याधि, मंदाग्नि, सूतिकारोग, शीतज्वर और संग्रहणी ये सर्व उपद्रव दूर हों. यह हरितालगुटिका रसरत्नप्रदीपमें लिखा है.

तथा २०-६ पैसेभर लहसनको जीरके सदृश कतरके १ पैसेभर दूध और धेलेभर पानीमें पकाओ दूध पानी सूख जानेपर लहसनको खरल करके लुगदी बाँधलो, इस लुगदीको अधेलेभर घीके साथ आँच देकर लाल होजानेपर निकाललो, अनंतर आधीरत्ती कस्तूरी, चार रत्ती लौंग, १ मासे जायफल, १ मासे दालचीनी, २ स्वर्णपत्र (सोनेके वर्क) और उपरोक्त निर्मित लहसनकी लुगदी ये सब पीसके २ पैसेभर मिश्रीकी चासनीमें डालदो तदनंतर इसकी चार गोली बनाकर १ गोली प्रातःकाल (और अधिक वायुका वेग हो तो १ गोली पुनः सायंकालको) खिलाओ तो वायुजन्य वेदना सर्व शांत होजावे. यदि वातव्याधिकी विशेषही तीव्रता हो तो उक्त क्रमानुसार २१ तथा ३९ दिनपर्यंत इसी गोलीका सेवन कराओ तो समस्त वातरोग दूर होकर शरीरको पुष्टता और क्षुधा प्राप्त होगी. ये गोलियाँ जितनी चाहो उक्त प्रमाणसेही बनाओ. इसे लहसनपाक कहते हैं.

इति नूतनामृतसागरे चिकित्साखण्डे समस्तवातरोगाणां यत्ननिरूपणं नामैकोनविंशतिवमस्तरङ्गः ॥ १९ ॥

आमवातादिरोगाः ।

उरुस्तम्भरोगस्य चामानिलस्याभ्रनेत्रे लिखामीह भङ्गे चिकित्साम् । तथा पित्तजानां बलासोद्भवानां गदानां नवीनामृताब्धेर्यशोदाम् ॥ २० ॥ भुजंगप्रयातवृत्तमिदम् ।

भापार्थ-अब हम इस नवीन अमृतसागरके २० वीसवें तरंगमें ऊरुस्तंभ, आमवात, पित्त और कफरोगोंकी यशदायिनी चिकित्सा लिखते हैं.

ऊरुस्तंभरोगचिकित्सा १-त्रिफला, कालीमिर्च, सोंठ, पीपल और पीपःलामूलका २ टंक चूर्ण नित्य मधुके साथ चटाओ तो ऊरुस्तम्भ दूर हो.

तथा २–सोंठ, पीपल, शिलाजीत और गूगल (ये सब ५ मासेभर) का चूर्ण गोमूत्रके साथ पिलाओ तो ऊरुस्तंभ दूर हो.

तथा ३–दशमूलके क्वाथके साथ गूगल सेवन कराओ तो ऊरुस्तंभ दूर हो यह भावप्रकाशमें लिखा है.

तथा ४–१ टंक भिलावाँ, १ टंक गुर्च, १ टंक सोंठ, १ टंक देवदारु, १ टंक हरेंकी छाल, १ टंक साटीकी जड और १ टंक दशमूलका क्वाथ पिलाओ तो ऊरुस्तंभ दूर हो.

तथा ५–एक टंक गूगल नित्य गोमूत्रके साथ १५ पन्द्रह दिनकतक पिलाओ तो ऊरुस्तंभ दूर हो.

तथा ६–सर्पकी बाँबी (सर्पके रहनेका भूछिद्र) की मिट्टी मधुमें खरल करके मर्दन करो तो ऊरुस्तंभ दूर हो.

तथा ७–दो टंक वचका चूर्ण उष्ण जलके साथ खिलाओ तो ऊरु० दूरहो.

तथा ८–खशका रस या नींबूका रस, मधु या गुडके साथ पिलाओ तो ऊरुस्तंभ दूर हो, यह काशिनाथपद्धतिमें लिखा है.

तथा ९–चव्य, हरेंकी छाल, चित्रक, देवदारु, सागरगोटीके फूल, सरसोंका चूर्ण २ टंक मधुके साथ नित्य सेवन कराओ तो ऊरुस्तंभ दूर हो. यह सर्वसंग्रहमें लिखा है.

ऊरुस्तंभमें वर्जित कर्म–शीर छुड़ाकर शरीरका रक्त निकालना, वमन कराना, विरेचन देना और बस्तिक्रिया करना ये कृत्य ऊरुस्तंभवाले रोगीको सर्वदावर्जित हैं. वैद्यरहस्यमें लिखा है कि, ये कृत्य कदापि न करो.

आमवातरोगयत्न १–आमवातके रोगीको लंघन कराओ, सेंको, तीक्ष्ण रस दो, क्षुधावर्द्धक औषध खिलाओ विरेचन दो, बस्तिकर्म करो, बालू या नमकसे ताव (सेंको) दो दाग (दभ) दो, बैंगन या करेलेका शाक खिलाओ, कोंदो या यव या साँठी चावल या पुराने चावल या कुलथी या मटर या चना खिलाओ,इन कार्योंको विचारपूर्वक करो तो आमवात दूर हो.

तथा २–चित्रक, कुटकी, हरेंकी छाल, बच, देवदारु, अतीस और गुर्चके २ टंक चूर्णका क्वाथ नित्य पिलाओ तो आमवात दूर हो.

तथा ३–कचूर, सोंठ, हरेंकी छाल, बच, देवदारु, अतीस और गुर्चका २ टंक क्वाथ नित्य पिलाओ तो आमवात दूर हो.

तथा ४–५ टंक अरंडी तेलको नित्य पिलाओ तो आमवात दूर हो.

तथा ५--हरंकी छालका चूर्ण अरंडीके तेलके साथ सेवन कराओ तो आमवात और गृध्रसी दोनो दूर हों.

तथा ६--किरमालेके पत्ते तेलमें भूंजके चावलोंके साथ नित्य खिलाओ तो आमवात दूर हो.

तथा ७–अरंडके बीजोंको दूधमें खीर बनाकर पिलाओ तो आमवात और गृध्रसी दोनों दूर होंगे.

तथा ८–खरेंटी, रास्ना, अडूसा, अरंडकी जड, धमासा, कचूर, दारुहल्दी, नागरमोथा, सोंठ, अतीस हरंकी छाल, गोखरू, चव्य, सहँजना और दोनों कटियाली ये सब बराबर और एकसे तिगुना रास्ना इन सबके ५ टंक चूर्णका क्वाथ नित्य पिलाओ तो पक्षाघात कम्प अर्दित कुब्जवात संधिवात घुटनावात पिंडलीवात गृध्रसी, हनुग्रह, ऊरुस्तंभ, वातरक्तार्श वीर्यदोष और स्त्रीका वंध्यापन ये सब रोग दूर हों. इसे महा रास्नादि क्वाथ कहते हैं.

तथा–अजमोद, कालीमिर्च, पीपली, वायविड़ंग, देवदारु, चित्रक, सौंफ, सैंधानोन, पीपलामूल, (ये सब टके टकेभर) १० टके भर सोंठ, १० टकेभर बधायरा, ५ टकेभर हरंकी छाल और इन सबके बराबर गुड लेके प्रथम औषधियोंका चूर्णकर गुडके साथ खरल करके २ दो टंकभरकी गोलियाँ बनाओ जो १ गोली नित्य उष्ण जलके साथ खिलाओ तो आमवात, अफरा, शूल, गृध्रसी, गोला, प्रतितूणी, कटिपीडा, पृष्ठपीडा, शोथ, जांघ और हड्डियोंकी फूटन ये सब दूर हों यह अजमोदादि चूर्ण है.

तथा १०–आठ टकेभर सोंठ १ सेर गौके घीमें चूर्ण करके मिलादो और यह सोंठयुक्त घी ४ सेर दूधमें डालकर खोवा बनालो तदनंतर ५० टकेभर मिश्रीकी चासनीमें उक्त प्रकारसे निर्मित खोवा डालकर १ टकेभर सोंठ, १ टकेभर नागकेशरका चूर्ण भी उसीमें डालदो और १ टकेभरकी गोलियाँ बनाकर १ गोली प्रातःकाल और १ सायंकाल नित्य खिलाओ तो आमवात दर होकर शरीर पराक्रमी तथा बलाढ्य होगा, इसे शुंठीपाक कहते हैं.

तथा ११--८ टकेभर मेथी और ८ टकेभर सोंठका चूर्ण सेरभर घीमें

मिलाके ४ सेर गौके दूधमें डालदो इस दूधका खोवा बनाकर चार सेर मिश्रीकी चासनीमें डालो और ऊपरसे १ टकेभर कालीमिर्च, १ टकेभर चित्रक, १ टकेभर पिप्पली, १ टकेभर धनियाँ, २ टकेभर सोंठ, १ टकेभर पीपलामूल, १ टकेभर अजवायन, १ टकेभर जीरा, १ टकेभर सौंफ, १ टकेभर जायफल, १ टकेभर कचूर १, टकेभर तज, १ टकेभर पत्रज और १ टकेभर नागरमोथाका चूर्ण डालकर, १ टकेभरकी गोलियाँ बनाओ. जो एक गोली नित्य खिलाओ तो आमवात वातव्याधि, विषमज्वर, पांडु, उन्माद, मृगी, प्रमेह, वातरक्त, अम्लपित्त, शिरोग्रह, नेत्ररोग और प्रदर ये सर्व दूर होकर वीर्य बढ़ेगा, इसे मेथीपाक कहते हैं.

तथा १२–२ टंक लहसनका रस २ टंक गौके घीके संग नित्य पिलाओ तो आमवात दूर हो.

तथा १३–५ टंक सैंधानोन, ५ टंक हर्रकी छाल, ५ टंक पोहकरमूल, ५ टंक महुआ और ५ टंक पीपलीका चूर्ण, १ सेर अरंडीका तेल १ सेर सौंफका रस, २ सेर काँजी और चार सेर दहीका मट्ठा इन सबको कडाहीमें डालकर मंद मंद आँचदो, रसादिक जलकर तेलमात्र रहजानेपर छानकर २ टंक नित्य खिलाओ या मर्दन करो तो आमवात दूर होकर क्षुधा बढ़ेगी. इसे ब्रह्मसिद्धवात तेल कहते हैं.

तथा १४–शुद्धपारा, शुद्धगंधक, सोंठ, कुटकी, त्रिफला, किरमालेकी गिरी समभाग और एकसे तिगुनी हर्रकी छाल, इन सबका चूर्ण और पारे गन्धककी कजली दोनोंको मिलाकर भलीभाँति खरल करो. जो इसमेंसे १ मासेभर रस नित्य सोंठ और अरंडकी जडके क्राथके साथ सेवन कराओ तो आमवात दूर हो. इसे आमवातादिरस कहते हैं.

तथा १५––१ सेर गूगल, १ सेर कडुआ तेल, १ सेर हर्रकी छाल, १ सेर बहेडकी छाल, और १ सेर आँवलेका चूर्ण इन सबको २४ चौवीस सेर पानीके साथ चूल्हेपर चढाकर आँचदो, चतुर्थांश रहजानेपर छानके पुनः चूल्हेपर चढाओ और कुछ गाढ़ा होजानेपर २ टंक पारा २ टंक गन्धक, २ टंक सोंठ, २ टंक मिर्च, २ टंक पीपल, २ टंक त्रिफला, २ टंक नागरमोथा, २ टंक देवदारु और १०० शुद्ध जमालगोटे इन सबका चूर्ण उक्त क्राथमें डालके १ मासेभर नित्य उष्ण जलके साथ सेवन कराओ तो आम-

वात, वातरोग, भगंदर, शोथ, शूल, अर्श, ये सर्व रोग दूर होकर क्षुधा और वीर्यकी वृद्धि होगी इसे व्याधिशार्दूलगूगल कहते हैं.

तथा १६—हरंकी छाल, सैंधानोन, निसोत, इन्द्रायणके फलकी बीजी, इन्द्रायणकी जड और सोंठका चूर्ण जलके साथ लोहेके पात्रमें डालकर मंद मंद आँचसे पकाओ. जल औटकर गाढा होनेपर बेरके समान गोलियाँ बनाकर १ गोली नित्य उष्ण जलके साथ खिलाके ऊपरसे घृत युक्त चावल खिलाओ तो आमवात दूर हो इसे आमादिगुटिका कहते हैं. ये सर्व यत्न वैद्यरहस्यमें लिखे हैं.

तथा १७— सोंठ, कालीमिर्च, पिप्पली, त्रिफला, नागरमोथा, वायविडंग, चव्य, चित्रक, वच, इलायची, झाऊकी जड, पीपलामूल, देवदारु, कूट, तुम्बरु, (तरतूम्बा, इन्द्रायणफल) पोहकरमूल, दोनों हल्दी, सोंठ, सौंफ, जीरा, पत्रज, धमासा, सोंचरनोन, जवाखार, सज्जी, गजपीपल, सैंधानोन और इन सबके बराबर शुद्ध गूगल, इन सबका २ टंक चूर्ण नित्य घृत या मधुके साथ सेवन कराओ तोआमवात, उदावर्त्त, पांडु, कृमिरोग; विषमज्वर, आध्मान, उन्माद, कुष्ठ और शोथ ये सर्व रोग दूर होंगे. धन्वन्तरिजीने इसका नाम द्वाविंशद् गुग्गुल रक्खा है. यह वीर सिंहावलोकन ग्रंथमें लिखा है.

तथा १८—१ सेर शुद्ध गूगल, ८ टकेभर कडुआ तेल, १ सेर हरंकी छाल, १ सेर बहेडेकी छाल, १ सेरआँवला इन सबका चूर्णकर २४ चौवीस सेर जलमें औटाओ, चतुर्थांश रहनेपर छानकर पुनः अग्निपर चढाओ कुछ गाढा होनेपर २ टंक सोंठ, २ टंक कालीमिर्च, २ टंक पीपल,२ टंक त्रिफला, २ टंक नागरमोथा, २ टंक देवदारु, २ टंक गुर्च, २ टंक निसोत, २ टंक दात्यूणी, २ टंक वच, २ टंक भूकंद, २ टंक धतूरेके बीज, २ टंक शुद्धगंधक, २ टंक शुद्धपारा इन सबका चूर्ण उक्त क्काथमें डालके १ मासे नित्य उष्ण जलके साथ सेवन कराओ तो आमवात, मस्तकपीडा, कटिपीडा भगंदर, घुटनोंकी वायु, जंघाकी वायु, पथरी और मूत्रकृच्छ्र ये सर्व रोग दूर होकर क्षुधा और धातुकी वृद्धि होगी तथा शरीर रोगरहित रहैगा इसे सिंहनादगूगल कहते हैं यह योगतरंगिणीमें लिखा है.

तथा १९—५ टंक शुद्धगंधक, ५ टंक ताम्बेश्वर, २ टंक शुद्धपारा, २ टंक लोहसार इन सबको इकट्ठे पीसकर लोहके पात्रमें डाल दो और आँचसे

पिघलाकर एरंडीके पत्तोंपर डालदो तदनंतर पत्तोंसहित खरल करके पिप्पली, पीपलामूल, चव्य, चित्रक, सोंठके काथकी १ पुट, बहेड़ेके काथकी २० पुट और गुर्चके रसकी १० पुट दो. तदनंतर इस पदार्थके समान सेंका सुहागा, सुहागेसे आधा बिडनोन, बिडनोनके समान कालीमिर्चें मिर्चके समान डाँसरे, डाँसरेके समान सोंठ, सोंठके समान पिप्पली, पिप्पलीके समान त्रिफला, त्रिफलाके समान लवंग, इन सबका महीन चूर्ण करके १ मासेभर नित्य खिलाओ तो आमवात दूर होकर क्षुधावृद्धि हो. यह आमवातेश्वररस रोगयुक्त स्थूल मनुष्यको कृश और कृशको स्थूल करताहै, अतिशय भोजनको शीघ्र पचाता और न्यारे २ अनुपानोंसे अनेक अन्य रोगोंको भी नाश करता है. यह सारसंग्रहमें लिखा है.

आमवातमें वर्जित पदार्थ—दही, दूध, गुड़, उर्द, मांस और मछली ये पदार्थ उक्त रोगोंमें सर्वथा वर्जित हैं. ऐसा भावप्रकाशमें लिखा है.

पित्तरोगयत्न १—निम्बकी छाल आदि तीक्ष्ण वस्तु, मिश्री आदि मिष्ट वस्तुका भक्षण, चंदनादि शीतल पदार्थका लेपन, शीतल छाया, चन्द्रमाकी चाँदनी, भूगर्भ गृह, (तलघर) या रात्रिको किसी शीतल स्थानमें निवास, उशीर व्यजन (खशके पंखे) द्वारा शीतल पवन सेवन, दुग्धपान विरेचन तथा शिर छुलवानेसे पित्तके ४० चालीसों रोग नाश होंगे.

कफरोगके सामान्ययत्न १—उष्ण, रूखी, कसायली, कटु वस्तु खिलाओ, कुरले, वमन, लंघन, मल्लक्रीड़ा, जलक्रीड़ा, मार्गगमन, जागरण, मैथुन, श्रम कराओ, पसीना निकालो, प्यास रोको; हुक्क पिलाओ, नासदो, या चित्रक खिलाओ इन यत्नोंसे २० प्रकारके कफरोग नाश होवेंगे.

इति नूतनामृतसागरे चिकित्साखंडे ऊरुस्तंभ, आमवात, पित्तरोग-कफरोगाणां यत्ननिरूपणं नाम विंशतितमस्तरंगः ॥ २० ॥

वातरक्तशूलादिरोगः ।

गदानां वातरक्तस्य शूलादीनां यथाक्रमात् ॥
तरंगे भूनेत्रमिते चिकित्सा लिख्यते मया ॥ २१ ॥

भाषार्थ—अब हम इस २१ इकीसवें तरंगमें वातरक्त और शूल आदि रोगोंकी चिकित्सा यथाक्रमसे लिखते हैं.

वातरक्तयत्न १-रोगीके शरीरसे जोंक या सिंगी या शीर (फस्त) या अस्तुरेसे ऐसा रक्त निकाल दो जिसमें वायु बढ़ने न पावे तो वातरक्त दूर हो.

तथा २-१ टंक गूगल गुर्चके क्वाथके साथ नित्य खिलाओ तो वातरक्त दूर हो.

तथा ३-२टंक अंडीका तेल गुर्चके क्वाथके साथ पिलाओ तो वातरक्त दूर हो.

तथा ४-मजीठ, त्रिफला, कुटकी, वच, दारुहल्दी, गुर्च और नीमकी छालके २ टंक चूर्णका क्वाथ १ मंडल (चालीस दिन) पर्यंत पिलाओ तो वातरक्त, कुष्ट, पामा, (खुजली) और फोडे, ये सब दूर होंगे यह लघुमंजिष्ठादि क्वाथ है.

तथा ५-गुर्च, बावची, पवाँर, नीमकी छाल, हल्दी, हरंकी छाल, आँवला, अडूसा, शतावरी, कमलतंतु, मुलहटी, खरेंटी, महुआ, गोखरू, पटोल, खश, मजीठ और रक्तचंदनका चूर्ण इनका २ टंक क्वाथ नित्य पिलाओ तो वातरक्त, कुष्ट, पामा और दद्रु ये सब दूर होंगे. ये सब यत्न भावप्रकाशमें लिखे हैं, इसे गुडूच्यादि क्वाथ कहते हैं.

तथा ६-सेरभर शुद्ध भैंसागूगल, सेरभर हरंकी छाल, सेरभर बहेडीकी छाल, सेरभर आँवला, ३२ टंक गुर्च इन सबका चूर ६४ सेर पानीमें औटाकर आधा रहजानेपर छानलो, फिर कडाहीमें डालकर कुछ गाढा होजानेपर पारा, गन्धक, निसोत, गुर्च, दात्यूणी दो दो टंक और १ टंक वायविडंगका चूर्ण उक्त क्वाथमें डालदो इन सबको एक जीव करके चार या आठमासे नित्य मंजिष्ठादि क्वाथके साथ सेवन कराओ तो वातरक्त, श्वास, गोला, कुष्ट, शोथ, व्रण, उदररोग, पांडु, प्रमेह और मंदाग्नि ये सर्व रोग दूर होंगे यह किशोरगूगल कहाता है. इस गूगलको सेवन करनेवाले रोगीको अग्नि तापना, घाममें फिरना, श्रम करना, मार्ग चलना, मैथुन करना और खटाई, मांस, दही, नोन, तेल यह नहीं खाना चाहिये.

तथा ७-२ सेर भिलावांके मुख रेतीसे घिसकर १६ सेर पानीमें औटाओ औटते समय २ सेर गुर्चका महीन चूर्ण डालकर चतुर्थांश रखलो

१ जो पानीमें डालनेसे नहीं डूबे ऐसे पक्के बोझिल भिलावां इस पाकके लिये लेना चाहिये।

तदनंतर गुर्च, बावची, निम्बकी छाल, हर्रकी छाल, हल्दी, नागरमोथा तज (ये सब दो दो टंकः) इलायची गोखुरू कचूर रक्तचंदन ये चारों पाँच पाँच टंक का बारीक चूर्ण उक्त ४ सेर काथमें डालकर भिलावाँ सहित सर्व औषधें और जल आदिको कूट डालो इन सबको एकत्रकर ५ टंक नित्य जलके साथ सेवन कराओ तो वातरक्त कुष्ट अर्श पामा विसर्प सर्ववातविकार सर्व रक्तविकार दूर होंगे. इसके सेवन करनेमें रोगीको छठवें यत्नोक्त वस्तुयें वर्जना चाहिये यह अमृतभल्लातक है.

तथा ८--अलसी या अंरडीके बीजोंको दूधमें पीसकर हाथ पैरोंपर लेप करो तो वातरक्त दूर हो.

तथा ९--गौरीसर, राल, मोम, मजीठको तेलमें पकाकर इस तेलका मर्दन करो तो वातरक्त दूर हो.

तथा १०--एरंडीकी जड गुर्च और अडूसाके काथमें ४ मासे गूगल और २ टंक एरंडीका तेल डालकर पिलाओ तो वातरक्त, मूर्च्छा, श्वास, मस्तकपीडा और फोडे ये सब दूर हों. यह यत्न वैद्यरहस्यमें लिखा है.

तथा ११--हरतालको पुनर्नवाके रसमें खरल करके टिकिया बनाओ सूखजानेपर पुनर्नवाकी राखके बीचमें धरके ठीकरे (मट्टीके वर्त्तन) को चूल्हे पर चढादो मंद मंद आँचसे ५ दिन ५ रात्रि तपाकर स्वांग शीतल हो जानेपर टिकिया निकालो जो इसमेंसे १ रत्तीभस्म गुडूच्यादि काथके साथ सेवन कराओ तो वातरक्त, अठारह प्रकारके कुष्ठ, पामा फिरंगवात, विसर्प और फोडे ये सर्व रोग दूर हों. सेवन करनेवाले पुरुषको नोन, खटाई, कटु रस, धूप, अग्निका बचाव करना चाहिये और सैंधानोन तथा मीठी वस्तुयें भक्षण करना चाहिये. टिकिया आँचपरसे निकलनेपर श्वेत रंग बोझ पूर्ववत् (जो बोझ पहिले था उतनाही रहना चाहिये) और निर्धूम होजाना चाहिये यह हरतालेश्वर रस भावप्रकाशमें लिखा है.

वातरक्तवालेको वर्जित पदार्थ--दिवस निद्रा, क्रोध, श्रम, मैथुन और कटु, उष्ण, भारी, खारी, खट्टी वस्तु भक्षण न करना चाहिये.

तथा योग्य कार्य--यव, गेहूँ, लाही (ये पुराने) अरहर, चना, मूँग, कुलथी, मसूर. धनियां, चिरपोटणी, वथुआ, चीलवा, लूण्या, (कुलफा) बक-

रीका दूध और बकरीकाही घी तथा मांसाहारियोंको वटेर और तीतर का मांस ये पदार्थ उक्त रोगीके भक्षण करने योग्य हैं.

वातशूलरोगयत्न–१ अजवायन, सैंधानोन, सेंकी हींग, जवाखार, सोंचरनोन, हर्रेकी छालका २ टंक चूर्ण उष्ण जलके साथ दो तो वातशूल दूर हो.

तथा २–१ टंक सोंचरनोन, ३ टंक जीरा, ४ टंक कालीमिर्चके चूर्णको अमलवेतके रसकी ७ पुट और विजौरेके रसकी ७ पुट देकर चारमासे भरकी गोलियाँ बनाओ जो १ गोली उष्ण जलके साथ दो तो वातशूल दूर होगा.

तथा ३–निसोत, वायविड़ंग, सहँजनाकी फली,हर्रेकी छाल, कपेलाके चूर्णको अश्वके मूत्रमें पकाकर २ टंक मद्यके साथ पिलाओ तो वातशूल दूर हो, यह चक्रदत्तमें लिखा है.

तथा ४–सेंकी हींग, अमलवेत, पिप्पली, अजवायन, जवाखार, हर्रेकी छाल और सैंधानोनका२टंक चूर्ण मद्यकेसाथ पिलाओ तो वातशूल दूर हो.

तथा ५–२ टंक विजौरेकी जडका चूर्ण घृतके साथ पिलाओ तो वात शूल दूर हो. यह बीजपूरादि योग सर्वसंग्रहमें लिखा है.

तथा ६–शुद्ध पारा, शुद्ध गंधक, अभ्रक, अमलवेत, ताम्बेश्वर और शुद्ध सिंगीमुहराको पीसकर अदरखके रसमें ३ रत्ती प्रमाणकी गोलियाँ बनाओ जो एक गोली नित्य जलके साथ सेवन कराओ तो वातशूल दूर हो इसे अग्निमुख रस कहते हैं.

पित्तशूलयत्न १– हर्रेकी छालको गुडमें पीसकर घृतके साथ खिलाओ तो पित्तशूल दूर हो. तथा २–विरेचन कराओ तो पित्तशूल दूर हो.

कफशूलयत्न १–आँवलेका चूर्ण मधुके साथ चटाओ तो कफशूल दूर हो.

तथा २–नीमकी छालका क्वाथ मदिराके साथ पिलाओ तो कफशूल दूर हो.

तथा ३–जवाखार, सैंधानोन, साँभरनोन, सोंचरनोन, पिप्पली, पीपलामूल, चव्य, चित्रक, सोंठ और सेंकीहींगका २ टंक चूर्ण उष्ण जलके साथ सेवन कराओ तो कफशूल दूर हो.

त्रिदोषजशूलयत्न १–त्रिफला सार, मुलहटी,महुआ इनका १ टंक चूर्ण मधु या घृतके साथ चटाओ तो त्रिदोषज (सन्निपात) शूल दूर हो.

तथा२--शंखभस्म, सोंचरनोन, सेंकी हींग, सोंठ, कालीमिर्च, पीपली इनका२टंक चूर्ण उष्ण जलके साथ सेवन कराओ तो त्रिदोषज शूल दूर हो.

आमशूलयत्न १—आँवलेका चूर्ण मधुके साथ चटाओ तो आमशूल दूर होगा. उपरोक्त कफरोगके तीनों यत्न भी आमशूलको नाश कर सकैंगे.

सामान्य शूलमात्रके यत्न १—रोगीको वमन या लंघन कराओ, औषधियोंसे प्रस्वेद निकालो, पाचन सज्जीखारका चूर्ण या क्रव्यादि चूर्ण खिलाओ, बस्तिक्रिया करो, कुल्थी या तपी हुई रेतकी पोटलीसे पानी सींचकर सेंको तो प्रत्येक उपायोंसे शूल रोग दूर हो.

तथा २--काकडासिंगी, कुल्थी, तिल, यव, अलसी, अरंडकी जड, पुनर्नवाकी जड, लहसनकी बीजीको कांजीमें पकाकर शूलके स्थानमें सेंक करो तो शूल दूर हो.

तथा ३—तिल्लीको पीसकर काँजीमें पकाओ पकते समय कुछ तेल भी डालके पोटली बनाकर सेंको तो शूल तत्क्षण दूर हो.

तथा ४—मैनफलको कांजीमें पीसकर नाभिपर लेप करो तो शूल दूर हो.

तथा ५—सोंठ और एरंडकी जड़का क्वाथ पिलाओ तो शूल दूर हो.

तथा ६— सोंठ और एरंडका क्वाथ हींग या सोंचरनोनके साथ पिलाओ तो शूल दूर हो.

तथा ७—गुड़को पानीमें औटाकर जवाखार डालके पिलावो तो शूल दूर हो.

तथा ८—कांसे, या चाँदी या ताँबेका जलभरा पात्र शूलके स्थानपर फिराओ तो शूल दूर हो.

तथा ९—राई और त्रिफलेका चूर्ण मधु या घृतके साथ दो तो शूलमात्र दूर हो.

तथा १०—दारुहल्दी, चोख, कूट, सौंफ, सेंकीहींग और सैंधानोनका रीक चूर्ण उष्ण कांजीके साथ लेप करो तो शूल दूर हो.

तथा ११—बेलकी जड, एरंडकी जड, चित्रक, सोंठ, सेंकी हींग, सैंधानोन इनका २ टंक चूर्ण उष्ण जलके साथ खिलाओ तो शूल दूर हो.

तथा १२—पक्के कुम्हडेके सूखे हुए घूला (टुकडे जैसे शाक बनानेके लिये करते हैं) पीतलके पात्रमें भरकर मुँह बंद करदो इसे चूल्हेपर चढाके उतनी आँच दो कि जिससे जलकर कोयले बनजावें. स्वांग शीतल हो

जानेपर २ मासे राख, सोंठके चूर्णके साथ खिलाकर ऊपरसे जल पिलाओ तो असाध्य शूल भी दूरहो इसे कूष्मांडक्षार कहते हैं ये सब यत्न भावप्रकाशमें लिखे हैं.

तथा १३–सोंठ, हर्रकी छाल, पिप्पली, निसोत और सोंचरनोनका १ टकेभर चूर्ण उष्ण जलके साथ खिलाओ तो शूल, अफरा, अर्श और आमवात ये सब दूर हों इसे पञ्चसम चूर्ण कहते हैं.

तथा १४–सेंकी हींग और सोंचरनोनका चूर्ण सोंठके क्वाथ और अरंडके तेलके साथ सेवन कराओ तो शूल तत्काल दूर हो.

तथा १५–शंखका चूर्ण, सोंचरनोन, सेंकीहींग, कालीमिर्च और पिप्पलीका २ टंक चूर्ण उष्ण जलके साथ खिलाओ तो शूल तुरंत दूर हो.

तथा १६–शुद्ध सिंगीमुहरा, सोंठ, चित्रक, कालीमिर्च, पीपल, जीरा और सेंकीहींगके चूर्णको भँगरेके रसकी ३ पुट देकर चने सदृश गोलियाँ बनालो और १ गोली उष्ण जलके साथ खिलाओ तो शूल दूर होगा.

तथा १७–शंखभस्म, करंजमूल, सेंकीहींग, सोंठ, कालीमिर्च, पीपल और सैंधानोनका २ टंक चूर्ण उष्ण जलके साथ खिलाओ तो शूल दूर हो. यह शूलनाशन चूर्ण कहाता है.

तथा १८ चित्रक, सोंठ, सेंकीहींग, पाठी, पिप्पली, कालीमिर्च, जीरा, धनियाँ, पांचोनोन, छड़, अजवायन और पिपलामूलके चूर्णको जँभीरीके रसकी ५ पुट देके ४ मासे प्रमाणकी गोलियाँ बनाओ जो १ गोली उष्ण जलके साथ खिलाओ तो हृदयशूल, आमशूल, पार्श्वशूल, समस्त शूल, अरुचि और ८० अस्सीप्रकारके वात ये सर्व रोग तुरंत दूर होंगे इसे चित्रकादि गुटिका कहते हैं.

तथा १९–हर्रकी छाल, सोंठ, कालीमिर्च, पिप्पली, कुचला शुद्ध, गंधक, सेंकीहींग और सैंधानोनको जलसे खरल करके चने प्रमाणकी गोलियाँ बनालो. १ गोली नित्य प्रातःकाल उष्ण जलके साथ सेवन कराओ तो संग्रहणी, अतिसार, अजीर्ण, मन्दाग्नि, ये सर्व रोग दूर होंगे. इसे शूलनाशिनी गुटिका कहते हैं.

ताथा २०–२ टंक कूट (शालमलिवृक्ष) २ टंक सोंठ, १ टंक सोंचरनोन १ टंक सेंकीहींगका चूर्ण, सहँजने या लहसनके रसमें मिलाकर गोलियाँ

बनालो जो १ गोली उष्ण जलके साथ दो तो शूल तत्काल दूर होगा. इसे कुचिलादि[1] गुटिका कहते हैं.

तथा २१–१० टंक शुद्ध पारा, १० शुद्ध सिंगी मुहरा, २० टंक काली मिर्च, २० पिप्पली, २० टंक सोंठ, २० टंक सेंकी हींग, ५ टंक पाँचोंनोन, ८ टंक इमलीका खार, ८ टंक जंभीरीका खार, ८ टकेभर शंखकी राख इन सबको नींबूके रसमें ५ दिन खरल करके १ टंक रस उष्ण जलके साथ सेवन कराओ तो शूल तत्काल दूरहो इसे शूलदावानलरस कहते हैं.

तथा २२--आधसेर हीराकसीस, सेरभर लाहौरी फिटकरी, सेरभर सैंधानोन, सेरभर शोराका चूर्ण करके ढेकली (यंत्रोंमें प्रसिद्ध है) यंत्रसे रस निकाललो जो १ मासेभर खिलाओ तो शूल, गुल्म, अर्श, प्लीहा, उदररोग, अजीर्ण और वातरोग सब दूर होंगे. इसे शंखद्राव[2] कहते हैं.

तथा २३--शुद्ध गंधक, गंधकसे आधा पारा इन दोनोंके समान कंटकवेधी ताँबेके पत्र तीनोंके १ दिन खरल करके गोला बनालो और हंडीमें नमक भरके उसके बीचमें यह गोला धरदो, हंडीको चूल्हेपर तीन दिन आँच देकर स्वाँग शीतल होजानेपर गोलेको निकालके पीस डालो जो इस भस्मको २ रत्ती प्रमाणकी मात्रासे नागरवेल पानके साथ खिलाओ तो शूल तत्काल दूर हो. इसे शूल गजकेसरी रस कहते हैं.

तथा २४–जीरा, सोंठ, कालीमिर्च, सेंकीहींग और वच इनका २ टंक चूर्ण उष्ण जलके साथ सेवन कराओ तो शूल दूर हो.

तथा २५–१ टकेभर त्रिफला, ५ टकेभर शुद्ध गंधक, २ टकेभर कांतिसार इन्होंका चूर्ण, अनुमानसे २ टंक मधु और २ टंक घृतके साथ ३ मासपर्यंत चटाओ तो सर्व शूल, वायुके विकार और फोडे ये सब दर हों इसे गंधकरसायन कहते हैं.

तथा २६-१ टकेभर गुड, १टकेभर आँवला, ३ टकेभर मंडूर इनका २टंक

---

१ प्राचीनामृतसागरमें इसे कुचिलादि गुटिका नाम दिया है परंतु इसमें कुचिलेका नाममात्र भी नहीं दृष्टि पड़ता. हां जो कूटादि गुटिका कहीजावे तोभी योग्य है.

२ इस पदार्थको काँच या चीनीकी शीशीको छोड अन्य पात्रमें न धरो क्योंकि यह उसे खा जायगा तो फिर द्रव पदार्थ हाथ न लगैगा, और इसके भक्षण समय रोगीके मुखमें घृत लगादो नहीं तो उसके दाँत और जीभको हानि पहुँचनेका भय होगा.

चूर्ण मधु और घृतके साथ चटाओ तो शूल, अन्नद्रव, जरत्पित्त, अम्ल-पित्त, परिणाम शूल ये सब दूर हों. यह गुडादि मंडूर कहाता है.

तथा २७–वायविडंग, चित्रक, चव्य, त्रिफला, सोंठ, कालीमिर्च और पिप्पली, इन सबके बराबर मंडूर और तुल्यही गुड तथा इन सबोंसे १० गुणा गोमूत्र लो तदनंतर सर्व औषध और गुडादिका चूर्ण गोमूत्रमें पकाकर दृढ़ करलो और पिंडा बनाकर घृतके चिकने पात्रमें रखदो जो इसमेंसे २ टंक नित्य भोजनके पूर्व भक्षण कराओ तो शूल, पंक्तिशूल, कामला, पांडु, शोथ, मंदाग्नि, अर्श, संग्रहणी, कृमि, गुल्म, उदररोग, अम्लपित्त, ये सर्व रोग दूर होंगे. यह तारामंडूर है.

तथा २८–हरंकी छाल, सुहागा, सोंठ, सेंकीहींग, कालीमिर्च चित्रक, शुद्ध गंधक, सैंधानोन और इन सबके समान शुद्ध कुचिला इन सबको पीसकर एक मासे प्रमाणकी गोलियाँ बनालो. जो गोली नित्य जलके साथ सेवन कराओ तो शूल, अफरा, बंधकुष्ठ, कफरोग, अजीर्ण, मन्दाग्नि, ज्वर ये सब दूर हों. यह स्थूलगजकेसरी गुटिका है.

तथा २९–कणगजकी जड, सेंकीहींग, सोंठ, सेंका सुहागा इन सबका २ टंक चूर्ण उष्ण जलसे सेवन कराओ तो महाशूल भी दूर हो ये सर्व यत्न वैद्यरहस्यमें लिखे हैं.

तथा ३०–सोंचरनोन, अमलवेत, जीरा, और मिर्च ये सब एक दूसरेसे क्रमानुसार दूने दूने लेकर चूर्ण करो और बिजौरेके रसमें गोलियाँ बनाकर १ गोली उष्ण जलके साथ सेवन कराओ तो शूल दूर हो. इसे सौवर्चलादि गुटिका कहते हैं.

तथा ३१–सेंकीहींग, अमलवेत, कालीमिर्च, पिप्पली, अजवायन, सोंचरनोन, सांभरनोन, सैंधानोन इन सबको पीसकर बिजौरेके रसमें गोलियाँ बनाओ जो एक गोली उष्ण जलके साथ खिलाओ तो समस्त शूल दूर होंगे. इसे हिंग्वादिगुटिका कहते हैं.

तथा ३२–हलदी, सहँजना, (सुंगना) की छाल, सैंधानोन, एरंडकी जड़, सौंफ, भैंसागूगल, सरसों, [illegible] ी, असगंध और महुआके चूर्ण-को काँजीके पानीमें उसन ([illegible] बनाओ और अग्निपर सेंकके रोगीके पेटपर बाँधो या [illegible]

तथा ३३–कौडियोंकी राख, शुद्ध सिंगीमुहरा, सैंधानोन, कालीमिर्चं पिप्पली इन सबका चूर्ण कर पानके रसमें १ रत्ती प्रमाणकी गोलियां बनाओ जो १ गोली नित्य खिलाओ तो शूलरोग दूर हो. यह शूलगजकेसरीरस है.

तथा ३४–बड़े शंखको तपा तपाकर ११ ग्यारह बार नींबूके रसमें बुझाओ फिर इस बुझेहुए शंखके चूर्ण (राख) में १ टकेभर इमलीका खार, ५ टंक सोंचरनोन, १ टकेभर सैंधानोन, १ टकेभर साँभरनोन, १ टकेभर कचनोन, १ टकेभर बिड़नोन, ६ मासे सोंठ, ६ मासे कालीमिर्चं, ६ मासे पिप्पली, १ टकेभर सेंकीहींग, १ टकेभर शुद्ध गंधक, १ टकेभर शुद्ध पारा, १ टंक शुद्ध सिंगीमुहरा, ये सब औषधें मिलाकर एक जीव करदो तदनंतर जलके साथ घोटकर छोटे बेर प्रमाणकी गोलियाँ बनाओ जो एक गोली लवंगके क्काथके साथ सेवन कराओ तो शूल तत्काल दूर हो. इसका नाम शंखवटी रस है.

तथा ३५–जो भोजन कियेपर शूल उत्पन्न हो तो २ टंक शीशे (काँच) की भस्म उष्ण जलके साथ पिलाओ तो शूल दूर होगा.

तथा ३६–एक टंक शुद्ध पारा, १ टंक शुद्ध गंधक, १ टंक शुद्ध सिंगीमुहरा, १ टकेभर कालीमिर्चं, २ टकेभर काकड़ासिंगी, २ टकेभर पीपली २टकेभर सेंकीहींग, ८ आठ टकेभर पाँचोंनोन, ८ टकेभर इमलीका खार, ८ टकेभर नींबूके रसमें बुझेहुए शंखकी भस्म इन सबके चूर्णको नींबूके रसमें खरल करके १ टंक प्रमाणकी गोलियाँ बनालो जो १ गोली जलके साथ सेवन कराओ तो शूल, अजीर्ण, उदररोग और मंदाग्नि ये दूर होंगे इसे शूलदावानल रस कहते हैं, ये सर्व यत्न सर्वसंग्रह ग्रंथमें लिखे हैं.

पार्श्वशूलयत्न १–सिंगीमुहरा, हरताल, सेंकीहींग[१], राई, नौसादर, मैनशिल, लहसन, वच, एलिया(एलावा)इन सबको पानीमें पीसकर उष्ण करो और रोगीके पार्श्वभागपर लेप करो तो पार्श्वशूल (पसली दूखना) दूर होगा.

इति नूतनामृतसागरे चिकित्साखण्डे वातरक्तशूलादिरोगाणां यत्ननिरूपणं नामैकविंशतितमस्तरंगः ॥ २१ ॥

---

१ जहाँ हींग सेंकनेके लिये कहाँ हो तहाँ हींगको गौके घृतमें तलडालो या रुईमें लपेटके अग्निपर तपाके फुला डालो तो हींग सेंक जावेगी.

उदावर्त्त-अनाह।

उदावर्त्तानाहगदयोस्तरङ्गे यथाक्रमात् ॥
पक्षनेत्रमिते चास्मिन् चिकित्सा लिख्यते मया ॥ २२ ॥

भाषार्थ—अब हम इस २२ बाईसवें तरंगमें उदावर्त और आनाह रोगकी चिकित्सा यथाक्रमसे लिखते हैं.

उदावर्तरोगयत्न १—स्नेहपान कराओ तथा अधोवायु आनेवाली औषधि सेवन कराओ तो अधोवायुके प्रतिबंधसे उत्पन्न हुआ जो उदावर्त सो दूर होवे.

तथा २—विरेचनसे मलको दूर करनेवाली औषध या मल शुद्ध करनेवाले अन्न भक्षण कराओ, फलवर्ती या तेल मर्दन करो या बस्तिक्रिया करो तो मल रोकनेका उदावर्त रोग दूर हो.

तथा ३—१ टंक जवाखार १ टंक बचको पानीमें पीसके पिलाओ तो मूत्र रोकनेका उदावर्त दूर होगा.

तथा ४—कटियाली और अर्जुन वृक्षकी जडका क्काथ पिलाओ तो मूत्र रोकनेका उदावर्त दूर होगा.

तथा ५—मिश्री, गन्नाका रस दूध, दाखका रस पिलाओ तो मूत्र रोकनेका उदावर्त दूर होगा. इससे वायुजन्य रोग भी नाश होते हैं.

तथा ६—स्नेहपान या मर्दन द्वारा पसीना निकालनेसे जमुहाई रोकनेका उदावर्त दूर होगा.

तथा ७—उच्चस्वरसे रुदन करके आँशू वहाओ या सुखपूर्वक शयन कराओ या मनोहर कथा सुनाओ तो आँशू रोकनेका उदावर्त दूर हो.

तथा ८ कालीमिर्च, राईका नास दो या नकछिकनी सुँघाओ या सूर्याभिमुख होकर छिकाओ (छींक लिवाओ) या तेल मर्दन करके पसीना निकालो तो छींक रोकनेसे उत्पन्न हुआ उदावर्त दूर होगा.

तथा ९—तेल मर्दन करो या पसीना निकालो तो डकारका वेग रोकनेसे उत्पन्न हुआ उदावर्त दूर हो.

तथा १०—वमन या लंघन या विरेचन या बस्तिकर्म करो, तेल मसलो या नासिकाके सुरोंसे पानी पिलाओ तो वमन रोकनेका उदावर्त दूर होगा.

---

१ स्नेहपान, फलवर्ती और बस्तिक्रिया आगे वर्णन करेंगे.

तथा ११–१६ वर्षवाली सुन्दर रूपवती स्त्रीसे भोग कराओ या तैलमर्दन करो या मद्यादि मादक पदार्थ पिलाओ या मुर्गेका मांस, सांठी धानके चावल खिलाओ या बस्तिक्रिया करो तो कामदेव (वीर्य) के रोकनेसे जो उदावर्त उत्पन्न हुआ सो दूर होगा.

तथा १२–चिकना, उष्ण, रुचिकारक, हलका, हितकारी, भोजन कराओ या सुगंधित पुष्प धारण कराओ तो क्षुधा रोकनेका उदावर्त दूर होगा.

तथा १३–शीतक्रिया करो, फुहारोंके समीप बिठाओ, महीन वस्त्र पहिनाओ, जलक्रीडा कराओ या शीतल जलमें भीमसेनीकपूर घोलकर धीरे धीरे पिलाओ तो तृषाका उदावर्त दूर हो.

तथा १४–श्रम दूर होनेपर, विश्राम देनेसे, या मांसरसके साथ चावल खिलानेसे श्वास रोकनेका उदावर्त दूर होगा.

तथा १५–उष्ण दूधमें मिश्री डालकर सहता सहता पिलाओ मनोहर कथा सुनाओ या सुखसे सुलाओ तो निद्राका उदावर्त दूर होगा.

सूचना–यहाँतक हमने १५ पन्द्रह वेगोंके रोकनेसे जो उदावर्त उत्पन्न होते हैं तिनकी क्रिया चिकित्सा लिख चुके इसके आगे अब सब उदावर्त मात्रके दूर होनेके यत्न प्रकाश करते हैं.

उदावर्तयत्न १–हींग, मधु और सैंधेनोनको पीसकर बत्ती बनाओ और घीसे चुपडकर सहती सहती गुदामें रक्खो तो उदावर्तमात्र दूर हो इसे हिंग्वादिफलवर्ती कहते हैं.

तथा २–मैनफल, पिप्पली, कूट, वच, सरसों, गुड इन सबको दूधमें महीन पीसकर बत्ती बनाके मलद्वारपर रक्खो तो उदावर्त मात्र दूर हों इसे मदनफलादि फलवर्ती कहते हैं.

तथा ३–१ टकेभर शक्कर, ३ टकेभर निसोत और ५ टकेभर पिप्पली इनका २ टंक चूर्ण मधुके साथ सेवन कराओ तो दृढ मलस्राव होकर उतरै और उदावर्त दूर हो. इसे नाराच चूर्ण कहते हैं.

तथा ४–सोंठ, मिर्च, पिप्पली, पिपलामूल, निसोत, दात्यूणी, चित्रक इनका १ टंक चूर्ण गुडके साथ नित्य प्रातःकाल खिलाकर ऊपरसे जल

पिलाओ तो उदावर्त, पाण्डु, प्लीहा, गुल्म और शोथ ये सब रोग दूर होंगे इसे गुडाष्टक कहते हैं.

तथा ५–सूखी मूली, साटीकी जड, पिप्पली, पिपलामूल, चव्य, चित्रक, सोंठ, दशमूल, किरवारेकी गिरी इन सबका घृत बनाकर खिलाओ तो उदावर्त दूर हो इसे शुष्कमूलकादि घृत कहते हैं, ये सर्व यत्न भावप्रकाशमें हैं.

तथा ६–शुद्ध जमालगोटा, शुद्ध पारा, शुद्ध गन्धक, सेंका सुहागा, सोंठ, मिर्च, पीपल इन सबका १ मासे चूर्ण मिश्रीके साथ सेवन कराओ तो उदावर्त, अफरा, उदररोग और गुल्म ये सब दूर होंगे इसे अजयपाल रस कहते हैं यह वैद्यरहस्यमें लिखा है.

तथा ७–निसोत, या थूहरपत्र या तिल्ली आदि उष्ण वस्तु युक्तिपूर्वक सेवन कराओ तो उदावर्त दूर हो.

तथा ८–निसोत, दात्यूणी, तज, थूहर, किरवारा, शंखाहूली, कणगजकी जड, कवीला इन सबके २ टंक चूर्णका क्वाथ २ टके तेल और २ टके घीके साथ ७ दिनपर्यंत पिलाओ तो उदावर्त, उदररोग, अफरा, तृषा और गुल्म ये सब दूर होंगे.

अनाहरोगयत्न १–उदवार्त रोगके जो उपरोक्त यत्न लिखे हैं उन्ही यत्नोंसे अनाहरोग भी नाश होगा.

तथा २–इसके निम्नलिखित यत्न और भी जानो. २ भाग निसोत ४ भाग पिप्पली, ५ भाग बहेडेकी छाल और इन सबके समान गुड इन सबको महीन पीसकर १ टंक प्रमाणकी गोलिया बनालो जो एक गोली नित्य जलके साथ १५ दिनतक खिलाओ तो अनाहरोग दूर हो.

तथा ३–सोंठ, काली मिर्च पिप्पली, सैंधानोन, सरसो, धमासा और मैनफलका चूर्ण गुडके साथ मिलाकर अँगूठेके समान मोटी बत्ती बनाओ और घीमें भिगोकर गुदामें रक्खो तो अनाह (अफरा) उदावर्त, उदररोग, मूत्राशयके रोग और गुल्मरोग ये सब दूर होंगे ये सब यत्न भावप्रकाशमें लिखे हैं.

इति नूतनामृतसागरे चिकित्साखण्डे उदावर्त अनाहरोगयत्ननिरूपणं नाम द्वाविंशस्तरंगः ॥ २२ ॥

अथ गुल्मरोग।

गुल्मामयस्यास्य नूनं चात्र पञ्चविधस्य वै ॥
रामनेत्रमिते भङ्गे चिकित्सा लिख्यते मया ॥ २३ ॥

भाषार्थ-अब हम इस तेईसवें तरङ्गमें पाँच प्रकारके गुल्म रोगकी चिकित्सा लिखते हैं.

वातगुल्मरोगयत्न १-हर्रका, चूर्ण और एरंडीका तेल दूधमें डालकर पिलाओ तो वातगुल्म रोग दूर हो.

तथा २-सज्जी, कूट, जवाखार और केवडेके खारका चूर्ण एरंडीके तेलके साथ पिलाओ तो वातगुल्म दूर हो.

पित्तगुल्मरोगयत्न १--निसोतका चूर्ण या त्रिफलाका चूर्ण खिलाओ या कवीलाको मिश्री या मधुके साथ चटाओ तो पित्तगुल्म दूर हो.

कफगुल्मरोगयत्न १-वातगुल्महीके यत्न इसपरभी चलते हैं.

समस्तगुल्मरोगयत्न १-सेंकीहींग, पीपलामूल, धनियां, जीरा, वच, चव्य, चित्रक, पाठ, कचूर, अमलवेत, साँभरनोन, सोंचरनोन, सेंधानोन, जवाखार, सज्जी, अनारदाना, हर्रकी छाल, पोहकरमूल, डाँसरा, झाऊकी जड इन सबके चूर्णको अदरखके रसकी ७ पुट और विजौरेके रसकी ७ पुट, देकर २ चूर्ण नित्य खिलाओ तो गुल्म, अनाह अर्श, संग्रहणी, उदावर्त, उदररोग, ऊरुस्तंभ, उन्माद और शूल ये सर्व रोग दूर होंगे इसे हिंग्वादिचूर्ण कहते हैं.

तथा २-४ मासे सज्जी और ४ मासे गुड नित्य खिलाओ तो गुल्मरोग दूर हो.

तथा ३-पलासखार, थूहरखार, इमलीखार, अर्कखार, तिलखार, जवाखार, सज्जीखार और आधेझारेके खारका चूर्णकर १ या २ टंक उष्ण जलके साथ सेवन कराओ तो गुल्म और शूल दोनों दूर होंगे. इसका नाम क्षाराष्टक चूर्ण है.

तथा ४-साँभरनोन, सेंधानोन, कचनोन, जवाखार, सुहागा, सोंचर-नोन और सज्जीका चूर्ण ३ दिनतक थूहरके दूधमें भिगोकर धूपमें सुखालो इसे आकके पत्तोंमें लपेटके पत्तोंको घडेमें भरदो और इस घडेको गज पुटमें फूंककर स्वांग शीतल होनेपर घडेमेंसे भस्म निकाललो, तदनंतर

सोंठ, कालीमिर्च, पिप्पली, त्रिफला, अजवायन, जीरा और चित्रकका चूर्ण उक्त निर्मित भस्मके साथ खरल करके २ टंक चूर्ण नित्य उष्ण जल या गोमूत्रके साथ सेवन कराओ तो गुल्म, शूल, अजीर्ण, शोथ, उदररोग, मन्दाग्नि, उदावर्त, प्लीहा ये सर्व रोग दूर होंगे इसे वज्रक्षार चूर्ण कहते हैं.

तथा ५–सोंठ कालीमिर्च, पिप्पली, सैंधानोनका २ टंक चूर्ण ग्वारपाठेके गूदेमें लपेटदो और इसे घीके साथ नित्य खिलाओ तो गुल्म और प्लीहा दोनों दूर हों.

तथा ६--१ मनभर ग्वारपाठेका गूदा, २०० टके गुड, १०० टकेभर मधुमें २ सेर धावडेके फूल, २ टकेभर सोंठ, २ टकेभर मिर्चि, २ टकेभर पिप्पली, २ टकेभर तज, २ टकेभर पत्रज, २ टकेभर इलायची,२ टकेभर चव्य, २ टकेभर चित्रक, २ टकेभर कचूर, २ टकेभर नागकेशर, २ टकेभर झाऊकी जड,२ टकेभर अजमोद, २ टकेभर जीरा, २ टकेभर देवदारु, २ टकेभर बबूलकी छाल, २ टकेभर असगंध, २ टकेभर रास्ना, २ टकेभर बधायरा और २ टकेभर इन्द्रयवका चूर्ण मिलाकर एक जीव करदो, तदनंतर एक मृत्तिकाके चिकने पात्रमें इन सर्व पदार्थोंको धरके पात्रका मुँह बंद करदो इस पात्रको २१दिनपर्यंत पृथ्वीमें गाडकर पश्चात् बाहर निकालो जो इसमेंसे नित्य २टकेभर खिलाओ तो गुल्म, उदावर्त, उदररोग, विषूचिका, गृध्रसी, श्वास, कास, पाँडु और वातव्याधिके समस्त रोग नाश होवेंगे. इसे ग्वारपाठेका आसव कहते हैं. ये सर्व यत्न भाव प्रकाशमें लिखे हैं.

तथा ७–१टंक सोरा और १टंक अद्रख नित्य खिलाओ तो गुल्म दूर हो.

तथा ८–१ टंक सीपकी भस्म ४ मासे गुड़के साथ नित्य खिलाओ तो गुल्मरोग दूर हो. इसे सीपप्रयोग कहते हैं.

तथा ९--२ टंक लहसनके दूधमें खीर बनाकर खिलाओ तो गुल्म दूर हो.

तथा १०–एरंडकी जड, चित्रक, सोंठ वायविडंग, पीपलामूल, सेंकी हींग, सैंधानोन इन सबका क्वाथ पिलाओ तो गुल्म, अफरा और शूल ये सर्व रोग दूर होंगे.

तथा ११–१६ मासे अजवायन, ५ टंक जीरा, ५ टंक धनियाँ, ५ टंक कालीमिर्च, ५ टंक कुडेकी छाल, ५ टंक अजमोद, ५ टंक कालाजीरा,

५ टंक सेंकीहींग, ८ टंक जवाखार, ८ टंक सज्जी, ८ टंक पाँचोनोन, ८ टंक निसोत, १० टंक दात्यूणी, १० टंक कचूर, १० टंक पोहकरमूल, १० टंक वायविडंग, १० टंक अनारदाना, १० टंक हरंकी छाल, १० टंक चित्रक, १० टंक अमलवेत और १० टंक सोंठ इन सबके चूर्णको बिजौरेके रसकी १० पुट देके १ टंक प्रमाणकी गोलियाँ बनाओ जो नित्य १ गोली घृत या दुग्धके साथ खिलाओ तो पित्तगुल्म, मधुके साथ खिलाओ तो वातगुल्म और दशमूलके क्वाथके साथ खिलाओ तो त्रिदोष गुल्म, हृदयरोग, संग्रहणी, शूल, कृमि और अर्श ये सर्व रोग नाश होंगे. इसे कंकायनी गुटिका कहते हैं.

तथा १२–पूर्वोक्त लवणभास्कर चूर्ण खिलाओ तो गुल्म दूर होगा.

तथा १३–तिल्लीका क्वाथ पिलाओ तो गुल्म दूर होगा.

तथा १४–भारंगी, गुड, घृत, पिप्पली, तिल्ली, सोंठ और मिर्चका क्वाथ पिलाओ तो गुल्म दूर हो.

तथा १५–भारंगी, पिप्पली, पीपलामूल, देवदारु, कणगचकी जड और तिल्लीका क्वाथ पिलाओ तो गुल्म दूर हो. यह कणादि क्वाथ कहाता है.

तथा १६–शुद्ध मैनशिल, शुद्ध हरताल; शुद्ध रूपामक्खी; शुद्ध आँवलासार, गंधक, शुद्ध पारा और ताम्बेश्वर इन सबके चूर्णको पिप्पलीके क्वाथमें १ दिन खरल करके थूहरके दूधमें खरल करो जो इसमेंसे १ टंक मधु या गोमूत्रके साथ सेवन कराओ तो गुल्म और शूल दोनों दूर हों. इसे विद्याधर रस कहते हैं.

तथा १७–पारा. गंधक, हरताल, जमालगोटा, ताम्बेश्वर, सिंगीमुहरा, (छ हो शुद्ध करो) सेंका सुहागा, त्रिफला, सोंठ, कालीमिर्च, पिप्पली इन सबके चूर्णको भाँगरेके रसकी ३ पुट ३ दिनतक देकर पुनः ३ दिन पर्यंत खरल करो और १ रत्ती प्रमाणकी गोलियाँ बनाकर १ गोली अदरखके रसके साथ खिलाओ तो गुल्म रोग दूर होगा. इसे गुल्मकुठार रस कहते हैं ये सर्व यत्न वैद्यरहस्यमें लिखे हैं.

तथा १८–हाथकी शीर (फस्त) छुडवाओ तो गुल्मरोग दूर होगा.

तथा १९–सेंकीहींग, अनारदाने और विडनोनका चूर्ण बिजौरेके रसमें खरल करके २ टंक चूर्ण मधुके साथ पिलावो तो गुल्म दूर हो.

तथा २०–५ टंक अजवायन, १ टंक नोन और ५ टंक गुड़को कूटके छाँछके साथ नित्य पियो तो गुल्मरोग दूर होकर क्षुधा लगे और मलमूत्र भलीभाँति सरण होगा यह वृन्दमें लिखा है.

तथा २१–सेंकीहींग, अजवायन, जवाखार, सैंधानोन, सोंचरनोन, हर्रकी छाल इन सबका २ टंक चूर्ण मधुके साथ पिलाओ तो गुल्म और शूल दोनों दूर होंगे.

तथा २२–१ भाग सेंकीहींग, २ भाग सैंधानोन, ३ भाग पिप्पली, ४ भाग पीपलामूल, ५ भाग कंकोलमिर्च, ६ भाग अजवायन, ७ भाग हर्रकी छाल, ८ भाग अनारदाना, ९ भाग आमके जडकी छाल, १० भाग चित्रक, ११ भाग सोंठ, १२ भाग फिटकरी इन सबका २ टंक चूर्ण नित्य जलके साथ सेवन कराओ तो गुल्म, अरुचि, हृदयरोग, अनाह, अर्श और बादीके समस्त विकार दूर होंगे इसे हिंगुद्वादशक चूर्ण कहते हैं.

तथा २३–वच, हर्रकी छाल सेंकीहींग, सैंधानोन, अमलवेत, जवाखार और अजवायन इनका दो टंक चूर्ण उष्ण जलके साथ सेवन कराओ तो गुल्म और शूल ये दोनों दूर हों इसे वचादि चूर्ण कहते हैं.

तथा २४–२५ बडी हर्र १६ सेर पानीमें डालकर औटाओ. औटते समय इसमें १६ टकेभर दात्युणी और १६ टकेभर चित्रकको कुछ कुछ कूटके डालदो, मंद मंद आँचसे औटाते हुए चतुर्थांश (४ सेर) जल रहजानेपर छानकर इस ४ सेर जलमें वे २५ हर्र गुठली निकालके पीस डालो. इसीमें १६ टकेभर गुड डालकर पुनः औटाओ, औटते औटते आधा (२ सेर) जल रहजानेपर १ टकेभर पिप्पली, १ टकेभर सोंठ ४ टकेभर घी, ४ टकेभर मधु, १ टके तज, १ टकेभर पत्रज, १ टकेभर नागकेशर, १ टकेभर इलायची इन सबका चूर्ण भी इसी अर्द्धावशेष जलमें डालकर अवलेह बनाओ जो इसमेंसे १ टकेभर नित्य खिलाओ तो गुल्म, संग्रहणी, पांडु, शोथ, विषमज्वर, कुष्ठ, अर्श, अरुचि, प्लीहा, हृदयरोग ये सब दूर होकर, शुद्ध रेचन (दस्त साफ) होगा. इसे दन्ती-हरीतकी कहते हैं.

तथा २५–पूर्व निर्मित शंखद्राव सेवन कराओ तो गुल्म रोग दूर हो.

तथा २६–२०० बडे पक्के जँभीरीका रस घृतके चिकने पात्रमें भरके

इसीमें २ टकेभर सेंकीहींग, १ टकेभर सैंधानोन, १ टकेभर सोंठ, १टके भर, कालीमिर्च, ४ टकेभर सोंचरनोन, १ टकेभर अजवायन और ९ टके-भर सरसोंका चूर्ण डालदो, अनंतर उस पात्रका मुख बंदकर २१ दिनतक कचरे (कूडा) में गाड रक्खो फिर बाईसवें दिन निकालकर १ टकेभर नित्य खिलाओ तो गुल्म, प्लीहा, विद्रधि, अष्ठीला, वायु, कफ, अतिसार, पार्श्वशूल, हृदयरोग, नाभिशूल, बंधकुष्ठ, विषोन्माद, उदररोग, वातरोग, कफरोग ये सब दूर होंगे, इसे जंभीरीद्राव कहते हैं ये सर्व यत्न भावप्रकाशमें लिखे हैं.

तथा २७–नदीका खार, कूडेवृक्षका खार, आकका खार, सहँजनेका खार, कटियालीका खार, थूहरका खार, बेलका खार, पलाशका खार, बकायनका खार, आँधेझारे (ओंगा) का खार, कदंबका खार अडूसेका खार, सांभरनोन और सेंकीहींग इन सबका २ टंक चूर्ण उष्ण जलके साथ सेवन कराओ, तो गुल्म, शूल, उदररोग ये सब दूर हों. इसे नादेय क्षार कहते हैं यह योगशतकमें लिखा है.

तथा २८–सौंफ, कणगचकी जड, तज, दारुहल्दी और पिप्पलीके क्काथमें तिल, गुड, सोंठ, कालीमिर्च, सेंकी हींग और भारंगी डालकर पुनः औटाओ अनंतर छानकर पिलाओ तो रक्तगुल्म दूर हो तथा स्त्रीका मासिक रजोधर्म बंदहुआ हो तो पुनः प्राप्त होगा.

तथा २९–जवाखार, सोंठ, कालीमिर्च, पिप्पली इनका क्काथ पिलाओ तो रक्तगुल्म दूर हो.

तथा ३०–१ भाग शुद्ध पारा, १ भाग वंगभस्म, ४ भाग शुद्ध गन्धक, ४ भाग ताम्बेश्वर इन सबको आकके दूधमें २ दिन खरल करके गोला बनाओ और शरावसम्पुटमें करके गजपुटमें फूँक दो, स्वाँग शीतल होजानेपर निकालकर २ रत्ती रस घृतके साथ खिलाओ तो गुल्म, प्लीहा, उदररोग ये सब दूर हों, यह बंगेश्वररस कहाता है.

गुल्मरोगोद्भव योनिशूलयत्न–त्रिफला, निसोत, दात्यूणी और दशमूल १ टकेभर कूटकर चूर्ण बनाओ, इसमेंसे ६ टंक चूर्णका क्काथ एरंडीका तेल, घी और दूध इन सबको मिलाकर पिलाओ तो योनिका शूल दूर हो.

रोगीको वर्जित पदार्थ—सूखा शाक, दाल, मछलीका मांस और मीठे फल, ये चारों पदार्थ गुल्मरोगीको कदापि भक्षण मत कराओ यह सर्वसंग्रहमें लिखा है.

इति नूतनामृतसागरे चिकित्साखण्डे गुल्मरोगयत्ननिरूपणं नाम त्रयोविंशस्तरंगः ॥ २३ ॥

यकृत्प्लीहाहृद्रुजां च मया ह्यत्र यथाक्रमात् ॥
वेदनेत्रमिते भंगे लिख्यते रुक्प्रतिक्रिया ॥ २४ ॥

भाषार्थः—अब हम इस चौवीसवें तरंगमें, यकृत, प्लीहा और हृद्रोगकी चिकित्सा यथाक्रमसे लिखते हैं.

यकृत् और प्लीहारोगयत्न १—जवाखारको ऊँटनीके दूधमें मिलाकर पिलाओ तो यकृत् और प्लीहा दूर हो.

तथा २—सीपकी भस्म दहीके साथ खिलाओ तो प्लीहा दूर हो.

तथा ३—१ टंक पिप्पली नित्य दूधमें डालकर पिलाओ तो प्लीहा रोग निस्सन्देह दूर हो.

तथा ४—आकके पत्तोंकी भस्म और नोन मही (मट्ठा) में डालकर पिलाओ तो प्लीहा दूर हो.

तथा ५—सेंकीहींग, सोंठ, कालीमिर्च, पिप्पली, कूट, जवाखार और सैंधानोन इन सबका २ टंक चूर्ण नित्य बिजौरेनींबूके रसके साथ खिलाओ तो प्लीहा अवश्य दूर हो.

तथा ६—पलाशके खारमें भिगोई हुई २ टंक पिप्पली नित्य खिलाओ तो प्लीहा और गुल्म भी दूर हो.

तथा ७—चार मासे शंखकी भस्म जँभीरीके रसके साथ नित्य खिलाओ तो प्लीहा दूर हो.

तथा ८—बायें हाथकी शीर छुड़वाओ तो प्लीहा और दाहिने हाथकी शीर छुड़वाओ तो यकृत्‌रोग नाश होगा.

तथा ९—पक्के आमके रसमें मधु डालकर पिलाओ तो प्लीहा दूर हो.

तथा १० अजवायन, चित्रक, जवाखार, पिप्पली, पीपलामूल, दात्यूणी- इनका २ टंक चूर्ण मट्ठा या मदिराके साथ नित्य पिलाओ तो प्लीहा दूर होगा. ये सर्व यत्न भावप्रकाशमें लिखे ह.

तथा ११–५ टंक सैंधानोंन जलमें औटाकर नित्य पिलाओ तो प्लीहा दूर हो. यह वैद्यरहस्यमें लिखा है.

तथा १२–जवाखार, वायविडंग, पिप्पली, कणगचकी जड़, अमल- वेत और इन सबसे दूनी हर्रकी छाल इन सबका चूर्ण गुडमें मिलाकर साथ खिलाओ तो प्लीहारोग दूर हो.

तथा १३–पिप्पली, सोंठ, दात्यूणी और इन सबसे दूनी हर्रकी छाल इन सबका चूर्ण गुडके साथ खिलाओ तो प्लीहा दूर हो.

तथा १४–वायविडंग, चित्रक, इन्द्रायणकी जड इन सबके बराबर साँठीकी जड और वायविडंग, इनसे दूनी देवदारु, तिगुनी सोंठ और चौगुनी दात्यूणी लेकर चूर्ण बनाओ इनमेंसे १ टंक चूर्ण नित्य उष्ण जलके साथ खिलाओ तो प्लीहा दूर हो.

तथा १५–शुद्ध भिलावे, हर्रकी छाल और जीरेका चूर्ण कर इन सबके बराबर गुड़ मिलाओ जो ५ टंक नित्य खिलाओ तो प्लीहा दूर हो.

तथा १६–लहसन, पीपलामूल, हर्रकी छाल इनका २ टंक चूर्ण गो- मूत्रके साथ नित्य खिलाओ तो प्लीहा दूर हो. ये चक्रदत्तमें लिखे हैं.

तथा १७–रोहिसकी जड, हर्रकी छाल और सोंठका २ टंक चूर्ण गो- मूत्रके साथ नित्य खिलाओ तो उदररोग, प्रमेह, कफ, अर्श, कुष्ठ और प्लीहा, ये सब दूर होंगे. यह योगतरंगिणीमें लिखा है.

तथा १८–साँभरनोन, राई, हल्दी टकेटकेभरका चूर्ण १०० टकेभर छाँछके साथ चिकने घडेमें भरके १५ दिनतक गलने पश्चात् २ टंक नि- त्य २१ इक्कीस दिनतक पिलाओ तो प्लीहारोग दूर हो इसे तक्रसंधान कहतेहैं. यह भावप्रकाशमें लिखा है.

तथा १९–१०० टकेभर रोहिस और ४ सेर बेरीकी जडको कूटके १६ सेर पानीमें औटाओ, चौथाई (४सेर) रहजानेपर छानकर १ सेर गौका घृत

१ रोहिस एक प्रकारका सुगंधित घास है जिसका तेल वातरोगपर अत्युपयोगी होता है, इसे "रोहितक" भी कहते हैं ।

और ४ सेर बकरीके दूधमें मिलादो तदनंतर सोंठ, साँटीकी जड, तुम्बरू, वायविडंग, जवाखार, पोहकरमूल, झाऊकी जड और वच ये सब २½ ढाई टंक लेकर चूर्ण बनाओ और यह चूरा उपरोक्त द्रव पदार्थ (काथ-घी-दूध) में डालकर मंद मंद आंचसे औटाओ दूधआदि औषध जलकर घी-मात्र रहजानेपर छानकर दो या तीन टंक नित्य खिलाओ तो प्लीहा, प्लीहोदर, पांडु, कुक्षिशूल, पार्श्वशूल, अरुचि, बंधकुष्ठ, अतिसार, वमन, और विषमज्वर ये सर्व रोग दूर होंगे इसे महारोहितघृत कहते हैं. इसके भक्षक रोगीको पथ्यसे रखना चाहिये. यह चक्रदत्तमें लिखा है.

तथा २०–१०० टकेभर चित्रकके काथमें २०० टकेभर कांजीका पानी, ४०० टकेभर दहीका मट्ठा और १ सेरभर घी इन सबको एकत्र करके यह औपधि मिलावे पीपल, पीपलामूल, चव्य, चित्रक, सोंठ, जवाखार, तालीसपत्र, सैंधानोन, दोनों जीरे, दोनों हल्दी ये प्रत्येक टके टकेभर और १ टंक कालीमिर्च इन सबका चूर्ण भी इसीमें डालदो तदनंतर इन सर्व पदार्थोंका मंद मंद आँच देकर घृतमात्र रहजानेपर छानलो जो इस घृतका सेवन कराओ तो गुल्म, प्लीहा, उदररोग, अनाह, पांडु, अरुचि, शोथ विषमज्वर, मंदाग्नि और मूत्राशयके समस्त रोग दूर होके बलकी वृद्धि होगी। इसे चित्रकादि घृत कहते हैं. यह वृन्दमें लिखा है.

विशेषतः—यकृत् और प्लीहा दोनों रोगोपर एक समानही चिकित्सा है इसलिये उपरोक्त २० बीसों नियम यकृत् और प्लीहा दोनों रोगोंपर जानना चाहिये.

हृद्रोगयत्न १–बहेडेके वक्कलका २ टंक चूर्ण नित्य दूध, घृत या गुडके पानीके साथ पिलाओ तो हृद्रोग जीर्णज्वर और रक्तपित्त ये तीनों दूर होंगे.

तथा २-हर्रकी छाल, वच, रास्ना, पिप्पली, सोंठ, कचूर, पोहकरमूल इन सबका २ टंक चूर्ण, नित्य जलके साथ सेवन कराओ तो हृद्रोग दूर होगा.

तथा ३–हरिणके सींगका पुटपाक करके गौके घृतके साथ खिलाओ तो शूल और हृद्रोग दोनों दूर होंगे.

तथा ४–खिरैंटी, गँगेरनवृक्षकी छाल, और काहवृक्षकी छाल तथा

मुलहठी इन सबके २ टंक चूर्णका क्राथ नित्य पिलाओ तो हृद्रोग, वातरक्त, रक्तपित्त, ये सब दूर होंगे. ये सर्व यत्न भावप्रकाशमें लिखे हैं.

तथा ५–कूट और वायविडंगका २ टंक चूर्ण गोमूत्रके साथ खिलाओ तो हृदयकी कृमि झडके हृद्रोग दूर होगा.

तथा ६–गंगेरनकी जड, काहूवृक्षकी छाल और पोहकरमूलका २ टंक चूर्ण नित्य दूध या मधुके साथ पिलाओ तो हृद्रोग, श्वास, कास, छर्दि और हिचकी ये सर्व दूर होंगे.

तथा ७ हर्रकी छाल, वच, रास्ना पिप्पली, सोंठ, कचूर, पोहकरमूल इन सबका चूर्ण नित्य प्रमाणानुसार विचारपूर्वक सेवन कराओ तो हृद्रोग दूर होगा. इसे हरीतक्यादि चूर्ण कहते हैं.

तथा ८–दशमूलके क्राथमें एरंडीका तेल और साँभरनोन डालकर पिलाओ तो हृद्रोग दूर होगा.

तथा ९–सेंकीहींग, वच, वायविडंग, सोंठ, पिप्पली, हर्रकीछाल, चित्रक, जवाखार, सोंचरनोन और पोहकरमूलका २ टंक चूर्ण नित्य जलके साथ सेवन कराओ तो हृद्रोग दूर हो. यह योगरत्नावलीमें लिखा है.

तथा १०–२ टंक पोहकरमूलका चूर्ण मधुके साथ चटाओ तो हृद्रोग श्वास, कास, राजरोग और हिक्का ये सब दूर होंगे.

तथा ११–सेंकी हींग, सोंठ, चित्रक, कूट, जवाखार, हर्रकी छाल, वच वायविडंग, सोंचरनोन, शुद्धपारा और पोहकरमूल इन सबका चूर्ण नित्य जलके साथ सेवन कराओ तो हृद्रोग, अजीर्ण और विषूचिका ये सर्व रोग दूर होंगे. यह रसप्रदीपग्रंथमें लिखा है.

तथा १२–पोहकरमूल, सोंठ, कचूर, हर्रकी छाल, जवाखार, इनके क्राथमें घी डालकर पिलाओ तो हृद्रोग, दूर होगा. यह वैद्यरहस्यमें लिखाहै.

इति नूतनामृतसागरे चिकित्साखण्डे यकृत्प्लीहाहृद्रोगयत्ननिरुपणं नाम चतुर्विंशतितमस्तरंगः ॥ २४ ॥

मूत्रकृच्छ्र-मूत्राघात ।

चिकित्सा मूत्रकृच्छ्रस्य मूत्राघातस्य वै क्रमात् ॥
बाणनेत्रमिते चात्र तरंगे लिख्यते मया ॥ २५ ॥

भाषार्थः—अब हम इसके आगे मूत्रकृच्छ्र और मूत्राघात रोगोंकी चिकित्सा इस पचीसवें तरंगमें यथाक्रमसे लिखते हैं.

मूत्रकृच्छ्ररोगयत्न १—बडे गोखरू, किरवारेकी गिरी, डाभ (दर्भ[1]) की जड, कासकी जड, जवासा, आँवला, पथरचटा (पाषाणभेद) और हरेंकी छाल इन सबके २ टंक चूर्णका क्वाथ मधुके साथ पिलाओ तो मूत्रकृच्छ्र और पथरीकाअसाध्य रोग भी दूर होगा. इसे गोक्षुरादि क्वाथ कहते हैं.

तथा २—इलायची, पाषाणभेद, शिलाजीत, पिप्पली, तेबरसी (खीरा ककडी) के बीज, केशर, सैंधानोन इन सबका २ टंक चूर्ण चावलके जलके साथ सेवन कराओ तो मूत्रकृच्छ्र दूर हो.

तथा ३—आँवलेका रस पुराने गुड़के पानीके साथ पिलाओ तो मूत्रकृच्छ्र दूर हो.

तथा ४—दूधमें पुराना गुड़ या मिश्री डालकर पेटभर पिलाओ तो मूत्रकृच्छ्र दूर होगा.

तथा ५—आँवले या साँठीके रसमें मधु मिलाकर पिलाओ तो प्रहारज मूत्रकृच्छ्र दूर होगा.

तथा ६—गोखरूके क्वाथमें जवाखार डालकर पिलाओ तो मलावरोधज मूत्रकृच्छ्र दूर हो.

तथा ७—५ टंक त्रिफला और ५ टंक बेरकी जड़की छालको रात्रिभर पानीमें भिगोकर प्रातःकाल दोनोंको उसी पानीमें ठंढाईके समान पीस छानकर सैंधानोनके साथ पिलाओ तो मलरोकनेका मूत्रकृच्छ्र दूर होगा.

तथा ८—५ मासे जवाखार और ५ मासे मिश्रीका चूर्ण जलके साथ पिलाओ तो मलरोकनेका उदावर्त दूर होगा.

तथा ९—५ टंक दाख, १० टंक मिश्री और १० टंक दहीका मट्टा तीनोंको मिलाकर पिलाओ तो मूत्रकृच्छ्र दूर हो.

तथा १०—गोखरूके पञ्चाङ्गका क्वाथ मिश्री और मधुके साथ पिलाओ तो मूत्रकृच्छ्र दूर हो. ये सब यत्न भावप्रकाशमें लिखे हैं,

तथा ११—गुर्च, सोंठ, आँवला, असगंध और गोखरूके २ टंक चूर्णका क्वाथ नित्य पिलाओ तो मूत्रकृच्छ्र दूर हो.

---

१ एक प्रकारका घास होताहै ३ । ४ फूटतक ऊँचा बढ़ता है ।

तथा १२–गौके दूधमें पक्के निम्बूका रस डालकर मनमाना पिलाओ तो मूत्रकृच्छ, प्रमेह, दाह और स्त्रीकी योनिदोषसे उत्पन्नहुए रोग नाश होंगे.

तथा १३–हरेकी छाल, किरवारेका गूदा, गोखरू, पाषाणभेद, धमासा और अडूसाके ५ टंक चूर्णका क्वाथ मधुके साथ नित्य पिलाओ तो दाह संयुक्त मूत्रकृच्छ्र और बंधकुष्ठ दूर हों. यह हरीतक्यादि क्वाथ है.

तथा १४–डाभ, कास, दूब, सरकना (मूंज) और साँठा इन पाँचोंकी जडका क्वाथ पिलाओ तो रक्त मूत्रकृच्छ्रकी वेदना दूर होगी.

तथा १५–पके कुम्हड़ेके रसमें मिश्री डालकर पिलाओ तो मूत्रकृच्छ्र दूर हो. इसे कूष्मांडरस कहते हैं.

तथा १६–कटियालीका रस मधुके साथ पिलाओ तो मूत्रकृच्छ्र दूर हो.

तथा १७– २ टके गोखरूका चूरा अठगुणे (१६ टकेभर) पानीमें औटाके आधा रहजानेपर छानलो इसी पानीमें ७ टकेभर गूगल डालकर पुनः औटाओ, कुछ औटनेपर इसीमें सोंठ, कालीमिर्च, नागरमोथा, हरेकी, छाल, बहेड़ेकी छाल और आँवला यह एक एक टकेभरका महीन चूर्ण डाल दो ये सब पदार्थ परस्पर मिलाकर दृढ़ होजानेपर उतारके घृतके चिकने पात्रमें रखदो जो इसमेंसे नित्य५ मासे जलके साथ खिलाओ तो मूत्रकृच्छ्र मूत्राघात, प्रमेह, प्रदर, वातरक्त और शुक्रदोष ये सब रोग दूर होंगे. इसे गोक्षुरादि गूगल कहते हैं.

तथा १८– १ टकेभर जीरा और १ टकेभर गुड़ नित्य खिलाओ तो मूत्रकृच्छ्र दूर होगा.

तथा १९-२ टंक जवाखार गौकी छाँछके साथ पिलाओ तो मूत्रकृच्छ्र और पथरी दोनों दूर हों. इसे जवाखारतक्रयोग कहते हैं.

तथा २०–एक भाग शुद्ध पारा और ४ भाग शुद्ध गंधककी कजली बड़ी कौड़ीमें भरके पानीमें पिसेहुए सुहागेसे उसका मुँह बंद करदो और मिट्टीकी कुल्हियामें धरके गजपुटमें फूँकदो, स्वांग शीतल होजानेपर पीसके इसमेंसे ४ मासे भस्म २१ इक्कीस कालीमिर्चके चूर्णमें मिलाकर घृतके साथ चटाओ तो मूत्रकृच्छ्र दूर हो. यह लघुलोकेश्वर रस कहाता है. ये सब यत्न वैद्यरहस्यमें लिखे हैं.

तथा २१– निरूहबस्ति या उत्तरबस्तिकी क्रिया करो तो मूत्रकृच्छ्र निस्सन्देह दूर हो.

तथा २२--शतावरी, कासकी जड़, डाभकी जड़, गोखरू, विदारीकंद, सालरकी जड़ और किसोरिया तालाबके कीचड़में गोलर होते हैं हिंदुस्थानमें कसेरू भी कहते हैं इनका क्वाथ मधुके साथ पिलाओ तो मूत्रकृच्छ्र दूर हो. यह चक्रदत्तमें लिखा है.

तथा २३--तेबरसीके बीज, महुआ, दारुहल्दी इनका क्वाथ पिलाओ तो मूत्रकृच्छ्र दूर हो.

तथा २४--केलेके रसमें गोमूत्र मिलाकर पिलाओ तो कफकामूत्रकृच्छ्र अवश्य दूर हो.

तथा२५--इलायचीका महीन चूर्ण जलके साथ पिलाओ तो कफमू०दूरहो.

तथा २६--मूँगका १ टंक चूर्ण तण्डुलके जलके साथ पिलाओ तो कफमूत्रकृच्छ्र दूर हो.

तथा २७--गोखरू और सोंठका क्वाथ पिलाओ तो कफमूत्रकृच्छ्र दूर हो. यह वृन्दमें लिखा है.

तथा २८--बड़ी कटियाली, पाठा, मुलहठी, महुआ और इन्द्रयवका क्वाथ पिलाओ तो सन्निपातका मूत्रकृच्छ्र दूर हो.

तथा २९--शिलाजीतको मधुके साथ चटाओ तो शुक्रमूत्रकृच्छ्र दूर हो. यह चक्रदत्तमें लिखा है.

तथा ३०--उत्तम स्त्रीसे मैथुन कराओ तो शुक्रमूत्रकृच्छ्र दूर होगा.

तथा ३१--खिरेंटीकी जड़का क्वाथ पिलाओ तो सर्व मूत्रकृच्छ्र दूर हों.

तथा ३२--१०० सौ टकेभर गोखरूका पंचाग कूटकर अठगुने (८००-टकेभर) पानीमें औटाओ, चतुर्थांश रहजानेपर छानकर इसीमें ५० टकेभर मिश्रीकी (गाढ़ी चाटनेयोग्य) चासनी बनाओ, तदनंतर सोंठ, पिप्पली, इलायची, जवाखार, केशर, कहुवेके वृक्षकी छाल, तेबरसी ये सब २ दो टके भर और ८ टकेभर वंशलोचन इन सबका महीन चूर्ण उक्त चासनीमें डालकर नित्य १ टकेभर खिलाओ तो मूत्रकृच्छ्र, दाह, पथरी बंधकुष्ठ, रक्तमूत्र और मधुप्रमेह ये सर्व रोग दूर होंगे. यह गोक्षुरावलेह काहाता है. ये सर्व यत्न सर्वसंग्रहमें लिखे हैं.

मूत्राघातरोगयत्न १-नरसल (देवनल) डाभ, कास, सांठी और खिरेंटी इन सबकी जड़ोका क्वाथ बनाकर शीतल होनेपर मधुके साथ पिलाओ तो मूत्राघात दूर हो.

तथा २–जलमें पिसा हुआ कपूर अत्यन्त महीन वस्त्रपर लेप करके उस वस्त्रकी बत्ती बनाओ जो यह बत्ती इन्द्रीके छिद्रमें धरो तो मूत्राघात दूर हो.

तथा ३–धनियां और गोखुरूके क्वाथमें घृत पकाके खिलाओ तो मूत्रकृच्छ्र, मूत्राघात और शुक्रदोष तीनों दोप दूर होंगे. यह धान्यगोक्षुरघृत है.

तथा ४–पाँच टंक तेबरसीके बीज और ५ टंक धनियां रात्रिको जलमें भिगोकर प्रातःकाल ठंढाईके समान उसी जलमें पीस डालो और छानकर १ टंक सैंधानोन डालके पिलाओ तो मूत्राघात दूर हो.

तथा ५–दो टंक पाटल (गुलाव) वृक्षका खार और १ टंक सोंचरनोन मदिराके साथ पिलाओ तो मूत्राघात दूर हो.

तथा ६–खट्टे अनारका रस और इलायची मदिराके साथ पिलाओ तो मूत्राघात दूर हो.

तथा ७–शिलाजीत सेवन कराओ तो मूत्राघात दूर हो.

तथा ८–पाँच टंक केवाँचके वीज, १ टंक पिप्पली, २ टंक तालमखाना, १० टंक मिश्री और १० टंक दाख इन सबका चूर्ण मधु और घृतके साथ उष्ण दूधमें डालकर पिलाओ तो शुक्रावरोधज मूत्राघात दूर हो.

तथा ९–आधासेर चित्रक, ५ टंक गोरीसर, १० टंक खिरेंटीकी जड़, आधपाव दाख, ५ टंक इन्द्रायणकी जड़, ५ टंक पिप्पली, १० टंक त्रिफला, १० टंक मुरेठी और १०० टंक बडे आँवले इन सबका चूर्ण १६ सेर पानीके साथ औटाकर ४ सेर (चतुर्थांश) रह जानेपर छानलो, इस क्वाथमें ४ सेर घी डालकर पकाओ रस जलकर घृतमात्र रहजानेपर छानकर आधपाव वंशलोचनका चूर्ण डालदो अब यह चित्रकादिघृत बनगया जो नित्य आधपाव सेवन कराओ तो मूत्राघात सर्वप्रकारके वीर्यदोष, योनिदोप, प्रदर और मूत्रकृच्छ्र इन सबका नाश और स्त्रीको गर्भोत्पादक होगा. यह चरकमें लिखा है.

तथा १०–त्रिफलाके क्वाथमें दूध और गुड़ डालकर पिलाओ तो मूत्राघात दूर हो.

तथा ११–पाटल, अरलु, नीमकी छाल, हलदी, गोखरू, पलाशके वक्कल इन सबका क्वाथ गुड़के साथ पिलाओ तो मूत्राघात दूर हो.

---

१ सर्वसंग्रहमें लिखा है कि, इसके सेवन करनेसे वाँझ स्त्रीको भी गर्भप्राप्ति होकर प्रसवोत्पत्ति होगी।

तथा १२—अत्यंत रूपवती स्त्रीसे मैथुन करो तो मूत्राघात दूर हो. ये सब आत्रेयसंहितामें लिखे हैं.

मूत्रावरोधयत्न १३—विनौला (सरकी, कांकडा या कपासका बीज) की बीजी, त्रिफला और सैंधानोनका ५ टंक चूर्ण उष्ण जलके साथ खिलाओ तो मूत्रस्वच्छ उतरेगा.

तथा १४—तिल्ली और बिनौला इन दोनोंका क्षार मधु और दहीके साथ खिलाओ तो मूत्ररुकना बंद होगा.

तथा १५—कमलकी जड़ और तिल्लीको गौके मूत्रमें पीसकर पिलाओ तो मूत्रका रुकाव बंद होकर मूत्र उतरे.

अत्यंत उष्णमूत्रयत्न १६—चमेलीकी जडको बकरीके दूधमें पीसकर पिलाओ तो मूत्रकी विशेष उष्णता दूर हो.

सूचना १-इधर जो यत्न मूत्रकृच्छ्र और पथरीके लिखे हैं वे सर्व मूत्राघातकोभी उपयोगी हो सक्ते हैं. यह भावप्रकाशमें लिखा है.

तथा २—जो यत्न मूत्रकृच्छ्र और मूत्राघात रोगपर बताये गये हैं वे सव मूत्रावरोध (पेशाब बंद हो जाने) पर चल सक्ते हैं.

इति नूतनामृतसागरे चिकित्साखण्डे मूत्रकृच्छ्रमूत्राघातरोगयत्ननिरूपणं नाम पंचविंशतितमस्तरंगः ॥ २५ ॥

अथ अश्मरी-प्रमेह-पिडिका।

अश्मरीमेहपिडिकारोगाणां हि यथाक्रमात् ॥
रसनेत्रमिते भङ्गे लिख्यते रुक्प्रतिक्रिया ॥ २६ ॥

भाषार्थः—अब हम इस २६ छब्बीसवें तरंगमें अश्मरी अर्थात् पथरी प्रमेह और पिड़िकारोगकी चिकित्सा यथाक्रमसे लिखते हैं.

अश्मरी (पथरी) रोगयत्न १—सोंठ अरणी, पाषाणभेद, कूट, गोखरू, एरंडिकी छाल और किरमालेका गूदा इनके चूर्णका पाँच टंक क्वाथ, सेंकीहींग जवाखार और सैंधानोन डालकर पिलाओ तो पथरी, मूत्रकृच्छ्र, अर्श, उपदंश (गर्मी) और कोठेकी वायु ये सर्व रोग दूर होंगे. यह शुण्ठ्यादिक्काथ दीपन और पाचन है.

तथा २–इलायची, पिप्पली, मुलेठी, पाषाणभेद, पित्तपापड़ा, अडूसा, गोखरू और अरंडकी जड़का क्वाथ शिलाजीतके साथ पिलाओ तो पथरी और मूत्रकृच्छ्र दूर हो. यह एलादि क्वाथ है.

तथा ३–पेठेके रसमें हींग और जवाखार डालकर पिलाओ तो पथरी और पेडूकी पीड़ा दूर हो.

तथा ४–बरण्याकी छाल, पाषाणभेद, सोंठ और गोखरूका क्वाथ जवाखारके साथ पिलाओ तो पथरीरोग नाश होवे.

तथा ५– टंक गोखरूका चूर्ण मधु और भेड़ीके दूधके साथ पिलाओ तो पथरीरोग नाश हो.

तथा ६--बरण्याकी जड़के क्वाथमें गुड़ डालकर पिलाओ तो पथरी- और मूत्राशयकी पीड़ा भी नाश हो.

तथा ७–अदरखका रस, जवाखार हरँकी छाल और मलयागिरि चंदनका क्वाथ पिलाओ तो पथरीरोग दूर हो.

तथा ८–१०० टकेभर बरण्याके बक्कल चौगुने (चार सेर) पानीमें औटाकर चतुर्थांश (१ सेर) रह जानेपर छानलो. इसमें १०० टकेभर गुड़की चासनी बनाकर सोंठ, पेठेके बीज, बहेड़ेकी बीजी, वथुएके बीज, सहिंजनेके बीज, इलायची, हरँकी छाल और वायविड़ंग (ये सब टके टकेभर) का चूर्ण डाल दो तदनंतर एकजीव करके नित्य २ टकेभर खिलाओ तो पथरी दूर हो. इसे बरुणगुड़ कहते हैं.

तथा ९–मँजीठ, तेवरसीके बीज, जीरा, सौंफ, आँवला, बेरकी बीजी, शुद्ध आँवलासार, गन्धक और शुद्ध मैनासिल इन सबका १ टंक चूर्ण नित्य मधुके साथ खिलाओ तो पथरी निश्चय दूर हो.

तथा १०-- २ टकेभर कुलथीके क्वाथमें २ मासे सैंधानोन और २ मासे शरपंखे (मारवाड़में धोला धमासा कहते हैं) का रस डालकर पिलाओ तो पथरी दूर हो. ये सब यत्न भावप्रकाशमें लिखे हैं.

तथा ११-- ५ टंक हल्दीका चूर्ण और १० टकेभर गुड़ इनमेंसे नित्य १ मासे लेके काँजीके साथ पिलाओ तो पथरी दूर हो.

१ बरण्या किम्वा वरुणवृक्ष मारवाड़ प्रान्तमें बहुत उत्पन्न होता है उस देशमें यह प्रसिद्ध है ।

तथा १२–सोंचरनोन, मधु दूध और तिल्लीका खार मदिरामें मिलाकर ३ दिनपर्यंत पिलाओ तो पथरी दूर हो. यह चक्रदत्तमें लिखा है.

तथा १३–२ टंक तिल्लीका खार और ५ टंक मधु दूधमें मिलाकर १५ दिन पर्यंत पिलाओ तो पथरी झरकर निश्चय गिर जावेगी.

तथा १४– २ टंक गोलककड़ीकी जड़ रात्रिको पानीमें भिगोकर प्रातःकाल उसी पानीमें (ठंढाई समान) पीसके ७ दिनपर्यंत पिलाओ तो पथरी इन्द्रियद्वारसे झरकर गिरजावेगी. यह राजमार्तंडमें लिखा है.

तथा १५--कुलथी, सैंधानोन, वायविड़ंग, सार, (सार समझके डालना) मिश्री, सांठेका रस, पेठेका रस, जवाखार, तिल्लीका खार, पेठेके बीज और गोखरूके क्काथमें गौका घी पकाकर नित्य १ टकेभर पिलाओ तो पथरी मूत्रकृच्छ्र मूत्राघात और शुक्रबंध सब ये रोग दूर होंगे. इसे कुलथ्यादिघृत कहते हैं. यह वृन्दमें लिखा है.

पथरीरोगपर पथ्य–मूंग, जौ, गेहूं, चावल, दूध, घी, सैंधानोन और ठंटस (टींडसी, जिस्का शाक मारवाड़में बहुत होता है) ये वस्तुयें पथरी रोगपर पथ्य हैं.

वातजमधुप्रमेहयत्न–१ बड़की जड़, अरलूकी जड़, चिरौंजी (अचार) वृक्ष, आँवलेकी जड़, पीपलवृक्षकी जड़, किरमालेकी जड़ (इन सब जडोंका बक्कल) मुलहठी, लोध, नीमकी छाल, पटोल, बरणेकी छाल, दात्यूणी, मेढासिंगी, चित्रक, कणगचकी जड़, इन्द्रयव, त्रिफला, शुद्ध भिलावाँ, सोंठ, कालीमिर्च, तज, पत्रज और इलायची इन सबका महीन चूर्ण मधुके साथ चटाओ तो मधुप्रमेह दूर हो. इसे न्यग्रोधादिचूर्ण कहते हैं.

तथा २--उपरोक्त औषधोंका क्काथ पिलानेसे तथा इन्हीं औषधोंका तेल बनाकर शरीरमें मर्दन करनेसे किम्बा इन्हींका घृत बनाकर खिलानेसे भी वातजमधुप्रमेह दूर होगा.

तथा ३--शुद्ध सोनामक्खी, पाषाणभेद, शुद्ध शिलाजीत, चंदन, कचूर, पिप्पली और वंशलोचन इनका २ टंक चूर्ण १० टंक मधुके साथ दूधमें

---

१ मधुप्रमेह सबके पीछे है परन्तु यह अतिक्लिष्ट तथा असाध्य है इसलिये हमने पूर्वहीमें दिया है।

मिलाकर नित्य पिलाओ तो वातजमधुप्रमेह और मूत्रावरोध दूर हों. ये यत्न आत्रेयसंहितामें लिखे हैं.

तथा ४–शुद्धपारा, शुद्धगंधक, मिश्री और कहुवाकी छालके महीन चूर्णको सालईकी जड़के रसकी ३ पुट देके १ मासे प्रमाणकी गोलियाँ बनाओ जो इसकी १ गोली नित्य खिलाओ तो वातज मधुप्रमेह दूर हो. यह वैद्यरहस्यमें लिखा है.

पित्तज क्षारप्रमेहयत्न १–धव, कहुवा, अरलू, (इनके वक्कल) कसेरू या केलेके वृक्षके भीतरकी श्वेत छाल, कमलकी जड़ और दाख इनका क्काथ पिलाओ तो पित्तजक्षारप्रमेह दूर हो.

तथा २–सुन्दर स्त्रीसे मैथुन कराओ तो पित्तजक्षारप्रमेह दूर हो,

तथा रक्तप्रमेहयत्न ३–बासी (रात्रिका भराहुआ) पानीमें दाख भिगोके मसल डालो और मुलहठी और श्वेत चंदन, डालकर पिलाओ तो पित्तजरक्तप्रमेह दूर हो.

तथा ४–खश, लोध, कहुवाकी छाल और रक्तचंदनके ५ टंक चूर्णका क्काथ मधुके साथ पिलाओ तो पित्तजप्रमेहमात्र दूर हों. यहभावप्रकाशमें लिखा है.

तथा कमलनाल, कहुवेकी जड इन्द्रयव, धवके जडकी छाल, इमलीकी छाल, आँवले, निंबोलीके क्काथमें (या हिममें) मिश्री डालकर पिलाओ तो पित्तजप्रमेहमात्र दूर हो.

कफजप्रमेहयत्न ।

कफजउदकप्रमेहयत्न १–धवके वक्कल, कहुवेके वक्कल, रक्तचन्दन और सालरके वक्कलका क्काथ पिलाओ तो कफजप्रमेह दूर हो.

तथा इक्षुप्रमेहयत्न २–कूट, पित्तपापड़ा, कुटकी, मिश्री इनका क्काथ पिलाओ तो कफज इक्षुप्रमेह दूर हो.

तथा ३–अरुण्याकी जड़, पाटल, धमासा अरलू और पलाशका क्काथ पिलाओ तो इक्षुप्रमेह दूर हो.

तथा शुक्रप्रमेहयत्न ४–दूर्वा, मूर्वा, भारंगीकी जड, काँसकी जड़, दात्यूणी, मँजीठ, सालरके वक्कल इनका क्काथ पिलाओ तो कफज शुक्रप्रमेह तथा पित्तजरुधिरप्रमेह दोनों दूर हों. ये सब आत्रेयमें लिखे हैं.

तथा लालाप्रमेहयत्न ५–कपासकी बीजीको भैंसकी छाँछमें ७ दिन खरल करके नित्य २ मासे खिलाओ तो कफजलालाप्रमेह दूर हो. यह रसरत्नाकरमें लिखा है.

तथा प्रमेहमात्रयत्न ६–नागरमोथा, हर्रकी छाल, लोध, कायफल, इनके ५ टंक चूर्णका क्काथ मधुके साथ पिलाओ तो कफज दशों प्रमेहमात्र दूर हों. यह भावप्रकाशमें लिखा है.

तथा ७–वायविडंग, रार, कायफल, लोध, विजयसार (औषधविशेष) कदम्बके बक्कल और कहुवेके वृक्षकी छालका क्काथ नित्य पिलाओ तो कफज प्रमेहमात्र दूर हों.

आत्रेयमतनिर्मित प्रमेहयत्न ।

तथा तक्रप्रमेहयत्न १–लोध, कहुवेके बक्कल, खैर, नीमके पत्ते, आँवले, रक्तचंदन इनके क्काथमें गुड़ डालके पिलाओ तो तक्रप्रमेह और पिडिकाप्रमेह दोनों दूर हों.

तथा घृतप्रमेहयत्न २–त्रिफला, किरवारेका गूदा, बेरकी जड़, मूरवा, मुँगनेके पत्ते, नीमके पत्ते, दाख और केलेके वृक्षके भीतरकी श्वेत छाल इन सबका क्काथ पिलाओ तो घृतप्रमेह दूर हो.

तथा ३–गुर्च, चित्रक, पाठा कूडे (इन्द्रवृक्ष) की छाल; सेंकीहींग, और कूट इनका २ टंक चूर्ण जलके साथ सेवन कराओ तो घृतप्रमेह दूर हो. यह सर्वसंग्रहमें लिखा है.

तथा अतिमूत्रप्रमेहयत्न ४–मूर्वा, पारा, वंग (वंगेश्वर) और अभ्रकको १ दिनभर मधुके साथ खरल करके नित्य १ मासे मधुके साथ सेवन कराओ तो अति (बहु) मूत्रप्रमेह दूर हो. इसे तालकेश्वर रस कहते हैं इसके ऊपर गूलरके फलोंका २ टंक चूर्ण अवश्य लेना चाहिये.

तथा ५– २ मासे पंचवक्त्ररस नित्य सेवन कराओ तो बहुमूत्रप्रमेह दूर हो यह रसरत्नाकरमें लिखा है.

सर्व प्रमेहमात्रयत्न ।

तथा १–नागरमोथा, त्रिफला, हल्दी, देवदारु, मूर्वा; इंद्रयव और लोध इनका क्काथ पिलाओ तो प्रमेह और मूत्रग्रह दूर हो.

तथा २–काकलहरी (बूटी विशेष) हरकी छाल, हल्दी, कटूके बक्कल इन सबके चूर्णमें समान मिश्री मिलाकर ५ टंक नित्य मधुके साथ चटाओ तो समस्त प्रमेह दूर हों. यह आत्रेयमें लिखा है.

तथा ३–कचूर, वच, नागरमोथा, चिरायता, देवदारु, हल्दी, अतीस, दारुहल्दी, पीपलामूल, चित्रक, धनियां, त्रिफला, चव्य, गजपिप्पली, जवाखार, सज्जी, सैंधानोन, सोंचरनोन, (ये सब एक एक टंक) ५टंक सार, २ टंक मिश्री, ४ टंक शुद्ध शिलाजीत और४ टकेभर शुद्ध गूगल इन सबको न्यारे न्यारे पीस कपड छानकर एकत्र करो. १ टके शुद्ध गन्धक, १ टके शुद्ध पारेकी कजली और १ टकेभर अभ्रकमें उपरोक्त चूर्ण मिश्रित करके इसमेंसे ४ मासे नित्य मधुके साथ चटाओ तो सर्व प्रमेहमात्र, अर्श, क्षयी, वीर्यदोष, नेत्ररोग, दंतरोग, पांडुरोग, कंडूरोग, उदररोग, मूत्रकृच्छ्र, मूत्राघात, प्लीहा, खाँसी और कुष्ट ये सब दूर हों. इसे चन्द्रप्रभागुटिका कहते हैं.

तथा ४–त्रिफला, जीरा, धनियां, कौंचकेबीज (ये चार चार टकेभर), छोटी इलायची, दालचीनी, लौंग, नागकेशर और बावची (तुकमारिया) के बीज (ये सब दो दो टकेभर) इन सबके चूर्णमें मिश्री और घी डालकर १ टके प्रमाणकी गोलियां बनालो जो १ गोली नित्य प्रभात खिलाओ तो प्रमेहमात्र दूर हो. इसे प्रमेहहारी चूर्ण कहते है.

तथा ५– १ टकेभर लोध, मधु या खैरटीके क्राथके साथ सेवन कराओ तो प्रमेहमात्र दूर हो.

तथा ६–गुर्चकासत, त्रिफला और लोहसार इन तीनोंको मिलाकर मधु या मिश्रीके साथ १ टंक सेवन कराओ तो प्रमेहमात्र दूर हों.

तथा ७–मिश्री, सिंघाड़े और श्वेत चीनीका २ टंक महीन चूर्ण जलके साथ सेवन कराओ तो बहुत प्राचीन प्रमेह भी दूर हों.

तथा ८– १ टकेभर गूलरके पक्के फल सैंधानोनके साथ सेवन कराओ तो असाध्य प्रमेह भी दूर हों.

तथा ९–१ रत्ती बंगेश्वर रस मधुके साथ खिलाकर ऊपरसे मधुके साथ गूलरके पक्के फलोंका चूर्ण चटाओ तो असाध्य प्रमेहमात्र भी दूर होगा.

बंगेश्वर रस निर्माण विधि–पावभर उत्तम रांगा (कथील)को आधपाव पारेके साथ गलाकर थालीमें डालके (चौंडा पत्तर करके) छोटे छोटे

टुकड़े करलो, पाँच पाँच सेर गोबरकी[1]गोबरीं (उपली,कंडे, छेना,)बनाकर सुखालो. १ सेर टेसू (पलाश के)फूल और १ सेर मेहँदीके पत्तोंका सुखाकर चूर्ण करलो,अब गोबरी नीचे रखकर उसपर फूल, पत्तोंकाआधा (सेरभर) चूर्ण बिछादो, उसपर वे रांगेके टुकड़े जमाकर ऊपरसे आधा(शेष) चूर्ण डालदो और ऊपरसे दूसरी गोबरी दृढ़ता पूर्वक जमाकर निवांत (जहाँ वायु न लगै) स्थानमें आगसे जलादो तदनंतर स्वांग शीतल होजानेपर रसको निकालकर उपयोगमें लाओ, इसके गुण कहाँतक लिखैं जुदे जुदे अनुपानसे अनेक रोगोंको नाश करता है.

तथा १०—१गोली प्रातः और१संध्याको सुपारीपाककी दो तो प्रमेहमात्र दूर हों.

सुपारीपाकनिर्माणविधि— आठ टकेभर सुपारी (चिकनी) को कपड़छान कर चूर्णको ८ टकेभर गोघृतके साथ मिलाओ फिर तीनों सेर गोदुग्धमें डाल कर मंद मंद आँचसे खोवा बनालो और नागकेशर, नागरमोथा, चन्दन, सोंठ, कालीमिर्च, पिप्पली, आँवला, कोयल (अपराजिता, वेलिविशेष) के बीज, जायफल, वंग, धनियां, चिरौंजीदाने-तज, पत्रज, इलायची, दोनों जीरे, सिंघाड़े, और वंशलोचन (ये सब पाँच पाँच टंक) का महीन कपडछान चूर्ण और उपरोक्त खोवा दोनों ५० टकेभर मिश्रीकी चासनीमें डालकर १ टके प्रमाणकी गोलियाँ बनालो जो १ गोली प्रात और एक संध्याको खिलाओ तो प्रमेहमात्र, जीर्णज्वर, अम्लपित्त, अर्श, मन्दाग्नि, शुक्रदोष और प्रदर ये सर्व रोग दूर होकर शरीर पुष्टताको प्राप्त होगा.

तथा ११—गोखरूपाकविधि—आधासेर गोखरूका चूर्ण सेरभर गोघृतके साथ पाँचसेर गोदुग्धमें डालकर मंदाग्निसे खोवा बनाओ तदनंतर बेलकी गिरी, कालीमिर्च, जायफल, समुद्रशोष, इलायची, भीमसेनी कपूर, दालचीनी, पत्रज, हल्दी, कूट, अफीम, तालमखाना ये सब दो दो टंक, ५ टंक लोहसार और इन सबके बोझसे आधी भांगका महीन कपड़छानचूर्ण और उपरोक्त खोवा ४ सेर मिश्रीकी

---

[1] वे रांगके टुकड़े अग्निके तापसे जलकर भस्म होजानेपर फूलकर श्वेत होजाते हैं परन्तु इनका बोझ कुछ न्यूनाधिक्य नहीं होता है, पश्चात् इन्हें किंचित् मसल दो तो ये चूर्ण होजाते हैं इसे वंगेश्वर रस कहते हैं।

चासनीमें डालकर ५ पाँच टंक प्रमाणकी गोलियाँ बनालो जो एक गोली नित्य सेवन कराओ तो प्रमेह मात्र दूर होकर स्तम्भ शक्ति प्राप्त हो, स्त्री मैथुन समय बहुत प्रसन्न हो.

तथा १२–चित्रक, शुद्धगंधक, सोंठ, कालीमिर्च, पिप्पली, शुद्धपारा, शुद्ध सिंगीमुहरा, त्रिफला, और नागरमोथा, (पारे गंधककी कजली करलो) इन सबके महीन चूर्णको भृङ्गराजके रसकी १ पुट देकर खरल कर डालो और १ रत्ती प्रमाणकी गोलियाँ बनाकर एक गोली नित्य प्रातःकाल खिलाओ तो २० बीशों प्रकारके प्रमेह दूर होंगे. इसे पंचाननी गुटिका कहते हैं. यह वैद्यरहस्यमें लिखा है.

तथा १३–१ मासे भीमसेनी कपूर, १ मासे कस्तूरी, ४ मासे अफीम और ४ मासे जायपत्री इन सबको नागवेल (पान) के रसमें खरल करके १ रत्ती प्रमाणकी गोलियाँ बनालो, जो एक गोली दूध मिश्रीके साथ नित्य सेवन कराओ तो प्रमेहमात्र दूर होकर वीर्य स्तम्भित होगा.

तथा १४–आँवले और हल्दीका ५ टंक चूर्ण रात्रिको जलमें भिगोकर प्रातःकाल उसी पानीमें पीसलो और भंगके समान कपड़ेसे छानकर मधुके साथ पिलाओ तो प्रमेहमात्र दूर हों.

तथा १५–मेघनादरसविधि–शुद्ध पारा, शुद्ध गंधक (की कजली), शुद्ध सोनामक्खी, सोंठ, कालीमिर्च, पिप्पली, त्रिफला, बेरकी बीजी, शिलाजीत, हल्दी और कवीट (कैथ) के चूर्णको भंगरेके रसकी २१ पुट देकर १ टंक नित्य खिलाओ तो प्रमेहमात्र दूर हों.

तथा १६–हरिशंकररसविधि–शुद्ध पारा और अभ्रक दोनोंको आँवले के रसमें ७ सात दिनपर्यन्त खरल करके १ रत्तीभर नित्य खिलाओ तो प्रमेह मात्र दूर हों.

तथा १७–प्रमेहकुठाररसविधि–इलायची, भीमसेनी[१] कपूर, भारंगी, जायफल, गोखरू, सालईवृक्षकी छाल शुद्ध पारा, अभ्रक, मोचरस और बंगसार इन सबको महीन पीसकर इस रसमेंसे नित्य २ रत्ती खिलाओ तो प्रमेह मात्र दूर हों.

१ भीमसेनी कपूरको शास्त्रमें 'शुद्धकर्पूर' नाम दिया है जो कि यंत्रसे उड़ाकर शुद्ध किया जाता है, इसका नाम बरासकपूरभी है।

तथा १८-५ टंक बकायनके बीज चावलोंके पानीमें पीसकर गोघृतके साथ नित्य खिलाओ तो विशेष प्राचीन प्रमेह भी दूर हो. ये सब यत्न सर्वसंग्रहमें लिखे हैं.

पिड़िकारोगयत्न ।

तथा १-धव (धावडा) कहुवे, कदम्ब, बेर, सरसों, नीम इन सबके वक्कलोंका क्काथ बनाकर उस जलसे नित्य पिडिकाओंको धोओ तो-पिडाका दूर हो.

तथा २-काहूके वक्कल, कदम्बके वक्कल और तेंदूकी अंतर छालके क्काथसे पिडिकाओंको नित्य धोओ तो इन्द्रिय ऊपरकी पीबयुक्त पिडिका तथा शरीरमात्रकी पिडिका दूर हों.

वातपिडिकायत्न ३-भांगरेका रस तुलसीके पत्ते और पटोलके पत्तोंको कांजीमें महीन पीसकर लेप करो तो वातपिडिका नाश हों.

पित्तपिडिकायत्न ४-मुलहटी, कूट, रक्तचंन्दन, खश, रोहिस, गेरू और कमलगट्टोंको दूधमें पीसकर लेप करो तो पित्तपिडिका और उनकी दाह दूर हो.

पिडिकाकी दाहका यत्न ५-मक्खनको १००या१०००बार जलसे धोकर पिडिकाओंपर लेप करो तो इन्द्रियकी पिडिकाओंकी दाह तथा उनके पीबका बहाव भी बंद होगा. (मक्खन काँसेकी थालीमें मथमथकेधोना चाहिये).

पीबबहावका यत्न ६-कदम्ब, काहू, अनार और आँवलेके पत्तोंको उष्ण जलमें पीसकर लेप करो तो पिडिकाओंसे पीबबहाव बंद हो.

तथा ७-पिडिकाओंको काँजी या छाँछ या शीतल जलसे नित्य धोया करो तो पीबबहाव बंद होकर पिडिका नाश होजावे, ये सब यत्न आत्रेयमें दरशाये हैं.

इति नूतनामृतसागरे चिकित्साखण्डे अश्मरी, प्रमेह, पिडिकायत्न निरूपणंनाम षड्विंशातितमस्तरंगः ॥ २६ ॥

अथ मेदो स्थूल-कार्श्य-उदररोग.

मेदोकार्श्योदररुजां तरङ्गेऽस्मिन् यथाक्रमात् ॥
सप्तद्विप्रमिते नूनं चिकित्सा कथ्यते मया ॥ २७ ॥

भाषार्थ--अब हम इस २७ सत्ताईसवें तरंगमें मेद, कार्श्य और उदर रोगकी चिकित्सा यथाक्रमसे वर्णन करते हैं.

मेदरोगयत्न १--गुर्च और त्रिफालाके क्काथमें मधु डालकर पिलाओ तो मेदरोग दूर हो.

तथा २--बासी ठंढे पानीमें मधु मिलाकर पिलाओ तो मेदरोग दूर हो.

तथा ३--उष्ण अन्न भक्षण कराओ या चावलोंका माँड पिलाओ तो मेदरोग दूर हो.

तथा ४-सोंठ, मिर्च, पीपल, चित्रक, त्रिफाला, नागरमोथा और वाय-विडंगके क्काथमें गूगल डालकर पिलाओ तो मेदरोग दूर हो.

तथा ५--मधुके साथ पिप्पली चटाओ तो मेदरोग दूर हो.

तथा ६--धतूरेके पत्तोंका रस शरीरमें मर्दन करो तो मेदरोग दूर हो.

तथा ७--शुद्ध पारा, तांबेश्वर, लोहसार और बीजाबोलके चूर्णको कूक-रभंगरेके रसमें ३ दिनतक खरल करके २ रत्ती मधुके साथ नित्य खिलाओ तो मेदरोग दूर हो. इसे वडवानलरस कहते हैं, यह वैद्यरह-स्यमें लिखा है.

तथा ८--चव्य, जीरा, सोंठ, कालीमिर्च, पिप्पली, सेंकीहींग और सोंचरनोनका २ टंक चूर्ण यवके सत्तूके साथ खिलाओ तो मेदरोग दूर हो. यह चक्रदत्तमें लिखा है.

तथा ९--वायविड़ंग, सोंठ, जवाखार और लोहसारका १ टंक चूर्ण आँवलेके चूर्ण और मधुके साथ खिलाओ तो मेदरोग दूर हो.

तथा १०--बेरीके बक्कल (वृक्षकी छाल) में काँजीका पानी, अरण्या-का रस और शिलाजीत मिलाकर पिलाओ तो मेदरोग दूर हो.

तथा ११--गुर्च, इलायची, कूडेकी छाल और आँवले ये सब एकसे एक बढ़कर (१-२-३ आदि) और इन सबके प्रमाण गूगल लेकर सबके महीन चूर्णमेंसे १। सवा या १॥ डेढ टंक मधुके साथ सेवन कराओ तो मेदरोग और भगंदर दोनों दूर हों. इसे अमृतगूगल कहते हैं. यह चक्रदत्तमें लिखा है.

तथा १२--त्रिफला, अतीस, मूर्वा, निसोत, चित्रक, अडूसा, निम्ब-छाल, किरवारेकी गिरी, पीपलामूल, दोनों हलदी, गुर्च, इंद्रायण पीपली कूट, सरसों और सोंठ इनके क्काथमें कुछ तुलसीका रस और तेल डालकर

आँच दो रस जलकर तेलमात्र रहजानेपर छानकर शरीरमें मर्दन या बस्तिक्रिया करो तो मेद और कफके अन्य रोग भी दूर हों. इसे त्रिफलादि तेल कहते हैं. यह चक्रदत्तमें लिखा है.

मेदरोगीको सेवनीय पदार्थ—पुराने चावल, मूँग कुल्थी, कोदों, यव, कडुवारस, मधु, एरंडीके पत्तोंका शाक, हींग, चावलोंका माँड़, लेपन, बस्तिकर्म, चिंता, परिश्रम, मल्लक्रीड़ा, मार्गगमन और जागरण इन विषयोंके सेवन मात्रसे मेदरोग नाशको प्राप्त होगा.

शरीरदुर्गंधियत्न १—शंखका चूर्ण, अडूसेके पत्तेके रसमें मिलाकर लेप करो तो शरीरमें पसीना आनेसे दुर्गंधि आती है सो दूर हो.

तथा २—बेलपत्रके रसमें शंखका चूर्ण मिलाकर शरीरको लेप करो तो दुर्गंधि दूर हो.

तथा ३—नागकेशर, सिरसके बक्कल, लोध, खश और हर्रकी छालको जलमें पीसकर उबटन करो तो शरीरकी दुर्गंधि दूर हो.

तथा ४—बबूलके पत्ते जलमें पीसकर स्नानके पूर्व शरीरमें मर्दन करो तो दुर्गंधि दूर हो. यह भावप्रकाशमें लिखा है.

तथा ५--ताम्बूलके पत्ते हर्रकी छाल और कूटको जलमें पीसकर शरीरमें मर्दन करो तो दुर्गंधि दूर हो.

तथा ६--कुलथी, कूट, छड, छडीला, चन्दन, तज बच और यवका सेंका हुआ आटा इन सबको जलमें महीन पीसकर शरीरमें मर्दन करो तो दुर्गन्धि दर हो यह शार्ङ्गधरमें लिखा है.

कक्षादुर्गंधिनिवृत्तियत्न १--काँखों (हाथ और धड़के संगमपर नीचेका भाग)में नींबूके पत्तोंका रस लगाओ तो काँखोंमेंपसीनाआनेकीदुर्गंधिदूरहो.

तथा २--हल्दीको अधजलीकर पानीमें पीसकर काँखोंमें लगाओ तो काँखोंकी दुर्गन्धि दूर हो.

तथा ३-कूट और दोनों हल्दीको गोमूत्र या गोबरमें पीसकर लेप करो तो दुर्गंधि और कुष्ठ भी दूर हो. यह चक्रदत्तमें लिखा है.

स्त्रीका सुवर्णकारक सुंदर (रङ्ग होनेका) लेप १--हर्रकी छाल, लोध, नीमके पत्ते, अनारके बक्कल, आमके बक्कलको जलमें पीसकर स्त्रीके शरी-

रपर लेप करो तो देहका कुवर्ण दूर होकर सुन्दर वर्ण (रंग) प्राप्त हो और कांति बढै. यह काशिनाथपद्धतिमें लिखा है.

कार्श्यरोगयत्न १–जितनी बलकारी, वीर्यवर्द्धक, वीर्यनिबंधक और पुष्टकारी औषध यथा घी, दूध आदि वस्तु हैं वे सब कार्श्य (क्षीणता दुबलापन) रोग नाश करनेवाली हैं.

तथा २–जो जो पुष्टकारी प्रयत्न हैं वे सब कार्श्य रोगके यत्नही जानना. यह भावप्रकाशमें लिखा है.

वातोदररोगयत्न १–दशमूलके क्काथमें एरंडीका तेल डालकरके पिलाओ तो वातोदर दूर हो.

तथा २–त्रिफलाका क्काथ गोमूत्रके साथ पिलाओ तो वातोदर दूरहो.

तथा ३–कूट, दात्यूणी, जवाखार, पाठा, वच, सोंठ, सैंधव, सोंचर और सांभरनोनका ५ टंक चूर्ण उष्ण जलके साथ खिलाओ तो वातोदर दूर हो. इसे कुष्टादिचूर्ण कहते हैं.

तथा ४–१०० टकेभर एकपोत्या लहसनको पीसकर १६ सेर जलमें औटाओ औटाते समय उसीमें सोंठ, कालीमिर्चे, पिप्पली, साँठीकी जड़, सोंचरनोन, दात्यूणी, विडनोन, सहँजनेकी जड, अजवायन, गजपिप्पली (ये सब टके टकेभर) ३ टकेभर त्रिफला और ६ टकेभर निसोत इन सबका महीन चूर्ण तथा २ सेर तिल्लीका तेलभी डालकर मंद आँचसे औटाओ, औटते २ सब औषधें जलकर तेल मात्र रहजानेपर छानकर काँचके पात्रमें भरदो इस तेलमेंसे नित्य प्रातःकाल ५ टंक (तथा रोगीकी शक्त्यनुसार) पिलाओ तो आठों प्रकारके उदररोग, मूत्रकृच्छ्र, उदावर्त, अंत्रवृद्धि, पार्श्वशूल, आमशूल, अरुचि, प्लीहा, अष्ठीला, हडफूटन और वायुके समस्त विकार १ मास सेवनसे दूर होंगे.

तथा ५–उष्ण दुग्धमें अरंडीका तेल और गोमूत्र डालकर पिलाओ तो वातोदर दूर हो.

तथा ६–छाँछमें सोंचरनोन और पिप्पली डालकर पिलाओ तो वातोदर दूर हो.

पित्तोदरयत्न १–विरेचन, (जुलाव) दो तो पित्तोदर दूर हो.

तथा २–मिश्री और कालीमिर्च, जलके साथ सेवन कराओ तो पित्तोदर दूर हो.

कफोदरयत्न १–पिप्पली, पीपलामूल, चित्रक धेलेधेलेभर, २ टंक निसोत और ५ टंक एरंडीका तेल, ऊंटनीके दूधमें उष्ण करके नित्य १ मास पर्यन्त पिलाओ तो कफोदर दूर हो.

तथा २–अजवायन, जीरा, सोंठ, कालीमिर्च, पिप्पली और झाऊवृक्षकी जड़का ५ टंक चूर्ण उष्ण जलके साथ पिलाओ तो कफोदर दूर हो.

तथा ३–सांठी, दारुहल्दी, कुटकी, पटोल, हरंकी छाल, देवदारु, नीमकी छाल, सोंठ और गुर्चके ५ टंक चूर्णका क्काथ पिलाओ तो कफोदर, पार्श्वशूल, श्वास और पांडु ये सर्व रोग दूर हों. इसे पुनर्नवादि क्काथ कहते हैं. यह भावप्रकाशमें लिखा है.

सन्निपातोदरयत्न १–सोंठ और त्रिफलाके क्काथमें दही घी या तेल डालकर पकाओ पानी जलकर तेल या घी (जो डाला हो) रहजानेपर छानकर खिलाओ तो सन्निपातोदर दूर हो.

तथा २–सोंठ, पिप्पली, कालीमिर्च, जवाखार, सैंधानोन इनका ५ टंक चूर्ण उष्ण जलके साथ सेवन कराओ तो सन्निपातोदर दूर हो.

समस्तउदररोगमात्रयत्न १–अजवायन, झाऊवृक्षकी छाल, धनियां, त्रिफला, पिप्पली, कालाजीरा, अजमोद, पीपलामूल, वायविडंग ये नवों एक एक भाग, तीन भाग दात्यूणी, २ भाग निसोत, २ भाग इंद्रायण इनके चूर्णको ३६ भाग थूहरके दूधकी १ पुट देके २ टंक चूर्ण उष्ण जलके साथ सेवन कराओ तो सर्व उदररोग तथा वातरोग दूर हों. यह नारायणादि चूर्ण कहाताहै इसीको बेरीके बक्कलके क्काथके साथ सेवन करानेसे गुल्म, मद्यके साथ देनेसे आध्मान, मट्ठेके साथ देनेसे बंधकुष्ठ, अनारके क्काथके साथ देनेसे अर्श और उष्ण जलके साथ दो तो अजीर्ण, भगंदर, पांडु, कास, श्वास, क्षयी, संग्रहणी, कुष्ठ, मन्दाग्नि और विषमात्र र हों. जैसे विष्णुभगवान् दैत्योंका नाश कर देते हैं तैसेही यह नारायण चूर्ण उक्त रोगोंको समूल नष्ट कर देता है.

हमने यह नारायण चूर्ण प्राचीनामृतसागरानुसार लिखा है परन्तु भाव-

प्रकाशमें इसके निर्माणार्थनिम्नश्लोक दिये हैं जिन्हैं विद्वान् स्वयं जानलेवेंगे. " यवानी हबुषा धान्यं त्रिफला चोपकुञ्चिका । कारवी पिप्पलीमूलमजगन्धा शठी वचा ॥ १ ॥ शताह्वा जीरको व्योषं स्वर्णक्षीरी च चित्रकम् । द्वौ क्षारौ पौष्करं मूलं कुष्ठं लवणपञ्चकम् ॥ २ ॥ विडंगं च समांशानि दन्त्या भाग त्रयं भवेत् । त्रिवृद्विशाले द्विगुणे शीतला स्याच्चतुर्गुणा ॥ ३ ॥ एष नारायणो नाम्ना चूर्णो रोगगणापहः । एनं प्राप्य निवर्तन्ते रोगा विष्णुं यथाऽसुराः ॥ ४ ॥ तक्रेणोदरिभिः पेयं गुल्मिभिर्बदराम्बुना । आनद्धवाते सुरया वातरोगे प्रसन्नया ॥ ५ ॥ दधिमंडेन विड्बन्धे दाडिमांबुभिरर्शासि । परीकर्तेषु वृक्षाम्लैरुष्णांबुभिरजीर्णके ॥ ६ ॥ भगंदरे पांडुरोगे कासे श्वासे गलग्रहे । हृद्रोगे ग्रहणीरोगे कुष्टे मन्दानले ज्वरे ॥ ७ ॥ दंष्ट्राविषे मूलविषे सगरे कृत्रिमे विषे । यथार्हं स्निग्धकोष्णेन पेयमेतद्विरेचनम्" ॥ ८ ॥

इत्युक्तं भावप्रकाशे.

तथा २–थूहरका दूध, दात्यूणी, त्रिफला, वायविडंग, कटियाली, चित्रक, कुकरभंगरा ये सब दो सेर लेकर ८ आठ सेर पानीमें डालकर औटाओ और औटाते समय १ सेरभर गोघृत डालकर पानी जलके घृतमात्र रहजानेपर छानके २ टंक नित्य खिलाओ तो विरेचन होकर सर्व उदररोग दूर हो यह नारायणघृत भावप्रकाशमें लिखा है.

तथा ३–१ टकेभर अजवायन और २ टके सेंके सुहागेका चूर्ण उष्ण जलके साथ सेवन कराओ तो सर्व उदररोग दूर हों.

तथा ४–५ टकेभर पिप्पली थूहरके दूधमें भिगाभिगाकर सात दिन छायामें सुखाओ तदनंतर महीन पीसकर जलके साथ ४ मासेभर १ दिनके अंतरसे खिलाके ऊपरसे छाँछ या चावल खिलाओ तो उदररोग दूर हो.

तथा ५–१००० एक सहस्र पिप्पलका चूर्ण, हरेंका चूर्ण, थूहरके दधमें ७ पुट देकर छायामें सुखाओ और १ टंक गोमूत्रके साथ सेवन कराओ तो समस्त उदररोग दूर हों.

तथा ६–दात्यूणी, पिप्पली, सोंठ, एक एक भाग, ६ भाग चोख और $\frac{3}{4}$ पौन भाग विड़नोनका १ टंक चूर्ण उष्ण जलके साथ सेवन कराओ तो प्लीहा, गुल्म, मंदाग्नि, पांडु और समस्त उदररोग दर हो.

तथा ७–आकके पत्ते और सैंधव घडेमें भरकर मुँह बंद करदो और भट्टीमें जलाकर स्वाँग शीतल होजानेपर निकालकर पीस डालो जो इसमेंसे ५ टंक नित्य छाँछ या ग्वारपाठेके रसके साथ सेवन कराओ तो उदररोग दूर हो.

तथा ८–सोंठ या हर्रे या पिप्पलीको गुडके साथ नित्य २ टंक खिलाओ तो उदररोग, शोथ, पीनस, खाँसी, अरुचि, जीर्णज्वर, अर्श, संग्रहणी, कफरोग और वातरोग ये सब दूर हों.ये सब यत्न वैद्यरहस्यमें लिखे हैं.

तथा ९–सोंठ, कालीमिर्च, पिप्पली, सुहागा, पाँचोनोन, सज्जी और इन सबके समान शुद्ध जमालगोटाके चूर्णको दात्यूणीके रसकी ३ पुट और विजौरेके रसकी ३ पुट देके खरल करो और छायामें सुखाकर आधी रत्ती नित्य खिलाओ तो समस्त उदररोग प्लीहा, गुल्म, अफरा, शूल और अर्श ये सब रोग दूर हों इसीको आँखोंमें आँच दो तो सर्पविष उतर जावेगा इसे उदयभास्कर रस कहते हैं. यह रस रत्नप्रदीपमें लिखा है.

तथा १—आँकडेका दूध, कूडेकी छाल (ये दो दो टकेभर) चित्रक, पिप्पली, शंखाहोली, नीमकी जड, निसोत, हर्रेकी छाल, कपीला (ये सब एक एक टकेभर) और ६ टकेभर थूहरका दूध इन सबका चूर्ण १ सेरभर घी ५ सेर पानीमें डालकर औटाओ, रसादिक जलकर घृतमात्र रह जानेपर छानकर जितने विरेचन करना हो उतनीही बूंदें खिलाओ तो प्रतिबूंदपर १ विरेचन होकर उदररोग, शोथ, भगंदर और गुल्म ये सब दूर हों. इसे बिन्दुघृत कहते हैं, ये वैद्यविनोदमें लिखा है.

जलोदरयत्न १–नीलाथूथा, गंधक, पिप्पली और हर्रेकी छालका चूर्ण थूहरके दूधमें ५ दिन और किरमालेके गूदेके रसमें ५ दिन खरल करके उष्ण जलके साथ नित्य १ मासे सेवन कराओ तो जलोदर दूर हो इसके ऊपर चावल और इमलीके रस (शर्बत) का पथ्य देना चाहिये. इसे उदरारि रस कहते हैं यह योगतरंगिणीमें लिखा है.

इति नूतनामृतसागरे चिकित्साखण्डे मेदोरोग, कार्श्यरोग, उदररोग यत्ननिरूपणं नाम सप्तविंशतितमस्तरंगः ॥ २७ ॥

अथ शोथ-अंडवृद्धि-वर्ध्म।

शोथस्य वृद्धिरोगस्य वर्ध्मरोगस्य च क्रमात ॥
वसुपक्षे तरंगेऽस्मिन् कथ्यते रुक्प्रतिक्रिया ॥ २८ ॥

भाषार्थ–अब हम इस २८ अट्टाईसवें तरंगमें शोथ, अंडवृद्धि और वर्ध्म रोगोंकी चिकित्सा यथाक्रमसे लिखते हैं.

वातशोथयत्न १–सोंठ, साँठीकी जड, एरंडकी छाल, पिप्पली, पीपलामूल, चव्य, चित्रक इनका क्वाथ पिलाओ तो बादीकी सूजन दूर हो.

पित्तशोथयत्न १–पटोल, त्रिफला, नीमकी छाल और दारुहल्दीके क्वाथमें गुड डालकर पिलाओ तो पित्तशोथ, तृषा, ज्वर दूर होंगे.

कफशोथयत्न १–काली मकोईके रसमें साठीकी जड पीसकर लगाओ तो कफकी सूजन दूर हो.

सन्निपातशोथयत्न १–पिप्पली या हरँको थूहरके दधमें ३ दिन भिगोकर सुखालो और महीन पीसकर २टंक नित्य १० दिनपर्यंत सेवन कराओ तो सन्निपातशोथ दूर हो.

भल्लातकशोथयत्न १–तिल्ली और कालीमिट्टीको भैंसके दूध या भैंसके मक्खनमें पीसकर लेप करो तो भिलावेंसे उपजी हुई सूजन दूर हो.

तथा २–मुलहठी, काली तिल्ली, भैंसका दूध और भैंसका मक्खन इन सबको पीसकर लेप करो तो भिलावेंकी सूजन दूर हो.

तथा ३–सालईके पत्ते पीसकर लेप करो तो भिलावेंकी सूजन दूर हो.

विपशोथयत्न १–विषशोथके जिस जिस विषकी निवृत्ति हेतु जो जो उपाय आगे विषप्रकरणमें लिखेंगे वेही जानो.

सामान्यशोथयत्न १–हरँकी छाल, हलदी, भारंगी, गुरच, चित्रक, दारुहल्दी, साठीकी जड और सोंठका क्वाथ पिलाओ तो, पेट पैर और मुखकी सूजन दूर हो. इसे पथ्यादि क्वाथ कहते हैं.

तथा २–विषखपरेकी जड, देवदारु और सोंठका क्वाथ पिलाओ तो शोथमात्र दूर हो.

तथा ३–दात्यूणी, निसोत, सोंठ, कालीमिर्च, पिप्पली और चित्रकका क्वाथ पिलाओ तो शोथ दूर हो.

तथा ४–सोनामक्खी, विषखपरा, नीमकी छाल, गोमूत्रका क्वाथ पिलाओ तो शोथ दूर हो.

तथा ५–साठीकी जड़, दारुहल्दी, सहँजनेकी जड़, सोंठ और सरसों को काँजीके पानीमें पीसके उष्ण करके लेप करो तो शोथ दूर हो.

तथा ६–अदरख या पिप्पली या सोंठ या हर्रकी छाल इनमेंसे किसी एकको गुड़के साथ पीसकर २ टंकसे बढ़ाते बढ़ाते एक टंकेभर तक बढ़ाकर १ मास पर्यंत खिलाओ तो शोथ, पीनस, कंठरोग, श्वास, कास, अरुचि, जीर्णज्वर, संग्रहणी और कफवातके सर्व विकार नाश होंगे.

तथा ७–पिप्पली और सोंठके चूर्णमें समान गुड़ मिलाकर खिलाओ तो शोथ, अजीर्ण और शूल ये सब दूर हों.

तथा ८–३ टंकेभर गुड़, ३ टंकेभर सोंठ, ३ टंकेभर पिप्पली, १ टंकेभर मंडूर, १ टंकेभर तिल्ली इन सबका २ टंक चूर्ण नित्य खिलाओ तो शोथ मात्र दूर हो.

तथा ९–सूखी मूली, साँठीकी जड़, दारुहल्दी, रास्ना और सोंठमें तेल पकाकर यह तेल मर्दन करो तो शूलयुक्त शोथ मात्र नाश होवे, ये यत्न भावप्रकाशमें लिखे हैं.

तथा १०–साठीकी जड़, दारुहल्दी, गुरच, पाठा, सोंठ और गोखरू इनका २ टंक चूर्ण गोमूत्रके साथ पिलाओ तो सर्व शरीर विस्तृत शोथ, उदररोग और व्रणमात्र दूर हों. यह पुनर्नवादि चूर्ण है.

तथा ११–साठिकी जड, नीमकी छाल, पटोल, सोंठ, कुटकी, गुरच, दारुहल्दी, हर्रकी छाल इनका क्वाथ पिलाओ तो सर्वांग शोथ, कास, उदररोग और पांडुरोग ये सब दूर हों, यह पुनर्नवादि क्वाथ है.

अंडकोशशोथयत्न १–त्रिफलाके क्वाथमें गोमूत्र डालकर पिलाओ तो अंडकोश (पोतों) की सूजन दूर होगी.

शोथदाहयत्न १–बहेडेकी बीजी जलमें पीसकर लेप करो तो सूजन की जलन दूर हो.

१ वातांडवृद्धियत्न १–दूधमें अंडीका तेल डालकर पिलाओ तो १ मासमें वायुकी अंडवृद्धि दूर हो.

पित्तांडवृद्धियत्न १—गूगल, एरंडीका तेल और गोमूत्र तीनोंको मिलाकर पिलाओ तो पित्तकी अंडवृद्धिका नाश हो.

तथा २—रक्तचंदन, महुआ, कमलगट्टा, कमलनाल और खशको दूधमें खरल करके पोतोंपर लेप करो तो पित्तकी अंडवृद्धि, दाह और पीडा ये सब दूर हों.

३ कफांडवृद्धियत्न १—सोंठ, कालीमिर्च, पिप्पली और त्रिफलाके क्वाथमें जवाखार और सैंधानोन डालकर पिलाओ तो कफकी अंडवृद्धि शांत हो.

४—रक्तांडवृद्धियत्न १—जलौका (जोंक) लगाकर अंडकोशका रुधिर निकलवादो तो रक्तकी अंडवृद्धि दूर हो.

तथा २—विरेचन कराओ तो रक्तकी अंडवृद्धि दूर हो.

तथा ३—मिश्री और मधु जलके साथ पिलाओ तो रक्तकी अंडवृद्धि दूर हो.

तथा ४—शीतल द्रव्यों (ठंढे पदार्थों) के लेपसे, रक्तज तथा पित्तज दोनों अंडवृद्धि दूर हो.

५—मेदांडवृद्धियत्न १—अंडकोशकी मेद (चर्बी) निकलवा डालो तो मेदकी अंडवृद्धि दूर हो.

तथा २—तुलसीके पत्ते पीसके औटाकर सुहाते सुहाते लेप करो तो मेदकी अंडवृद्धि दूर हो.

६—मूत्रांडवृद्धियत्न १—अंडकोशका जल निकालवा दो तो मूत्रांडवृद्धि दूर हो.

तथा २—मूत्राशय (पोते की सीवनके पार्श्वों) के नीचे महीन वस्त्रको बाँधो तो मूत्रकी अंडवृद्धि दूर हो.

समस्तांडवृद्धियत्न १—कडवी तूम्बडी या रूखी वस्तुका सहता हुआ लेप करो या उन्हींके उष्ण जलसे सेंको तो अंडवृद्धि मात्र दूर हो.

तथा २—१५ टंक खैरका गोंद, १० टंक वच, १५ टंक सोंठ, ८ पैसेभर गौका दूध और आठ टकेभर सालममिश्री इन सबको गोदुग्धमें खरल करके ४ टंक नित्य पोतोंपर लेप करो तो २१ दिनके यत्नसे अंडवृद्धि शांत हो ये सब यत्न भावप्रकाशमें लिखे हैं.

तथा ३—रास्ना, मुलहटी, गुर्च, अरंडकी जड, खरेंटी, किरमालेकी गिरी

गोखरू पटोल और अडूसेके क्वाथमें अरंडीका तेल डालकर पिलाओ तो अंडवृद्धि मात्र दूर हो.

तथा ४–हर्रकी छाल, चिरायता, धनियां ये सब पैसे पैसेभर, पौन पैसेभर लौंग, १ टकेभर सोनामक्खी इन सबके तुल्य मिश्री और मिश्रीके तुल्य मधु इन सबको ५ दिन खरल करके इसको नित्य २ टंक खिलाओ तो अंडवृद्धि निश्चय दूर हो यह वैद्यरहस्यमें लिखा है.

तलगतअंडकोशयत्न–१ भेडीका घी कांसेकी थालीमें मसलो फिर इसीमें रारका चूर्ण डालकर मथो, फिर शुद्ध सिंगीमुहराका चूर्ण डालकर पुनः मसलो तीनोंको एक जीव होजानेपर पोतेपर इसे स्निग्ध पदार्थका मर्दन करो तो उतराहुआ पोता (गोसा गोई) यथास्थित होकर अच्छा होजावेगा यह भावप्रकाशमें लिखा है.

वर्ध्मरोगयत्न–१ हर्रकी छाल पिप्पली और सैंधानोनको महीन पीसकर अरंडीके तेलमें भूंज (पका) के २ टंक नित्य खिलाओ तो वर्ध्म (बद) रोग बैठ जावे.

तथा २–जीरा, झाऊवृक्षकी छाल, गेहूँ, कूट और बेरके पत्ते ये सब कांजीके पानीमें महीन पीसकर बदपर लेप करो तो बदरोग दूर हो यह भावप्रकाशमें लिखा है

तथा ३–तत्काल (तुरंत) मरे हुए कौवेका अंतरमल उष्ण जलकरके बदपर बाँधो या लेप करो तो बद तत्काल दूर हो. यह वैद्यरहस्यमें लिखा है.

तथा ४–कुन्दरूको भेडीके दूधमें पीसकर लेप करो तो बदरोग दूरहो.

इति नूतनामृतसागरे चिकित्साखण्डे शोथ, वृद्धि, वर्ध्मरोगाणां यत्ननिरूपणं नामाष्टविंशतितमस्तरंगः ॥ २८ ॥

अथ गलगंड, गंडमाला, अपची, ग्रन्थि, अर्बुदरोग ।

गलगंडादिरोगाणामर्बुदस्य यथाक्रमात् ॥
नंदनेत्रमिते भंगे चिकित्सा लिख्यते मया ॥ २९ ॥

भाषार्थ–अब हम इस२९ उन्तीसवें तरंगमें गलगंड, गंडमाला, अपची, ग्रन्थि और अर्बुद रोगोंकी चिकित्सा यथाक्रमसे लिखते हैं.

गलगंडरोगयत्न १--सरसों, अलसी, यव, सनके बीज, मुंगनेके बीज और मलीके बीज इन सबको छाँछमें महीन पीसकर लेप करो तो गलगंड, गंडमाला (कंठमाला) और ग्रंथि (गांठ) ये तीनों रोग दूर हों

तथा २--सरसों और जलकुम्भी (बूटी विशेष) दोनोंकी भस्म तेलमें घिसके लेप करो तो गलगंडरोग दूर हो.

तथा ३--शंखाहूलीको जलमें पीस और भंगके समान छानकर १५ दिन पर्यंत प्रभात समय पिलाओ और ऊपरसे गौका घी पिलाओतो गलगंड़ दूरहो.

तथा ४--कुटकीको पीसकर रात्रिभर घियातुरईमें भर रक्खो तदनंतर प्रातःकाल उसी घियातुरईको पीस छानकर रसको ७ दिन पर्यंत खिलाओ तो गंडमाला दूर हो.

तथा ५--गुर्च, नीमकी छाल, छड, कपास (रुई) वृक्षकी छाल, दोनों पिप्पली, खरैंटी, देवदारु इनके क्काथको तेलमें पकाओ और यह तेल १५ दिन पर्यंत नित्य पिलाओ तो गलगंड नाश हो. यह अमृतादितेल है.

तथा ६--यव, मूँग, पटोल, कटुवस्तु, रूखा अन्न, वमन और रुधिर निकालना ये सब गलगंडरोगके नाश करनेके उपाय हैं.

तथा ७--५ टंक कचनारकी छाल, १ टंकभर सोंठ, १ टंक पिप्पली, १ टंक मिर्च, ५ टंक हर्रकी छाल, ५ टंक बहेडेकी छाल, ५ टंक आँवले, ५ टंक बरण्याकी छाल, १ टंक तज, १ टंक पत्रज, १ टंक इलायची और इन सबके समान शुद्ध गूगल इन सबका चूर्ण ५ मास पर्यंत नित्य प्रभात जलके साथ सेवन कराओ तो गलगंड, अर्बुद, ग्रन्थि, व्रण, गुल्म, कुष्ठ, भगंदर ये सब रोग जुदे जुदे अनुमानोंसे दूर होंगे ये सब यत्न भावप्रकाशमें लिखे हैं.

तथा ८--लाल एरंडकी जड, पलाशकी जड, दोनोंको चावलोंके पानीमें पीसकर लेप करो तो गलगंड दूर हो यह वैद्यरहस्यमें लिखा है.

गंडमाला (कंठमाला) रोगयत्न १--जलकुंभी, सैंधानोन और पिप्पली तीनोंको ठंढाईके समान पीस छानकर सोंठके चूर्णके साथ पिलाओ तो कंठमालारोग दूर हो.

तथा २--बरण्याकी जडका क्काथ मधुके साथ पिलाओ तो कंठमाला दूरहो.

तथा ३–वायविडंगकी जडके काथमें भंगरेका रस और मीठा तेल डालकर मंद मंद आँचसे पकाओ. रस जलकर तेलमात्र रहजानेपर सिन्दूर डालकर छानलो अब यह " चक्रमर्दनतैल " बनगया जो इसका लेप करो तो कंठमाला नाश हो.

तथा ४–चिरमी (गुमची) का पंचांग जलमें पीसकर तेलके साथ पकाओ रस जलकर तेल मात्र रहजानेपर छानकर मर्दन करो तो कंठमाला दूर हो. इसे गुंजादि तैल कहते हैं. ये सब यत्न भावप्रकाशमें लिखे हैं.

तथा ५–किरमालेकी जड चावलोंके जलमें पीसकर लेप करो तो कंठमाला दूर हो.

तथा ६–सँभालूकी जड पानीमें पीसकर लेप करो तो कंठमाला दूर हो.

तथा ७–सरसों और शूकरकी विष्ठाको खपरी (ठीकरी) में जलाकर कडुवे तेलमें खरल करो और रोगीके रोगस्थानपर लेप करो तो कंठमाला (गंडमाला) दूर हो. ये सब यत्न वैद्यरहस्यमें लिखे हैं.

अपचीरोगयत्न १–सरसों, नीमके पत्ते और भिलावेंको बकरीके मूत्रमें पीसकर लेप करो तो अपचीरोग नाश हो.

तथा २–रक्तचंदन, हरंकी छाल, लाख, वच और कुटकीको जलमें पीसकर तेलमें पकाओ और इस तेलका मर्दन करो तो अपचीरोग नाश हो इसे चंदनादि तैल कहते हैं.

तथा ३–सोंठ, कालीमिर्चे, वायविडंग, महुआ, सैंधानोन और देवदारुको जलमें पीसकर तेलमें पकाओ. पानी जलकर तेल मात्र रहजानेपर छानकर इस तेलका नास दो(सुँघाओ) तो अपचीरोग दूर हो. इसे व्योषादि तैल कहते हैं.

ग्रंथिरोगयत्न १–सज्जी, मूलीका खार और शंखके चूर्णको पानीमें पीसकर लेप करो तो ग्रंथि और अर्बुद दोनों नाश होवेंगे.

तथा २–व्रणरोगकी चिकित्सामें " जात्यादिघृत" वर्णन करेंगे वह घृत भी ग्रंथि और व्रण दोनोंको लाभकारी है.

अर्बुदरोगयत्न १–हल्दी, लोध, पतंग, धमासा और मैनसिलको मधुमें पीसकर लेप करो तो मेदार्बुद रोग नाश हो.

तथा२-मूलीका खार, हलदी और शंखके चूर्णको महीन पीसकर लेप करो तो अर्बुदरोग दूर हो.

तथा ३-कूट, नोन और बड़का दूध इनको महीन पीसकर लेप करो और ऊपरसे बड़का पत्ता बाँधो तो सात दिनमेंही अर्बुदरोग दूर हो.

तथा ४-सहँजनेकी जड और बीजे, सरसों, तुलसीपत्र, यव, कनेरकी छाल और इन्द्रयवको छाँछमें महीन पीसकर लेप करो तो अर्बुदरोग दूर हो. ये सब यत्न भावप्रकाशमें लिखे हैं.

इति नूतनामृतसागरे चिकित्साखण्डे गलगंड, गंडमाला, अपची, ग्रन्थार्बुदरोगाणां यत्ननिरूपणं नामैकोनात्रिंशस्तरंगः ॥ २९ ॥

अथ श्लीपद-विद्रधि ।

श्लीपदस्य विद्रधेश्च ह्यामयस्य यथाक्रमात् ॥
बियद्रामे तरंगेऽस्मिन् चिकित्सा कथ्यते मया ॥ ३० ॥

भाषार्थ-अब हम इस ३० तीसवें तरंगमें श्लीपद और विद्रधि रोगोंकी चिकित्सा यथाक्रमसे वर्णन करते हैं.

श्लीपदरोगयत्न १-लंघन लेपन, स्वेदन, विरेचन, रुधिर निष्कासन, और उष्ण वस्तु, सेवन ये प्रत्येक कर्म श्लीपद रोगपर लाभकारी हैं.

तथा २-सरसों, मुँगनेकी जड, सोंठ, देवदारुको गोमूत्रमें पीसकर लेप करो तो श्लीपद रोग दूर हो.

तथा ३-साठीकी जड, सोंठ और सरसोंको काँजीमें पीसकर लेप करो तो श्लीपदरोग शांति पावेगा.

तथा ४-धतूरा, एरंड, सँभालू, मुँगना इनकी जड और सरसोंको जलमें महीन पीसकर लेप करो तो श्लीपद दूर हो.

तथा ५-सहदेई (महाबला) को ताड़फलके रसमें पीसकर लेप करो तो श्लीपद दूर हो.

तथा ६-सारवोटक (सहोर) वृक्षके वक्कलका क्काथ गोमूत्रके साथ पिलाओ तो श्लीपदरोग दूर हो.

तथा ७–हल्दी और गुडको महीन पीसकर गोमूत्रके साथ पिलाओ तो श्लीपद, दाह, कुष्ट तीनों दूर हों.

तथा ८–साठीकी जड, त्रिफला और पिप्पली इन्होंका २ टंक महीन चूर्ण मधुके साथ चटाओ तो बहुत दिनोंकाभी श्लीपद नाश होवे.

तथा ९–बडी हरंके चूर्ण अरंडका तेल और गोमूत्र मिलाकर १५दिन पर्यन्त पिलाओ तो श्लीपदरोग दूर हो ये सब यत्न भावप्रकाशमें लिखे हैं.

तथा १०–बधायरा, सोंठ, पिप्पली, कालीमिर्च, वायविडंगको जलमें पीसकर तेलमें मंद आँचसे पकाओ और तेल मात्र रहजानेपर छानकर मर्दन करो तो श्लीपदरोग दूर हो.

तथा ११–धतूरके बीजे क्रमशः एकसे बीसतक बढ़ाते जाओ इन्हें खाकर ऊपरसे शीतल जल पिलाओ तो श्लीपद दर हो. ये सब यत्न वैद्यरहस्यमें लिखे हैं.

तथा १२–कैसोंघि (एक जातका दरख्त है) की २ टंक जड गोघृतके साथ पिलाओ तो श्लीपदरोग नाश हो.

तथा १३–पिप्पली, त्रिफला और देवदारुका २ टंक चूर्ण नित्य काँजीके जलके साथ सेवन कराओ तो श्लीपद, अजीर्ण, वातरोग और प्लीहा ये सब दूर होकर क्षुधा वृद्धि होगी इसे पिप्पल्यादि चूर्ण कहते हैं. यह वृन्दमें लिखा है.

तथा १४–मजीठ, महुआ, रास्ना- जाल, (पील्हू वृक्ष विशेष मारवाडमें बहुत होता है) और साठीकी जडको काँजीमें महीन पीस लेप करो तो पित्तका श्लीपद दूर हो.

तथा १५–अँगूठोंके ऊपरकी नसोंका रक्त निकालदो तो पित्तका श्लीपद दूर हो.

विद्रधिरोगयत्न १–एरंडकी जडके क्वाथमें तेल या घृत पकाकर उससे सहता सहता सेंक करो तो बादीकी विद्रधि दूर हो.

तथा २–विरेचन कराओ तो पित्तकी विद्रधि दूर हो.

तथा ३–असगंध, खश, महुआ और रक्तचंदनको दूधमें महीन पीसकर घी मिलाओ और उष्ण करके लेप करो तो पित्तकी विद्रधि दूर हो.

तथा ४--ईंट, बालू, लोहेका मैल और गोबरको महीन पीसकर गोमूत्रमें पकाओ और सहता सहता हुआ सेंक करो तो कफकी विद्रधि नाश हो.

तथा ५--जोंक लगाकर रुधिर निकलवादो तो सर्व विद्रधि दूर हों.

तथा ६--जबतक विद्रधि पक न जावे तबतक उसका यत्न व्रणशोथ सदृश करो.

तथा ७--यव, गेहूँ और मूँग तीनोंके आटेको घृतमें पकाकर लेप करो तो बिन पकी विद्रधिभी कुशल होजावे.

तथा ८--दशमूलके क्वाथमें तेल या घी मिलाकर व्रणको धोओ तो विद्रधिका व्रण और सूजन दोनों दूर हों.

तथा ९--रक्तचंदन, मजीठ, हलदी, महुआ और गेरूको दूधमें पकाकर लेप करो तो रुधिर चोट लगनेकी दोनों विद्रधि दूर हों.

तथा १०--कालाजीरा, इन्द्रायणकी जड और तुरई इनके २ टंक चूर्णका क्वाथ बनाकर पिलाओ तो कोठेकी विद्रधि दूर हो.

तथा ११--सहँजनेकी जडके रसमें मधु मिलाकर पिलाओ तो शरीरके भीतरकी (अंतर) विद्रधि दूर हो.

तथा १२--मुँगनेके क्वाथमें सैंधानोन और हींग डालकर प्रातःकालही पिलाओ तो अंतर (शरीरके भीतरकी) विद्रधि दूर हो. ये सब यत्न भावप्रकाशमें लिखे हैं.

इति नूतनामृतसागरे चिकित्साखण्डे श्लीपद, विद्रधिरोग यत्न निरूपणं नाम त्रिंशस्तरंगः ॥ ३० ॥

अथ व्रणशोथ-व्रणरोग ।

व्रणशोथस्य व्रणस्याग्निदग्धस्य यथाक्रमात् ॥
ज्याकृशानो तरंगेऽस्मिन् कथ्यते रुक्प्रतिक्रिया ॥ ३१ ॥

भाषार्थ--अब हम इस ३१ इकतीसवें तरंगमें व्रणशोथ, व्रणरोग और अग्निदग्धकी चिकित्सा यथाक्रमसे कहते हैं.

शारीरकव्रणयत्न १--१ लेप, २ औषधोंके उष्ण जलसे धोना, ३ बाँसकी लकडीपर अँगूठोंसे मलकर उस अँगूठोंसे व्रणपर पसीना निकालना,

४ जलौका आदि कर्मसे रक्त निकालना, ५ औषधोंकी पट्टी बाँधकर व्रणपर पसीना निकालना, ६ व्रणको पकाना, ७ शस्त्र क्रियासे चीरना, ८ अँगूठासे दबाकर पीब निकालना, ९ व्रणका शोधन करना, १० व्रणमें अंकुर लाना, ११ अंतमें त्वचाके व्रण सदृश पूर्ण कर देना, ये ११ उपाय यथाक्रम करनेसे व्रण नाश हो जावेगा. चरक और सुश्रुत ग्रंथमें इसी प्रकारके ६० साठ उपाय व्रणरोगके लिये लिखे हैं.

वातजव्रणशोथलेप १–बिजौरेकी जड़, छड़, देवदारु, सोंठ, रास्ना और अरणीको पानीमें पीसलो और उष्ण करके सहता सहता लेप[1] करो तो वातज व्रणशक्तिसूजन दूर हो. जैसे जल अग्निको बुझाता है तैसे यह लेप इसको मिटाता है.

पित्तजव्रणशोथलेप १–महुआ, रक्तचंदन, दूर्वा, आँवले, कमलनाल, खश, नेत्रवाला और पद्माखको ठंढे जलमें पीसकर लेप करो तो पित्तके व्रणकी सूजन उतर जावेगी.

तथा २–बड़की जड़, गूगल, बेतके बक्कलको जलमें पीसकर इनसे दशमांश घृत डालकर लेप करो तो पित्तके व्रणकी सूजन दूर हो.

कफजव्रणशोथलेप १–नगद, (नागदमनी) बावची, मेढ़ासिंगी, मजीठ, राल, असगंध और शतावरी सर्वको महीन पीस और उष्ण करके सहता हुआ लेप करो तो कफजव्रणका शोथ दूर हो.

तथा २–पिप्पली,खली (तिल्ली अलसी आदि तैलिक अन्नोंका निस्तैल भाग) सहँजनेके वक्कल, नदीकी रेत (बालू) और हरेंकी छालको गोमूत्रमें पीसकर उष्ण उष्ण लेप करो तो कफके व्रणकी सूजन दूर हो.

सन्निपातज व्रणशोथलेप १–इसपर वैद्य स्वबुद्धिसे विचारपूर्वक लेपकरे.

रक्तज व्रणशोथलेप १–इसपर पित्तजव्रणशोथके समान लेपकरो.

समस्तव्रणशोथमात्रलेप १–साठीकी जड, देवदारु, हल्दी, सोंठ, मुँगनेके वक्कल और सरसोंको खटाईमें पीसकर सहता हुआ उष्ण लेप करो तो सर्व व्रणमात्रकी सूजन उतर जावेगी.

वातजव्रणशोथमार्जन १–वातनाशक औषधियोंके क्काथसे धोओ तो वातजव्रणशोथकी सूजन दूर हो.

१ लेप मात्र करना रात्रिकालमें वर्जितही है।

तथा २–दशमूल, खरैंटी, रास्ना, असगंध, खींप, अरंडीकी जड या फल, मुँगना, निर्गुंडी, साठी, पिप्पली, सैंधानोन, सोंठ, मुँगनाके बीज, रुईके बीज, (बिनौला) अलसी, कुल्थी, तिल्ली, यव, सरसों, मूलीके बीज, सौंफ, नीमके पत्ते, नागरवेलके पत्ते, गुलाबाँस (हबाश) के पत्ते, इनको उष्ण करके बांधो या क्वाथ बनाकर शोथको धोओ तो वादीके व्रणकी सूजन उतर जावेगी.

तथा ३–तेल, या मांसरस, या घृत, या काँजीको उष्णकर सहते सहते व्रणशोथको धोओ तो बादीके व्रणशोथकी सूजन उतर जावेगी.

पित्तजव्रणशोथमार्जन १–सीतल औषधोंके क्वाथ, या दूध, या घृत या शक्करके पानी, या सांठेके रससे धोओ तो पित्तके व्रणकी सूजन दूर हो.

कफजव्रणशोथमार्जन १–कफनाशक औषधोंके उष्ण क्वाथ या तेल या गोमूत्र, या खारके जलसे धोओ तो कफके व्रणकी सूजन दूर हो.

सन्निपातजव्रणशोथमार्जन १–सन्निपातनाशक औषधोंके उष्ण सहते हुए क्वाथसे धोओ तो सन्निपातके व्रणका शोथ दूर हो.

रक्तजव्रणशोथमार्जन १–इसपर पित्तज व्रणशोथ सदृश यत्नमार्जन करो.

व्रणशोथमात्रमार्जन १–हर्रेके बक्कलको पानीमें औटाकर शोथपर सहती २ धारा छोड़ो तो व्रणकी सूजन मात्र दूर हो.

समस्तव्रणशोथस्वेदन १–कठोर व्रणपर अँगूठासे या बाँसकी स्वच्छ चिकनी लकड़ीसे शनैःशनैः घिसकर (मसलकर) पसीना निकालो तो वह ढीला होकर अच्छा हो जावेगा.

व्रणशोथरक्तनिष्कासनविधि १–जिस व्रणका वर्णविपर्यय हो या काला हो और पीडा अधिक हो या किसी विषहरे जीवके काटनेसे शोथ होगया हो उसका जलौका (जोंक) या छूरे (स्तुरा) से रुधिर निकलवा दो तो वह तुरंत अच्छा होगा.

व्रणशोथपाकनविधि १–जो व्रण लेप आदि पूर्वोक्त यत्नोंसे न पकै तो सहँजनेकी जड और फल, तिल्ली, सरसों, अलसी, यव, गेहूँ, नीमके पत्ते या मदिरा निकालनेका जावा इत्यादिको पकाकर व्रणपर बाँधो तो व्रण पक जावेगा.

पक्वव्रणचीरनविधि १–जिस व्रणमें पीब भरगया हो उसे शस्त्रक्रियामें कुशल वैद्य शस्त्र (नश्तर) से चीरकर उसमेंकापीब निकाल देवे और फिर स्वच्छ होजानेपर मलहमकी पट्टी बाँध देवे तो व्रण अच्छा होजावेगा

शस्त्रक्रिया वर्जन–बालक, वृद्ध, क्षीण पुरुष, भयभीत, शस्त्रक्रिया(चीर फाड़) को न सहनेवाला, स्त्री और जिसे मर्मस्थानमें व्रण हुआ हो ऐसे रोगीका व्रण मत चीरो परन्तु नीचे लिखी औषधियोंसे पीब निकाल दो.

व्रणभेदन औषध १–कणगच (करंज) की जड़, चित्रक, दात्यूणी, भिलावे, कनेर और कबूतरकी विष्टा, इनमेंसे किसी एकका भी लेप करो तो अवश्यहीपक्व व्रण फूटकर पीब निकल जावेगी.

तथा २–खारानोन, जवाखार, सज्जी और अपामार्ग (ऊँगो आघाझारा) का खार इनमेंसे किसी एकका लेपकरो तो व्रण फूटकर पीब वह जावेगा.

तथा ३–यदि व्रण अति कठोर हो तो उसपर हाथीका दाँत पानीमें घिसकर लगादो तो उस व्रणका शोथ उतरकर फूटके पीब बह जावेगा.

व्रणपीडनाविधि १–मर्मस्थानके व्रणमें पीब उत्पन्न होगई हो तो उसे मत चीरो किन्तु यव, गेहूँ और उर्दको पानीमें पीस और पकाके उस व्रणपर बाँध दो तो उसमेंसे पीब बहकर हलका होजावेगा, तव उसपर मलहम लगाकर आरोग्य करलो.

व्रणशोधनविधि १–जो कच्चा व्रण हो तो उसे पटोलके पत्ते या नीमके पत्तोंको पानीमें औटाकर उस पानीसे धोवो तो व्रण अच्छा होजावेगा.

तथा २–कच्चे व्रणको गूलरके बक्कलके क्काथसे धोओ तो अच्छा होगा.

तथा३-कच्चे व्रणको किरमालेके बक्कलके क्काथसे धोओ तो अच्छा होगा.

तथा ४-कच्चे व्रणको पीपल वृक्ष, गूलर, बड और बेल इन चारोंके बक्कलके क्काथसे धोओ तो व्रणकी सूजन और उपदंश (गर्मी) दोनों दूर हों.

तथा ५–तिल, सैंधानोन, मुलहटी, नीमके पत्ते, दोनों हल्दी, निसोत और नागरमोथा इन सबको जलमें पीसकर व्रणपर लेप करो तो व्रण पककर उसमेंका पीब निकल जावेगा.

दुष्टव्रणयत्न १–नीमके पत्ते, तिल, दात्यूणी, निसोत और सैंधानोनको पीसकर लेप करो तो दुष्टव्रण अच्छा होजावेगा.

तथा २–नीमके पत्ते जलमें औटाकर व्रणपर बाँधो तो दुष्ट व्रण दूर हो.

तथा ३– हर्र, निसोत, सैंधानोन, दात्यूणी और कलहारीकी जडको मधुमें पीसकर इसकी बत्ती व्रणमें चलादो तो दुष्ट व्रण अच्छा हो.

तथा ४--जिस व्रणका मुँह छोटा हो उसमें नीमके पत्तोंके रसकी बत्ती बनाकर चलाओ तो व्रण कुशल होगा.

तथा ५--नीमके पत्ते, घी, मधु, दारुहल्दी और महुआकी बत्ती बनाकर चलाओ तो व्रण दूर हो.

तथा ६--तिल्लीको औटाकर बत्तीबनाके व्रणमें चलाओ तो व्रण अच्छाहोगा.

व्रणभरणयत्न १-नीमके पत्ते जलमें चुराकर उसजलसें व्रणको धोओ और मधुयुक्ततेलका फुहा (रुई) उसपर बाँधो तो व्रण भरकर अच्छा होजावेगा.

तथा २--असगंध,लोध, कायफल, मुलहटी, मजीठ और धावडेके फूल इन सबको पीसकर व्रणपर बाँधो तो व्रण भरकर अच्छा होजावेगा.

व्रणदाह तथा शूलयत्न १-जौका आटा, मधु, तैल, घी इन सबको इकट्ठे तपाकर व्रणपर लेप करो तो दाह और शूल व्रणसे दूर हों.

व्रणकृमियत्न १--कणगचकी जड, नीमकी छाल और निर्गुंडीको पीसकर लेप करो तो व्रणकी कृमि निवृत्त होगी.

तथा २--लहसन पीसकर लेप करो तो कृमि दूर होंगी.

तथा ३--हींग और नीमकी छालको पीसकर लेप करो तो व्रणकी कृमि दूर होंगी.

व्रणकण्डु कृमियत्न १--नीमके पत्ते, बच, हींग, सरसों, घी, नोन इन सबका चूर्ण एकत्र कर घीमें सानके अग्निपर धूनी दो तो व्रणपर छोत (अशुद्धि, छूत) पडनेके कारण जो खुजाल होकर कृमि पड जाती हैं सो कृमि और व्रणकी पीडा दूर होगी. ये सर्व यत्न भावप्रकाशमें लिखे हैं.

व्रणभरणयत्न १--२ पैसेभर कडुआ तेल और दो पैसेभर पानी काँसे (फूल) की थालीमें डालकर १ दिनभर हाथसे मसलो तदनंतर इसमें ५ पैसेभर रार, १टकेभर खैरसार, ५ टंक कूट, २ टंक नीलाथूथा, १ टंक गंधापिरोजा और १ टंक कालीमिर्च इन सबका कपडेछान किया चूर्ण डालकर पुनः हाथसे मसलो, अब जो इस मलहमकी पट्टी व्रणपर लगाओ तो व्रण तत्काल भर जावेगा.

आगन्तुकव्रणयत्न १--खड्ग (तलवार) आदि नानाप्रकारकी धारके घावसे किसी मनुष्यकी त्वाचाका कोई भाग फट जावे तो, चतुर वैद्यको चाहिये कि, उस घावको रेशमके पक्के धागेसे टाँके लगाकर रोगीको निर्वात

स्थानमें रक्खे. तदनंतर गेहूंके मैदामें जल और घी डालके पकावे और पानी जलकर घृतयुक्त मैदा रहजानेपर उस टिकियासे वह टाँके लगाहुआ घाव सहता सहता सेंके तो वह घाव अच्छा होजावेगा.

तथा २--कुटकी, मोम, हलदी, मेंहदी, मुलहटी, करंजके फल पत्ते और जड, पटोल, चमेलीके पत्ते और नीमके पत्ते इन सबको घीमें डालकर पकाओ, जब ये सब सूखकर घृतमात्र रहजावे तब उस घृतसे व्रणको सेंको तो व्रण तत्क्षण कुशल होजावेगा. ये सब यत्न वैद्यरत्नमें लिखे हैं.

तथा ३--शस्त्रादिके प्रहारसे यदि अधिक रुधिर निकालकर वायु कुपित होनेसे अधिक पीड़ा होने लगै तो उक्त प्रकारके रोगीको "घी" पिलाओ जिससे वात शमन होकर पीडा दूर हो.

तथा ४--यदि खड्गादिसे गात्र छिन्न होजावे तो उस घावमें गंगेरनकी जड़का रस भरदो तो वह घाव भरकर शीघ्रही अच्छा होगा.

तथा ५--शस्त्र प्रहारवाले रोगीको सर्व शीतल यत्न लाभदायकही हैं.

तथा ६--यदि शस्त्रप्रहारसे आमाशयमें रुधिर एकत्र होजावे तो उसे वमनद्वारा तथा मूत्राशयमें रुधिर जमगया हो तो विरेचनद्वारा रुधिर निकालकर रोगीको आरोग्य करद्रो.

तथा ७--बाँसकी छाल, अरंडकी छाल, गोखरू, पाषाणभेद इनके क्काथमें सेंकीहींग और सैंधानोन डालकर पिलाओ तो कोठेका जमाहुआ रुधिर निकलकर वह रोगी आरोग्य हो जावेगा.

तथा ८--आगंतुक व्रण रोगीको यव, कुल्थी, सैंधानोन और सूखा पदार्थ खाना ये लाभजनक होंगे.

तथा ९--चमेलीके पत्ते, नीमके पत्ते पटोल, कुटकी, दारुहलदी, गौरीसर, मजीठ, मोम, हरेंकी छाल, तज, हल्दी, नीलाथूथा, मधु, करंजबीज इन सबके समान गौका घी और सब औषधियोंसे अष्टगुणा जल ये सर्व पदार्थ एकत्र कर मंद मंद आँचसे पकावो फिर रस जलकर घृत मात्र रह जाने पर छानकर इसकी बत्ती तथा लेप व्रणमें लगाओ तो शरीरिक तथा आगंतुक गम्भीर व्रण भी भर जावेगा इसे जात्यादिघृत कहते हैं.

तथा १०--चमेलीके पत्ते, नीमके पत्ते, पटोलके पत्ते, किरमालेके पत्ते महुआ, मोम, कूट, दारुहलदी, हलदी, कुटकी, मजीठ, पद्माख (पद्मकाष्ठ)

हरेंकी छाल, लोध, तज, कमलगट्टे, गौरीसर, नीलाथूथा और किरमालेका गूदा इनके क्वाथमें तिल्लीका तेल पकाकर छानलो जो इस तेलकी बत्ती या फुहा आदि व्रणपर लगाओ तो वह व्रण तत्क्षण भरकर अच्छा हो जावेगा. इसे जात्यादितेल कहते हैं.

तथा ११-चित्रक, लहसन, हींग, सरपंख, (यह गौडदेशमें प्रसिद्धहैहै) कलिहारीकी जड, सिंदूर अतीस और कूट इन सबके चूर्णको कडुवे तेलके साथ जलमें डालकर पकावो जब पानी जलकर तेलमात्र रहजावे तब छानकर रुई आदिके द्वारा व्रणपर लगाओ तो आगंतुकव्रण, दुष्टव्रण और नाडीव्रण इन सबको समूल नाश कर देवेगा. इसे विपरीत मल्लतैल कहते हैं.

तथा १२-गुर्च, पटोलकी जड, त्रिफला, वायविडंग और इन सबके समान गूगल इन सबका २ टंक बारीक चूर्ण नित्य जलके साथ सेवन कराओ तो व्रणमात्र, वातरक्त, गुल्म, उदररोग, ये सब दूर हों, इसे अमृतादि गूगल कहते हैं. ये सब यत्न भावप्रकाशमें लिखे हैं.

पुष्टिदग्धयत्न १-अग्निसे जलेहुएको अग्निसेही तपाओ तो अच्छाहोगा.

तथा २-जले स्थानपर अगरादि उष्ण औषधियोंका लेप करो तो जला हुआ अवश्य अच्छा होजावेगा.

दुर्दग्धयत्न १-औषधियोंका बनाहुआ संशोधित तथा साधारण घृत भी तपाकर ठंढा होनेपर लगाओ तो दुर्दग्ध अच्छा हो जावेगा.

सम्यग्दग्धयत्न १-तवाखीर, बड़की जड, रक्तचंदन, सोनागेरू, गुरच इन सबको पीसकर घीके साथ लेप करो तो सम्यग्दग्ध कुशल हो.

अतिदग्धयत्न १-बिगडेहुए मांसको निकालकर साँठी चावल और तेंदूको घीमें पीसकर लेप करो और ऊपरसे गुरचके पत्ते बाँधो तो अतिदग्ध कुशल हो.

तथा २-मोम, महुआ, लोध, रार, मंजीठ, रक्तचंदन और मूर्वाको घी में पकाकर घीका लेप करो तो अतिदग्धकी जलन मिटकर नवीन मांसांकुर उत्पन्न होगा. इसे चित्रकादिघृत कहते हैं.

तथा ३-पटोलके पंचांगके क्वाथमें कडुआ तेल पकाकर क्वाथ जलके तेल मात्र रहजानेपर छानलो जो इसको लेप करो तो अग्निदग्धकी दाह झरना और फटना ये सब शमन होजावेंगे ये सब यत्न भावप्रकाशमें लिखेहैं.

तथा ४–पुराना कलीका चूना, दहीके पानीमें पीसकर दग्धपर लगाओ तो अग्निदग्ध तथा तैलदग्धका फफोला दोनों शीतल पड़ जावेंगे.

तथा ५–जौ (यव) को जलाकर तिल्लीके तेलके संयोगसे लेप करो तो दग्ध कुशल होगा.

तथा ६--सेंकाजीरा, मोम और रार घीमें पीसकर लगाओ तो दग्ध कुशल होगा.

तैलदग्धयत्न १–पावभर तिल्लीके तेलमें पुराना कलीका २ पैसेभर चूना १ प्रहरपर्यंत हाथसे मसलकर एक जीव करलो और रुईसे जलेस्थानपर लगाओ तो तत्काल अच्छा होगा. (चूना पानीमें भीगाहुआ लेना)

व्रणग्रंथियत्न १–कथीला, वायविडंग, तज और दारुहल्दीको जलमें महीन पीसकर तिल्लीके तेलके साथ मंद आँचसे पकाओ पानी जलकर तेलमात्र रहजानेपर छानकर इस तेलका लेप करो तो व्रणग्रंथि दूर हो.

इति नूतनामृतसागरे चिकित्साखण्डे व्रणशोथ-व्रण, अग्निदग्धव्रण ग्रंथिरोगाणां यत्ननिरूपणं नामैकत्रिंशस्तरंगः ॥ ३१ ॥

अथ भग्नरोग-नाड़ीव्रणरोग ।

चिकित्सा भग्नरोगस्य तथा नाडीव्रणस्य हि ॥
नेत्रराममिते भंगे लिख्यते च यथाक्रमात् ॥ ३२ ॥

भावार्थ–इस ३२ बत्तीसवें तरंगमें भग्नरोग और नाडीव्रणकी चिकित्सा यथाक्रमसे लिखते हैं.

जो चोट आदि लगनेसे हड्डी जोडपरसे उखड जावे या टूट जावे तो उसपर वहीं तुरंत गीले कपडेकी पट्टी बाँधकर ऊपरसे ठण्ढा पानी डालो तदनंतर किसी अस्थिभेदज्ञाता पुरुषसे यत्न कराओ. इस विकारपर सेंक करो या पट्टी बाँधो पर सब शीतल उपाय करो. पट्टी बहुत कडी खींचकर मत बाँधो क्योंकि, ऐसा करनेसे त्वचापर शोथ होकर चमडी पक जावेगी. इसलिये साधारण दशाकी ढीलीपट्टी बाँधो तो हड्डी यथार्थ जमकर लाभकारी हो.

भग्नरोगयत्न १–भग्नस्थानको शोधकर उसपर गीली औषधियाँ दर्भ

(डाभ एकप्रकारका घास) से कसकर बाँधो या कीचड़ लगाओ तो हड्डी अच्छी होजावेगी.

तथा २–मँजीठ और महुआको ठंढे पानीमें पीसकर अस्थिभंगस्थान पर लगाओ तो वह अच्छा होगा.

तथा ३–१००बार पानीसे धोये हुए घीमें साँठी चावल पीसकर लेप करो तो अस्थिभंग अच्छा होगा.

तथा ४–बेरीकी लाख, पीपलकी लाख, गेहूँ और काहूके बक्कलको घीमें पीसकर दूधके साथ ५ टंक नित्य सेवन कराओ तो अस्थिभंग अच्छा हो.

तथा ५--लाख, काहूके बक्कल, असगंध, खिरैंटी और गूगल इनका २ टंक चूर्ण दूधके साथ नित्य सेवन कराओ तो अस्थिभंग दूर हो.

तथा ६--गेहूँको अधजले करके समान फिटकरीके साथ पीसलो और यह ५ टंक चूर्ण १० टंक मधुके साथ ७दिन चटाओ तो अस्थिभंग दूर हो.

तथा ७--आँवले, मैदालकडी और तिल्लीको शीतल जलमें पीसकर चोटपर लेप करो तो अस्थिभंग कुशल हो.

तथा ८–उत्तम ममाई (जो कि मनुष्यके मांससे बनती है) खिलाओ तो उखड़ी हुई या टूटी हुई हड्डी अच्छी हो.

तथा ९--२ टंक लाखका चूर्ण, दूधके साथ १५ दिन पर्यंत पिलाओ तो टूटी हुई हड्डी जुड जावेगी. (लाख पीपल वृक्ष या बेरीकी लेना)

तथा १०–२ या तीन रत्ती पीली कौडीका चूर्ण उष्ण दुग्धके साथ पिलाओ तो टूटीहुई हड्डी जुड जावेगी. ये सब यत्न वैद्यरहस्यमें लिखे हैं.

तथा ११--बबूलका बक्कल, त्रिफला, सोंठ, मिर्च और पिप्पली इन सबके समान गूगलका २ टंक चूर्ण १५ दिन पर्यंत दूधके साथ पिलाओ तो अस्थिभंग दूर होकर शरीर वज्रसा दृढ होजावेगा.

तथा १२–बबूलके बक्कलका २ टंक चूर्ण १ मास पर्यंत मधुके साथ चटाओ तो शरीर वज्रसा होजावे. यह योगतरंगिणीमें लिखाहै.

तथा १३–मेथी, मैदालकडी, सोंठ और आँवलेको गोमूत्रमें महीन पीसकर चोटपर लेप लगाओ तो मुद्गर आदिकी चोट भी दूर हो.

तथा १४--मांस या मांसरस (सोरवा) दूध, घी और सर्व पौष्टिक औषधियां ये सब पदार्थ भग्नरोगवालेको सेवने योग्य हैं.

तथा १५—नमक, कटु वस्तु, खार, खटाई, मैथुन, श्रम, घाममें भ्रमण और रूखा अन्न भक्षण ये इस रोगीको सेवन अयोग्य हैं.

विषेशतः—बालक और तरुणको अस्थिभंग हो तो शीघ्र अच्छा हो, परन्तु वृद्ध तथा रोगीको लगीहुई चोट शीघ्र अच्छी न होगी.

नाडीव्रणरोगयत्न १—छोटे मुखका नाडीव्रण जिसके मुखसे सर्वदा पीव बहती रहती हो उसके मुखपर थूहर या आकके दूधमें भीगीहुई दारुहल्दीको घिसकर बत्ती बनाके धरो तो वह व्रण भरकर अच्छा होगा.

तथा २—किरवारेकी जड, हल्दी और मँजीठको मधुमें पीसकर बत्ती बनाकर व्रणके मुखमें चलाओ तो नाडीव्रण अच्छा हो.

तथा ३—चमेलीके पत्तोंका रस, आकडेकी जड, किरमालेकी जड, दात्यूणी, सैंधानोन सोंचरनोन और जवाखार इनको महीन पीसकर छोटे मुखवाले व्रणके मुखपर युक्तिसे धरो तो वह व्रण अच्छा होजावे.

तथा ४-जात्यादि घृत तथा जात्यादि तेलसे भी नाडीव्रण अच्छा होगा.

तथा ५—त्रिफला, सोंठ, कालीमिर्च, पिप्पली और इन सबके समान शुद्ध गूगलका २ टंक चूर्ण नित्य शीतल जलके साथ पथ्यसे ४९ दिन पर्यंत सेवन कराओ तो सर्व प्रकारके नाडीव्रण दूर हों.

तथा ६—गूगल और सिंदूरको महीन पीसकर व्रणमें युक्तिसे भरो तो नाडीव्रण अच्छा हो. ये सर्व यत्न भावप्रकाशमें लिखे हैं.

तथा ७—मधु या नमक या तेलकी बत्ती चलाओ तो दुष्टव्रण अच्छाहो.

तथा ८—सज्जी, जवाखार, कपेला, मेहँदी, सुहागा, श्वेत खैरसारको गोघृतमें १ दिन पर्यंत खरल करके व्रणमें भरो तो व्रणका शोथ और कृमि दूर होकर व्रण भर जावेगा. यह स्वर्जादिघृत चक्रदत्तमें लिखा है.

तथा ९—सँभालूके पत्तोंके रसमें पकायेहुए तेलकी बत्ती व्रणमें दो तो व्रण अच्छा हो. यह निर्गुंडीतैल वृंदमें लिखा है.

तथा १०—१ पैसेभर राल १ पैसेभर, सफेदा, २ पैसे भर श्वेतमोम, १ पैसेभर मुर्दासिंगी, इनमेंसे मोसको छः पैसेभर उष्ण घीमें पिघलाकर शुद्ध करलो और शेष औषधोंका महीन चूर्ण उसमें मिलाकर काँसेकी थालीमें जलके साथ १०८ बार हाथसे मसलमसलकर धोओ और इसको व्रणमें भरो तो व्रण अच्छा हो, इसे श्वेतमलहम कहते हैं.

तथा ११–शुद्ध पारा, शुद्ध आँवलासार गंधक, इन दोनोंके समान मुर्दासिंगी, इन तीनोंके समान कपेला कुछ नीलाथोथा, इन सबोंके चौगुना घी और कुछ नीमके पत्तोंका रस इन सबको २ दिन पर्यंत खरल करके व्रणपर लगाओ तो व्रणमात्र अच्छे हों यह वैद्यरहस्यमें लिखा है.

तथा १२–मस्तंगीका गोंद, (रूमीमस्तंगी) मैंढल, नीलाथोथा, सज्जी, सुहागा, सिंदूर, कपेला, मुर्दासिंगी, गूगल, कालीमिर्च, सोनागेरू, इलायची, गंधापिरोजा, सफेदा, हिंगुल और शुद्धगंधक इन सबका चूर्ण करो और इनमेंसे किसी १ के बराबर मोमको गोघृतमें पिघलाकर शुद्ध करो तदनंतर उक्त चूर्णमें मिलाकर दो दिन पर्यंत खरल करके व्रणमें भरो तो शारीरिक तथा आगंतुक दुष्टव्रण प्रभृति सर्व अच्छे होवेंगे.

तथा १३–नीलाथोथा, कपेला, मुर्दासिंगी, श्वेत खैरसार, सिंदूर, मोम, हिंगुल, केशर और इन सबके समान गोघृत लेकर प्रथम गोघृतमें नीलाथोथा और मोम पिघलाओ और पीछेसे अवशिष्ट औषधोंका चूर्ण डालकर उतार लो तदनंतर ठंढा होजानेपर काँसेकी थालीमें जलके साथ १ दिन पर्यंत मंथन करके व्रणपर लगाओ तो व्रणमात्र तथा व्रणका घाव भरके अच्छा हो. ये यत्न वैद्यकुतूहलमें लिखे हैं.

तथा १४–३ पैसेभर हिंगुल, १ पैसेभर मुर्दासिंगी, २ पैसेभर सज्जी प्रथम १ पैसेभर नीमके पत्तोंकी टिकियाको गोघृतमें पकाकर उसीमें ३ पैसेभर श्वेत मोम मिलाओ और शेष औषधोंका चूर्ण इसीमें डालकर व्रणमें भरो तो व्रणमात्र अच्छे हों.

तथा १५–१ पैसेभर राल, १ पैसेभर कत्था, १ पैसेभर कालीमिर्च ४पैसेभर गोघृत, ४ पैसेभर चमेलीका तेल इन सबको लोहेकी कड़ाहीमें पीसकर बिवाई (पाँवकी एडीमें फटी हुई दरारे)में भरो तो बिवाई अच्छीहो.

तथा १६–नीमके पत्तोंका सेरभर रस पावभर गोघृतके साथ कडाहीमें औटाओ रस जलकर घृतमात्र रहजानेपर उसमें ४ पैसेभर रार. १ पैसेभर नीलाथोथा, १ पैसेभर मुर्दासिंगी इनका महीन चूर्ण डालकर एकजीव करदो, इस मलहमको कपड़ेकी पट्टीपर लगाकर व्रणपर चिपकाओ तो व्रण निश्चय अच्छा हो.

तथा १७–मैनशिल, मँजीठ, लाख, दोनों हल्दी इन सबको घी और मधुके साथ महीन पीसकर त्वचापर लेप करो तो व्रणजन्य विकारसे काली पड़ी हुई त्वचाका वर्ण पूर्ववत् होजावेगा.

तथा १८–अपामार्ग (आधेझारे) के बीज और तिल दोनोंको महीन पीसकर लेप करो तो वातजन्य नाडीव्रण दूर हो.

तथा १९–तिल, मधु और घीको एकत्र पीसकर लेप करो तो पित्तका नाडीव्रण दूर हो.

तथा २०–तिल, मँजीठ, हस्तीदंत, इनको महीन पीसकर जलके साथ लेप करो तो पित्तका नाडीव्रण दूर हो.

तथा २१–तिल, मुलहटी, दात्यूणी, नीमकी छाल या पत्ते, सैंधानोन इन सबको महीन पीसकर लेप करो तो पित्तका नाडीव्रण दूर हो.

इति नूतनामृतसागरे चिकित्साखण्डे भग्नरोग-नाड़ीव्रणरोग यत्ननिरूपणं नाम द्वात्रिंशस्तरंगः ॥ ३२ ॥

भगन्दर-उपदंश।

भगन्दरस्य रोगस्य चोपदंशस्य वै क्रमात् ॥
रामाग्निप्रमिते भंगे चिकित्सा लिख्यते मया ॥ ३३ ॥

भाषार्थ–अबआगे तेतीसवें तरंगमें भगंदर और उपदंश रोगकी चिकित्सा यथाक्रमसे वर्णन करते हैं.

भगंदररोगयत्न १–वैद्यको चाहिये कि, भगंदरकी उत्पत्ति होतेही जोंक आदि किसी भी उपायसे वहाँका रुधिर इस प्रकारसे निकालदे कि, जिसमें फुन्सी न पकने पावे तो भगंदर दूर होगा.

तथा २–सांठीकी जड, गुर्च, सोंठ, मुलहटी और वडके कोमल पत्तोंको महीन पीसकर और पकाके सहता २ लेप करो तो भगंदर दूर हो.

तथा ३–चमेलीके पत्ते, बडके पत्ते, गुर्च, सोंठ और सैंधानोन इन सबको छाँछमें महीन पीसकर लेप करो तो भगंदर दूर हो.

तथा४–हल्दी, आकके पत्ते, सैंधानोन, गूगल और कनेरके पत्ते इनका चूर्ण तेलमें पकाकर वह तेल लगाओ तो भगंदर दूर हो.

तथा ५-गूगल, त्रिफला और पिप्पलीका १ टंक चूर्ण जलके साथ सेवन कराओ तो भगंदर, शोथ, गुल्म, अर्श ये सर्व नाश हों. इसे नवकार्षिका गूगल कहते हैं.

तथा ६-चतुर वैद्य या साथिया भगंदरके व्रणको चीरकर उसपर व्रणयत्न लिखित मलहमादि लगावे तो भगंदर दूर हो.

तथा ७-रसोत, दोनों हल्दी, निसोत, मँजीठ, नीमके पत्ते, तेजबल और दात्यूणीको महीन पीसकर भगंदरपर, लेपकरै और इन्हींके जलसे धोवे तो भगंदर दूर हो.

तथा ८-कुत्तेकी हड्डीके चुवे (मज्जा) को गधेके रक्तमें पिसकर लेप करो तो भगंदर दूर हो.

तथा ९-बिल्लीकी हड्डी त्रिफलाके रसमें पीसकर लेप करो तो भगंदर दूर हो.

तथा १०-बिल्लीकी हड्डीकी राख और कुत्तेकी हड्डीकी राख दोनोंको गोघृतके साथ लोहेके पात्रमें घिसकर लेप करो तो भगंदर दूर हो.

तथा ११-२ भाग शुद्ध पारा और ४ भाग ताँबेका मैल, काकलहरीके रसमें १५ दिन खरल करके ताँबेके सम्पुटमें बंद करदो और उस सम्पुटको बालू भरी हंडीके बीचमें धरके ८ प्रहर पर्यंत आँचदो स्वाँग शीतल होजानेपर निकालकर उसमें घी, मधु और सुहागा, मिलाओ तदनंतर इस मिश्रणको पक्की मूसमें धरकर आँचदो (जैसे सुनार चाँदी गलानेमें नलीसे फूंक देता है)जब वह पदार्थ उसीमें घूमने लगे तब निकालकर उसमेंसे ३ रत्तीकी मात्रा मधुके साथ दो और ऊपरसे त्रिफलाका क्काथ पिलाकर पथ्यसे रक्खो तो भगंदर निश्चय अच्छा होगा. इसे रूपराजरस कहते हैं.

तथा १२-१ भाग पारा, २ भाग आँवलासार गंधक, दोनोंकी कजली को ग्वारपाठेके रसमें खरल करके ताँबेके सम्पुटमें बंद करो और इस सम्पुटको राखभरी हंडीमें गाडकर १ दिनपर्यंत आँचदो अनंतर स्वाँग शीतल (आपही आप ठंढी) हो जानेपर निकालकर जम्भीरीके रसकी ७ पुट दो जो इसमेंसे १रत्तीकी मात्रा मधु या घीके साथ चटाकरके ऊपरसे मूली या लहसन पिलाओ तो भगंदर दूर हो, इसके सेवनवालेको मीठा आहार,

दिनमें निद्रा, मैथुन और शीतल भोजनका बचाव करना चाहिये. इसे रविसुंदररस कहते हैं, यह रससिंधुमें लिखा है.

तथा १३—तिल्ली, नीमकी छाल और महुआ इन सबको शीतल जलके साथ पीसकर लेप करो तो पित्तजभगंदर दूर हो.

भगंदरपर वर्जित पदार्थ—श्रम, मैथुन, युद्ध, घोड़े आदिपर चढ़ना और ऊगा हुआ (अंकुरित) अन्न खाना, भगंदर अच्छा होनेपर भी १ वर्ष पर्यंत वर्जित हैं. ये सब भावप्रकाशमें लिखे हैं.

उपदंशरोगयत्न १—जोंक लगाकर रोगस्थानका रक्त निकलवा दो तो उपदंश दूर हो. परन्तु घाव पकना नहीं चाहिये.

तथा २—सांठीकी जड, गिलोय, सोंठ, मुलहटी और बडके कोमल पत्तोंको जलमें औटाकर इस जलसे लिंगेंद्रियको धोओ तो उपदंश दूर हो.

तथा ३—लिंगेंद्रियकी शीर (फस्त) छुडवाओ तो उपदंश अच्छा होगा.

तथा ४—बडके कोमल पत्ते, काहूकी छाल, जामुनकी छाल, लोद, हरेकी छाल और हलदी इन सबको जलमें पीसकर लेप करो तो गर्मी दूर हो.

तथा ५—चतुर्थ यत्नोक्त (ऊपरको लिखा सो) औषधोंके जलसे धोओ तो लिंगेंद्रियका शोथ तथा पकाव भी दूर हो.

तथा ६—त्रिफलाके क्वाथ या भांगरेके रस या कमलके जलसे धोओ तथा लेपकरो तो उपदंश दूर हो.

तथा ७—मिझने (मारवाडमें प्रसिद्ध) वृक्षकी छाल, अथवा अनारकी छालको जलमें पीसकर लेप करो तो उपदंश दूर हो.

तथा ८—सुपारी जलमें घिसकर इन्द्रियपर लगाओ तो गर्मी अच्छीहो.

९—त्रिफलाको कडाहीमें जलाकर उस भस्मको मधुके साथ इन्द्रियपर लेप करो तो उपदंश दूर हो.

तथा १०—पटोल, नीमकी छाल, त्रिफला, चिरायिता, खैरसार, विजयखार और गूगल इनका क्वाथ पिलाओ तो गर्मी दूर हो.

तथा ११—चिरायता, नीमकी छाल, त्रिफला, पटोल, कणगचकी जड, आँवला, खैरसार और विजयखारका क्वाथ घृतमें पकाकर इस घीका लेप या भोजनके साथ खिलाओ तो उपदंश दूर हो. इसे भूनिंबादिघृत कहते हैं.

तथा १२–कुष्ठ और व्रणयत्नलिखित घृतोंका लेप करो या खिलाओ तो उपदंश दूर होगा.

तथा १३–विरेचन दो तो उपदंश दूर हो.

तथा १४–८ पैसेभर बड़ी हर्र, १ पैसेभर श्वेत कत्था, १ पैसेभर नीलाथूथा इन सबको १०० पक्के नींबूके रसमें खरल करके १ मासे प्रमाणकी गोलियाँ बनाओ और प्रतिदिन दहीके साथ १ गोली १५ दिनतक खिलाकर पथ्यसे रक्खो तो गर्मी नाश हो.

तथा १५–१ भाग नीलाथोथा, १ भाग कत्था, २ भाग मुर्दासिंगी और २ भाग सुपारीकी राखको महीन पीसकर उपदंशपर भुरकाओ तो छाले सूखकर उपदंश मिटजावेगा.

तथा १६–शुद्ध पारा, शुद्ध गन्धक, हरताल, सिंदूर और मैनासिलको ताँबेके पात्रमें ताँबेके घोटेसे घृतके साथ ३ दिनतक घोटकर इन्द्रीपर लेप करो तो उपदंश दूर हो, ये सब यत्न भावप्रकाशमें लिखे हैं.

लिंगवर्ती यत्न १–मसे दूर होनेकी औषधोंसे इसकी चिकित्सा करो तो लिंगवर्त्ती (लिंगार्श) दूर होगा.

शूकरोगयत्न १–१ विष दूर करनेसे यत्न करो, २ जोंक लगाकर इन्द्रियका विकारी रक्त निकाल दो, ३ लिंगविरेचन अर्थात् इन्द्रिय जुलाब दो, ४ अल्पाहार कराओ, ५ त्रिफलाके क्वाथके साथ गूगल सेवन कराओ ६ औषधोंके लेप तथा सेंक लगाओ, ७ खरैंटीका तेल मर्दन करो ८ शीतल प्रयत्न करो और ९ दारुहल्दी, तुलसी, मुलहटी, धमासा इन्हें तेलमें पकाकर उस तेलका मर्दन करो. ये नवों यत्नमेंसे प्रत्येक यत्न १८ हों प्रकारके शूकरोगोंको नाश कर सक्ता है, ये सब यत्न सर्व संग्रहमें लिखे हैं.

इति नूतनामृतसागरे चिकित्साखण्डे भगंदरोपदंशलिंगवर्त्तीशूकरोगाणां यत्ननिरूपणं नाम त्रयस्त्रिंशस्तरंगः ॥ ३३ ॥

कुष्टरोग।

चिकित्सा कुष्ठरोगस्य नराणां सुखदायिनी ॥
वेदवैश्वानरे ह्यस्मिन् तरंगे कथ्यते मया ॥ ३४ ॥

भाषार्थ–अब हम इस चौंतीसवें तरंगमें मनुष्योंको सुख प्राप्त करनेवाली कुष्ठरोगकी चिकित्साका कथन करते हैं.

कुष्ठरोगयत्न १–हर्रकी छाल, कणगचकी जड़, सरसों, हल्दी, बावची सैंधानोन और नागरमोथा इन सबको गोमूत्रमें पीसकर कुष्ठपर लगाओ तो कुष्ठ अच्छा हो. इसे पथ्यादि लेप कहते हैं.

तथा २–बावचीके चूर्णको अद्रखके रसकी पुट देकर कुष्ठपर उबटन करो तो कुष्ठ दूर हो.

तथा ३–निम्बपंचांग, दोनों हल्दी, त्रिफला, सोंठ, कालीमिर्च, पिप्पली, ब्राह्मी, गोखरू, शुद्ध भिलावाँ, चित्रक, वायविडंग, सार, वाराहीकंद, गुर्च, बावची, किरमाला, मिश्री, कूट, इन्द्रयव, पाठा और खैरसार इन सबके चूर्णको नागरमोथाके रसकी १ पुट, निम्बपंचांगकी ७ पुट और भांगरेके रसकी ७ पुट देकर छायामें सुखालो तदनंतर पीसकर इसमेंसे अधेलेभर चूर्ण शुभदिनसे मधु या खैरसारके क्वाथके साथ प्रातःकाल उष्ण जलसे कुष्ठरोगीको यह विरेचन दो और अनुदिन कुछ कुछ बढाते बढाते २ टकेतक बढाकर ऊपरसे घृतसहित हलका भोजन कराओ तो विचर्चिका, उदुम्बर, पुंडरीक, दाद, कापालिक, किटीभ, अलस, सतारु, विस्फोटक इतने सब कुष्ठ तथा विसर्परोग ये सब दूर होवेंगे. यह निम्बपंचांगावलेह ब्रह्माजीने मार्कण्डेयऋषिजीको बताया है.

तथा ४–पाँच टकेभर बावची, ५ टकेभर शुद्ध गूगल, ३ टकेभर शुद्ध सोनामक्खी, २ टकेभर सार, ३ टकेभर गोरखमुंडी, १ टकेभर कणगच, ४ टकेभर खैरसार, २ टकेभर गुर्च २ टकेभर निसोत, २ टकेभर नागरमोथा, १ टकेभर वायविडंग, १ टकेभर हल्दी, १ टकेभर तज, ५ टकेभर निंबपंचांग, ३ टकेभर त्रिफला और २ टकेभर चित्रक इन सबका चूर्ण घृत और मधुके साथ मिलाकर २ टंकप्रमाणकी गोलियाँ बनालो और प्रतिदिन प्रातःकाल १ गोली गोमूत्रके साथ सेवन कराओ तो कुष्ठमात्र, वातरक्त, पांडुरोग, उदररोग, प्रमेह और गुल्म ये सब दूर होकर वृद्ध भी तरुणसदृस बलवान् होजाताहै इसे स्वायम्भुवगूगल कहते हैं.

तथा ५–चित्रक, त्रिफला, सोंठ, मिर्च, पिपली, जीरा, कलौंजी, वच, सैंधानोन, अतीस, चव्य, कूट, इलायची, जवाखार, वायविडंग,

अजमोद, नागरमोथा, देवदारु और इन सबके समान शुद्धगूगल इन सबके चूर्णको मधुके साथ ४ मासे प्रमाणकी गोलियाँ वनाकर एक गोली नित्य भोजनके समय खिलाओ तो कुष्ठमात्र, व्रणमात्र, कृमि, संग्रहणी, मुखरोग, अर्श, गृध्रसी और गुल्म ये सब रोग दूर होवेंगे. इसे किशोर-गूगल कहते हैं.

तथा ६–१ सेर शुद्ध भिलावाँ १६ सेर जलमें औटाकर औटते समय २ सेर गुर्च कूटकर डालदो औटते औटते चतुर्थांश रहजानेपर उतारकर छानलो और इसमें १ सेर गोघृत, ४ सेर गोदुग्ध, १ सेर मिश्री, ऽ॥आधा सेर मधु मिलाकर मंद मंद आँचसे पकाओ, दृढ हो जानेपर उतारकर उसमें बावची, पवाँरके बीज नीमकी छाल, हरंकी छाल, आँवले, सैंधव, नागरमोथा, इलायची, नागकेशर, पित्तपापड़ा, पत्रज, नेत्रवाला, खश, चंदन, गोखरू, कचूर और रक्तचंदन ये सब दो दो टंकका महीन चूर्ण मिलादो जो इसमेंसे प्रतिदिन १ टकेभर प्रातःकाल जलके साथ सेवन कराओ तो समस्त कुष्ठमात्र, वातरक्त और अर्श ये सब रोग दूर होवेंगे. इसके सेवनपर श्रम करना, घाममें विचरना, अग्नि तापना, खटाई, मांस, दही खाना, तैलमर्दन और मार्गगमन इतने कर्म वर्जित हैं. इसे अमृत-भल्लातकावलेह कहते हैं.

तथा ७–नीमकी छाल, गौरीसर, मँजीठ, त्रायमाण, त्रिफला, नागर-मोथा, पित्तपापडा, बावची, जवासा, वच, खैरसार, रक्तचंदन, पाठा, सोंठ, भारंगी, अडूसा, चिरायता, कूडेकी छाल, इन्द्रायणकी जड, चित्रक, गुर्च निसोत, मूर्वा, वायविडंग, इन्द्रयव, मानपात (रामबाण) बकायन, पटोल, दोनों हल्दी, पीपली, किरमालेका गूदा; कलहारीकी, जड, सतोन्यू, (औषधविशेष) शुद्धवेत, चिरमू, रास्ना, सांठीकी जड, दात्यूणी, शुद्ध जमालगोटा, भांगरा, कठसेला; अंकोटक, सारवोटक (भूतावास) ये सवदो दो टकेभर कूटकर १६ सेर पानीमें औटाओ और चतुर्थांश रहजानेपर उतारकर छानलो तदनंतर ४ सेर शुद्ध भिलवाँ १६ सेर जलमें औटकर चतुर्थांश रहजानेपर छानलो और पूर्व निर्मित ४ सेर पानीमें मिलाकर इस

१ एक प्रकारका कटीला पौधा जिसके पीत पुष्प महादेवजीको विशेष प्रिय होतेहैं।

२ एक प्रकारका कटीला वृक्ष जिसके बैंगनीफल जामुन सदृश होते है यह वृक्ष अकोल नामसे प्रसिद्ध है।

८ सेर पानीमें १०० टकेभर गुडकी चासनी बनाओ पश्चात् सोंठ, मिर्च, पिप्पली, नागरमोथा, वायविडंग, चित्रक, चंदन, कूट, अजमोद, पत्रज, नागकेशर, इलायचि, ये सब एक एक टकेभर सैंधानोन २ टकेभर, त्रिफला ३ टकेभर इन सबका चूर्णकर उक्त चासनीमें डालदो और शुभ दिन देख इसमें नित्य २ टकेभर खिलाकर खटाई और उष्ण वस्तुओंका पथ्य रक्खो तो कुष्टमात्र, व्रणमात्र, अर्श, कृमि, रक्तपित्त, उदावर्त, कास, श्वास, भगंदर ये सर्व रोग दूर होकर तरुणाई, शरीरकी कांति और क्षुधाकी वृद्धि होवेगी. इसे महाभल्लातकावलेह कहते हैं.

तथा ८–मजीठ, त्रिफला, कुटकी, वच, नीमकी छाल, दारुहल्दी और गुरच इन सबके ५ टंक चूर्णका क्वाथ प्रतिदिन पिलाओ तो कुष्ठमात्र, वातरक्त, विस्फोटक और विसर्प ये सर्व रोग दूर होवेंगे इसे लघुमंजिष्ठादिक्काथ कहतेहैं.

तथा ९–मजीठ, बावची, पवाड, नीमकी छाल, हर्रकी छाल, हल्दी, आँवले, अडूसा, शतावरी, खरैंटी, गँगेरनकी छाल, मुलहटी, महुआ, कटीयाली, पटोल, खश, गिलोय, रक्तचंदन इन सबके ५ टंक चूर्णका क्वाथ प्रतिदिन पिलाओ तो सब कुष्ट और वातरक्त दूर होगा, इसे मध्यममंजिष्टादि क्वाथ कहते हैं.

तथा १०–मजीठ, इन्द्रयव, गुरच, नागरमोथा, वच, सोंठ, हल्दी, दोनों कटियाली, नीमकी छाल, पटोल, कूट, भारंगी, वायविडंग, चित्रक, मूर्वा, देवदारु, जलभंगरा, पिप्पली, त्रायमाण, पाठ, शतावरी, खैरसार, विजयसार, त्रिफला, चिरायता, बकायन, किरमालेकी गिरि, निसोत, रक्त चंदन, बावची, वरुणा, दात्यूणी, साखोट, अडूसा, पित्तपापडा, गौरीसर, अतीस, जवासा और इन्द्रायनकी जड इन सबके ५टंक चूर्णका क्वाथ प्रतिदिन सेवन कराओ तो अठारहों प्रकारका कुष्ट, वातरक्त, रक्तविकार, विसर्प रोग और त्वचाशून्य ये सर्व रोग दूर हों, इसे बृहत्मंजिष्ठादि क्वाथ कहतेहैं.

तथा ११–कालीमिर्च, निसोत, नागरमोथा, हरताल, देवदारु, दोनों हल्दी, छड, कलौंजी, आकका दूध, गोबरका रस ये सब धेले धेलेभर १ पैसेभर सिंगीमोहरा, १ सेर कडुआ तेल, ४ सेर पानी और ८ सेर गोमूत्र इन सबको एकत्र कर मंदाग्निसे औटाओ [illegible] रसादिक जलकर तेलमात्र रहजानेपर उतार छानके मर्दन करो [illegible] त्र दूर हो, इसे लघुमरी च्या[illegible] तैल कहते हैं.

तथा १२–कालीमिर्च, निसोत, दात्यूणी, आकका दूध, गोबरका रस, देवदारु, दोनों हल्दी, छड, कूट, रक्तचंदन, इन्द्रायणकी जड, कलौंजी, हरताल, मैनसिल, कनैरकी जड चित्रक, नागरमोथा, कलहारीकी जड, वायविडंग, पवाँड, कूडेकी छाल, सिरसकी जड, नीमकी छाल, सतोनेकी छाल, गुरच, थूहरका दूध, किरमालेका गूदा, खैरसार, बावची, वच, मालकांगनी ये सर्व टके टकेभर, २ टकेभर सिंगीमुहरा, चार सेर कडुवा तेल और १६ सेर गोमूत्र इन सबको एकत्र कर मंद मंद आँचसे औटाओ और गोमूत्रादि जलकर तेलमात्र रहजानेपर छानके इस तेलका मर्दन करो तो कुष्ठमात्र, खुजली, ब्योंची, दाद, मुखछाया ये सब रोग दूर होंगे. यह तेल मनुष्य तो क्या बरन् हाथी घोडे आदि पशुओंको भी वातहारक और जीवनप्रद है इसे महामरीच्यादि तैल कहते हैं.

तथा १३–उत्तम हरतालके पत्रोंको चित्रकके रसमें १ दिन और सांठीके रसमें १ दिन खरल करके टिकिया बनाकर सुखालो, तदनंतर यह टिकिया सांठीके पंचाङ्गखारमें रखकर इस प्रकारसे दाबो कि जिसमें धुवाँ न निकलनेपावे और इसे चूल्हेपर चढ़ाकर मंद मंद बरती हुई आँचसे ४ दिन रात्रि निरंतर तपाके स्वांग शीतल होजानेपर निकाललो जो वह तालमें (पूर्ववत् पहिलेथी जितनी) निर्धूम और श्वेतवर्णकी हो आई हो तो उसमेंसे २ रत्तीकी मात्रा गुर्चके क्वाथके साथ सेवन कराओ तो अठारहों प्रकारका कुष्ठ, वातरक्त, उपदंश, फिरंगवायु ये सब रोग दूर होंगे इसके सेवनकरनेवालेको नोन, खटाई, कटुरस और धूपमें फिरना निषिद्ध है यदि नोन बिना न रहसके तो सैंधानोन और मिठाई खिलाओ, इसे तालकेश्वररस कहते हैं.

तथा १४–पारा शुद्धगंधक, ताँबेश्वर, लोहसार, गूगल, चित्रक, शिलाजीत, कुचला, वच, अभ्रक और किसी १ के प्रमाणसे चौगुने कणगचके बीज, इन सबके चूर्णको पारे गंधककी कजली मिलाकर इसमेंसे २ टंक मिश्रण मधु और घृतके साथ सेवन कराओ और ऊपरसे चावलहंस खिलाओ तो गलितकुष्ट भी दूरहोकर रोगीका शरीर कामदेव सदृश सुन्दर हो जावेगा. इसके भक्षण समयमें स्त्रीसंग करना वर्जित है. इसे गलितलघ्वादि रस कहते हैं.

विभूतिकुष्ठयत्न १—कूट, मूलीके बीज, सरसों, केशर और हल्दीको सिरसके जलमें पकाकर लेप करो तो बहुत पुरानी विभूति भी दूर होगी.

तथा २—केलेका खार, हल्दी, दारुहल्दी, मूलीके बीज, हरताल, देवदारु और शंखका चूना इनको नागरबेलके पानके रसमें महीन पीसकर लेप करो तो विभूति (सेहुआँ) दूर हो.

चर्मदलकुष्ठयत्न १—अमचूर और सैंधानोन जलके साथ ताम्रपात्रमें ताँबेके घोटेसे महीन पीसकर लेप करो तो चर्मदल दूर हो.

पामायत्न १—१ टकेभर जीरा और ५ टकेभर सेंदुर कडुवे तेलमें पीसकर पकाके लेप करो तो पामा (खुजली) अच्छी हो.

तथा २—मजीठ, त्रिफला, लाख, कलहारीकी जड, हल्दी और आँवलासार गंधक इन सबको पीसकर घाममें उष्ण करो और लेपकरो तो पामा (खुजली) दूर हो.

तथा ३—पारा, दोनों जीरे, दोनों हल्दी, कालीमिर्च, सिंदूर, आँवलासार गंधक इन सब औषधोंके चूर्णको पारेगंधककी कजलीके साथ गोघृतमें १ दिन खरल करके मर्दन करो तो पामा दूर हो.

तथा ४ पारा और आँवलासार गन्धककी कजली, नीलाथोथा, हल्दी, मेहदी, तीव्रा, अजवायन, मालकाँगनी इन सबका चूर्ण और घृतमें पिघलाया हुआ मोम इन सबको गौके घृतमें १ दिन पर्यंत खरल करके मर्दन करो तो पामा (खुजली) आदि रुधिर विकार सर्व दूर हों.

तथा ५—२ टंक शुद्ध आँवलासारगन्धक और तीन मासे नीलाथोथा दोनों पानीके साथ महीन पीसकर गोली बनाओ और इस गोलीको महीन कपडेमें बाँधकर गेहूंके मसले हुए अलोने आटेसे छापदो फिर उस गोलीसहित आटेकी बाटी बनाकर सेंक डालो तदनंतर वह गोली कपडे सहित निकालकर दूसरी बाटीमें धरो इसीप्रकार चार पाँच बाटियाँ बनाकर घीमें तलडालो या घी शक्करमें चूरमा (मलीदा) बनालो जो यह चूरमा इसी प्रकार ५ दिनतक नित्य खिलाओ तो पामा (खुजली) आदि समस्त रक्तविकार दूर होवेंगे.

तथा ६—सैंधानोन, पवाँरके बीज, सरसों और पिप्पलीको काँजीमें महीन पीसकर लेप करो तो पामा नाश हो.

कच्छदादयत्न १–आकके पत्तोंका रस, हलदीका क्वाथ और कडुवा तेल इन तीनोंको एकत्र कर मंदाग्निसे पकाओ रस जलकर तेल मात्र रह-जानेपर छानकर मर्दन करो तो कच्छदाद दूर हो. यह अर्कतैल कहाता है.

तथा २–मैनसिल, हीराकसीस, आँवलासारगंधक, सैंधानोन, सोनामक्खी, पत्थरफोडी, सोंठ, पिप्पली, कलहारी, कनेर, पवाँर, वायविड़ंग, चित्रक, दात्यूणी और निम्बके पत्ते ये सब अधेले अधेलेभर लेकर जलके साथ महीन पीसो और इस पानीको २ सेर कडुवे तेलके साथ पकाकर पकतेही समय इसमें आकका दूध, थूहरका दूध छटाक छटाकभर और ४ सेर गोमूत्र डालदो जब जलते २ रसादिक जलकर तेलमात्र अवशिष्ट रहजावे तब छानकर मर्दन करो तो असाध्य कच्छदाद, पामा, खुजाल, तथा रुधिरप्रकोपज समस्त रोग दूर होवेंगे, इसे कच्छराक्षसतैल कहते हैं.

दद्रुकुष्ठयत्न १–कूट, वायविडंग, पवाँड़के बीज, सरसों, तिल, सैंधानोन इन सबको खटाईसे महीन पीसकर लेप करो तो दद्रु नाश हो.

तथा २–दूब, हरेंकी छाल, सैंधानोन, पवाँरके बीज, कनेरकी छाल इन सबको काँजी या छाँछमें पीसकर लेप करो तो दाद, कच्छदाद और खुजाल ये सब दूर होवेंगे.

श्वित्रकुष्ठयत्न १–बहेडेकी छाल,हरेंकी छाल, कटूंबर (कैथाका गूदा) और बावची इनका क्वाथ पिलावो तो श्वित्रकुष्ठ दूर हो.

तथा २–हरताल, मैनसिल, चिरमी और चित्रक इनको गोमूत्रमें महीन पीसकर लेप करो तो श्वित्रकुष्ठ दूर हो.

तथा ३–विष्णुक्रांति (तिलकंठी) शंखाहोली, बावची, खैरसार और आँवलेके चूर्णका सेवन करके पथ्यसे रक्खो तो श्वित्रकुष्ठ दूर हो ये सर्व यत्न भावप्रकाशमें लिखे हैं.

तथा ४–४ टकेभर हल्दी, ६ टकेभर गौका घी, ४ सेर दूध ५० टकेभर मिश्री, १ टकेभर सोंठ; १ टकेभर कालीमिर्च, १ टकेभर पिप्पली, १ टकेभर तज, १ टकेभर पत्रज, १ टकेभर वायविडंग, १टकेभर नागकेशर, १टकेभर निसोत, १ टकेभर त्रिफला, १ टकेभर केशर और १ टकेभर नागरमोथा इन सबको जुदे जुदे पीसकर घीमें सानलो और हल्दीका चूर्ण दूधमें डालकर दूधका खोवा बनालो, तदनंतर मिश्रीकी चासनीमें यह घीयुक्त

औषधी और हल्दीयुक्त खोवा डालकर १ टके प्रमाणकी गोली बनालो जो इसकी गोली नित्य खिलाओ तो कुष्ठ, खुजली, फोड़े और दाद ये सब रोग दूर होवेंगे, इसे हरिद्रखण्ड कहते हैं.

तथा ९-पवाँरके बीज, बावची, सरसों, तिल, कूट, दोनों हल्दी और नागरमोथा इनको छाँछमें पीसकर लेप करो तो खाज; व्योंची ये सर्व रोग दूर हों.

कुष्ठमात्रयत्न १-उत्तम, निर्धूम, श्वेत और बोझमें पहिलेके समान तबकिया हरतालकी भस्ममेंसे १ रत्तीकी मात्रा पुराने गुडके साथ २१ दिन पर्यंत सेवन करके ऊपरसे चनेकी रोटी, साँठी धानके चावल, और गौका घृत खिलाओ और नोन, खटाईका पथ्य रक्खो तो १८ अठारहों प्रकारके कुष्ठ वातरक्त और फिरंगवात ये सब दूर होंगे.

तथा २-२ टंक पारा, २ टंक शुद्ध गंधक, २ टंक हरताल, २ टंक मैनसिल, ९ टंक बावची,२ टंक धमासा, २ टंक सिंदूर, २ टंक दोनों हल्दी इन सबको गौके घीमें महीन पीसकर लेप करो और दो प्रहरपर्यंत धूपमें बिठालकर स्नान कराओ तो कंडु, दद्रु, कृमि और सर्व कुष्ठमात्र २ दिनमें नाश होवेंगे. (धूपमें शक्ति देखके बैठाना.)

तथा ३-२९ टकेभर पलाशकी जडके सूखे बक्कलोंको जलाकर इनकी राखको दृढ़ कोरी (नवीन) हंडीमें भरदो और इस राखके बीचमें २९मासे उत्तम तबकिया हरताल दबाकर हंडीका मुँह सराईसे ढांक दो तदनंतर इसे कपडमिट्टीसे बंद करके सुखालो इस सूखी हंडीको चूल्हेपर चढाकर ११ ग्यारह प्रहरपर्यंत आँच दो और स्वांग शीतल होजानेपर हरतालसहित राखको पीसकर कपडछान करके इसमेंसे १ रत्तीकी मात्रा १ मासे कच्चे (बिनसेंके) जीरेके चूर्णके साथ पानमें रखकर खिलाओ और ऊपरसे शीतल जल पिलाकर पवन और धूपके बचावसे चनेकी अलोनी रोटी खिलाओ तो १ मंडल (४० दिनका मंडल) पर्यंत सेवन करनेसे १८प्रकारके कुष्ठमात्र,व्रणमात्र,वातरक्त,पिडिका और वातव्याधि ये सब रोग दूर होवेंगे.

तथा ४-१ टंक नीलाथोथा, १ टंक सुहागा और ९ टंक बावचीको जलभंगरेके रसकी ७ पुट देकर लेप करो तो कुष्ठमात्र दूर हों ये सब यत्न वैद्यरहस्यमें लिखे हैं.

तथा ८-८टंक पारा, शंखका खार, आधेझारेका खार, तिलखार, साठीका खार, हर्रका खार, अडूसेका खार, पटोलका खार, अरंडका खार, जवाखार, सज्जी, सुहगा, नौसादार, आँवलासार, गंधक, पांचोंनोन, कूट, सोंठ, कालीमिर्च, पिप्पली, डाँसरेकी जड, कणगचकी जड, कलिहारीकी जड, हल्दी, जमींकंद, गोरखमुंडीका खार, काहूका खार, पिप्पलीका खार, राई, सरसों, सिंदूर, शिलाजीत, पापडखार, कपोल, लोध, थूहरकी जड, आककी जड, नीलाथोथा, चित्रक और अर्कपंचांगखार, इन सबको एक एक टके भर लेके गोमूत्रके साथ पीसलो, तदनंतर यह औषधी मिश्रण, महिषीमूत्र, अश्वमूत्र, अजामूत्र, हस्तीमूत्र, उष्ट्रमूत्र, नींबूका रस, जंभीरीका रस, विजैरेका रस, नारंगीका रस, चनाखार, मुंगनेका रस और राईके संयोगकी बनीहुई सात धान्यकी कांजी ये सब एक ताम्रपात्रमें एकत्रकर उसका मुख बंदकरदो और २१ दिन रक्खो रहनेके पश्चात् इसका लेपकरो तो समस्त कुष्टमात्र, गंडमाला, विसर्प, अर्श और वातरोग ये सब १मासके लेपसे दूर होवेंगे,यह कुष्टमहालेप रससंग्रहमें लिखा है.

इति नूतनामृतसागरे चिकित्साखण्डे कुष्ठादि यत्ननिरूपणं नाम चतुस्त्रिंशतिस्तरंगः ॥ ३४ ॥

अथ शीतपित्त-उदर्द-कोढ-उत्कोढ-अम्लपित्त-विसर्प ।

शीतपित्तादिरोगाणामम्लपित्तविसर्पयोः ॥
बाणरामतरंगेस्मिँल्लिख्यते रुक्प्रतिक्रिया ॥ ३५ ॥

भाषार्थ—इस ३५ पैंतीसवें तरंगमें शीतपित्त, उदर्द, कोढ, उत्कोढ, अमलपित्त और विसर्प रोगोंकी चिकित्सा यथाक्रमसे लिखते हैं.

शीतपित्त-उदर्द-कोढ-उत्कोढयत्न १—रोगीको वमन कराओ तो शीतपित्त और उदर्द दूर होंगे.

तथा २—पटोल, निम्बकी छाल, अडूसा, त्रिफला, गूगल और पिप्पलीका क्वाथ पिलाओ तो शीतपित्त, उदर्द दूर होंगे.

तथा ३—विरेचन (जुलाब) दो तो शीतपित्त, उदर्द दूर होंगे.

तथा४--मिश्रीके योगसे कुटकीका विरेचन दो तो शीतपित्त उदर्द जावेंगे.

तथा ५--शरीरमें कडुवे तेलका मर्दनकर उष्ण जलसे स्नान करो तो शीतपित्त और उदर्द दूर होवेंगे.

तथा६--मधुके साथ त्रिफलाका चूर्ण खिलाओ तो शीतपित्त उ० दूर होंगे.

तथा७-गुड़के साथ आँवलेका चूर्ण खिलाओ तो शीतपित्त उदर्द दूर होंगे.

तथा ८--अदरखके रसके साथ पुराने गुडका सेवन कराओ तो शीतपित्त उदर्द दूर होंगे.

तथा ९--सोंठ, अजवायन, कालीमिर्च, पिप्पली और जवाखार इनका २ टंक चूर्ण उष्ण जलके साथ ७ दिनपर्यंत सेवन कराओ तो शीतपित्त और उदर्द दूर होवेंगे.

तथा १०--६ टंक अजमोद और ५ टंक गुड दोनोंको इकट्ठे खरल करके सात दिनपर्यंत नित्य खिलाओ तो शीतपित्त उदर्द दूर होवेंगे.

तथा ११--सरसों, हल्दी और पवाँरके बीज तीनोंको कडुवे तेलमें महीन पीसकर लेप करो तो शीतपित्त उदर्द दूर हों.

तथा १२--बकायनकी शाखाकी ५ टंक छालको पीसकर गोघृतमें लो.

तथा १३--रक्तमोचन (फस्त) कराओ तो शीतपित्त उदर्द दूर होंगे.

तथा १४--आँवले और नीमके पत्ते घीमें तलकर उस घीमेंसे १ टंकेभर नित्य १५ दिनपर्यंत खिलाओ तो शीतपित्त, उदर्द, फोडे, रक्तपित्त, कृमि, कंडुरोग, कफरोग तथा रक्तदोषके रोग भी नाश होवेंगे.

तथा १५--सेरभर छिले हुए अद्रखके बारीक टुकडे अधसेर गोघृतमें मिलाकर दो सेर गोदुग्धमें डालदो तदनंतर इस दूधका खोवा बनाकर सेरभर मिश्रीकी पतली चासनीमें डालदो और पीपलामूल, मिर्च, सोंठ, चित्रक, वायविडंग, नागरमोथा, नागकेशर, तज, पत्रज, इलायची, कचूर, ये सब एक एक टकेभर पीसि छानकर चूर्ण बनालो फिर यह चूर्ण उपयुक्त चासनीमें डालकर एक जीव कर दो तो जो इसमेंसे १ टकेर नित्य सायंकालके समय खिलाओ तो शीतपित्त, उदर्द, कोढ़, उत्कोढ़, राजरोग, रक्तपित्त, श्वास, कास, अरुचि, वात, गुल्म, उदावर्त, शोथ, खुजाल, कृमि और उदररोग ये सब दूर होकर बल, वीर्य और पुष्टता प्राप्त होवेगी इसे आर्द्रक खंडावलेह कहते हैं. ये सर्व यत्न भावप्रकाशमें लिखे हैं.

पित्तियत्न १६–सैंधानोन घीमें पीसकर शरीरको मर्दन करो और लाल कम्बल उढ़ाओ तो (शीतपित्तादि उपद्रवरूप पित्तिनाम एक प्रसिद्ध रोग) नाश होवेगा.

तथा १७–गोघृत, गेहू, सैंधानोन और कुसुम्भपुष्पोंको खरल करके शरीरमें उबटन करो तो पित्ति शमन हो.

तथा १८–चिरायता, अडूसा, कुटकी, पटोल, त्रिफला, रक्तचंदन और नीमकी छालका क्वाथ सेवन कराओ तो पित्ति, पित्तरोग, फोड़े, दाह, ज्वर, मुखशोष, तृषा और वमन ये सब दूर होंगे.

तथा १९–जंगली कंडा (छेना, उपली, गोवरी) की राख (भस्म) शरीरमें मर्दन करो तो पित्ति दूर हो.

तथा २०–नागरबेलके पानके रसमें फिटकरीको महीन पीसकर मर्दन करो तो पित्ति मिटजावे.

तथा २१–१ टकेभर लहसन खिलाओ, या ५ टंक त्रिफलाका चूर्ण मधुके साथ चटाओ तो पित्ती मिट जावेगी.

तथा २२–१टकेभर मेथीदाने, १ टकेभर कालीमिर्चं, १ टके भर हल्दी इन तीनोंको महीन पीसकर अद्रखके रसकी ३ पुट दो और २ टंक प्रमाणकी गोलियाँ बनाकर १ गोली नित्य खिलाओ तो पित्तिके समस्त विकार दूर होंगे. ये सब यत्न वैद्यरहस्यमें लिखे हैं.

अम्लपित्तयत्न १–पटोल, नीमकी छाल और अडूसा इनका क्वाथ पिलाकर वमन कराओ तो अम्लपित्त शांत हो.

तथा २–मैनफल और सैंधानोन मधुके साथ चटाकर वमन कराओ तो अम्लपित्त दब जावेगा.

ताथा ३–विरेचन देनेसे भी अम्लपित्त दब जाता है.

तथा ४–निसोत और आँवला मधुके साथ चटाकर विरेचन कराओ तो अम्लपित्त शांत हो जावेगा.

तथा ५–ऊर्ध्वभागी अम्लपित्त वमनसे और अधोभागी अम्लपित्त विरेचनसे दूर होवेगा.

तथा ६–यव या गेहूं या चावलका सत्तू मिश्रीके साथ खिलाओ तो अम्लपित्त शांत होवेगा.

तथा ७–जौ (यव) अडूसा, आँवला, तज, पत्रज और इलायचीका क्वाथ मधुके साथ पिलाओ तो अम्लपित्त दूर हो.

तथा ८–गुर्च, निम्बछाल, पटोलका क्वाथ मधुके संयोगसे पिलाओ तो अम्लपित्त दूर होगा.

तथा ९–अडूसा, गुर्च, पित्तपापड़ा, चिरायता, नीमकी छाल, जल भंगरा, त्रिफला और कुल्थीके क्वाथमें मधु डालकर पिलाओ तो अम्ल पित्त दूर हो. इसे दशांगक्वाथ कहते हैं.

तथा १०–भोजनके पश्चात आँवलेका रस पिलाओ तो अम्लपित्त वमन, अरुचि, दाह, तिमिर, मोह और मूत्रदोष ये सर्व रोग दूर होकर वृद्ध भी तरुण होजावेगा.

तथा ११–पक्के पेठेकी छाल और बीज निकालकर कूटके १०० टकेभर रस निकालो,यह रस १००–टकेभर गोदुग्ध,८टकेभर आँवलोंका चूर्ण,आठ टकेभर मिश्री और ८ टकेभर गोघृतके साथ मिट्टीके वर्त्तनमें डालकर मंद मंद आँचसे पकाओ और औटते औटते अवलेहकी चासनी सदृश होजानेपर उतारकर ९ टंकभर या १टकेभर नित्य खिलाओ तो अम्लपित्त दूर हो.

तथा १२–नारियलका खोपरा छीलकर खरलमें महीन पीसो और गौके दूधमें डालकर खोवा बनाओ, और खोपरेसे चौगुणे बिनौलेके रसमें शक्करकी चासनी बनाकर उक्त खोवेमें मिलादो, तदनंतर धनियां पीपलामूल, तज, पत्रज, नागकेशर और इलायची ये सब एक एक टंक महीन पीसकर इनका चूर्ण भी चासनीमें डालदो और सबको भली भाँति मिश्रित कर ९ टंक या एक टके प्रमाणकी गोलियाँ बनाकर १ गोली नित्य खिलाओ तो अम्लपित्त, रक्तपित्त और शूल ये सब दूर होंगे. इसे नारिकेलखंड कहते हैं. ये सर्व यत्न भावप्रकाशमें लिखे हैं.

तथा १३–१भाग द्राक्ष (धोकर बीजे निकालदो) का गूदा, १ भाग बडी हरोंकी छालका चूर्ण और २ भाग मिश्री इन तीनोंको खरल कर १ टंक प्रमाणकी गोलियाँ बनाओ और १ गोली नित्य खिलाओ तो अम्लपित्त, हृदय तथा कंठकी दाह, तृषा, मूर्च्छा, चक्र, मंदाग्नि और आमवात ये सर्व रोग दूर होंगे-इसे द्राक्षादिगुटिका कहते हैं.

तथा १४–सोंठ, कालीमिर्च, पिप्पली, त्रिफला, इलायची, नागरमोथा, वायविडंग और पत्रज ये सब तुल्य भाग इन सबके समान लौंग इन सबसे दूनी निसोत तथा इन समस्त औषधोंके समान मिश्री लेकर सबका कपडछानकर चूर्ण करडालो जो इसमेंसे २ टंक चूर्ण शीतल जलके साथ सेवन कराओ तो अम्लपित्त दूर हो, इसे अविपित्तक चूर्ण कहते हैं.

विसर्परोगयत्न १--वमन, विरेचन, रक्तमोचन और औषधोंका लेप औषधियोंका तेल लगाना ये प्रत्येक कार्य विसर्परोगको नाश करनेवालेहैं.

वातविसर्प यत्न२–रास्ना, कमलगट्टा, देवदारु, खरेटी रक्तचंदन और महुआ इन सबको दूध या घृतमें महीन पीसकर लेपकरो तो वातजविसर्प दूरहो.

पित्तजविसर्पयत्न ३–किशोरे, सिंघाडे, कमलगट्टे, जलका सेवार (काई) और रक्तचंदन इन सबको धोये हुए गोघृतमें खरल करके या शीतल जलमें महान पीसकर लेप करो तो पित्तजविसर्प दूर हो.

कफजविसर्पयत्न ४–त्रिफला, कमलगट्टे, खश, लजनी (लजालू) जवासा, कनेरमूल और नरसलकी जडको जलमें महीन पीसकर लेप करो तो कफका विसर्प दूर हो.

विसर्पमात्रयत्न ५–सिरसकी जड, मुलहटी, रक्तचंदन, इलायची, छड, तगर, तीनों हलदी, और नेत्रवाला इन सबको जलमें पीसकर लेप करो तो विसर्पमात्र दूर हो.

तथा ६–चिरायता, अडूसा, कुटकी, पटोल, त्रिफला, रक्तचंदन और नीमकी छाल इनके २ टंक चूर्णका काथ पिलाओ तो विसर्प, दाह, ज्वर, शोथ, खाज, फोडे और वमन इन सबका शमन होवेगा,

तथा ७–सतोन्यूके बक्कल, कणगच, कलहारीकी जड, थूहरका दूध, आकका दूध, चित्रक, जलभंगरा, हलदी, सिंगीमुहरा, ये सब टके टकेभर लेकर अधकुचले करो और २ सेर पानी २ सेर गोमूत्र, सेरभर तिल्लीके तेलके साथ एकत्र कर मंद मंद आँचसे पकाओ तदनंतर रसादिक जलकर तेल मात्र रहजानेपर छानके शरीरमें मर्दन करो तो विसर्प फोडे और व्योंची भी दूर होंगी ये सर्व यत्न भावप्रकाशमें लिखे हैं.

तथा ८–बडके जटा(परे)नागरमोथा, केलेका मध्यगर्भ (गाभा)इन तीनोंको धोयेहुए घीमें खरल करके लेप करो तो विसर्प और ग्रंथि भी दूर होंगी.

तथा ९–शिरसकी छालको १००बारके धोयेहुए घृतमें खरल करके लेप करो तो विसर्पमात्र दूरहो.

तथा १०–जोंक लगाकर रुधिर निकलवा दो तो विसर्प, कोढ़ और शीतला ये सब रोग दूर होवेंगे. ये सब यत्न वैद्यरहस्यमें लिखे हैं.

इति नूतनामृतसागरे चिकित्साखण्डे शीतपित्तोदर्दकोढोत्कोढाम्लपित्तविसर्परोगाणां यत्ननिरूपणं नाम पंचत्रिंशस्तरंगः ॥ ३५ ॥

अथ स्नायुक-विस्फोटक-मसूरिका फिरङ्गवात ।

चिकित्सा लिख्यते स्नायुक्-विस्फोटकमसूरिका ॥ फिरङ्गवातरोगाणां भङ्गे रसधनंजये ॥ ३६ ॥

भाषार्थ–इस ३६ छत्तीसवें तरंगमें स्नायुक्, विस्फोटक, मसूरिका और फिरंगवात रोगोंकी चित्सा क्रमानुसार लिखते हैं.

स्नायुकरोगयत्न १–५ टंक हींग शीतल जलके साथ ३ दिनपर्यंत नित्य सेवन कराओ तो स्नायुक् दूर होकर फिर कदापि न होगा.

तथा२–ऽ। पावभर घृत नित्य पान कराओ तो स्नायुकरोग दूर होगा.

तथा ३–तीन चार पैसेभर निर्गुंडीका रस नित्य पिलाओ तो तीनही दिनके सेवनसे स्नायुक (नहरुआ मिटजावेगा.)

तथा ४–कलौंजीको शीतल जलके साथ ७ दिनपर्यंत सेवन कराओ तो स्नायुक्रोग दूर होगा.

तथा ५–अरंडमूलका रस गोघृतके साथ ७ दिनपर्यंत सेवन कराओ तो स्नायुकरोग मिट जावेगा.

तथा ६–अतीस, नागरमोथा, भारंगी, सोंठ पिप्पली और बहेडेकी छालका २ टंक चूर्ण नित्य उष्ण जलके साथ सेवन कराओ तो स्नायुकरोग दूर हो.

तथा ७–सहिंजनेकी जड और पानको कांजीमें पीसकर सैंधानोनके साथ स्नायुकपर बाँधो तो स्नायुक (नहरुआ)दूर होगा.

तथा ८–कटियालीकी जडको जलमें पीसकर बाँधो तो स्नायुक (बाला) निश्चय दूर हो. ये सर्वयत्न भावप्रकाशमें लिखे हैं.

तथा ९–कूट, सोंठ, सहिंजनेकी जड इन तीनोंको जलमें महीन पीस कर लेप करो या पिलाओ तो स्नायुकरोग दूर हो.

तथा १०–धतूरेके पत्तोंमें तेल लगाकर नहरुआपर बाँधो तो नहरुआ अच्छा होजावेगा.

तथा ११–बब्बूलके बीजोंको काँजीमें पकाकर बाँधो तो नहरुआ अच्छा होगा.

तथा १२–निम्नलिखित मंत्रसे गुड़को सातवार मंत्रित करके रोगीको खिलाओ तो उस्का नहरुआ अच्छा होजावेगा.

"ॐ द्विरूपनाथ वामनके पूत सूतकाटि किये बहुत पाके फूटे पीडा करै तो विरूपनाथकी आज्ञा फुरै" इति स्नायुनाशकमंत्रः ।

तथा १३–मधुके साथ पारावत (कबूतर) की विष्टाकी गोली बनाकर १ गोली नित्य सातदिन पर्यंत निगलवादो तो नहरुआ कभी न निकलेगा. ये सर्वयत्न वैद्यरहस्यमें लिखे हैं.

तथा १४–सज्जीको मधुके साथ पीसकर लेप करो तो स्नायुक दूर हो.

वातविस्फोटकयत्न १–रास्ना, दारुहल्दी, खश, कटियाली, गुर्च, धनियाँ और नागरमोथा इनका क्वाथ पिलाओ तो वातका विस्फोटक दूर होगा.

पित्तविस्फोटकयत्न २–दाख, कुम्भेर, पटोल, खारक, नीमकी छाल अडूसा कुटकी, जवाखार और चावलोंकी लाही इन सबका क्वाथ बनाकर पिलाओ तो पित्तविस्फोटक दूर हो.

कफविस्फोटकयत्न ३–चिरायता, वच, अडूसा, त्रिफला, इन्द्रयव, कुडेकी छाल और पटोल इनका क्वाथ मधुके साथ पिलाओ तो कफका विस्फोटक दूर हो.

विस्फोटकमात्रयत्न ४–लंघन, वमन, विरेचन और पथ्य भोजन पुराने चावल, यव, गेहूँ, मूँग, मसूर और हर्र सेवन ये सर्व कार्य विस्फोटक (शीतला) ग्रसित रोगीको लाभकारी हैं.

तथा ५–दशमूलका क्वाथ पिलाओ तो विस्फोटक शमन हो.

तथा ६–चिरायता, कुटकी, नीमकी छाल नागरमोथा, मुलहटी, पटोल, पित्तपापडा, खस, त्रिफला और कुडेकी छाल, इनका क्वाथ पिलाओ तो सर्व प्रकारका विस्फोटक दूर हो.

तथा ७–चावल और कुडेकी छालको जलमें पीसकर विस्फोटकके व्रण (फफोलों) पर लेप करो तो विस्फोटक अच्छा हो.

तथा ८–गुर्च, पटोल, चिरायता, अडूसा, नीमकी छाल, पित्तपापडा, खैरसार इन सबका क्वाथ पिलाओ तो विस्फोटक रोगजन्य ज्वर दूर होगा.

तथा ९–चंदन, नागकेशर, गौरीसर, चौलाईकी जड, शिरसका बक्कल और चमेलीके पत्ते इन सबको जलमें पीसकर लेप करो तो विस्फोटक अच्छा होगा.

तथा १०–कमलगट्टा, रक्तचंदन, लोध, खश और गौरीसर इनको जलके साथ महीन पीसकर लेप करो तो विस्फोटक अच्छा होगा.

तथा ११–जियापोतेकी मींगीको जलमें पीसकर लेप करो तो विस्फोटक, कक्षा, गलगंड, कर्णग्रंथि, फोडे, फुन्सी मात्र दूर होंगे ये सर्व यत्न भावप्रकाशमें लिखे हैं.

तथा १२–किशोर गूगल और दशांगका लेप भी विस्फोटक नाशक है.

(विशेषतः) यदि विस्फोटक पकजावे तो जंगली कंडोंकी राख रोगीकी शय्यापर बिछाकर सुलाओ. नीमकीडालो (झारे) से मक्खियाँ उडाओ इसके ज्वरमें शीतल जल पिलाओ. पवित्र होकर शीतलादेवीपर शीतल जलकी पवित्र धारा छोडो तथा शीतला देवीकी पूजा करो. विशेष यत्नभी मत करो यदि करनाभी हो तो ये यत्न करो.

शीतलाका यत्न १–हल्दीको शीतल जलमें घोलकर पिलाओ तो शीतलाके व्रण बहुत थोडे निकलैंगे.

तथा २–श्वेतचंदनको केलेके रसमें, या महुवेको अडूसेके रस किंवा मधुमें पीसकर पिलाओ तो शीतला (विस्फोटक) के व्रण बहुत थोडे निकलैंगे तथा दैवकृपासे नहीं भी निकलैं, ये दोनों उपाय शीतलाका पूर्व रूप होतेही करना चाहिये.

वर्त्तमानशीतलायत्न–जिस घरमें शीतलावाला बालक रहै उस घरके सन्मुख नीमके बन्दनवारे बाँधो. विस्फोटकजन्य ज्वर दूर करनेके लिये

१ पूर्वामृतसागरमें शीतलाका नाममात्र तथा चिकित्सा निदान विस्फोटकसे पृथक्भी लिखा है परंतु वैद्यशास्त्रमें विस्फोटक रोगपर शीतलादेवीका आराधन लिखेहै इसलिये हमने शीतलाकी निदान चिकित्सा विस्फोटकसे जुदी नहीं लिखी ।

चंदन, अडूसा, गुर्च और दाखका क्वाथ पिलाओ. श्रद्धा भक्तिसमेत जप, हवन, दान, ब्राह्मणभोजन, शिव अभिषेक आदि कराओ. तथा निम्नलिखित शीतलाष्टकका पठन कराओ तो उस बालककी रक्षा होकर शीतला देवीकी कृपापूर्वक विस्फोटक रोगसे छुटकारा होगा.

अथ शीतलाष्टकम्—स्कंद उवाच।

"भगवन् देवदेवेश शीतलायाः स्तवं शुभम् ॥ वक्तुमर्हस्यशेषेण विस्फोटक भयापहम् ॥ १ ॥ ईश्वर उवाच ॥ वन्देहं शीतलां देवीं सर्वरोगभयापहाम् । यामासाद्य निवर्तेत विस्फोटकभयं महत् ॥ २ ॥ शीतले शीतले चेति यो ब्रूयादाहपीडितः । विस्फोटकभयं घोरं क्षिप्रं तस्य विनश्यति ॥३॥ यस्त्वामुदकमध्ये तु धृत्वा सम्पूजयेन्नरः । विस्फोटकभयं घोरं कुले तस्य न जायते ॥ ४ ॥ शीतले तनुजान् रोगान् नृणां हर सुदुस्तरान् । विस्फोटकविशीर्णानां त्वमेकामृतवर्षिणी ॥५ ॥ गलगंडग्रहा रोगा ये चान्ये दारुणा नृणाम्। त्वदनुध्यानमात्रेण शीतले यांति संक्षयम् ॥ ६ ॥ न मंत्रं नौषधं किंचित् पापरोगस्य विद्यते । त्वमेका शीतले त्राहि नान्यां पश्यामि देवताम् ॥ ७ ॥ मृणालतन्तुसदृशीं नाभिहृन्मध्यसंस्थिताम् । यस्त्वां विचिंतयेद्देवि तस्य मृत्युर्न जायते ॥ ८ ॥ श्रोतव्यं पठितव्यं वै नरैर्भक्तिसमान्वितैः । उपसर्ग विनाशाय परं स्वस्त्ययनं महत् ॥ ९ ॥ शीतलाष्टकमेतच्च न देयं यस्य कस्य चित् । किन्तु तस्मै प्रदातव्यं भक्तिश्रद्धान्विताय च ॥ १० ॥ इति श्रीस्कंदपुराणे शीतलाष्टकं सम्पूर्णम् ॥" इति विस्फोटकयत्नः ॥

मसूरिकायत्न १—मसूरिका निकलनेके आरम्भमेंही श्वेतचंदनको भिगोकर घिसके सात दिनपर्यंत पिलाओ तो बहुत थोडी मसूरिका निकलैंगी

वातजमसूरिकायत्न १—दशमूल, रास्ना, आँवला, खश, धमासा, गुर्च, धनियां और नागरमोथा इनका क्वाथ पिलाओ तो बादीकी मसूरिका दूरहो.

तथा २—मँजीठ, बडके अंकुर, शिरसके बक्कल, गुलाबकी छाल इनको घीके साथ खरल करके या इन सबका घी बनाके लगाओ तो वादीकी मसूरिका अच्छी होंगी.

तथा ३—गुर्च, महुआ, दाख, मूर्वा और अनारके बक्कल इनका क्वाथ गुडके साथ पिलाओ तो वादीकी मसूरिका दूर होगी.

पित्तजमसूरिकायत्न १–पटोलकी जडका क्वाथ या महुआका रस पिलाओ तो पित्तकी मसूरिका अच्छी होगी.

तथा २–नीमकी छाल, पित्तपापडा, पाठ, पटोल, खश, दोनों चन्दन, कुटकी, आँवला, अडूसा और जवासेका क्वाथ मिश्रीके संयोगसे पिलाओ तो पित्तकी मसूरिका अच्छी हो.

कफजमसूरिकायत्न १–अडूसा, चिरायता, त्रिफला, जवासा, पटोल, नीमकी छाल इनका क्वाथ मधुके संयोगसे पिलावो तो कफकी मसूरिका दूर हो.

रक्तजमसूरिकायत्न १-रक्तमोचन कराओ तो रक्तजमसूरिका अच्छी हों.

मसूरिकामात्रयत्न १–पाठ, पटोल, कुटकी, दोनों चन्दन, खश, आँवला, अडूसा और जवाखार इनका क्वाथ मिश्रीके योगसे पिलाओ तो मसूरिका दूर हो.

मसूरिकाजन्य कंठस्थव्रणयत्न १--आँवला और महुआके क्वाथमें मधु डालकर इस रसके कुल्ले कराओ तो मसूरिका और गलेमें व्रण होगया हो, सो अच्छा हो.

मसूरिकाजन्य नेत्ररुद्धयत्न १–महुएके पानीमें अरंडे औटाकर इस जलसे मसूरिकासे चिपकीहुई आँखें धोओ, तो आँखें खुल जावेंगी.

मसूरिकाजन्य नेत्रव्रणयत्न १–महुआ, त्रिफला, दारुहल्दी, खश, मूर्वा, कमलगट्टा, लोध, मँजीठ इन सबको जलमें पीसकर लगाओ तो मसूरिकासे उत्पन्न हुए आँखोंके फोडे अच्छे हों और वहाँ पुनः न होंगे.

तथा २–वड, पिप्पली और गूलर इन तीनोंके बक्कलोंको पीसकर नेत्रोंपर लेप करो तो नेत्र अच्छे होजावेंगे.

तथा ३–जंगली कंडोंकी राख लगाओ तो मसूरिकामात्र अच्छी हों.

(विशेषतः)--मसूरिकाके रोगीको षष्टितंडुल, मूँग, मसूर और मिश्री मनमानी दो परंतु नोनका विशेष बचाव रक्खो यदि खिलाना चाहो तो चाहे थोड़ा बहुत सैंधानोन खिलाओ और सर्व आहार, विहार मर्यादापूर्वक रक्खोगे तो मसूरिकासे तुरंत आरोग्य होवेगा. ये सब यत्न भावप्रकाशमें लिखे हैं.

फिरंगवातयत्न १--४रत्ती शुद्ध रसकर्पूरको गेहूंके मसले हुए आटेकी गोलीके बीचमें दाबके वह गोली लौंगके महीन चूर्णसे लपेट दो और यह गोली

दाँतका स्पर्श बचाकर निकलवादो तदनंतर नागरवेलके पत्ते (कत्था चूना रहित) खिलाओ रोगीको तेल खटाई और नोनसे पथ्य कराके श्रम और धूपका बचाव रक्खो तो इस विधिपूर्वक रसकपूर सेवन करनेसे दो चार दिनमेंही फिरंगवात दूर होगा.

तथा २--१ टंक शुद्ध पारा, १ टंक खैरसार, २ टंक अकरकरा और ३ टंक मधु इन सबको इकट्ठे खरल करके ७ गोलियाँ बनालो और १ गोली नित्य प्रातःकाल शीतल जलके साथ सेवन कराके नोन और खटाई का बचाव रक्खो तो फिरंगवात दूर होगी-इसे सम्प्रसारिणी गुटिका कहते हैं.

तथा ३--२ टंक पारा, २ टंक आँवलासार गन्धक और २ टंक चावल इनको खरल करके ७ पुड़िया बनालो और प्रतिदिन १ पुड़ियाकी धूनी इंद्रियको दो तो फिरंगवात ७ दिनमें दूर हो.

तथा ४--पीले फूलवाली खरैंटीके पत्तोंका १ टंक रस और एक टंक पारा दोनों रोगीके हाथोंमें (पारा लोप होजाने तक) मलवाते जाओ और वह पारा मिश्रित खरैंटीका रस हाथोंमें पूर्वरूपसे भिदजानेपर (कुछ कुछ पसीना निकलेतक) हाथोंको आँचसे तपाओ और नोन खटाईका बचाव रक्खो तो ७ दिनके प्रयत्नमें फिरंगवात दूर होगा.

तथा ५--८ टंक नींबूके पत्ते,७टंक हरेंकी छाल, ७ टंक आँवला,१ टंक हल्दी और १ टंक पारा इन सबको खरल करके प्रतिदिन ४ मासे शीतल जलके साथ सेवन कराओ तो ७ दिनमें बाहिरी और भीतरी दोनों ओरकी फिरंगवात दूर होगी.

तथा ६--बावचीका ४ मासे चूर्ण मधुके साथ १५ दिनपर्यंत चटाकर नोन खटाईका बचाव रक्खो तो फिरंगवात दूर हो.

तथा ७--१ टंक पारा कठसेला (खठसेरुआ) के रसमें खरल करके अकरकरा गूगल और गोघृत ये प्रत्येक ५ पाँच टंक पिलाओ और इसमेंसे १ टंक चूर्ण, ५ टंक त्रिफलाका चूर्ण और पाँच टंक मधुके संयोगसे २१ दिन पर्यंत मर्दन करके चटाकर नोन और खटाईका बचाव रक्खो तो फिरंगवात दूर होगी ये सर्वयत्न भावप्रकाशमें लिखे हैं.

तथा ८--विरेचन और रक्तमोचनसे भी फिरंगवात दूर होगी.

तथा ९-पारा, हिंगुल,नीलाथोथा,हीराकसीस और आँवलासार गंधक,

इन सबको प्रथम शुद्ध करके खरल करो और इस बुकनीको सूखीही फिरंगवातपर मसलो या जलके साथ लेप करो तो फिरंगवात दूर हो. इसे सूतकादि लेप कहते हैं.

तथा १०–१०० बार धोया हुआ गोघृत लेप करो तो फिरंगवात दूर होगा.

तथा ११--१ टकेभर कटु तैल, ५ टंक मोम, अधेलेभर बेरजा, अधेलेभर कपेला, २ टंक सिन्दूर, २ टंक शोरा और २ टंक मुरदासिंगीको महीन पीसकर पीतलके पात्रमें मंद मंद आँचसे पकाओ तदनंतर शीतल होनेपर हाथसे मलके काँच या चीनीके पात्र तथा काष्ठके डब्बेमें रखलो जो इसकी पट्टी व्रणपर लगाओ तो फिरंगजन्य व्रण, उपदंश और घाव ये सब अच्छे होवेंगे. इसे मलहर मलहम कहते हैं.

तथा १२-आधपाव सिंदूर और सेरभर गोघृत दोनोंको भलीभाँति मथकर शरीरपर लेपकरो और ऊपरसे पत्ते लपेटकर केवल क्षीर (खीर) मात्र खिलाओ तो व्रण विस्फोटक और फिरंगजन्य फोडे ये सब अच्छे होजावेंगे.

तथा १३–पारा और सीसेकी कजली गेहूंके तुस (भुस्सा) इमलीके बीज (चीये) निम्बके पत्ते और घरका धुवाँस (धौसा) इन सबको नींबूके रसमें खरल करके २ टंक प्रमाणकी गोलियाँ बनालो और शरीरको वस्त्रसे ढाँककर १ गोलीकी धूनी ७ दिन पर्यंत दो और ऊपरसे खीरके व्यतिरिक्त और कुछ न खिलाओ तो सर्व फिरंगवात दूर हों.

तथा १४-त्रिफला, खैरसार और जायपत्रीको जलमें औटाकर इस जलसे मुख धुलाओ (कुल्ले कराओ) और धुवाँ भाफ दो तो फिरंगवात दूर हो.

तथा १५--३ टंक काला जीरा, ३ टंक कूट और १८ टंक पुराना गुड़ इन सबको खरल करके १५ गोली बनाओ और इसमेंसे १ गोली प्रभात और एक संध्याके समय खिलाकर घृतयुक्त गेहूँकी रोटी खानेको दो तो फिरंगवात दूर हो इसे फिरंगगजकेसरीरस कहते हैं.

तथा १६–६ मासे हिंगुल, १० मासे सुहागा, १० मासे अकरकरा और १० मासे मोम इन सबको खरल करके १ रत्ती प्रमाणकी गोलियाँ बनाओ और बूई वृक्षके कोयलेकी आगकर नित्य १ गोलीकी धूनी दो तो फिरंगवात दूर हो.

तथा १७–मुँगना, वड, झाऊ, नीम, जलभाँगरा, कटियाली और कचनार इन सबके बक्कलका क्काथ ७ दिनतक पिलाओ तो फिरंगवात दूर हो.

तथा १८–हिंगुल और मैनसिलकी २ मासे वुकनी बेरीके कोयलोंकी आगपर धूनी देकर निर्वातस्थानमें कपडेसे ढाँक दो तो फिरंगवात दूर हो.

रसकपूरशांति १–यदि रसकपूरके सेवनसे मुखके मसूढे फूलकर मुँह आजावे तो पीपल, गूलर, छोटी जातिका बड, बडी जातिका बड और बेत इन सबके बक्कलका क्काथ बनाकर कुल्हे कराओ तो मसूढे मिटकर मुखशोथ और पीडा आदि दूर होंगी.

तथा २–६ टंक जीरा और २ टंक खैरसार इन सबको जलमें पीसकर मुखके छालोंपर लगाओ तो रसकपूरजन्य मुखपाक शांत होगा.

इति नूतनामृतसागरे चिकित्साखण्डे स्नायुक-विस्फोटक-मसूरिका फिरंगवात-रोगाणां यत्ननिरूपणं नाम षट्त्रिंशस्तरंगः ॥ ३६ ॥

अथ क्षुद्ररोग।

अजगल्लिकादिक्षुद्राणामामयानां यथाक्रमात् ॥
मुनिरामतरङ्गेऽस्मिन् कथ्यते रुक्प्रतिक्रिया ॥ ३७ ॥

भाषार्थ–इस ३७ सैंतीसवें तरंगमें अजगल्लिकाप्रभृति क्षुद्ररोगों (छोटे रोगों) की चिकित्सा वर्णन कीजावेगी.

अजगल्लिकादि क्षुद्ररोगयत्न १–अजगल्लिकादि फुन्सियोंका रक्तमोचन करानेसे वे सब अच्छी हो जावेंगी.

तथा २–पक्वव्रण यत्नों (पहिले कहे गये हैं) से भी अजगल्लिकादि फुन्सियां शमन होवेंगी.

तथा ३–फिटकरी और सौंफका खार जलमें पीसकर लेप करो तो अजगल्लिकादि फुन्सियां अच्छी होजावेंगी.

तथा ४–मैनसिल, कूट और देवदारुको जलमें पीसकर लेप करो तो वे फुन्सियां पकजावेंगी तब शस्त्रसे चीरकर पीब निकालके मलहमकी पट्टी लगादो तो अजगल्लिकादि फुन्सियाँ निश्चय अच्छी हो जावेंगी.

विदारिकायत्न १–सांहिजना और देवदारुको जलमें पीसकर लेप करो तो विदारिका अच्छी होगी.

इरिवेल्लिकायत्न १–पित्तज विसर्पके यत्न इसको भी नाशकारी होंगे.

पिनसिकायत्न १–प्रथम नीमके पत्तोंको बाँधकरइसेपकाओ, तदनंतर मैनासिल, कूट, हलदी और तिल्लीका लेपकर पूर्णरूपसे पकाओ तब शस्त्रसे चीरकर पीब निकलवाकर ऊपरसे मलहमकी पट्टी चढ़ादो तो पिनसिका अच्छी होजावेगी.

पाषाणगर्दभयत्न १-प्रथम जोंक लगाकर रुधिर निकलवादो या उष्ण लेप करो तदनंतर व्रणके समान यत्न करो तो पाषाणगर्दभ अच्छी होगी.

वल्मीकयत्न १–प्रथम पकनेपर चीरकर नोन और चित्रकका लेपकरो और सर्वथा पीब निकलजानेपर अर्बुदरोगके यत्न करो तो वल्मीक अच्छी होगी.

तथा २–जोंकसे रक्तमोचन कराओ तो वल्मीक अच्छी होगी.

तथा ३–कुल्थीकी जड, गुरच, किरमालेकी जड़, नोन, दात्यूणी और निसोतको जलके साथ पीसकर उष्णकरो और थोड़ा घी मिलाकर लेपकरो तब पकजानेपर चीरकर निर्जीव (मुर्दार) मांस निकाल डालो और व्रणके मलहमपट्टी आदि उपाय करो तो वल्मीक अच्छी होगी.

तथा ४–मैनसिल, इलायची,रक्तचंदन, अगर, कूट, भिलावाँ, नीमके पत्ते, चमेलीके पत्ते इन सबको तेलमें पकाकर वह तेल लगाओ तो शोथ-युक्त वल्मीक फुन्सीभी अच्छी होजावेगी.

कक्षा तथा अग्निरोहिणीयत्न १–उत्पन्न होतेही रक्तमोचन कराओ तो दोनों अच्छी होवेंगी.

तथा २–पित्तसर्पके यत्न करो तो दोनों अच्छी होवेंगी.

तथा ३–देवदारु, मैनासिल और कूट इनको जलमें पीसकर उष्ण करके लेप करो तो बगलबिलाई(काँखोलाई)और अग्निरोहिणी दोनों अच्छीहोंगी.

तथा ४–देवदारु, मैनासिल और कूट इनको पीसकर उष्ण करो और सहती सहती बाँधो तो बगलबिलाई और अग्निरोहिणी अच्छी होंगी.

अवपाटिकायत्न १–चिकनी वस्तुका सहता सहता सेंक करो तो अवपाटिका अच्छी हो.

निरुद्धप्रकाशयत्न १–चूकेके रसमें तेल पकाकर इस तेलको लगाओ तो निरुद्धप्रकाश अच्छा हो.

तथा २--शूकरकी मेद (चर्बी) का सेंक करो तो निरुद्धप्रकाश दूर हो.

सन्निरुद्धगुदयत्न १–वातध्वंसक (या साधारण) तेलका सहता सहता सेंक करो तो सन्निरुद्धगुद अच्छा हो.

वृषणकच्छुयत्न १–राल, कूठ, सैंधानोन और सरसोंको जलमें महीन पीसकर उबटन कराओ तो वृषणकच्छुरोग दूर होगा.

गुदभ्रंशयत्न १–गोघृत आदि चिकने पदार्थोंका सहता सहता सेंक करो तो गुदभ्रंश दूर हो.

तथा २–कमलनीके पत्तोंको सुखाकर चूर्ण कर डालो और इसमेंसे २ टंक चूर्ण मिश्रीके साथ नित्य खिलाओ तो गुदभ्रंश अच्छी हो.

तथा ३ चूहेके मांसका घी (चर्बी) निकली हुई काँचपर लेप करो तो काँच निकलना (गुदभ्रंश) अच्छी हो.

तथा ४–डाँसरे, चित्रक, लूणख्या, बेलका गूदा, पाठ और जवाखार इनका २ टंक चूर्ण गौकी छाँछके साथ सेवनकराओ तो गुदभ्रंशअच्छीहो.

तथा ५–चूहेके मांस और दशमूलके क्वाथमें तेल पकाकर इस तेलका लेप करो तो गुदभ्रंश, गुदशूल और भगंदर ये सब दूर हो. इसे मूपकतैल कहते हैं.

तथा ६–जैसी मूपकतैलकी क्रियाहैं तिसी मुवाफिक छछूँदरका तैल बनाकर लेप करो तो गुदभ्रंश दर हो.

तथा ७–सँभालूका रस, बेरकी जड़का रस, दही, छाँछ, सोंठ जवाखार और घी इन सबको एकत्रकर पकाओ और सर्व रसादिक जलकर घृतमात्र रहजानेपर छानकर इसमेंसे ५ टंक घी नित्य सेवन कराओ तो गुदभ्रंश दूर हो. इसे चांगेशघृत कहते हैं.

शूकरदंष्ट्रयत्न १–जलभँगरेकी जड और हलदीको जलमें पीसकर सुअरके काटेहुए घावपर लगाओ तो सुअरकी डाढ़जन्य पीडा दूर हो.

अलसयत्न १–पटोल, मैनसिल, नींबू, गोरोचन, कालीमिर्चे तिल्ही, कटियालीका रस और कांजीमें कडुवा तेल पकाकर इसका मर्दन करो तो अलस (खारुआ)रोग दूर हो.

तथा २–कणगचके बीज, हलदी, हीराकसीस, महुआ, गोरोचन और हरताल इन सबको मधुके साथ महीन पीसकर लेप करो तो अलस रोग दूर हो.

पाददारिकारोगयत्न १ तेलको तपाकर सहता सहता सेंक करो तो ब्याऊँ (बिवाँई) अच्छी हों.

तथा २–मोम और जवाखार घीमें मिलाकर ताते ताते बिवाँईमें भरो तो अच्छी हों.

तथा ३–राल, सेंधानोन, मधु और घृतको तेलमें मथके ब्याऊँमें भरो तो ब्याऊँ अच्छी हों.

तथा ४–मधु, मोम, गेरू, घृत, गुड़, गूगल और रालको महीन पीस कर ब्याऊँमें भरो तौ अच्छी होजावेंगी.

तथा ५–धतूरेके बीज और जवाखार इनको कडुवे तेलमें पकाकर इस तेलका मर्दन करो तो बिवाँई अच्छी होंगी.

कदररोगयत्न १–उष्ण तेलसे सेंको या दूधमें गुड मिलाकर बाँधो तो पाँवमें काँटा या कंकर लगनेसे उत्पन्न हुई गाँठ (टाँका, या टीपन) अच्छी होजावेगी.

तिलयत्न १–तिलको किसी वस्तुसे रगडकर सरसों, सज्जी, हल्दी और केशरके जलके साथ महीन पीसके इसका उस रगडेहुए स्थानपर उबटन करो तो तिल मिट जावेगा.

मापयत्न १ सज्जी, चूना और साबुनको जलके साथ पीसकर मसेपर लगाओ तो मसा दूर हो.

उग्रगंधा (लहसन) यत्न १–लहसनके मंडलको धुरेसे रगडके सरसों, हल्दी, कूट, सज्जी, जवाखार और केशरको जलके साथ खरल करके उब-टन करो तो उग्रगंधा (लहसन, लाछन) मिट जावेगा.

तथा २–अधेलेभर हिंगुल, अधेलेभर सेंकाहुआ नीलाथोथा, १ टंक सिंदूर और ७ टंक राल इन सबको ६ टंकेभर गोघृतके साथ काँसेके पात्रमें ताम्रदंड या लोहदंडसे तीनदिनपर्यंत रगडकर काजल सदृश होजानेपर लेप करो तो लहसन, मसे, तिल, फोडे और खुजाल आदि सब दूर होवेंगे.

तथा ३–२ टंक कालाजीरा, ५ टंक नौसादर, ७ टंक सीपका चूर्ण, और २ टंक नीलाथोथाके चूर्णको अरणीके रसकी ७ पुट फिर जलभँगरेके रसकी ३ पुट देकर धूपमें सुखाओ और बछडी (बछिया) के मूत्रमें गोली

बनाकर बछडेके मूत्रमें घिसके लेप करो तो लहसन, मसे और तिल ये सर्व विकार दूर होवेंगे.

चेप्यारोगयत्न १-जोंक आदि द्वारा रक्तमोचन कराओ तो चेप्या दूर हो.

तथा २-सुपारीकी भस्म, कत्था, कपेला, मुर्दासिंगी, नीलाथोथा इन सबका भुर्का (चूर्ण) करके लगाओ तो चेप्या रोग अच्छा होगा.

तथा ३-हरंको हल्दीके रसके साथ लोहपात्रमें पीसकर उष्ण करके लगाओ तो चेप्यारोग अच्छा हो.

कुनखरोगयत्न १- एक मासे सार (कांतिसार) मधुके साथ सेवन कराओ या कुटकीका साधन कराओ तो कुनखरोग दूर हो.

कंडूयत्न १-१भाग आँवलासार गंधक, २ भाग पारा और तीन भाग नीलाथोथा इन तीनोंको गोघृतके साथ लोहपात्रमें लोहदंडसे घोटकर लेप करो तो शरीरकी खुजाल मात्र दूर होगी.

पलितरोगयत्न १-२ टंक लोहेका चूर्ण, २ टंक आमकी गुठली, २ टंक आँवला, २ टंक बडी हरंका चूर्ण, १ (एक) बहेडेका चूर्ण इन सबका चूर्ण लोहपात्रमें जलभंगराके रसके साथ २ दिनपर्यंत भिगोकर बालोंमें लेप करो तो श्वेत बाल काले होजावेंगे.

तथा २-केतकीकी जड, या केवडेकी जड, मुँगनेके फूल, कुम्भेरकी जड, लोहचूर, जलभंगरा और त्रिफला इन सबको तेलमें पकाकर उस तेलको लोहपात्रमें भर दो और १ मासपर्यंत भूमिमें गडा रहनेदो फिर निकालकर श्वेतबालोंमें लगाओ तो श्याम होजावेंगे.

तथा ३-त्रिफला, निम्बपत्र, लोहचूर और जलभंगराका रस इन सबको भेडीके मूत्रके साथ पीसकर बालोंपर लेप करो तो श्याम होजावेंगे.

तथा ४-१ मासे पापडखार, १ मासे सिंदूर, १ मासे मुरदासिंगी और ८ मासे चूना, इन सबको पानीके साथ पत्थरपर ३ घडी तक रगडके (नखपर लगानेसे श्याम होनेपर) बालोंमें लगाओ तो श्याम होजावेंगे.

तथा ५-बडे बडे नये माजूफल भभूंदरमें निर्दाग सेंकते सेंकते फट जानेपर निकलालो तदनंतर १ माजूफल, १ मासे शंखजीरा, ४ रत्ती नीलाथोथा, ३ रत्ती नौसादर,२रत्ती लौंग, २ रत्ती फिटकरी और १ मासे लोहचूर इन सबको आँवलेके रसके साथ लोहपात्रमें लोहदंडसे १ प्रहरपर्यंत

घोटकर (नखपर लगानेसे काला होनेपर) श्वेतबालोंको प्रथम आँवलेके रससे धोवो और इसका लेप लगाकर ऊपरसे १ प्रहरपर्यंत अरंडके पत्ते बाँधको पुनः आँवलोंके जलसेही धो डालो तो श्वेत केश श्याम होजावेंगे.

तथा ६–खानेका चूना, या लुहारकी भट्ठीकी राख, या कौडीकी भस्म इनमेंसे किसीएकको सीसेसे रगडकर कुछ गोपीचंदन और १ मासे मुरदासिंगी मिलाओ तदनंतर पुनः रगडकर (नखपर लगानेसे काला होजानेपर) श्वेत बालोंपर लगाकर ऊपरसे अरंडके पत्ते बाँधदो तो श्वेत बाल श्याम होजावेंगे.

इंदरीयत्न १–पटोलके पत्तोंके रसमें कुटकी पीसकर लेप करो तो गये हुए बाल पुनः जम (ऊग) आवेंगे.

तथा २–हाथीदाँतकी राखको बकरीके दूधमें मिलाकर लगाओ तो गये हुए बाल पुनः आवेंगे.

तथा ३–कमलनाल, द्राक्ष, तेल, घी और दूध इन सबको इकट्ठे खरल करके लगाओ तो बाल पुनः जम आवेंगे.

तथा ४–चमेलीके पत्ते, कणगचकी जड, कनेरमूल (जड)और चित्रकको तेलमें पकाकर उस तेलका लेप(या मर्दन)करो तो बाल ऊग आवेंगे.

चाँईयत्न १–अधजली चिरौंजीको जलसे पीसकर लेप करो तो चाँई दूर होवेंगी. ये सर्व यत्न भावप्रकाशमें लिखे हैं.

इति नूतनामृतसागरे चिकित्साखण्डे अजगल्लिकादि क्षुद्ररोगाणां यत्ननिरूपणं नाम सप्तत्रिंशत्तरंगः ॥ ३७ ॥

अथ शिरोरोग-नेत्ररोग।

शिरोरुजां नेत्ररुजां चिकित्साश्च यथाक्रमात् ॥
वसुवैश्वानरे ह्यत्र तरंगे कथ्यते मया ॥ ३८ ॥

भाषार्थः–अब हम इस ३८ अडतीसवें तरंगमें शिरोरोग और नेत्ररोगोंकी चिकित्सा यथाक्रमपूर्वक लिखते हैं.

वातशिरोरोगयत्न १–वातहारी तैल या साधारण तैलके मर्दन और वातहारिणी औषधोंके भक्षणसे बादीका शिर दुखना शांत होगा.

तथा २–खारकुठार रसका नास (सुँघनी) दो तो शिरकी नानाप्रकारकी पीडा शान्त होगी.

तथा ३-उर्दके आटेकी रोटी बनाकर १ प्रहरपर्यंत शिरपर बाँधो तो शिरकी वातसम्बन्धी पीडा दूर होगी.

तथा ४–उर्दके सनेहुए आटेसे शिरपर ८ या १६ अंगुलकी ऊँची बाडी (पार दिवार) बाँधकर उसमें उष्ण तेल भरदो और ४ घडी या १ प्रहर रखकर निकाल डालो तो वातजाशिरोरोग, कर्णरोग, ग्रीवारोग, और दाढ़के रोग भी पांच सात दिनके सेवनसे शमन होजावेंगे. इसे शिरोबास्ति कहते हैं.

पित्तजशिरोरोगयत्न १–चंदन और कमलगट्टे शीतल जलके साथ पीसकर लेप करो तो पित्तका शिरोरगा शांत होगा.

तथा २–१०० बार धोवेहुए घृतको मस्तकपर लेप करो तो पित्तका शिरोग शांत होगा.

तथा ३–खारकुठाररस, कपूर, केशर, मिश्री और चंदनको बकरीके दूधमें पीसकर लेप करो तो पित्तका शिरोरोग दूर हो.

कफजशिरोरोगयत्न १–लंघन (भूँख) या कफनाशक औषधियोंके उष्ण लेपसे कफका शिरोरोग शांत होगा.

सन्निपातजाशिरोरोगयत्न १–सन्निपातनाशक औषधोंके लेप और भक्षणसे सन्निपातका शिरोरोग शांत होगा.

रक्तजशिरोरोगयत्न १-पूर्व लिखित पित्तजाशिरोरोगके यत्न कराओ या शिरका रक्तमोचन कराओ तो रक्तका शिरोरोग दूर होगा.

क्षयजशिरोरोगयत्न १–क्षीणता नाशक और बलवर्द्धक औषधोंके सेवन और यत्नोंसे क्षीणताका शिरोरोग शांत होगा.

कृमिजशिरोरोगयत्न १–सोंठ, मिर्च, पिप्पली, किरमालेकी जड और सहिंजनेके बीजोंको बकरीके दूधमें महीन पीसकर नास दो तो मस्तककी कृमि नाश होकर पीडा शांत होगी.

तथा २–अरंडकी जड, तगर, सौंफ, सैंधानोन, जीवंती, रास्ना, जलभंगरा, वायविडंग, मुलहठी, सोंठ इन सबसे चौगुणा जलभंगराका रस, चौगुणा बकरीका दूध और अठगुणा तेल इन सबको कडाहीमें मंद मंद आँचसे पकाकर रसादिक जलके तेलमात्र रहजानेपर छानलो और इसमेंसे

६ बूँद तेल रोगीकी नाकमें टपकाकर नास (सुँघवा) दो तो शिरोरोग मात्र दूर होकर दंत और नेत्ररोग भी दूर होवेंगे. इसे षड्बिन्दुतैल कहतेहैं.

तथा ३–सोंठ और गुड जलमें पीसकर नासदो तो सर्वशिरो॰ नाश होंगे.

सूर्यावर्तशिरोरोगयत्न १–दूध और घी मिलाकर नासदो तो सूर्यावर्त शिरोरोग (आधाशीशी) शान्त हो.

तथा २–गुड़के योगसे घीमें सेंकेहुए अपूप (मालपुआ) या क्षीर खिलाओ तथा तिल्लीसे सेंक करो तो सूर्यावर्त दूर हो.

तथा ३–जलभंगरेका रस और बकरीका दूध धूपमें उष्ण करके नास दो तो सूर्यावर्त दूर हो.

तथा ४–सिंगीमुहरा, अहिफेन (आफू-अफीम) अर्कमूल, धतूरेका मूल सोंठ, कूट, लहसन और हींगको गोमूत्रमें पीसके तपाकर लेप करो तो सूर्यावर्त शांत हो.

तथा ५–विरेचन दो. या उष्ण उष्ण स्निग्ध भोजन कराओ, या मिश्री दूधके योगसे कच्चे नारियलका जल पिलाओ तो सूर्यावर्त दूर हो.

तथा ६–वायविडंग और काले तिल पीसकर लेप करो तो सूर्या॰शांतहो.

अनंतवातशिरोरोगयत्न १–सूर्यावर्तके उपरोक्त सर्व यत्न अनंतवात को लाभदाता है.

तथा २–मधुके योगसे घीमें सेंके मालपुए खिलाओ, या माथेकी नसोंका रक्तमोचन कराओ तो अनंतवात शांत हो.

तथा ३–हर्रकी छाल, बहेड़ा, आँवला, हल्दी, चिरायता, गुरच, नीम की छाल और गुड़ इनका क्काथ पिलाओ या नास दो तो अनंतवात, नेत्र-पीडा, कनपटी और आधेशिरकी पीडा (आधाशीशी) दूर हो. इसे पथ्यादि क्काथ कहते हैं.

कपालकृमियत्न १–कड़वे ककोड़े (कटहरसदृश छोटासा फल जिसके अंगपर गोखरूकेसे काँटे होते हैं) के पत्तोंका नास दो तो कपालके कीडे नाश होजावेंगे. ये सब यत्न वैद्यवल्लभमें लिखे हैं.

शंखकशिरोरोगयत्न १-दारुहल्दी, मँजीठ, गौरीसर, खश, हलदी, कमलगट्टे इन सबको शीतल जलके साथ महीन पीसकर कनपटीपर लेप करो तो शंखक (कनपटी) की पीडा शांत होगी.

तथा २–शीतल जलके साथ शीतल औषधोंका लेप करो तो शंखक दूर हो.

तथा ३--१ भाग सिंगीमुहरा, २ भाग मुलहठी और २ भाग उर्द इन तीनोंको पीसकर, १ सरसों प्रमाण सुँघाओ तो शंखकादि सर्व शिरोरोग दूर होंगे.

शिरोरोगमात्रयत्न १–आँवला, सीपकाचूना और नौसादरको हथेली (करतल) पर मसलकर सुँघाओ तो सर्व शिरोरोग दूर होंगे.

तथा २--सोंठ, मिर्च, पिप्पली, पोहकरमूल, हल्दी, रास्ना, देवदारु और असगंधका क्काथ पिलाओ तो सर्व शिरोरोग दूर होंगे.

तथा ३–मिश्री और अनारकी कलीको पीसकर सुँघाओ, या मुचुकुंदके पुष्पोंको पीसकर लेप करो तो सर्वशिरोरोग दूर होंगे.

तथा ४–कूट और अरंडमूलको कांजीमें पीसकर लेप या देवदारु, तगर, कूट, खश, सोंठ और तिलको काँजीमें पीसकर लेप करो तो मस्तककी समस्त पीड़ा मात्र दूर होगी.

अर्द्धावभेदशिरोरोगयत्न १–मिश्री और केशरको घीमें तलकर नास दो तो अर्द्धावभेद (आधाशीशी) कनपटी, भौंह, नेत्र और कानकी पीडा दूर होगी. ये सर्व यत्न भावप्रकाशमें लिखे हैं.

तथा २--मिश्री और मैनफलको गोमूत्रमें पीसकर नास दो तो आधाशीशी दूर हो.

तथा ३--खरहा (शशा, खरगोश) का मांसरस मिर्चोंके साथ भोजनके पहिले ७ दिनपर्यंत पिलाओ तो आधाशीशी आदि शिरोरोग नाश हो जावेंगे. ये सर्व यत्न वैद्यरहस्यमें लिखे हैं.

तथा ४–चंदन, नोन और सोंठको जलमें पीसकर लेप करो तो आधाशीशी आदि शिरोरोग दूर होंगे.

तथा ५–आसकी छालको जलके साथ, या जलभंगरा और कूटको घृतके साथ पीसकर लेप करो तो आधाशीशी दूर हो.

तथा ६–पीपल, मिर्च, लोधको सूखी या लवंग मिर्च और हींगको जलके साथ पीसकर नासदो तो आधाशीशी दूर हो.

तथा ७–पीपल, आँवला, आधाझाडा, सरसों और आंकडेके बीजोंको

शीतल जलमें पीसकर लेप लगाओ तो आधाशीशी आदि शिरोरोग दूर होवेंगे.

तथा ८–अर्द्धावभेद शिरोरोग नाशक सिद्धमंत्र–

"ओं नमो कालिकादेवी किलकिलेवासी मृधोभ्यासे हनुमंत वीर हाँक मारे आधाशीशी अधकपाली नाशे, जाजारी पापिनी जाजारी हत्यारी न जावे तो तेरे गुरुकी आज्ञा, हनुमंत वीरकी आज्ञा, गरुड़पंखकी आज्ञा, मेरि भक्ति गुरुकी शक्ति फुरोमंत्र ईश्वर उवाच." इस मन्त्रको कृष्णपक्षकी चतुर्दशीके दिन शक्त्यनुसार जाप करो तो सदा सिद्ध रहैगा सो इस मंत्रसे मस्तकको २१ बार मांत्रित कर शनैः शनैः फूंक देते जाओ तो आधाशीशी निश्चय अच्छी होजावेगी.

तथा ९–"ओंनमो आधाशीशी हूंहूंकारी पहरपछारी मुखमूंद पाटलेमारी अमुकारे शीशरहे सुख महेश्वरकी आज्ञाफुरे ओंठंठंस्वाहा." यह दूसरा मंत्र भी २१ बार पढ़कर मस्तकपर अँगुली फेरते जाओ तो आधाशीशी दूर होजावेगी.

केशवृद्धियत्न १–छड़, छड़ीला, कूट, काली तिल्ली, गौरीसर, कमल गट्टे, मधु और दूध इन सबको इकट्ठे खरल करके शिरपर लेप करो तो बाल बहुत बढ़ैंगे.

तथा २–गुंजा (चिरम्), जलभंगराका रस, इलायची, छड और कूट इन सबको तेलमें पकाकर उस तेलका मर्दन करो तो शिरके बाल बहुत बढ़ैंगे.

तथा ३–छड, खरैंटी, आँवले, कूट और मोरछलीकी छाल इनको जलके साथ महीन पीसकर लेपकरो तो बाल बढ़ैंगे.

नेत्ररोगयत्न १–लंघन, लेप, स्वेदकर्म, शिरका रक्तमोचन कराना और आश्च्योतन कर्म इत्यादि यत्नोंसे नेत्रोंके सर्व विकार दूर होवेंगे.

तथा २–पठानीलोधका चूर्ण घीमें सेंककर उसको जलसे ताव (सिकताव) दो तो नेत्रोंका वातरोग दूर होगा.

---

१ आँख खोलकर औषधके रसकी ८ बूँदें टपका दो, शीतकालमें उष्ण तथा उष्णकालमें शीतल औषधोंका प्रयोगकरो जो वातनेत्र हों तो तीखी और कफजन्य हों तो तीखी या खारी उष्ण औषध डालो, यह कर्म रात्रिको नहीं वरन् दिनको करना योग्य है इसे अश्च्योतन कर्म कहते हैं ।

तथा ३-अरंडकी जड, पत्र और छालका क्वाथ बकरीके दूधमें औटा-कर रस जलके दूधमात्र रहजानेपर १०० तक गिननेपर्यंत उस तप्त दूधकी सहती सहती धार नेत्रोंपर मारो तो वातज नेत्ररोग दूर होगा.

तथा ४ पानीके संयोगसे नींबूके पत्तोंका रस निकालकर उसमें लोध पीसो और उष्ण करके लेपकरो तो वात और रक्तपित्तका नेत्रविकार दूर होगा.

तथा ५-नेत्रोंमें स्त्रीके दूधसे आश्च्योतन (८ बूँद डालना) कर्म कराओ तो वात और रक्तपित्तका नेत्रविकार दूर होगा.

तथा ६-वातप्रकोपसे नेत्रोंमें खुजाल चलके बहुत यत्नोंसे भी अच्छी न हो तो ललाटका रक्तमोचन कराओ या भौंहके ऊपर दाग दो तो नेत्रोंकी खुजाल बंद होजावेगी.

तथा ७-सहँजाना या नीमके पत्तोंकी पींड (लुग्दी) बांधो तो कफकी खुजाल बंद होगी.

तथा ८-पठानीलोध और मुलहठीका चूर्ण घीमें सेंककर बकरीके दूधमें पकाओ और इस दूधसे नेत्रोंको तर्पण (धारा मारना) कराओ तो उष्णता और रक्तका नेत्ररोग दूर होगा.

तथा ९-त्रिफला, लोध, मुलहठी, मिश्री और नागरमोथा इनको शीतल जलमें पीसकर इससे तर्पण कराओ तो रक्तजनेत्ररोग दूर होगा.

तथा १०-बकायन या आँवलेके पत्तोंकी पींड (लुग्दी) बाँधो तो उष्णताकी खुजाल दूर होगी.

तथा ११-त्रिफला और लोधको काँजीके जलमें पीसकर घीमें तलो और इसकी पींड आँखोंपर बाँधो तो उष्णता और कफकी खुजाल दूर होगी.

तथा १२-सोंठ, नीमके पत्ते और सैंधानोन पीसकर नेत्रोंपर पींड बाँधो तो नेत्रोंकी खुजाल और शोथ दूर होगा.

तथा १३-नेत्रोंकी गुहाँजनी (गोहरी, आँखपरकी फुडिया) को शस्त्रसे चीरकर घीसे सेंको तदनंतर ऊपरसे मैनसिल, हरताल, तगर और मधुको पीसकर लेप चढाओ तो गुहाँजनी मिट जावेगी.

१ इसे तर्पणकर्म कहते हैं.-१ सेंक, २ आश्च्योतन, ३ पींड, ४ विडालकर्म, ५ तर्पण, पुटपाक, ७ अंजन और ८ शस्त्रक्रिया ये आठोंकाम बडी सावधानीसे करने चाहिये.

तथा १४–कमलगट्टा, सहँजनेके बीज और नागकेशर इन्होंको पीसकर अंजन दो तो नींद नहीं आवेगी.

तथा १५–कालीमिर्चको मधु या घोडेके लारके साथ पीसकर अंजन दो तो नींद नहीं आवेगी.

तथा १६–मूंगा, कालीमिर्च, कुटकी, वच और सैंधानोन बाछियाके मूत्रमें घिसकर अंजन करो तो तंद्रा (झपकी) दूर होगी.

तथा १७–जमालगोटेकी बीजीको नींबूके रसकी २१ पुट देकर गोली बनाओ और मनुष्यकी लारमें घिसकर अंजन करो तो सर्पादिका विष भी दूर होकर मृतमनुष्य भी जीवित होना सम्भव है.

तथा १८–अत्तारकी दवा और बडी हरोंको पानीमें घिसकर लेप करो तो वात, पित्त, कफ तीनोंका नेत्राभिष्यंद (आँखें आना) दूर होगा.

तथा १९–निर्मलीके फल मधुमें घिसकर कपूरके संयोगसे अंजन करो तो नेत्र निर्मल (स्वच्छ होजावेंगे.

तथा २०–निर्मलीके फलोंको जलमें घिसकर अंजन दो तो नेत्रस्राव (बहता हुआ जल) दूर होगा.

तथा २१–बोल (बमूलनी, पागबमूल, कटबसूल) के पत्तोंके गाढे क्राथमें मधु मिलाकर अंजन करो तो नेत्रस्राव दूर होगा.

तथा २२–साठींकी जडको स्त्रीके दूधमें घिसकर अंजन करो तो नेत्रोंकी खाज दूर हो. इसीप्रकार मधुके साथ आँजनेसे नेत्रस्राव, घृतके साथ आँजनेसे फूली, तेलके साथ आँजनेसे तिमिर और काँजीके साथ घिसकर आँजो तो रतौंधी भी दूर होगी.

तथा २३–२ टंक गिलोयका रस, १ मासे सोंठ और १ मासे सैंधानोनको महीन पीसकर अंजन करो तो मोतियाबिंद, तिमिर, धुंध और नेत्रकांच आदि समस्त नेत्रविकार दूर होवेंगे.

तथा २४–रार, चमेलीके फूल, मैनसिल समुद्रफेन, सैंधानोन, कालीमिर्च और गेरूको मधुके साथ महीन पीसकर अंजन करो तो नेत्रोंकी खुजाल दूर होकर झडे हुए रोम जम आवेंगे.

तथा २५–चीनियाँकपूरको बडके दूधमें पीसकर अंजन करो तो २ मासमें फूली कट जावेगी.

तथा २६–नीलाथोथा, सोनामक्खी, सैंधानोन, मिश्री, शंखकी नाभि, गेरू, कालीमिर्च और समुद्रफेनके मधुके साथ पीसकर अंजन करो तो तिमिर, नेत्रकांच और फूली दूर होगी.

तथा २७–आँवलेकी बीजी, बेहड़ेकी बीजी, और हरेंकी बीजीको महीन पीसकर अंजन करो तो नेत्रोंका बहाव और वातरक्त दूर होगा.

तथा २८–रसोत, दोनों हल्दी, चमेलीके पत्ते, (या फूल) और नीमके पत्तोंको गोबरके रसमें पीसकर लेप करो तो रतौंधी दूर हो.

तथा २९–८० तिलपुष्प, ६० पिप्पलीके बीज, ५० जवेली (मारवाडमें प्रसिद्ध) पुष्प और १६ मिर्चको पीसकर गोली बनाओ और जलमें घिसकर अंजन करो तो तिमिर, अर्जुन, फूली और मांसवृद्धि ये समस्त रोग दूर होवेंगे इसे रोपणीगुटिका कहते हैं.

तथा ३०–शूकरदंत, गोदंत, गर्दभदंत, शंखकी नाभि, निवैंधा (बिंधे बिना) मोती और समुद्रफेनको महीन पीसकर अंजन करो तो फूली आदि समस्त नेत्ररोग दूर होवेंगे. इसे दंतवर्त्ती कहते हैं.

तथा ३१–कणगचके बीजोंके चूर्णको टेसूके रसकी बहुतसी पुटें देकर गोलियाँ बनालो और जलमें घिसकर नेत्रोंमें अंजन करो तो फूली आदि समस्त नेत्रविकार दूर होवेंगे. इसे लेपनीगुटिका कहते हैं.

तथा ३२–शंखकी नाभि, बहेडेकी बीजी, हरेंकी बीजी, मैनसिल, पीपल, मिर्च, कूट और वचको बकरीके दूधमें पीसकर नेत्रोंमें अंजनकरो तो फूली, मांसवृद्धि, नेत्राभिष्यंद, पटल, रतौंधी और सर्वनेत्ररोग दूर होंगे. इसे चन्द्रोदयगुटिका कहते हैं.

तथा ३३–नेत्ररोगीको निर्वातस्थानमें पीठके बल (चित्त) सुलाकर उसके नेत्रोंके आसपास उर्दके मसे हुए आटेकी १ अंगुल ऊंची दीवारसी बनादो और कुछ कुछ तपाहुआ या १०० बारका धोया हुआ घृत तथा दूध इस दीवारके मध्य (आँखोंमें) भरके १०० गिननेके समयपर्यंत भरा रहने दो तो नेत्रवक्रता, पक्ष (बरौनीका) झड़ाव. अनिमिष (पलक न लगना) तिमिर, फूली, खुजाल और शिरोरोग ये सर्वविकार दूर होवेंगे.

१ यह प्रयोग बादल, उष्णकाल, चिंता और भ्रमदशामें कदापि मत करो।

तथा ३४–१मासे पठानीलोध, १ मासे फिटकरी, १ मासे रसोत, १ मासे मुलहठीको ग्वारपाठेके रसया पोस्तकेरस या जलमें पीसकर पोटली बनाओ और नेत्रोंपर बारंबार फेरो तो नेत्र अच्छे होजावेंगे.

तथा ३५–१मुलहठी, गेरू, सैंधानोन, दारुहल्दी और रसोतको जलमें पीसकर लेप करो तो सर्व नेत्ररोग दूर होंगे.

तथा ३६–१ मासे अफीम, १ मासे फूलीहुई फिटकरी और १ मासे लोधको नींबूके रसके साथ लोहकी कड़ाहीमें घोटके कुछगरम कर नेत्रोंपर लेप करो तो नेत्ररोग तत्काल अच्छा होगा.

तथा ३७–लोहेकी कड़ाहीमें नींबूका रस घोटकर लेप करो तो नेत्राभिष्यंदरोग अच्छा हो जावेगा.

तथा ३८–हरंकी छाल, सैंधानोन, सोनगेरूको रसोत जलमें पीसकर नेत्रोंपर लेप करो तो सर्व नेत्ररोग दूर होंगे.

तथा ३९–काले साँपकी बसा (चर्बी) में शंखकी नाभि और निर्मली को पीसकर अंजन दो तो मोतियाबिंद और काँच दूर होगा.

तथा ४०–मुर्गीके अंडोंके खोकला छिलके मैनसिल, काँच, शंखकी नाभि चंदन और सैंधानोनको पीसकर अंजन करो तो मोतियाबिन्दु और फूली आदि समस्त नेत्रविकार दूर होवेंगे.

तथा ४१–कालीमिर्च, समुद्रफेन, पिप्पली, सैंधानोन और सुर्मा ये सब दो दो मासे लेकर अतिमहीन पीसो और चित्रा नक्षत्रके दिन आँखों में अंजन दो तो फूली, खाज और काँच आदि सर्व रोग दूर होजावेंगे.

तथा ४२–खपरियाको पीसकर जलमें डुबादो और उसके ऊपरका पानी छानकर नीचेका गाढ़ा भाग सुखालो इस सूखी हुई पपड़ीको त्रिफलाके रसकी तीन पुटें देकर इससे ($\frac{1}{10}$) दशमांश कपूर मिलाओ अनंतर दोनोंको महीन पीसकर अंजन करो तो नेत्रके समस्त रोग दूर होजावेंगे.

तथा ४३–सुरमाको तपातपाकर ७ बार त्रिफलाके रसमें, ७ बार स्त्रीके दूधमें ७ बार गोमूत्रमें और ५ बार पुनः स्त्रीके दूधमें डुबाकर महीन पीसके अंजन करो तो सर्व नेत्रविकार दूर होवेंगे.

तथा ४४–शुद्ध शीशा, जलपारा, सुर्मा और इन सबसे दशमांश

(१०) भीमसेनी कपूर इन सबको महीन पीसकर अंजन करो तो सर्व नेत्ररोग दूर होंगे. इसे नयनामृतांजन कहते हैं.

तथा ४९--सीसा गलागलाकर १०० बार त्रिफलाके रसमें, ५० बार जलभंगराके रसमें २५ बार, सोंठके रसमें और ५० बार घृतमें २५ बार गोमूत्रमें २५ बार मधुमें और २५ बार बकरीके दूधमें डुबाडुबाकर अंतमें उसकी शलाका (सलाई, सींक) बनाओ जो शलाका सूखीही नेत्रोंमें प्रतिदिन फेरो तो नेत्रोंके समस्त विकार दूर होजावेंगे.

विशेषतः--नेत्राभिष्यंद (नेत्र दुखने आये हों) तो ३ दिनतक कच्चे नेत्रोंका यत्न मत करो, पश्चात् पकजानेपर चौथे दिन अंजनादि औषध करो तो नेत्र अच्छे होजावेंगे. हेमन्त और शिशिरऋतुमें मध्याह्नसमय; ग्रीष्म और शरदमें मध्याह्नके पहिले, वर्षामें आकाश स्वच्छ (निर्मेघ) होनेके समय और वसंतऋतुमें चाहे तब अंजन भर सक्ते हैं. अंजन लगानेके लिये प्रथम बाँई पश्चात् दाहिनी आँखमें अंजन भरो, उपरोक्त प्रथासे अंजन भरो तो शीघ्रही आरोग्य होजावेंगे.

वर्जितकर्म--नेत्रके रोगीको सुर्मा धारण; विशेष घी, कसैली वस्तु, खट्टे पदार्थ और गरिष्टान्न भक्षण, स्नान और ताम्बूल आदि उष्ण वस्तुओंका सेवन कदापि न करने दो.

वाग्भट्टके मतसे मोतियाबिन्दरोगयत्न--कच्चे मोतियाबिन्दका जाला शलाकासे निकलवाना वर्जित है परन्तु पकजानेपर जाला निकलवानेसे कुछ हानि नहीं बरन् लाभही है.

वर्जितरोगी--पीनस, कास, अजीर्ण, शिरोरोग कर्णरोग और शूलपीडासे पीडित, भयातुर और वमन कियाहुआ इनमेंसे किसीभी दशामें रोगी हो तो उसका जाला मत निकालो.

जालानिष्कासनविधि--श्रावण, कार्तिक और चैत्रसे व्यतिरिक्त मासोंमें नेत्रोंका जाला निकालो किन्तु इन तीनों महीनोंमें मत निकालो. मध्याह्न समयसे पहिले ही जाला निकालो, मध्याह्न पश्चात् मत निकालो. जाला निकालते समय निर्वात स्थानका उपयोग करो, जिसमें रोगी पवनसे सुरक्षित रहे. जाला निकालनेके पूर्व रोगीको विरेचन (जुलाब) देकर शरीर शुद्धकरलो, तदनंतर सुन्दर हलका भोजन देकर शरीर निरालस्य

होजाने दो तब रोगीको आसन (पलथी) मारकर बैठाओ और उसके पीछे एक चतुर मनुष्यको बैठाकर रोगीको थँभवाओ जिसमें वह हिलने न पावे, इसप्रकार बैठानेपर अपने मुखकी भापसे नेत्रोंको फूँककर स्वेदित करदो और अँगूठेसे नेत्रोंको मलकर नेत्रोंका मल इकट्ठा करलो तदनंतर सधे हुए हाथसे बडी युक्ति चतुराई पूर्वक शलाकासे नेत्रके प्रांत भाग (गार) का जाला विदीर्ण करके समस्त जाला इकट्ठा करनेपर बाहर निकालली. यहाँतक कि, जब पुतलीपरके मोतियाबिंदकी डीक (टिकड़ी, बूँद, पटल) निकालकर रोगीको उसीसमय समस्त वस्तु यथार्थ दीख पड़ें तब नेत्रोंपर घीके फाहे (रुई) बाँधकर चित्त (सीधा) सुलादो.

उपरोक्त क्रिया होनेपर उस रोगीको काँचके प्रतिबिम्बसे बचाओ, औंधा सोना, शरीर या शिर हिलाना, छींक, खाँसी, डकार, थूकना, दंतधावन, स्नान, श्रम और जलपान इन कार्योंकी विशेषता न होनेदो, यदि दैववशात् होंगे तो बड़ी सावधानी और स्वल्पतापूर्वक होनेदो, घृतादि गरिष्ठान्नका परित्याग कर हलका भोजन खिलाओ इस पथ्यको सात दिन पर्यंत निबाहते जाओ. तदनंतर कुछ घी डालकर हलके अन्नका लपटा (पतली दलिया) खिलाकर वातनाशक मिश्री आदि, पदार्थ खिलाओ. वायु, तेज (प्रकाश) तथा महीन वस्तु मत देखने दो, नेत्रोंको शीतलतादायक हरित वस्तुओंपर दृष्टि विशेष पड़ने दो और कुपथ्यसे बचाओ यह कृत्य १ मंडल (४०) दिन पर्यंत करो.

यह सब हो चुकनेपर मोतियाबिन्द सम्बन्धी शीतल उपनेत्र (चश्मा, ऐनक) सदैव लगाते रहो तो उपरोक्त विधिवत् क्रिया होनेपर पुनः मोतियाबिंद कदापि न होगा. यह सर्व विधान वाग्भट्टमें लिखा है.

नेत्रप्रकाशकअंजन १–हींगको दड़घलके पत्तोंके रसमें घिसकर अंजन करो तो पांडुरोग (पीलिया) तथा कामला भी दूर होगा. यह यत्न पांडुरोगमें लिखना योग्य था परन्तु नेत्रसंबंधसे यहाँ लिख दिया है.

तथा २–बेल और तुलसी दोनोंके पत्तोंका रस तथा इन दोनोंके समान स्त्रीका दूध इन तीनोंको काँसेकी थालीमें गजबेलि (उत्तम लोह) के घोटेसे दो प्रहर और ताँबेके घोटेसे दो प्रहर घोटकर अंजन लगाओ तो नेत्रशूल और नेत्रपाक दोनों दूर होवेंगे. इसे नारायणाञ्जन कहते हैं.

तथा ३–सोंठ, हरेंकी छाल, कुल्थी, खपरिया, फिटकरी, खैरसार और माजूफल ये सब एक एक भाग तथा भीमसेनी कपूर, कस्तूरी और अविद्धमोती ये सब आधे आधे भाग लेकर इन सबको महीन पीसो और नींबूके रसमें ५ दिन खरल करके गोलियाँ बनालो जो इसकी गोलीको जलमें घिसकर अंजन करो तो नेत्रोंका तिमिर, स्त्रीके दूधमें घिसकर अंजन करो तो फूली और पटल, मधुमें घिसकर अंजन करो तो नेत्रस्राव, गोमूत्रमें घिसकर लगाओ तो रतौंधी और जायपत्रीके रसमें घिसकर अंजन लगाओ तो नेत्रोंकी मांसवृद्धि दूर होगी. इसे नयनामृत गुटिका कहते हैं.

तथा ४–अपामार्ग (आधेझाड़े) के पत्तोंको गोमूत्रमें पीसकर आधे भाग खपरियाके साथ खरल करो और इस खरल कियेहुए पदार्थको जस्तेके टुकड़ोंके ऊपर छाप (लपेट) कर ऊपरसे कपड़मिट्टी लपेट दो तदनंतर सूखजानेपर जंगली कंडोंकी आँचसे गजपुटमें फूंकदो स्वाँग शीतल हो चुकनेपर पीसकर नेत्रोंमें अंजन करो तो झड़े हुए पलक (बरौनी) पुनः जम आवेंगे.

तथा ५–गधेकी डाढ़ घिसकर अंजन करो तो शीतलामें पडी हुई फूली कटकर नेत्र स्वच्छ हो जावेंगे.

तथा ६–आँवले और गंधकसे मारे हुए ताँबेको महीन पीसकर अंजन करो तो सबलवात और पटल आदि सर्व नेत्ररोग दूर होंगे. ये सर्व यत्न वैद्यरहस्यमें लिखे हैं.

तथा ७–५ टंक शुद्ध नीला थोथा और ५ टंक फूली हुई फिटकरी ५ टंक पिप्पलीके (जलमें भिगोकर निकाले हुए) बीज और ५ मासे मिश्रीको महीन पीसकर अंजन करो तो फूली, नेत्रस्राव और धुंध ये सर्व विकार दूर होवेंगे.

तथा ८ शंखकी नाभि, बहेडेकी बीजी, हरेंकी छाल, मैनसिल, पिप्पली, कालीमिर्च, कूट और बचको बकरीके दूधमें खरल करके गोली बनाओ और सूखनेपर जलमें घिसकर लगाओ तो तिमिर, पटल, काँच, रतौंधी, फूली और मांसवृद्धि ये सर्व विकार हीन होजावेंगे इसे चन्द्रोदयगुटिका कहते हैं.

तथा ९–हलदी, नीमके पत्ते, पिप्पली मिर्च, वायविडंग, नागरमोथा और हरेंकी छालको बकरीके मूत्रमें ३ दिनपर्यंत खरल करके गोलिया

बनालो और छायामें सुखनेके अनंतर गोमूत्रके साथ घिसकर अंजन करो। तो नेत्रकी काच, जलमें घिसकर लगाओ तो तिमिर, मधुमें घिसकरके लगाओ तो पटल और स्त्रीके दूधमें घिसकरके लगाओ तो फूली दूर हो जावेगी. इसे चन्द्रप्रभागुटिका कहते हैं.

तथा १०-१ भाग हरेंकी छाल, २ भाग बहेडेकी छाल, ४ भाग आँवलेकी छाल, २ टकेभर शतावरी, १ टकेभर लोहसार, २ टंक मुलहठी, २ टंक तज, ५ टंक सेंधानोन, ५ टंक पिप्पली और इन सबके समान मिश्रीका २ टंक चूर्ण मधु और घृतके संयोगसे ४९ दिन पर्यंत खिलाओ तो तिमिर, पटल, नेत्रकाँच, रतौंधी, फूली, नेत्रस्राव और सबलबात आदि सर्व नेत्र विकार दूर होजावेंगे. इसे द्वादशामृतहरीतकी कहते हैं.

तथा ११-सेरभर त्रिफलाका रस, सेरभर गुरचका रस, सेरभर आँवलेका रस, सेरभर जलभंगरेका रस, सेरभर अडूसेका रस, सेरभर शतावरीका रस, सेरभर बकरीका दूध और आधसेर (कमलगट्टा, त्रिफला, मुलहठी, पिप्पली, दाख, मिश्री और कटियालीका) क्वाथ, सेरभर गोघृत और २ सेर गोदुग्ध इन सबको पकाकर रसादिक जलके घृतमात्र रहजानेपर छानलो और इस घृतमेंसे नित्य २ टकेभर खिलाओ तो तिमिर, काँच, फूली आदि नेत्ररोग तथा सर्व वायुजन्य रोग दूर होवेंगे. इसे महात्रिफलादिघृत कहते हैं.

तथा १२-१० मासे शुद्ध सफेदा महीन पीसकर भली भाँति धोओ. तदनंतर तीनबार धोचुकनेपर सुखाकर पीसलो और लडकीवाली स्त्रीके दूध की ५ पुटें देकर शुद्ध करलो पश्चात् इसीमें ३ मासे अत्तारकी औषध, १ मासे कवीला, ४ रत्ती भीमसेनी कपूर, १ मासे श्वेत गोंद इन सबको गुलाबजलसे खरल करके बेरके समान गोलियाँ बनालो और सूखनेपर गुलाबजल या सामान्य जलके साथ घिसकरअंजन करो या लेप लगाओ तो उष्णताजन्य नेत्रविकार सर्वथा नाश होजावेंगे.

तथा १३-अब हम अंतको समस्त मनुष्योंके सुगमता तथा निष्परिश्रमपूर्वक प्राप्त होनेयोग्य एक साधारण उपाय लिखते हैं.

श्लोक-भुक्त्वा पाणितलं घृष्ट्वा चक्षुषोर्यदि पीयते ।
जातरोगा विनश्यंति तिमिराणि तथैव च ॥ इत्युक्तं शार्ङ्गधरे ॥

भाषार्थ—शार्ङ्गधरमें कहा है कि, भोजन करके आचमन करने पश्चात् उन गीले हाथोंकी हथेली (करतल) परस्पर घिसकर अपने नेत्रोंपर नित्य फेरा करो तो तिमिरादि सर्व नेत्रविकार दूरही भागते रहैंगे.

इति नूतनामृतसागरे चिकित्साखंडे शिरोरोग नेत्ररोग यत्ननिरूपणं नामाष्टत्रिंशस्तरंगः ॥ ३८ ॥

अथ कर्णरोग-नासारोग ।

मयात्र कर्णरोगस्य तथा नासामयस्य च ॥
तरंगे नन्दरामे हि कथ्यते रुक्प्रतिक्रिया ॥ ३९ ॥

भाषार्थः—अब हम इस ३९ उन्तालीसवें तरंगमें कान और नाकके रोगोंकी चिकित्सा यथाक्रमसे वर्णन करते हैं.

कर्णरोगयत्न १—अकाव (आंकडा) के पत्तोंको खटाईसे पीसकर रस निकालो इस रसमें तेल और नोन मिलाकर थूहरकी लकडीमें भरदो तदनंतर इस लकडीको कपडमिट्टी करके पुटपाक रीतिसे उसका रस निकाललो जो यह रस उष्णकर सहता सहता कानमें डालो तो कानका शूल दूर होगा.

तथा २—आँकडेके पत्ते घी लगाकर अग्निसे तपाओ और उनका रस निकालकर कुछ उष्ण सहता हुआ कानमें डालो तो कानका शूल दूर होगा.

तथा ३—बकरीके मूत्रमें सेंधानोन औटाकर सहता सहता कानमें डालो तो कानका शूल दूर होगा.

तथा ४—अरलू (अलाम्बु) के रसमें तेल पकाकर यह तेल सहता हुआ कानमें डालो तो त्रिदोषज कर्णशूल भी शांत होगा.

तथा ५—बेलकी जड़का रस, सोंठ, मिर्च पीपल, पीपलामूल, आँधेझाडेका खार, जवाखार, कूट और गोमूत्रको तेलमें मंद मंद आँचसे पकाकर रस जलके तेल मात्र रहजानेपर छानलो और इसे कानमें डालो तो बाधिर्य (बहरापन) कर्णनाद और कर्णस्राव आदि कानके सम्पूर्ण रोग अच्छे होजावेंगे. इसे बिल्वतैल कहते हैं.

तथा ६—कच्चे बिल्वफलके रसमें सज्जीका चूर्ण डालकर पिलाओ तो कानकी पीडा, बहरापन, कानकी, जलन आदि कर्णरोग अच्छे होजावेंगे.

तथा ७–मूलीकी जडका रस, मधु और तेलको तपाकर सुहातासुहाता कानमें डालो तो कानका वहरापन अच्छा होगा.

तथा ८–आँवले, जामुन, महुआ और चमेलीके पत्ते तथा बडके जडकी छाल इन सबका रस तेलमें पकाकर यह तेल कानमें डालो तो कानसे पीवका वहाव बंद हो जावेगा.

तथा ९–स्त्रीके दूधमें रसौत घिसकर कुछ मधुके संयोगसे कानमें डालो तो कानसे पीवका वहाव बंद होजावेगा.

तथा १०–कूट, हींग, दारुहलदी, सौंफ, सोंठ, सैंधानोन, इनका चूर्ण बकरेके मूत्रके साथ तेलमें पकाकर यह तेल कानमें डालो तो कानसे पीवका वहाव रुक जावेगा.

तथा ११–समुद्रफेन, सुपारीकी राख और कत्थाको पीसकर कानमें डालो तो कानसे पीवका बहाव बंद हो जावेगा.

तथा १२–बडी सीपका चूर्ण तेलमें पकाकर यह तेल कानमें डालो तो कानका व्रण (फोड़ा) अच्छा हो जावेगा.

तथा १३–एक एक टकेभर आँवलासार गन्धक, मैनसिल, हलदी और धतूरेके पत्तोंका रस इन सबको महीन पीसकर ८ टकेभर तेलके साथ पकाकर यह तेल कानमें डालो तो कानका व्रण अच्छा होगा.

तथा १४–बैंगनकी जडका रस और सरसोंका तेल मिलाकर कानको धूनी दो तो कानकी कृमि गिर जावेंगी. तथा उपरोक्त बारहों यत्न भी कृमि कर्ण रोगकी निवृत्यर्थ उपयोगी होते हैं.

[विशेषतः–कर्णशोथ कर्णार्श और कर्णार्बुद रोगोंकी चिकित्सा शोथ, अर्श और अर्बुद रोगोंमें कथित यत्नोंसेही करो, ये सर्व यत्न भावप्रकाशमें लिखे हैं.]

तथा १५–सोंठ, पिप्पली, सैंधानोन, कूट, हींग, बच, लहसुन और आकके पक्के पत्तोंका रस ये सब तिल्लीके तेलमें पकाकर यह तेल कानमें डालो तो कानकी पीडा दूर होगी.

तथा १६–बड़ी मोटी सीप, पद्मकाष्ठ, हींग, तुम्बरू, सैंधानोन कूट और बिनौलोंके चूर्णके क्वाथमें ७ टकेभर कडुवा तेल और इन सबके समान हुलहुलका रस डालकर मंद आँचसे पकाओ और सब रसादि जलके

तेलमात्र रहजानेपर छानकर कानमें डालो तो कर्णव्रण, कर्णस्राव, बाधिर्य और कर्णनादादि सम्पूर्णकर्णरोग अच्छे होजावेंगे.

तथा १७-ऽ। पावभर कूकरभँगरेका रस, हरफारेवडी (आँवले जैसी होती है) का रस, चार पैसेभर लहसुनका रस, सौंफ, वच, कूट सोंठ मिर्च और लंवग (दो दो टंक) ऽ॥ आधसेर बकरीका दूध और ५ टकेभर कडुवा तेल इन सबको एकत्रकर मंदआँचसे औटाओ, रसादि जलकर तेल मात्र रहजानेपर छानकर कानमें डालो तो बहिरापन, पीबका बहाव आदि कर्णरोग मात्र अच्छे होजावेंगे. ये सर्व यत्न वैद्यरहस्यमें लिखे हैं.

तथा १८-शतावरी, असगंध, अरंडके बीज और दूधको तिल्लीके तेलमें मंद आँचसे पकाओ और तेलमात्र रहजानेपर छानकर कानकी लोलक (लोंडी) में लगाओ तो लोलकका पकाव तथा पीडा आदि सर्व विकार दूर होकर लोलकका छिद्र बढ जावेगा.

तथा १९-अष्टवर्गमें तेल पकाकर इस तेलका मर्दन करो तो परिपोटिका नाम कर्णरोग अच्छा हो जावेगा.

तथा २०-जोंक लगाकर रक्तमोचन करादो तो कर्णोत्पातरोग अच्छा हो जावेगा.

तथा २१-सुरमा, काकलहरी, बावची और कंकपक्षी (मारवाडमें प्रसिद्ध) का मांस ये सब तेलमें पकाकर कानकी लोलकपर लगाओ तो उन्मथरोग अच्छा होजावेगा.

तथा २२-आम, जामुन और बडके पत्तोंका क्वाथ तेलमें पकाकर यह तेल मर्दन करो तो दुःखवर्द्धन रोग कुशल होगा.

तथा २३-गौके गोबरके अधजले कंडे (छेना, गोबरी उपली) की आँचसे सेंको, या कपूरको दूध तथा गोमूत्रमें पीसकर लेप करो तो कानकी लोलक अच्छी होजावेगी. ये सर्व यत्न भावप्रकाशमें लिखे हैं.

नाशारोगयत्न १--कालीमिर्च, गुड और दहीको मिश्रित करके खिलाओ तो पीनस नाम नाशारोग अच्छा होगा.

तथा २-कायफल, पोहकरमूल, सोंठ काकडासिंगी, पिप्पली, कालीमिर्च और कलौंजी इनका २ टंक चूर्ण अद्रखके रसके साथ खिलाओ या

इसीका क्वाथ पिलाओ तो पीनस, स्वरभंग, कफ श्वास और सन्निपात ये सर्व रोग अच्छे होवेंगे.

तथा ३–कायफल, हींग, मिर्च, लाख, इन्द्रयव, कूट, बच, वायविड़ंग और सहँजनेकी जड़का क्वाथ पिलाओ तो पीनस दूर होगी.

तथा ४–सोंठ, कालीमिर्च, पिप्पली, चित्रक, तालीसपत्र, डासरिया, अमलवेत, चव्य, जीरा, इलायची, तज और पत्रजका चूर्ण इन सबके समान पुराने गुड़में मिलाकर २ टंक प्रमाणकी गोलियाँ बनालो जो इसमेंसे १ गोली नित्य १० दिनपर्यंत खिलाओ तो पीनस, कास और अरुचि ये सब रोग दूर होंगे, इसे व्योषादिगुटिका कहते हैं.

तथा ५–कटियाली, दात्यूणी, बच, सहँजनेकी छाल, तुलसीपत्र, सोंठ, मिर्च, पीपल और सैंधानोन इन सबको तेलमें पकाकर इस तेलका नास (सुँघनी) दो तो पीनस दूर होगी. इसे व्याघ्रीतैल कहते हैं.

तथा ६–मुँगनेकी छाल, कटियाली, निसोत, सोंठ, मिर्च पीपल, सैंधा नोन और विल्वपत्रका रस इन सबको तेलमें पकाकर इस तेलका नास दो तो पीनस अच्छी होगी, इसे शिग्रुतैल कहते हैं.

तथा ७–वायविड़ंग, सैंधानोन, हींग, गूगल, बच और मैनसिलके चूर्णका नास दो तो पीनसरोग अच्छा होगा.

तथा ८–भाँगके पत्तोंका रस और सैंधानोन तेलमें पकाकर तेलका नास दो तो पीनस अच्छी होगी.

तथा ९–जीरेका चूर्ण, घी और शक्करके साथ नित्य खिलाओ तो पीनस दूर होगी.

तथा १०–रात्रिको सोनेके समय औटायाहुआ अर्द्धावशेष जल नित्य पिलाओ तो पीनस अच्छी होजावेगी.

तथा ११–घी, गूगल और मोमका मिश्रणकर नाकके सन्मुख धूनी दो तो विशेष छींके आना बंद हो जावेगा.

तथा १२–सोंठ, कूट, पिप्पली, बेलका गूदा और दाखके क्वाथमें तेल पकाकर इसका नास दो तो अधिक छींकें आना बंद हो जावेगा.

तथा १३-धमासा, पिप्पली, दारुहलदी, आँधेझारेके बीजे, जवाखार,

किरमालेकी गिरी (न हो तो बक्कल) और सैंधानोन इनका चूर्ण तेलमें पकाकर नाकमें लगाओ तो नाशार्श दूर होगा.

विशेषतः—नाशार्बुद, नाशशोष, नाशार्श, नाशापाकादि शेष नाशा रोगोंके यत्न अर्बुद,शोष,अर्श, पाकादि रोगोंमें वर्णित चिकित्सासेही करो.

इति नूतनामृतसागरे चिकित्साखण्डे कर्णरोग-नासारोग यत्न निरूपणं नामैकोनचत्वारिंशत्तमस्तरंगः ॥ ३९ ॥

अथ मुखरोग।

मयात्राननरोगाणां सुविचार्य्य यथाक्रमात् ॥
तरंगेऽभ्रसमुद्रे वै कथ्यते रुक्प्रतिक्रिया ॥ ४० ॥

भाषार्थः—अब हम इस ४० चालीसवें तरंगमें मुखके रोगोंकी चिकित्सा भलीभाँति विचारपूर्वक यथाक्रमानुसार लिखते हैं.

ओष्ठरोगयत्न १—जौंकें लगाकर या सीर छुड़ाकर ओष्ठका रक्तमोचन कराओ तो ओष्ठरोग दूर होगा.

तथा २—घृतमें शुद्ध मोम तपाकर इससे सेंक करो तो ओष्ठरोग दूर होगा.

तथा ३—तेल, घृत, मोम और मेद (चर्बी) आदि स्नेहपदार्थोंमें मोम तपाकर इससे सेंक करो तो ओष्ठरोग दूर होगा.

तथा ४—शीतल ओषधोंका लेप करो तो ओष्ठरोग दूर होगा.

तथा ५—प्रियंगुपुष्प, त्रिफला और लोधको स्नेहमें तपाकर सेंक करो या मधुके साथ खिलाओ तो ओठोंका रोग दूर हो.

तथा ६—ओष्ठोंमें व्रण पड़जावें तो उनके यत्न पूर्वोक्त व्रण लिखित यत्नोंके समानही करो.

(विशेषतः—ओष्ठोंमें चूर्ण, अवलेह आदि औषध अंगुलीसे लगाना चाहिये इस क्रियाको प्रतिसारण कहते हैं.)

दंतमूलरोगयत्न १—मुखका रक्तमोचन कराके सोंठ, सरसों और त्रिफलाके क्वाथसे कुल्ले कराओ तो दंतमूल (मसूढ़े) अच्छे हो जावेंगे.

तथा २—हीराकसीस, पठानीलोध, प्रियंगुपुष्प, मैनसिल और तेजबल इनको मधुके साथ पीसकर लगाओ तो मसूढ़े अच्छे हो जावेंगे.

तथा ३–किम्बा घीके कुल्ले कराओ तो मसूढ़े अच्छे हो जावेंगे.

तथा ४–मुखका रक्तमोचन कराके पंचलोन, जवाखार और मधुके क्राथसे कुल्ले कराओ तो दंतपुप्पुट नाम मसूढोंका रोग अच्छा होगा.

तथा ५–चिकने पदार्थ खिलाओ और तेलके कुल्ले कराओ तो दंतवेष्टि नाम मसूढोंका विकार दूर होगा.

तथा ६–लोध, पतंग, महुआ, लाख, और मौरसिरीके बक्कलका चूर्ण मुँहमें मलो तो चलदंत नाम मसूढोंका रोग अच्छा होगा.

तथा ७–नागरमोथा, हर्रेकी छाल, सोंठ, मिर्च, पीपल, वायविडंग और नीमके पत्तोंके चूर्णकी गोली गोमूत्रके साथ बनाकर छायामें सुखाओ और सोते समय १ गोली मुँहमें रक्खो तो चलदंतरोग दूर होकर दंत दृढ हो जावेंगे. इसे भद्रमुस्तादि गुटिका कहते हैं.

तथा ८ नीले फूलका कटसेला (खटसेरुआ) धमासा, खैरसार, जामुनकी छाल, आमकी छाल, मुलहठी और कमलगट्टा ये सब टके टकेभर चूर्णकर १६ सेर जलमें औटाओ और चतुर्थांश रहजानेपर बकरीके दूध या तेलमें पकाओ तदनंतर रसादिक जलकर स्नेहमात्र रहजाने पर इस का कुल्ला २ दो घडी पर्यंत मुँहमें रक्खो तो दांत दृढ़ हो जावेंगे इसे सहचराद्य तेल कहते हैं.

तथा ९–मुँहका रक्तमोचन कराके लोध, नागरमोथा और रसौतका चूर्ण मधुके साथ मसूढ़ोंपर लगाओ और उत्तम दूधके कुल्ले कराओ तो सौषिर नाम मसूढोंका रोग अच्छा हो.

तथा १०–मसूढोंका रक्तमोचन कराके सोंठ, सरसों और त्रिफलाके क्राथसे कुल्ले कराओ तो परिदर और उपकुश नाम मसूढोंके दोनों रोग दूर होवेंगे.

तथा ११–रक्तमोचन कराके गूलरके पत्ते, मधु, नोन, सोंठ, मिर्च और पीपलके क्राथसे कुल्ले कराओ और ऊपरसे लवण तथा कोई अन्य क्षार लगादो तो मसूढोंके व्रण अच्छे होकर उनकी कृमि नाश हो जावेंगी.

तथा १२–प्रथम मसूढोंका मांस कटाकर मधुके कुल्ले कराओ, तदनंतर बच, तेजबल, पाठ, सज्जी, जवाखार और पिप्पलीका चूर्ण उनपर लगाओ तो खलिवर्द्धननामी दंतमूलरोग नाश होगा.

तथा १३–शस्त्रसे मसूढोंका मांस कटाकर पटोल, नीमके पत्ते और

त्रिफलाके क्काथसे कुल्ले कराओ तो पंच नाडीव्रणनाभी ममूढोंके रोग अच्छे होजावेंगे.

तथा १४—चमेलीके पत्ते, कटियाली, धतूरेके पत्ते, मजीठ, गोखरूका पंचांग, लोध, खैरसार और मुलहठीके क्काथमें तेल पकाकर इसके कुल्ले कराओ तो व्रणादि ममूढोंके समस्त रोग दूर होवेंगे.

दंतरोगयत्न १—लोध, कायफल, मजीठ, कमलगट्टा, कमलकेशर, रक्तचंदन और मुलहठी ये सब टके टकेभर लेकर क्काथ बनाओ तदनंतर इस क्काथमें सेरभर लाखका रस, पावभर तिलीका तेल और पावभर गोदुग्ध डालकर मंद मंद आँचसे औटाओ और रसादिक जलकर तेलमात्र रह जानेपर १ घडीपर्यंत इसका कुल्ला मुँहमें रखाओ तो दाँतोंके आठों रोग दूर होकर दाँत दृढ होजावेंगे इसे लाक्षादि तैल कहते हैं.

तथा २—वातहारी तैलके कुल्ले कराओ तो दाँत दृढ होजावेंगे.

तथा ३—हींगको उष्ण करके दांतोंके बीचमें दबाये रक्खो तो दांतोंकी कृमि मर जावेंगी.

तथा-४ काकलहरी, नीलकी जड और पटोलकी जड़ इनके चूर्णसे दांतोंका मंजन कराओ तो दांतोंके कीडे मर जावेंगे.

तथा ५—साँभरनोन, नरकचूर, सोंठ और अकरकरा इनका चूर्ण दांतोंमें रगडो तो खट्टे हुये (आँवे) दांत अच्छे हो जावेंगे.

तथा ६—पंचनोन, नीलाथोथा, सोंठ, मिर्च, पीपल, हीराकसीस, पीपलामूल, माजूफल और वायविड़ंग इनके चूर्णसे दंतमंजन करवाओ तो सम्पूर्ण दंत रोग अच्छे हो जावेंगे.

तथा ७ हीराकसीस, माजूफल, सोनामक्खी, लोहचूर, मजीठ, त्रिफला और फूलीहुई फिटकरी, इनके १ मासे महीन चूर्णसे सात दिन पर्यंत दंत मंजन कराओ तो सर्व दाँतोंके रोग दूर होकर दृढ हो जावेंगे.

तथा ८—सेंकी फिटकरी, नीलाथोथा, तेजबल, पपडियाकत्था, सोंठ, मिर्च, पीपल, हीराकसीस, आँवला, माजूफल, मजीठ, रूमीमस्तगी, सैंधानोन, चिकनी सुपारी, मौरसिरीका बक्कल और पीपलकी कच्ची लाख इनके चूर्णको मौरसिरीके रसकी २१ पुट और निर्गुंडीके रसकी २१ पुट देकर घाममें सुखालो और कुछ सैंधानोनके संयोगसे दंतमंजन करो तो सर्व दंतरोग दूर होंगे.

तथा ९–कूट, सोंठ, मिर्च, पीपल, तीव्राजवायन, हरेंकी छाल और कत्था इनके चूर्णसे दंतमंजन करो तो दंतरोग दूर होगा.

तथा १०–अंतर्वेदी (गंगापारकी) तमाकू, अकरकरा, कायफल, मिर्च, सोंठ, पीपल, नोन और वायविडंग इनके चूर्णसे दंतमंजन करो तो दांतोंकी सर्व वेदना दूर होगी.

तथा ११–पीपल, सैंधानोन, जीरा, हरेंकी छाल, और मोचरस इनके चूर्णसे दंतमंजन करो तो दाँत दृढ होकर सर्व पीडा दूर होगी.

तथा १२–नागरमोथा, हरेंकी छाल, सोंठ, मिर्च, पीपल, वायविडंग और नीमके पत्ते इनका चूर्ण गोमूत्रके साथ तीन पुटें देकर गोली बनाओ और छायामें सुखाकर १ गोली रात्रिको सोते समय मुँहमें धरदो और प्रातःकाल थूककर कुल्ले कराओ तौ सर्व दंतरोग दूर होंगे.

तथा १३–फिटकरी, नीलाथोथा, खैरसार, पपडियाकत्था, तेजबल, कच्ची लाख, वंशलोचन, मिर्च, आँवला, रूमीमस्तगी, मजीठ, मौरासिरीका बक्कल, सैंधानोन, माजूफल और चिकनीसुपारी इनके चूर्णको निर्गुंडीके रसकी, चमेलीके रसकी और कुछ मौलसिरीके रसकी बहुतसी पुटें देकर सुखालो तदनंतर उसका महीन चूर्णकर दंतमंजन करो तो सर्व दंतरोग दूर होकर दाँत दृढ़ हो जावेंगे.

तथा १४–सैंधानोन, खैरसार, कूट, धना, सोंठ और सेंकेजीरेका चूर्ण कर दंतमंजन करो तो दाँतोंसे निकलता हुआ रक्त बंद होजावेगा.

जिह्वारोगयत्न १–जीभका रक्तमोचन कराओ तो जिह्वारोग दूर होगा.

तथा २–गुर्च, पिप्पली, नीमकी छाल, और कुटकी इनके क्वाथमें कुल्ले कराओ तो जीभके सर्व रोग दूर होंगे.

तथा ३–ओष्ठरोग लिखित चिकित्सासे भी जिह्वारोग दूर होगा.

तथा ४–सोंठ, मिर्च, पीपल, जवाखार और हरेंका चूर्ण जीभपर लगाओ तो जिह्वारोग दूर हो या इसीको तेलमें पकाकर कुल्ले कराओ तो उपजिह्वारोग दूर होगा.

तथा ५–कचनारकी छालके क्वाथसे कुल्ले कराओ तो जीभके सम्पूर्ण रोग दूर हो जावेंगे.

तालुरोगयत्न १–गलशुंडीको चतुराईपूर्वक शस्त्र या विषसे काटदो तो गलशुंडी नाम तालुरोग नाश होगा.

तथा २–कूट, मिर्च, सैंधानोन, पाठ और नागरमोथा इनका चूर्ण गलशुंडीपर मलो तो गलशुंडी अच्छी होजावेगी.

तथा ३–पीपल, अतीस, कूट, वच, सोंठ, कालीमिर्च और सैंधानोन इनका चूर्ण मधुके साथ लगाओ तो गलशुंडी अच्छी होगी.

तथा ४–पीपल, अतीस, कूट, वच, रास्ना, कुटकी और नीमकी छाल इनका क्वाथ पिलाओ तो गलशुंडी और तुंडकेशरी आदि समस्त तालुरोग दूर होवेंगे.

कंठरोगयत्न १–जोंक लगाकर गलेका रक्तमोचन कराओ तो रोहिणी नाम कंठरोग दूर होगा.

तथा २–वमन, धूम्रपान, औषधोंके कुल्ले कराना, सीर छुडाना लवणका सेंक देना और स्नेहके कुल्ले कराना ये सर्व कार्य कंठरोगपर अतिलाभकारी हैं.

तथा ३–मिश्री, मधु और प्रियंगुपुष्प इनका क्वाथ पिलाओ तो पित्तका कंठरोग दूर होगा.

तथा ४–कुटकी और धौंसेका[1] क्वाथ दो तो कफका कंठरोग दूर होगा.

तथा ५–कुटकी, सोंठ, पिप्पली, मिर्च, वायविडंग, दात्यूणी और सैंधानोन इनका क्वाथ तेलमें पकाकर उसका नाश दो तौ कफका कंठ-रोग अच्छा होजावेगा.

तथा ६–विष्णुक्रांताका क्वाथ पिलाओ तौ रोहिणी कंठरोग अच्छा होगा.

तथा ७–विष्णुक्रांता और शंखाहोलीको जलमें पीसकर पिलाओ तो कंठशालूक, तुंडकेशरी, उपजिह्वक, अधिजिह्वक वृंदगिलायु और एक-वृंद आदि समस्त कंठरोग दूर होवेंगे.

तथा ८–शस्त्रक्रियासे कंठका रक्तमोचन कराओ तो गलविद्रधि आदि सर्व कंठरोग अच्छे होजावेंगे.

---

१ धौंसा–धमासा–रसोंईके वरका जाला आदि छत्तका कचडा जो अधर में छायारहताहै ।

तथा ९-रक्तमोचन कराओ या नास दो तो सर्व कंठरोग दूर होंगे.

तथा १०-दारुहल्दी, नीमकी छाल, इन्द्रयव, हरेंकी छाल और तज इनका क्काथ मधुके साथ दो तो कंठरोग सर्व अच्छे हो जावेंगे.

तथा ११-कुटकी, अतीस, दारुहल्दी; नागरमोथा और इन्द्रयव इनका क्काथ गोमूत्रके साथ पिलाओ तो सर्व कंठरोग दूर होंगे.

तथा १२-हरेंकी छालका क्काथ मधुके साथ पिलाओ तो सर्व कंठरोग दूर होवेंगे.

तथा १३-द्राक्ष, कुटकी, सोंठ, मिर्च, पीपल, दारुहल्दी, तज, त्रिफला, नागरमोथा, पाठ, रसोत मूर्वा, तेजबल और हल्दी इनका क्काथ मधुके साथ पिलाओ या इसी क्काथके कुल्ले कराओ या इन्हीं औषधोंके चूर्णको मधुके साथ गोलियाँ बनाकर १ गोली मुँहमें धराओ तो सर्व कंठरोग दूर होवेंगे.

तथा १४-तेजबल, पाठ, रसोत दारुहल्दी और पीपल इनका चूर्णकर मधुके साथ गोलियां बनाकर १ गोली मुँहमें धरो तो सर्व कंठरोग दूर होवेंगे.

सम्पूर्ण मुखरोगयत्न १-लवण और फिटकरीके जलसे कुल्ले कराओ तो वातके छाले अच्छे होंगे.

तथा २ वातहारी तैलके कुल्ले कराओ तो वातके छाले दूर होंगे.

तथा ३-मुलहठी और खैरसार इनका क्काथ बनाकर मधुके साथ कुल्ले कराओ तो पित्तसे मुखमें आये हुए छाले अच्छे होजावेंगे.

तथा ४-उष्ण दूधमें घी और मधु मिलाकर कुल्ले कराओ तो पित्तका मुखरोग अच्छा होगा.

तथा ५-नीलाथोथा और फिटकरीका चूर्ण छालोंपर लगाकर मुँहकी लार बहाते जाओ तो कफके छाले दूर होवेंगे.

तथा ६-मुखकी नसोंकी सीर छुड़वाओ तो सन्निपातके छाले अच्छे होंगे.

तथा ७-चमेलीके पत्ते, गिलोय, त्रिफला, जवाखार, दाख और दारुहल्दी इनके क्काथमें मधु मिलाकर कुल्ले कराओ तो त्रिदोषके छाले अच्छे होजावेंगे.

तथा ८-कालाजीरा, कूट और इन्द्रयव इनका चूर्ण दाँतोंके नीचे दबाकर रस थूकते जावो तो त्रिदोषके छाले अच्छे होंगे.

तथा ९–पटोलपत्र, आमलकपत्र और चमेलीपत्र इनके क्वाथसे कुल्ले कराओ तो त्रिदोषका मुखपाक अच्छा होगा.

तथा १०–पटोलपत्र,त्रिफला और दारुहल्दी इनके क्वाथमें मधु मिला कर कुल्ले कराओ तो त्रिदोषका मुखपाक अच्छा होगा.

तथा ११–खश, पटोल,नागरमोथा, हरेंकी छाल, कूट, मुलहठी, किरमालेकी छाल और रक्तचंदन इनके क्वाथके कुल्ले कराओ तो त्रिदोषका मुखपाक अच्छा होगा.

तथा १२–तिलवृक्ष, कमलनाल,घृत, मिश्री,दूध और मधु इन सबको द्रवकर इसके क्वाथके कुल्ले कराओ तो त्रिदोषज मुखपाक दूर होगा.

तथा १३–हल्दी, निम्बपत्र, मुलहठी और कमलनाल इनको तेलमें पकाकर इस तेलसे कुल्ले कराओ तो त्रिदोषज मुखपाक दूर होगा. ये सर्व यत्न भावप्रकाशमें लिखे हैं.

तथा १४–चमेलीके पत्ते, चबाओ तो मुखके छाले मिटजावेंगे.

तथा १५–खैरसार, जायफल, भीमसेनी कपूर, नागकेशर, तज,पत्रज, चिकनी (चोल) सुपारी, इलायची और कस्तूरी चूर्ण खैरसारके क्वाथमें सानकर चनाप्रमाणकी गोलियाँ बनाओ और रोगीके मुखमें १ गोली दबाये रक्खो तो जीभ ओंठ दाँत कंठ तालु और समस्त मुखके रोगमात्र नाश हो जावेंगे.

तथा १६–जवाखार, कस्तूरी, भीमसेनी कपूर, सुपारी और इन सबके समान खैरसार इनको महीन पीसकर गोलियाँ बनाओ और १ गोली मुखमें रखवाओ तो मुखके सम्पूर्ण रोग नाश होंगे.

तथा १७–दारुहल्दी, गिलोय, चमेलीकेपत्ते, दाख, अजवायन और त्रिफलाके क्वाथमें कुल्ले कराओ तो मुखके सम्पूर्ण रोग दूर हो जावेंगे. ये सर्व यत्न वैद्यरहस्यमें लिखे हैं.

तथा १८-लोध,धना,वच, गोरोचन आर मिर्चको जलके साथ पीसकर मुखमंडलपर लेप करो तो मुखपर की छाया (श्यामता) मिट जावेगी.

१९–सरसों, बच, लोध और सैंधानोनको जलमें पीसकर मुखपर लेप करो तो मुखकी छाया दूर होगी.

तथा २०–रक्तचंदन, मजीठ, कूट, लोध, बडके अंकुर और प्रियंगुको जलमें पीसकर लेप करो तो छाया दूर होगी.

तथा २१–जायफलको जलमें घिसकर लेप करो तो छाया दूर होगी.

तथा २२–हल्दीको अकावके दूधमें मथकर मुँहपर लेप करो तो छाया मिट जावेगी.

तथा २३–मसूरको दूधमें पीसकर घृतके संयोगसे लेप करो तो छाया मिटकर मुखकी कांति बढैगी.

तथा २४–केशर, कमलनाल, रक्तचंदन, लोध, खश, मजीठ मुलहठी, पत्रज, कूट, गोरोचन, दोनों हल्दी, लाख, नागकेशर, टेसूके फूल, प्रियंगु, बड़के अङ्कुर, चमेलीके पत्ते, बच और सरसोंके क्वाथमें तेल पकाकर इस तेलका मर्दन करो तो मुखकी छाया, कील, तिल, मसे आदि मुखके सम्पूर्ण विकार दूर होवेंगे. इसे कुंकुमाद्य तैल कहते हैं. ये सब यत्न भावप्रकाशमें लिखे हैं.

इति नूतनामृतसागरे चिकित्साखण्डे मुखरोगयत्ननिरूपणं नाम चत्वारिंशत्तरंगः ॥ ४० ॥

अथ स्त्रीरोग ।

योषामयानां हि मया कथ्यते रुक्प्रतिक्रिया ॥
भूदेवराजसिंधौ च तरंगेत्र यथाक्रमात् ॥ ४१ ॥

भापार्थः–अब हम इस ४१ इकतालीसवें तरंगमें क्रमानुसार स्त्रीरोगकी चिकित्सा कथन करते हैं.

प्रदररोगयत्न १–सोंचरनोन, जीरा,मुलहठी और कमलगट्टे इनका क्वाथ मधुके साथ पिलाओ तो बादीका प्रदररोग (पैर) अच्छा होगा.

तथा २–२ टंक मुलहठी और २ टंक मिश्री इनका चूर्ण तण्डुल जलके साथ दो तो पित्तका प्रदररोग अच्छा होगा.

तथा ३–२ टंक रसोत और २ टंक चौलाईकी जड़ इनको पीस मधुके साथ ७ दिन पिलाओ तो सर्व प्रदर अच्छे होंगे.

तथा ४–आसापालेकी छालका क्वाथ दूधके साथ पिलाओ तो असाध्य प्रदररोग भी दूर होगा.

तथा ५–डाभकी जड तण्डुलजलमें पीसकर तीनदिन पर्यंत पिलाओ तो प्रदररोग अच्छा होगा.

तथा ६–कवीठकी छालका रस और तण्डुलजलमें मधु या मिश्री मिलाकर पिलाओ तो सर्व प्रदररोग अच्छे होंगे.

तथा ७–दारुहल्दी, रसोत, चिरायता, अडूसा, नागरमोथा, रक्तचंदन और अकावके फूलोंका क्वाथ मधुके साथ पिलाओ तो लाल, श्वेत, पीत आदि सर्वप्रकारका प्रदर दूर होगा.

तथा ८–गूलरके सूखे फलोंका चूर्ण मिश्री और मधुमें सानकर १ टकेभरकी गोलियाँ बनालो १ गोली प्रतिदिन ७ दिनपर्यंत खिलाओ तो प्रदररोग अच्छा होगा.

तथा ९–आँवलेकी ५ टंक बीजी जलमें पीसकर मधु और मिश्रीके साथ १५ दिनपर्यंत चटाओ तो श्वेत प्रदर नाश होजावेगा.

तथा १०–२ टंक मूषककी लेंडी और २ टंक मिश्रीका चूर्ण दूधके संयोगसे पिलाओ तो सर्व प्रदर दूर होंगे.

तथा ११–धावडेके फूल, बीजाबोल, मूषककी लेंडी और मिश्रीका २ टंक चूर्ण जलके साथ दो तो प्रदररोग नाश होगा.

तथा १२–कुम्हारके चाककी मिट्टी, गेरू, चमेली, मजीठ, रसोत, धावडेके फूल और राल इनका २ टंक चूर्ण मधुके साथ दो तो स्त्रीके प्रदर आदि समस्त रोग नाश होजावेंगे.

सोमरोगयत्न १–मिश्रीके साथ पक्के केले (कदलीफल) खिलाओ तो सोमरोग दूर होगा.

तथा २–मधुके साथ आँवलेका रस पिलाओ तो सोमरोग दूर होगा.

तथा ३–उड़दका आटा, मुलहठी (या बिदारीकंद) और इन दोनोंके समान मिश्री इनका १ टके भर चूर्ण दूधके साथ १० दिनपर्यंत सेवन कराओ तो सोमरोग दूर होगा.

मूत्रातिसारयत्न १–ताड़की जड़, खारक, मुलहठी और विदारीकंदका १ टकेभर चूर्ण मधु और मिश्रीके साथ खिलाओ तो मूत्रातिसार दूर होगा.

तथा २–पवाँड (चिरोंटचा) की जड, तण्डुलजलके साथ पिलाओ तो मूत्रातिसार नाश होगा.

तथा ३–श्वेत मूसली, ताडकी जड, खारक और पक्के केलोंको दूधके साथ सेवन कराओ तो मूत्रातिसार दूर होगा.

वन्ध्यारोगयत्न १–स्त्रीको नित्य मछलीका मांस, या काँजी, या तिल या उडद, या दही खिलाओ तो रजोधर्म प्राप्त होकर वन्ध्या (बाँझ) दोष निवृत्त होजावेगा.

तथा २–इक्षु (साँठे) के बीज, कड़ुई तूँबी, दात्यूणी, पीपल, गुड़, मैनसिल, जवाखार, दारूका जावा (मद्यका वेसवार अर्थात् मसाला) और थूहरके दूधकी बत्ती बनाकर यह बत्ती योनिमें धरो तो तत्काल रज प्राप्त होकर वन्ध्यादोष दूर होगा.

तथा ३–खिरैंटी, गंगेरनकी छाल, बडके अंकुर, महुआ और नागकेशरका ५ टंक चूर्ण, गोदुग्ध और मधुके साथ १५ दिनपर्यंत सेवन कराओ तो निश्चय है कि, बाँझ स्त्रीको पुत्रोत्पन्न हो.

तथा ४–मालकाँगनी, राई, विजयसार और वचको जलमें पीसकर ५ दिनपर्यंत पिलाओ तो स्त्रीधर्म होकर वन्ध्यारोग दूर होगा.

तथा ५–काले तिल, सोंठ, मिर्च, पीपल, भारंगी और गुडके १ टंक चूर्णका क्काथ १४ दिनपर्यंत पिलाओ तो रजोधर्म होकर रुधिर गुल्म और वन्ध्या दोष दूर होगा.

तथा ६–असगंधका क्काथ, गोदुग्ध और गोघृतके साथ ऋतुप्राप्तकालमें ५ दिनपर्यंत नित्य प्रातःकाल पिलाओ तो गर्भ धारण होगा.

तथा ७–पुष्यनक्षत्रके तीन दिनमें उखाडी हुई श्वेत कटियालीकी जडका २ टंक चूर्ण दूधके साथ ऋतुकालमें ३ दिनपर्यंत पिलाओ तो निश्चय गर्भ धारण होगा.

तथा ८–कठसेला (खटसेरुआ) की जड, धावडेके फूल, वडके अंकुर और कमलगट्टे इनका ढ़ाई (२॥) टंक चूर्ण ऋतुकालमें जलके साथ दो तो निश्चय गर्भ धारण होगा.

तथा ९–पार्श्वपीपलकी जड, या बीज श्वेत जीरा और सरपुंखाका २ टंक चूर्ण दूधके साथ ऋतुकालमें पिलाओ तो निश्चय गर्भधारण होकर पुत्रोत्पत्ति होगी.

तथा १०—वाराहीकंद, कवीठ और शिवलिंगीका २ टंक चूर्ण दूधके साथ ऋतुकालके समय पिलाओ तो निश्चय पुत्रोत्पन्न होगा.

तथा ११—गर्भिणी स्त्रीको प्रतिदिन पलाशका १ पत्र गोदुग्धके साथ पिलाओ तो उसके अतिपराक्रमी पुत्रहो. ये सर्व यत्न भावप्रकाशमें लिखेहैं.

तथा १२—गोदुग्धमें बिजौरेके बीज सिजा (उबाल-चुडो) कर तुल्यघी और तुल्य नागकेशर मिलाओ तदनंतर इसका ५ टंक चूर्ण मिश्रीके साथ ऋतुकालमें सातादिन पर्यंत खिलाओ तो स्त्रीको गर्भधारण होगा.

तथा १३,एरंडीकी बीजी और बिजौरेके बीजोंको घृतमें पीसकर ऋतुकालमें दूधके साथ ३ दिनपर्यंत सेवन कराओ तो स्त्रीको गर्भधारण होगा.

तथा १४--सोंठ, मिर्च, पीपल और नागकेशरका चूर्ण घृतके साथ ऋतुकालमें ३ दिनपर्यंत खिलाओ तो स्त्रीको गर्भ धारण होगा. ये सर्व यत्न सर्वसंग्रहमें लिखे हैं.

गर्भनिवारणयत्न १-पीपल, वायविडंग और सुहागेका चूर्ण जलकेसाथ ऋतुकालमें ५ दिनपर्यंत पिलाओ तो स्त्रीको कदापि गर्भधारण नहीं होगा.

तथा २—१ टकेभर पुराना गुड, जलमें औटाकर १७ दिनपर्यंत पिलाओ तो उस स्त्रीको कदापि गर्भधारण न होगा.

तथा ३—नीमके (निबोलीमेंसे निकाले) तेलमें रुई भिगोकर ५ दिनपर्यंत योनिमें धरो तो वह स्त्री कदापि गर्भ धारण न करेगी. ये सर्व यत्न भावप्रकाशमें लिखे हैं.

योनिरोगयत्न १—सैंधानोन, तगर, कटियाली और देवदारु इनके क्वाथमें तेल पकाकर इस तेलका फुहा (भीगीहुई रुई) योनिमें धरो तो विप्लुता नाम योनिरोग अच्छा होगा.

तथा २—पाटलके पत्ते या छालको सिजाकर उस जलसे योनिको पसीना दो या धोओ तो वातजन्य योनिरोग दूर होगा.

तथा ३—तिलोंके तेलमें निंबोली (नीमके बीज) तल (चुड़ो) कर इस तेलसे योनिको सेंको तो पित्तका योनिरोग अच्छा होगा.

तथा ४-पित्तनाशक औषधोंके घीसे सेंको तो पित्तजयोनिरोग दूर होगा.

तथा ५—आँवलेके रसमें मिश्री डालकर १० दिनपर्यंत पिलाओ तो योनिकी दाह दूर होकर योनि शीतल होजावेगी.

तथा ६–कूकर भँगरेका रस और तण्डुल जलमें मिश्री मिलाकर पिलाओ तो योनिसे पीवका बहाव बंद होगा.

तथा ७–नीमके पत्ते, किरमालेके पत्ते, अडूसेके पत्ते, पटोलके पत्ते और वच, इनके क्वाथसे योनिको धोओ तो योनिकि दुर्गन्धि दूर होगी.

तथा ८–पीपल, मिर्च, उर्द सौंफ, कूट और सैंधानोनके क्वाथसे योनिको धोओ तो योनिके सम्पूर्ण कफजन्यरोग दूर होंगे.

योनिसंकोचनयत्न १–सूंगके फूल, खैरसार, हर्र,जायफल, माजूफल, और सुपारीका महीन चूर्ण योनिमें धरो तो स्त्रीकी योनि संकीर्ण होजावेगी.

तथा २–योनिको केवांच (कांचकुडी) के क्वाथसे धोओ तो योनिसं कीर्ण होजावेगी.

तथा ३–मोचरस या भंगके चूर्णकी पोटली बाँधकर योनिमें धरो तो योनि संकीर्ण (गाढी) हो जावेगी.

तथा ४–आँवलेकी जड, बंबूलनी (बोल, बावराबमूर) टेसू, बेरकी जड, अडूसाकी जड और माजूफल इनके क्वाथसे योनिको धोओ तो योनि गाढी होजावेगी.

तथा ५–दहिसे योनिको धोओ तो योनि गाढी हो जावेगी.

तथा ६–फूली हुई फिटकरी, धावडेके फूल और माजूफलके चूर्णकी पोटली योनिमें धरो तो भग संकीर्ण हो जावेगा.

निकंदरोगयत्न १–गेरु, वायविडंग, हल्दी और कायफलका चूर्ण त्रिफलाके क्वाथ और मधुमें सानकर योनिमें धरो तो निकंदनाम योनिका रोग अच्छा होगा.

गर्भस्तंभयत्न १–झाऊकी जड, अतीस, नागरमोथा, मोचरस और इन्द्रयव इनका क्वाथ पिलाओ तो गिरता हुआ गर्भ ठहर जावेगा.

तथा २–कमलनाल, कमलपुष्प और मुलहठीको दूधमें औटाकर गर्भिणी स्त्रीको पिलाओ तो गर्भस्राव थँमकर दाह, प्यास, मूर्च्छा, छर्दि और अरुचि ये समस्त विकार दूर हो जावेंगे.

तथा ३–गोखरू, मुलहठी, कटियाली और मदनबाणके फूलोंको गोदुग्धमें औटाकर पिलाओ तो गर्भपात ठहरकर स्त्रीके शरीरकी संपूर्ण वेदना दूर होगी.

तथा ४--भौंरीके घरकी मिट्टी, मँजीठ, लजनी, किशोरा और कमल-नालको गो दुग्धमें औटाकर पिलाओ तो गिरता हुआ गर्भ ठहर जावेगा.

तथा ५--मुलहठी, सालवृक्षके बीज, क्षीरकाकोली, देवदारु, काले तिल, लुणख्या, रामपीपल, शतावरी, कमलनाल, जवासा, गौरीसर, रास्ना, कटियाली, सिंघाडा, किशोरा, दाख और मिश्रीको औटाकर ७ मासका गर्भ होजानेतक प्रतिमास ७ दिन पिलाओ तो सर्व प्रकारके उपद्रव शांत होकर गर्भपातका भय न रहेगा.

तथा ६--कैथ, कटियाली, बेल, पटोल और साठी इन सबकी जडें दूधमें पकाकर ८ आठवें मासमें पिलाओ तो गर्भ पुष्ट होकर पतनभय न रहेगा.

तथा ७--अधेले अधेलेभर मुलहठी, जवासा, क्षीरकाकोली और गौरीसर इनको दूधमें औटाकर नवमासमें पिलाओ तो गर्भ पुष्ट होकर पतन-भय न होगा.

तथा ८--सोंठ और क्षीरकाकोलीको दूधमें औटाकर दशम मासमें पिलाओ तो गर्भ गिरजानेका भय न रहेगा.

तथा ९--सोंठ, मुलहठी, देवदारु, क्षीरकाकोली कमलगट्टा और मंजीठ, इनका क्वाथ दूधमें औटाकर दूध रहजानेपर १० दशवें मासमें पिलाओ तो सर्वोपद्रव शांत होकर गर्भ पुष्ट और आरोग्य रहेगा.

तथा १०--दूध, मांसरस और पौष्टिक औषधोंका सेवन करावो तो वातनाश होकर वातसे सूखाहुआ गर्भ पुष्ट हो जावेगा.

गर्भिणी रोगयत्न १--मुलहठी, रक्तचंदन, गौरीसर, खश और कमल-गट्टे इनका क्वाथ मिश्री और मधुके साथ पिलाओ तो गर्भिणीका ज्वर दूर होगा.

तथा २--रक्तचंदन, दाख, गौरीसर, खश, मुलहठी, धना, महुआ नेत्रवाला और मिश्री इनका क्वाथ ७ दिन पिलाओ तो गर्भवतीका ज्वर दूर होगा.

तथा ३--चावलका सत्तु, आम और जामुनकी छाल, इनके क्वाथके साथ दो तो गर्भवती स्त्रीका संग्रहणीरोग दूर होगा.

तथा ४--झाऊकी छाल, अलूकी छाल, रक्तचंदन, खिरैंटी, धना, कूडाकी छाल, नागरमोथा, जवासा, पित्तपापडा और अतीस इनका क्वाथ पिलाओ

तो गर्भिणी स्त्रीका अतीसार, ज्वर और संग्रहणी रोग तीनों शमन होजावेंगे.

तथा ५–डाभ, कास, अरंड और गोखरू चारोंकी जड़ें दूधमें औटाकर पिलाओ तो गर्भिणीके हृदयका शूल शांत होगा.

तथा ६–डाभकी जड़, दूबकी जड, वच, रसोत, हींग और सोंचरनोन इनको दूधमें औटाकर पिलाओ तो गर्भवतीका अफरा उतर जावेगा.

तथा ७–डाभ, दूब, कांस, तीनोंकी जड़ें दूधमें औटाकर पिलाओ तो स्त्रीका रुका हुआ मूत्र सुखपूर्वक उतरने लगेगा.

तथा ८–मँजीठ, मुलहठी, कूट, त्रिफला, मिश्री, पाषाणभेद, असगंध, अजमोद, दोनों हल्दी, प्रियंगु पुष्प, कुटकी, कमलगट्टा, रक्तचंदन और दाख ये सब अधेले अधेलेभर लेकर चूर्ण करो और १ सेर गोघृतके साथ चार सेर शतावरीके रसमें मंद मंद आँचसे पकाकर रसादि जलके घृतमात्र रहजानेपर छानलो जो इसमें टकेभर घी प्रतिदिन सेवन कराओ तो समस्त योनिरोग दूर हों और पुरुषको खिलाओ तो नपुंसक भी महाकामी हो जावे तथा इन दोनोंके संसर्गसे बड़ा पराक्रमी, दीर्घायुबलधारी और चतुर पुत्र उत्पन्न होगा.

प्रसूतयत्न १–साँपकी काँचली और मरुवाकी धूनी दो तो स्त्रीको तत्काल बालक सुखपूर्वक उत्पन्न होगा.

तथा २–स्त्रीके हाथपाँवमें काकलहरीकी जड बाँधो तो सुखपूर्वक तत्काल बालक होगा.

तथा ३–स्त्रीके हाथपाँवमें कूकरभंगरा और पाठकी जड बाँधो तो सुखपूर्वक तत्काल बालक होगा.

तथा ४–उपरोक्त जड़ोंके क्वाथमें तेलमिलाकर गर्भको लेप करो तो तत्काल सुखसे उत्पत्ति होगी.

तथा ५–पीपल और वचको जलमें पीसकर भगपर लेप करो तो सुखसे उत्पत्ति होगी.

तथा ६–स्त्रीकी नाभिपर एरंडका तेल लगाओ तो सुखपूर्वक उत्पत्ति होगी.

तथा ७–बिजौरेकी जड और महुआको जलमें पीसकर पिलाओ तो सुखसे बालक होगा.

तथा ८–स्त्रीकी कटिमें साटीकी जड बाँधो तो सुखसे बालक उत्पन्न होगा. ये सब यत्न भावप्रकाशमें लिखे हैं.

तथा ९–अंधाहूली और कलिहारी दोनोंकी जड, स्त्रीकी कटिमें बाँधो तो सुखसे बालक होगा. यह योगचिंतामणिमें लिखा है.

तथा १०–" मुक्ता या सा विमुक्ताश्च मुक्ता सूर्येण रश्मयः । मुक्तः सर्वे भयाद्गर्भः देहि माचिर माचिर स्वाहा" इस मंत्रसे जलको ७ वार मंत्रितकर स्त्रीको पिलाओ तो सुखपूर्वक तत्काल बालक उत्पन्न होगा.

तथा ११–

१६	६	८
२	१०	१८
१२	१४	४

स्त्रीको यह यंत्र धोकर पिलाओतो सुखपूर्वक तुरंत बालक उत्पन्न हो जावेगा.

मूढगर्भयत्न १–यदि स्त्रीके गर्भाशयमें भगके समीप प्रसव कुभांतिसे टेढ़ा मेढ़ा आन अटका हो तो हाथोंमें घी लगाकर अति चतुराई और सावधानीपूर्वक भगमें हाथ प्रवेश करो, तदनंतर प्रथम बालकको भीतरही सीधा करके तत्काल जीवितही बाहर निकाललो तो प्रसव और माता दोनोंका प्राण संरक्षण हो सकेगा.

मृतगर्भयत्न १–स्त्रीके गर्भाशयमेंही प्रसव मृत्युको प्राप्त हो गयाहो तो हाथमें घी लगाकर अति चतुराई और सावधानीपूर्वक एक छोटा और तीक्ष्ण छुरा योनिमार्गसे प्रवेश करो और उदरमेंही उस मृत बालकके अंगोंको खंड खंडकर शनैः शनैः बाहर निकाललो तदनंतर भगको सहते हुए उष्ण जलसे धोकर उष्ण घृत या जलसे सेंक दो और निम्न लिखित उपाय करो तो सर्व उपद्रव शांत होकर माताका प्राण संरक्षण हो जावेगा.

तथा २–कडुई तूँबीके पत्ते और पठानीलोधको जलके साथ पीसकर भगपर लेप करो तो भग ज्योंकी त्यों हो जावेगी.

तथा ३–पलासपापडा और गूलरके पक्के फल तिल्लीके तेलमें पीसकर २१ दिनपर्यंत लेप करो तो छिन्न(चिरीहुई)भग गाढी होजावे.

१ स्त्री चिकित्सा विशेषकर ऐसे प्रसंगोंपर पुरुष नहीं बरन स्त्रीवैद्यों (दाई) की योजना की जाती है क्योंकि स्त्रीकी ऐसी लज्जास्पद दशामें प्राणान्तहोनेपर भी वे अपनी चिकित्सा पुरुष वैद्यसे नहीं करावेंगी.

तथा ४-साँपकी काँचली, कुटकी और सरसोंको कडुवे तेलमें पीस कर भगको धूनी दो तो पूर्ववत् होकर सर्व पीडा शांत होगी.

तथा ५-कलिहारीकी जड़के काथसे हाथ पाँव धुलाओ तो मृतगर्भजन्य भगपीड़ा शांत हो जावेगी.

मह्लकरोगयत्न १-जवाखारको उष्णजलमें पीसकरके पिलाओ तो मह्लकरोग दूर होगा.

तथा २-पीपली, गजपीपली, पीपलामूल, चव्य, चित्रक, सोंठ, मिर्च, सँभालू, इलायची, अजमोद, सरसों, पाठ, सेंकी हींग, भारंगी, बकायन, इंद्रयव, जीरा, मूर्वा, अतीस कुटकी और वायविडंग इनका २ टंक चूर्ण उष्ण जलके साथ दो या काथ बनाकर सैंधानोनके साथ दो तो मह्लक गुल्म शूल आम और वात, कफके समस्त रोग दूर होकर क्षुधाकी विशेषवृद्धि होगी.

तथा ३-सोंठ, मिर्च, पीपल, नागकेशर, तज, पत्रज, इलायची और धना इनका २ टंक चूर्ण पुराने गुड़के साथ दो तो मह्लकरोग दूर होजावेगा.

वर्जितकर्म-प्रसूता स्त्रीको खेद, मैथुन, क्रोध, शीतमें निवास और मिथ्या आहार विहार मत करने दो.

सूतिकारोगयत्न १-वातनाशक समस्त औषधें विशेषकर सूतिका रोग को नाशकारिणी हैं.

तथा २-दशमूलका काथ पिलाओ तो सूतिकारोग दूर होगा.

तथा ३-गुर्च, सोंठ, सहिंजना, पीपल, पीपलामूल, चव्य, चित्रक और नेत्रवालाका काथ मधुके साथ दो तो सूतिकारोग दूर होगा.

तथा ४-देवदारु, कूट, वच, पीपली, सोंठ, चिरायता, कायफल, नागरमोथा, हरंकी छाल, गजपीपली, धमासा, गोखरू, जवासा, कटियाली, गिलोय और कालाजीरा इनका काथ हींग और सैंधानोनके संयोगसे दो तो सूतिका, शूल, कास, श्वास, ज्वर, मूर्च्छा, शिरोरोग, तंद्रा, तृषा, प्रलाप अतिसार और वमन ये सर्व विकार दूर होंगे. इसे देवदार्व्यादिकाथ कहते हैं.

तथा ५-दोनों जीरे, सौंफ, अजवायन, अजमोद, धना, मेथी, सोंठ, पीपल, पीपलामूल, चित्रक, कूट, झाऊकी जड़, बेरकी बीजी और कपेला ये सर्व टकेटकेभर लेकर चूर्ण करो और इस चूर्णको सेरभर गोघृतमें तलकर ४ सेर गोदुग्धमें औटाओ तदनन्तर कड़ा खोवा बनाकर १०० टकेभर

शक्करकी चासनीमें डालदो और १ टकेभरकी गोलियाँ बनाकर प्रतिदिन १ गोली प्रसूता स्त्रीको दो तो प्रसूतरोग, ज्वर, क्षयी, श्वास, कास, पांडु, क्षीणता और वातके समस्त रोग दूर होजावेंगे.

तथा ६–आधसेर सतुआ सोंठका चूर्ण, आधसेर गोघृतमें तलकर ५ सेर गोदुग्धमें डालो और कड़ा खोवा बनाकर ५ सेर शक्करकी चासनीमें मिलादो तदनंतर इसीमें टकेभर वायविडंग, धना, सौंफ, सोंठ, मिर्च, पीपल, नागकेशर और नागरमोथा इनका चूर्ण डालो, पाँच पाँच टंक अभ्रक और कांतिसार डालो तथा इच्छानुसार खारक बदामादि पौष्टिक फल डालकर १ टकेप्रमाणकी गोलियाँ बनालो जो इसमेंसे प्रतिदिन १ गोली खिलाओ तो प्रसूत, प्यास, छर्दि, ज्वर, दाह, कास, श्वास, पांडुरोग और मंदाग्नि ये समस्त रोग नाश होजावेंगे. इसे सौभाग्यशुंठिपाक कहते हैं.

तथा ७–अजमोद, जीरा, वंशलोचन, खैरसार, बिजौरा, सौंफ, धना, और मोचरस इन सबके २ टंक चूर्णका क्काथ १० दिनपर्यंत पिलाओ तो सूतिका ज्वर दूर होगा.

स्तनरोगयत्न १--१ विद्रधिरोग लिखित यत्न करो, २ स्तनपर गाँठ हो तो पित्तनाशक शीतल यत्न करो, ३ स्तनपर जोंक लगाकर रक्तमोचन कराओ, ४ इन्द्रायणकी जड़ जलमें पीसकर लेप करो, ५ हल्दी और धतूरेकी जड़ जलमें पीसकर लेप करो, ६ बांझककोलीकी जड़ जलमें घिसके लेप करो, ७ तप्त लोहा जलमें बुझाकर यह जल स्त्रीको पिलाओ तो इन सातों उपायोंमेंसे प्रत्येक यत्न स्तनरोग नाश करनेके लिये समर्थ हैं.

इति नूतनामृतसागरे चिकित्साखण्डे स्त्रीरोग यत्न निरूपणं नामैक चत्वारिंशत्तरंगः ॥ ४१ ॥

अथ बालरोग।

चिकित्सा बालरोगाणां तथा मंथज्वरस्यच ॥
नेत्रसिंधौ तरंगेऽस्मिन् कथ्यते हि मया क्रमात् ॥ ४२ ॥

भाषार्थ–अब हम इस ४२ बयालीसवें तरंगमें बालरोग और मंथज्वर की चिकित्सा क्रमानुसार वर्णन करते हैं.

ज्वरयत्न १-बालककी माता या धात्री (धाय) को पथ्यपूर्वक हलका भोजन देकर निम्नलिखित यत्न करो तो बालकका ज्वर दूर होगा.

तथा २-नागरमोथा, हर्रकी छाल, नीमकी छाल और पटोल इनका क्वाथ मधुके साथ दो तो बालकका सर्वप्रकारका ज्वर दूर हो जावेगा. इसे भद्रमुस्तादि क्वाथ कहते हैं.

तथा ३-एक एक मासे नागरमोथा, हर्रकी छाल, पटोल और मुलहठी इनका क्वाथ ७ दिनपर्यंत पिलाओ तो बालकका ज्वर दूर होगा.

तथा ४-चावलोंकी लाही, मुलहठी, छड और महुआका चूर्ण मधुके साथ दो तो बालकका ज्वर दूर होगा.

तथा ५-लाक्षादितैल मर्दनसे भी बालज्वर उतर जाता है.

अतिसारयत्न १-अतीस, बेलकी गिरी, धावडेके फूल, इन्द्रयव, लोध, धना, नेत्रवालाका २ मासे चूर्ण इनका क्वाथ दो तो ज्वरातिसार दूरहोगा.

तथा २-नागरमोथा, पीपल, अतीस और काकडासिंगी इनका चूर्ण मधुके साथ चटाओ तो ज्वरातिसार, खाँसी और वमन भी दूर होंगे. इसे चातुर्भद्रादिचूर्ण कहते हैं.

तथा ३- बेलका गूदा, धावडेके फूल, नेत्रवाला, गजपिप्पली और लोध इनका क्वाथ मधुके साथ दो तो अतिसार नाश होगा.

तथा ४-मँजीठ, धावडेके फूल, लोध और गौरीसरका क्वाथ मधुके साथ दो तो भयंकर अतिसार भी दूर होगा. इसे समंत्रादि क्वाथ कहते हैं.

तथा ५-वायविडंग, अजमोद और पिप्पलीका चूर्ण तण्डुल जलके साथ दो तो आमातिसार दूर होगा. इसे विडंगादिक्वाथ कहते हैं.

तथा ६-मोचरस, मँजीठ, धावडेके फूल और कमलकेशरका चूर्ण षष्टि-तण्डुल जलके साथ दो तो रक्तातितार दूर होगा.

तथा ७-सोंठ, अतीस, नागरमोथा, नेत्रवाला और इन्द्रयवका क्वाथ दो तो सर्व प्रकारका अतिसार दूर होगा.

तथा ८-चावलोंकी लाही, मुलहठी, महुआ और मिश्रीका चूर्ण मधुके साथ दो तो मुरोतिसार (मोडानिवाही) दूर होगा.

---

१ यदि बालककी माताके दूध न हो तो धात्री और धात्रीके भी दूधकी अभावदशामें बकरीका दूध पिलाना योग्य है.

संग्रहणीयत्न १–हलदी, चव्य, देवदारु, कटियाली, गजापिप्पली, सौंफ और पृष्ठपर्णीका चूर्ण मधु और घृतके साथ दो तो संग्रहणी, पांडुरोग और ज्वरातिसार अच्छे होकर भूंख बढ़ेगी इसे रजन्यादिचूर्ण कहते हैं.

कासयत्न १–नागरमोथा, अतीस, अडूसा, पीपली और काकडासिंगीका चूर्ण मधुके साथ चटाओ तो पांचोंप्रकारकी खाँसी दूर होगी. इसे मुस्तादिचूर्ण कहते हैं.

तथा २-कटियालीकी केशर मधुके साथ चटाओ तो, खाँसी दूर होगी.

श्वासयत्न १–दाख, अडूसा, हर्रकी छाल और पिप्पलीका चूर्ण मधु और घृतके साथ दो तो श्वास कास दोनों दूर होंगे इसे द्राक्षादिचूर्ण कहते हैं

हिक्कायत्न १--कुटकीका चूर्ण मधुके साथ दो तो हिचकी और उलटीभी दूर हो जावेगी.

छर्दियत्न १--इमलीकी बीजी, चावलकी लाही और सैंधानोनका चूर्ण मधके साथ च[illegible]ओ तो बालकका दूध डालना बंद होगा.

तथा २-कटियालीके फलोंका रस, पीपल, पीपलामूल, चव्य, चित्रक और सोंठ इनका चूर्ण मधुके साथ चटाओ तो बालक दूध डालनेसे रुक जावेगा.

आध्मानयत्न १–सैंधानोन, सोंठ, इलायची, सेंकीहींग और भारंगीका चूर्ण मधुके साथ दो तो अफरा और शूल दोनों उदररोग दूर होंगे.

मूत्रावरोधयत्न १–पीपल, मिर्च, इलायची, सैंधानोन और मिश्री इन्हों का चूर्ण मधुके साथ चटाओ तो बालकका रुकाहुआ मूत्र उतरने लगेगा.

लालाप्रवाहयत्न १–गौरीसर, तिल और लोध इनका क्वाथ मधुके साथ पिलाओ तो बालककी लार बहना बंद हो जावेगी.

मुखपाकयत्न १–पीपलकी छाल और पत्ते पीसकर मधुके साथ चटाओ तो बालकके मुखके छाले अच्छे होजावेंगे.

नाभिशोथयत्न १–पीली मिट्टीको अग्निसे तपाकर दूध डालके इस मिट्टीसे नाभिको सेंको तो नाभिकी सूजन अच्छी होगी.

नाभिपाकयत्न १--तप्त घृतसे सहताहुआ सेंक करो तो नाभि (ढुंडी, टुड्डी) का पकाव अच्छा होगा.

गुदापाकयत्न १–रसोतको जलमें घिसकर लेप करो तो गुदाका पकाव अच्छा होगा.

तथा २–शंख, मुलहठी और रसोत इनको जलमें पीसकर लेप करो तो गुदाका पकाव अच्छा होगा.

दंतरोगयत्न १–धावडेके फूल और पीपलको आँवलेके रसमें पीसकर दाँत निकलनेके प्रथमही मसूढ़ापर लेप करो तो खिडबिड (दुहरे) उगते हुए दाँत उत्तम सरल पंक्तिमें उगेंगे.

कृमिरोगयत्न १–पलासपापडा, नीमकी छाल, सहँजनेकी जड, नागरमोथा, देवदारु और वायविडंग इनके १ टंक चूर्णका क्वाथ ७ दिनपर्यंत पिलाओ तो बालकके पेटकी कृमि नाश होकर ज्वर शांत होजावेगा.

[विशेषतः–मनुष्योंके लिये जिस रोगपर जो यत्न कहे गये हैं वह बालकोंके लिये भी उन रोगोंपर वेही चिकित्सा उपयोगी हो सक्ती है, और भी स्मरण रक्खो कि बालकको एक वर्षकी अवस्थातक औषध एक एक रत्तीके बढ़ावसे और दूसरे वर्षसे एक मासेके प्रमाणसे देना चाहिये.]

ग्रहदोषयत्न १–गोखरमुंडी और खशके क्वाथसे बालकको स्नान कराओ या हल्दी और कूटको चंदनसे घिसकर लेप करो तो सर्वग्रहदोष दूर होंगे.

तथा २ साँपकी काँचुली, लहसुन, सरसों, नीमके पत्ते, बिल्लीकी विष्ठा, बकरेके बाल, मेढ़ासिंगी और वचको मधुमें पीसकर धूनी दो तो बालकके सर्व ग्रहदोष दूर होवेंगे.

स्कंदग्रहयत्न १–सरसों, साँपकी काँचुली, वच, काकलहरी, ऊंटके बाल और बकरेके बाल इनके चूर्णको घीमें मिलाकर धूनी दो तो स्कंदग्रहका दोष छूट जावेगा.

स्कन्दापस्मारयत्न १–बेलकी जड, सिरसकी जड, श्वेत दूब, श्वेत सरसों, पाढ़, मरुवा, राई, श्वेत बावची, कायफल, कुसुम्भ, वायविडंग, सँभालू, गूलर, खिरैटी, चिरपोटणी, काली तुलसी, बकायन और भारंगीके क्वाथसे स्नान कराओ तो स्कन्दापस्मार ग्रहदोष छूट जावेगा.

तथा २–गाय, भैंस, भेडी, बकरी, घोडा, गधा और ऊंटके मूत्रमें तेल पकाकर मर्दन करो तो स्कन्दापस्मार दूर होगा.

तथा ३–शिरके बाल, हाथीके नख और बैलके रोमको घीमें मिलाकर धूनी दो तो स्कन्दापस्मार दोष छूट जावेगा.

तथा ४–जवासा, मैनसिल, कस्तूरी और केवाचकी जड इनके चूर्णकी धूनी दो या बालकके गलेमें बाँधो तो स्कन्दापस्मार दोष दूर होगा.

तथा ५–बालकको चौहटे (चौमार्ग) में स्नान कराओ तो स्कन्दापस्मार और विशाखा दोनोंसे दोष दूर होंगे.

शकुनीयत्न १–बेतकी लकडी, आमकी जड और कैथकी जड इनसे बालकको स्नान कराओ तो शकुनीग्रहका दोष दूर होगा.

तथा २–झाऊकी जड, महुआ, खश, गौरीसर, कमलनाल, पद्मकाष्ठ, लोध, प्रियंगु पुष्प, मँजीठ और गेरूको जलमें पीसकर उबटन कराओ तो शकुनीग्रहदोषसे बालक छूट जावेगा.

तथा ३–शतावरी या इन्द्रायणकी जड या नागदवणी या कटियाली या सहदेईकी पूजाकर गलेमें बाँधो तो शकुनीग्रहदोष मिट जावेगा.

तथा ४–ग्रहको तिल, चावल, माला, हरताल और मैनसिलका विधिवत् बलिदान दो तो शकुनीग्रहदोष छूट जावेगा.

तथा ५–स्कन्दापस्मारलिखित यत्न भी शकुनीग्रहदोषको शांत कर सक्ते हैं.

रेवतीयत्न १–असगंध, मेढ़ासिंगी, गौरीसर साँठीकी जड़, सेवतीके फूल और विदारीकंद इनके क्वाथसे स्नान कराओ तो रेवतीग्रहके दोषसे बालक अच्छा हो जावेगा.

तथा २–तेलका मर्दन करो, या कूट, रार, गूगल, खश, हल्दी इनके चूर्णकी धूनी दो तो रेवतीग्रहदोष दूर होगा.

तथा ३–सुगंधित श्वेत पुष्प, लाही, दूध, दही और रँधी साल (चुडाहुआ पोहा) बालकके ऊपर उतारकर स्नान कराओ और इन्हीं पदार्थोंसे गोशालामें धूनी दो तो रेवतीदोष दूर होगा.

पूतनाग्रहयत्न १–नीमकी छाल, विष्णुक्रांता और वणि (रुईका झाड) की छाल इनके क्वाथसे बालकको स्नान कराओ तो पूतनाग्रहदोषसे बालक मुक्त होगा.

तथा २–विदारीकंद, श्वेत दाख, हरताल, मैनसिल, राल और कूटके क्वाथमें तेल या घृत पकाकर बालकके मर्दन करो तो पूतनादोष दूर होगा.

गंधपूतनायत्न १—नीम, पटोल, कटियाली, गिलोय और अडूसेके पत्तोंके क्वाथमें स्नान कराओ तो गंधपूतनाका दोष छूट जावेगा.

तथा २—पीपल, पीपलामूल और दोनों कटियालीके क्वाथमें गोघृत पकाकर मर्दन करो तो बालक गंधपूतना दोषसे मुक्त हो जावेगा.

तथा ३—केशर, अगर, कपूर, कस्तूरी और चंदन इनको महीन पीसकर नेत्रोंपर लेप करो तो गंधपूतनाका दोष छूट जावेगा.

तथा ४—कुत्तेकी विष्ठा, बालकके बाल, लहसनकी छाल और घी बाल-कपरसे उतारकर चौकपर डालदो तो गंधपूतनादोष दूर होगा.

शीतपूतनायत्न १—गोमूत्र, अजा (बकरी) मूत्र, देवदारु, नागरमोथा और चंदनादि सुगंधित पदार्थोंमें तेल पकाकर मर्दन करो तो शीतपूतना ग्रहका दोष दूर होगा.

तथा २—कुटकी, नीमकी छाल, खैरसाल, पलाशकी छाल और काहूकी छालमें घृत पकाकर बालकको खिलाओ या मर्दन करो तो शीतपूतना ग्रहका दोष छूट जावेगा.

तथा ३—नीमके पत्तोंकी धूनी दो, चिरमूकी माला पहिनाओ तो शीत-पूतना दोष दूर होगा.

तथा ४—नदीके किनारे शीतपूतनाके नामसे मूंग और चावल अर्पण करो तो शीतपूतनाका दोष दूर होगा.

मुखमंडिकाग्रहयत्न १—कैथ, बेल अरण्या (अग्निमंथ) अडूसा, श्वेत-अरंड और कूट इनके क्वाथमें स्नान कराओ तो मुखमंडिकाग्रहदोषसे बालक मुक्त होगा.

तथा २—भंगराका रस और वच तेलमें पकाकर मर्दन करो तो मुख मंडिका दूर होगी.

तथा ३—रार और कूट इनके क्वाथमें घृत पकाकर मर्दन करो तो मुख-मंडिका दोष दूर होगा.

तथा ४—गोशालामें बलि देकर " अलंकृता कामवती सुभगा कामरू-पिणी । गोष्टमध्यालयरता पातु त्वां मुखमंडिका" ॥ इस मंत्रसे मंत्रित जलमें स्नान कराओ तो मुखमंडिकाका दोष दूर होगा.

नैगमेयग्रहयत्न १—बेलकी जडका वक्कल, अरण्याकी जड और कण-

गन्धकी जड इनके क्वाथमें बालकको स्नान कराओ तो नैगमेयका दोष निवृत्त होगा.

तथा २–प्रियंगुपुष्प, जवासा, सौंफ और चित्रककी छाल इनका क्वाथ गोमूत्र, दही और काँजी ये सब तेलमें पकाकर बालकके मर्दन करो तो नैगमेयग्रहका दोष दूर होजावेगा.

तथा ३–तिल, चावल, फूलकी माला और मोदक, मिठाई आदि "अजाननश्चलाक्षिभ्रू कामरूपी महायशः। बालात्पलायितो देवो नैगमेयोभिरक्षतु॥" इस मंत्रसे बालकपर ७ बार उतारकर वृक्षकी पीठपर डालो तो बालक नैगमेयग्रहके दोषसे अच्छा हो जावेगा. ये सर्व यत्न भावप्रकाशमें लिखे हैं.

नंदामातृकायत्न १–नदीके दोनों तीरोंकी मिट्टीका पुतला, चावल, ७ श्वेत फूल, ७ ध्वजा, ७ दीपक, गुलगुली (गुलगुला,) पान, गंध, धूप, मांस और मद्य ये एक कोरी सराईमें धरके "ॐनमो भगवते रावणाय हन हन मुंच मुंच स्वाहा" इस मंत्रसे बालकपर उतारा करके मध्याह्न समय पूर्व दिशाके चौमार्गपर बलि दो और पीपलका पत्ता बालकके शिरपर धरके स्नान करानेके अनंतर सरसों, मेढ़ासिंगी, नीमके पत्ते और शिवनिर्माल्यकी धूनी दो तो इसी भाँति चार दिन करनेसे नन्दामातृका दोष निवारण होगा.

शुभदामातृकायत्न २–सवासेर चावल, दही, मद्य, तिल और मछलीका मांस ये सब एक कोरी सराईमें धरकर "ओंनमो रावणाय हन हन मुंच मुंच फट् फट् स्वाहा" इस मंत्रसे बालकपर उतारा करके सन्ध्यासमय पश्चिमके चौमार्गपर बली दो और शीतल जलसे स्नान कराके शिवनिर्माल्य, खश बिल्लीके रोम, घृत और दूबकी धूनी दो इसीप्रकार तीन दिन बलि देकर चौथे दिन यथाशक्ति ब्राह्मणभोजन कराओ तो शुभदामातृका दोष मुक्त होगा.

पूतनामातृकायत्न ३–नदीके दोनों तटोंकी मट्टीका पुतला, पान लालपुष्प, रक्तचंदन, ७ ध्वजा, ७ दीपक, भात, मांस, मद्य ये सब कोरी सराईमें धरकर "ओंनमो रावणाय नमः हन हन मुंच मुंच त्रासय त्रासय स्वाहा" इस मंत्रसे बालकपर उतारा करके तीसरे प्रहर दक्षिण दिशाके

चौमार्गपर बलिदो और शिवनिर्माल्य, गूगल सरसों, नीमके पत्ते और मेढासिंगीकी धूनी देकर इसीप्रकार ३ दिन करनेके अनंतर चौथे दिन यथाशक्ति ब्राह्मणभोजन करादो तो बालक पूतनामातृकाके दोषसे छूट जावेगा.

मुखमंडिकामातृकायत्न ४–नदीके दोनों तीरोंकी मट्टीका पुतला, कमलपुष्प, गंध, ताम्बूल, श्वेतपुष्प, ४ दिये, १२ मालपुआ, मछलीका मांस, मद्य और छाँछ ये सर्व वस्तुयें कोरी सराईमें धरकर "ओंनमो रावणाय हन हन मंथ मंथ स्वाहा" इस मंत्रसे बालकपर उतारा करके तीसरे प्रहर उत्तर दिशाके चौमार्गपर बलि दो. इसीप्रकार ३ दिन करनेके अनंतर चौथे दिन यथाशक्ति ब्राह्मणभोजन करादो तो मुखमंडिका दोषग्रसित बालक कुशल होगा.

पूतनामातृकायत्न ५-कुम्हारके चाकेकी मिट्टीका पुतला, गंध, ताम्बूल, चावल, श्वेतपुष्प, ध्वजा, ५ दिये और ५ बडे (बडे खानेके) ये सब एक कोरी सराईमें धरकर "ओंनमो रावणाय चूर्णय चूर्णय स्वाहा" इस मंत्रसे बालकपर उतारा करके ईशान दिशामें बलि दो और शांति (ग्रहशान्ति) के जलसे स्नान कराके शिवनिर्माल्य, साँपकी काँचली, घी और नीमके पत्तोंकी धूनीदो. इसीप्रकार तीन दिन करनेके अनंतर चोथे दिन यथाशक्ति ब्राह्मणभोजन करदो तो बालक पूतनादोषसे अच्छा होगा.

शकुनीमातृकायत्न ६–गेहूंके आटेका पुतला, श्वेतपुष्प, लालपुष्प, पीतपुष्प, मद्य, मांस, १० दिये, १० ध्वजा, १० बडे और दूध ये सब "ॐनमो रावणाय चूर्णय चूर्णय हन हन स्वाहा" इस मंत्रसे बालकपर उतारा करके मध्याह्नसमय आग्नेयदिशामें बलि दो और शीतल जलसे स्नान कराके शिवनिर्माल्य, घृत, लहसन, गूगल, सरसों, साँपकी काँचली और नीमके पत्तोंकी धूनी दो तो शकुनीमातृका दोष शांत हो जावेगा.

शुष्करेवतीमातृकायत्न ७-नदीके तलकी मिट्टीका पुतला, लाल फूल, मद्य, ताम्बूल, लाल चावलकी खिचडी, १० दिये, १२ ध्वजा और ये सब "ॐनमो रावणाय तत्तेजसे हन हन मुंच मुंच स्वाहा" इस मंत्रसे बालकपर उतारा करके तीसरे प्रहर पश्चिम दिशामें बलि दो और स्नान कराके शिवनिर्माल्य, सरसों, मेढेका सींग, खश और घृतकी धूनी दो इसी

प्रकार तीन दिन करके चौथे दिन यथाशक्ति ब्राह्मणभोजन करादो तो शुष्करेवतीका दोष शांत हो जावेगा.

नानामातृकायत्न ८–लाल फूल, पीली ध्वजा, रक्तचंदन, क्षीर, मांस और सुराको "ॐनमो रावणाय त्रैलोक्यविद्रावणाय चतुर्दश मोक्षणाय ज्वर हन हन ॐ फट् स्वाहा" इस मंत्रसे बालकपर उतारा करके प्रभात-समय बलि दो तो नानामातृकादोष दूर होगा.

सूतिकामातृकायत्न ९–नदीके दोनों तीरोंकी मिट्टीका पुतला, श्वेत-वस्त्र, गंध, ताम्बूल, १३ दिये और १३ ध्वजा ये सब "ॐनमो रावणाय हन हन स्वाहा" इस मंत्रसे बालकपर उतारा करके उत्तर दिशामें गाँवके बाहर बलिदान दो और शीतल जलसे स्नान कराके गूगल, नीमके पत्ते, गौका सींग, सरसों और घृतकी धूनी दो. इसीप्रकार ३ दिन करके चौथे दिन यथाशक्ति ब्राह्मणभोजन कराओ तो सूतिकादोष दूर होगा.

क्रियामातृकायत्न १०–नदीके दोनों तीरोंकी मिट्टीका पुतला, मद्य, ताम्बूल, लाल फूल, रक्तचंदन, ५ ध्वजा, ५ दिये, मालपुआ और मांस ये सर्व पदार्थ "ॐनमो रावणाय चूर्णितहस्ताय मुंच मुंच स्वाहा" इस मंत्रसे बालकपर उतारा करके वायव्य कोणमें बलि दो और काकविष्टा गौका सींग, निम्बपत्र, घृत और बिल्लीके रोमकी धूनी दो तो क्रियामातृका दोष छूट जावेगा.

पिपीलिकामातृकायत्न ११–गेहूंके आटेका पुतला, दूध, रक्तचंदन, पीत-पुष्प, गंध, ताम्बूल, ७ दिये, ७ बडे, मालपुवा, मांस और मद्यको "ॐनमो रावणाय मुंच मुंच स्वाहा" इस मंत्रसे बालकपर उतारा करके पूर्वदिशामें बलि दो, तदनंतर शांतिके जलसे स्नान कराके शिवनिर्माल्य, गूगल, गौका सींग, साँपकी काँचली और घृतकी धूनी दो और तीन दिन इसी प्रकार करके चौथे दिन ब्राह्मणभोजन कराओ तो बालक पिपीलिका दोषसे मुक्त होगा.

कामुकामातृकायत्न १२–गेहूंके आटेका पुतला, ताम्बूल, गंध, श्वेत-पुष्प, ७ ध्वजा और ७ मालपुआ "ॐनमो रावणाय मुंच मुंच हन हन स्वाहा" इस मंत्रसे बालकपर उतारा करके बलि दो और शांतिके जलसे स्नान कराके शिवनिर्माल्य, गूगल, सरसों और घृतकी धूनी दो तो कामु-

कामातृकाके दोषसे बालक मुक्त हो जावेगा. यह रावणकृत कुमारतंत्र-चक्रदत्तमें लिखा है.

मंथज्वरयत्न १–यह रोग सर्व रोगोंका राजा है इसलिये इसके सर्व प्रयत्न बड़ी पवित्रतापूर्वक करना चाहिये.

रोगीको पवित्र स्थानमें रक्खो, पवित्र वस्त्र पहिनाओ, पवित्र मनुष्यको परिचर्यामें रक्खो, दृष्टिमें अपवित्र वस्तुयें न आने दो, स्त्री आदिकी छाया न पड़ने दो, लाल कम्बल या पीताम्बरकी ओट (पर्दा) बाँधो, सुगंध धूप चंदन कर्पूरादिसे गृहको सुगंधित रक्खो, दरख्तोंके, कूँड या हरियाली और मोती आदि रत्न लटकाओ और स्वधर्मके मनोहर इतिहासादि सुनाओ तो मोतीज्वर शांत होकर रोगीकी पीडा शांत होगी.

तथा २–चिरायता, सोंठ, घिसकर पिलाओ, काला अगर घिसकर पिलाओ, तुलसीका रस, गोबरका रस, जीरे और सोनामक्खीकी भस्म घिसकर पिलाओ, साँबरका सींग, चंदन, जीरा, नेत्रवाला, नागरमोथा, चिरायता, कूड़ा, काला जीरा, गिलोय, इलायची और कमलगट्टाको, घिसकर पिलाओ, तो मोतीज्वर शांत होगा.

तथा ३–श्वेतचंदन, लालचंदन नेत्रवाला, पित्तपापडा, नागरमोथा, सोंठ, चिरायता और खशका क्काथ पिलाओ तो दाह, ग्लानि, प्रलाप, विकलता; तिमिर और पित्त ये सर्वोपद्रव शांत होंगे.

तथा ४–लघुशिवणी, दाख, नेत्रवाला, चंदन, नागरमोथा, खश, पित्तपापडा और मुलहठी इनका अष्टावशेष क्काथ मधुके साथ दो तो पित्तज्वर, भ्रम, दाह और छर्दिका अतिकोप भी शांत होगा.

तथा ५–रक्तचंदन, धना, कालाबाला, पित्तपापडा, नागरमोथा और सोंठ, इनका क्काथ दो, बडके पत्ते और बाजरेके आटेका क्काथ दो, पोदीना, वनतुलसी और श्याम तुलसीके रसमें मिश्री डालकर तीन या सात दिन पिलाओ, नागरमोथा, कपूरकाचरी, वनतुलसी, पित्तपापडा और सोंठ इनका क्काथ दो तो मोतीज्वर शांत होगा.

तथा ६–"ॐनमो अंजनीपुत्र ब्रह्मचारी वाचा अविचल स्वामिन् उकार्ये सारिखा क्षांक्षः मगधदेशराय बडेस्थानके तहाँ मूसलीकंद ब्राह्मणने

मधुरा उत्पन्न किया पृथ्वीमें मोकल्यो हनुमंत वाचावलीपडा हनुमंतजी दृष्टिपडो हनुमंतनामेन गच्छ गच्छ स्वाहा" इस मंत्रको शुद्ध होकर १०८ बार जपो और चंदन, अगर, धूप, श्वेत पुष्पको रखके मिट्टीके पात्रमें धरके रोगीके माथेपरसे उतार शुद्ध जलमें डालदो तो मंथज्वर शांत होकर रोगी समस्त पीडासे विमुक्त होगा.

इति नूतनामृतसागरे चिकित्साखण्डे बालरोग, मंथज्वरयत्न-
निरूपणं नाम द्विचत्वारिंशस्तरंगः ॥ ४२ ॥

अथ क्लीबरोग ।

चिकित्सा क्लीबरोगस्य नृणां लज्जाप्रदस्य वै ॥
वह्निवेद तरंगेत्र कथ्यते च यथाक्रमात ॥ ४३ ॥

भाषार्थः—अब हम इस ४३ तेतालीसवें तरंगमें मनुष्योंको लज्जा प्राप्त करने वाले क्लीबरोगकी चिकित्साका वर्णन क्रमानुसार करते हैं.

क्लीबरोगयत्न १—अतिसुन्दर स्त्रीकी मनोहर वाणी सुनाओ. ताम्बूल, आसव, दूध, मिश्री, दधि, शिखरन, आमरस, उड़द, भीमसेनीकपूर, कस्तूरी, मृगांक, चन्द्रोदय तथा अन्य पौष्टिक स्वादिष्ट मनोहर पदार्थ सेवन कराओ, सुन्दर उपवनमें भ्रमण कराओ, इत्यादि उपभोगोंके विधिवत् सेवनसे नपुंसकता दूर होगी.

तथा २—गोखरू, तालमखाना, असगंध, शतावरी, कैवाचबीज, श्वेत मूसली, मुलहठी, खिरैंटी और गंगेरनकी छालका ९ टंक चूर्ण दूध मिश्रीके संयोगसे खिलाकर पथ्यसे रक्खो तो नपुंसकपना दूर होगा. इसे गोक्षुरादि चूर्ण कहते हैं.

तथा ३—आधसेर चोलसुपारी, ४दिन जलमें भिगोकर टुकडेकर सुखाके चूर्ण करलो इस चूर्णको आधसेर गोघृतमें मिलाकर ४सेर दूधके संयोगसे खोवा बनालो इस खोवेको ४सेर मिश्रीकी चासनीमें डालकर टके टकेभर इलायची, लौंग, गंगेरनकी छाल, खिरैंटी, जायफल, पीपल, दाख, जायपत्री, पत्रज, सोंठ, शतावरी, मूसली, कौंचबीज, विदारीकंद, जीरा, सालममिश्री,

सिंघाड़े, गोखरू, छड़, वंशलोचन, असगंध, कस्तूरी, केशर, कपूर, चंदन भीमसेनीकपूर और अगरका चूर्णभी उसीमें डालदो. तदनंतर मृगांक, चंद्रोदय, अभ्रक, वंग, कांतिसार, पौष्टिक फल (मेवे) तथा अन्य सुगंधित द्रव्य मिश्रित करके १ टके प्रमाणकी गोलियां बनालो जो इसमेंसे १ मोदक प्रतिदिन देकर पथ्यसे रक्खो तो निश्चय है कि, नपुंसकत्व निकल जावेगा. इसे वल्लभपूगपाक कहते हैं.

तथा ४—पक्के मीठे आमका १६सेर रस ४ सेर मिश्री और १ सेर घीको मृत्तिकाके पात्रमें पकाकर गाढ़ा होनेपर चाँदीके पात्रमें डालो तदनंतर आठ टकेभर सोंठ, ८ टकेभर मिर्च, २टकेभर पीपल, २ टकेभर धमासा. चार मासे कस्तूरी, १ टंक भीमसेनीकपूर, सेरभर मधु और १ टकेभर जीरा चित्रक, पत्रज, दालचीनी, नागकेशर, लौंग, इलायची, जायफल और केशर इन सबका चूर्ण उपरोक्त चासनीमें एक जीव करके १ टके प्रमाणकी गोलियां बनालो जो इसमेंसे १ गोली नित्य खिलाओ तो नपुंसकत्व, संग्रहणी, क्षयी, श्वास, अरुचि, रक्तपित्त, अम्लपित्त और पांडु ये सब रोग दूर होकर मैथुनमें विशेष शक्ति प्राप्त होगी. इसे आम्रपाक कहते हैं.

तथा ५—पाँच टंकभर गोखरूका चूर्ण, ५ टंक मधु, बकरीके दूधके साथ२मास पर्यंत नित्य चटाओ तो हस्तक्रियासे हुआ नपुंसकत्व दूर होगा.

तथा ६—चार चार मासे रक्तचन्दन, पतंग, अगर, देवदारु, चीड, पद्मकाष्ठ, कपूर, केशर, कस्तूरी, जायफल, जायपत्री, लौंग, इलायची बडी इलायची, कंकोल, दालचीनी, पत्रज, नागकेशर, नेत्रवाला, खश, छड, दारुहल्दी, मूर्वा, कपूर, शिलाजीत, नागरमोथा, प्रियंगुपुष्प, सँभालू, लोहवान, गूगल, खश, नख, धावडेके फूल, पीपलामूल, मँजीठ, तगर और मोम इनका क्वाथ चतुरावशेष रखके क्वाथमें सेरभर मीठा तेल पकाकर मर्दन करो तो शरीरके सम्पूर्णरोग दूर होकर वृद्ध मनुष्य भी तरुण समान हो जावेगा. इसे चंदनादि तैल कहते हैं.

तथा ७—सेरभर कवाँचबीज, सेरभर गोदुग्धमें पकाकर छिलके छीललो इन बीजोंका चूर्ण गोदुग्धमें मसलकर१०टंक प्रमाणकी टिकियें (कुचियें) बनालो इन बडोंको गोघृतमें तलकर दो सेर मिश्रीकी चासनीमें पागदो

तदनंतर इन्हें मधुमें डालकर प्रतिदिन १ टिकिया २ मासपर्यंत खिलाओ तो नपुंसकत्व दूर होकर विशेष कालपर्यंत वीर्यस्तंभन होगा. इसे वानरीगुटिका कहते हैं.

तथा ८–अधेले अधेलेभर अकरकरा, सोंठ, लवंग, केशर, पीपल, श्वेतचंदन, जायफल, जायपत्री और १ टकेभर अहिफेन (अफीम) इनका चूर्ण मधुमें मिलाकर उडद प्रमाणकी गोलियाँ बनालो जो १ गोली नित्य रात्रिकालमें खिलाकर ऊपरसे दूध पिलाओ तो नपुंसकत्व दूर होकर वीर्य बहुतकालतक पात नहीं होगा, ये सर्व यत्न भावप्रकाशमें लिखे हैं.

तथा ९–तिलोंको मुर्गीके अंडेके पानीमें ११ वार भिगोकर सुखाओ और प्रतिदिन ५ टंक खिलाकर ऊपरसे दूध पिलाओ तो नपुंसकत्व दूर होकर स्त्रीप्रसंगमें शक्ति बढेगी.

तथा १०–सूखे विदारीकंदके चूर्णको गीले विदारीकंदके रसकी २१ पुटें देकर सुखाते जाओ तदनंतर मिश्री, मधु और घृतके साथ प्रतिदिन २ टंक खिलाकर ऊपरसे दूध पिलाओ तो वृद्धभी तरुणसमान. होजावेगा. यह वृन्दमें लिखा है.

तथा ११–सूखे आँवलेके चूर्णको गीले आँवलेके रसकी २१ पुटें दे देकर सुखाते जाओ और मिश्री, मधु और घृतके साथ २ टंक प्रतिदिन खिलाकर ऊपरसे दूध पिलाओ तो वृद्धभी तरुण समान होजावेगा. यह चक्रदत्तमें लिखा है.

तथा १२–सोंठ, मिर्च, पीपलके चार भाग, १ भाग पारा, २ भाग वंग, ७ भाग शतावरी और दो दो भाग तज, पत्रज, नागकेशर, इलायची जायफल, सोंठ, मिर्च, पीपल, लौंग और जायपत्री इन सबका महीन चूर्ण मिश्री मधु और घृतमें मिलाकर ५ टंक प्रमाणकी गोलियाँ बनालो इसकी एक गोली प्रतिदिन खिलाके ऊपरसे दूध पिलाओ तो वृद्ध भी तरुणसमान हो सकेगा. यह मदनमंजरीगुटिका योगतरंगिणीमें लिखी है.

तथा १३–अफीम और पारेको धतूरेके बीजोंके तेलमें ३ दिन पर्यंत खरल करके समान मिश्री और भंगमें मिला दो जो प्रतिदिन १ रत्ती खिलाकर ऊपरसे दूध पिलाओ तो नपुंसकत्व दूर होकर वीर्य दृढ हो जावेगा. यह सारसंग्रहमें लिखा है.

तथा १४—जायफल, अकरकरा, लौंग, सोंठ, केशर, पीपल, कस्तूरी, भीमसेनीकपूर, अभ्रक और इन सबके समान अफीमको खरल करके मूँग प्रमाणकी गोलियाँ बनालो जो इनकी १ या दो गोलियाँ खिलाकर ऊपरसे दूध पिलाओ तो वीर्य महादृढ होजावेगा.

तथा १५—चीनियाँकपूर, सुहागा और पारेको अगस्त्यके रस और मधुके साथ १ दिनपर्यंत खरल करके लिंगपर लेप करो और १ प्रहर रखकर धो डालो तदनंतर स्त्रीप्रसंग करो तो वीर्य विशेष विलम्बसे स्खलित होगा इसे नागार्जुनी लेप कहते हैं.

तथा १६—श्वेत कनेरकी जडका बक्कल, अकरकरा, अजमोद, काले धतूरेके बीज और जायफलोंको जलमें पीसकर उर्दप्रमाणकी गोलियाँ बनालो जो इसमें १ गोली मनुष्यके मूत्रमें घिसकर लिंगपर लेप करो तो नपुंसकत्व दूर होकर वीर्यस्तंभित होगा.

तथा १७—शूकरकी मेद और घीको खरल करके लिंगपर लेप करो तो सर्व विकार दूर होकर पौरुष प्राप्त होगा.

तथा १८—श्वेत कनेरके जडकी छाल दूधमें डालकर दूधको जमादो इस दहीको विलोड़कर घी निकालो और घृतमें मोहरा, जायफल, अफीम और शुद्ध जमालगोटेका चूर्ण मिलाकर लिंगपर लेप करो तदनंतर ऊपरसे पान (तांबूल) बांधकर ब्रह्मचर्य रक्खो तो प्रतिदिन ऐसा करनेसे नपुंसकत्व दूर होगा.

विशेषद्रष्टव्य—अब आगे धातुओंको दग्धकर उनकी भस्मसे रस बनानेमें अति क्लिष्टता है इसके निर्माणमें बडी सावधानीसे क्रिया करनी चाहिये इसका विशेष ध्यान रक्खो कि, इस विषयमें जिन धातु उपधातु तथा वत्सनाग प्रभृति विषोंका उपयोग करो वे सब विचारखण्डलिखित विधानसे शुद्ध करके योजित करो और पारेको जितना शुद्ध करसको उतनाहीं अच्छा होगा. इनमेंसे किसी भी धातुके शोधन संस्कारमें क्वचित् न्यूनता भी रही तो वह रस यथेष्ट गुणको प्राप्त नहीं होगा.

मृगांकनिर्माणविधि १—स्वर्णके पतले पत्तोंको दूने पारेके साथ खटाईके संयोगसे खरल करके गोला बनाओ इस गोलेके समान आँवलांसार गंधकका चूर्ण गोलेके ऊपर नीचे सरावसम्पुटमें धरकर कपडमिट्टीसे लपेट

दो और इसीभाँति ३ पुटदेकर ३ बार गजपुटमें फूंक दो तो उत्तम मृगांक बन जावेगा.

तथा २–स्वर्णपत्र और सोलहवें भाग सीसेको खटाईके साथ खरल करके गोला बनाओ इस गोलेके समान आँवलासारगंधकका चूर्ण गोलेके ऊपर नीचे सरावसम्पुटमें धरकर कपड़मिट्टीसे लपेटके गजपुटमें फूंक दो इसी भाँति ७ बार पुट देदेकर फूंक देनेसे उत्तम मृगांक बन जावेगा.

तथा ३-स्वर्णपत्र और समान पारेको खटाईके साथ खरल करके कचनारके रसकी १ पुट, अग्निझालके रसकी ३ पुट और कलिहारीके जडके रसकी १ पुट दो तदनंतर स्वर्णपत्रसे चतुर्थांश मोती मिलाकर पुनः खरल करो तब इन सबके समान गंधकके साथ २ दिनपर्यंत खरल करके गोला बनालो इस गोलेको शरावसम्पुटमें धरके कपडमिट्टी करके गजपुटमें फूंक दो तो उत्तम मृगांक बन जावेगा.

मृगांकभक्षणविधि १९–१ रत्तीमृगांक १ रत्ती पिप्पलीका चूर्ण और २ टंक मधुके साथ देकर खटाई आदिके पथ्यसे रक्खो तो श्वास, कास, क्षयी और अरुचि आदि समस्त रोग दूर होकर२ माससेवनसे शरीरपुष्ट होजावेगा.

रूपरसनिर्माणविधि १–३ भाग चांदीके पत्र और १ भाग हरतालको खटाईसे खरल करके गोला बनाओ और इस गोलेको शरावसम्पुटमें धरकर गजपुटमें फूंक दो इसप्रकार १४ बार पुट देकर फूंकनेसे अत्युत्तम रूपरस बन जावेगा.

तथा २–चांदीके समान रूपामक्खीके चूर्णको चांदीके पत्तोंको ऊपर नीचे रखकर शरावसम्पुटमें धर दो और कपड़मिट्टी करके गजपुटमें फूंक दो तो उत्तम रूपरस बन जावेगा.

रूपरसभक्षणविधि २०–१ रत्ती रूपरसको नित्य सेवन कराओ तो वह मनुष्य सर्वरोगरहित और पूर्ण बल वीर्ययुक्त हो जावेगा.

ताँबेश्वरनिर्माणविधि १–ताम्रपत्रके समान रूपामक्खीका चूर्ण उनके ऊपर नीचे सम्पुटमें धरकर गजपुटमें फूँक दो तो ताँबेश्वर बन जावेगा.

ताँबेश्वरभक्षणविधि २१–रत्तीभर ताँबेश्वर नित्य १ मास पर्यंत सेवन कराओ तो श्वास, कास आदि सर्वरोग दूर होकर बल बढैगा.

नागेश्वरनिर्माणविधि १–सीसेको कड़ाहीमें चूल्हेपर चढाकर गलाओ

इससे चतुर्थांश पीपलकी छालका चूर्ण और इमलीकी छालका चूर्ण पिघलते हुए सीसेमें थोड़ा थोड़ा डालकर लोहेकी करछुलीसे १ दिनभर चलाते जाओ. तदनंतर जँभीरीके रसमें खरल करके गजपुटमें फूंक दो इसीप्रकार जँभीरीके रसकी १० पुट देकर फूँको, नागरवेलके पानके रसकी भी १० पुटें देकर फूँको और इसी सीसेके समान मैनसिलके साथ काँजीमें खरल करके टिकिया बनाओ इस टिकियाको सुखाकर सम्पुटसे गजपुटमें फूँक दो जो इसी विधिसे इसे ६० आंच दो तो उत्तम नागेश्वर बन जावेगा.

तथा २–सीसेको कड़ाहीमें पिघलाकर १ दिनभर केवड़ेके घोटेसे घोटते हुए नीचेसे आँच देते जाओ तो लाल भस्मका नागेश्वर बन जावेगा.

नागेश्वरभक्षण विधि २२–१ या १॥ डेढ़ रत्तीकी मात्रा २१ दिनपर्यंत दो तो समस्त रोग दूर होकर बलवृद्धि हो जावेगी.

वंगेश्वरनिर्माणविधि १–राँगेको कड़ाहीमें चढ़ाकर नीचेसे आँच देते जाओ और इसपर चौथाई पीपलकी छाल और चौथाई इमलीकी छालका चूर्ण डालते हुए दो प्रहरपर्यंत करछुलीसे हिलाते जाओ पश्चात् इसको समान हरतालके साथ खटाईमें खरल करके गजपुटमें फूंकदो तो शुद्ध बंगेश्वर बन जावेगा.

तथा २–पावभर राँगको गलाकर गलनेपर उसमें पावभर पारा मिला दो और ढालकर पत्र बनालो तदनंतर एक कंडे (गोबरी) पर कसैलाका चूर्ण तथा चूर्णपर वे राँगेके टुकड़े उनपर पुनः चूर्ण और चूर्णपर दूसरा कंडा जमा कर निर्वात स्थानमें गजपुटसे फूँक दो तो वे राँगेके टुकड़े श्वेतभस्म होकर फूल जावेंगे इसीको बंगेश्वर रस कहते हैं. (वजन पूरा उतरना चाहिये.)

वंगेश्वरभक्षणविधि २३–१ रत्ती वंगेश्वरकी मात्रा खिलाओ तो वीर्यको अतिदृढ़ता और शरीरको पराक्रम प्राप्त होगा.

कांतिसारनिर्माणविधि १–गजबेली लोहचूरको आकके दूधकी ७, थूहरके दूधकी ७, त्रिफलाके रसकी ७ और अनारपत्रके रसकी ७ पुटें देकर प्रति पुटपर भस्म करते जाओ तदनंतर खरल करके जलपर तेराओ तो उत्तम कांतिसार बन जावेगा.

तथा २–गजबेलि लोहचूर्णको नौसादर और नींबूके रसकी २१ पुट देदेकर प्रति पुटपर गजपुटमें फूँकते जाओ तो उत्तम कांतिसार बनजावेगा.

कांतिसारभक्षणविधि २४–जो इसकी १ रत्तीकी मात्रा दो तो श्वास, कास, क्षयी आदि सर्व रोग दूर करके कांति बढ़ावेगा.

सोनामक्खीभस्मविधि १ सोनामक्खीको कुलथीके क्काथ या तेल या छाँछ या बकरीके दूध (इनमेंसे किसीएक) में खरल करके गजपुटमें फूँक दो तो सोनामक्खीकी शुद्ध भस्म हो जावेगी.

सोनामक्खीभक्षणविधि २–जो इसकी १ रत्तीकी मात्रा दो तो प्रमेहादिक विकार भी दूर हो जावेंगे.

अभ्रकनिर्माणविधि १–श्याम अभ्रकके पत्र महीन पीसकर सुखादो और कम्बलके टुकड़ोंपर डालकर तण्डुलजलके साथ मसल मसलके पानी निकालते जाओ तदनंतर आकके दूधमें खरलकर टिकियाको सुखालो और आकके पत्तोंमें लपेटकर कपड़मिट्टी करके फूंक दो इसीप्रकार आकके दूधकी ७, थूहरके दूधकी ७, ग्वारपाठेके रसकी ७ पुटें दो तदनंतर चौंलाईके रस या नागरमोथाके क्काथ या काँजी या चित्रकके क्काथ या जंभीरीके रस या त्रिफलाके रस या गोमूत्रकी ७ पुटें देकर पश्चात् बड़के जटाके क्काथकी ७ और मँजीठके क्काथकी ७ पुटें दो इसीविधिसे प्रतिपुटपर फूँकते जाओ तो उत्तम अभ्रक बन जावेगा.

तथा –२श्वेत अभ्रकके पत्रोंपर समान गुड़ पानीमें गलाकर गाढ़ासा लगादो और इसके साथही अभ्रकसे आधे शोरेका चूर्ण उन पत्रोंपर भुरकाके एकपर एक ऐसी घड़ीसी बनालो, तदनंतर इस घड़ीको जंगली कंडोंकी आँचमें फूँकके निश्चंद्र (चमकरहित) होनेतक फूँकते जाओ तो अभ्रकभस्म बन जावेगी.

अभ्रकभक्षणविधि २६–एक या दो रत्ती अभ्रक दो मासपर्यंत सेवन कराओ तो प्रमेहादि अनेक रोग दूर होकर शरीर पुष्ट और नपुंसकताका नाश हो जावेगा. उन दोनों विधियोंमें प्रथम श्रेष्ठ और द्वितीय उससे कुछ न्यूनतालिये रहैगा.

हरतालभस्म निर्माणविधि १–पीली हरतालको दूधीके रसमें दो दिन और खरैंटीके रसमें खरल करके गोला बनालो इसे छायामें सुखाकर पलाशकी राखके बीच हंडीमें दबादो उस हंडीको चूल्हेपर चढ़ाकर प्रथम मंद

मध्यम तदनंतर विशेष आँच दो आँच देतेसमय इसमेंसे धुआँ न निक-लने पावे जो निकले तो भी छिवला (पलाश-खांखर) की राखसे. मूँदते जाना चाहिये. इसीप्रकार ३ दिन पर्यंत आँच देकर स्वांगशीतल हो जानेपर निकाललो तो निर्धूम श्वेतवर्ण और वोझमें पूर्ववत् होकर शुद्ध हरतालभस्म हो जावेगी.

तथा २–पीलीहरतालको ग्वारपाठेके रसमें ३ दिन खरल करके टिकिया बनाकर छायामें सुखालो और छिवलेकी राखके मध्य हंडीमें दबाकर ४ प्रहरकी आँच दो और स्वांगशीतल होनेपर निकालो तो श्वेत निर्धूम तथा बोझमें पूरी होकर उत्तम हरतालभस्म बन जावेगी.

तथा ३–पीली हरतालका दशमांश सुहागेके साथ चौघड़ी कपडेकी पोटलीमें बाँधकर जँभीरीके रसमें, काँजीमें, पेठेके रसमें त्रिफलाके रसमें दोलायंत्रसे प्रतिरसमें दो दो प्रहरपर्यंत आँचदो तदनंतर खटाईसे धोकर पलाशके रसके साथ दो दिनपर्यंत खरल करो और गोला बनाकर धूपमें सुखालो इस गोलेको शरावसम्पुटसे गजपुटमें फूंकके स्वांगशीतल होनेपर निकाललो पुनः बकरीके दूधसे १ दिन खरल करके गोला बनाओ और धूपमें सुखाकर ४ सेर पलाशकी राखके मध्य हंडीमें दाबदो इस हंडीको चूल्हेपर चढ़ाकर ३२ प्रहरकी आँचदो आँच देते समय धुआँको पलाशकी राखसे मूंदते जाओ और स्वांगशीतल हो जानेपर निकालो तो श्वेत निर्धूम और बोझमें पूरी उत्तम हरतालभस्म बन जावेगी.

हरतालभस्मभक्षणाविधि २६–हरतालकी भस्मको १ रत्ती मात्रा पानके साथ दो तो कुष्ठआदि समस्त रोग दूर होकर अतिशय बलप्राप्त होगा इस भस्मपर मोठ और चनेकी अलोनी रोटी पथ्य है.

चन्द्रोदय निर्माणविधि १--१ टकेभर स्वर्णपत्र, ८ टकेभर पारा और १६ टकेभर गन्धकको नंदनवन (कपास) के फूलोंके रसमें ३ दिन और ग्वारपाठेके रसमें ३ दिन खरल करके सुखालो और इसे आतशी (दृढ़) शीशीमें भरके कपडामिट्टीके सात पुट देके सुखालो तदनंतर शीशीका मुख बंद करके वालुकायंत्रसे ३२ प्रहर आँच दो जो स्वांगशीतल होजानेपर निकालो तो हिंगुलसदृश लालवर्णका चन्द्रोदय बन जावेगा.

चन्द्रोदयभक्षणविधि २७–१ रत्ती चन्द्रोदयकी मात्रा, जायफल, भीमसेनी कपूर, समुद्रशोष, लौंग और कस्तूरीके चूर्णके साथ देके ऊपरसे मिश्रीयुक्त औटा दूध पिलाओ तो नपुंसकता दूर होकर विशेष मैथुन शक्ति प्राप्त होगी. इसका भक्षण प्रभात या रात्रिको तथा सेवन पर्यंत पौष्टिक पदार्थोंका ग्रहण और खटाई आदि कुपथ्यका त्याग रखना चाहिये.

रससिंदूरनिर्माणविधि १–५ टंक पारा, ५ टंक गंधक, २ टंक नौसादर और २ टंक फिटकरीको २ दिन खरल करके आतशी (दृढ़) शीशीमें भरो और कपड़मिट्टीके सात पुट देकर वालुकायंत्रसे ३६ प्रहरकी आँच दो तदनंतर शीतल होजानेपर शीशीमेंसे निकाललो, यह रससिंदूर बन जावेगा. इसे हरगौरीरस भी कहते. हैं.

तथा २–पारे और गंधकको वड़की जटाके रसमें १ दिन खरल करके दृढ़ शीशीमें भरदो इस शीशीको सात कपड़मिट्टीमें लपेटकर वालुका यंत्रसे २१ प्रहरकी आँचदो तो हिंगुलके सदृश लालवर्णका रससिंदूर बन जावेगा.

रससिंदूरभक्षणविधि २८–१ रत्ती रससिंदूरकी मात्रा पानके साथ खिलाओ तो सर्व रोग दूर होकर अतिपुष्टता प्राप्त होगी.

पारदभस्मनिर्माणविधि १–पारेको गूलरके दूधमें १ प्रहर खरल करके गोली बनाओ तदनंतर हींगको गूलरके दूधमें पीसकर २ मूस (घरिया) बनाओ इन दोनों मूसोंके भीतर गोली रखकर बंद करदो और मूसाको एक सेर कंडोंकी भभूदर (आग) में फूंकदो. तदनंतर स्वांगशीतल हो जानेपर निकाललो तो सुंदर पारदभस्म बन जावेगी.

तथा २–पारेको गूगलके दूधमें खरलकर गोली बनाओ और आधे झारेके बीजोंके चूर्णकी २ मूसें बनाकर इन दोनोंमें दृढ़बलपुष्प, वायविडंग और खैरके चूर्णके मध्य पारेकी गोली धर दो. तदनंतर मूसको भली भाँति बंद करके कोयलोंकी आँचमें भाथी (धमन) से धौंकदो फिर इस मूसपर कपडमिट्टी देकर गजपुटमें फूँकदो तो श्वेत शुद्ध और तौलमें पूर्ववत् उत्तम पारदभस्म बन जावेगा.

पारदभस्मभक्षणविधि–२९ यह पारदभस्म जुदे जुदे अनुपानोंसे समस्त